सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

७

(जून-दिसम्बर १९०७)

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

७

(जून-दिसम्बर १९०७)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमें १९०७ के जूनसे दिसम्बर तक के सात महीनोंकी सामग्री दी गई है। ट्रान्सवाल एशियाई पंजीयन अधिनियम, जो उपनिवेश मन्त्री द्वारा अस्वीकृत अध्यादेशके स्थानमें बनाया गया था, जैसा हम देख चुके हैं, २१ मार्चको ट्रान्सवाल संसद द्वारा एक ही दिनकी बैठकमें पास कर दिया गया था। उसपर ८ जूनको सम्राट्ने स्वीकृति दे दी थी और वह १ जुलाईको लागू कर दिया गया था। इस 'खूनी कानून' के विरुद्ध भारतीय समाजका संघर्ष, जो पुराने एम्पायर नाटकघरमें ११ सितम्बर १९०६ को एक विराट सार्वजनिक सभामें आरम्भ किया गया था, अब अनाक्रामक प्रतिरोध समिति द्वारा चलाया जाने लगा। यह समिति इस कार्यके लिए विशेष रूपसे बनाई गई अस्थायी संस्था थी।

गांधीजीने कानून बननेसे पहले ट्रान्सवालके भारतीयोंकी स्थितिकी तुलना उसके बननेके बादकी स्थितिसे करते हुए कहा था: "सारा ट्रान्सवाल ही एक जलील जेलखाना बन जायेगा। नया कानून एशियाइयोंको जिस दुःखद स्थितिमें ला पटकता है, वह सिर्फ उन लोगोंको ही नहीं दिखाई दे सकती, जो शक्तिके मदमें चूर हैं।" (पृष्ठ १९)। कानूनने भारतीयोंपर जो कलंक लगा दिया है उसे उसके अन्तर्गत बने विनियम मिटा नहीं सकते। यह कानून इसलिए घृणित नहीं था कि इसके अन्तर्गत अँगुलियोंके निशान लिये जाते बल्कि इसलिए था कि वह भारतीयोंको ऐसा करनेके लिए बाध्य करता था और उसका इरादा जानबूझकर समाजका अपमान करना था। वह "उनके पौरुषके लिए अपमानजनक और उनके धर्मके हकमें घृणित" था। (पृष्ठ २१५)। गांधीजीने प्रस्ताव किया कि यदि कानून रद कर दिया जाये तो वे समझौतेके रूपमें स्वेच्छया पंजीयन मान लेंगे। यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया गया और इसलिए इसके अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं रहा कि "वे उस उच्चतर धर्मके आगे सिर झुकायें जो मानवजातिको आत्मसम्मान और सचाई तथा गम्भीरतासे की हुई घोषणाओंका आदर करनेका आदेश देता है।" (पृष्ठ २३६)। इस उच्चतर धर्मकी शरण लेनेके लिए गांधीजीने ट्रान्सवाल सरकारके 'खूनी कानून' का अनाक्रामक प्रतिरोध करनेका परामर्श दिया।

किन्तु गांधीजीके लिए अनाक्रामक प्रतिरोध केवल प्रभावकारी राजनीतिक कार्रवाईका एक रूप नहीं था, जैसा कि वह मताधिकारके लिए संघर्ष करनेवाली ब्रिटिश महिलाओंके लिए था, जिनका प्रशंसात्मक उल्लेख गांधीजीने दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंमें आत्म-सम्मानका भाव भरने और साहस उत्पन्न करनेका प्रयत्न करते हुए अनेक बार किया था। उन्होंने अनाक्रामक प्रतिरोधमें नैतिक और आध्यात्मिक तत्त्वका समावेश किया और थोरोके 'सविनय अवज्ञा' सम्बन्धी प्रबन्धमें अपने सिद्धान्तोंका समर्थन देखकर उसे अंग्रेजी और गुजराती दोनोंमें संक्षिप्त किया। किन्तु उन्होंने 'अनाक्रामक प्रतिरोध' शब्दोंको अपर्याप्त और भ्रामक पाया। उन्होंने कहा कि भारतीयोंका आन्दोलन "वस्तुतः प्रतिरोध नहीं, बल्कि सामूहिक कष्ट-सहनकी नीति है।" (पृष्ठ ६७)। कानूनके विरोधका परिणाम होता जुर्माना। लेकिन भारतीय जुर्माना देनेके बजाय जेल जानेको तैयार थे। अगर परवाने नहीं मिलते तो वे बिना परवाने व्यापार करते। भारतीय कानून तोड़नेके परिणाम जानते थे और उन्हें "शान्तिपूर्ण गौरव और समर्पणके भावसे" (पृष्ठ ८८) सहन करनेको तैयार थे। गांधीजी चाहते थे कि अनाक्रामक

प्रतिरोध, जिस रूपमें उन्होंने उसकी कल्पना की थी, धार्मिक शिक्षाका साधन बन जाये। यदि सत्य और न्यायकी माँग पूरी करनेके लिए मानव-निर्मित कानूनको भंग करना पड़े तो वह सत्यपर ईमानदारीसे आरूढ़ रहकर किया जाना चाहिए। एक अनुचित कानूनको भंग करते हुए स्वयं भारतीय समाजको अपनी व्यक्तिगत और सार्वजनिक जीवनकी अनेक स्पष्ट बुराइयोंसे मुक्त होनेका प्रयत्न करना चाहिए और लगातार ईश्वरीय कानूनके आदेशोंके अनुसार जीवन बिताना सीखना चाहिए।

गांधीजी अपने आन्दोलनके आध्यात्मिक तत्त्वपर जो जोर देना चाहते थे वह 'अनाक्रामक प्रतिरोध' शब्दोंसे स्पष्ट नहीं होता था। वे यह भी अनुभव करते थे कि भारतीयोंको अपने आत्मसम्मानके लिए अपनी भाषाका उपयोग निपुणतासे करना आना चाहिए। इसलिए 'इंडियन ओपिनियन' ने उन शब्दोंका कोई उपयुक्त भारतीय समानार्थक शब्द बतानेके लिए पुरस्कारकी घोषणा की। मगनलाल गांधीने 'सदाग्रह' शब्द सुझाया जिसे गांधीजीने बदलकर 'सत्याग्रह' कर दिया। यह एक उपयुक्त शब्द सिद्ध हुआ, क्योंकि यह गांधीजीकी जीवन-भरकी सम्पूर्ण सत्यकी खोजका प्रतीक बन गया।

संघर्षके फलितार्थों और महत्त्वको पूरी तरहसे जानते हुए, गांधीजी 'इंडियन ओपिनियन'में सप्ताह-प्रति-सप्ताह अपने आन्तरिक विचारोंको उँड़ेलते गये। इस प्रकार 'इंडियन ओपिनियन' "भारतीय समाजके तत्कालीन इतिहासका सच्चा दर्पण बन गया", ('सत्याग्रह इन साउथ आफ्रिका', अध्याय २०)। उन्होंने संघर्षके प्रत्येक अंगकी, उसके कारणों और परिणामोंकी, उसकी प्रविधियों और कार्य-विधियोंकी एवं असफलता और सफलताकी सम्भावनाओंकी, विशेष रूपसे गुजराती लेखोंमें, विस्तारसे चर्चा की। उन्होंने ईसा और थोरो एवं प्राचीन भारतीय वीर-गाथाओंमें आये हुए बुराईका प्रतिरोध करनेवाले वीरोंसे ही प्रेरणा लेनेका प्रयत्न नहीं किया, बल्कि अपने समयकी मताधिकार आन्दोलन करनेवाली महिलाओं, ईसाई रूढ़ि-विरोधियों, सिन-फेन दलके सदस्यों और बोअरोंसे भी प्रेरणा ली थी।

पंजीयन कार्यालयोंपर धरना विधिवत् संगठित किया गया; वह शान्तिपूर्ण और सब प्रकारके 'रोष प्रदर्शन' से मुक्त था। उसमें कटु भाषासे वैसे ही दूर रहना था जैसे शारीरिक बल-प्रयोगसे। जो लोग एशियाई अधिनियमके जुएको टालना चाहते थे, उन्हें इस बातकी भी फिक्र करनी थी कि वे अपने विरोधियोंपर नासमझी-भरी धौंस और धमकियोंके रूपमें कहीं उससे भी भारी जुआ न डाल दें (पृ० २५८)। धरना प्रभावकारी था — पंजीयन कार्यालय नगर-नगर गया, किन्तु बहिष्कारके कारण बेकार रहा। समाजके पाँच प्रतिशतसे कम लोगोंने 'गुलामीका चिट्ठा' लिया, यद्यपि पंजीयनकी अवधि अनेक बार बढ़ाई गई। गद्दारोंके, जो 'पियानो बजानेवाले' कहे जाते थे, नाम 'इंडियन ओपिनियन' में छापे गये। इसका उद्देश्य जितना कायरोंको लज्जित करना था उतना ही दूसरोंको चेतावनी देना भी था। भय दिलानेकी अपेक्षा आत्मसम्मान अधिक जगाया जाता था। जब भारतीयोंके एक दलने आत्म-समर्पणका प्रस्ताव पास किया तब गांधीजीने ४,५०० से अधिक भारतीयोंके हस्ताक्षरोंसे एक "भीमकाय प्रार्थनापत्र" देनेका विचार किया और उसको कार्यान्वित किया। इससे स्पष्ट हो गया कि भारतीयोंका बहुत बड़ा भाग कानूनका विरोधी था।

गांधीजीने ब्रिटिश भारतीय संघ, हमीदिया इस्लामिया अंजुमन और चीनी संघकी अनेक सभाओंमें भाषण दिये। वे यूरोपीयोंके छोटे-छोटे समूहोंमें बोले और खुले मैदानमें

की गई भारतीयोंकी विराट सार्वजनिक सभाओंमें भी। जब संघर्ष पूरे जोरपर था तब भी उन्होंने आन्दोलनके अधिक प्रचलित तरीकोंको जारी रखा। उन्होंने दक्षिण आफ्रिका, भारत और इंग्लैण्डके प्रमुख लोगोंको पत्र लिखे। लन्दनमें दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति आवेदन-निवेदनकी और लोक-शिक्षणकी प्रमुख साधन बनी रही। इस खण्डमें ऐसे पत्रोंके, जो उन्होंने गलतफहमी दूर करने, गलतबयानियोंका खण्डन करने और अपने कार्यके प्रति सहानुभूति जगानेका धैर्यपूर्ण, सावधानतापूर्ण और अथक प्रयत्न करते हुए लिखे, कई उदाहरण हैं। वर्षके अन्तमें वे यह लिख सके कि "गोरोंके सारे अखबार सरकारको बहुत फटकारते हैं और भारतीयोंकी जय बोलते हैं" (पृष्ठ ४४१)।

उन्होंने यह स्पष्ट देखा कि संघर्षके उद्देश्य और तरीकोंका महत्त्व स्थानीय या अस्थायीसे अधिक है; और वे जानते थे कि उनका महत्त्व सब स्थानोंके मनुष्योंके लिए है। "ट्रान्सवालके भारतीय एक बूँद खून गिराये बिना ही मानव-जातिको विस्मित कर देंगे" (पृष्ठ ११९) और ब्रिटिश राजनीतिज्ञताकी यह एक खरी कसौटी थी: साम्राज्यका हाथ सबल गोरोंसे निर्बल भारतीयोंकी रक्षा करेगा अथवा दुर्बलों और असहायोंको कुचलनेमें अत्याचारीके हाथोंको मजबूत करेगा? (पृष्ठ ८८)। किन्तु अब भी ब्रिटिश संस्थाओंमें गांधीजीका विश्वास डिगा नहीं था; उन्होंने लिखा: "मैंने जिन बातोंको इस साम्राज्यकी खूबी समझा है, उनके कारण मैं अपनेको उसका भक्त मानता हूँ। इसीलिए मैंने यह देखकर — चाहे मेरा देखना सही हो या गलत — कि एशियाई कानून संशोधन अधिनियममें साम्राज्यके लिए खतरेके बीज छिपे हुए हैं, अपने देशवासियोंको किसी भी कीमतपर, अत्यन्त शान्तिपूर्ण और, कहूँ तो, शिष्ट ढंगसे, इस अधिनियमका विरोध करनेकी सलाह दी है" (पृष्ठ ४०५)।

किन्तु ट्रान्सवालकी सरकारने इन अपीलोंपर कोई कार्रवाई नहीं की। दिसम्बरमें, जिस दिन ट्रान्सवाल प्रवासी अधिनियमपर सम्राट्की स्वीकृति 'गजट' में प्रकाशित की गई, उसी दिन जनरल स्मट्सने गांधीजी और अन्य नेताओंपर मुकदमे चलानेका निश्चय किया। गांधीजीने इस बातका यह मानकर स्वागत किया कि "वास्तवमें यही एक तरीका है जिससे एशियाई भावनाकी व्यापकता और असलियतकी परख हो सकती है" (पृष्ठ ४६५)।

न्यायालयमें चलाये गये वे मुकदमे, जिनमें अब गांधीजी अधिकांशतः अनाक्रामक प्रति-रोधियोंके बचावके लिए खड़े हुए, उनके धन्धे और सार्वजनिक जीवनकी एक नई अवस्थाके सूचक हैं। एक चतुर वकील होनेके कारण, वे विरोधी कानूनोंकी खुली चुनौतीका उपयोग लोकमत-शिक्षणके साधनके रूपमें कर सके। उन्होंने अपने मुवक्किलोंको परामर्श दिया कि वे अपनेको निर्दोष बतायें, ताकि अदालत उनके अपने मुखसे ही सुन सके कि उन्हें क्या कहना है (पृष्ठ ४६३)। इन मुकदमोंने उनके आन्दोलनका अबतक के सब प्रार्थनापत्रों और शिष्टमण्डलोंकी अपेक्षा अधिक प्रचार किया। इनसे साम्राज्य सरकार जाग्रत होने और उन घटनाओंको देखनेके लिए बाध्य हो गई, जो विश्वके इतिहासमें सबसे अधिक सभ्य होनेका दावा करनेवाले साम्राज्यके नागरिकोंके साथ घटित हो रही थीं।

पाठकोंको सूचना

विभिन्न अधिकारियोंको लिखे गये प्रार्थनापत्र और निवेदन, अखबारोंको भेजे गये पत्र और सभाओंमें स्वीकृत किये गये प्रस्ताव जो इस खण्डमें सम्मिलित किये गये हैं उनको गांधीजीका लिखा माननेके कारण वैसे ही हैं जैसे कि खण्ड १ की भूमिकामें दिये जा चुके हैं। जहाँ किसी लेखको सम्मिलित करनेके विशेष कारण हैं वहाँ वे पाद-टिप्पणीमें बता दिये गये हैं। 'इंडियन ओपिनियन' में प्रकाशित गांधीजीके लेख, जिनपर उनके हस्ताक्षर नहीं हैं, उनके आत्मकथा सम्बन्धी लेखोंके सामान्य साक्षी, उनके सहयोगी श्री छगनलाल गांधी और हेनरी एस० एल० पोलककी सम्मति और अन्य उपलब्ध प्रमाण-सामग्रीके आधारपर पहचाने गये हैं।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करनेमें अनुवादको मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है। किन्तु साथ ही अनुवादकी भाषा सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। अनुवाद छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारनेके बाद किया गया है और मूलमें व्यवहृत शब्दोंके संक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये हैं। यह ध्यान रखा गया है कि नामोंको सामान्यत: जैसा बोला जाता है वैसा ही लिखा जाये। जिन नामोंके उच्चारण सन्दिग्ध हैं उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजीने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीचमें चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजीने किसी लेख, भाषण, वक्तव्य आदिका, जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि ऐसा कोई अंश अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर, साधारण टाइपमें ही छापा गया है। इस खण्डमें उपलब्ध भाषणोंके परोक्ष विवरण और न्यायालयोंके कार्य-विवरण तथा वे शब्द, जो गांधीजीके कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े, गहरी स्याहीमें छापे गये हैं।

शीर्षकोंकी लेखन तिथियाँ जहाँ उपलब्ध हैं वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई हैं; किन्तु जहाँ वे उपलब्ध नहीं हैं वहाँ उनकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमें की गई है और जहाँ आवश्यक हुआ है, उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। शीर्षकोंके अन्तमें सूत्रके साथ दी गई तिथियाँ प्रकाशन की हैं।

'सत्यना प्रयोगो अथवा आत्मकथा' और 'दक्षिण आफ्रिकाना सत्याग्रहनो इतिहास' के अनेक संस्करण होनेसे उनकी पृष्ठ-संख्याएँ विभिन्न हैं, इसलिए हवाला देनेमें केवल उनके भाग और अध्यायका ही उल्लेख किया गया है।

साधन सूत्रोंमें एस० एन० संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, जी० एन० गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागजपत्रोंका और सी० डब्ल्यू० कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी (सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है। सूत्र-पंक्तिमें कभी-कभी शब्दोंके संक्षिप्त रूप मिलते हैं उनमें सी० ओ० कलोनियल ऑफिसका और जे० ऐंड पी० ज्यूडिशियल और पब्लिक रेकर्ड्सका संक्षिप्त रूप है।

पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ सामग्री परिशिष्टोंमें दे दी गई है। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए, हम साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक ट्रस्ट और संग्रहालय, गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, और नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि तथा संग्रहालय, नई दिल्ली; भारत सेवक समिति, पूना; कलोनियल ऑफिस पुस्तकालय, तथा इंडिया ऑफिस पुस्तकालय, लन्दन; फीनिक्स आश्रम, डर्बन; प्रिटोरिया आर्काइव्ज, प्रिटोरिया; श्री छगनलाल गांधी, अहमदाबाद; श्री अरुण गांधी बम्बई; और 'इंडियन ओपिनियन', 'रैंड डेली मेल', 'स्टार' और 'ट्रान्सवाल लीडर' समाचारपत्रोंके आभारी हैं।

अनुसंधान और संदर्भकी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, गांधी स्मारक संग्रहालय, इंडियन कौंसिल आफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, और सूचना एवं प्रसार मंत्रालयके अनुसंधान और संदर्भ विभाग, नई दिल्ली; साबरमती संग्रहालय और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; सार्वजनिक पुस्तकालय, जोहानिसबर्ग; और ब्रिटिश म्यूजियम पुस्तकालय, लन्दन हमारे धन्यवादके पात्र हैं।

विषय-सूची

चित्र-सूची

१. जूरियोंकी कसौटी

इस पत्रने जन्मसे ही अपनी प्रवृत्तियोंको प्रयत्नपूर्वक दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयोंपर असर डालनेवाले प्रश्नों तक सीमित रखा है। हमारी धारणा है कि पत्रकारिताकी दृष्टिसे दूसरे प्रश्न चाहे जितने आकर्षक हों, हमें अपनी मर्यादा स्वीकार करनी चाहिए, और उच्चस्तरीय नीतिसे सम्बद्ध अथवा ऐसे प्रश्नोंमें, जिनका इस देशके भारतीयोंसे कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है, दखल नहीं देना चाहिए।

लेकिन हर नियमके अपवाद होते हैं। हमें लगता है कि अगर हम सुप्रसिद्ध एमटोंगाके मुकदमेपर[1], जिसकी ओर आज लोगोंका ध्यान इतना अधिक आकृष्ट है, कुछ नहीं कहते तो अपने पेशेके प्रति वफादार नहीं होंगे। यह विषय वतनी नीतिके मंचसे उठकर मानवताके प्रश्नको स्पर्श करता है और किसी हद तक इसमें निहित सिद्धान्त भारतीयोंपर भी लागू होते हैं। इसलिए हम 'नेटाल मर्क्युरी' में प्रकाशित एक अत्यन्त तर्कपूर्ण और सहृदय अग्रलेखका कुछ अंश यहाँ उद्धृत करते हैं। यह जूरी प्रणालीपर, विशेषकर उस अवस्थामें जब वह गोरों और कालोंके बीच हुए मुकदमोंपर लागू होती है, एक खुला आरोप है। हम अपने सहयोगीसे वतनी लोगोंके प्रति जान दुर्व्यवहार करनेके उस आरोपका खण्डन करनेमें सहमत हैं, जो कुछ क्षेत्रोंमें नेटालके विरुद्ध लगाया गया है और जिसका आधार एमटोंगाके मुकदमेमें न्यायका गला घोंटा जाना है। हमारा विश्वास है कि नेटालमें जो-कुछ हुआ, वह वैसी ही परिस्थितियोंमें दक्षिण आफ्रिकाके किसी भी हिस्सेमें या दक्षिण आफ्रिका जैसी स्थितियोंवाले किसी अन्य देशमें भी हो सकता है। राग-द्वेष और पूर्वग्रहोंसे ग्रसित जूरियोंके सम्बन्धमें दूसरे देशोंके मुकाबले नेटालका कोई एकाधिपत्य नहीं है। लेकिन इस बातसे कि दक्षिण आफ्रिकामें एमटोंगाके मुकदमे जैसी बातें घटित होती हैं, जनताकी अन्तरात्माको जागना चाहिए, और जिन लोगोंको दक्षिण आफ्रिकाकी कीर्तिका खयाल है उन्हें सोचना चाहिए कि क्या अब जूरी-पद्धतिके बारेमें अपने विचार बदलनेका समय नहीं आ पहुँचा। दक्षिण आफ्रिका जैसे देशमें, जहाँ कोई आरामतलब वर्ग नहीं है और जहाँ सभी देशोंके लोग इकट्ठे होते हैं, न्याय-प्रशासनके लिए जिन पद्धतियोंकी व्यवस्था की जा सकती थी उनमें जूरी-प्रणाली लगभग सबसे बुरी है। जूरी-प्रणालीकी सफलताकी बुनियादी शर्त यह है कि अभियुक्तके अपराधकी जाँच उसकी बराबरीके लोग करें। और यह मानना मनुष्यकी बुद्धिकी तौहीन करना होगा कि दक्षिण आफ्रिकामें, जब प्रश्न गोरों और कालोंके बीचका हो, अपराधकी ऐसी भी कोई जाँच होती है।

जो लोग सचाईको तौलना नहीं जानते और अपने सामने प्रस्तुत बातोंपर सन्तुलित मस्तिष्कसे विचार नहीं कर सकते वे भावनाके अतिरेकमें, सम्भवतः, किसी सही निष्कर्षपर नहीं पहुँच सकते। लिवरपूल एक सुव्यवस्थित और पुराना स्थान है, जहाँ एक-जैसे लोग बसते हैं और उनकी अपनी परम्पराएँ हैं, जिनके अनुसार वे आचरण कर सकते हैं। लेकिन

१. एमटोंगा एक आफ्रिकी था, जिसे कुछ लोगोंने एक अपराधके संदेहमें पीटा था। बादमें उस पर मुकदमा चलाया गया तो जूरीके सदस्योंने उसे दोषी ठहराया। लेकिन गवर्नरने उसे निर्दोष मानकर छोड़ दिया।

वहाँ भी श्रीमती एम० हेब्रिकके मुकदमेका निर्णय करनेके लिए स्वर्गीय न्यायमूर्ति स्टीफेनके समान योग्य न्यायाधीशकी आवश्यकता पड़ी थी। तब दक्षिण आफ्रिका जैसे देशमें, जहाँ अभी विभिन्न राष्ट्रीयताएँ घुलने-मिलनेकी प्रक्रियासे ही गुजर रही हैं और दक्षिण आफ्रिकी राष्ट्रका उदय अब भी धुँधले और सुदूर भविष्यके गर्भमें छिपा हुआ है, जूरियोंसे कोई सन्तोष कैसे प्राप्त हो सकता है? जहाँ समानताकी कोई बुनियाद नहीं, वहाँ हम समानताके पुजारी नहीं हैं। यह सम्भव है कि ऐसे मुकदमोंमें, जहाँ सवाल गोरों और कालोंका हो, जूरी पद्धतिको समाप्त करनेके किसी भी प्रयत्नका झूठी समानताकी दुहाई देकर विरोध किया जायेगा। हमारी धारणा है कि कोई भी वतनी या रंगदार जातिका व्यक्ति, जो इस प्रकारका रुख अख्तियार करता है, सच्ची समानताको नहीं जानता। आज उनके द्वारा, या उनके लिए, तर्कसम्मत ढंगसे जो-कुछ माँगा जा सकता है वह है कानूनकी दृष्टिमें समानताका हक। यूरोपके विभिन्न भागोंसे आनेवाले गोरे कोई साम्राज्य-प्रेम लेकर दक्षिण आफ्रिका नहीं आते। ऐसे गोरोंसे, जहाँतक उनके और उन लोगोंके बीचकी बात है, जिन्हें वे अपनेसे हीन समझते हैं, न तो साम्राज्यीय दायित्वोंके बारेमें सोचनेकी अपेक्षा की जा सकती और न ही न्याय तथा समान अधिकारकी किन्हीं अन्य मान्यताओंके बारेमें। यदि वे, उनके अन्दर मानवताकी जो भी भावना हो, उसकी प्रेरणापर कुछ करते हैं तो वह बात अलग है।

इसलिए हमें आशा है कि कोई भी रंगदार व्यक्ति या एशियाई — क्योंकि हमारी बात एशियाइयोंपर भी उसी तरह लागू होती है जिस तरह दूसरी रंगदार जातियोंके लोगोंपर — उस आन्दोलनका विरोध करनेकी बात कभी नहीं सोचेगा जिसे नेटालके अखबारोंने सर्वथा स्वार्थ-रहित और न्यायपूर्ण भावनाओंसे प्रेरित होकर, जूरियों द्वारा यूरोपीयों और काली जातियोंके बीच न्याय करनेके तरीकेको खत्म करनेके लिए प्रारम्भ किया है। अगर जूरियों द्वारा फैसले किये जानेका तरीका हमेशाके लिए खत्म हो जाये तो यह सचमुच एक बहुत बड़ी बात होगी, लेकिन यह एक इतना पुराना वहम है कि जन-मतसे इसका सर्वथा परित्याग कर देनेकी आशा करना कठिन है। और न यही सम्भव है कि, जहाँतक सिर्फ गोरोंका सवाल है, इस प्रणालीके विरुद्ध कोई जोरदार तर्क पेश किया जा सके।

हमें विश्वास है कि अगर इस विषयको वहीं छोड़ दिया गया, जहाँ अखबारोंने छोड़ दिया है, तो इसका कोई परिणाम नहीं निकलेगा। दक्षिण आफ्रिकाके गिरजोंको वहाँके मूल निवासियोंके हितोंका — हम उन्हें अधिकार नहीं कहेंगे — संरक्षक माना जाता है सो ठीक ही, और हालाँकि तात्कालिक सवाल नेटालमें उठा है, हमें लगता है कि गिरजोंमें भी इसके साथ-साथ आन्दोलन होना चाहिए तथा सम्बन्धित दक्षिण आफ्रिकी सरकारोंके पास अलग-अलग प्रार्थनापत्र भेजना चाहिए कि गोरे और रंगदार लोगोंके बीच जूरियों द्वारा न्यायकी पद्धतिको बन्द कर दिया जाये। हमारा यह भी विचार है कि गिरजों द्वारा किये हुए ऐसे आन्दोलनको दक्षिण आफ्रिकाके वतनी और रंगदार समुदायोंका समर्थन बड़े पैमानेपर मिलना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–६–१९०७

२. वीर क्या करें ?

कदम आगे बढ़ाओ ! अब देर मत करो !

आज उठेंगे, कल उठेंगे, कहकर दिन मत बढ़ाओ । सोचते–सोचते मार्गमें बड़े विघ्न आ जाते हैं । कुटुम्बकी माया कैसे छूट सकती है, कुटुम्बका क्या होगा, इस तरहके विचारोंमें जो फँसा रहता है वह बिलकुल स्त्रैण है । वह रणमें क्या जायगा ? जबतक वह इधर विचारोंमें ही डूबा हुआ है, उधर शत्रु छापा मार देगा और तब वह घबड़ा जायेगा, रक्षा करना भारी पड़ जायेगा । आग लगनेपर कुआँ खोदनेवाला पश्चात्-बुद्धि कहलाता है । बाढ़ आ जानेपर बाँध बनानेवालेको क्या कभी सफलता मिलेगी ?

इसलिए सजधजकर एक साथ रणमें लड़ने चलो । शत्रुके सामने अपना भाला लेकर डट जाओ और उसे ललकारो ।[1]

ट्रान्सवालका नया कानून अब भी धूम-धड़ाका मचाये हुए है। कहावत तो ऐसी है कि जो गरजता है सो बरसता नहीं, और जो भौंकता है सो काटता नहीं। किन्तु इसमें शक नहीं कि नया कानून तो जैसा गरज रहा है, वैसा बरसेगा भी। जनरल बोथाके[2] आते ही, सम्भव है, वह 'गज़ट' में प्रकाशित हो जायेगा। अतः इस कानूनके खिलाफ जेलके प्रस्तावके[3] रूपमें जो लड़ाई चल रही है उसपर और अधिक विचार करें।

उपर्युक्त भजन देखेंगे तो उसमें कवि कहता है कि साहसका काम करते समय विचारके फेरमें पड़ना बेकार है। युद्धमें कूदनेवाले इस बातका विचार नहीं करते कि कुटुम्बका क्या होगा, व्यापारका क्या होगा। भारतीय जनता केवल ईश्वरपर ही भरोसा रखनेवाली है। हमने उसी ईश्वरके सामने शपथ लेकर नये कानूनके सामने न झुकनेका निर्णय किया है। वह निर्णय करनेके पहले विचार करना योग्य था और वह विचार किया

१. मूल गुजराती गीत इस प्रकार है:

पगला भरवा मांडो रे !
हवे नव वार लगाडो रे !
आज ऊठशुं काल ऊठशुं,
लम्बावो नहि दहाडा;
विचार करतां विघनो मोटां,
वचमां आवे आडा;
कुटुंब माया क्यम छोडाये;
कुटुंबनुं क्यम थाशे;
एम फस्यो ते जनानी पूरो,
रणमां शुं पछी जाशे ?
विचार करतां खालो पड़तां,
शतरू छापो मारे;
बचाव करवो गभरातां ते,
पछी पड़े थई भारे;
आग लागते कुवो खोदवो,
पच्छम बुद्धिया थावुं;
पाणी आवे पाल बाँधवी,
तेमां ते शुं फाव्युं ?
सजी करीने सहु जण साथे,
रणमां लड़वा चालो;
शतरूनी सामे रही ऊभा
घुरकावीने भालो।

२. लुई बोथा; १९०७-१० में ट्रान्सवालके और १९१०-१९ में दक्षिण आफ्रिका संघके प्रधानमन्त्री ।

३. सितम्बर १९०६ का प्रसिद्ध चौथा प्रस्ताव; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४३४ ।

भी गया। अब विचार करनेका समय नहीं रहा। अब तो जो निश्चय किया गया है उसपर दृढ़ रहनेका समय आ गया है। शेख सादी[1] 'गुलिस्ताँ' में कह गये हैं कि मनुष्य जितना विचार अपनी रोजीके बारेमें करता है, उतना ही यदि रोजी देनेवालेके बारेमें करे तो निस्सन्देह स्वर्गमें उसका स्थान फरिश्तोंसे भी ऊँचा हो जायेगा। उसी प्रकार इस बार हमें रोजी, कुटुम्ब या व्यापारका विचार करनेके बजाय उन सबको पालनेवाले, उनका उत्कर्ष करनेवालेका विचार करके अंगीकार किये हुए कामको पूरा करना है। सब छोड़ देंगे, किन्तु सबके अन्तरमें रहनेवाले परमेश्वरपर भरोसा रखकर यदि हम कोई काम करेंगे तो वह मालिक हमें कभी नहीं छोड़ेगा।

अब हम अपने राज्यकर्ताओंका उदाहरण लें। जब बोअर लोगोंने महान ब्रिटिश प्रजासे युद्ध शुरू किया था, स्वर्गीय क्रूगरने[2] अपने कुटुम्ब या अपनी दौलतका विचार नहीं किया। जनरल जुबर्ट लड़ते-लड़ते मरे। जनरल स्मट्स[3] भी लड़े थे। डॉ० क्राउज़ने[4] दो वर्षकी कैद भोगी, उनकी जोहानिसबर्गकी जायदाद बर्बाद हो गई। श्री डी'विलियर्स, जो इस समय मुख्य न्यायाधीश हैं, कैद भोग चुके हैं। उनके पैरमें गोलियाँ लगी थीं। जनरल बोथा स्वयं आखिरी समय तक लड़े थे। बोअर औरतें भी बहुत-से कष्ट सहन करते हुए शान्त बैठी रहीं। वे अपने-अपने बच्चों और पतियोंको हिम्मत देती थीं। इससे आज वे अपना खोया हुआ सब-कुछ वापस पा गये हैं।

अंग्रेज स्वयं भी क्या करते आये हैं, यह हम जानते हैं। जॉन हैम्डनने[5] बर्बाद होकर लोगोंके दुःख दूर किये। लॉर्ड कॉलिन कैम्बेल[6] थका-मांदा चीनसे आया था। हुक्म मिलते ही वह १८५८ में फिर रवाना हो गया। उसने घड़ी-भर भी आराम नहीं किया। लॉर्ड जॉर्ज हैमिल्टनके[7] आठ निकटवर्ती रिश्तेदार बोअर युद्धमें उपस्थित थे। प्रधान मन्त्री स्वर्गीय लॉर्ड सैलिस्बरीका[8] लड़का मेफेकिंगमें[9] घिर गया था। लॉर्ड राबर्ट्सका[10] इकलौता लड़का युद्धमें मारा गया, और आज उनका कोई पुरुष-उत्तराधिकारी नहीं है।

ट्रान्सवालके भारतीय समाजको जो-कुछ भी करना है, वह इन उदाहरणोंके सामने कुछ नहीं है। हमें राज्यका विरोध नहीं करना है; न हमें हथियार लेकर ही लड़ना है। हमें

१. शेख मुस्लिहुद्दीन सादी (११८४-१२९२); प्रसिद्ध फारसी कवि; *गुलिस्ताँ* और *बोस्ताँ*के लेखक।

२. ट्रान्सवालके राष्ट्रपति (१८८३-१९००) देखिए खण्ड ४, पृष्ठ २४३-४।

३. उपनिवेश-सचिव, १९०७-१० दक्षिण आफ्रिका संघके प्रधानमन्त्री, १९१९-२४।

४. जोहानिसबर्गके सरकारी वकील; *आत्मकथा* (भाग २, अध्याय १३) में गांधीजीने इनके विषयमें लिखा है।

५. (१५९४-१६४३); अंग्रेज देशभक्त और संसदीय अधिकारोंके समर्थक; देखिए, खण्ड ५, पृष्ठ ४८९।

६. (१७९२-१८६३); १९५३-५६ के क्रीमिया युद्धमें लड़े थे; १८५७ में भारतके प्रधान सेनाध्यक्ष, नियुक्त हुए थे। लगता है, यहाँ गलतीसे क्रीमिया और १८५७ के लिए क्रमशः चीन और १८५८ दे दिये गये हैं।

७. भारत-मंत्री, १८९५-१९०३।

८. (१८३०-१९०३); इंग्लैंडके प्रधानमन्त्री १८८५-६, १८८६-९२ और १८९५-१९०२।

९. केप प्रदेशका एक नगर, जिसपर १८९९-१९०२ के बोअर युद्धके समय घेरा डाला गया था। देखिए खण्ड ३, पृष्ठ २३६।

१०. (१८३२-१९१४); १८८५ से १८९३ तक भारत और १८९९ से १९०० तथा १९०१ से १९०४ तक दक्षिण आफ्रिकाके प्रधान सेनाध्यक्ष।

तो जेल जाकर मामूली कष्ट सहन करना है और, व्यापारमें कदाचित, कुछ नुकसान उठाना है। क्या इतनेसे भी हम डरेंगे? हम तो आशा किये बैठे हैं कि कहीं इससे भी ज्यादा आवश्यकता हो तो भारतीय समाज नहीं डरेगा। डरना है केवल खुदासे। उसके बाद किसीसे भी डरनेकी बात नहीं रहती, यह सभी शास्त्र सिखाते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १-६-१९०७

३. एक पौंडका इनाम

शीर्षक हमने इनामका दिया है, किन्तु पाठकको इनामकी ओर कम दृष्टि रखनी है। आजकल भारतीयोंके लिए मौसम नये कानून तथा जेलके प्रस्तावका है। इसलिए जो भारतीय गुजराती या हिन्दुस्तानी (उर्दू या हिन्दी)में जेलके प्रस्तावके समर्थनमें सरस गीत बनाकर भेजेगा उसे उपर्युक्त इनाम दिया जायेगा। हमें आशा है कि जिन्हें गीत रचनेका अभ्यास है वे इस प्रतिस्पर्धाको चूकेंगे नहीं। जरूरी यह है कि गीत पुरस्कारके लिए नहीं, बल्कि इज्जतके लिए बनाकर भेजा जाये। उसकी शर्तें निम्न प्रकार हैं:

(१) बीस लकीरोंसे ज्यादा न हो।
(२) शब्द सरल हों।
(३) राग चाहे जो हो, वीर-रसकी लावनी ज्यादा पसन्द की जायेगी।
(४) अक्षर साफ हों, स्याहीसे एवं कागजके एक ही ओर लिखा जाये।
(५) गीतके अन्तमें कविका नाम व पता दिया जाये।
(६) गीतमें मुसलमानों एवं हिन्दुओंकी बहादुरीके वर्तमान तथा प्राचीन उदाहरण दिये जायें। दूसरे होंगे तो वे भी चल सकेंगे।
(७) जेल जानेके प्रस्तावपर डटे रहनेके सम्बन्धमें समय-समयपर जो ठोस कारण दिये जा चुके हैं उनका समावेश किया जाये।
(८) ये गीत अधिकसे-अधिक १२ जूनके सवेरे तक फीनिक्स पहुँच जाने चाहिए; अथवा जोहानिसबर्ग कार्यालय (बॉक्स ६५२२) में १४ जूनको मिलने चाहिए।

नतीजा २२ तारीखके अंकमें प्रकाशित किया जायेगा। आशा है, बहुत लोग प्रयत्न करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १-६-१९०७

४. भारतमें उथल-पुथल

दुनियाके सभी हिस्सोंमें आज तरह-तरहकी घटनाएँ हो रही हैं। जगह-जगह हम "हमारा देश" का नारा सुनते हैं। मिस्रवासी कहते हैं कि "मिस्र मिस्रियोंके लिए है"। चीनियोंने हॉंगकॉंगमें कई गोरोंको कत्ल कर दिया है। हब्शी कहते हैं कि "हमारे हक हमें मिलने चाहिए।" ईरानमें स्वराज्य स्थापित हो गया है। अफगानिस्तानकी ताकत बढ़ गई है। अब रहा भारत। वहाँ भी "भारत भारतीयोंके लिए"का नारा बुलन्द है, और उसके लिए जगह-जगह इस बातका प्रयत्न किया जा रहा है कि हिन्दू-मुस्लिम एकता हो। पंजाबमें एक मुसलमानने 'हिन्दू-मुसलमान' नामसे एक पत्र शुरू किया है और वह कहता है, दोनों कौमोंमें एकता होनी चाहिए। दूसरी ओरसे 'वन्दे मातरम्' जैसे पत्र अंग्रेजी राज्यको उखाड़ फेंकनेके लिए आन्दोलन कर रहे हैं। 'पंजाबी' पत्रपर मुकदमा चल जानेसे वहाँ उपद्रव हो गया, जिसमें अग्रगण्य भारतीयोंने भी हिस्सा लिया। उनमें से कुछ लोग पकड़े गये हैं। कुछको देश-निकाला दिया जायेगा और कुछ जेल जायेंगे। लाला लाजपतराय[1] जैसे विद्वान सज्जन भी इनमें शामिल हैं। ऐसी परिस्थितिमें हम क्या करें, इसपर सामान्यतः विचार किया जाना चाहिए। हम कर तो कुछ नहीं सकते, किन्तु समझदार लोग इस बातका भी खयाल रखते हैं कि वे अपने मनकी वृत्तियाँ कैसी रखें।

क्या अंग्रेजी राज्यको भारतसे उखाड़ दिया जाये? और यदि उखाड़नेका विचार हो तो क्या उखाड़ा जा सकता है? इन दोनों प्रश्नोंका हम यह उत्तर दे सकते हैं कि उस राज्यको उखाड़ फेंकनेमें नुकसान है और हमारी हालत ऐसी नहीं कि हम उखाड़ना चाहें तो उखाड़ सकें। इस कथनसे हम यह सूचित नहीं कर रहे हैं कि अंग्रेजी राज्य बहुत भारी है और उससे भारतको अलभ्य लाभ हुए हैं; या, भारत यदि ठान ले तो अंग्रेजी राज्यको हटा नहीं सकता। किन्तु हम मानते हैं कि अंग्रेज लोग चाहे जितनी बेईमानीसे भारतमें घुसे हों, उनसे हमें बहुत सीखना है। वे बहादुर और विवेकी लोग हैं। कुल मिलाकर प्रामाणिक हैं। स्वार्थके समय अंधे भी हो जाते हैं, किन्तु बहादुरीको देखकर कुर्बान होते हैं। वह कौम जबरदस्त है तथा भारतको उसका कम बल नहीं। इसलिए भारतसे अंग्रेजी राज्य अस्त हो, यह चाहनेकी गुंजाइश ही नहीं रहती।

तब क्या लाला लाजपतराय जैसे पुरुषकी हम उपेक्षा करें? यह भी नहीं हो सकता। पंजाबके लोगोंको और उन दूसरोंको, जो अभी आन्दोलन कर रहे हैं, हम शूर-वीर मानते हैं। वे देशभक्त हैं और देशके लिए कष्ट झेल रहे हैं; और उस हद तक वे हमारे लिए आदरके पात्र हैं। किन्तु जिस हद तक वे अंग्रेजी राज्यको उखाड़ फेंकना चाहते हैं, उस हद तक भूल करते जान पड़ते हैं। उनके विद्रोहको जो सजा कानून उन्हें देगा उसे, जान पड़ता है, उन्होंने भोगनेका निश्चय किया है। हमें उनका विरोध नहीं करना है। उनके कष्टोंसे भारतीय प्रजा मुक्त होगी। वे विरोध करते हैं सो अंग्रेजी राज्यके दोषोंके कारण। अंग्रेजी

१. 'पंजाब केसरी' लाला लाजपतराय (१८६५-१९२८); १९२० में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशनके अध्यक्ष। उन्हें १९०७ में देशनिकाला दिया गया था। देखिए खण्ड ५, पृष्ठ १३८।

राज्यके कारण भारत कंगाल होता जा रहा है। भारतमें प्लेग फैला, उसका कारण भी बहुत-कुछ अंग्रेजी राज्य ही है। हिन्दू-मुसलमानके बीच वैर बढ़ानेवाला भी वही है। हम इतनी अधम स्थितिमें पहुँचकर आज नपुंसककी जिन्दगी बिता रहे हैं, उसका कारण भी अंग्रेजी राज्य ही है। इन दोषोंसे ऊबकर कुछ भारतीय नेता सारी अंग्रेज कौमको दोष देते हैं। उनके विद्रोहसे, सम्भव है, ये दोष कुछ हद तक दूर हो जायेंगे। इसके अतिरिक्त वे चूँकि हमारे ही भारतीय भाई हैं, इसलिए उनकी ओर जरा भी बुरी भावना रखे बिना उनके जोशके लिए उन्हें धन्यवाद देना है।

वास्तवमें दोष हमारा है। हम अपने दोष दूर कर लें तो जो अंग्रेजी राज्य आज दुःखस्वरूप बना हुआ है वह सुखस्वरूप बन सकता है। पश्चिमकी शिक्षा लिये बिना और पश्चिमके सम्पर्कमें आये बिना लोक-भावनाका जाग्रत होना सम्भव नहीं है। यह भावना आ जाये तो अंग्रेज बिना लड़े ही हमारे अभिलषित अधिकार हमें दे सकते हैं, और हम यदि उन्हें जानेको कहें तो वे जा भी सकते हैं। अंग्रेजी उपनिवेशोंकी यही स्थिति है। उसका कारण यह नहीं कि वे गोरे वर्णके हैं, बल्कि यह है कि वे बहादुर हैं। यदि अपने अपेक्षित हक न मिलें तो वे नाराज हो सकते हैं, इसलिए वे एक कुटुम्बके माने जाते हैं।

संक्षेपमें हमें अंग्रेजी राज्यसे वैर नहीं है। विद्रोह करनेवालोंकी बहादुरी हमारे लिए गर्व करने जैसी है। जो बहादुरी वे बताते हैं वही हम भी दिखायें और अंग्रेजी राज्यके जानेकी इच्छा करनेके बजाय हम यह इच्छा करें कि उपनिवेशियोंके समान ही होशियार और जोशीले बनकर जो अधिकार हमें चाहिए उनकी माँग करें तथा लें; साथ ही साथ हम अंग्रेजी राज्यकी खूबियोंको जान लें और सीखें, तथा अधिक कुशल बनें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–६–१९०७

५. भारतीय राजा

माननीय स्वर्गीय अमीर अब्दुर्रहमान[1] लिख गये हैं:

अपनी यात्रामें मैंने एक खेदजनक बात देखी, जिसका मेरे मनपर बहुत असर पड़ा। बेचारे भारतीय राजाओंकी पोशाक औरतों-जैसी थी। वे बालोंमें हीरेकी पिनें लगाये थे; और कानोंमें कुण्डल, हाथोंमें पहुँची, गलेमें सोनेका हार और दूसरी चीजें, जो औरतें पहनती हैं, पहने थे। उनके इजारकी कलियोंपर रत्न जड़े हुए थे और इजारके नाड़ेमें लोलक लगे हुए थे, जो लगभग पाँव तक पहुँचते थे। वे अज्ञान, आलस्य और मौज-शौकमें मग्न थे। दुनियामें क्या हो रहा है, या क्या है, इसका उन्हें भान नहीं है। उनका समय शराब और अफीम पीनेमें बीतता है। वे मानते हैं कि अगर हम पैदल चलेंगे तो हमारे ओहदेमें खामी आयेगी।

१. अब्दुर्रहमान खाँ (१८४४-१९०१); अफगानिस्तानके शासक, १८८१-१९०१।

यह चित्र बहुत-कुछ हूबहू है। आज कुछ भारतीय राजा लोग ऐसा नहीं करते, यह भी कहा जा सकता है। फिर भी आज हम यह सवाल नहीं उठा रहे कि कितने राजा ऐसा नहीं करते। हकीकत यह है कि यह स्थिति हमारे दारिद्र्यका एक सबल कारण है।

फिर ऐसी अधम दशा सिर्फ राजाओंकी ही हो सो बात नहीं। प्रजामें भी ऐसी बातें बहुत दिखाई देती हैं। हमारी टीका खासकर हिन्दू भारतीयोंपर लागू होती है। बड़े माने जानेवाले लोगों और उनके लड़कोंके लक्षण बहुत-कुछ मरहूम अमीर द्वारा खींचे गये चित्रके समान ही दिखाई पड़ते हैं। मौज-शौक, आभूषण, रेशमी और सुनहरे कपड़े — सामान्यत: हम यही स्थिति देखते हैं। सभ्य माने जानेवाले लोग आभूषण आदि नहीं पहनते तो दूसरी तरहसे अपना शौक पूरा करते हैं। इसमें किसीको दोष देनेकी बात नहीं। जो रूढ़ि लम्बे समयसे चली आ रही है वह एकदम दूर नहीं हो सकती।

लेकिन हम दक्षिण आफ्रिकामें रहनेवाले भारतीयोंको यह सबक लेना है कि हम सब, छोटे-बड़े, उन दोषोंसे मुक्त रहें। हमारी और हमारे देशकी स्थिति इतनी बुरी है कि हमारे लिए यह समय सदा शोकावस्थामें रहनेका है। जहाँ दर हफ्ते हजारों व्यक्ति भूख या प्लेगसे मरते हैं, वहाँ हम ऐशो-आराम कैसे भोग सकते हैं? हम निश्चित रूपसे मानते हैं, हर भारतीय पुरुषको अपना मन विरक्त कर लेना चाहिए। हमारी पोशाक वगैरहमें जवाहरात, रेशम या सोने आदिका दोष नहीं होना चाहिए।

इंग्लैंडका राजा

उपर्युक्त लेखका जबरदस्त समर्थन करनेवाली हमारी इस बारकी लन्दनकी चिट्ठी है। सम्राट् एडवर्डका पौत्र आज १३ वर्षका है। उसे आज ही से सख्त तालीम दी जा रही है। उसे दूसरे लड़कोंके साथ पढ़ना पड़ता है और जो सादा खाना दूसरे विद्यार्थियोंको दिया जाता है वही इस युवराजको भी दिया जायेगा। जिसका राजा इस प्रकारका आचरण करता है उस देशकी प्रजा भी ऐसी ही है। वह प्रजा यदि सुखी हो तो उसमें आश्चर्य ही क्या? हमें उससे ईर्ष्या नहीं करनी है, बल्कि उसके समान बनना है। कोई यह न सोचे कि वह प्रजा भी तो मौज-शौक करती ही है। इस विचारसे आलस्य प्रकट होता है। वे लोग अपना काम करनेके बाद मौज-शौक करते हैं, और वह मौज-शौक भी उन्हें शोभा देता है। इतना होनेपर भी हमें उनके मौज-शौक रूपी दोषका अनुकरण नहीं करना है। हमें तो हंसके समान अच्छेको चुन लेना है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १-६-१९०७

६. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी[1]

नया कानून : विशेष प्रश्न

इस कानूनके सम्बन्धमें अब भी प्रश्न आते रहते हैं। यह देखकर मुझे खुशी होती है। इस तरहके जितने भी प्रश्न पूछे जायेंगे उनका इस पत्रमें खुलासा किया जायेगा।

डच पंजीयनपत्रवाले क्या करें ?

'गज़ट' की सूचनाके अनुसार एक भारतीयने अपने पंजीयनके आधारपर अनुमतिपत्र कार्यालयमें अर्जी दी है। उसके विषयमें श्री मुहम्मद दावजी पटेल वाकर्स्ट्रूमसे नीचे लिखी बातें पूछते हैं :

(१) क्या निश्चित माना जाता है कि इस अर्जीको अनुमतिपत्र कार्यालय स्वीकार कर लेगा।

(२) यदि ऐसा हो तो चौथे प्रस्तावमें अड़चन आती है, इसलिए वह व्यक्ति अपनी अर्जी वापस ले ले या नहीं ?

(३) वापस लेनेपर पुलिस उसे पकड़ेगी या नहीं ?

(४) यदि पकड़ लिया गया और मजिस्ट्रेटने बाहर जानेका हुक्म दिया तो फिर वह क्या करे ?

(५) यदि वह व्यक्ति ऐसा करे और उसपर मुकदमा चले तो बचाव करनेके लिए श्री गांधी आयेंगे या नहीं ?

इन प्रश्नोंके उत्तर ये हैं कि इस व्यक्तिको और ऐसी स्थितिके सभी व्यक्तियोंको जबतक नया कानून 'गज़ट' में नहीं आया है तबतक अर्जी वापस लेनेकी जरूरत नहीं और न ही इस विषयमें आगे कोई कार्रवाई करनेकी जरूरत है। नये कानूनके 'गज़ट' में आते ही अर्जी वापस ले लेनी होगी। शायद इस सम्बन्धमें मजिस्ट्रेटके सामने मुकदमा चलाया जायेगा और उस व्यक्तिका तथा उसके समान वैसे ही अन्य व्यक्तियोंका, जो पंजीयनके सच्चे हकदार होंगे, श्री गांधी बचाव करेंगे। यह बचाव किस प्रकार किया जायेगा, इसके लिए पिछली जोहानिसबर्गकी चिट्ठियाँ देख ली जायें। अनुमतिपत्र कार्यालयका बहिष्कार करनेका मतलब यह होता है कि आगे उस कार्यालयसे किसी भी प्रकारका व्यवहार न किया जाये। ट्रान्सवालमें रहनेवाले जिन लोगोंके मुकदमे अभी उस कार्यालयमें चल रहे हैं, उन्हें वापस नहीं लेना है। यह कदम 'गज़ट' में कानूनके प्रकाशित होते ही उठाया जाये।

श्री गांधी पहले जेल चले जायें तो क्या होगा ?

एक भाई पूछते हैं कि श्री गांधीको यदि पहले जेलमें बैठा दिया गया तो फिर बचावका क्या होगा ? यह प्रश्न ठीक किया गया है। किन्तु श्री गांधी किस प्रकार बचाव करनेवाले हैं, यह समझ लेना है। बचावमें गांधीको सिर्फ यही कहना है कि उनकी सलाहसे लोगोंने जेल जानेका निश्चय किया है। इसलिए पहले जेल उन्हें (श्री गांधीको) दी जानी चाहिए। इस तरह बचाव करनेकी जरूरत ही न पड़े और सीधे श्री गांधीको ही जेलमें बन्द कर दिया जाये तब यही माना जायेगा कि बचाव हो चुका। श्री गांधीकी उपस्थितिका मुख्य हेतु

१. इस शीर्षकसे ये संवादपत्र "हमारे विशेष संवाददाता द्वारा प्रेषित" रूपमें इंडियन ओपिनियनमें हर हफ्ते प्रकाशित किये जाते थे। पहला संवादपत्र मार्च ३, १९०६ को प्रकाशित हुआ था; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ २१५-१६।

अभियुक्तको धीरज बँधाना है। यदि कौम और श्री गांधीके सौभाग्यसे उन्हें ही जेलमें बन्द कर दिया गया तब भी उसमें लोगोंके लिए डरने-जैसी तो कोई बात नहीं रहती। इसके अलावा श्री गांधी जेलमें बैठे-बैठे भी बचाव तो कर ही सकते हैं, यानी यह कि वे खुदासे प्रार्थना कर सकते हैं कि सब भारतीयोंको हिम्मत दे। इस समय मुझे यह भी कह देना चाहिए कि सारे भारतीयोंने जेलका प्रस्ताव स्वीकार किया है, उसका मुख्य कारण यह है कि नया कानून अपमानजनक है। इसलिए, प्रत्येक भारतीयको आखिर अपनी टेक तो रखनी ही है।

स्त्री-बच्चोंके भरण-पोषणके लिए निधि कहाँ है?

यह प्रश्न पूछनेवाले सज्जन लिखते हैं कि संघके पास तो बहुत ही थोड़े पैसे हैं, फिर निर्वाह कहाँसे होगा? अभी कानून 'गजट' में आया नहीं है। उसके 'गज़ट' में प्रकाशित होते ही अग्रगण्य लोग गाँव-गाँव जाकर लोगोंको समझायेंगे और चन्दा इकट्ठा करेंगे। इसके अलावा ईस्ट लन्दन और नेटालके प्रमुख लोग लिख चुके हैं कि वहाँसे मदद दी जायेगी। इसीके साथ यह भी व्यवस्था हुई है कि श्री गांधीके जेल जानेपर 'इंडियन ओपिनियन' के सम्पादक श्री पोलक जगह-जगह जाकर चन्दा एकत्रित करेंगे तथा लोगोंको धीरज बँधायेंगे और समझायेंगे। कुछ गोरोंने भी मदद देनेको कहा है।

जर्मिस्टन बस्ती

जर्मिस्टन बस्तीमें भारतीयोंको काफिरोंके समान पास दिये जाते थे। उसके बारेमें ब्रिटिश भारतीय संघने स्थानीय सरकारको लिखा था। उसका उत्तर आया है कि अब वैसे पास नहीं दिये जायेंगे। अतः बस्तीमें रहनेवालोंको उन पासोंको मढ़वा कर नमूनेके तौरपर रखना हो तो रख सकते हैं। दूसरी बार यदि ऐसा हो तो भारतीयोंका कर्तव्य है कि पास न लें तथा उसके लिए साफ इनकार कर दें।

खान-मजदूरोंकी हड़ताल

हम अनुमतिपत्र कार्यालयके बहिष्कार और जेलकी बातें कर रहे हैं। खदानोंके गोरे मजदूर अधिक वेतनके लिए हड़ताल कर रहे हैं। फलस्वरूप लगभग दस खदानोंका काम रुक गया है। सब समझते हैं कि ये गोरे मजदूर जितना कमाते हैं वह सब खर्च कर देते हैं। उनमें कुछ विवाहित हैं। किन्तु अपनी रोजी तथा अपने बाल-बच्चोंका खयाल न करके, अपने हकके लिए, चालू रोजी छोड़कर बाहर निकल पड़े हैं। उनकी बेइज्जतीका तो कोई सवाल ही नहीं है। फिर भी जिसे उन्होंने अपना हक माना है उसके लिए अधिकारियों एवं करोड़पति खान-मालिकोंके सामने कमर कसी है। उनकी माँग उचित है या नहीं, इसपर अभी हमें विचार नहीं करना है। इस अवसरपर हमें तो उनके जोश और मर्दानगीका अनुकरण करना है।

ईस्ट लन्दनसे प्रोत्साहन और किम्बरलेकी गलतफहमी

ईस्ट लन्दनके भारतीयोंकी ओरसे संघके अध्यक्षके नाम सहानुभूतिपूर्ण पत्र आया है और श्री ए० जी० इस्माइलने लिखा है कि सारे भारतीय कानूनका अनादर करके निश्चित ही जेल जायेंगे। उन्होंने वहाँ मदद मिलनेके बारेमें भी लिखा है। दूसरी ओर किम्बरलेसे सहानुभूतिपूर्ण तार आया है। लेकिन लिखा है कि भारतीय समाजको जेलका कदम उठानेके पहले विचार करना चाहिए। यह किम्बरलेकी गलतफहमी है। भारतीय कौम खुदाको माननेवाली है, इसलिए अब वह उसका अनादर नहीं कर सकती। इसके अलावा पक्का विचार करनेके

वाद ही सितम्बर महीनेमें जेलका प्रस्ताव पास किया गया था। इसलिए हर भारतीयके लिए लाजिम है कि वह हम ट्रान्सवालवालोंको आवश्यक प्रोत्साहन दे और खुदासे प्रार्थना करे कि सच्ची कसौटीके समय वह हमें हिम्मत बख्शे।

जर्मन पूर्व आफ्रिकामें भारतीय

'स्टार'का विलायतस्थित संवाददाता तारसे सूचित करता है कि जर्मन उपनिवेश-समितिकी बैठक जर्मनीमें हुई थी। उसमें कुछ सदस्योंने कहा कि भारतीय व्यापारी जर्मन पूर्व आफ्रिकामें छोटे यूरोपीय व्यापारियोंको नुकसान पहुँचाते हैं। वे काफिरोंको ठगते हैं। विद्रोहके लिए उन्होंने प्रोत्साहित किया था। इसलिए उनके लिए दक्षिण आफ्रिकाके समान कानून बनाये जाने चाहिए। इस समितिकी कार्यसमितिने यह रिपोर्ट दी है कि यद्यपि भारतीय व्यापारियोंपर कुछ इल्जाम तो लगाये ही जा सकते हैं, फिर भी कुल मिलाकर कहना होगा कि उनके होनेसे फायदा हुआ है। उन्हें निकाल देनेका कानून बनानेमें इंग्लैंडसे खींचातानी होना सम्भव है। दूसरे कुछ सदस्योंने, जो उपनिवेशकी हालतसे परिचित थे, भारतीय व्यापारियोंका बचाव किया।

झूठी गवाहीके लिए सजा

पुनसामी नामक धोबीपर झूठी गवाही देनेके अपराधमें सर विलियम स्मिथके पास मुकदमा चला था। उसने दूसरे भारतीयोंपर गलत अभियोग लगाया था कि वे अपराधी हैं, जब कि वह जानता था कि वे निरपराध हैं। पंचने सामीको अपराधी ठहराया और न्यायाधीशने उसे १८ महीनेकी सख्त कैदकी सजा दी। इस उदाहरणसे जो झूठी गवाही देते नहीं डरते उन लोगोंको चेत जाना चाहिए।

निर्धारित समयपर दूकानें बन्द करनेकी हलचल

तारीख २२को जोहानिसबर्ग नगर-परिषदमें निर्धारित समयपर दूकानें बन्द करनेकी बात चली थी। परिषदमें बहुत ही मतभेद रहा इसलिए सदस्य एक निर्णयपर नहीं पहुँच सके और यह निर्णय किया गया कि इस सम्पूर्ण प्रश्नका निबटारा संसद करे। इसीके साथ संसदके समक्ष निवेदन भी कर दिया गया है। इसका मतलब यह होता है कि आम तौर पर दूकानें छः बजे बन्द की जायें तथा बुधवारको एक बजे, शनिवारको रातके ९ बजे और त्यौहारके दिन बिलकुल बन्द रहें। जब दूकानें बन्द हों उस समय फेरीवालोंको भी अपना रोजगार बन्द रखना चाहिए। किन्तु इस तरहका कानून अभी बना नहीं है। यह उसके बननेकी तैयारी समझें। जो भारतीय अपने-आप ही समझकर जल्दी दूकान बन्द करने लगेंगे, वे मीर माने जायेंगे।

जोहानिसबर्गमें भूमि-कर

इस बार भूमि-कर सवा पेनी प्रतिशत निश्चित किया गया है। उस करका हिसाब १ जुलाईसे ३० जून १९०७ तक लगाया जायेगा। २८ जून १९०७ को यह कर जमा करना होगा। जो २८ तारीख तक नहीं जमा कर पायेंगे उन्हें १ प्रतिशत प्रतिमासकी दरसे ब्याज देना होगा।

चीनियोंकी सभा और जेलका प्रस्ताव

पिछले रविवारको चीनी संघकी एक सभा उसके हालमें हुई थी। उसमें लगभग तीन सौ चीनी, विशेषतः व्यापारी, हाजिर थे। श्री एम. क्विनने अध्यक्षका स्थान ग्रहण किया था।

निमन्त्रण पाकर श्री गांधी भी उपस्थित हुए थे।[1] उन्होंने सारी बातें समझाते हुए कहा कि नये कानूनके अन्तर्गत चीनी और भारतीयोंको एक ही माना गया है। नया कानून एशियाई जनताके लिए अपमानजनक है, इसलिए चीनियोंको भी उसे स्वीकार नहीं करना चाहिए। जिन प्रश्नोंका इस 'चिट्ठी' में हल बताया गया है, उन्हींका हल उपर्युक्त बैठकमें भी बताया गया। आखिर यही तय हुआ कि हर चीनी अपने धर्मके अनुसार यह शपथ ले कि वह नया अनुमतिपत्र कभी नहीं लेगा, और जेल जाना पड़ा तो जायेगा।

अनुमतिपत्रका मुकदमा

लाला नामक भारतीयपर अभी कुछ दिनोंसे अनुमतिपत्र सम्बन्धी मुकदमा चल रहा है। वह २७ तारीखको श्री वेंडरवर्गके पास चला था। अधीक्षक वरनॉनने बयान देते हुए कहा :

> मुझे लोगोंसे अनुमतिपत्र माँगनेका हक है। जो अनुमतिपत्रके आधारपर प्रवेश पाना चाहते हैं उनके हकोंकी जाँच करना भी मेरा काम है। २० अप्रैलको मैंने लालाको अपने दफ्तरके पास देखा। लालाने कहा : "मैं आपके साथ काम करना चाहता हूँ। कई लोग अनुमतिपत्र माँगते हैं। उसके बारेमें यदि आप मुझे सूचना देंगे तो हम दोनों बहुत पैसे कमायेंगे। हर व्यक्तिसे मैं २० पौंड लूंगा। उसमें से ८ पौंड आपको दूंगा। यहाँ झूठे अनुमतिपत्रवाले भारतीय और चीनी बहुत हैं। उनके अनुमतिपत्र यदि आप सच्चे कर दें तो मैं आपको २० पौंड दूंगा। यह मेरे हाथमें एक अनुमतिपत्र है। इसपर हस्ताक्षर करके पास कर दें। इस तरह आप प्रतिमाह ४०० पौंड कमायेंगे और मैं २०० पौंड कमाऊँगा। और श्री हैरिसको २०० पौंड मिलेंगे। मुझे मालूम है कि जोहानिसबर्गमें झूठे फार्म चलते हैं, और बिना अनुमतिपत्रके बहुत-से भारतीय हैं।" दूसरे दिन मैंने लालाको बुलाया। वह आया और उसके साथ थोड़ी बात करके घंटी बजाई और उसे पकड़वा दिया। अदालतमें जाते हुए लालाने कहा : "साहब, आपने पैसा कमानेका एक सुनहरा अवसर खो दिया।"

सिपाही हैरिसने भी ऊपर जैसा ही बयान दिया। श्री चैमनेने[2] बयानमें कहा :

> मेरा काम अनुमतिपत्रों सम्बन्धी सारी अर्जियोंकी जाँच करना है। पुलिसकी रिपोर्ट खराब होनेपर शायद ही अनुमतिपत्र दिया जाता है। मेरा फैसला ही निर्णायक माना जायेगा, यद्यपि गवर्नर उस फैसलेको बदल सकता है। भारतीयोंकी अर्जी मैं उपनिवेश-सचिवके समक्ष पेश करता हूँ। लाला मेरे पास दो बार आया था। वह कहता था कि कुछ भारतीयोंके पास झूठे अनुमतिपत्र रहते हैं। मैंने एक बार उसे रेलसे बिना किराये आनेकी अनुमति दी थी, क्योंकि उसने कहा था कि मैं तुम्हें कुछ बातें बताऊँगा। लेकिन वह एक भी खबर नहीं लाया।

लालाने बयान दिया :

> मेरे पास एक भारतीय अनुमतिपत्रके लिए आया। मैंने उससे 'ना' कहा। उसके बाद उसने अनुमतिपत्र बताया जो ठीक नहीं था। उसपर से मैं श्री चैमनेके पास गया

१. देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ५१३।

२. प्रवासी-संरक्षक, बादमें एशियाई पंजीयक नियुक्त किये गये थे; देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ५६।

और मैंने उनसे कहा कि उस व्यक्तिको उस अनुमतिपत्रके लिए ३० पौंड देने पड़े हैं। श्री चैमनेने उस व्यक्तिको आफिसमें ले जानेको कहा। बादमें मैंने श्री वरनॉनके पास जाकर कहा कि यदि श्री चैमनेके पास खबर पहुँचा दोगे तो पैसे दूँगा। इसमें मेरा उद्देश्य यह बतलाना था कि झूठे अनुमतिपत्र किस प्रकार निकलते हैं। मुझे आशा थी कि उसके लिए इनाम मिलेगा। मैं सम्राट्की एक वफादार प्रजा हूँ, इसलिए मुझे आशा थी कि मुझे अपनी वफादारीके लिए सरकारी नौकरी मिलेगी। कोई रकम निश्चित नहीं की गई थी। हैरिसने यह बात की थी कि एक भारतीयने १०० पौंड देनेको कहा है। मैंने अभी कोई निश्चित प्रस्ताव नहीं किया था। इसी बीच मुझे पकड़ लिया गया।

फौजदारी वकीलने लालासे प्रिटोरियासे मिले पत्रके बारेमें प्रश्न पूछे। लालाने कहा कि पत्रका अनुवाद ठीक नहीं है। इसलिए श्री टॉमसनने एक सप्ताहकी और मोहलत माँगी और मुकदमा ४ जून तक के लिए स्थगित किया गया।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १-६-१९०७

७. भारतके सेवक

'इंडियन सोशियॉलॉजिस्ट'में एक विद्वान भारतवासीने भारत-सेवकोंका एक मण्डल स्थापित करनेके सम्बन्धमें लेख लिखा है। उसका सार हम नीचे दे रहे हैं:

यह तो अब बहुतेरे भारतीय समझते और चाहते हैं कि भारत सुसंगठित और स्वतन्त्र बने, किन्तु उस भावनाको सफल बनानेके लिए जो नैतिक बल चाहिए वह नहीं है। जो अपने देशकी सेवा करना चाहते हैं उन्हें पहले तो यह समझना चाहिए कि उन्हें अपना जीवन ऐशोआराममें नहीं बिताना है, बल्कि अपने कर्तव्य निभानेमें लगाना है। भारतकी आबादी दुनियाका पाँचवाँ भाग है। उसका स्तर उठाना ही भारतके सेवकोंका काम है। ये सेवक भारतीय जनताके न्यासी हैं। उन्हें धन, मान, शारीरिक सुखोंकी आकांक्षा छोड़ देनी चाहिए, और अपना जीवन भारतको समर्पित करना चाहिए। समस्त भय निकाल देना चाहिए, और इस सेवाको अपने धर्मके अंगके समान मानना चाहिए। ऐसे देशभक्त व्यक्ति बातोंकी अपेक्षा कामसे ही अपने निर्मल उत्साहका संचार समस्त जनतामें कर सकेंगे।

ऐसे उज्ज्वल उत्साहकी आवश्यकता तो है ही, साथमें ज्ञानकी भी आवश्यकता है। इसलिए भारत-सेवकोंको भारतका इतिहास जानना चाहिए। भारतके लिए अब क्या जरूरी है, यह समझना चाहिए। अन्य देशोंके इतिहासका भी अध्ययन करना चाहिए।

यह उत्साह और ज्ञान, दोनों ही, कुटुम्ब-जालमें फँसे हुए मनुष्यके पास अधिक समय तक नहीं टिकते। सच्चे सेवकके लिए लंगोटबन्द रहकर ब्रह्मचर्यका पालन करना आवश्यक है। विवाहित होते हुए भी जो लोग देश-सेवक होना चाहते हों वे अपनी पत्नी और बच्चोंको इसी कामके लिए तैयार कर सकते हैं। भारतीय स्त्रियाँ अज्ञान हैं। उनमें स्वदेशाभिमान जगानेकी बहुत बड़ी जरूरत है। परन्तु जो लोग विवाहित नहीं हैं, उन्हें यदि उपर्युक्त सेवा

करनी हो तो अविवाहित रहना उत्तम मार्ग है। महान देशभक्त मैज़िनी[1] कहा करते थे कि उनका विवाह तो देशके साथ हुआ है।

आखिरी बात यह है कि ऐसे सेवकमें श्रद्धा चाहिए। उसे यह विचार करनेकी आवश्यकता नहीं कि कल रोटी कहाँसे मिलेगी। जिसे दाँत दिये हैं, उसे चबेना देनेका ध्यान मालिक रखेगा ही।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–६–१९०७

८. तार : तैयबको

[जोहानिसबर्ग]
जून १, १९०७

तैयब[2]
मारफत गुल
केप टाउन

२१ तारीखका उत्तर क्यों नहीं?[3] शीघ्र उत्तर दीजिए।

गांधी

हस्तलिखित अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ३८३५) से।

९. पत्र : प्रधानमन्त्रीके सचिवको[4]

जोहानिसबर्ग
जून १, १९०७

सचिव
परममाननीय प्रधानमन्त्री
प्रिटोरिया

महोदय,

चूँकि एशियाई पंजीयन अधिनियम अभीतक साम्राज्यीय सरकार और स्थानीय सरकारके बीच पत्र-व्यवहारका विषय बना हुआ है, इसलिए मेरे संघने मुझे आदेश दिया है कि मैं प्रधानमंत्रीके सामने एक ऐसा सुझाव रखनेके लिए भेंट करनेकी अनुमति प्राप्त करूँ जिसके अनुसार अधिनियमको 'गजट' में प्रकाशित करनेकी आवश्यकता ही न रहे। कुछ भी हो, यदि

१. जोज़ेफ मैज़िनी (१८०५–७२); इटलीके सुप्रसिद्ध देशभक्त; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ३०२।
२. केप टाउनके एक प्रमुख भारतीय।
३. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।
४. यह २२–६–१९०७ के इंडियन ओपिनियनमें उद्धृत किया गया था।

जनरल बोथा, अधिनियमके सम्बन्धमें आगे कोई कदम उठानेसे पहले, मेरे संघके शिष्टमण्डलसे भेंट करनेके लिए समय दें तो मेरा संघ उनका बहुत आभारी होगा।

मैं आपका कृतज्ञ होऊँगा, यदि आप कृपापूर्वक मालूम करेंगे कि क्या प्रधानमन्त्रीको हमारे संघके एक छोटे-से शिष्टमण्डलसे मिलना सुविधाजनक होगा। यदि, हाँ, तो कब?[1]

आपका आज्ञाकारी सेवक,
ईसप इस्माइल मियाँ
कार्यवाहक अध्यक्ष,
ब्रि० भा० सं०[2]

[अंग्रेजीसे]

प्राइम मिनिस्टर्स आर्काइव्ज़, प्रिटोरिया: फाइल १४/१/१९०७

१०. सच्ची रायें

हमें हर्ष है कि विधानसभाके सदस्य श्री सी० पी० रॉबिन्सन अपने निर्वाचकोंसे कुछ खरी बातें कहते आ रहे हैं और वे एक अप्रिय विषयको सही ढंगसे निभानेमें हिचके नहीं। श्री रॉबिन्सनकी रायमें परवाना अधिकारियोंका, भारतीय प्रार्थियों और दूसरोंके बीच ऐसा भेद करना कि उससे भारतीयोंको हानि पहुँचे, निन्दनीय और अन्यायपूर्ण है; और विशेषकर उस दशामें जब यह चालू व्यापारिक अधिकारियोंका मामला हो। श्री रॉबिन्सनका यह भी खयाल है कि यदि उपनिवेश भारतीय प्रश्नको हाथमें लेना चाहता है तो उसे स्पष्ट, निर्भीक और सच्चे ढंगसे ऐसा करना चाहिए। न्याय और निष्पक्षताका ऐसे सम्मानपूर्ण ढंगसे पक्ष ग्रहण करनेके लिए हम उन्हें बधाई देते हैं। यदि हमारे सभी विधायक ऐसा ही निर्भीक रुख अख्तियार करें तो शीघ्र ही उपनिवेशको वाक्छल और मक्कारीसे बहुत कुछ मुक्ति मिल जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–६–१९०७

११. केपका प्रवासी कानून

हम उस भीषण कहानीकी तरफ लोगोंका ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं जो मेफेकिंगके एक संवाददाताने केपके प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियमके अमलके बारेमें लिखी है। हमारे संवाददाताके कथनानुसार जो भारतीय अपने दस साल पुराने कारोबार और भूसम्पत्ति केपमें छोड़कर भारतको लौट गये थे और जिन्होंने यहाँसे रवाना होनेसे पहले यहाँके अधिवासी प्रमाणपत्र नहीं लिये थे उन्हें फिरसे केप लौटनेमें कठिनाईका सामना करना पड़ रहा है। इसी

१. प्रधानमन्त्रीने शिष्टमण्डलको भेंट नहीं दी।
२. ब्रिटिश भारतीय संघ, जोहानिसबर्ग।

प्रकार, जो भारतीय कई सालसे यहाँ रह रहे हैं उन्हें, रवाना होते समय, ऐसे प्रमाणपत्र पाना कठिन होता है। संवाददाता यह भी लिखता है कि जब ऐसे प्रमाणपत्र दिये भी जाते हैं तब उनकी मियाद केवल एक सालकी होती है। इससे अगर कोई भारतीय अपने अंगीकृत देश शुभाशा अन्तरीपके उपनिवेशमें प्रमाणपत्रमें दी गई तारीखके एक दिन बाद भी लौटता है, तो वह वर्जित प्रवासी बन जाता है। इस प्रकारकी प्रणालीको भारतीयोंको बिना कोई मुआवजा दिये केपसे बाहर निकालनेके लिए जानबूझकर किये गये क्रूर प्रयत्नके सिवाय और क्या कह सकते हैं? इसका इलाज बहुत-कुछ केपके भारतीयोंके हाथमें ही है। और हम वहाँकी विभिन्न संस्थाओंको आगाह करते हैं कि अगर ब्रिटिश भारतीयोंपर यह आसन्न संकट आया और अगर पाँच साल बाद उन्होंने यह पाया कि केपमें बहुत कम भारतीय बचे हैं, तो समाजके सामने इसके लिए उन संस्थाओंको ही जिम्मेदार समझा जायेगा। हम अपने संवाददाताको सलाह देना चाहेंगे कि वे तबतक बराबर केप टाउनकी भारतीय संस्थाओंको आगाह करते रहें जबतक वे अपनी स्पष्ट जड़ताको त्यागकर सक्रिय न हो जायें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–६–१९०७

१२. एशियाई पंजीयन अधिनियम[1]

भयानक विषमता

जब कि भारतीय एशियाई पंजीयन अधिनियमके सामने न झुकनेका अपना पक्का इरादा प्रकट कर रहे हैं, यह मुनासिब है कि उसके बारेमें उनके एतराजोंको भी समझ लिया जाये। इसलिए मैं यहाँ समानान्तर स्तम्भोंमें यह दिखाना चाहता हूँ कि उनकी आज क्या हालत है और नये कानूनके अन्तर्गत क्या हो जायेगी।

इस समय	*नये कानूनके अन्तर्गत*
१. मलायी लोग सन् १८८५ के कानून ३ के अधीन हैं।	१. वे नये कानूनसे मुक्त कर दिये गये हैं। बहुत-से भारतीयोंकी पत्नियाँ और सम्बन्धी मलायी हैं। ऐसे भारतीय जब अपने मलायी सम्बन्धियोंसे मिलेंगे तब उनकी क्या दशा होगी, यह कहनेकी नहीं, स्वयं ही अनुमान करनेकी बात है।
२. प्रत्येक एशियाई, जिसके पास प्रामाणिक रूपसे प्राप्त अनुमतिपत्र है, ट्रान्सवालका पूर्ण और वैध नागरिक है।	२. वह इस अधिकारसे वंचित हो जाता है, और नया पंजीयन प्रमाणपत्र पानेका अधिकार प्राप्त करनेके लिए उसपर यह सिद्ध करनेका भार डाल दिया जाता है कि उसका बाकायदा प्राप्त अनुमतिपत्र धोखाधड़ीसे नहीं लिया गया।

१. यह 'विशेष लेख' के रूपमें प्रकाशित हुआ था। जिस रूपमें यह अधिनियम अन्ततः पास हुआ था उसके लिए देखिए परिशिष्ट १।

३. ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें ३१ मई, सन् १९०२ के बाद पैदा हुए एशियाई बच्चे ट्रान्सवालमें आने और रहनेके अधिकारी हैं।	३. ऐसे बच्चोंका प्रवेश वर्जित है।
४. एशियाई लोगोंके वर्तमान अनुमतिपत्र उन्हें ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें प्रवेश करने व रहनेका अधिकार प्रदान करते हैं। और यहाँ यह प्रश्न नहीं उठता कि उनका ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें जानेके लिए कोई उपयोग है या नहीं।	४. यह अधिकार, जहाँतक उसके अनुमतिपत्र द्वारा प्राप्त होनेकी बात है, वापस ले लिया गया है।
५. जिन एशियाइयोंको ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें रहनेका अनुमतिपत्र प्राप्त है वे उसके आधारपर ट्रान्सवालमें भी प्रवेश कर सकते हैं।	५. ऐसा प्रवेश वर्जित है।
६. वर्तमान अनुमतिपत्र अभिधारकोंकी इच्छाके विरुद्ध बदले नहीं जा सकते।	६. सरकारकी इच्छासे उनमें परिवर्तन किया जा सकता है।
७. एशियाई बच्चोंको अनुमतिपत्र लेनेकी जरूरत नहीं है।	७. ऐसे बच्चोंके संरक्षक-अपने पंजीयन-पत्रपर उन बच्चोंकी शिनाख्त लिखानेके लिए दण्डविधानकी कड़ी शर्तोंसे बद्ध हैं, चाहे वे बच्चे कितनी भी कम उम्रके क्यों न हों। बच्चोंके ८ वर्षकी अवस्था प्राप्त करनेपर उनके संरक्षकोंके लिए फिरसे पंजीयकके सामने हाजिर होकर बच्चोंका पंजीयन कराना और शिनाख्त वगैरहके सम्बन्धमें अन्य विवरण पेश करना आवश्यक है।
८. ट्रान्सवालमें इस समय रहनेवाले नाबालिग बिना अनुमतिपत्रोंके वहाँ रहनेके हकदार हैं और बालिग होनेपर वहाँसे जानेको बाध्य नहीं हैं।	८. ऐसे सभी बच्चे, यदि वे १६ वर्षकी उम्र होनेपर पंजीयकसे अपना पंजीयन-प्रमाणपत्र न ले लें तो, वहाँसे निकाले जा सकते हैं, और उन्हें पंजीयन प्रमाणपत्र देना पंजीयककी इच्छापर निर्भर है।
९. कोई भी एशियाई अपनी शिनाख्तका ब्योरा देनेको बाध्य नहीं है।	९. एक काफिर पुलिसका सिपाही भी उनके प्रमाणपत्र और, समय-समयपर विनियम द्वारा निर्धारित, शिनाख्तका ब्योरा तलब कर सकता है। इतनेपर भी वह सिपाही एशियाईको सबसे करीबके थानेमें ले जा सकता है, जहाँ उसकी फिरसे वैसी ही जाँच हो सकती है और यदि थानेमें उपस्थित अधिकारी उससे सन्तुष्ट नहीं होता तो वह एशियाईको रातभर हिरासतमें रख सकता है।

१०. कोई भी एशियाई, बिना अनुमति-पत्र दिखाये, शुल्क अदा करके अपना व्यापारिक परवाना प्राप्त कर सकता है।

१०. किसी भी एशियाईको उस समय तक यह व्यापारिक परवाना नहीं मिल सकता जबतक वह अपना पंजीयन-प्रमाणपत्र और, विनियम द्वारा निर्धारित, अपनी शिनाख्तके विवरण पेश न कर दे। इसलिए यदि किसी एशियाई व्यापारिक पेढ़ीमें एकसे ज्यादा साझेदार हैं, तो परवाना-अधिकारी परवाना देनेके पहले सभी साझेदारोंको बुलाकर उन्हें किसी भी अपमानजनक जाँचके लिए मजबूर कर सकता है।

११. कोई भी एशियाई किसी दूसरे एशियाईको नौकरी देनेके लिए स्वतन्त्र है।

११. कोई भी एशियाई, जो १६ वर्षसे कम आयुवाले किसी एशियाईको (अपने पुत्रको भी) उपनिवेशमें उसके लिए अनुमतिपत्र प्राप्त किये बिना लाता है या ऐसे किसी बच्चेको अपने कामपर लगाता है, भारी जुर्माने अथवा जेलकी सजाका भागी होगा, और ट्रान्सवालमें रहनेका उसका भी अधिकार खत्म कर दिया जा सकता है।

१२. पंजीयकको अभी काफी बड़े अधिकार प्राप्त हैं।

१२. पंजीयक वास्तवमें एशियाइयोंका स्वामी बन जाता है और उनकी व्यक्तिगत आजादीपर उसका लगभग असीम अधिकार हो जाता है।

१३. अपने पास दूसरोंके प्रमाणपत्र रखनेवाले एशियाई अपराधी नहीं माने जाते।

१३. जिन एशियाइयोंके पास ऐसे प्रमाणपत्र हैं (स्पष्टत: पुत्रका प्रमाणपत्र रखनेवाला पिता भी) उन्हें वे डाक द्वारा [अधिकारीके पास] भेजनेको बाध्य हैं। इसमें चूकनेपर ५० पौंड जुर्माने, और जुर्माना न अदा करनेपर, जेलकी सजा हो सकती है।

ध्यान देने योग्य अतिरिक्त बातें

१. नया कानून काफिरों, केपके अधगोरों (केप बॉएज़) और तुर्की साम्राज्यके ईसाई प्रजाजनोंपर लागू नहीं होता, किन्तु उसी साम्राज्यके मुस्लिम प्रजाजनोंपर लागू होता है। इस तरह यह भारतीयों और उनके धर्मका निर्मम अपमान करता है। और यद्यपि वे सभ्य देशोंके निवासी हैं, तथापि यह उन्हें गुलामीकी स्थितिमें पहुँचा देता है। यह उन्हें काफिरों, केपके अधगोरों और मलायी लोगोंसे भी निम्नतर स्थितिमें डाल देता है।

२. यह धोखाधड़ीको प्रोत्साहन देता है। सम्भव है, कानूनके बनानेवालोंको यह सूझा हो कि किसी एशियाईको मलायी या केपके अधगोरोंका रूप धारण करनेसे रोकनेके लिए इसमें कोई बात नहीं है।

३. यह अनुमतिपत्रके दलालोंके लिए निरीह एशियाइयोंको अपना शिकार बनानेका स्वर्ण अवसर प्रदान करता है। अनुमतिपत्रके अधिकारियोंको यह अच्छी तरह मालूम होगा कि एशियाई आम तौरपर अर्जियोंके पेचीदे फार्म भरनेकी क्षमता नहीं रखते; क्योंकि वे सरकारी विभागोंकी कार्य-प्रणालीसे अपरिचित होते हैं और सहज ही भयभीत हो उठते हैं। इसलिए यह मानकर कि भारतीय और चीनी दोनोंको मिलाकर १२,००० प्रार्थी होंगे, यदि औसतन ३ पौंड प्रति व्यक्ति देना पड़ा तो उनके कमसे-कम ३६,००० पौंड लुट जायेंगे।

तब एशियाइयोंके, ऐसे अजीब कानून और ऐसी लूटके आगे झुक जानेके बजाय, जेल जानेके निश्चयपर कौन ताज्जुब करेगा? सच तो यह है कि उनके लिए अपने निवास-कालमें *सारा ट्रान्सवाल ही एक जलील जेलखाना बन जायेगा। नया कानून एशियाइयोंको जिस* दुःखद स्थितिमें ला पटकता है, वह सिर्फ उन लोगोंको ही नहीं दिखाई दे सकती, जो शक्तिके मदमें चूर हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–६–१९०७

१३. नया खूनी कानून

बल निष्फल हिम्मत बिना, वंश सम्प[1] बिन व्यर्थ;
वित्त व्यर्थ विद्या बिना, अगुणे[2] ज्ञान अनर्थ।

इस कानूनका सारांश १ सितम्बर [,१९०६] के अंकमें दिया जा चुका है। फिर भी हम इस बार उसका अनुवाद अधिक ब्योरेके साथ दे रहे हैं, ताकि यह कानून क्या है, इस सम्बन्धमें लोग स्वयं सही-सही विचार कर सकें। सितम्बर मासमें हमने जिसका सारांश दिया है उस कानून और पास किये गये इस कानूनके बीच कुछ उल्लेखनीय अन्तर है, और यह पहले मूल कानूनसे भी भारतीय समाजके अधिक विरुद्ध है।

(१) १८८५ का कानून ३ निम्न परिवर्तनके साथ कायम रहेगा।

(२) "एशियाई" शब्दका अर्थ है, कोई भी भारतीय कुली अथवा तुर्कीकी मुसलमान प्रजा। इसमें मलाइयों और गिरमिटमें आये हुए चीनियोंका समावेश नहीं होता। (इसके अलावा, पंजीयन-अधिकारी आदिकी व्याख्या दी गई है। उसे यहाँ नहीं दे रहे हैं।)

(३) ट्रान्सवालमें वैध रूपसे रहनेवाले प्रत्येक एशियाईको पंजीकृत हो जाना चाहिए। इसका कोई शुल्क नहीं लगेगा।

१. सुमति, ऐक्य।
२. बिना गुणके व्यक्तिके लिए।

निम्न व्यक्ति ट्रान्सवालमें वैध रूपसे रहनेवाले एशियाई माने जायेंगे।

(क) जिस एशियाईको अनुमतिपत्र कानूनके अनुसार अनुमतिपत्र मिला हो, बशर्ते कि वह अनुमतिपत्र धोखेसे अथवा गलत ढंगसे प्राप्त किया गया न हो। (मुद्दती अनुमतिपत्रोंका समावेश इसमें नहीं होता।)

(ख) प्रत्येक एशियाई, जो १९०२ के मई महीनेकी ३१ वीं तारीखको ट्रान्सवालमें रहा हो।

(ग) जो १९०२ के मई महीनेकी ३१ वीं तारीखके पश्चात् ट्रान्सवालमें जन्मा हो।

(४) प्रत्येक एशियाई, जो इस कानूनके अमलमें आनेकी तारीखको ट्रान्सवालमें मौजूद हो, उपनिवेश सचिव द्वारा निश्चित की गई तारीखसे पहले निर्धारित स्थानपर और निर्धारित अधिकारीके यहाँ पंजीयनके लिए आवेदनपत्र दे दे। कानूनके अमलमें लाये जानेकी तारीखके बाद ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेवाला प्रत्येक एशियाई, यदि उसने इस कानूनके अन्तर्गत नया पंजीयनपत्र न लिया हो तो, पंजीयनके लिए अपना आवेदनपत्र प्रविष्ट होनेके आठ दिनके अन्दर भेज दे। परन्तु,

(क) इस धाराके अनुसार आठ वर्षसे कम उम्रके बालकके लिए आवेदन करना आवश्यक नहीं है।

(ख) आठ वर्षसे लेकर सोलह वर्षके अन्दरके बालकके लिए उसका अभिभावक पंजीयनका आवेदनपत्र दे। और अगर वैसा आवेदनपत्र न दिया गया हो तो सोलह वर्षकी आयु होनेके बाद बालक स्वयं दे।

(५) पंजीयक वैध रूपसे रहनेवाले एशियाईके आवेदनपर ध्यान देगा। पंजीयक उपर्युक्त एशियाईको तथा जिसे वह मान्य करे ऐसे एशियाईको पंजीयनपत्र दे।

यदि पंजीयक किसी एशियाईके आवेदनको अस्वीकृत कर दे, तो उस एशियाईको न्यायाधीशके समक्ष उपस्थित होनेके लिए वह कमसे-कम १४ दिनका नोटिस दे; और यदि निश्चित तारीखपर वह उपस्थित न हो, अथवा उपस्थित होकर भी न्यायाधीशको अपने ट्रान्सवालमें रहनेके अधिकारके सम्बन्धमें सन्तुष्ट न कर सके और वह १६ वर्षकी आयुका हो, तो उसे न्यायाधीश ट्रान्सवाल छोड़नेका आदेश दे। और यदि न्यायाधीशको विश्वास हो जाये कि उपर्युक्त एशियाई वैध निवासी है तो उसे पंजीयकको पंजीयनपत्र देनेका आदेश देना चाहिए।

(६) जो एशियाई आठ वर्षसे कम आयुके किसी बालकका अभिभावक हो, उसे अपना आवेदनपत्र देते समय पंजीयकको उस बालकके सम्बन्धमें विनियम द्वारा निर्धारित विवरण और हुलिया देना चाहिए। यदि उस व्यक्तिका आवेदन स्वीकृत किया गया तो उसके पंजीयनपत्रपर वह विवरण और हुलिया लिख दिया जायेगा। फिर, उस बालककी उम्र आठ वर्ष हो जानेपर वह एक वर्षके अन्दर उसे पंजीकृत करनेके लिए अपने जिला मजिस्ट्रेटकी मारफत दुबारा अर्जी दे।

ट्रान्सवालमें जन्मे हुए बालकका एशियाई अभिभावक बालककी आठ वर्षकी आयु होनेपर एक वर्षके अन्दर उसे पंजीकृत करनेके लिए अर्जी दे।

(क) यदि अभिभावक उक्त प्रकारसे आवेदन न दे तो पंजीयक या मजिस्ट्रेट जो समय निश्चित करे उस समय वह अर्जी दे।

(ख) यदि अभिभावक आवेदन न दे, अथवा आवेदन दिया गया हो किन्तु अस्वीकृत हो गया हो, तो १६ वर्षकी आयु हो जानेपर वह बालक स्वयं एक मासके अन्दर आवेदन करे। जिस मजिस्ट्रेटके पास ऐसा आवेदनपत्र पहुँचे वह उस आवेदनके साथ सभी कागज पंजीयकको भेज दे और यदि पंजीयक ठीक समझे तो, आवेदकको पंजीयनपत्र दे दे।

(७) अभिभावकने उपर्युक्त प्रकारसे आठ वर्षसे छोटे बालकका नाम और हुलिया दर्ज न कराया हो और आठ वर्षके बाद बालकका पंजीयनपत्र न लिया हो तो १६ वर्षकी उम्र हो जानेपर बालक स्वयं एक महीनेके अन्दर आवेदन करे। और पंजीयकको उचित मालूम हो तो वह उसे पंजीयन-प्रमाणपत्र दे दे।

(८) इस कानूनके अनुसार यदि कोई व्यक्ति अपने पंजीयनके लिए उपर्युक्त ढंगसे आवेदन नहीं देगा तो उसपर १०० पौंड तक जुर्माना होगा, और जुर्माना न देनेपर उसे तीन महीने तक की कड़ी या सादी कैदकी सजा दी जायेगी।

जो भी व्यक्ति ऐसे किसी सोलह वर्षसे कम आयुवाले एशियाईको ट्रान्सवालमें लायेगा, जो यहाँका वैध निवासी न हो, और जो व्यक्ति उस लड़केको नौकर रखेगा, वे दोनों अपराधी समझे जायेंगे, उन्हें उपर्युक्त प्रकारसे सजा दी जायेगी, उनका पंजीयन खारिज कर दिया जायेगा और उन्हें ट्रान्सवाल छोड़ देनेका आदेश दिया जायेगा। यदि वे ट्रान्सवाल नहीं छोड़ेंगे तो उन्हें कानूनके मुताबिक जुर्माने या जेलकी सजा दी जायेगी।

सोलह वर्षसे ज्यादा उम्रवाला जो भी एशियाई उपनिवेश-सचिव द्वारा निश्चित की गई अवधिके पश्चात् ट्रान्सवालमें बिना पंजीयन-प्रमाणपत्रके पाया जायेगा उसे ट्रान्सवाल छोड़नेका आदेश दिया जायेगा और यदि वह ट्रान्सवाल नहीं छोड़ेगा तो उसे जुर्माने अथवा कैदकी सजा होगी।

उपर्युक्त प्रकारका पंजीयनपत्र-रहित एशियाई पंजीयनका आवेदन न देनेका न्यायालयको सन्तोषप्रद कारण बतायेगा तो उसे न्यायाधीश आवेदन करनेके लिए मोहलत दे सकता है। और उस अवधिमें यदि वह पंजीयन न करवा ले तो उसे फिर बाहर जानेका या सजा भोगनेका आदेश दिया जायेगा।

(९) सोलह वर्षकी आयुवाला जो-कोई एशियाई ट्रान्सवालमें प्रवेश करेगा अथवा रहता होगा उसे कोई भी पुलिस या उपनिवेश-सचिव द्वारा आदिष्ट व्यक्ति पंजीयनपत्र दिखानेके लिए कह सकेगा; और इस कानूनकी धाराओंके अनुसार निर्धारित विवरण तथा हुलिया माँग सकेंगा।

सोलह वर्षसे कम उम्रवाले एशियाईका अभिभावक उस बालकका पंजीयनपत्र दिखाने और विवरण तथा हुलिया प्रस्तुत करनेके लिए उपर्युक्त प्रकारसे बाध्य है।

(१०) जिस व्यक्तिके पास इस कानूनके अनुसार प्राप्त किया हुआ नया पंजीयनपत्र होगा उसे ट्रान्सवालमें रहने और प्रवेश करनेका हक है।

(११) जिस व्यक्तिको किसी दूसरे व्यक्तिका पंजीयनपत्र अथवा मियादी अनुमतिपत्र मिले उसे सारे दस्तावेज तत्काल पंजीयकके पास भेज देने चाहिए। यदि वह नहीं भेजेगा तो उसको ५० पौंड तक जुर्मानेकी अथवा एक महीनेतक की कड़ी या सादी कैदकी सजा दी जायेगी।

(१२) जिस व्यक्तिका पंजीयनपत्र खो जाये उसे तुरन्त नये पंजीयनपत्रके लिए अर्जी देनी चाहिए। उस अर्जीमें कानूनके मुताबिक सारा विवरण दिया जाये और उसपर पाँच शिलिंगके टिकट लगाये जायें।

(१३) 'गज़ट' में निर्धारित की गई तारीखके पश्चात् किसी भी एशियाईको राजस्व कानून या नगरपालिकाकी धाराओंके अनुसार तबतक परवाना नहीं दिया जायेगा जबतक वह अपना पंजीयनपत्र न दिखाये तथा माँगी हुई हकीकत व हुलिया न दे दे।

(१४) किसी भी एशियाईकी आयुका प्रश्न खड़ा होनेपर यदि वह प्रमाणोंके साथ और कोई आयु सिद्ध न कर सके तो पंजीयक द्वारा निश्चित की हुई आयु ही सही मानी जायेगी।

(१५) इस कानूनके अन्तर्गत जो हलफनामा देना पड़ेगा उसपर टिकटकी आवश्यकता नहीं है।

(१६) जो व्यक्ति पंजीयन-प्रमाणपत्रके सम्बन्धमें कुछ धोखा देगा, अथवा झूठ बोलेगा, अथवा दूसरे व्यक्तिको झूठ बोलनेके लिए प्रोत्साहन देगा या सहायता करेगा, अथवा जाली पंजीयनपत्र बनायेगा, अथवा और किसीका पंजीयनपत्र या जाली पंजीयनपत्र काममें लायेगा, अथवा वैसा पंजीयनपत्र दूसरोंको काममें लानेके लिए देगा, उसपर ५०० पौंड तक का जुर्माना होगा, अथवा दो वर्ष तक की कड़ी या सादी कैदकी सजा होगी।

(१७) उपनिवेश-सचिव अपनी इच्छानुसार किसी भी एशियाईको मुद्दती अनुमतिपत्र दे सकता है। उस अनुमतिपत्रके सम्बन्धमें नवीं धाराकी शर्तें लागू होंगी और आजतक ऐसे जितने भी अनुमतिपत्र दिये जा चुके हैं उन सबपर यह कानून लागू समझा जायेगा। मियादी अनुमतिपत्रवालेको शराबकी छूट मिल सकती है। अलावा इसके, जिन एशियाइयोंपर यह कानून लागू नहीं होता, उन्हें भी उपनिवेश-सचिव शराबकी छूट दे सकता है।

(१८) गवर्नर निम्नलिखित कामोंके लिए नियम बना सकते हैं और रद कर सकते हैं:

(क) पंजीयनपत्र किस प्रकारका रखा जाये।

(ख) पंजीयनपत्रके लिए अर्जी किस प्रकार की जाये, किस रूपमें दी जाये, उसमें दी जानेवाली हकीकतें क्या हों, हुलियामें क्या-क्या लिखा जाये।

(ग) पंजीयन-प्रमाणपत्र किस प्रकारका लिया जाये।

(घ) आठ वर्षसे कम आयुवाले बालकका अभिभावक, वह एशियाई जिससे नवीं कलमके अनुसार पंजीयनपत्र माँगा जाये, खोये हुए पंजीयनपत्रकी प्रतिलिपि माँगनेवाला एशियाई, और व्यापारके लिए परवाना माँगनेवाला एशियाई क्या-क्या हकीकतें, कौन-कौन-सा हुलिया दे।

(ङ) १७ वीं कलमके अनुसार किस प्रकार अनुमतिपत्र दिया जाये।

(१९) प्रत्येक एशियाई अथवा एशियाईके अभिभावकपर, यदि वह अपने लिए ऊपर निर्दिष्ट की गई बातें नहीं करता, और यदि इसके लिए अन्यथा कोई सजा निर्धारित नहीं की गई है, १०० पौंड तक जुर्माना किया जायेगा अथवा उसे तीन महीने तक का सपरिश्रम या सादा कारावास दिया जायेगा।

(२०) चीनियोंसे सम्बन्धित नौकरीका कानून [लेबर इम्पोर्टेशन ऑर्डिनेन्स] एशियाइयों-पर लागू नहीं होगा।

(२१) १८८५ के कानूनकी तारीखसे पहले यदि किसी एशियाईने अपने नामपर जमीन खरीदी होगी तो उसके उत्तराधिकारीको वह जमीन पानेका अधिकार होगा।

(२२) जबतक सम्राट् स्वीकृति न दें और वह स्वीकृति 'गज़ट' में प्रकाशित न हो जाये तबतक यह कानून अमलमें नहीं आयेगा।

इस कानूनका असर

सौभाग्यसे यह नहीं दिखाई देता कि कोई भी भारतीय उपर्युक्त खूनी कानून स्वीकार करनेको तैयार हो। फिर भी हम नीचे बता रहे हैं कि भारतीयोंकी जो दुर्दशा आजतक नहीं हुई है वह अब होगी। इसमें हमारा उद्देश्य यह है कि जो भारतीय दृढ़ हैं वे और भी दृढ़ हो जायें और जिनके मनमें अनिश्चतता है वे शंकारहित होकर स्वेच्छापूर्वक कानूनसे मुक्त हो जायें, स्वतन्त्र रहें और मर्द कहलायें।

१. नया कानून मलाइयोंपर लागू नहीं होता, भारतीयोंपर होता है।

२. काफिरों और केप बॉयज़पर नया कानून लागू नहीं होता।

३. तुर्किस्तानके ईसाइयोंपर नहीं, किन्तु मुसल्मानोंपर लागू होता है।

४. इस समय अपने अँगूठोंकी निशानी लगे हुए अनुमतिपत्रवाला प्रत्येक भारतीय वैध निवासी है। नये कानूनसे उसका अधिकार एकदम रद हो जाता है और नया अनुमतिपत्र लेते समय उसे उसका असली अनुमतिपत्र कैसे मिला यह बतलाना होगा।

५. वर्तमान अनुमतिपत्र भारतीयकी मर्जीके बिना नहीं बदला जा सकता। नये कानूनके अनुसार मिलनेवाले अनुमतिपत्रोंको सरकार जब चाहेगी तब बदलना होगा।

६. वर्तमान अनुमतिपत्रोंमें ऑरेंज रिवर कालोनीमें जानेकी छूट है। वह उपयोगी है या नहीं, यह प्रश्न अलग है। नये कानूनके द्वारा ऑरेंज रिवर कालोनीका नाम हट जाता है।

७. इस समय ऑरेंज रिवर कालोनीमें अनुमतिपत्र लेकर बसनेवाला भारतीय ट्रान्स-वालमें बेरोक-टोक आ सकता है। नये कानूनसे नहीं आ सकता।

८. इस समय कोई भी भारतीय अपना अनुमतिपत्र प्राप्त करनेके लिए अँगूठेकी छाप या हस्ताक्षर देनेके लिए बाध्य नहीं है। नये कानूनके अनुसार सरकार मनमाने ढंगसे समय-समयपर नियम बनाकर या बदलकर हस्ताक्षर देनेके लिए, अँगूठेकी छाप देनेके लिए या और जो भी कुछ करवाना हो, उसके लिए बाध्य कर सकेगी।

९. इस समय अनुमतिपत्र मालिकको ही अनुमतिपत्र देखनेका हक है। नये कानूनके अन्तर्गत कोई काफिर पुलिस भी देख सकेगी।

१०. नये कानूनके अनुसार काफिर पुलिस नाम और हुलिया माँग सकती है, और उससे सन्तुष्ट न होनेपर थानपर ले जा सकती है। यदि नाम-हुलिया लेनेपर थानेदारको भी सन्तोष न हो तो वह उक्त एशियाईको कालकोठरीमें बन्द रखकर दूसरे दिन न्यायाधीशके पास ले जा सकता है। वर्तमान कानूनके अन्तर्गत यह सब नहीं हो सकता।

११. इस समय एक दिनके बालकके लिए अनुमतिपत्र लेना आवश्यक नहीं है। इसी प्रकार उसका नाम-हुलिया माँगनेकी भी कोई हिम्मत नहीं कर सकता। नये कानूनके अनुसार उस बालकका नाम-हुलिया देकर उसके अभिभावकको वह सब अनुमतिपत्रपर दर्ज करवाना होगा।

१२. आठ वर्षकी आयु पार करनेवाले एशियाई बालक इस समय मुक्त हैं। नये कानूनके अनुसार उपर्युक्त ढंगसे विवरण दर्ज करा देनेके बाद भी बालकके आठ वर्षका होनेपर अभिभावकको फिर अर्जी देनी होगी और नाम-हुलिया देकर पंजीयन करवाना होगा। यदि ऐसा न किया गया तो सजा होगी।

१३. आजकल सोलह वर्षकी आयु होनेपर एशियाई लड़का स्वतन्त्र है और अधिकारपूर्वक रह सकता है। नये कानूनके अनुसार उस लड़केको पंजीयनपत्र लेना होगा, जिसे देना या न देना पंजीयकके हाथमें है। यदि पंजीयनपत्र न दिया गया तो उसे ट्रान्सवाल छोड़ना पड़ेगा।

१४. अभी सोलह वर्षसे कम आयुवाले लड़केको यदि कोई व्यक्ति ले आये तो उसके लिए सजा नहीं है। नये कानूनके अनुसार ऐसा करनेवाले व्यक्तिके लिए कड़ी सजा है। इतना ही नहीं, उसका पंजीयनपत्र रद हो जाता है।

१५. अभी चाहे जो एशियाई व्यापारका परवाना ले सकता है, और उसे अनुमतिपत्र आदि नहीं दिखाने पड़ते। नये कानूनके अनुसार नये पंजीयनपत्र ही नहीं दिखाने होंगे, बल्कि नाम-हुलिया भी देना होगा। यानी किसी भारतीयके दो-चार साझेदार हों तो परवाना-अधिकारी उन सबकी उपस्थितिकी माँग कर सकेगा, और उपस्थित न होनेपर परवाना देनेसे इनकार कर सकेगा।

१६. इस समय पंजीयककी सत्ता अपेक्षाकृत बहुत कम है। नये कानूनसे, यदि भारतीय उसे मान लेते हैं तो, पंजीयक भारतीयोंका अन्नदाता बन जाता है।

१७. नये कानूनके अन्तर्गत प्रत्येक भारतीय आवेदन करनेके लिए तो बाध्य है ही। ऐसा योग्य भारतीय क्वचित् ही हो जो स्वयं अपनी अर्जी लिख सके। अनुमतिपत्रके दलालोंने बहुत कमाई की है, किन्तु यदि भारतीय समाज नये कानूनके सामने झुक गया तो उन्हें तो गड़ा हुआ खजाना ही मिल जायेगा। कमसे-कम आँकें और प्रति व्यक्ति तीन पौंड गिनें, तो भी, चूँकि अधिक नहीं तो दस हजार भारतीय अर्जदार तो यहाँ होंगे ही, भारतीयोंकी जेबमें से तीस हजार पौंडका ढेर लगेगा।

१८. ऐसे जुल्मी कानूनको मानकर जो पंजीयनपत्र लेंगे या लिवायेंगे, उनके लिए यही कहना होगा कि उन लोगोंने उपर्युक्त हिसाबके अनुसार पैसे बँटवा कर भारतीयोंका खून ही बहाया है।

ऐसे कानूनसे किस भारतीयके रोंगटे नहीं खड़े होते, किस भारतीयका खून नहीं खौलता, यह जाननेके लिए हम आतुर हैं। और हम नहीं समझ सकते कि कोई भी भारतीय ऐसे कानूनके सामने झुकना चाहेगा। नया कानून गुलामीकी हद है। हम आशा करते हैं कि चाहे जो लाभ होता हो, एक भी भारतीय इस कानूनको स्वीकार नहीं करेगा, और चाहे जैसा नुकसान सहन करके भी उसका सामना करेगा। श्री कैलनबैकने[1] जो लिखा[2] है वह विलकुल उचित है कि इस कानूनको यदि हम लोग स्वीकार करते हैं तो सब लोग यही समझेंगे कि हम इसके लायक हैं। स्मरण रखना है कि यह कानून भारतीयोंका अपमान ही नहीं करता, हिन्दू और मुसलमान दोनों धर्मोंको कलंकित करता है। कारण, भारतसे आनेवाले हिन्दू-मुसलमानोंपर तो यह कानून लागू होता ही है, इसने उन मुसलमानोंको भी अपनी चपेटमें ले लिया है जो भारतसे नहीं, बल्कि तुर्कीसे (जो यूरोपका हिस्सा माना जाता है) आते हैं, मानो उनके छूट जानेसे ट्रान्सवाल-सरकारको कोई अड़चन पड़ जाती। किन्तु उसी देशके ईसाइयोंको कानूनके प्रभावसे मुक्त रखा है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-६-१९०७

१४. समितिकी भूल

दक्षिण आफ्रिकी ब्रिटिश भारतीय समितिने जनरल बोथाके नाम जो पत्र भेजा है वह बहुत अच्छा है और उसमें सब बातोंका समावेश हो जाता है। इस समितिने इतना काम किया है और वह इतनी अच्छी तरहसे किया है कि उसके लिए हम सर मंचरजी[3], श्री रिच[4] और अन्य सदस्योंका जितना आभार मानें उतना ही कम है। इसीलिए जनरल बोथाके नाम लिखे गये पत्रमें समितिसे जो भूल हो गई है उसे बताते हुए हमें संकोच होता है। फिर भी उसे बतलाना हमारा कर्तव्य है। उससे समितिका मूल्य कम नहीं होता, बल्कि यही सिद्ध होता है कि भूल मनुष्य-मात्रसे होती है। समितिने लिखा है कि भारतीय कौमकी मर्जी होगी तो वह अँगुलियोंकी निशानीकी जगह फोटो दे सकती है। समितिकी यही भूल है। फोटो देना या न देना भारतीयोंकी मर्जीपर छोड़ा गया है, फिर भी हम मानते हैं कि समितिकी ओरसे ऐसी सूचना दी ही नहीं जानी चाहिए थी। इसके अलावा समितिके पत्रसे यह भी भासित होता है कि नये कानूनके सम्बन्धमें मानो सबसे बड़ी और केवल यही आपत्ति है कि अँगुलियाँ लगवाई जायेंगी। सच कहा जाये तो अँगुलियोंकी

१. हरमान कैलनबैक, एक जर्मन वास्तुकार; ये गांधीजीके मित्र बन गये थे और उनके साथ सादे जीवनके प्रयोगमें शामिल हो गये थे। इन्होंने दक्षिण आफ्रिकाके अनाक्रामक प्रतिरोधके समय जेल यात्रा की थी। देखिए **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास,** अध्याय २३, ३३-३५।

२. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ३०-३१।

३. सर मंचरजी मेरवानजी भावनगरी (१८५१-१९३३); भारतीय बैरिस्टर, संसद-सदस्य तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी ब्रिटिश समितिके सदस्य। देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४२०।

४. एल० डब्ल्यू० रिच, लन्दन-स्थित दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके मन्त्री।

468

निशानी केवल एक बात है। मुख्य बात तो यह है कि यह कानून अनिवार्यताके तत्त्वको लेकर भारतीय समाजको कलंकित करता है और उसे हलके दर्जेका समझता है।

फिर भी इस भूलसे कुछ नुकसान होना सम्भव नहीं। विधेयकके खिलाफ की गई लड़ाईके समय यह गलती नहीं हुई। कानून बन जानेके बाद समितिकी सूचनाका कुछ भी असर होना सम्भव नहीं। क्योंकि, आगेका मामला तो भारतीय कौमके हाथमें है। यह कानून यदि भारतीय समाजको दरअसल पसन्द न हो तो चाहे जितने संकट आयें, फिर भी वह उसे स्वीकार नहीं करेगा, बल्कि उसके परिणामस्वरूप जेल भोगेगा तथा उसीमें सुख मानेगा, क्योंकि उससे उसकी प्रतिष्ठा रहेगी।

श्री रिच लिखते हैं कि भारतीय कौमके दृढ़ निश्चयसे जैसे श्री रीज़[1] समितिसे निकल गये वैसे ही और भी कुछ लोग निकल सकते हैं और वे हमें कालिख लगवानेकी सलाह दे सकते हैं। इससे डरनेकी जरूरत नहीं, क्योंकि कानूनके सामने न झुकनेको ही भारतीय समाज अच्छा काम मानता है और अच्छा काम करनेमें किसीका डर रखनेकी जरूरत नहीं रहती। भगवान सदा सच्चेका रक्षक रहा है, यह समझकर ट्रान्सवालके भारतीयोंने जो सीधा मार्ग अपनाया है उसपर उन्हें कायम रहना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–६–१९०७

१५. केपके भारतीय

हम देख रहे हैं कि केपके भारतीयोंकी हालत बहुत बुरी होनेवाली है। मेफेकिंगसे आया हुआ पत्र हमने इस अंकमें अन्यत्र दिया है। केपके प्रत्येक भारतीय नेताका ध्यान हम उस ओर आकर्षित कर रहे हैं। केपके कानूनकी सबसे बुरी धारा यह है कि उसके कारण पास लिये बिना जो भारतीय केप छोड़कर जायेगा वह लौटकर नहीं आ सकेगा। वह पास केवल एक वर्ष चल सकता है। सैकड़ों भारतीय पासके सम्बन्धमें कुछ नहीं जानते। और पास लिया हो तो भी यह नहीं होता कि पास लेनेकी तारीखसे एक वर्षमें सब वापस लौट आयें। इस कानूनसे सम्भव है कि पाँच वर्षके अन्दर केपमें से भारतीय खदेड़ दिये जायेंगे। हम आशा करते हैं कि केपके अग्रणी भारतीय इस विषयपर खूब ध्यान देंगे और तत्काल प्रभाव दिखानेवाला उपाय काममें लायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–६–१९०७

१. जे० डी० रीज़, देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ४२०।

१६. स्वर्गीय कार्ल ब्लाइंड

श्री कार्ल ब्लाइंडके[1] निधनका समाचार तारसे मिला है। वे एक प्रसिद्ध जर्मन थे। उनका जन्म सन् १८२६ में हुआ था। स्वतन्त्रताके लिए और अन्य लोगोंके अधिकारोंके लिए उन्होंने १८४७ से १८४९ के बीच पाँच बार कारावास भोगा था। यह कारावास उन्हें सरकारका विरोध करनेके कारण भोगना पड़ा था। एक बार तो सार्वजनिक कार्यके लिए उन्हें फाँसी तक की सजा दी गई थी, किन्तु वे बच गये। बादमें आठ वर्षकी जेल और भोगी। अन्तमें लोगोंने उन्हें जबरदस्ती छुड़ाया। वे महापुरुष मैजिनी और गैरीबाल्डीके[2] मित्र थे। उन्होंने जापानको रूसके खिलाफ मदद दी। स्वयं बहुत विद्वान थे। उन्होंने इतिहासकी बहुत-सी पुस्तकें लिखी हैं। भारतसे उनको प्रेम था। इतना विद्वान आदमी दूसरोंके दुःखके लिए जेलका कष्ट भोगे और फाँसीपर लटकनेको भी तैयार हो, ऐसे उदाहरण हमारे लिए बहुत ही कामके हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–६–१९०७

१७. हिन्दू विधवाएँ क्या कर सकती हैं?

भारतमें बहुत-सी सम्पदा बेकार जाती है, यह कोई भी देख सकता है। इस सम्पदामें सब चीजें आ जाती हैं। खनिज पदार्थोंकी कोई परवाह नहीं करता। हमारी रुई परदेश जाती है और वहाँसे कपड़ा आता है। आलपिन जैसी चीज भी हम विदेशोंसे लेते हैं। जो हाल पैसेरूपी सम्पदाका है वही मनुष्यरूपी सम्पदाका दिखाई देता है। बहुतेरे बाबाजी और फकीर भीख माँगकर ही गुजर करते हैं। किन्तु वे देशके या अपने किसी भी काम नहीं आते। क्योंकि इस प्रकार भीख माँगनेसे यह नहीं माना जायेगा कि उन्होंने सच्चा वैराग्य या फकीरी ली है। इसी तरह, खासकर हिन्दुओंमें, विधवा औरतें हजारों हैं, जिनका जीवन बिलकुल बेकार जाता है, और उस हद तक भारतीय सम्पदा नष्ट होती है। उसे रोकनेके विचारसे पूनाके एक परोपकारी प्रोफेसर कर्वेने[3] देशको अपना जीवन समर्पित कर दिया है। वे फर्ग्युसन कॉलेजमें जीवन-निर्वाह-भरको पैसे लेकर काम करते हैं। इतना ही नहीं, उन्होंने पूनामें विधवाओंकी शिक्षाके लिए कुछ वर्षोंसे एक संस्था बना रखी है, जहाँ विधवा स्त्रियोंको दाई या डाक्टरीका काम सिखाया जाता है। इस संस्थाका काम दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। वे स्वयं उसमें बिना पैसा लिये काम करते हैं, इसलिए उन्हें

१. जर्मनीके एक क्रान्तिकारी, जो बादमें इंग्लैंडमें बस गये थे और निरन्तर राजनीतिक स्वतंत्रताका समर्थन करते रहे थे।

२. ज्युसैपी गैरीबाल्डी (१८०७-८२); इटलीके देशभक्त और सैनिक, जिन्होंने अपने देशकी स्वाधीनताके लिए संघर्ष किया था।

३. आचार्य धोंडो केशव कर्वे (१८५८-   ), वीमेन्स यूनिवर्सिटी, पूनाके प्रतिष्ठाता।

उतनी ही मदद भी मिल रही है। श्रीमती काशीवाई देवधर, श्रीमती नामजोशी, श्रीमती आठवले तथा श्रीमती देशपाण्डे, ये सब बहनें, जिन्होंने उत्तम अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त की है, मदद करती हैं। इसके अलावा वे गाँव-गाँव घूमकर चन्दा इकट्ठा करती हैं। ऐसे काम हम अपने खुदके श्रमसे इतने ज्यादा कर सकते हैं कि उनमें सरकारकी मददकी जरूरत ही नहीं रहती। चतुर्मुखी शिक्षाकी हमें खास जरूरत है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-६-१९०७

१८. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

नया कानून

यह कानून अभी 'गज़ट' में प्रकाशित नहीं हुआ है। इसी बीच विलायतसे आये हुए तारोंसे मालूम होता है कि बड़ी सरकार अब भी उस सम्बन्धमें विचार कर रही है। लॉर्ड ऐम्टहिलने[1] लॉर्डसभामें बहस शुरू की और लॉर्ड लैन्सडाउनने[2] कहा कि ट्रान्सवालमें बिना अनुमतिपत्रके कुछ भारतीयोंके घुस जानेकी अपेक्षा सारे समाजका अपमान करना ज्यादा खतरनाक है। लॉर्ड एलगिनने[3] उत्तरमें कहा कि नये कानूनपर हस्ताक्षर करना उन्हें अच्छा नहीं लगा। इसका मतलब यही हुआ कि भारतीय समाजको कानूनकी शरण नहीं जाना है। कानूनपर इतनी सख्त बहस हुई और उसकी इतनी छीछालेदर की गई है कि अब उसके सामने झुकनेमें भारतीय समाजकी बड़ी बेइज्जती है।

ट्रान्सवालके छींटे

इस कानूनका प्रभाव यहीं पड़ रहा हो सो बात नहीं। इसके छींटे जर्मन पूर्व आफ्रिका तक पहुँचे हैं। जर्मन पूर्व आफ्रिकाके जर्मन लोग भारतीय व्यापारियोंसे लाभ तो पूरा उठाना चाहते हैं किन्तु देना बिलकुल नहीं चाहते। कुछ जर्मन इसलिए डर गये हैं कि यदि भारतीय व्यापारियोंको कष्ट होगा तो अंग्रेज सरकार हस्तक्षेप करेगी। इसके जवाबमें जर्मन संसदके एक सदस्यने यह कहा है कि जब अंग्रेज सरकार ट्रान्सवालके मामलेमें हस्तक्षेप नहीं करती तब जर्मन लोगोंके मामलेमें क्यों करेगी? इसका मतलब भी यही निकलता है कि भारतीय समाजने जहाँ नया कानून स्वीकार किया, समझ लीजिए तुरन्त ही विदेशोंसे उसके पैर उखड़ जायेंगे। फिर तो वे ही भारतीय बाहर रह सकेंगे जो मजदूरी करके प्रतिष्ठा-रहित जीवन बिताना चाहते हों।

एक प्रमुख गोरेकी सलाह

ट्रान्सवाल संसदके एक बड़े सदस्यसे मेरी मुलाकात हुई थी। उससे मैंने जेलके प्रस्तावके सम्बन्धमें पूछा। उसने तुरन्त उत्तर दिया कि यदि आप लोग जेल जायें तो फिर

१. (१८६९-१९३६); मद्रासके गवर्नर, १८९९-१९०६; देखिए "लॉर्ड ऐम्टहिल", पृष्ठ ६५।
२. (१८४५-१९२७); *भारतके वाइसराय और गवर्नर जनरल, १८८८-९३; विदेश-मन्त्री, १९००-६।*
३. उपनिवेश-मन्त्री, १९०५-८।

दूसरी पैरवीकी जरूरत ही नहीं रहती। मैं नहीं समझता था कि भारतीय इतनी हिम्मत करेंगे, और अपनी कौम और आत्मसम्मानके लिए इतना जोश रखेंगे। आप लोग यदि एकतापूर्वक जेलके प्रस्तावपर डटे रहे तो मैं आपकी यथासम्भव मदद करूँगा। इतना ही नहीं, विलायतमें सारा उदार दल आपके साथ होगा और नया कानून रद होकर रहेगा। उन्होंने महान अंग्रेजी लेखक स्वर्गीय बर्कका उदाहरण दिया। बर्कका कहना था कि हजारों लोगोंको फाँसी नहीं लगाई जा सकती, न उन्हें जेलमें ही बन्द किया जा सकता।

एक गोरा व्यापारी क्या कहता है?

एक गोरा व्यापारी सयानेपनका उपदेश देने लगा कि भारतीय समाजको कानूनकी शरण जाना चाहिए। उससे पूछा गया कि उसके पूर्वजोंने लड़ाई लड़ी जिससे अब वह अमन-चैनसे रहता है, तो इससे उसका क्या यह खयाल है कि दूसरे सभी अमन-चैनसे रहते हैं? इसका जवाब वह नहीं दे सका। आखिर मैंने उससे उसके एक बड़े ग्राहकके सामने पूछा, "यदि आपका ग्राहक अपना सब-कुछ छोड़कर कौमके लिए जेल चला जाये, तो वापस आनेपर क्या आपकी नजरमें उसकी प्रतिष्ठा नहीं बढ़ेगी? आप उसे ज्यादा खुले हाथों मदद नहीं करेंगे?" इसके जवाबमें उसने कहा: "हाँ, यह तो ठीक है। लेकिन क्या आप लोगोंमें इतनी हिम्मत है?" आखिर बात यहाँ आकर रुकती है। बाजारमें अभी भारतीयोंका सिक्का खोटा है, इसलिए उसकी कीमत भी खोटे सिक्के जैसी ही आँकी जाती है।

'स्टार' के नाम श्री गांधीका पत्र

जनरल बोथाके लौट आनेसे और इसलिए भी कि विलायतमें समिति अभी कानूनके लिए लड़ रही है, श्री गांधीने 'स्टार' के नाम निम्न पत्र[1] लिखा है:

> जनरल बोथा यहाँ आ गये हैं। बड़ी सरकार और स्थानीय सरकारके बीच अभी लिखा-पढ़ी चालू है, इसलिए आपसे तथा आपकी मारफत उपनिवेशवासियोंसे निवेदन करनेका मुझे और भी प्रलोभन होता है। अब "एशियाई विरोधी" लोगोंको उनके मनकी चीज मिल गई, इतनेसे क्या आप सन्तोष नहीं मान सकते? और क्या उस कानूनको दूर नहीं रख सकते जिसके कारण भारतीय लोग अपराधी माने जायेंगे? कानून अभी 'गज़ट'में प्रकाशित नहीं किया गया है और न उसके प्रकाशित किये जानेकी जरूरत ही है। इसलिए मेरा सुझाव है कि भारतीय कौमके साथ सलाह करके नये अनुमतिपत्रका नमूना तैयार किया जाये और जिन लोगोंके पास इस समय अनुमतिपत्र हों उनका उस नमूनेके अनुसार पंजीयन किया जाये। इस प्रकार यदि सभी एशियाई अपने पंजीयनपत्र बदलवा लें तो फिर उसे अनिवार्य करके उनका अपमान करनेकी आवश्यकता नहीं रहती। किन्तु यदि ऐसे स्वेच्छासे पंजीयनपत्र न बदलवानेवाले एशियाई ट्रान्सवालमें निकल आयें तो उनके लिए एक छोटा विधेयक पास करके लागू किया जा सकता है। इस तरीकेसे सच्चे लोग झूठोंसे अपने-आप छँट जायेंगे और सच्चे सजा पानेसे बच जायेंगे।
>
> उपर्युक्त सुझावमें आप गलती निकाल सकें, ऐसा मुझे तो नहीं लगता। किन्तु यदि आप गलती निकालें तो इसका अर्थ यह होगा कि कानूनका उद्देश्य आपसमें

१. देखिए "पत्र: 'स्टार'को", खण्ड ६, पृष्ठ ५१४-१५।

विकनेवाले अनुमतिपत्रोंको रोकना नहीं, वल्कि भारतीय समाजपर खुलेआम कलंक लगाना है। कलंकित करनेका उद्देश्य जाहिर हो, इसके पहले मैं आपको लॉर्ड ऐम्टहिलके शब्दोंकी याद दिलाता हूँ। उन्होंने कहा है: "इस कानूनसे हमारी (ब्रिटिश) प्रजाकी आवरू जाती है, इतना ही नहीं है। हम अपने भारतीय नागरिकोंके साथ वचनसे बँधे हुए हैं कि उन्हें हर तरहसे हमारे समान हक हैं। यह वचन उन्हें हमारे सम्राट्ने दिया है। हमारे अधिकारियोंने भी यही कहा है। और महान भारतका कारोवार भी इसी नीतिपर चल रहा है। हम उन्हें ब्रिटिश राज्यके नागरिक वननेमें अभिमान महसूस करनेके लिए कहते हैं। हम उन्हें समय-समयपर कहते रहते हैं कि वे भारतमें चाहे जिस पदपर पहुँच सकते हैं, और अपने व्यवहारके द्वारा हम उन्हें विश्वास कराते हैं कि वे चाहे जिस देशमें हों, पूरी तरह ब्रिटिश नागरिकके रूपमें माने जायेंगे।"

इस कानूनसे लॉर्ड लैन्सडाउनको अत्यन्त शर्म मालूम होती है और उनके मनमें ट्रान्सवालकी स्थितिकी अपेक्षा भारतके अपमानका प्रश्न ज्यादा है। मैंने जो सुझाव दिया है उससे ट्रान्सवालकी स्थितिको कोई खतरा नहीं पैदा होता और नये कानूनसे जिस प्रकार अनुमतिपत्ररहित लोगोंको आनेसे रोका जा सकता है उसी प्रकार इस सुझावके अनुसार चलकर भी हो सकता है।

सरकार यदि इस प्रकार न करे तो इसका यह साफ अर्थ है कि नये कानूनका उद्देश्य भारतीय कौमको पछाड़नेके सिवा और कुछ नहीं है। तव तो भेड़ और भेड़ियेवाली वात ही रही। चाहे जिस प्रकारसे भेड़ियाभाईको भेड़के प्राण ही लेने हैं।

कैलनबैककी सहायता

श्री कैलनवैक जोहानिसवर्गके प्रसिद्ध वास्तुकार हैं। उन्होंने भारतीय समाजको धीरज वँधाने तथा जेलके निर्णयको वल देनेके लिए 'स्टार'में निम्नानुसार पत्र लिखा है। यह पत्र श्री गांधीके पत्रके साथ ही छपा है:

> यद्यपि कुछ कारणोंसे मैं राजकीय कामोंमें भाग नहीं लेता फिर भी भारतीय समाज अपने उचित हकोंकी रक्षाके लिए कानूनके विरोधमें जेल जानेके प्रस्ताव द्वारा जो मोर्चा ले रहा है उसे मैं देखता आया हूँ।
>
> अखवारोंकी टीका तथा 'स्टार' में लिखा हुआ श्री गांधीका पिछला पत्र मैंने पढ़ा है। अखवारमें जेलके निर्णयपर टीका की गई है। मैं तो निश्चित मानता हूँ कि एशियाई कानूनमें कुछ वातें ऐसी हैं जिन्हें कोई भी स्वाभिमानी व्यक्ति सहन नहीं कर सकता। और इतनी तकलीफके वाद भी एशियाई लोगोंको यदि तीव्र पीड़ा न हो तो मानना होगा कि वे कानूनके सर्वथा योग्य हैं, यह वात सिद्ध हो गई। इसलिए जो लोग अपने भाइयोंको कानूनसे होनेवाले अपमानका दर्शन कराते हैं उन्हें उपद्रवी कह देना सरासर अनुचित है। जो भारतीय कानूनकी आपत्तिजनक वातोंको समझ सकते हैं उनका कर्तव्य है कि वे अपने भाइयोंको वे आपत्तियाँ दिखायें, उन्हें उनकी प्रतिष्ठाका भान करायें और उन्हें संगठित करके कानून रद करवानेकी तजवीज करें। मुझे विश्वास है भारतीय व्यापारियोंके व्यापारके डरके कारण हर गोरेकी विवेक-शक्ति खत्म नहीं हो गई। जो भारतीय कानूनका अपमान सहन करनेके वदले जेल जानेको तैयार हैं, पैसे-टकेका नुकसान

उठानेको तैयार हैं, मैं मानता हूँ कि ऐसे भारतीयोंसे सहानुभूति रखनेवाले तथा उनकी प्रशंसा करनेवाले गोरे बहुत हैं।

मैं जानता हूँ कि विभिन्न लोगोंमें आवश्यकतासे अधिक होड़ चलती है। लेकिन मैंने यह देखा है कि युरोपीय लोग उसे बहुत ही बड़ी रूप देते हैं। ब्रिटिश भारतीय संघने जो सूचना दी है, मैं मानता हूँ कि वह बहुत ही उचित है और यदि सरकारने संघकी सलाह मानी होती तो आज जो नाजुक परिस्थिति पैदा हुई है, वह न होती।

अन्तमें मैं यह भी कहता हूँ कि मैं तो अपने भारतीय मित्रोंसे कैदखानेमें मिलने भी जाऊँगा, उनकी तकलीफें कम करनेके लिए जो भी करना उचित होगा वह करूँगा तथा उसमें मुझे आनन्द और अभिमान महसूस होगा . . .।

श्री कैलनबैक इतने उम्दा पत्रके लिए बधाईके पात्र हैं। उनके जैसे और भी गोरे निकलें तो आश्चर्य नहीं। अभी तो हमने कुछ करके नहीं दिखाया, फिर भी श्री कैलनबैक जैसे सज्जन अपनी सहानुभूति व्यक्त करनेके लिए निकल पड़े हैं। फिर जब हम कुछ करके दिखायेंगे तब तो ऐसे बहुतेरे लोग निकलेंगे।

संघकी बैठक

जनरल बोथाके पास शिष्टमण्डल ले जानेके लिए शनिवारको ४–३० बजे संघकी बैठक हुई थी। उसमें श्री ईसप मियाँ (कार्यवाहक अध्यक्ष), श्री अब्दुल गनी[1], श्री कुवाड़िया, श्री नायडू, श्री उमरजी साले, श्री अलीभाई आकुजी, श्री पिल्ले, श्री मुहम्मद, इमाम अब्दुल कादिर आदि सज्जन उपस्थित थे। श्री हाजी हबीब[2] इस बैठकमें हाजिर होनेके लिए ही प्रिटोरियासे आये थे। कुछ सवालोंके सुलझ जानेके बाद श्री हाजी हबीबके प्रस्ताव और श्री कुवाड़ियाके समर्थनसे जनरल बोथाके पास शिष्टमण्डल ले जाना तय हुआ। 'स्टार' में श्री गांधीने ऊपरका जो निवेदन प्रकाशित कराया है उसे मान्य करनेके लिए सरकारसे निवेदन किया जाये और यदि सरकार उसे मान्य न करे और कानूनमें परिवर्तन न करे तो भारतीय कौम इस कानूनको कभी मंजूर नहीं करेगी तथा अपने सितम्बर माहके प्रस्तावपर अड़ी रहेगी, इन सब बातोंको भी जनरल बोथाके सामने पेश करनेका निर्णय हुआ। शिष्टमण्डलमें श्री ईसप मियाँ, श्री अब्दुल गनी, श्री हाजी हबीब, श्री मूनलाइट तथा श्री गांधीको भेजना तय हुआ। उसीके अनुसार श्री ईसप मियाँने जनरल बोथासे मुलाकातका दिन निश्चित करनेको लिखा है।[3] उस पत्रके 'इं०ओ०' में प्रकाशित होने तक शिष्टमण्डल जनरल बोथासे मिल भी चुकेगा।

सरकार जेलमें न बन्द करे तो क्या कर सकती है?

ऐसा प्रश्न उठा है कि कहीं सरकार किसी भारतीयपर नये पंजीयनपत्रका मुकदमा न चलाकर सारा वर्ष बीतने तक रुकी रहे, और आखिर उसे परवाना न मिलनेके कारण व्यापार बन्द करना पड़े। किन्तु यह असम्भव है। क्योंकि बिना परवानेके व्यापारियोंकी संख्या यदि सैकड़ों हो तो वे किसी भी दिन कानूनकी चपेटमें नहीं आ सकते। व्यापारियोंके

१. ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष, १९०३-७।

२. ब्रिटिश भारतीय संघकी प्रिटोरिया समितिके मन्त्री।

३. देखिए "पत्र: प्रधानमन्त्रीके सचिवको", पृष्ठ १४-१५।

नौकरोंको कभी भी नुकसान नहीं हो सकता। यदि सरकार ऐसा करेगी तो कानूनका होना-न-होना बराबर हो जायेगा। किन्तु मान लें कि सरकार केवल व्यापारियोंको ही तंग करना चाहती है। उस हालतमें, मैं पहले जवाब दे चुका हूँ कि जेलका डर छोड़ देनेके बाद हमें किसी बातसे डरनेकी जरूरत नहीं रहती। सरकारने यदि परवाना न दिया तो उसका नुकसान होगा, क्योंकि व्यापारी बिना परवानेके भी व्यापार कर सकेगा। इस तरहके व्यापारमें उसे नया पंजीयन न करवाने जितनी ही जोखिम है। नया पंजीयन न करवानेसे आखिर जेल जाना पड़ेगा। वही बिना परवानेके व्यापार करनेसे भी होगा। अन्तर सिर्फ इतना ही है कि बगैर परवाना व्यापार करनेपर एक ही व्यक्तिको सजा होगी, अर्थात् दूकान खुली रह सकेगी और नौकर काम चला सकेंगे; जबकि नया पंजीयन न करवानेपर सभी लोगोंको पकड़ा जा सकता है।

बिना परवानेके व्यापार करनेवालेका माल नीलाम किया जा सकेगा?

यह सवाल भी उठा है। नेटालके कानूनके अनुसार माल नीलाम किया जा सकता है। किन्तु ट्रान्सवालके कानूनके अनुसार तो यदि जुर्माना न दिया जाये तो जेल ही जाना होगा। जुर्माना तो किसीको देना ही नहीं है। यानी सरकार व्यापारिक परवानेके आधारपर यदि हमें कसना चाहे भी तो सभी दूकानदार और फेरीवाले बिना परवानेके व्यापार करने लग जायेंगे।

क्या दूकान बन्द की जा सकती है?

बिना परवानेके व्यापार करनेवालेकी दूकान सरकार बन्द कर सकती है या नहीं, यह सवाल भी उठाया गया है। जबरदस्ती दूकान बन्द करनेका कानून दक्षिण आफ्रिकामें किसी भी जगह नहीं है। इसलिए उसका डर रखनेकी जरूरत ही नहीं।

क्या विनियमों द्वारा परिवर्तन हो सकता है?

यह सवाल उठा है कि जनरल बोथा विनियम बनाकर हमें राहत दे सकते हैं या नहीं; और हम जितनी चाहते हैं उतनी राहत यदि मिल जाये तो भी क्या कानूनका विरोध करनेकी आवश्यकता रहती है? पहली बात तो यह जानना रहा कि कानून बनानेसे क्या हो सकता है? कानूनसे तो यही हो सकता है कि केवल अँगूठा लगानेसे या सारी अँगुलियाँ लगानेसे या हस्ताक्षर करनेसे काम चल सकता है या नहीं चल सकता। लेकिन बच्चोंका पंजीयन करवाना, पुलिसके द्वारा सताया जाना, पुलिसके पास शिनाख्त लिखवाना वगैरह कानूनकी जो खूनी धाराएँ हैं उनमें किसी धारासे परिवर्तन नहीं किया जा सकता। संक्षेपमें, कानून हमारे जो काला टीका लगाता है उसे धाराओं द्वारा नहीं पोंछा जा सकता। अतः हम जो सुधार चाहते हैं उन्हें कानूनमें परिवर्तन किये बिना करना जनरल बोथाके लिए सम्भव नहीं है। कानूनमें परिवर्तन किया जानेकी आशा करना बिलकुल बेकार है। अधिकसे-अधिक यही हो सकता है कि कानून अभी 'गज़ट'में प्रकाशित न हो। ऐसा करनेमें दोनों पक्षोंकी प्रतिष्ठा रह सकती है। सरकार यदि कानूनमें ऐसा परिवर्तन करे कि वह कानून हमें स्वीकार्य हो जाये तो उसमें उसकी फजीहत होगी।

स्वतन्त्र भारतीय कुत्तोंसे भी गये-बीते

यहाँ आजकल खेतीकी बड़ी प्रदर्शनी हो रही है। प्रदर्शनी-समितिने यह नियम बनाया है कि *स्वतन्त्र एशियाई या स्थानीय लोग*, जो गोरोंके नौकर न हों, प्रदर्शनी देखने नहीं जा

सकते। इस प्रदर्शनीमें कुत्तोंको जानेकी छूट है। इतना ही नहीं, अच्छे कुत्तोंको इनाम भी दिया जाता है। ऐसे कुत्तोंके मुकाबले स्वतन्त्र भारतीय इस गोरी समितिकी नजरोंमें गये-बीते हैं।

अनुमतिपत्र कार्यालय

अनुमतिपत्र कार्यालयके बहिष्कारको बहुत ही उचित साबित करनेवाला एक किस्सा अभी-अभी घटित हुआ मालूम पड़ता है। एक भारतीयको सूचना मिली थी कि उसे अनुमतिपत्र दिया जायेगा। उसे कार्यालयमें जाकर अनुमतिपत्र लेना-भर था। इसपर उसे सलाह दी गई कि नये कानूनकी कोई बात न निकाली जाये तो उसे अनुमतिपत्र ले लेना चाहिए। इससे वह अनुमतिपत्र कार्यालयमें गया। श्री चैमनेने उससे कहा कि तुम नये कानूनको मानोगे, ऐसा वचन दो तभी तुम्हें अनुमतिपत्र दिया जा सकेगा। इसपर उस बहादुर भारतीयने वचन देनेसे इनकार कर दिया और बिना अनुमतिपत्र लिये चला आया। अतः प्रत्येक भारतीयको समझना चाहिए कि अनुमतिपत्र-कार्यालय भारतीयोंके लिए एक फन्दा है।

भारतीय व्यापारी क्या कर सकते हैं?

बहुतेरे भारतीय व्यापारियोंका कहना है कि डच लोग हमारे विरुद्ध नहीं हैं। यह दिखानेके लिए वे सरकारको अर्जी देनेको तैयार हैं। यदि यह बात सच हो तो हर भारतीयको उस अर्जीपर [डचोंकी] सही करवानी चाहिए। उस सम्बन्धमें शोर मचानेकी आवश्यकता नहीं। यदि व्यापारी ऐसा करें तो उन्हें अर्जीका फार्म भेजा जायेगा। जो ऐसा कर सकें वे संघको लिखकर सूचित कर दें।

फेरीवालोंका कानून

फेरीवालोंका कानून सरकारने [नगर-परिषदको] लौटा दिया है। उसमें परवाना ५ पौंडका है। उसे सरकारने ३ पौंडका करनेके लिए लिखा है। परिषदकी समितिने फिर सूचित किया है कि वैसा करनेसे पैसेका नुकसान होगा, इसलिए ५ पौंडकी दर कायम रहनी चाहिए।

अनुमतिपत्रका मुकदमा

अभी अनुमतिपत्रके मुकदमे चलते रहते हैं। दो धोबियोंपर झूठे अनुमतिपत्र इस्तेमाल करने और बिना अनुमतिपत्रके रहनेका अभियोग था। उन्होंने बचावमें कहा कि उन्हें एक भारतीय अनुमतिपत्रके लिए यह कहकर ले गया था कि अनुमतिपत्र-अधिकारी जोहानिसबर्ग आता है और अनुमतिपत्र देता है। उनसे ३० पौंड प्रति व्यक्ति माँगा गया। धोबियोंने देना स्वीकार किया। वे भारतीयके घर गये। वहाँ चेहरेपर नकाब डाले हुए एक गोरेको देखा। गोरेने अनुमतिपत्र दिया। उन्होंने ३० पौंड दिये। वे झूठे अनुमतिपत्रके अभियोगसे बरी हो गये। क्योंकि उन्हें मालूम नहीं था कि गोरेने जो अनुमतिपत्र दिये हैं वे झूठे हैं। किन्तु बिना अनुमतिपत्रके रहनेके अपराधमें उन्हें सात दिनमें ट्रान्सवाल छोड़नेका हुक्म दिया गया। यह गोरा अधिकारी कौन है, यह जानने जैसी बात है। ऐसी अफवाहें बहुत हैं।

एक अभियोग दूसरे भारतीयपर था। वह एक भारतीयके शपथपत्रको लेकर था। वही भारतीय दुबारा बयान देनेमें बदल गया था, इसलिए मजिस्ट्रेटने अपराधी भारतीयको छोड़कर झूठे गवाहको कैद किया। कहावत है कि दूसरेके लिए गड्ढा खोदनेवाला खुद ही उसमें गिरता है। इन महाशयके सम्बन्धमें यही बात चरितार्थ हुई जान पड़ती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-६-१९०७

१९. अफगानिस्तानमें मुसलमानोंकी हालत

मुसलमानी प्रशासनके सम्बन्धमें श्री सैयद अली, बी. ए. का एक लेख हम पहले दे चुके हैं। उस लेखका दूसरा भाग मार्चके 'इंडियन रिव्यू' में आया है। उससे निम्न सारांश ले रहे हैं:

तुर्की और ईरानके सम्बन्धमें हम विचार कर चुके हैं। अब अफगानिस्तानके सम्बन्धमें विचार करें, जिसने अभी-अभी बहुत ही तरक्की की है। अमीर अब्दुर्रहमान खानके गद्दीपर बैठनेसे पहले अफगानिस्तानमें कोई राज्यव्यवस्था नहीं थी, यह कहें तो भी अनुचित न होगा, यद्यपि उस समय भी उनकी 'उलु' और 'मलिक' परिषदें थीं। कादी यानी गाँवोंके भिन्न-भिन्न भागोंके लोग अपनी ओरसे सारे गाँवकी परिषदमें सदस्य भेजते थे। वे लोग 'खेल' नामक परिषदके लिए सदस्य निर्वाचित करते थे और उनमें से 'उलु' का निर्वाचन होता था। परन्तु लोगोंके स्वभावके कारण उस समय राज्यकी बागडोर किसीके हाथमें टिक नहीं पाती थी। उस समय चोरी करनेवालेके हाथ काट दिये जाते थे। कोई गुलाम भाग जाये तो उसके पैर काट दिये जाते थे। सरदारोंके हाथमें अलग-अलग विभागोंकी हुकूमत थी। इन सरदारोंके ऊपर अमीर थे। किन्तु वे लोग अमीरकी सत्ता नहीं मानते थे। पठान स्वयं साहसी हैं इसलिए उन्हें इस प्रकारकी अन्धेरगर्दी अच्छी लगती थी। उस समय उपर्युक्त सजा ही योग्य थी। जनरल एलफिन्स्टनने[1] एक पठानसे पूछा तो उसने जवाबमें कहा: "हमें लड़ाईसे संतोष होता है। खतरेसे नहीं डरते, खून देखकर हमें चक्कर नहीं आते, परन्तु अपनी आजादी खोकर हम किसी बादशाहको स्वीकार करनेवाले नहीं हैं।"

जब अमीर अब्दुर्रहमान गद्दीपर बैठे, उन्होंने महान् परिवर्तन किये। उनका अपना राज्य रूस और इंग्लैंड दोनोंके बीच बिचौलिया-सा बना हुआ था। इसका उन्होंने पूरा लाभ उठाया। कभी वे रूसकी ओर झुकते थे तो कभी इंग्लैंडकी ओर। खुलकर झगड़ा उन्होंने किसीके साथ नहीं किया और अन्तमें इंग्लैंडके पक्षमें रहे। उनकी इस चालाकीसे यूरोपके राजनीतिज्ञ दंग रह गये। मरहूम अमीरने हमेशा लाभ उठाया। पर इसके बदलेमें लाभ दिया किसीको नहीं। राज्यके अन्दर भी अत्यन्त कुशलतापूर्वक उन्होंने सरदारोंके जोरको तोड़ दिया। राजस्व

१. माउंट स्टुअर्ट एलफिन्स्टन (१७७९-१८५९) राजनीतिज्ञ और इतिहासकार, बम्बईके लेफ्टिनेंट गवर्नर, १८१९-२७।

कानूनमें सुधार किये। भारतीय सरकारकी ओरसे जो बारह लाख और अन्तमें अठारह लाख रुपये वार्षिक अपने लिए मिलते थे, उसका उन्होंने उत्तम उपयोग किया। सेना बनाई, गोला-बारूद जुटाया और व्यापारकी वृद्धि की। बेकार कर हटा दिये, टकसाल स्थापित की। इस समयके गद्दीनशीन अमीरने अफगानिस्तानकी प्रतिष्ठा और भी बढ़ा दी है। उन्होंने दो सभाएँ स्थापित की हैं, जिनके नाम हैं — 'दरबारेशाही' और 'नवाजानशाही'। इस प्रकारकी हुकूमतमें पठानोंके स्वभावमें भी परिवर्तन होने लगा है। यदि इसी प्रकार लम्बे अर्से तक चलता रहा तो समशेर-बहादुर पठान पूर्वमें शक्तिशाली राज्य स्थापित कर सकेंगे। फिर भी यह स्वीकार करना होगा कि अभीतक अफगानिस्तानी प्रजा राजकीय प्रबन्धमें दखल नहीं देती है। अमीर हबीबुल्ला खान बादशाह हैं। बहादुर योद्धा हैं और मुल्ला हैं। उन्होंने भारतमें एक बार भी अपनी नमाज नहीं छोड़ी थी। १९०५ का सन्धिपत्र अमीर निभायेंगे या नहीं, कहा नहीं जा सकता। अमीर हबीबुल्लाकी गिनती अब बादशाहोंमें होती है। उन्हें २१ तोपोंकी सलामी दी जाती है और ईरानके शाहके पास जितनी सत्ता है उतनी ही अब अफगानिस्तानके अमीरके पास है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–६–१९०७

२०. पत्र[1] : 'स्टार' को

पो० ऑ० बॉक्स ३५५३
[जोहानिसबर्ग]
जून ८, १९०७

सेवामें
सम्पादक
'स्टार'
[जोहानिसबर्ग]

महोदय,

मैंने आज 'गज़ट' में छपी यह सूचना देखी है कि एशियाई कानून-संशोधन अधिनियमपर सम्राट्की स्वीकृति मिल चुकी है और वह एक निश्चित दिन, जो नियत करना है, लागू हो जायेगा। मैं नहीं जानता कि इसका अर्थ क्या है; किन्तु इससे कुछ अवकाश रह जाता है, और इसलिए मैं जनताके सम्मुख अधिनियमके व्यापारिक पक्षको रखना चाहता हूँ। इसके लिए मुझे कुछ अपनी कहानी बतानी पड़ेगी। मैं ट्रान्सवालमें पिछले १९ सालसे बसा हुआ हूँ और मुझे सुलेमान इस्माइल मियाँ एण्ड कं० नामकी पेढ़ीका प्रबन्धक साझेदारके रूपमें प्रतिनिधित्व करनेका सम्मान प्राप्त है। मेरी पेढ़ीका यूरोपीय थोक पेढ़ियोंसे बहुत बड़ा लेनदेन

१. अनुमान है कि इसका मसविदा गांधीजीने बनाया था। यह इंडियन ओपिनियनमें १५–६–१९०७ को प्रकाशित किया गया था।

है। उन्होंने, कहना जरूरी हो तो, इस पेढ़ीके साथ अपने कारोबारमें बहुत-बड़ा आर्थिक लाभ उठाया है। जेमिसनके धावेके[1] समय पेढ़ीने भारी हानि उठाई थी और फिर भी अपने लेनदारोंको रुपयेमें सोलह आने चुकाये थे। बोअर-युद्धमें भी उनकी ऐसी ही अग्नि-परीक्षा हुई थी; तब भी लेनदारोंको पूरा रुपया चुकाया गया था। और अब तीसरी बार उसके सामने पूरी बरबादी मुँह बाये खड़ी है। पहले दो उदाहरणोंमें कारण मानवीय शक्तिसे बाहरका था — कमसे-कम मेरी पेढ़ीके नियन्त्रणसे परे तो था ही। आज उसका कारण अपना उत्पन्न किया हुआ होगा। क्यों? सीधी-सादी बात यह है कि एशियाई कानून-संशोधन विधेयकको प्रत्येक भारतीय, जो उसे समझता है, विशुद्ध दासताका चिह्न मानता है। उससे ट्रान्सवाल, प्रत्येक भारतीयके लिए, जहाँतक मैं उनके विचार जानता हूँ, कारावास बन जाता है। इसलिए भारतीयोंने फैसला किया है कि वे ऐसे कानूनके आगे नहीं झुकेंगे; बल्कि उसकी अवज्ञाके जो भी परिणाम हों, उनको भोगेंगे। किसी कानूनकी अवज्ञा करना भारतीयोंकी प्रवृत्तिके विरुद्ध है। फिर भी इस कानूनके विरुद्ध उनकी भावना इतनी प्रबल है कि इसकी अवज्ञा करना अच्छाई और इसका पालन करना कायरता-भरी बुराई माना जाता है। एक भारतीय व्यापारीके रूपमें जो स्थिति मेरी है वैसी स्थिति मेरे जैसे बहुत-से लोगोंकी है। क्या आप मानते हैं कि ऐसे सभी भारतीय यह पूरी तरह नहीं जानते कि कानूनकी अवज्ञा करनेपर सांसारिक दृष्टिकोणसे उनकी कितनी हानि होती है? किन्तु हमने आपके देशवासियोंके पास रहकर यह सीखा है कि व्यक्तिगत स्वतन्त्रताको खोने और अपमान स्वीकार करनेसे ऐसी हानिको सहन करना अधिक अच्छा है। मैं अपने मिल्कियतनामेकी मंसूखी क्यों मंजूर करूँ और अपनी इज्जत खोकर परवाना-दफ्तरमें क्यों जाऊँ एवं ऐसा नया मिल्कियतनामा क्यों माँगूँ जिसमें कई प्रतिबन्ध हों? इसके अतिरिक्त मुसलमान होनेके कारण मैं इस बातपर अत्यधिक रोष प्रकट करता हूँ कि तुर्की साम्राज्यके मुस्लिम प्रजाजन अधिनियमके अपमानास्पद जुएसे मुक्त नहीं हैं जब कि उसी साम्राज्यके गैर-मुस्लिम प्रजाजन मुक्त हैं। मैं आपसे और जनतासे इन तथ्योंको अच्छी तरह तौलनेकी प्रार्थना करता हूँ।

यदि सरकारने यह अधिकार अपने हाथमें न रखा होता कि भारतीयोंके दृष्टिकोणसे जो स्थिति अनुचित है, उससे वह अब भी हट सकती है, तो मैंने आपको कष्ट न दिया होता। स्वेच्छासे फिर पंजीयन करानेका प्रस्ताव मान लिया जाये और यदि वह सफल न हो तो जो उसे कार्यान्वित न करें उनके अनिवार्य पंजीयनके लिए एक दिन नियत कर दिया जाये। यह सच है कि स्वेच्छासे पंजीयन करानेमें भारतीय बच्चोंपर 'ठप्पा न लगेगा'; किन्तु मैं साफ तौरपर मंजूर करूँगा कि चाहे मुझे कितनी ही हानि क्यों न उठानी पड़े, मैं उस कानूनकी अवज्ञा करनेसे न रुकूँगा जिसका अर्थ यह होता है कि मैं अपने एक दिनके बच्चेका हुलिया लिखाऊँ और यह मौन स्वीकृति दे दूँ कि वह दुधमुँहा बच्चा भविष्यका भयंकरतम अपराधी है। मैंने अपने कई यूरोपीय मित्रोंसे बातचीत की है। उन सबका यह खयाल है कि हमारी माँग बहुत ही उचित है। मैं आपसे और उनसे प्रार्थना करता हूँ कि आप ट्रान्सवालमें सम्मानपूर्ण जीवन बितानेके संघर्षमें हमारा समर्थन करें। ईसा जितने ईसाइयोंके नबी हैं उतने ही मुसलमानोंके भी हैं। उन्होंने एक जगह कहा है: "दूसरोंके साथ वैसा बरताव करो जैसा

१. १८९५ में, देखिए खण्ड १, पृष्ठ ४१८।

तुम चाहते हो कि वे तुम्हारे साथ करें।" क्या मैं इस ईसाई सरकारसे इस बुद्धिमत्तापूर्ण उक्तिके अनुसरणकी प्रार्थना करूँ?

आपका, आदि,
ईसप इस्माइल मियाँ

[अंग्रेजीसे]

स्टार, ११-६-१९०७

२१. पत्र : प्रधान मन्त्रीके सचिवको

जोहानिसबर्ग
जून १२, १९०७

कार्यवाहक सचिव
प्रधान मन्त्री
[प्रिटोरिया]

महोदय,

आपके इसी मासकी ४ तारीखके पत्र सं० १४/१ के सम्बन्धमें, मुझे इस बातपर खेद है कि प्रधान मन्त्री एशियाई पंजीयन अधिनियमके[1] बारेमें मेरे संघके शिष्टमण्डलसे मिलना अनावश्यक समझते हैं।

किन्तु यह देखते हुए कि अभी कानूनको लागू करनेकी तारीख 'गजट' में प्रकाशित नहीं हुई है, मेरा संघ सरकारसे एक बार फिर प्रार्थना करता है और सादर सुझाव देता है कि स्वेच्छया पंजीयनका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाये और यह अधिनियम बादमें, एक छोटे विधेयकके द्वारा, उन लोगोंपर लागू कर दिया जाये जो स्वेच्छया पंजीयनके प्रस्तावपर अमल न करें।

आपका, आदि,
ईसप इस्माइल मियाँ
कार्यवाहक अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-६-१९०७

१. प्रधान मन्त्रीका खयाल था कि इससे कोई 'उपयोगी उद्देश्य' सिद्ध न होगा, क्योंकि अधिनियमसे सम्बद्ध सम्राट्की स्वीकृतिकी घोषणापर हस्ताक्षर किये जा चुके हैं।

२२. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसवर्ग
जून १२, १९०७

प्रिय छगनलाल,[१]

मांटेग्यू जायदादसे, उनके द्वारा किये गये विस्तारके कारण, हमें अतिरिक्त कुछ नहीं मिलनेवाला है।

मुझे हर्ष है कि कठिनाइयाँ आगेके कार्य और आगेकी प्रवृत्तियोंके लिए एड़का काम करती हैं। निःसन्देह उनको इसी अर्थमें समझना उचित है। ऐसे लोग पीछे हटना या निराश होना नहीं जानते। तुमने इस साधारण कहावतको उद्धृत किया है कि जो कर्त्तव्यकी प्रेरणाओंके अनुसार कार्य करते हैं उन्हें सफलता मिलनी ही चाहिए, और ऐसा ही होता है। परन्तु हमें सतर्क रहना चाहिए कि हम 'सफलता' शब्दका गलत अर्थ न लगायें। जहाँ वहुत-सी चीजें, जो धार्मिक नहीं होतीं, गलतीसे वैसी मान ली जाती हैं वहाँ वहुत-सी वातें, जिन्हें हम असफलताएँ समझते हैं, वास्तवमें सफलताएँ होती हैं। इसलिए, इस कहावतकी सत्यताको तो हम स्वीकार कर सकते हैं परन्तु हमें सदैव जो कार्य करना है उसपर दृष्टि रखनी चाहिए और परिणामकी परवाह नहीं करनी चाहिए।

जहाँतक मेरा सम्वन्ध है, तुम 'इंडियन ओपिनियन' में इस अधिनियमके[२] तमिल, हिन्दी और उर्दू अनुवाद छाप सकते हो और मेरे पास अलगसे पत्रक भेज सकते हो। इनको हम जितना ही वाँटेंगे उतना ही अच्छा होगा। यह अधिनियम अपनी निन्दनीयता आप ही वताता है। मैं देखता हूँ कि यहाँ भी लोगोंपर इसका ऐसा ही प्रभाव पड़ा है। यद्यपि तुमने मेरे पास चालू अंककी ३५० प्रतियाँ भेजी थीं, वहुत कम प्रतियाँ वच रही हैं। व्यासने प्रिटोरियाके लिए ६० प्रतियाँ मँगवाई थीं, और अन्दरूनी इलाकोंसे आज मेरे पास १५ प्रतियोंकी माँग आई है।

गुजराती टाइपके वारेमें मुझे कोई उत्तर नहीं मिला है। गोकलदासने[३] मुझे लिखा था कि वह इधर ध्यान देगा, परन्तु उसने मुझे हर तरहसे निराश ही किया है। वह काहिल, लापरवाह और अन्धविश्वासी हो गया है।

तुम्हारा शुभचिन्तक,
मो० क० गां०

गांधीजीके संक्षिप्त हस्ताक्षर-युक्त टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो नकल (एस० एन० ४७५४) से।

१. गांधीजीके चचेरे भाई खुशालचन्द गांधीके पुत्र। ये **इंडियन ओपिनियन**के गुजराती विभाग तथा फीनिक्समें छापाखानेकी देख-रेख करते थे।

२. एशियाई पंजीयन अधिनियम।

३. गांधीजीकी वड़ी वहन रलियातवेनके पुत्र।

२३. शाही स्वीकृति

पंजीयन अधिनियमके लिए बहुत दिनोंसे टलती आई शाही स्वीकृति अब 'गज़ट' में प्रकाशित हो गई है। जनरल बोथाने यद्यपि लॉर्ड एलगिनको इस बातका आश्वासन दिया है कि वे ब्रिटिश भारतीयोंकी भावनाओंका ख़याल रखेंगे तथापि उन्होंने ब्रिटिश भारतीयोंके एक शिष्ट-मण्डलसे मिलना अस्वीकार कर दिया है और कहा है कि उससे कोई फ़ायदा नहीं हो सकता क्योंकि वह कानून पिछले सप्ताह 'गज़ट' में छप जानेवाला था। लेकिन हम देखते हैं कि यद्यपि कानून 'गज़ट' में छप गया है, तथापि उसके अमलकी तिथि अनिश्चित कालके लिए बढ़ा दी गई है। वह या तो अभी तय होगी या फिर कभी नहीं होगी। ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यवाहक अध्यक्ष श्री ईसप मियाँका पत्र[1], जो 'स्टार' में छपा है और जिसे हमने भी उद्धृत किया है, बहुत ही समयोचित है। श्री ईसप मियाँ, जो बहुत पुराने व्यापारी हैं और जिनके बहुत बड़े स्वार्थ दाँवपर हैं, जनतासे कहते हैं कि उन्होंने इस कानूनके अपमानको इतने मार्मिक रूपसे अनुभव किया है कि अगर इस कानूनके सामने न झुकनेके लिए उन्हें यही कीमत चुकानी पड़े, तो वे अपना सब-कुछ बलिदान करनेके लिए तैयार हैं। इसके बाद उन्होंने बहुत ही तर्कसंगत प्रस्ताव रखे हैं कि कानूनको लागू करनेकी तिथि अभी निश्चित न की जाये और ब्रिटिश भारतीयोंको और अन्य एशियाइयोंको अपनी नेक-नीयतीका सबूत देनेके लिए इस बातकी छूट दी जाये कि वे स्वेच्छासे अपना पुनःपंजीयन करायें। अगर यह प्रयोग असफल साबित हो तो वह कानून उन लोगोंपर लागू किया जाये जिन्होंने स्वेच्छासे अपना पुनःपंजीयन न कराया हो। हमें आशा है कि ट्रान्सवाल सरकार इस स्पष्टतया उचित सुझावको मान लेगी। जनरल बोथाने ट्रान्सवालकी जनताकी तरफसे कई बार साम्राज्य सरकारके प्रति, ट्रान्सवालको दिये गये उदार विधानके लिए, गहरी कृतज्ञता व्यक्त की है, और अपनेको सम्पूर्ण साम्राज्यके लिए चिन्तित बताया है। अगर वे भारतको भी साम्राज्यका अंग मानते हैं तो इस बातकी आशा की जा सकती है कि इस आखिरी क्षणमें भी वे भारतीय समझौतेको स्वीकार करके ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी भावनाओंको दुखाना टाल देंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५–६–१९०७

१. देखिए "पत्र : 'स्टार' को", पृष्ठ ३५-३७।

२४. कानूनका अत्याचार

जो पार उतारे औरोंको, उसकी भी नाव उतरनी है ।
जो गर्क करे फिर उसको भी याँ डवकु-डवकु करनी है ।
शमशीर तवर वन्दूक सनां और नश्तर तीर नहेरनी है ।
याँ जैसी-जैसी करनी है, फिर वैसी-वैसी भरनी है ।

कविने यों गाया है। 'जैसी करनी वैसी भरनी,' यह जगतप्रसिद्ध कहावत है। इस तरहका जो नियम है वह भारतीय समाजके लिए कुछ वदल नहीं जायेगा। जैसे कड़वी वेलमें मीठा फल नहीं लग सकता, पलासमें आम नहीं लग सकता, वैसे ही ट्रान्सवालके भारतीय करेंगे कुछ, और होगा कुछ — सो भी नहीं हो सकता। वे लोग मर्दानगी दिखायेंगे तो मर्दके समान रह सकेंगे। सम्मानके योग्य वात करेंगे तो सम्मान भोगेंगे। दिया हुआ वचन पालेंगे और कहा हुआ करके दिखायेंगे तो उनकी शोभा वढ़ेगी। किन्तु यदि स्वार्थ, डर या अन्य किसी कारणसे प्रतिज्ञा-भ्रष्ट होंगे तो समझ लीजिए कि ट्रान्सवालसे भारतीय समाजके अधिकार लद गये। इतना ही नहीं, ट्रान्सवालवालोंके साथ दूसरे भी पिस जायेंगे। ट्रान्सवालमें भारतीय समाजने ऐसा ही वड़ा काम अपने सिर लिया है।

इसके अलावा कवि कहता है कि जो दूसरोंको पार उतारेंगे वे स्वयं भी पार जायेंगे, यह भी दुनियाका — प्रकृतिका या खुदाका कानून है। यदि हम दूसरेका काम इस तरह करेंगे तो हमारा अपने-आप हो जायेगा। वाकी तो पक्षी और जानवर भी करते हैं। किन्तु मनुष्य और पशुमें मुख्य अन्तर यह है कि मनुष्य परोपकारी प्राणी है। जहाँ लोग प्रजाके सुखमें अपना सुख मानते हैं वहाँ सव सुखी रहते हैं। जहाँ सव अपना-अपना देखते हैं, वहाँ सव वर्वाद हो जाते हैं। क्योंकि "जो गर्क करे फिर उसको भी याँ डवकु-डवकु करनी है।" यह विचार गम्भीर है और सोचें तो सही भी है। जो माँ दुःख उठाकर वच्चेकी परवरिश करती है, वह अन्तमें सुखी होती है; कुटुम्वमें जहाँ सव आपसमें एक-दूसरेका दुःख वँटाते हैं और अपने दुःखकी परवाह नहीं करते, वहाँ कुटुम्व-व्यवस्था निभती चलती है; समाजमें लोग स्वयं दुःख उठाकर समाजकी रक्षा करते हैं और उसके द्वारा अपनी रक्षा करते हैं; उसी प्रकार जहाँ लोग देशके लिए दुःख उठाते हैं, मरते हैं, वहाँ वे जिन्दा रहते हैं और देशका नाम चमकाते हैं। इस तरहके गूढ़ नियमको तोड़कर कौन भारतीय सुख भोगना चाहता है? ये उदाहरण स्पष्ट रूपसे सिद्ध कर देते हैं कि यदि ट्रान्सवालके भारतीय कौमके लिए — अपनी प्रतिष्ठाके लिए — सारे दुःख सहनकर, आपत्तियाँ उठाकर, हाथमें लिया हुआ काम पूरा करेंगे तो उनकी विजय होगी। वे अपने वन्धन काटेंगे और इतिहासमें अपना नाम अमर करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५–६–१९०७

२५. रोडेशिया और ट्रान्सवाल

रोडेशिया विधानसभामें चर्चा शुरू हुई है कि जब ट्रान्सवालमें एशियाइयोंके लिए कानून बन गया है तब यहाँ भी बनाया जाना चाहिए तथा भारतीयोंको आनेसे रोकना और उनका पंजीयन करना चाहिए। सभी सदस्य इस सम्बन्धमें जोरोंसे बोले थे। वे सारी बातें हमने ब्योरेके साथ अंग्रेजी विभागमें दी हैं। उनसे हमें यही देखना है कि यदि ट्रान्सवालका कानून कायम रह गया और भारतीय समाज उसके सामने झुक गया तो हर जगह वैसा ही कानून बनाया जायेगा। रोडेशियाके भारतीयोंको केवल इसी तरह मदद दी जा सकती है कि ट्रान्सवालके भारतीय पीछे पैर न रखें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५–६–१९०७

२६. गिरमिटिया भारतीय मजदूर

थॉर्नविल जंक्शनमें एक गोरेने एक भारतीय गिरमिटियेको बुरी तरह पीटा और वह भारतीय मर गया। गोरेपर मुकदमा चलाया गया, जिसमें उसे १० पौंड जुर्माना हुआ। इसका पूरा विवरण हम अन्यत्र दे रहे हैं। यह मामला रोंगटे खड़े कर देनेवाला है। भारतीय मर गया और गोरा दस पौंड देकर छूट गया, इसे सन्तोषजनक नहीं माना जा सकता। फिर भी हमें बदला लेनेके सम्बन्धमें नहीं सोचना है। गोरेको जगतकर्ताके समक्ष खड़ा होना पड़ेगा। उसे कठोर दण्ड दिया जाता तो न उससे भारतीयकी जान वापस आती और न दूसरे गिरमिटिये ही वैसे व्यवहारसे बच पाते।

रोग दूर करनेके लिए उसका कारण ढूँढ़ना चाहिए। उसी प्रकार इस स्थितिका कारण खोजेंगे तो पता चलेगा कि गिरमिटकी प्रणाली ही बुराईकी जड़ है। यदि गिरमिटकी प्रणाली ही समाप्त हो जाये तो उपर्युक्त अत्याचार भी समाप्त हो सकता है। क्योंकि स्वतन्त्र नौकरीमें मनुष्य गिरमिटियाके समान बँध नहीं जाता। उसे पूरा न पड़े तो वह अलग हो सकता है।

श्री रॉबिन्सनने अपने भाषणमें कहा है कि गिरमिट द्वारा भारतीयोंका आना बन्द होना चाहिए। हम भी ऐसा ही मानते हैं। और इसके लिए कांग्रेसको कारगर उपाय काममें लाना चाहिए। गिरमिट बन्द करनेके हमारे और श्री रॉबिन्सनके कारण अलग-अलग हैं, किन्तु इसमें कुछ हर्ज नहीं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५–६–१९०७

२७. पूर्वका ज्ञान

जलालुद्दीन रूमी

'पूर्वका ज्ञान' नामक पुस्तकमाला इस समय विलायतमें छापी जा रही हैं। उसमें से दो पुस्तकें हमारे पास समालोचनार्थ आई हैं। पहलीका नाम 'बुद्ध-शिक्षा'[1] और दूसरीका 'ईरानी सूफी'[2] है। लेखकने 'ईरानी सूफी' में प्रथम स्थान जलालुद्दीन रूमीको[3] दिया है; उसमें सूफी लोगोंका वर्णन, जलालुद्दीनका जीवन-वृत्तान्त और उनकी कुछ कविताओंका अनुवाद दिया गया है। लेखकका कथन है कि सूफियोंको खुदाके बन्दे माना जा सकता है। उन लोगोंकी प्रवृत्ति मुख्यतः हृदय-शुद्धि और ईश्वर-भक्तिकी ओर है। कहा जाता है कि एक बार जलालुद्दीन रूमी एक मृत्यु संस्कार देखकर नाचने लगे। इसपर जब कुछ लोगोंने उनसे पूछा कि ऐसा क्यों, तो उत्तरमें वे महात्मा बोल उठे: "जब पिंजड़ेसे जीव बाहर आता है, अपने दुःखसे छुटकारा पाता है और अपने सिरजनहारसे मिलने जाता है तब मैं क्यों न खुश होऊँ?" मालूम होता है कि पुराने जमानेमें स्त्रियाँ भी ऐसी बातोंमें स्वतन्त्रतापूर्वक भाग लिया करती थीं। राबिया बीबी स्वयं सूफी थी। उनमें ईश्वरके प्रति प्रेम इतना गहरा था कि जब किसीने उनसे पूछा कि "आप इबलीसकी निन्दा करती हैं या नहीं," तब उन्होंने तुरन्त जवाब दिया, "मैं ईश्वरका भजन करनेमें इतनी लीन रहती हूँ कि मेरे पास दूसरेकी निन्दा करनेका समय ही नहीं रहता।" सूफी सम्प्रदायके उपदेशोंके अनुसार कोई भी धर्म जिसमें नीति हो बुरा नहीं होता। किसीके पूछनेपर जलालुद्दीनने उत्तरमें कहा था, "जितने जीव हैं, ईश्वरको याद करनेके उतने ही मार्ग हैं।" वे फिर कहते हैं "ईश्वरका नूर एक है, परन्तु उसकी किरणें अनेक हैं। . . . हम जिस शाखासे चाहें, सच्चे हृदय और शुद्ध वृत्तिके साथ ईश्वरका भजन कर सकते हैं।"

सच्चा ज्ञान क्या है — इस सम्बन्धमें जलालुद्दीन कहते हैं कि "खूनका दाग पानीसे धोया जा सकता है, परन्तु अज्ञानका दाग तो केवल ईश्वरके प्रेमरूपी जलसे ही मिटाया जा सकता है।" इसके उपरान्त कवि कहता है कि "सच्चा ज्ञान तो केवल ईश्वरका ज्ञान है।" ईश्वर कहाँ है — इस प्रश्नके उत्तरमें कवि कहता है, "मैंने क्रूस तथा ईसाई लोगोंको देखा, परन्तु मैंने ईश्वरको क्रूसमें नहीं देखा। मैं मन्दिरोंमें गया, वहाँ भी उसे नहीं देखा; हिरात और कन्दहारमें भी वह नहीं मिला, और न मिला कन्दरामें। अन्तमें मैंने उसे अपने हृदयमें ढूँढ़ा तो मुझे वह वहाँ दिखाई दिया। अन्यत्र कहीं नहीं।" यह पुस्तक बहुत पठनीय है। यदि इससे ऊपरके जैसे बहुत-से वाक्य उद्धृत किये जायें, तो भी वे खतम होनेवाले नहीं हैं। हम इस पुस्तकको मँगवानेकी सबसे सिफारिश करते हैं। इसे पढ़कर हिन्दू तथा मुसलमान बहुत लाभ उठा सकते हैं। इसका मूल्य विलायतमें २ शिलिंग है।

१. द वे ऑफ द बुद्धा।
२. पर्शियन मिस्टिक्स।
३. (१२०७-७३), ईरानके सूफी कवि।

शेख सादीका 'गुलिस्तां'[1] भी वहींसे अंग्रेजीमें प्रकाशित हुआ है। उसका मूल्य १ शिलिंग है। 'कुरान शरीफका सार' नामकी पुस्तक भी है। उसकी कीमत १ शिलिंग है। 'बुद्ध शिक्षा' का मूल्य २ शिलिंग और 'जरथुस्त्रके उपदेश' का भी २ शिलिंग है। अन्य पुस्तकें भी प्रकाशित होनेवाली हैं। इनमें से यदि कोई पुस्तक हमारे पाठकोंको चाहिए तो उसके उपर्युक्त मूल्यमें प्रति पुस्तक ६ पेनीके हिसाबसे जोड़कर हमें रकम भेज दी जाये। हम पुस्तक खरीदकर भेज देंगे। छः पेनी आवश्यक डाकखर्चके लिए हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५-६-१९०७

२८. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

नया कानून

जनरल बोथाने 'खोदा पहाड़ मारा चूहा' के अनुसार काम किया है। उन्होंने संघको लिखा है कि कानूनको लागू करनेकी सारी तैयारी हो चुकी है, अतः शिष्टमण्डलके मिलनेकी आवश्यकता नहीं। इसलिए सभी 'गज़ट' देखनेमें लग गये। उसमें कानूनके लागू होनेकी तारीख वगैरह छपनेकी राह देखी। लेकिन 'गज़ट' में वैसी कोई बात नहीं मिली। 'गज़ट' में सिर्फ इतनी ही खबर है कि कानूनको सम्राट्ने स्वीकार कर लिया है। यह कोई नई खबर नहीं है। इसके अलावा उसमें दूसरी खबर यह है कि कानूनको लागू करनेकी तारीख बादमें निश्चित की जायेगी। इसका क्या अर्थ? मैं तो यह अर्थ करता हूँ, सरकार इस चक्करमें पड़ी है कि भारतीय समाजने जेल जानेका जो निर्णय किया है उसका क्या किया जाये और कानूनको किस प्रकार अमलमें लिया जाये। अर्थ यह हो या दूसरा, इतना तो निश्चित है कि सरकार जेलके प्रस्तावके सम्बन्धमें सोचमें पड़ गई है।

कुछ प्रश्न

इस तरह, स्थिति डाँवाडोल है। इस बीच भारतीय समाजके लिए अनिवार्य है कि वह अपने हथियार सजाकर तैयार रखे। अब भी प्रश्न पूछे जाते हैं, यह अच्छा लक्षण है। एक प्रश्न तो यह पूछा गया है:

हमारे विलायतके हितचिन्तक जेलका प्रस्ताव नापसन्द करें तो?

यह प्रश्न ठीक किया गया है। इसका उत्तर भी सीधा है। समितिके सदस्य अथवा विलायतके अन्य सज्जनोंको वहींतक अपना हितचिन्तक समझा जाये जहाँतक वे हमें अपनी प्रतिष्ठा और अधिकारकी रक्षा करनेमें मदद करें। उनके विचारोंका हम आदर करें किन्तु जब उनके विचार हमारे अधिकारके विरुद्ध जाते हों तब हम उन विचारोंसे बँधे हुए नहीं हैं। मान लो कि हमें कोई ईसाई बननेके लिए विवश करता है तो उसका हम विरोध करेंगे। मान लो कि हमारे आजतक हितचिन्तक माने जानेवाले लोग हमें सलाह देते हैं

[1] देखिए "वीर क्या करें?", पृष्ठ ३-५।

कि हम ईसाई हो जायें। मुझे विश्वास है कि हम ऐसी सलाहको मान्य नहीं करेंगे, और इसमें हर हिन्दू और मुसलमान मुझसे सहमत होगा। यह कानून भी लगभग उसी तरहका है। यह हमें नामर्द बनाता है, यह स्पष्ट है, और नामर्द बननेकी सलाहको हम कभी नहीं मान सकते। हम सच्चे हैं और खुदा हमारे पक्षमें है इतना काफी है। अन्तमें सत्यकी ही विजय होगी।

जिन्हें सूचनापत्र मिल चुके हैं वे क्या करें?

नेटालसे एक भाई पूछते हैं कि उन्हें ट्रान्सवाल जानेका आदेश मिला है। उन्हें जाना चाहिए या नहीं? इतना तो सब जानते होंगे कि यह आदेश अनुमतिपत्र नहीं है। इस आदेशके आधारपर अभी ट्रान्सवाल जाना बेकार है। कौमके निर्णयके अनुसार अनुमति-पत्र-कार्यालयसे व्यवहार मात्र बन्द है। इसलिए वह आदेश किसी कामका नहीं है। जिनके पास पुराने अनुमतिपत्र न हों, उनके लिए जरूरी है कि वे ट्रान्सवालमें पैर न रखें।

अनुमतिपत्र खो गया हो तो क्या करें?

जिनके अनुमतिपत्र खो गये हों उन्हें पुराने कानूनके अनुसार प्रतिलिपि नहीं दी जाया करती थी। नये कानूनमें प्रतिलिपि देनेकी व्यवस्था है, किन्तु वह नये अनुमतिपत्रकी प्रति-लिपि होगी। जिसका अनुमतिपत्र खो गया हो उसे कुछ भी कार्रवाई नहीं करनी है। उसे दूसरे अनुमतिपत्रवालोंके समान निर्भय होकर बैठना चाहिए।

जिसका अनुमतिपत्र खो गया हो वह प्रवेश कर सकता है?

एक व्यक्तिका अनुमतिपत्र खो गया। उसे अनुमतिपत्र-कार्यालयकी ओरसे प्रमाणपत्र मिला हुआ है। क्या वह भारतसे लौटनेपर वापस प्रवेश कर सकता है? उत्तर: वह व्यक्ति अनुमतिपत्रवालोंके समान प्रवेश कर सकता है। किन्तु आखिर जेल जाना है, इस बातको याद रखें। जिसे जेलसे डर लगता हो उसके पास अनुमतिपत्र हो या न हो, उसे फिलहाल ट्रान्सवालमें प्रवेश नहीं करना चाहिए।

परवानेके लिए श्री चैमनेके हस्ताक्षर?

एक व्यक्तिने बॉक्सबर्गमें परवाना माँगा। उसे परवाना-अधिकारीने श्री चैमनेके हस्ताक्षर लानेको कहा। अधिकारीने ऐसा कहा हो तो उसे गैरकानूनी समझा जाये। नया कानून जबतक लागू नहीं होता तबतक अनुमतिपत्र बतलाना भी अनिवार्य नहीं है, तब श्री चैमनेकी अनुमतिकी तो बात ही कौन-सी?

परवानेके सम्बन्धमें जवाब देते हुए मुझे यह भी बतला देना चाहिए कि एक संवाद-दाता लिखता है कि कोई-कोई बिना परवानेके व्यापार करते हैं। परवाना किसीके नामका और व्यापार किसी औरका, वगैरह। संवाददाताने ऐसे लोगोंके नाम भी भेजे हैं। सच-झूठकी मैं जाँच नहीं कर पाया। किन्तु ऐसे लोगोंको बहुत ही सावधान रहना चाहिए। यदि संवाददाताकी दी हुई खबर सही हो तो मैं ऐसे लोगोंको सलाह देता हूँ कि वे यह समझकर अपनी बुरी आदत सुधार लें कि कुछ भारतीयोंके गलत कामोंके कारण सारे भारतीयोंको दुःख भोगना पड़ता है, और ऐसा आचरण करनेवाले व्यक्तिको भी देर-अबेर सजा भोगनी ही पड़ती है।

चीनियोंकी एकता

चीनियोंने नये कानूनके सामने न झुकनेका निर्णय किया है। इस सम्बन्धमें लिख चुका हूँ। वैसा निर्णय करके वे बैठे न रहें इसलिए उन्होंने एक प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर किये हैं कि इस प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर करनेवाला नया अनुमतिपत्र नहीं लेगा, जेल जायेगा और जो कोई नया अनुमतिपत्र लेगा उससे भोजन-पानीका व्यवहार नहीं रखेगा। इस प्रतिज्ञापत्रपर लगभग नौ सौ चीनियोंने हस्ताक्षर कर दिये हैं, सिर्फ एक सौ हस्ताक्षर लेने बाकी हैं। वह काम भी जोरोंसे चलता दिखाई दे रहा है[1]।

एक सुझाव

इस प्रस्तावके सम्बन्धमें कि दूकानको चालू रखनेके लिए दरखास्त देनेके अन्तिम दिन, या जेलसे छूटनेके बाद प्रत्येक दूकानसे एक व्यक्ति अनुमतिपत्र ले सकता है, दूकानदारोंको सुझाव दिया गया है कि इस प्रकार जो अपना व्यापार चालू रखना चाहते हैं वे अपनी कमाईमें से सारा खर्च निकालकर जो बचत हो उसे कानून-निधिमें डाल दें। यदि दूकानदार उक्त सुझावको स्वीकार करते हैं तो उनका यह कार्य अत्यन्त देशभक्तिपूर्ण होगा।[1]

एक हजूरियेपर मुकदमा

एक भारतीय हजूरियेपर पंजीयन-कार्यालयके मुख्य कारकुनको रिश्वतमें ५० पौंड देनेके अपराधमें प्रिटोरियामें मुकदमा चलाया जा रहा है। एक भाई टीका करते हुए पूछते हैं कि क्या इस तरह रिश्वत देनेवाले आज़ ही तैयार हुए हैं? इतने दिन तक किसीने रिश्वत देनेका प्रयत्न नहीं किया? यदि प्रयत्न किया गया हो तो उनपर मुकदमा क्यों नहीं चलाया गया?

जोहानिसबर्गके निवासियोंको चेतावनी

पुलिस कमिश्नरने सूचना निकाली है कि आजकल बत्ती-निरीक्षक बनकर बहुतेरे ठग घरमें घुसनेका प्रयत्न करते हैं। यदि वे नगरपालिकाका पास न दिखायें तो उन्हें कोई अपने घरोंमें न आने दे।

फेरीवालोंका कानून

फेरीवालोंके कानूनके विषयमें अब भी विवाद जारी है। 'स्टार' में एक महाशय लिखते हैं कि फेरीवालोंसे हर नगरपालिकाकी हदमें परवाना माँगा जाये और हदके बाहर भी माँगा जाये। इससे हर फेरीवालेको हर वर्ष ८० पौंड तक देने होंगे। इस तरह जुल्म किया जानेपर फेरीवाले मर जायेंगे और लोगोंको फेरीवालोंसे जो सुविधा मिल सकती थी वह, दूकानदारोंके लाभके लिए, नहीं मिलेगी। इससे कोई यह न समझ ले कि यह लेखक भारतीयोंका पक्ष ले रहा है। भारतीयोंके अलावा और भी फेरीवाले हैं। किन्तु ये नियम सबपर लागू होते हैं, इसलिए इसमें भारतीयोंका बचाव अपने-आप हो जाता है।

१. चीनी संघने बादको लंदन-स्थित चीनी राजदूतके पास एक याचिका भेजी थी जिसमें अधिनियमके खिलाफ आपत्ति की गई थी। देखिए परिशिष्ट २।

सारांश यह है कि जो नियम विशेषकर भारतीयोंके लिए बनाये जायें उन्हें उनका विरोध करना चाहिए।

शिक्षाका कानून

इस महीनेमें फिर संसदकी बैठक होगी। उसमें नई सरकार शिक्षा-विषयक विधेयक पेश करनेवाली है। उस विधेयकमें एक धारा यह है कि गोरे लड़कोंकी पाठशालामें काले लड़के नहीं जा सकेंगे। यानी यदि कोई निजी शाला शुरू करके उसमें गोरे और काले लड़कोंको एक साथ पढ़ाना चाहे तो नहीं पढ़ा सकता। काले लड़कोंके लिए सरकारकी इच्छा होगी तो अलगसे शाला शुरू करेगी। यह एक नया ही खेल है। नया कानून स्वीकार करनेके बाद भारतीयोंको क्या मिलनेवाला है, यह हमें शिक्षा विधेयकसे मालूम हो जाता है।

मलायी बस्ती

मलायी बस्तीकी गन्दगीके सम्बन्धमें 'स्टार' में एक भाईने लिखा है। उससे मालूम होता है कि उसमें भारतीयोंका नहीं, बल्कि नगरपालिकाका दोष है। क्योंकि, नगरपालिका न गन्दा पानी उठवाती है और न पीनेके पानीके नल लगवाती है। इसके उत्तरमें नगरपालिकाने लिखा है कि गन्दा पानी उठाया जाता है और बहुत जगहोंपर पानीके नल भी हैं। लोग पैसा खर्च करें तो दूसरी जगह भी दिये जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त नगरपालिकाके अधिकारीका कहना है कि यह नहीं कहा जा सकता कि मलायी बस्तीके निवासी गन्दे नहीं हैं। कुछ लोगोंपर गन्दगीके लिए मुकदमा भी चलाया जा चुका है। मुझे भी स्वीकार करना चाहिए कि गन्दगीके आरोपसे हम इनकार नहीं कर सकते। बहुतेरे घरोंमें कूड़ा रहता है, खिड़कियाँ गन्दी रहती हैं, बाड़ा गन्दा रहता है, पाखानेकी स्थिति बड़ी भयानक होती है और रसोई-घर बहुत ही खराब होता है। मैं यह सब पाप मानता हूँ। उसके लिए हमें बहुत सजा भोगनी पड़ती है और आगे भी भोगनी पड़ेगी। लोग सुघरता, खुली हवा और प्रकाशका मूल्य समझने लगें तो हमें बहुत लाभ हो सकता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५-६-१९०७

२९. पत्र : उपनिवेश सचिवको

[जोहानिसबर्ग]
जून १८, १९०७

माननीय उपनिवेश सचिव
प्रिटोरिया

महोदय,

परममाननीय प्रधान मन्त्रीके कार्यवाहक सचिवने मुझे सूचना दी है कि मेरा इस माहकी १८ तारीखका पत्र, जो एशियाई पंजीयन अधिनियमके बारेमें है, आपके विभागको भेज दिया गया है।

मेरा संघ इस बातकी उम्मीद करता है कि इस पत्रमें जिस मसलेका जिक्र है उसपर आप अनुकूलतापूर्वक विचार करेंगे।

आपका, आदि,
ईसप इस्माइल मियाँ
कार्यवाहक अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २२-६-१९०७

३०. नये कानूनसे सम्बन्धित पुरस्कृत कविता

पुरस्कार प्राप्तकर्ता अम्बाराम मंगलजी ठाकर

नये कानूनके सम्बन्धमें गीत लिखवानेके लिए हमने पुरस्कारकी योजना[1] शुरू की थी। उसकी जो प्रतिक्रिया हुई उसे कुल मिलाकर सन्तोषजनक माना जा सकता है। प्रतियोगितामें शामिल होनेवाले २० व्यक्ति थे। सभी कवियोंने सूचित किया है कि उन्होंने पुरस्कारके लिए नहीं, बल्कि अपना उत्साह दिखाने तथा देशसेवाके लिए ही प्रतिस्पर्धामें भाग लिया है। यह उत्साह और भावना प्रशंसनीय है। किन्तु फिर भी हमें कहना चाहिए कि पुरस्कारके लिए लिखनेमें भी देशाभिमानका समावेश नहीं होता, सो बात नहीं। पुरस्कार लेनेमें हमें झेंपना नहीं, बल्कि गर्व महसूस करना चाहिए।

बीस प्रतियोगियोंमें कोई तीन व्यक्तियोंके गीत लगभग समान जान पड़े। इसलिए यह समस्या खड़ी हो गई थी कि किसे पहला स्थान दिया जाये। आखिर नेटाल सनातन धर्म

१. देखिए "एक पौंडका इनाम", पृष्ठ ५।

सभाके अध्यक्षका गीत लगभग पहले स्थानके योग्य मालूम हुआ; इसलिए हमने उन्हें एक पौंडका पुरस्कार भेज दिया है। श्री अम्बाराम ठाकरको हम बधाई देते हैं और आशा करते हैं कि गीतमें जो उद्देश्य रखा गया है उसके अनुसार स्वयं चलकर वे दूसरोंके सामने आदर्श पेश करेंगे और देशकी सेवा करेंगे। भक्तिमें शौर्यका और शौर्यमें भक्तिका समावेश हो तभी उन दोनोंकी शोभा बढ़ती है। इसलिए दोनों हथियार पास रखकर हम अपने कर्तव्यका पालन करते रहेंगे तभी प्रत्येक संकटसे गुजरकर अन्तमें विजयी होंगे।

बीस गीतोंके रचयिताओंमें से कुछने अपने नाम हमें भी नहीं बताये। कुछने एकसे ज्यादा गीत भेजे हैं। उनमें से जानने योग्य गीत जिन नामोंसे आये हैं उन नामोंके साथ हम हर सप्ताह प्रकाशित करते रहेंगे। हम किन कविताओंको जानने योग्य मानते हैं और वे किनकी हैं, यह जाननेकी इच्छा यदि पाठकोंको हो तो हम उन्हें धीरज रखनेकी सलाह देते हैं।

इतना लिखनेके बाद हमें यह भी लिखना चाहिए कि गीत लिखनेमें कवियोंने ज्यादा लगनसे काम लिया होता तो वे और भी अच्छे बन सकते थे। एक भी गीतमें कोई विशेष ओज या कला नहीं दिखाई दी। यदि और भी ज्यादा शोध की जाती तथा विशेष लगनसे काम लिया जाता तो अच्छे शब्द और उदाहरण मिल सकते थे। पाठकोंको हमारी सलाह है कि वे अधिक श्रम करें और अधिक कुशलता प्राप्त करें।

श्री अम्बाराम मंगलजी ठाकरका गीत[1]

'या होम' [बलिदानकी पुकार] करके कूद पड़ो। आगे विजय ही विजय है।

संसारमें जितने शूरवीर भक्त या दाता पैदा हुए हैं और जिन्होंने अपने कर्तव्यका पालन किया है उनकी माताएँ धन्य हैं। मालिकपर सच्चा और पूरा भरोसा रखकर मेरे मनमें यही बात छा जाये कि बस जेल ही जाना है, इसके सिवा कुछ नहीं। यदि दिलमें प्राणसे भी प्यारा देश-प्रेम प्रकट हो जाये तो दोस्तो, खुदा सदा हिम्मतवालेकी मददपर रहता है। सब हिलमिलकर यदि एक टेक मनमें रखें तो जेलका कड़वा फल तो खाना पड़ेगा, लेकिन उसके बाद सारे संसारमें सुख ही सुख है।

१. मूल गीत इस प्रकार है:

या होम करीने पडो फतेह छे आगे — तर्ज

जग जनम्या जे शुरवीर, भक्त कां दाता
कर्तव्य आचरे धन्य, तेहनी माता ॥ टेक ॥

राखी पूरो विश्वास धणीनो साचो
जवुं जेल, जेलने-जेल एम उर राचो ॥ जग ॥

जे प्रगटे दिलमां प्रेम प्राण शुं प्यारो
हिंमतनी मददे खुदा, सदा छे यारो ॥ जग ॥

सौ हळीमळी जो टेक, एक उर राखो
कड्वुं ओसड छे जेल, सुख भव आखो ॥ जग ॥

धिक चोर चाडिया, ठक धूता थई रहेवुं
मरदो हक मळ्वा माट, जेल दुःख सहेवुं ॥ जग ॥

जनम्या ते मरवा माट हिंमत नहि हारो;
समरथ छे मालिक साथ रहम करनारो ॥ जग ॥
या होम तणों ए अर्थ तर्त तैयारी
हक मेळववा बहु लडे युरोपमां नारी ॥ जग ॥
जापान करावे मान, दाखलो ताजो
हक मागो ठामो ठाम, लेश नहि लाजो ॥ जग ॥
जुओ अकबरनो इतिहास सिकन्दर पूरो
भड विक्रम, भोज, प्रताप, नेपोलियन शूरो ॥ जग ॥
जग जाहेर पाम्या मान अमीरने बोथा
बहादुर तणी ये सान, अवर ते थोथा ॥ जग ॥
रक्षक भक्षक बनी जाय कहो क्यां केवुं
महाराज एडवर्ड, हवे केटलु सहेवुं? ॥ जग ॥

चोर, चुगल, ठग, धूर्त बनकर रहनेमें धिक्कार है। मर्दो, हक़ोंकी प्राप्तिके हेतु जेलके दुःख सहो। जिनका जन्म हुआ है उन्हें मरना ही है, इसलिए हिम्मत मत हारो। रहम करनेवाला समर्थ मालिक तुम्हारे साथ है, बलिदानके लिए तुरन्त तैयार हो जाओ। हक प्राप्त करनेके लिए यूरोपमें औरतें भी बहुत लड़ रही हैं। जापानका उदाहरण ताजा है। वह हमें अपनी भूली हुई शक्तिकी याद दिला रहा है और कह रहा है कि हर जगह हम अपने हक माँगें। उसमें लज्जित होनेकी कोई बात नहीं है।

अकबर और सिकन्दरका पूरा इतिहास देखो। विक्रम, भोज और राणा प्रताप बहादुर थे। नेपोलियन शूर था। इनका सारे संसारमें नाम है। ऐसे ही अफगानिस्तानके अमीर और हमारे प्रधान मन्त्री जनरल बोथा हैं। बहादुरोंकी शान यही है, और सब बेकार है।

जब रक्षक ही भक्षक बन जाये तब कहाँ जाकर फरियाद करें। महाराज एडवर्ड, अब हम और कबतक सहन करें?

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, २२–६–१९०७

३१. नेटाल भारतीय कांग्रेस

नेटाल भारतीय काँग्रेसने चन्दा इकट्ठा करना शुरू किया था, लेकिन देखते हैं कि काम अब ढीला पड़ गया है। काँग्रेस अभी कर्जदार है, यह मन्त्रियोंकी सूचनासे ज्ञात हो सकता है। काँग्रेसकी उगाहीमें जो ढील होती है उसे हम नुकसानदेह मानते हैं। यह समय ऐसा नहीं जब ढील सहन हो। काँग्रेसको परवानेके सम्बन्धमें बड़ी लड़ाई लड़नी है; गिरमिटिया कानूनके बारेमें झंडा उठाना है; और समय आनेपर ट्रान्सवालके भारतीयोंकी मदद करनी है। ये तीनों काम बड़े हैं। व्यापारिक परवानोंके बिना व्यापारी परेशान होंगे, इसलिए स्वार्थकी दृष्टिसे भी काँग्रेसको अपने खजानेकी हालत अच्छी रखनी चाहिए। काँग्रेसने १८९४ से अपने लिए जो लक्ष्य निर्धारित किये हैं उनमें गिरमिटियोंके कष्टोंमें हाथ बँटाना मुख्य है।[1] अतः थॉर्नविलमें जो घटना हुई है उसके बाद काँग्रेस चुप नहीं बैठ सकती।[2] मुँह खोलनेके लिए भी इस देशमें महमूदी[3] लगती है — खर्च लगता है। ट्रान्सवालके भारतीयोंको मददके लिए काँग्रेस बँधी हुई है; क्योंकि काँग्रेसने उन्हें लड़ाईमें लगे रहनेकी सलाह दी है। इसके अतिरिक्त ट्रान्सवालकी लड़ाईमें हर भारतीयका स्वार्थ समाया हुआ है। इसलिए हम आशा करते हैं कि उपर्युक्त तीनों बातोंका खयाल करके काँग्रेस कार्यकर्ता कमर कसेंगे और पैसे रूपी शस्त्र तुरन्त ही जमा करेंगे; यह काम कलपर टाला नहीं जा सकता।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, २२–६–१९०७

१. देखिए खण्ड १, पृष्ठ १३०-५।
२. देखिए "गिरमिटिया भारतीय मजदूर", पृष्ठ ४१।
३. चांदीका एक पुराना सिक्का।

३२. नेटालमें जेलका कानून

हमारे नेटालके विधायकोंने जो कानून बनाया है वह "एकको गुड़ और दूसरेको गोबर" वाली कहावतको चरितार्थ करता है। नेटालके सरकारी 'गज़ट'से मालूम होता है कि कैदियोंके चार वर्ग हैं: एक गोरा, दूसरा वर्णसंकर, तीसरा भारतीय और चौथा काफिर। गोरों और वर्ण-संकरोंसे यदि सरकार कुछ काम कराये तो वह उन्हें इनाम देगी। किन्तु यदि भारतीय और काफिर काम करें तो उन्हें कुछ नहीं मिलेगा। इसके अलावा, गोरों और वर्णसंकरोंको एक-एक गमछा मिलता है। किन्तु भारतीयों और काफिरोंको वह भी नहीं — मानों उन्हें गमछे की जरूरत ही नहीं है। इस प्रकार कैदियोंमें भी सरकारने जातपाँतका भेद किया है। वर्णसंकर कैदियोंमें केप बॉय, अमरीकी हब्शी, हॉटेंटॉट वगैरहका समावेश होता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–६–१९०७

३३. हेजाज़ रेलवे

'टाइम्स ऑफ इण्डिया' के संवाददाताने इस रेलवेकी[1] व्यवस्थापर जो आक्रमण किया था उसका सारांश जब हमने दिया तब कहा था कि हमने उस संवादमें बताये विवरणकी श्री किदवई तथा श्री कादिरसे हकीकत पूछी है। श्री कादिर भारत पहुँच गये हैं। श्री किदवईको हमारा पत्र मिला। उन्होंने जो उत्तर दिया है वह हम नीचे दे रहे हैं। श्री किदवई स्वयं इस्लामिया अंजुमनके[2] मन्त्री हैं:

> आपके पत्रके लिए आभारी हूँ। मैं इस समय श्री रिचके पास हूँ। आपने 'टाइम्स' का जो अंश भेजा है वह उन्होंने मुझे दिया है। उसे ठीक तरहसे पढ़ लेनेपर मैं आपको लिखूँगा कि उसमें कौनसी बात सच है। उसमें जो बात गलत होगी उसका उत्तर देनेके लिए मैं कदम उठाऊँगा और जो कुछ मैं करना चाहता हूँ वह भी आपको बताऊँगा। मेरे सहधर्मी भाइयोंका जिसमें बहुत ही हित समाया हुआ है, ऐसे कार्यमें आप इतने व्यस्त हैं, इसके लिए आपका उपकार मानता हूँ। हम भारतके हिन्दू और मुसलमानोंको एक-दूसरेसे सम्बन्धित बातोंमें इसी प्रकार मेहनत तथा परस्पर सहायता करनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–६–१९०७

१. देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ४८४-८६।
२. अखिल इस्लाम अंजुमन, लन्दन।

३४. यूसुफ अली और स्त्री-शिक्षा

श्री यूसुफ अलीने भारतकी हालतके सम्बन्धमें एक पुस्तक लिखी है। वह वहुत ही प्रसिद्ध है। उसमें उन्होंने स्त्री-शिक्षाके वारेमें जो विचार व्यक्त किये हैं वे जानने योग्य हैं। उन्होंने लिखा है कि जवतक भारतमें स्त्रियोंको आवश्यक शिक्षा नहीं मिलती तवतक भारतकी हालत सुधर नहीं सकती। स्त्री पुरुषकी अर्धांगिनी मानी जाती है। यदि हमारा आधा शरीर मुर्दा हो जाये तो हम मानते हैं, हमें लकवा हो गया है, और हम वहुतसे कामोंके लिए अयोग्य हो जाते हैं। तव स्त्रीका जो उपयोग होना चाहिए वह न हो, तो सारे भारतको लकवा हो गया है, यही मानना पड़ेगा। और ऐसी हालतमें यदि भारत दूसरे देशोंके आगे टिक न सके तो उसमें आश्चर्यकी वात कौनसी है? इस तरहका विचार हर माता-पिताको अपनी लड़कीके वारेमें और सारे भारतवासियोंको स्त्री-समाजके वारेमें करना चाहिए। हमें ऐसी हजारों स्त्रियोंकी जरूरत है जो मीरावाई और रावियावीकी वरावरी करें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–६–१९०७

३५. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

ट्रान्सवालकी संसद्

नई संसदका दूसरा सत्र १४ तारीखको प्रारम्भ हुआ। स्थानीय सरकारके कामके ढंगके वारेमें जनरल वोथाने जो भाषण दिया है, वह भारतीय समाजके लिए समझने योग्य है। इसलिए उसका मुख्य हिस्सा नीचे देता हूँ।

चीनी जानेवाले हैं

इस समयके गिरमिटिया चीनियोंको गिरमिट पूरा हो जानेपर वापस भेज दिया जायेगा और वदलेमें दूसरे गिरमिटिया चीनियोंको नहीं आने दिया जायेगा। इस हिसावसे देखनेपर इस वर्षके अन्तमें १६,००० चीनी ट्रान्सवाल छोड़ेंगे और जो वचेंगे वे लगभग १९०७ के[1] अन्ततक चले जायेंगे।

चीनियोंके वदले कौन?

चीनियोंके चले जानेसे खानोंमें मजदूरोंकी तंगी होगी। इसका उपाय एक तो यह है कि जहाँसे भी मिलें वहाँसे काफिरोंको जुटाया जाये और उनके द्वारा काम कराया जाये। इसके लिए पुर्तगीज़ सरकारसे वातचीत चल रही है। दूसरा उपाय यह है कि जैसे-तैसे गोरे मजदूरोंको खानोंमें काम करनेके लिए प्रोत्साहित किया जाये और अन्तमें ट्रान्सवालको सफेद वनाया जाये। गोरे मजदूर कम वेतनपर काम कर सकें, इसके लिए ट्रान्सवाल चुंगी (कस्टम) के

१. यह १९०८ के वदले भूलसे दे दिया गया है। देखिए "जोहानिसवर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ५९।

इकरारनामेसे निकल जायेगा और यदि आवश्यक हुआ तो वह दूसरा इकरारनामा कर लेगा। इसका उद्देश्य यह है कि आज जो जकात देनी पड़ती है उसे बहुत ही घटाकर जरूरी चीजोंके दाम गिराये जायें, जिससे गोरे विलायतमें जितने खर्चमें गुजर कर लेते हैं लगभग उतने ही कम खर्चमें यहाँ रह सकें। आज ट्रान्सवालकी सम्पन्नता केवल खान-उद्योगपर निर्भर है। खेतीको आवश्यक प्रोत्साहन देकर यह स्थिति दूर की जायेगी। खेतीको प्रोत्साहन देने और खेतोंके बाँध बनानेमें सहायता देनेके लिए एक विशेष बैंक खोला जायगा।

यह बैंक किसानोंको पैसा उधार देगा। इस रकमकी पूर्तिके लिए बड़ी सरकार स्थानीय सरकारको ५०,००,००० पौंड कर्ज देगी।

इस भाषणका असर

इस भाषणसे खान-मालिक बड़ी उलझनमें पड़ गये हैं। यह सम्भव नहीं कि उन्हें काफिर ज्यादा तादादमें मिल सकें। इसलिए डर है कि जोहानिसबर्गकी आज जैसी हालत कुछ वर्षों तक बनी रहेगी। किन्तु इसका सबसे बड़ा असर यह होगा कि शायद भारतीयोंके लिए बोरिया-बिस्तर बाँधनेका समय आ जाये। स्थानीय सरकारका दृढ़ निश्चय जान पड़ता है कि ट्रान्सवालके मजदूरोंके सिवा किसी भी काले आदमीको न रहने दिया जाये। अतः यदि भारतीय कौम जरा भी पस्तहिम्मत दिखाई दी तो उसे भगानेमें वह पीछे रहेगी, सो बात नहीं। भारतीय समाजके सामने यह समय "मरूँ अथवा मारूँ" का है।

मजदूर-रक्षक कानून

जान पड़ता है, मेरी पिछली टीकाको जोर देनेवाला एक और कानून इस सत्रमें पास होगा। विभिन्न कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूरोंको यदि काम करते समय चोट लग जाये तो उन्हें या उनके बाल-बच्चोंको हर्जाना देनेका कानून 'गजट' में प्रकाशित हुआ है। यह कानून केवल गोरे मजदूरोंपर लागू होता है। यानी, मान लें कि खानमें या दूसरी जगह गोरे और भारतीय मजदूर साथ-साथ काम करते हों और दोनोंके हाथ या पैर यंत्रमें फँसकर टूट जायें तो इस कानूनके अनुसार खान-मालिक, गोरे मजदूर और उसके कुटुम्बके निर्वाहके लिए तो बँधा हुआ है, किन्तु भारतीय मजदूरकी कोई बिसात नहीं। उसके ऊपर यदि खुदा न हो तो उसका सर्वनाश हो जायेगा। इसके अलावा कोई यह भी खयाल नहीं कर सकता कि उपर्युक्त बैंकसे भारतीयोंको एक कौड़ी भी मिलेगी। वह तो केवल गोरे किसानोंके लिए है। यह सब बोथाकी बहादुरीकी बलिहारी है। उनके जाति-भाइयोंने ट्रान्सवालकी भूमिको बोअर रक्तसे सींचा है, इसलिए इस समय वे पूरी सुनहरी फसल काटें तो इसपर किसीको आश्चर्य क्यों हो? हम यदि अपनेपर बोअरोंकी बहादुरीका थोड़ा-सा भी रंग चढ़ा सकें तो हमारे लिए भी धूम मच सकती है।

वीनेनका पत्र

श्री कैलनबैकने जेलके सम्बन्धमें भारतीय समाजकी जो प्रशंसा की है, जान पड़ता है वह संक्रामक बन गई है। श्री वॉन वीनेन नामक एक गोरेने 'स्टार' में एक पत्र लिखा है। उसका सारांश नीचे दिया जाता है:

> विवेकशील लोग भारतीयोंके बारेमें लिखे गये श्री कैलनबैकके पत्रका समर्थन किये बिना नहीं रह सकते। यदि कुछ भारतीय ट्रान्सवालमें आरामसे रहें और व्यापार करें तो

उससे क्या ट्रान्सवाल नष्ट-भ्रष्ट हो जायेगा? जब हम जंगली थे उस समय जो प्रजा सभ्य थी, उसकी सन्तानको हम अपराधी कहकर निकालते हैं, यह हमें शोभा नहीं देता। भारतीयोंके लिए पंजीयन? जो गोरे स्वयं अपराधी हैं वे ही भारतीयोंके गलेमें यह फन्दा डालना चाहते होंगे। मुझे तो भारतीयोंका एक यही दोष दिखाई देता है कि वे उद्यमी हैं। उनपर आलसी गोरे जुल्म करें, यह समझमें आ सकता है। किन्तु यदि वे अपनी प्रतिष्ठा रखनेके लिए ऐसे कानूनका विरोध करें तो उन्हें दोषी कैसे माना जा सकता है? श्री कैलनबैकके समान मुझे भी अच्छे भारतीयोंका अनुभव हुआ है। श्री गांधीके पत्रसे मालूम होता है कि उनकी मांग बहुत ही उचित है। उनकी मांग मंजूर न हो और वे अपमान सहन करनेके बजाय यदि जेल जानेका निश्चय करें तो उसके लिए उन्हें बधाई दी जानी चाहिए।

ईसप मियाँका पत्र

श्री ईसप मियांने 'स्टार'के नाम एक पत्र[1] लिखा है। उसका सारांश नीचे देता हूँ:

जनरल बोथाको पत्र

ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे श्री ईसप मियांने जनरल बोथाको पत्र[2] लिखा है कि सरकारने कानूनको लागू नहीं किया, इसलिए भारतीय समाजकी सूचनाको स्वीकार करना ठीक होगा। उस पत्रके उत्तरमें जनरल बोथाने कहा है कि उसके लिए उपनिवेश-सचिवको लिखा जाये। इसपर उपनिवेश-सचिवको भी लिखा गया है। उसका जवाब, सम्भव है, इस पत्रके छपने तक आ जायेगा।

'गज़ट'के बारेमें गड़बड़ी

सम्राट्ने कानूनको स्वीकार कर लिया है। इस सम्बन्धमें जो सूचना जारी की गई है उसमें कुछ गलतफहमी मालूम होती है। कुछ लोग मानते हैं कि कानून दो वर्ष तक लागू नहीं होगा। यह भूल है। सूचनामें बताया गया है कि किसी भी कानूनको सम्राट् दो वर्षके अन्दर रद कर सकते हैं। यह कानून जब सम्राट्के सामने पेश किया गया तब उन्होंने कहा था कि वे इस कानूनको रद करना नहीं चाहते। अतः इसका यह अर्थ हुआ कि इस कानूनको दो वर्षके अन्दर रद करनेकी सम्राट्को जो सत्ता थी उसे उन्होंने छोड़ दिया है। यानी यह कानून सदाके लिए कायम रहा। किन्तु सदाके लिए कायम रहा कहनेमें मैं भूल कर रहा हूँ। यदि भारतीयोंको यह कानून स्वीकार नहीं है तो इसपर सम्राट्के हस्ताक्षर हो जानेपर भी यह उनके लिए तो रद ही है।

फ्रीडडॉर्पके व्यापारी

जान पड़ता है, इस सम्बन्धमें श्री रिच विलायतमें जो लड़ाई लड़ रहे हैं उसका फल चखनेका समय आ गया है। निगमने जिन दो व्यापारियोंको भारतीय दूकानोंका स्टॉक जाँचनेके लिए नियुक्त किया है, उन्होंने सरसरी तौरसे पूछताछ की है। उन सारे आँकड़ोंपर

१. इसके बाद गांधीजीने पत्रका गुजराती अनुवाद दिया है जो यहाँ नहीं दिया जा रहा है। मूलके लिए देखिए "पत्र: 'स्टार'को", पृष्ठ ३५-३७।

२. देखिए "पत्र: प्रधान मन्त्रीके सचिवको", पृष्ठ १४-१५।

अब सरकार विचार करेगी। इसी बीच एक और नई बात सामने आई है। फ्रीडडॉर्प अध्यादेश[1] कुछ गोरोंको पसन्द नहीं है। अतः उस रास्ते भी शायद हम बच सकते हैं।

नये कानूनमें परिवर्तन नहीं होगा

सर जॉर्ज फेरारने[2] जनरल बोथासे पूछा कि सुना जाता है, नये कानूनमें कुछ परिवर्तन करनेके लिए बड़ी सरकारसे कहा जायेगा, वे परिवर्तन कौन-से हैं? उसके उत्तरमें जनरल बोथाने कहा: "जब भारतीयोंका शिष्टमण्डल मुझसे मिला था और बड़ी सरकारने भी सलाह दी थी, तब मैंने कहा था कि इस कानूनको इस तरह लागू किया जायेगा कि जिससे भारतीय भावनाओंको चोट न पहुँचे।" इसपर सर जॉर्जने कहा: "यह कोई मेरे सवालका जवाब नहीं है। कानूनकी कौन-सी आपत्तिजनक बात हटानेका विचार है?" जनरल बोथाने कहा: "एक भी नहीं।"

मैं ऊपर लिख चुका हूँ कि ब्रिटिश भारतीय संघने उपनिवेश-सचिवको लिखा है। जनरल बोथाके उत्तरसे मालूम होता है कि जो लोग कानूनमें परिवर्तनकी आशा रखते हैं उनकी आशा व्यर्थ है। कानून कब लागू होगा और भारतीय कौमकी सूचना मंजूर होगी या नहीं, यह दूसरी बात है। किन्तु 'दूसरेकी आशा सदा निराशा' इस बातकी अपने मनमें गाँठ बाँधकर भारतीय समाजको ट्रान्सवालमें अपनी टेक निभानेके लिए पूरी तैयारी रखनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–६–१९०७

३६. पैगम्बर मुहम्मद और उनके खलीफा

प्रस्तावना

अपने विचारके अनुसार इस सप्ताहसे हम उपर्युक्त विषयपर एक लेखमाला प्रारम्भ कर रहे हैं। हिन्दू और मुसलमान किस भाँति एक दिल बनें और रहें, यह सदा हमारा उद्देश्य रहेगा। ऐसा करनेके अनेक मार्गोंमें से एक यह है कि वे एक-दूसरेकी अच्छाइयोंको जानें। इसके सिवा हिन्दू और मुसलमान अवसर आनेपर बिना दिखावेके एक-दूसरेकी सेवा करें। ऊपरकी लेखमाला शुरू करनेमें हमारे दोनों उद्देश्य निहित हैं।

हमारा उद्देश्य भारतीय समाजमें शिक्षा और सद्ज्ञानका प्रसार करना भी है। इसकी पूर्तिके लिए हमारा इरादा अलगसे पुस्तकें छापनेका था और अब भी है। हमें आशा है कि न्यायमूर्ति अमीर अलीकी इस्लाम सम्बन्धी पुस्तकका अनुवाद तथा दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके दुःखकी कथाका प्रकाशन हम कर सकेंगे। किन्तु इसमें कुछ बाधाएँ हैं, जो अभी हटी नहीं हैं। और इसलिए इसमें कुछ देर लगेगी।

इस बीच हमने प्रख्यात लेखक वॉशिंगटन इर्विंग रचित पैगम्बरका जीवन-चरित्र प्रति सप्ताह प्रकाशित करना निश्चित किया है। यह प्रत्येक हिन्दू-मुसलमानके पढ़ने योग्य है। अधिकतर हिन्दू पैगम्बरके कार्यकलापोंसे अपरिचित हैं और अनेक मुसलमान यह नहीं जानते कि अंग्रेजोंने

१. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४७६-७८।
२. ट्रान्सवाल विधान परिषदके नामजद सदस्य।

शोध करके पैगम्बरके विषयमें क्या लिखा है। वॉशिंगटन इर्विंग-कृत इतिहास इन दोनों वर्गोंके लोगोंके लिए लाभदायक हो सकता है। हम सारेका अनुवाद न देकर उसका मुख्य भाग दे रहे हैं। वॉशिंगटन इर्विंग-कृत यह पुस्तक बड़ी अच्छी मानी जाती है। इसके लेखकने अन्य गोरे लेखकोंकी तरह इस्लामकी बुराई नहीं की है, तथापि सम्भव है कि हमारे वाचकोंको उसके विचार कहीं-कहीं पसन्द न आयें। समझदार लोगोंको वे विचार भी जानने चाहिए। किसी भी रचनाको पढ़कर उससे ज्ञान और सार ग्रहण करना पढ़नेका हेतु होता है। हम यह बात ध्यानमें रखकर नीचेके प्रकरण[1] पढ़नेकी सलाह देते हैं।

वाशिंगटन इरविंग कौन थे?

हमें अब इस प्रश्नका उत्तर देना है। सन् १७८३ में अमेरिकाके न्यूयॉर्क नगरमें उनका जन्म हुआ था। वे कई वर्षों तक यूरोपमें रहे। वे अमेरिकाके प्रमुख लेखकोंमें से एक थे। उन्होंने अनेक पुस्तकें लिखी हैं। पैगम्बरके विषयमें लिखी गई पुस्तक उनमें से एक है। उनकी लेखन-शक्ति बड़ी अच्छी मानी जाती है। उनकी रचनाओंका दूर-दूर तक नाम है। वे नीतिमान व्यक्ति थे। उन्होंने जिस महिलासे विवाहका विचार किया था, उसका देहावसान हो जानेके कारण उसकी यादमें वे आजन्म अविवाहित रहे। सन् १८५९ में नवम्बरकी २८ तारीखको अपने निवास स्थानपर इन महान लेखककी मृत्यु हुई।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–६–१९०७

१. ये प्रकरण यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं। ये **इंडियन ओपिनियन**के जुलाई ६ और अगस्त १७के बीचके अंकोंमें प्रकाशित हुए थे। यह लेखमाला छठे अध्यायका एक अंश प्रकाशित होनेके बाद बन्द कर दी गई थी। देखिए "हजरत मुहम्मद पैगम्बरका जीवन-वृत्तान्त" क्यों बन्द हुआ?", पृष्ठ २०५-०६।

३७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

[जून २६, १९०७]

नया कानून

ट्रान्सवाल सरकारने शोक संवाद सुना दिया है। उसने श्री ईसप मियाँके पत्रके उत्तरमें लिखा है कि जैसा पहले उत्तर दिया जा चुका है, भारतीयोंका सुझाव मंजूर नहीं किया जा सकता। यानी सरकार कानूनको अमलमें लाना चाहती है। अब तारीखकी ही राह देखना शेष है। इसे मैं शोक संवाद कहता हूँ, किन्तु इसे शुभ संवाद भी माना जा सकता है। हिम्मतवाले तो इसे शुभ संवाद ही मानेंगे।

नई नियुक्ति

सरकारी 'गज़ट' में समाचार है कि नये कानूनके अनुसार श्री चैमनेको पंजीयक नियुक्त किया गया है। मैं आशा करता हूँ कि भारतीय समाज ऐसा वक्त ला देगा कि श्री चैमने साहब जम्हाई लेते बैठे रहें। इस संवाददाताका नाम तो उस रजिस्टरमें कभी दर्ज नहीं होगा, किन्तु खुदासे मेरी निरन्तर यह प्रार्थना है कि ऐसी ही सारे भारतीयोंकी भावना हो।

बाजारमें छुआछूत

जोहानिसबर्ग बाजारमें यूरोपीय लोग भारतीयोंको छूनेसे परहेज करते मालूम होते हैं। इससे नगरपालिकाने प्रस्ताव किया है कि यूरोपीय और काले लोगोंके लिए अलग-अलग विभाग रखे जायँ। चीनियोंसे बाहरी हिस्सेका किराया लेनेका निर्णय भी किया गया है। हमने अपने देशमें भंगी रखे हैं, इसलिए हम भी यहाँ भंगी बन गये हैं और अब अनुमतिपत्ररूपी चिट्ठी गलेमें बाँधकर बिलकुल बेहाल हो जायेंगे। मुझे याद है कि पोर्ट एलिजाबेथके भारतीयोंपर बाजारमें इसी तरहका जुल्म शुरू किया गया था। उस समय भारतीयोंने बाजारमें जाना बन्द कर दिया था। यदि भारतीय फेरीवाले जोहानिसबर्गमें उतनी ही हिम्मत दिखायें तो इस भंगी-दशासे मुक्ति मिल सकती है। तुच्छ कहलाकर पेट भरनेसे तो देश छोड़ना बेहतर माना जायेगा।

डच पंजीयनपत्रका प्रश्न

लॉली स्टेशनसे एक पत्र-लेखक पूछते हैं कि उनके पास डचोंके समयका पुराना पंजीयन-पत्र है। डच गवाह भी है। फिर भी उन्हें अनुमतिपत्र नहीं मिलता। इसका क्या किया जाये? जान पड़ता है इन भाईने 'इंडियन ओपिनियन' नहीं पढ़ा। मैं कह चुका हूँ कि ऐसा भारतीय नये कानूनके लागू होनेके बाद जेलका रस चखना चाहता हो तो ट्रान्सवालमें रहे, नहीं तो ट्रान्सवाल छोड़ दे।

लेनर्डका मत

कुछ भारतीयोंको डर है कि जो भारतीय नया अनुमतिपत्र नहीं लेंगे उन्हें सरकार जबरदस्ती निर्वासित कर सकती है। ऐसी ही शंका चीनियोंको भी हुई थी। इसलिए उन्होंने श्री लेनर्डकी[1] राय ली थी। श्री लेनर्डने जो राय दी वह निम्नानुसार है:

१. एक बैरिस्टर।

मुझसे जो प्रश्न पूछा गया है उसके सम्बन्धमें मेरी यह राय है कि नये कानूनमें या दूसरे किसी कानूनमें कानूनका विरोध करनेवालेको जबरदस्ती निर्वासित करनेका अधिकार नहीं है। मेरी जानकारीमें ऐसा एक भी कानून नहीं है जिसके अन्तर्गत जबरदस्ती निर्वासित करनेका किसीको अधिकार हो। अनुमतिपत्र-कानूनकी[1] सातवीं और आठवीं धारामें बताई गई सजाके सिवा और कोई सजा नहीं दी जा सकती। (सातवीं-आठवीं उपधाराओंमें जो देश न छोड़े उसे जेलमें भेजनेका अधिकार है)।

अतः यही समझना चाहिए कि निर्वासनकी बात दरकिनार हो गई है।

अफवाह

अफवाह है कि नये कानूनके १ जुलाईसे लागू होनेकी सूचना प्रकाशित होनेवाली है। यानी जिन लोगोंको गुलामीकी छाप लगवानी हो, उन्हें उस तारीखसे लगा दी जायेगी। अब रंग जमेगा।

भारतीय 'बाजार'

'गजट' में सूचना आई है कि भारतीय 'बाजार' — वास्तवमें भंगी मुहल्ले — अब नगरपरिषदके सुपुर्द किये गये हैं। यह सूचना अभी तो बिलकुल बेकार है, क्योंकि उन 'बाजारों' में भारतीयोंको कोई जबरदस्ती नहीं भेज सकता। यह सब नये कानूनके पीछे घूम रहा है। नया कानून भारतीय कौम रद कर दे — रद समझ ले — तो बस्ती सम्बन्धी कानूनों तथा वैसे ही दूसरे कानूनोंको तुरन्त निद्रा-रोग हो जायेगा।

फेरीवालोंपर आक्रमण

व्यापारमण्डलने सरकारको लिखा था कि भारतीयोंको आनेसे रोका जाये। इसके उत्तरमें उपनिवेश-सचिवने लिखा है कि थोड़े ही दिनोंमें जब प्रवास-कानून प्रकाशित हो जायेगा तब भारतीय व्यापार बहुत-कुछ रुक जायेगा; क्योंकि, फेरीवालोंके लिए सख्त कानून बनाये गये हैं। अतः जो नये कानूनकी चोर-छाप लगवाना चाहते हों वे इससे समझ लें कि उनका क्या हाल होगा। अगले सप्ताह यदि प्रवास-विधेयक प्रकाशित हुआ तो उसका अनुवाद देनेका इरादा है। चारों ओर अच्छी तरह आग लग रही है। मैं इन सबको शुभ लक्षण मानता हूँ। रोगके गहरे होनेपर सच्ची बीमारीकी पहचान की जा सकती है।

कर्टिस[2] और नया कानून

श्री कर्टिसने नये कानूनके सम्बन्धमें जो प्रयत्न किये उनके लिए पॉचेफ्स्ट्रूम व्यापार-मण्डलने आभार माना है। उसके उत्तरमें श्री कर्टिसने निम्नानुसार लिखा है:

> आपके मण्डलके ११ मईके पत्रके लिए मैं कृतज्ञ हूँ। इस प्रश्नका महत्त्व किसीको न दिखाई दे, यह मेरी समझमें नहीं आ सकता। एशियाइयोंसे मेरा निजी कोई झगड़ा नहीं है। किन्तु मुझे विश्वास है कि गोरे और एशियाइयोंका घुलना-मिलना दोनोंके लिए खराब है। जिस देशमें अलग-अलग रहना दोनोंके लिए आवश्यक हो वहां दोनोंको अलग-अलग रहना चाहिए। एशियाई प्रश्न व्यापारका प्रश्न है, यह केवल मोटे तौरसे सोचनेपर ही कहा जायेगा। वास्तवमें यह प्रश्न बहुत ही बड़ा है और वैसा ही समझा जाना चाहिए।

१. सन् १९०३ का अध्यादेश ५।
२. लॉयनेल कर्टिस, सहायक उपनिवेश-सचिव।

मैं आशा करता हूँ कि कोई यह न समझेगा कि श्री चर्चिलने[1] घोषणा की है इसलिए अधिनियम पूर्ण हो चुका है। जबतक यह कानून यहाँ लागू नहीं हुआ है तबतक विलायतमें दबाव डालनेसे यदि कुछ परिवर्तन हो जाये तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं। और यह भी हो सकता है कि परिवर्तनके कारण कानून निकम्मा बन जाये। इस कानूनका उद्देश्य यह है कि हर साधिकार भारतीयको पंजीकृत किया जाये, उसकी अँगुलियोंकी छाप ली जाये, जिससे पंजीयनपत्रका हस्तान्तरण न किया जा सके।

लेकिन हमें यह न मानना चाहिए कि कानूनके प्रकाशित हो जानेसे काम हो गया। वह कानून ठीक तरहसे अमलमें आता है या नहीं, इस बातपर बहुत-कुछ निर्भर है। मैंने जो देखा है उसके अनुसार मैं कह सकता हूँ कि सरकारको जो-कुछ करना चाहिए उसमें उसने कुछ भी उठा नहीं रखा है। आशा है कि इस कानूनको प्रभावशाली बनानेमें समाचारपत्र और जनता मदद करेगी। यह कानून ठीक तरहसे अमलमें आ सके, इसलिए समाचारपत्रोंका कर्तव्य है कि वे अधिकारियोंकी हिम्मत बढ़ायें। अधिकारियोंका काम आसान नहीं है। उनपर जनता यदि भरोसा न रखे तो उनका काम बिलकुल बिगड़ जानेकी सम्भावना है। मैं आशा करता हूँ कि अधिकारियोंपर आरोप लगाये जायें तो उनके बारेमें जनता बहुत ही सावधानीसे काम लेगी। उनका काम बहुत कठिन है। उनसे बहुत द्वेष किया जायेगा। आरोप लगाये जानेपर यदि वे खुले आम बचाव कर सकते तो कोई बात न थी। किन्तु यह नहीं हो सकता। उनकी कठिनाई उनके वरिष्ठ अधिकारी ही समझ सकते हैं। मुझे यह कहना चाहिए कि उनपर आरोप लगाये जायें तो उनकी ओर जनता बिलकुल ध्यान ही न दे; क्योंकि उपनिवेश-सचिव उनकी छानबीन कर सकते हैं। जबतक उपनिवेश-सचिव अधिकारियोंपर भरोसा रखते हैं तबतक जनताको भी रखना चाहिए। मैं बड़ा अधिकारी था और छोटे अधिकारियोंपर आरोप लगाये जाते थे तो मैं उनकी जाँच करता था। अधिकारी बहुत ही उद्यमी और अपना फर्ज अदा करनेवाले हैं। उनपर जो आरोप लगाये जाते हैं उन्हें जनताको महत्त्व नहीं देना चाहिए।

श्री कर्टिसका यह तमाशा अजीब है। एक ओर तो इन महाशयने कानूनको पास करवानेमें बड़ी मेहनत की, और अब कानूनको अमलमें लानेवाले अधिकारियोंपर कुछ न गुजरे, इसलिए जनताको पहलेसे चेतावनी दे रहे हैं, मानो अधिकारी चाहे जितना जुल्म करें, उसकी जनताको परवाह नहीं करनी चाहिए। सौभाग्यसे भारतीय समाजको अधिकारियोंकी कतई जरूरत नहीं होगी। किन्तु यदि होती, तो श्री कर्टिसके पत्रका यह अर्थ हुआ कि जैसे जैक्सनपर मुकदमा चलाया गया था, वैसे ही यदि कोई दूसरा अधिकारी करे तो उसपर मुकदमा चलानेके लिए जनता कुछ न करे। क्योंकि, उपनिवेश-सचिवको उस सम्बन्धमें सारी जानकारी मिलती रहेगी। श्री कर्टिस साहब भूल गये हैं कि सर आर्थर लॉलीके[2] पास जब कई बार शिकायत गई तब कहीं उन्हें अपने अधिकारीकी स्थितिका ज्ञान हुआ था।

१. (१८७४–) ब्रिटिश राजनीतिज्ञ, सैनिक तथा लेखक। उपनिवेश उपमन्त्री, १९०५–८। इंग्लैंडके प्रधानमन्त्री: १९४०–४५ तथा १९५१–५५।

२. ट्रान्सवालके लेफ्टिनेंट गवर्नर १९०२–५। १९०५ में मद्रासके गवर्नर नियुक्त किये गये थे। देखिए खण्ड ४, पृष्ठ २०१ और खण्ड ५, पृष्ठ १६०।

चीनियोंकी लड़ाई

चीनी संघके श्री क्विनमिगने 'स्टार'को निम्नानुसार पत्र लिखा है:

चीनियोंकी भावनाओंकी जरा भी परवाह किये बिना यह शर्म-भरा कानून अमलमें लाया जानेवाला है, इससे चीनी समाजको आश्चर्य हुआ है।

हम कौन हैं? चीनियोंने जो प्रस्ताव पहले पास किया था उसीको फिर यहाँ पेश करता हूँ कि हम स्वेच्छया पंजीयन करवानेको तैयार हैं, किन्तु गोरे लोग हमें गुलाम बना लें, यह कभी नहीं हो सकता। हम यह व्यवहार सहन नहीं करेंगे। इस शर्मनाक कानूनके सामने हम नहीं झुकेंगे। इससे भले वे हमारा कुछ भी करें, चूँकि हम सच्चे हैं इसलिए अन्ततक लड़ते रहेंगे। हम कोई अनुचित बात नहीं, बल्कि शुद्ध न्याय माँग रहे हैं।

अंग्रेजोंको हम अपने देशमें भले आदमियोंके रूपमें जानते हैं। यहाँ यदि वे हमपर जुल्म करेंगे तो हम उन्हें सम्मान देना बन्द कर देंगे, जिससे चीनमें भी उन सबकी प्रतिष्ठा चली जायेगी।

मिडेलबर्ग-बस्ती

मिडेलवर्ग नगर-परिपदने सूचित किया है कि मिडेलबर्गके भारतीय न बस्तीसे निकलते हैं, न जिन बाड़ोंका इस्तेमाल करते हैं उनका किराया देते हैं; और बिना हक उनका उपयोग करते रहते हैं। इसलिए नगर-परिषदने उनपर मुकदमा चलानेका निर्णय किया है। मिडेलबर्गकी बस्तीमें रहनेवाले भारतीयोंको इस विषयमें सोचना चाहिए। यदि किराया न देनेकी बात सच हो तो यह ठीक नहीं कहा जा सकता। दोष हमारी ओर तो जरा भी नहीं होना चाहिए।

समितिकी भूल

समितिका तार आज (बुधवारको) मिला। उसमें लिखा है कि कानूनके विरोधमें जेल जानेके निर्णयको समिति नापसन्द करती है। मुझे आशा है कि इससे कोई भारतीय परेशान नहीं होगा। समितिकी पसन्दगीका हम निर्वाह कर पाते तो अच्छा होता। किन्तु समितिने नापसन्दगी जाहिर की है, उसे भी समझा जा सकता है। समितिके प्रमुख सदस्य भारतके पुराने प्रसिद्ध अधिकारी हैं और आगे भी अधिकारी बन सकते हैं। वे हमें कानूनका विरोध करनेकी सलाह दें, इसीमें आश्चर्य होगा। वे हमें कानून स्वीकार करनेको कहें, इसमें कुछ आश्चर्य नहीं है। समितिकी सलाहको हमें वकीलकी सलाहके समान समझना चाहिए। वह हमें कानून भंग करनेको नहीं कह सकती। जिनपर कष्ट पड़ा हो वे ही यह इलाज कर सकते हैं तथा उसकी जिम्मेदारी उठा सकते हैं। इस तारकी खबर देनेके लिए संघकी बैठक की गई थी, जिसमें संघने नीचे लिखे अनुसार तार भेजनेका निर्णय किया है।

कानूनके सामने झुकनेमें और किसी बातका विचार न करें तब भी इतना तो सोचना ही होगा कि भारतीय समाजने जो खुदाकी शपथ ली है, वह टूटती है और उसे तोड़नेको तो समितिकी ओरसे सलाह नहीं मिलनी चाहिए। आशा है, भारतीयोंके प्रति समितिकी सहानुभूति बनी रहेगी।

यह तार ठीक गया है। किन्तु यदि इससे समिति भंग भी हो जाये तब भी यह तो हो ही नहीं सकता कि भारतीय समाजने जो काम शुरू किया है वह बन्द हो। भारतीय

समाजका खुदा — ईश्वर — सच्चा मददगार है। उसे बीचमें रखकर शपथ ली गई है और उसीके भरोसे हम पार होंगे।

संशोधन

अपनी पिछली चिट्ठीमें मैं लिख चुका हूँ कि बचे हुए चीनी १९०७ में जायेंगे। इसकी ओर एक पाठकने मेरा ध्यान आकर्षित किया है। मैं उसका आभार मानते हुए अपनी भूल सुधारता हूँ कि १९०७ की जगह १९०८ होना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९–६–१९०७

३८. भेंट: 'रैंड डेली मेल' को[1]

[जून २८, १९०७]

. . . उपर्युक्त घोषणाकी आगाहीपर ट्रान्सवालके भारतीय समाजके रुख और प्रतिक्रियाके सम्बन्धमें 'मेल' के एक प्रतिनिधिने भारतीय समाजके अग्रणी तथा पथप्रदर्शक श्री मो० क० गांधीसे मुलाकात की थी।

[गांधीजी:] यह कहना कठिन है कि इस कानूनके लागू होनेका अन्तिम परिणाम क्या होगा; परन्तु जहाँतक मेरा और मेरे सहयोगियोंका सम्बन्ध है, हम प्रस्तावित पंजीयनको न माननेके लिए दृढ़-प्रतिज्ञ हैं; बल्कि उसके अन्तर्गत मिलनेवाले सबसे बड़े दण्डको भोगनेके लिए तैयार हैं।

अपने इस भावमें हम किन्हीं राजद्रोही इरादोंसे या विरोधकी साधारण भावनासे प्रेरित नहीं हैं। इसके पीछे केवल आत्मसम्मानका विचार है।

दूसरे शब्दोंमें, उन्होंने एक बड़े सत्याग्रह संग्रामकी भविष्यवाणी की, जिसके बारेमें उन्होंने अनुमान किया था कि उसमें कमसे-कम ट्रान्सवालके आधे ब्रिटिश भारतीय भाग लेंगे।

निःसन्देह परिणामकी भविष्यवाणी करना अत्यन्त कठिन है, क्योंकि वर्षों अप्रयोगके कारण विधानके प्रति विरोध प्रकट करनेका ऐसा ढँग मेरे देशवासियोंके लिए नया है। परन्तु साथ ही ट्रान्सवालके समस्त भागोंसे मुझे जो पत्र मिले हैं, और 'इंडियन ओपिनियन' के सम्पादकको जो पत्र भेजे गये हैं, उनसे मेरा यह खयाल होता है कि विधानको न माननेकी नीतिपर ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंमें से पूरे ५० प्रतिशत दृढ़ रहेंगे। मैंने अभीतक एक भी ऐसे भारतीयका नाम नहीं सुना जिसने इस कानूनका समर्थन किया हो। बहुतसे अनुभव करते हैं कि जेलकी कठिनाइयोंको सहन करनेसे अच्छा यह होगा कि वे देशको छोड़ दें; परन्तु मैं ऐसे एक भी आदमीको नहीं जानता जिसने कभी कहा हो कि वह इस कानूनके अन्तर्गत नया पंजीयन प्रमाणपत्र लेगा।

श्री गांधीने कहा, भारतीय बहुत नाराज हैं और उन्होंने हिसाब लगाया कि नये कानूनके अनुसार पंजीयन करानेसे कमसे-कम ६,००० इनकार करेंगे।

१. ता. २८–६–१९०७ के **गवर्नमेंट गज़ट** में एशियाई कानून-संशोधन अधिनियम तथा तत्सम्बन्धी विनियमोंके प्रकाशन और यह ऐलान हो जानेपर कि उक्त अधिनियम १ जुलाई १९०७ से अमलमें लाया जायेगा, यह मुलाकात हुई थी। **रैंड डेली मेल** में इन शीर्षकोंके साथ रिपोर्ट छपी थी: "जेल जाना अनिवार्य: अध्यादेशपर भारतीय: ८००० अनाक्रामक प्रतिरोधी: सोमवारसे कानून लागू: प्रिटोरियासे प्रारम्भ"।

यदि सरकार मुकदमा चलानेपर तुली रही तो ये लोग जेल जायेंगे। इसके कारण निश्चय ही उन्हें वहुत हानि होगी; क्योंकि उनमें से वहुतोंके वड़े-वड़े स्वार्थ हैं। परन्तु अपना आत्मसम्मान सुरक्षित रखनेके लिए वे सर्वस्वकी वलि करनेको तैयार हैं।

हम अनुभव करते हैं कि देशके विधानमें, उस दशामें भी जव हम स्वयं उससे प्रभावित हों, हमारी कोई आवाज न होनेके कारण उसके प्रति विरोध प्रकट करनेका एक ही मार्ग रह जाता है कि हम उसको माननेसे सादर इनकार कर दें। यदि कानूनको न माननेके परिणामस्वरूप सरकार अनिवार्य पंजीयन लागू करनेकी जिद करती है तो हो सकता है कि ट्रान्सवालमें भारतीयोंके निवासका प्रश्न उपनिवेशियोंके संतोपके मुताविक सुलझ जाये; अर्थात् भारतीयोंको अन्तमें इस देशसे चले ही जाना पड़े। यदि ऐसा हो तो उपनिवेशियोंके इस सन्तोपसे मुझे तवतक ईर्ष्या नहीं होगी जवतक वे उसी साम्राज्यके सदस्य होनेका दावा करते हैं जिससे सम्वन्धित होनेका मुझे भी सम्मान प्राप्त है। ऐसे दावोंसे उनके व्यवहारका विलकुल ही मेल न वैठेगा। खासकर तव, जव इस वातको ध्यानमें रखा जाये कि भारतीयोंने सरकारसे किये गये किसी भी वादेके अनुसार आचरण करनेमें अपने आपको समर्थ सिद्ध कर दिया है।

भारतीयोंने स्वेच्छया पंजीयन करानेका वचन दिया है। वह उतना ही कारगर होगा जितना कि अनिवार्य पंजीयन। इस वारेमें वहुत कुछ कहा गया है कि कानून नरम है और उसमें एशियाइयोंकी भावनाओंपर चोट करनेवाली कोई वात नहीं है। परन्तु मैं इतना ही कह सकता हूँ कि उपनिवेशोंमें स्वीकार किये गये समस्त प्रतिवन्धक कानूनोंको मैंने पढ़ा है और मैं जानता हूँ कि जैसा अपमानजनक और गिरानेवाला यह पंजीयन अधिनियम है वैसा कोई और नहीं है।

पुराने एम्पायर नाटकघरमें हुई विराट् सभाका हवाला देते हुए श्री गांधीने अपना भाषण समाप्त किया। उन्होंने कहा कि समाचारपत्रोंके अनुमानके अनुसार सभामें २,००० भारतीय उपस्थित थे और उन्होंने सर्व सम्मतिसे यह गम्भीर घोषणा की थी कि वे वलात् पंजीयनको कभी स्वीकार नहीं करेंगे। उन्होंने कहा कि वे महसूस करते हैं, उस घोषणाका सच्चाईके साथ पालन किया जायेगा[1]।

[अंग्रेजीसे]

रैंड डेली मेल, २९-६-१९०७

१. यह विवरण निम्नलिखित सम्पादकीय टिप्पणीके साथ समाप्त किया गया था: "पिछली मर्दुमशुमारीके अनुसार ट्रान्सवालमें ९,९८६ भारतीय हैं, जिनमें ८,६४७ पुरुष हैं। प्रिटोरियाके नगरपालिका-क्षेत्रमें १,६८१ भारतीय हैं जिनमें १,४४५ पुरुष हैं। ३१ चीनी भी हैं जो सव पुरुष हैं।"

३९. लॉर्ड ऐम्टहिल

लॉर्ड ऐम्टहिलने दक्षिण आफ्रिकामें एक निराश्रित पक्षका साहस और उद्यमके साथ समर्थन करके दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंकी चिर-कृतज्ञता अर्जित की है। एशियाई पंजीयन अधिनियमपर विवादका आरम्भ करते हुए लॉर्ड महोदयने लॉर्डसभामें जो भाषण दिया, उससे प्रकट होता है कि उनके लिए सारी दुनियाकी ब्रिटिश प्रजा समान है और ब्रिटिश राजनयिकोंका वचन, यद्यपि वह उन जातियोंको दिया गया है, जो उसके भंग होनेपर किसी प्रकारकी नाराजगी व्यक्त करनेमें असमर्थ हैं, किसी प्रतिज्ञापत्रसे कुछ कम नहीं है। हमें आशा है लॉर्ड महोदयने जिस प्रकार प्रारम्भ किया है उसी प्रकार वे आगे बढ़ते रहेंगे और तबतक शान्त नहीं होंगे जबतक इस प्रथम कोटिके प्रश्नको उचित स्थान तक नहीं पहुँचा देंगे।

वह इतने महत्त्वका प्रश्न है कि सर जॉर्ज फेरारको भी मानना पड़ा है कि यह ट्रान्सवालमें चीनियोंकी गिरमिट खतम करने या साम्राज्य-सरकारसे ट्रान्सवालमें कृषिके विकासके लिए कर्ज प्राप्त करनेसे बहुत अधिक महत्त्व रखता है। भारतीय समाचारपत्रोंकी जो कतरनें हालमें हमारे पास आई हैं उनसे पता चलता है कि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंसे सम्बन्धित घटनाओंने भारतीय जनताके मनपर गहरा असर डाला है। इसलिए यह खेदकी बात है कि ऐसे महत्त्वके प्रश्नपर लॉर्ड एलगिनने, जो इसके सही निबटारेके लिए जिम्मेवार हैं, इसपर ठीक तरह गौर नहीं किया। हमें यह देखकर दुःख होता है कि लॉर्ड महोदयने, शायद अनजानेमें, ट्रान्सवाल-सरकारके भुलावेमें आकर प्रवासके सवालको ट्रान्सवालके अधिवासी भारतीयोंके प्रति होनेवाले बरतावके सवालके साथ उलझा दिया है। ब्रिटिश भारतीय संघने हमारे खयालसे निर्णायक रूपमें सिद्ध कर दिया है कि एशियाई पंजीयन अधिनियम ब्रिटिश भारतीयोंके प्रवासको नियमित नहीं करता और अगर शान्ति-रक्षा अध्यादेशको वापस ले लिया गया, जैसा कि लॉर्ड सेल्बोर्नने[1] कहा है कि इसे वापस ले लेना चाहिए, तो एक नया कानून बनाना पड़ेगा और, दरअसल, उसकी योजना बन भी गई है। पंजीयन-अधिनियम प्रवासके मामलेको किसी प्रकार हल तो नहीं करता, लेकिन ट्रान्सवालमें रहनेवाले ब्रिटिश भारतीयोंको अपमानित जरूर करता है और अपने परिणामरूपमें ब्रिटिश संविधानके चिर-पोषित सिद्धान्तको — अर्थात् इस सिद्धान्तको कि प्रत्येक मनुष्यको तबतक निर्दोष समझना चाहिए जबतक वह अपराधी नहीं साबित हो जाता; और एक निर्दोष व्यक्तिको दण्ड मिले इसकी बजाय यह अच्छा है कि अपराधी बिना दण्ड पाये बच निकलें — बदल देता है। यह कानून प्रत्येक भारतीयको अपराधी मान लेता है और यह साबित करनेका भार उसीपर डालता है कि वह अपराधी नहीं है, अर्थात् वह ट्रान्सवालमें कानूनी तरीकेसे दाखिल हुआ है। फिर, यह ट्रान्सवालके तमाम एशियाई समुदायको बुरी तरह दण्डित करता है, ताकि कुछ धोखेबाज एशियाई चोरीसे ट्रान्सवालमें न चले जायें; और तब भी

१. दक्षिण आफ्रिकामें उच्चायुक्त और १९०५ से १९१० तक ट्रान्सवाल तथा ऑरेंज रिवर उपनिवेशके गवर्नर।

कानूनका यह उद्देश्य पूरा नहीं होता, क्योंकि पंजीयन उन एशियाइयोंको रोक नहीं सकता जो धोखेबाज हैं और इस देशमें चोरीसे दाखिल होना चाहते हैं और यहाँ तबतक रहना चाहते हैं जबतक कि वे पकड़ न लिये जायें। यह अधिनियम वैसा ही है जैसे ईमानदार लोगोंको इसलिए जेलमें बन्द कर दिया जाये कि चोर चोरी न कर सकें।

इसके अलावा, लॉर्ड एलगिनने इस कथन-मात्रको सही मान लिया है कि अनुमतिपत्रोंका नाजायज व्यापार हुआ है। ब्रिटिश भारतीय संघने कई बार इसका सबूत माँगा है, लेकिन वह आजतक नहीं मिल सका। श्री चैमनेका प्रतिवेदन[1], जैसा कि हमने बताया है, एशियाइयोंके कथनका पूरा समर्थन करता है। इस प्रकार यह कानून एशियाई समुदायके साथ दोहरा अन्याय करता है। एक तो, यह एशियाई समुदायके विरुद्ध झूठे इलजामपर आधारित है और दूसरे, प्रभावमें यह एक दण्ड देनेवाला विधान है। इसलिए अगर ट्रान्सवालके चीनी और भारतीय निवासियोंने यह तय कर लिया हो कि अनिवार्य पंजीयन और उसके साथ लगी हुई अन्य सब बातोंके सामने नहीं झुकेंगे तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं। अगर एशियाई दरअसल इस कानूनको बुरा समझते हैं, तो चाहे इसमें जितना माली नुकसान सहना पड़े, इसे न मानना ही उनके लिए सीधा रास्ता है और हमें विश्वास है कि अपने इस संघर्षमें उन्हें लॉर्ड ऐम्टहिल और उनके साथियोंकी सहानुभूति मिलेगी। इस संघर्षसे उन्हें कोई ख्याति या लाभ नहीं मिलनेवाला है, परन्तु दीन और असहाय लोगोंकी सच्ची दुआएँ उन्हें मिलेंगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-६-१९०७

४०. अंगद-वार्ता

कहा जाता है कि रामचन्द्रजीने रावणसे लड़ाई शुरू की, उसके पहले समझौतेकी वार्ताके लिए अंगदको रावणके पास भेजा था। उस जमानेके रिवाजके अनुसार सच्ची बहादुरी इसमें होती थी कि युद्ध करनेके पहले शत्रुको उसकी गलती सुधारनेका पूरा मौका दिया जाये। शत्रुके सामने झुकते भी थे। झुकनेमें कोई हलकापन नहीं है। किन्तु इतना करनेपर भी यदि शत्रु नहीं मानता था तो पूरी ताकत दिखाते थे और संकल्पित कार्य करते थे। पुराने जमानेमें सारी दुनियाके लोग ऐसा ही करते थे। आज भी ऐसा करना अच्छा माना जाता है।

रामने रावणके साथ जैसा व्यवहार किया था वैसा ही व्यवहार भारतीय समाजने ट्रान्सवाल सरकारके साथ किया है। जितनी नम्रता बरती जा सकती थी उतनी बरती गई है। फिर भी जबतक कानून सारे भारतीय समाजपर लागू नहीं हो जाता तबतक ट्रान्सवाल सरकार सुखी नहीं होगी।

रामने अंगदको समझौता-वार्ताके लिए भेजा था। अंगदके बहुत समझानेपर भी रावण नहीं माना। और चूँकि अन्याय उसका था इसलिए अन्तमें उसे हारना पड़ा। ब्रिटिश भारतीय संघकी मारफत सरकारसे अनुनय-विनय करनेपर श्री स्मट्सकी ओरसे भारतीय

१. देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ४२८-२९।

समाजको अब अन्तिम उत्तर मिला है कि सरकारको भारतीय समाजका स्वेच्छया पंजीयनका सुझाव मंजूर नहीं है। यानी अब यही जानना शेष रहा कि कानूनको लागू करनेकी तारीख कब प्रकाशित होती है। इसीके साथ हमें यह भी मान लेना होगा कि सरकार अपने मनके कानून बनाती है। कानून बनानेमें अँगुलियोंकी निशानी लेनेके बारेमें कुछ परिवर्तन हो सकते हैं। लेकिन इससे भारतीय समाजका कुछ काम नहीं होगा। इसलिए भारतीय समाजको अब लड़ाईकी ही तैयारी करनी रही। लड़ाईके लिए भारतीय समाजको और कुछ नहीं, केवल जेलके प्रस्तावपर अटल रहनेकी दृढ़ता चाहिए। इसके सिवा और किसी बातकी जरूरत नहीं। हमारे नाम जो पत्र आये हैं उनसे प्रकट होता है कि भारतीय समाज उसके लिए बिलकुल तैयार बैठा है। ट्रान्सवाल सरकारने जो हमारी बात नहीं मानी, इसके लिए तब तो नाराज होनेके बजाय खुश होना चाहिए। सच-झूठकी परीक्षा अब हो जायेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९–९–१९०७

४१. दक्षिण आफ्रिकामें अकाल

दक्षिण आफ्रिकामें वर्तमान समय बहुत ही खराब बीत रहा है। हर जगह तंगी दिखाई देती है। गोरे और काले सबकी हालत खराब हो गई है। उसमें जमीनवालों और व्यापारियोंकी ज्यादा मुश्किल है। इस समय दूरदर्शी व्यक्तिको सोचना चाहिए कि क्या किया जाये। व्यापार और भी कमजोर होगा। जमीनका मूल्य और भी घटता जायेगा। यह कहाँतक निभेगा? इस मुल्कका यह संकट वर्षाकी कमीके कारण नहीं, न फसल बिगड़नेसे है, बल्कि इसलिए है कि जहाँसे पैसा आता था वह जगह बेकार हो गई है। इससे हम देख सकते हैं कि खेतीमें नुकसान नहीं है। इसलिए हम प्रत्येक भारतीयको सलाह देते हैं कि इस अवसरका लाभ उठाकर जिससे जितना बन सके उतना वह खेतीपर ध्यान दे। व्यापारी और दूसरे सब भारतीय खेती कर सकते हैं। उसमें बहुत पैसेकी आवश्यकता नहीं रहती, न उसमें परवाने वगैरहका सवाल उठता है। हमारी निश्चित राय है कि यदि भारतीय समाज खेतीकी ओर अधिक ध्यान देगा तो उसे लाभ होगा। इतना ही नहीं, खेतीका धन्धा इस मुल्कमें भारतीयके विरुद्ध जो आपत्ति है उसे दूर करनेमें भी मदद कर सकता है। यह मुल्क नया है। इसलिए यहाँ बहुत प्रकारकी फसलें पैदा की जा सकती हैं। और यदि वे यहाँ न खपें तो उन्हें बाहर भेजा जा सकता है। ट्रान्सवालमें डच लोग खेतीके द्वारा देशको सम्पन्न बनानेका प्रयत्न कर रहे हैं। वही नेटालमें भी हो रहा है। इससे प्रत्येक भारतीयको चेतना चाहिए कि वह जमीन जोतनेकी ओर ध्यान दे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९–६–१९०७

४२. लॉर्ड ऐम्टहिल

दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति अभी नये कानूनके सम्बन्धमें जोर लगा रही है। लॉर्ड ऐम्टहिल, जो इस समितिके अध्यक्ष बनाये गये हैं, बहुत मेहनत कर रहे हैं। लॉर्डसभामें उन्होंने जो भाषण[1] दिया है उसकी ओर हम पाठकोंका ध्यान खींचते हैं। उससे ज्ञात होता है कि नये कानूनसे विलायतमें बहुत ही उत्तेजना फैल गई है। सभी समझने लगे हैं कि भारतीय समाजपर बहुत जुल्म हो रहा है। अब उस जुल्मकी वास्तविकता सिद्ध करनेके लिए भारतीय समाजकी जिम्मेदारी है कि वह जेलवाले प्रस्तावपर दृढ़तापूर्वक डटा रहे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-६-१९०७

४३. इंग्लैंडकी बहादुर स्त्रियाँ

इंग्लैंडकी स्त्रियाँ अपने लिए मताधिकार प्राप्त करना चाहती हैं।[2] उनकी सभाकी अधिकृत रिपोर्ट प्रकाशित हुई है। उससे मालूम होता है कि वह सभा अपने कामके लिए हर सप्ताह करीब १०० पौंड खर्च करती है और आजतक, यानी दो वर्षके अन्दर, सब स्त्रियोंने मिलकर अपनी बहनोंके अधिकारोंके लिए लगभग छः वर्षकी कैद भोगी है। सभाके मन्त्रीने लिखा है कि उस सभाका काम चलानेके लिए अभी २०,००० पौंडकी जरूरत है। उसने प्रत्येक सदस्यसे यह रकम इकट्ठी करनेके लिए कहा है।

जब अंग्रेज स्त्रियोंको उनके ही समाजसे हक प्राप्त करनेमें इतना पैसा खर्च करना और इतना दुःख उठाना पड़ता है तब भारतीय कौमको दूसरी कौमसे अधिकार प्राप्त करनेमें कितना खर्च करना और कितना दुःख उठाना होगा? यह हिसाब प्रत्येक भारतीय समझ ले और फिर सोचे कि यदि पूरे १३,००० भारतीय जेल चले जायें और यदि वे १३,००० पौंड खर्च करें तो उससे इस कार्यमें कोई बड़ा खर्च नहीं होगा। कुल मिलाकर ट्रान्सवालकी भारतीय कौमने अभी तो २,००० पौंड भी खर्च नहीं किये हैं, न कोई जेल ही गया है। इतनेपर भी यह मानना कि अधिकार मिल ही जाने चाहिए, सरासर भूल मालूम होती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-६-१९०७

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

२. यह उल्लेख इंग्लैंडमें चलनेवाले स्त्रियोंके संसदीय मताधिकार आन्दोलनके सम्बन्धमें है। श्रीमती एमलिन पैंकहर्स्ट (१८५८-१९२८)के नेतृत्वमें महिलाओंने जो संघर्ष चलाया था उसमें धरना देना, अनशन करना, और जेल जाना शामिल था।

४४. भारत और ट्रान्सवाल

इस समय भारतकी नजर ट्रान्सवालपर है। मद्रासमें दस हजार भारतीयोंकी सभाने प्रस्ताव किया है कि भारतीयोंको दक्षिण आफ्रिकामें कष्ट सहना पड़ता है, इसलिए उपनिवेशोंके गोरोंको भारतमें कोई नौकरी अथवा अन्य अवसर नहीं मिलना चाहिए। लाहौरका 'ट्रिब्यून' लिखता है कि यदि भारतीय समाज अन्ततक अपना उत्साह कायम रखे तो बहुत लाभ होगा। अनेक भारतीय अखबारोंमें चर्चा हो रही है और सभी सहानुभूति प्रदर्शित कर रहे हैं। लॉर्ड लैन्सडाउन जैसे अधिकारी सोच रहे हैं कि यहाँके भारतीय समाजके ऊपर जो जुल्म होता है उसका भारतपर बहुत गहरा असर पड़ता है। इन सब लक्षणोंसे प्रकट होता है कि भारतीय कौमके हाथ अपनी प्रामाणिकता सिद्ध करनेका अमूल्य अवसर लगा है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९–६–१९०७

४५. कन्याओंकी शिक्षा

अलीगढ़में कुछ समय पहले मुस्लिम जनाना नार्मल गर्ल्स स्कूलकी स्थापना हुई थी और उसकी दिनोंदिन तरक्की होती जा रही है। उस स्कूलको सहायता देनेके लिए सरकारसे प्रार्थना की गई है। उस स्कूलके लिए खास जगह ली गई है और उसके साथ छात्रालय बनानेकी भी योजना है। किंडरगार्टन पद्धतिके अनुसार उर्दूमें खास पुस्तकें तैयार की गई हैं। मुसलमान आचार्या न मिलनेके कारण अभी एक गोरी महिलाको २०० रु० वेतनपर नियुक्त किया गया है। इस स्कूलके लिए आजतक १३,००० रु० एकत्र किये गये हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९–६–१९०७

४६. भाषण: प्रिटोरियाकी सभामें[1]

प्रिटोरिया
३० जून, १९०७

श्री गांधीने कानूनका असर समझाते हुए कहा कि हर भारतीयको, चाहे वह गरीब हो या अमीर, स्वतन्त्र होना चाहिए। यह कानून [साम्राज्यीय] सरकारने मंजूर कर लिया, इससे कुछ नहीं। भारतीय समाजके द्वारा मंजूर होना अभी बाकी है।

१. एशियाई कानूनके प्रति विरोध व्यक्त करनेके लिए श्री ईसप मियाँकी अध्यक्षतामें भारतीयोंकी एक सभा हुई थी। उसमें दिये गये गांधीजीके भाषणका यह सारांश है।

जबतक भारतीय समाज कानूनको मंजूर नहीं करता तबतक वह पास माना ही नहीं जा सकता। यदि कोई बड़े या छोटे भारतीय कानूनकी गुलामीका पट्टा ले लेते हैं तो उनका किसीको अनुकरण नहीं करना है। जो मुक्त रहेंगे सो जीतेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–७–१९०७

४७. पत्र : 'रैंड डेली मेल' को[1]

जोहानिसबर्ग
जुलाई १, १९०७

सेवामें
सम्पादक
['रैंड डेली मेल']

महोदय,

आपने एशियाई पंजीयन अधिनियमके तथाकथित "अनाक्रामक प्रतिरोध" के सम्बन्धमें जो सौम्य और सद्भावपूर्ण टिप्पणी की है, उसकी आलोचना मुझे करनी पड़ रही है जो, सम्भव है, कृतघ्नता प्रतीत हो। भारतीय समाजको जो प्रतिरोध करना है उसको मैं "तथाकथित" कहता हूँ, क्योंकि वह मेरी सम्मतिमें वस्तुतः प्रतिरोध नहीं, बल्कि सामूहिक कष्ट-सहनकी नीति है। अधिनियमके विनियमोंको पढ़ लेनेपर भी आप इसको भावुकताकी बात समझते हैं।

यदि मेरे आठ वर्षके लड़केको एक ऐसे अधिकारीके सामने, जिसे उसने अपने जीवनमें शायद पहले कभी नहीं देखा, बिना किसी अपराधके, पहले अलग-अलग और फिर एक साथ, अँगुलियों और अँगूठेके निशान देनेकी अत्याचारपूर्ण प्रक्रियासे गुजरनेको बाध्य किया जाये और मैं पिताके नाते उस दृश्यको देखनेके बजाय गोलीसे मार दिया जाना अच्छा समझूँ तो क्या यह भावुकता है? यदि मैं इस देशमें अपने अस्थिर निवासके मूल्यके रूपमें अपनी माँका नाम और ऐसे ही दूसरे विवरण देना नामंजूर करूँ तो क्या यह भावुकता है?

लॉर्ड एलगिनको भले ही अपनी गद्दीदार कुर्सीपर बैठकर कलमसे बजाय अँगूठेसे निशान बनानेमें कोई अन्तर न दिखाई दे; किन्तु मैं जानता हूँ कि वे उस राष्ट्रके हैं जो वैयक्तिक स्वतन्त्रतापर किये गये आक्रमणका विरोध करनेके लिए एक सिरेसे दूसरे सिरे तक विद्रोह कर देगा, और वे स्वयं पहले व्यक्ति होंगे, जो अपने हस्ताक्षरोंके बजाय अँगूठे लिये जानेका भी चिल्लाकर विरोध करेंगे। जो चीज चुभती है वह है जबर्दस्ती, न कि अँगुलियोंकी निशानी।

सरकारके मनमें हमें गिननेकी कोई इच्छा नहीं है, पर बात तभी समझमें आती है जब यह मान लिया जाये कि इस देशमें, जहाँ एशियाइयोंके अतिरिक्त अन्य सबको स्वतन्त्रता प्राप्त है, मेरे देशवासी पहले ही इतने गिना लिये गये हैं कि वे इससे अधिक

---

१. यह ६–७–१९०७ के इंडियन ओपिनियनमें भी उद्धृत किया गया था।

गिरावटका अनुभव कर ही नहीं सकते। किन्तु यह समय तर्क करनेका नहीं है। वीर शासकोंपर, जो कथनीका नहीं, करनीका मूल्य समझते हैं, वीरता और ठोस कार्यकी ही प्रतिक्रिया हो सकती है।

जैसा आप कहते हैं, यदि प्रिटोरिया कमजोर है, और सरकारने "साँपकी वुद्धिसे", जिसका आप उसे श्रेय देते हैं, अपने प्रति किसी भी विरोधको तोड़नेके लिए सबसे कमजोर जगहको चुना है; और यदि इस अधिनियमके विरुद्ध आवाज उठानेवाला अकेला मैं और सम्भवतः मेरे थोड़े-से साथी कार्यकर्ता ही रह जायें, तव भी हम यह कह सकेंगे कि इस गिरावटको स्वीकार करनेमें हमारा कोई हिस्सा नहीं है। किन्तु प्रिटोरियाके सम्बन्धमें आपकी जो सम्मति है, उसे मैं नहीं मानता। कल स्थानीय मन्त्री श्री हाजी हबीबके मकानपर ब्रिटिश भारतीयोंकी जो आम सभा[1] हुई थी उसमें एक वक्ता मैं भी था। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि मेरे देशवासियों द्वारा व्यक्त भावनाएँ उनके हृदयोंसे उद्‌भूत हुई हैं— और मेरा विश्वास है, वात ऐसी ही है—तो प्रिटोरियाका प्रत्येक भारतीय अनिवार्यतः पुनः पंजीयन करानेसे इनकार करेगा, फिर परिणाम चाहे जो हो।

दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति जब यह कहती है कि "स्थानीय सरकार इस सन्देहकी पुष्टि करती है कि वह उग्रतम कानूनोंको लादने और इस प्रकार ब्रिटिश भारतीयोंको गिराने और अपमानित करनेके लिए व्यग्र है," तब आप उसपर मुँह-फट भाषामें, असत्य नहीं तो आत्यन्तिक अत्युक्तिका आरोप लगाते हैं। आत्यन्तिक अत्युक्ति या असत्य, चाहे जिस वातका भी दोषी होनेकी जोखिम हो, मैं उसी कथनको दुहराता हूँ; और उसके समर्थनमें आपके सम्मुख जानवूझकर किये गये अपमानका वह ताजा उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ जो प्रिटोरियाकी सभामें प्रकाशमें आया है। वहाँ एक धर्म-प्रचारकने मध्य दक्षिण आफ्रिका रेलवेका एक कागज[2] दिखाया, जिसमें कहा गया था कि रेलकी यात्राके सम्बन्धमें धर्म-प्रचारकोंको जो रियायत है वह ईसाई और यहूदी धर्म-प्रचारकोंके लिए ही है। धर्म-प्रचारककी इस सूचनासे सभामें दुःखद सनसनी फैल गई। क्या यह नया भेदभाव भी एशियाइयोंकी भरमारके विरुद्ध आवश्यक चौकसी है?

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
रैंड डेली मेल, २–७–१९०७

१. देखिए "प्रिटोरियाकी आम सभा", पृष्ठ ८०-८२।
२. देखिए "आगमें घी", पृष्ठ ७१-७२।

४८. जोहानिसबर्गके ताजे समाचार[1]

जोहानिसबर्ग
बुधवारकी शाम, [जुलाई ३, १९०७]

नया प्रवासी विधेयक[2] पेश किया जा चुका है। इस विधेयकके अनुसार कोई भी अंग्रेजी जाननेवाला व्यक्ति [ट्रान्सवालमें] प्रवेश कर सकता है, किन्तु भारतीय नहीं। जान पड़ता है कि जिनपर खूनी कानून लागू होता है, वे अंग्रेजी जानें या न जानें, दाखिल नहीं हो सकते। इसके अलावा इस कानूनके अनुसार सरकार जिसे बुरा समझती है उसे जबर-दस्ती निर्वासित कर सकती है और निर्वासित करनेका खर्च उसकी जायदादमें से ले सकती है। अब भारतीय अवश्य फन्देमें आये हैं। यह विधेयक पास होगा या नहीं, यह तो मैं नहीं जानता, किन्तु इसमें शंका नहीं कि ट्रान्सवालकी सरकार भारतीयोंको खदेड़ना चाहती है। मुझे आशा है कि हर भारतीय इज्जतके साथ यहाँसे जायेगा, बेइज्जती लेकर नहीं।

एशियाई भोजनालय

जोहानिसबर्गकी नगरपालिका प्रत्येक भारतीय भोजनगृहवालेके लिए यूरोपीय मैनेजर रखना अनिवार्य करना चाहती है।

फोक्सरस्टमें सभा

फोक्सरस्टमें मंगलवारको सभा हुई थी। श्री काछलिया सभापति थे। श्री गांधी, श्री भट तथा श्री काजी और श्री काछलियाके भाषण हुए। सबने जेल-सम्बन्धी प्रस्तावपर दृढ़ रहना स्वीकार किया। उसी समय चन्दा इकट्ठा किया गया। करीब २० पौंड चन्देके लिए नाम लिखवाये गये और ११ पौंड नकद मिले।

प्रिटोरिया

प्रिटोरियाके भारतीय बहुत जोर दिखा रहे हैं। अभीतक एक भारतीय भी नया अनुमतिपत्र लेने नहीं गया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–७–१९०७

१. यह "हमारे जोहानिसबर्ग प्रतिनिधि द्वारा प्रेषित" रूपमें प्रकाशित किया गया था।
२. पाठके लिए देखिए परिशिष्ट ३।

४९. पत्र : 'स्टार' को

जोहानिसबर्ग
जुलाई ४, १९०७

सेवामें
सम्पादक
'स्टार'
[जोहानिसबर्ग]

महोदय,

आपने अपने पाठकोंको जो जानकारी दी है उससे भारतीय समाजको बहुत आश्चर्य हुआ है। आपने कहा है कि भारतीय लगभग किसी निर्योग्यतासे पीड़ित नहीं हैं और अँगुलियोंके निशान देनेके प्रश्नपर तो विचार ही नहीं करना चाहिए, क्योंकि भारतीय सिपाही अपनी पेंशन लेनेसे पहले स्वेच्छासे अपने अँगूठोंके निशान देते हैं।

मैं सोचता हूँ कि क्या आप अब प्रवासी विधेयकका, जो कल प्रकाशित किया गया है, समर्थन करेंगे और यह कहेंगे कि, जहाँतक भारतीयोंका सम्बन्ध है, वह कानून निर्दोष है। एशियाइयोंको अत्यन्त चालाक बताया गया है। किन्तु जो चालाकी इस विधेयकके निर्माताओंने दिखाई है वह, यदि असार्जित भाषामें कहें तो, सबसे बाजी मार ले जाती है। यदि खण्ड २ के उपखण्ड ४ को मैंने ठीक तरह समझा है तो मेरा विश्वास है, उसके द्वारा एशियाई पंजीयन अधिनियमके विरोध करनेवाले अनाक्रामक प्रतिरोधियोंको एक उत्तर दिया गया है और ट्रान्सवालके भारतीयोंमें आत्मगौरवकी अवशिष्ट भावनाको भी कुचलनेके लिए राजकीय लूटकी प्रणाली स्थापित की गई है; क्योंकि उक्त खण्डके अन्तर्गत ऐसा प्रत्येक एशियाई, जो नया पंजीयन प्रमाणपत्र नहीं लेगा, एक वर्जित प्रवासी हो जायेगा और वर्जित प्रवासीको जेलकी सजा दी जा सकती है, उसके बाद उसे उपनिवेशसे जबरदस्ती निकाला जा सकता है तथा उसके निष्कासनका व्यय उसकी सम्पत्तिसे, जो उपनिवेशमें होगी, वसूल कर लिया जायेगा। इस प्रकार कानून बहुत ही पेचीदा तरीकेसे वर्जित प्रवासीका निर्माण करता है। जिस व्यक्तिने ट्रान्सवालको अपना देश बना लिया है, किन्तु जो अतिरिक्त दण्ड भोगकर अपने ऊपर लागू किसी कानूनका उचित या अनुचित विरोध करता है, वह व्यक्ति अपने अंगीकृत देशमें कानूनके संरक्षणसे वंचित कर दिया जायेगा। इसके अतिरिक्त यह खण्ड केवल 'एशियाई और दुराचार अधिनियमों' का ही अमल करा सकता है, अर्थात् वेश्याएँ, गुण्डे और वे एशियाई जो अपना सम्मान खोनेसे इनकार करते हैं, एक ही श्रेणीमें रखे जायेंगे।

इसके अतिरिक्त, इससे जो अपमान उद्दिष्ट है उसकी निरंकुशता दिखानेके लिए, मैं जनताका ध्यान इस बातकी ओर दिलाना चाहता हूँ कि यदि कोई भारतीय — उदाहरणार्थ, सर मंचरजीको ही ले लीजिए — अत्यन्त कड़ी परीक्षामें उत्तीर्ण हो जाये, और ट्रान्सवालमें

आना चाहे तो उसको अवश्य ही अपना और अपने अवयस्क बच्चोंका पंजीयन प्रमाणपत्र लेना होगा और यदि वह वर्जित प्रवासीकी श्रेणीमें आना और निष्कासित होना न चाहे तो उसके आठ सालसे अधिक आयुके जो बच्चे हों उन्हें भी अलग-अलग और एक साथ अँगुलियोंके निशान देने पड़ेंगे। कहा यह जाता है कि पंजीयन अधिनियम सिर्फ शिनाख्ती कार्रवाईके लिए है। एशियाई अधिनियम न होनेपर जो व्यक्ति अपनी शिक्षा-सम्बन्धी योग्यताके कारण ट्रान्सवालमें रहनेके अधिकारका दावा कर सकता है, उसको शिनाख्त करानेका क्या कोई अर्थ है? वह चाहे उपनिवेशमें हो चाहे उसके बाहर, उसके किसी एक यूरोपीय भाषाके ज्ञानकी परीक्षा किसी भी समय की जा सकती है। तब क्या उसकी शिनाख्तके निशान उसके व्यक्तित्वमें ही समाहित नहीं है?

जनरल बोथाने भी, जब वे लन्दनमें थे, सारे साम्राज्यके कल्याणकी इतनी चिन्ता प्रकट की थी और लॉर्ड ऐम्टहिलको आश्वासन दिया था कि सम्राट्की भारतीय प्रजाको नीचा दिखानेका उनका कोई इरादा नहीं है। उनके उन भाषणोंका[1] क्या हुआ? क्या स्वशासनका अर्थ एशियाइयोंकी समस्त स्वतन्त्रताके मनमाने अपहरणका परवाना है? सर जॉर्ज फेरारने प्रगतिवादी दलकी ओरसे बोलते हुए कहा था कि एशियाई पंजीयन अधिनियमके पीछे बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रश्न है, इसकी स्वीकृतिसे लाखों भारतीय अकारण ब्रिटिश साम्राज्यके विरुद्ध उत्तेजित हो जायेंगे। फिर भी उन्होंने सरकारकी सहायताके लिए, बहुत ही बेमौके, सम्राट् एडवर्डकी भारतीय प्रजाकी भावनाओंको चोट पहुँचानेकी जोखिम उठाकर भी, एशियाई पंजीयन अधिनियमका समर्थन किया। क्या प्रगतिवादी दल अपनी साम्राज्य-हितकी डींगोंके बावजूद मेरे द्वारा बताई गई घृणित धाराके रहते हुए इस प्रवास-विधेयकका समर्थन करेगा?

आपका, आदि,
मो॰ क॰ गांधी

[अंग्रेजीसे]

स्टार, ५-७-१९०७

५०. आगमें घी

प्रिटोरियाकी आम सभाकी कार्रवाईका विवरण भेजते हुए हमारे प्रिटोरियाके संवाददाताने लिखा है कि मौलवी मुख्तियार अहमद द्वारा मध्य दक्षिण आफ्रिका रेलवे (सी॰ एस॰ ए॰ आर॰)[2] का एक पत्र पेश किया जानेपर बहुत सनसनी फैली। उस पत्रको हम एक बहुत जरूरी प्रलेख मानते हैं। वह इस तरह है:

> आपके २४ तारीखके पत्रके उत्तरमें, जिसमें ट्रान्सवालके मुस्लिम समाजकी धार्मिक आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेवाले एक मुल्लाके यात्रा-सम्बन्धी खर्चका जिक्र है, मैं कहना चाहता हूँ कि चूँकि इस रेलवेमें धर्म-प्रचारकोंको दी जानेवाली रियायत ईसाई

१. देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ४६०-६१, ४८३।
२. देखिए "पत्र: 'रैंड डेली मेल' को", पृष्ठ ६७-६८।

या यहूदी धर्मोंके अलावा दूसरे धर्मोंको नहीं दी जाती है, इसलिए मैं आपकी माँगी हुई विशेष सुविधाएँ देनेमें असमर्थ हूँ।

इसपर स्वयं मुख्य यातायात प्रवन्धकके हस्ताक्षर हैं। इससे, हमारी सम्मतिमें, न्यायपूर्ण व्यवहारकी, जिसका वचन जनरल वोथाने दिया था, सव आशाएँ समाप्त हो जाती हैं। इस पत्रसे यह शेखी भी खत्म हो जाती है कि साम्राज्यके भीतर कोई धार्मिक भेदभाव नहीं है। दुर्भाग्यसे हम जाति-भेदके तो अभ्यस्त हो गये हैं। किन्तु एशियाई अधिनियमने एक धार्मिक भेदभाव करके पहल की है और रेलवे विभागने उनका अनुसरण किया है। ट्रान्सवालमें रहनेके इच्छुक भारतीय जानते हैं कि उन्हें अधिकारियोंसे क्या आशा रखनी है। हमारी समझमें नहीं आता कि जिन लोगोंका आधार ही धर्म है और जो — हिन्दू और मुसलमान दोनों — अपने धर्मपर आक्रमण होते ही विचलित हो उठते हैं, उन लोगोंकी धार्मिक भावनाओंके अकारण अपमानके इस नवीनतम उदाहरणका लॉर्ड एलगिन क्या औचित्य वतायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–७–१९०७

५१. एक टेक

माननीय अमीर 'महाविभव'से 'महामहिम'[1] सहज ही नहीं वन गये। उन्होंने सच्ची टेक रखी तव प्रतिष्ठा मिली और अंग्रेजोंने उनका स्वागत किया। वे भारतकी यात्रापर इस शर्तपर आये थे कि उनकी प्रतिष्ठाकी पूरी तरहसे रक्षा की जायेगी और सरकार कोई राजकीय विषय नहीं छेड़ेगी। उन्हें लॉर्ड कर्जनने[2] भी आनेका निमन्त्रण दिया था, किन्तु उन्होंने साफ इनकार कर दिया था। उसका कारण श्री मॉर्लेने[3] अपने वजट-भाषणमें दिया है। कावुलमें भाषण करते समय उन्होंने कहा: "इस समय भारत सरकारके अधिकारियोंने राजकीय विषयकी कोई वात नहीं छेड़ी। उन्होंने अपना वचन निभाया। इसलिए जव मेरी इच्छा हुई तव मैंने खुद होकर इस सम्वन्धमें वातचीत की। उसका उन्होंने दुरुपयोग नहीं किया। लॉर्ड मिंटोका[4] निमन्त्रण सभ्यतापूर्ण था, इसलिए मैंने उसे स्वीकार किया। दिल्ली दरवारके समय दिये गये आमन्त्रण और लॉर्ड मिंटोके आमन्त्रणमें वड़ा भेद था। इसीलिए मैंने दिल्ली दरवारमें न जानेका निश्चय किया था। मैंने सोचा था कि इतना वेहूदा आमन्त्रण स्वीकार करनेकी अपेक्षा मेरा राजपाट चला जाये, मैं भिखारी वन जाऊँ, मुझे प्राण देने पड़ें, यह सव सहन करनेको तैयार हूँ।" अपनी इसी टेकके कारण अमीरको मान मिला और लॉर्ड कर्जनको पीछे हटना पड़ा।

१. देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ५०५।
२. (१८५९–१९२५); भारतके वाइसराय और गवर्नर जनरल, १८९९–१९०५; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ५०।
३. (१८३८–१९२३); भारत-मन्त्री, १९०५–१०।
४. (१८४५–१९१४); भारतके वाइसराय और गवर्नर जनरल, १९०५–१०।

ट्रान्सवालके भारतीय समाजको इसी प्रकार सोचना चाहिए। "सर्वस्व चला जायेगा तब भी नया कानून मंजूर नहीं करेंगे" — यह टेक रखना आवश्यक है। इस कानूनकी धाराएँ प्रकाशित हुई हैं। उनका तर्जुमा हम इस अंकमें दे रहे हैं। वे धाराएँ इतनी सख्त और कठोर हैं कि उनकी किसीको स्वप्नमें भी कल्पना नहीं हो सकती। जनरल बोथाने विलायतमें जो मीठी-मीठी बातें की थीं उनपर पानी फिर गया है। इससे हमें बहुत खुशी है। यदि इस जहरकी गोली रूपी कानूनपर चाँदीका वर्क चढ़ा हुआ होता तो भी भारतीय भुलावेमें आकर धोखा खा सकते थे। किन्तु अब तो एक भी भारतीय ऐसा नहीं होगा जो इस कानूनको स्वीकार करे।

इस कानूनके सामने झुकनेवाले भारतीयको क्या लाभ होगा, यह भी जरा हम देखें। एक तो यह कि वह अपने खुदाको भूलेगा; दूसरा यह कि उसकी प्रतिष्ठा बिलकुल समाप्त हो जायेगी; तीसरा यह कि उसे सारे भारतका शाप मिलेगा; चौथा यह कि उसके लिए बस्तीमें जानेकी नौबत आयेगी; और आखिर ट्रान्सवालमें कुत्तेकी जिन्दगी बितानी होगी। कानूनके सामने झुककर कौन भारतीय ऐसे लाभ भोगना चाहेगा? अब न झुकनेवालेकी भी बात लें। वह खुदासे डरनेवाला माना जायेगा, वह खुदाके साथ किये हुए इकरारका पालन करनेवाला माना जायेगा, शूर माना जायेगा। भारतीय उसका स्वागत करेंगे, जेल उसके लिए महल माना जायेगा। उसे ज्यादासे-ज्यादा यदि कोई दुःख होगा तो यह कि उसकी सारी सम्पत्ति नष्ट हो जायेगी और अन्तमें शायद ट्रान्सवाल भी छोड़ना पड़े। यदि ट्रान्सवाल छोड़ना पड़ा तो क्या दूसरी जगह खुदा नहीं है? जिसे दाँत दिये हैं उसे चबेना देनेवाला मालिक हर जगह बैठा हुआ है। उस मालिकको खुशामद नहीं चाहिए। वह हमारे कानमें केवल यह कहता रहता है कि मुझपर भरोसा रख। यदि उसकी मधुर वाणी हमें सुनाई नहीं देती तो कानोंके होते हुए भी हम बहरे हैं। यदि वह हमें अपने पास बैठा हुआ दिखाई नहीं देता तो आँखोंके होते हुए भी हम अन्धे हैं।

यदि भारतीय समाज अपनी टेक निभायेगा तो हम मानते हैं कि कोई भी भारतीय बरबाद नहीं हो सकता। ट्रान्सवालके भारतीयोंकी तो बात ही दूर, सारे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंको मुक्ति मिल जायेगी। क्योंकि भारतीय जनता अपनी ताकत पहचान जायेगी और बहादुर बोअरोंको हमारी बहादुरीका पता चल जायेगा।

एक बार एक सिंह बचपनसे भेड़ोंके बीच पलनेके कारण अपना भान भूल गया और अपने आपको भेड़ ही मानने लग गया। किन्तु दूसरे सिंहोंका यूथ देखकर उसे अपना कुछ भान हो आया। यही स्थिति भारतीय सिंहकी समझनी चाहिए। बहुत समयसे हम अपना भान भूले, पामर बने बैठे हैं। यह भान करानेवाला समय आया है इसलिए

राखी पूरो विश्वास धणीनो[1] साचो।
जवुं[2] जेल, जेलने[3]-जेल एम[4] उर राचो।[5]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–७–१९०७

१. स्वामीका। २. जाना है। ३. और। ४. ऐसा।
५. ये पंक्तियाँ पुरस्कृत कविता 'जेल-यात्रा' की हैं।

५२. समितिकी सलाह

समितिके पाससे ट्रान्सवालके सम्बन्धमें आया हुआ तार हम प्रकाशित कर चुके हैं।[1] श्री रिचके पत्रसे समझमें आ सकता है कि समितिके तारसे हमें जरा भी डरना नहीं है। समिति हमें बहुत भला-बुरा कहे तब भी जेलके सम्बन्धमें हमने जो बहुत ही सोच-समझकर निर्णय किया है उससे पीछे पैर नहीं रखा जा सकता। साहस करनेवालेको दूसरेकी सीख काम नहीं देती।

डॉ० जेमिसनने ट्रान्सवालपर हमला किया तब किसीसे सीख नहीं ली थी। हमलेको तो लोग भूल गये, किन्तु उनकी बहादुरीकी आज भी प्रशंसा की जाती है। वे स्वयं इस समय बोथाके मित्र हैं और केपका कारोबार चला रहे हैं।

इंग्लैंडके प्रधान मन्त्री[2] सर हेनरी कैम्बेल बेनरमैनने बहुत ही विनयपूर्वक अंग्रेज महिलाओंको सलाह दी थी कि वे अपनी जेल जानेकी बात छोड़ दें। इन महिलाओंमें जनरल फ्रेंचकी बूढ़ी बहन भी हैं।[3] किन्तु उन बहादुर महिलाओंने उस बुद्धिमानीकी सीखको माननेसे इनकार कर दिया। मताधिकारके अभावमें उन्हें जो वेदना हो रही है उसे सर हेनरी क्या समझ सकते हैं? जब बहादुर अंग्रेज महिलाएँ अपने नये अधिकार प्राप्त करनेकी लड़ाई किसीकी सीखकी परवाह किये बिना लड़ रही हैं, तब क्या भारतीय मर्द अपने जाते हुए हकोंको — अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षाकी लड़ाईको — भले कोई समिति या कोई महापुरुष सीख दे, छोड़ दें?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–७–१९०७

५३. कैसी दशा!

यदि ट्रान्सवालपर बादल छाये हैं तो नेटाल छूट जायेगा, सो बात नहीं। गोरोंकी कालोंपर चढ़ाई होती ही रहती है। अब नेटालकी संसदमें ऐसा विधेयक पेश हुआ है कि अपनी जमीन स्वयं जोतनेवाला भारतीय अगर वह जमीन किसी दूसरे भारतीय या काफिरको जोतनेके लिए दे तो उसे उस जमीनपर गोरोंकी अपेक्षा दुगुना कर देना होगा। ऐसा इन्साफ तो दक्षिण आफ्रिकाके गोरे ही कर सकते हैं। परन्तु गिरे हुएको ठोकर मारनेका रिवाज तो सदासे चलता आया है। इसलिए गिरे हुए भारतीय उठेंगे तभी उनके दुःख मिटेंगे। कांग्रेसको लिखा-पढ़ी आदि तो करनी ही होगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–७–१९०७

१. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ५६-६०।
२. १९०५–८।
३. देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ३५४।

५४. नेटाल, तू जागता है या सोता ?

ट्रान्सवालके भारतीय नेटालके भारतीयोंका दरवाजा खटखटाकर उपर्युक्त प्रश्न पूछ रहे हैं। ट्रान्सवालके भारतीय कहते हैं कि "हम केसरिया वाना पहनेंगे और रणमें जूझेंगे।" तव नेटालके भारतीय भाई रणमें आहतोंकी सार-सँभाल करेंगे या दूर रहेंगे? इस प्रश्नका उत्तर प्रत्येक नेटालवासी भारतीयको अपने मनमें सोच लेना है।

यदि ट्रान्सवालकी मदद करनेमें ईमानदारी हो तो नेटालके भारतीयोंको भी अपनी टेक निभानी चाहिये। नेटालके नेताओंने ट्रान्सवालके भारतीयोंको हिम्मत वँधाई है, वह तो पत्र और तार द्वारा। कहे और लिखे हुए शब्दोंपर चलनेका समय अव आया है। इसलिए हम नेटालके भारतीयोंको सावधान होनेकी सलाह देते हैं। नहीं तो सभी नेटालके वारेमें यही गायेंगे कि:

विना टेकवाला वहु वोली वोले
पछी आपनी टेक एके न पाले।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–७–१९०७

५५. खूनी कानून

खूनी धाराएँ

जो सोचा था वही हुआ। 'ट्रान्सवाल गज़ट' में ऐलान किया गया है कि जुलाई १ से नया कानून अमलमें आयेगा। इस कानूनके अन्तर्गत जो धाराएँ वनाई गई हैं वे इतनी कठोर, खूनी हैं कि उनके अनुसार कोई भी भारतीय चल सकेगा, सो नहीं मालूम होता। उन धाराओंका सम्पूर्ण सारांश हम नीचे दे रहे हैं:

१. इस धारामें पृथक्-पृथक् व्याख्याएँ दी गई हैं।
२. एशियाईका पंजीयनपत्र किस प्रकार रखा जाये, यह वताया है।
३. सोलह वर्षसे अधिक आयुवाले व्यक्तिको पंजीयनके लिए 'ख' फार्मके अनुसार आवेदन देना चाहिए। सोलह वर्षसे कम और आठसे अधिक आयुवाले लड़केको 'ग' फार्मके अनुसार आवेदन देना चाहिए।
४. प्रत्येक वयस्क व्यक्तिको उपनिवेश-सचिव द्वारा नियुक्त व्यक्तिके पास उपस्थित होना होगा और उसे 'ख' फार्मके अनुसार अर्जीमें देने योग्य सारी हकीकत भरकर देनी होगी। इसीके साथ अपनी अर्जीके समर्थनमें यदि उसे अपना अनुमति-पत्र, तीन पौंडवाला पंजीयनपत्र तथा अन्य कोई दस्तावेज देने हों, तो देगा। आठ वर्षसे अधिक आयुवाले लड़केके आवेदनके लिए उसके पिता अथवा अभिभावकको अपने लड़केके साथ उपस्थित होना होगा और ऊपर वताये गये

दस्तावेज यदि हों तो उन्हें पेश करना होगा तथा 'ग' फार्ममें भरी जानेवाली बातें देनी होंगी। उपनिवेश-सचिव द्वारा निश्चित किये गये स्थानपर प्रत्येक अर्जी देनी होगी।

अर्जियाँ लेनेके लिए जिस व्यक्तिको नियुक्त किया जाये उसे अर्जी बनाकर आवेदकको रसीद देनी चाहिए और अर्जी पंजीयकके पास भेज देनी चाहिए।

५. यदि पंजीयक वयस्क व्यक्तिकी उपर्युक्त तरीकेसे दी हुई अर्जीको खारिज कर दे तो उसे आवेदकके पास खारिज करनेकी सूचना भेजनी चाहिए और उसकी एक प्रतिलिपि न्यायाधीशके पास भेजनी चाहिए।

६. पंजीयनका प्रमाणपत्र 'फ' फार्मके अनुसार दिया जाये।

७. प्रत्येक वयस्क व्यक्तिको, जब भी उससे देखनेके लिए पंजीयनपत्र माँगा जाये, दिखाना होगा; और पुलिसके माँगनेपर उसे निम्न जानकारी देनी होगी:
   (१) अपना पूरा नाम;
   (२) उस समयका पता;
   (३) अर्जी देनेके समयका पता;
   (४) अपनी उम्र;
   (५) अपने हस्ताक्षर, यदि उसे लिखना आता हो तो;
   (६) और दोनों अँगूठोंकी निशानियाँ, अथवा अँगूठों और अँगुलियोंकी निशानियाँ।

८. सोलह वर्षसे कम आयुवाले लड़केके पिता या अभिभावकको जब भी उससे माँगा जाये अपना प्रमाणपत्र दिखानेके अतिरिक्त निम्न जानकारी देनी चाहिए:
   (१) अपना पूरा नाम।
   (२) उस समयका पता।
   (३) अर्जी देनेके समय उसके अभिभावकका पूरा नाम और उसका पता।
   (४) उस बालककी आयु।
   (५) और उस बालकके अँगूठोंके निशान अथवा अँगूठे और अँगुलियोंकी निशानियाँ।

९. आठ वर्षसे कम आयुवाले लड़केके प्रमाणपत्रके लिए आवेदन देते समय अभिभावक या पिताको निम्न हकीकत देनी चाहिए;
   (१) लड़केका पूरा नाम;
   (२) उसकी आयु;
   (३) उसका रिश्ता;
   (४) उसका जन्मदिन;[१]
   (५) उसके ट्रान्सवालमें प्रविष्ट होनेकी तारीख।

१०. खोये गये पंजीयनपत्रके लिए आवेदन[२] करते समय प्रत्येक एशियाई निम्नलिखित हकीकत पेश करे:

१. मूल अंग्रेजी पाठमें है "प्रत्येकका जन्म-स्थान"।

२. मूल अंग्रेजीमें यह वाक्य दिया गया है: "पंजीयन प्रमाणपत्रको नया करानेके लिए प्रार्थनापत्र देते समय"।

(१) पंजीयनपत्र क्रमांक;
(२) अपना पूरा नाम;
(३) अपना पता;
(४) और यदि बालकका पंजीयनपत्र खो गया हो तो उसका पूरा नाम;[1]
(५) अपने अँगूठे और अँगुलियोंकी निशानियाँ;
(६) और यदि बालककी ओरसे अर्जी दी हो तो अपने अँगूठोंकी निशानी और बालकके अँगूठों तथा अँगुलियोंकी निशानियाँ।

११. व्यापारीका परवाना अथवा अन्य कोई परवाना लेते समय आवेदकको अधिकारियोंके समक्ष अपना पंजीयनपत्र पेश करना होगा और इसके अतिरिक्त अधिकारी जिस प्रकार कहे, उस प्रकारसे उसे अँगूठे तथा अँगुलियोंकी निशानियाँ देनी होंगी।

१२. यदि कोई एशियाई कुछ समयके लिए ट्रान्सवालसे बाहर गया हो और उसकी ओरसे अन्य कोई एशियाई परवानेके लिए आवेदन करे तो उसे अधिकारीके पास निम्न बातें पेश करनी चाहिए;
(१) अपना पंजीयन पत्र;
(२) जिसके लिए अर्जी दी हो उसका पूरा नाम;
(३) उस एशियाईका उस समयका पता;
(४) उस व्यक्तिके दाहिने अँगूठेकी छाप लगा हुआ मुख्त्यारनामा;
(५) और अपने दाहिने अँगूठेकी निशानी।

१३. मुद्दती अनुमतिपत्र 'छ' फार्मके अनुसार दिया जाये।

फ़ार्म ख

वयस्क व्यक्तिका आवेदनपत्र

पूरा नाम … … कौम … …
जाति या उपजाति … … आयु … … ऊँचाई … …
निवास-स्थान … … व्यवसाय … …
शरीरके खास-खास चिह्न … …
जन्म-देश … …
ट्रान्सवालमें पहले-पहल आनेकी तारीख … …
मई १९०२ में कहाँ था … …
पिताका नाम … … माताका नाम … …
पत्नीका नाम … … कहाँ रहता है … …
आठ वर्षसे कम उम्रके बच्चों आदिके नाम, आयु, निवास-स्थान और रिश्ता … …
आवेदकके हस्ताक्षर … …
आवेदन प्राप्त करनेवालेके हस्ताक्षर … …
तारीख … … कार्यालय … …

१. मूल अंग्रेजी पाठमें है: "बालकका पूरा नाम तथा उसकी आयु (यदि संरक्षक किसी बालकके लिए प्रार्थनापत्र दे)"।

दाहिने हाथकी निशानियाँ

अँगूठा	पहली अँगुली	बिचली	तीसरी	अन्तिम अँगुली

ऊपरके अनुसार बायें हाथकी अलग-अलग निशानियाँ

सम्मिलित निशानियाँ

बायें हाथकी चार पूरी अँगुलियोंकी निशानी	दाहिने हाथकी चार पूरी अँगुलियोंकी निशानी

वयस्क व्यक्तिकी निशानियाँ लेनेवालेका नाम ··· ···
तारीख ··· ···

फार्म ग

बालकके लिए आवेदनपत्र

अभिभावकका विवरण

पूरा नाम ··· ··· जाति ··· ···
निवास-स्थान ··· ···
अभिभावकका रिश्ता ··· ···
प्रमाणपत्र क्रमांक ··· ···

बालकका विवरण

पूरा नाम ··· ··· प्रजाति ··· ···
जाति या शाखा ··· ··· आयु ··· ···
पता ··· ··· व्यवसाय ··· ···
३१ मई १९०२ को कहाँ था ··· ···
पिताका नाम ··· ··· माताका नाम ··· ···
शरीरके खास-खास चिह्न ··· ···
जन्म-देश ··· ···
ट्रान्सवालमें आनेकी तारीख ··· ···

अभिभावकका दाहिना अँगूठा

अभिभावकके हस्ताक्षर ··· ···
बालकके हस्ताक्षर ··· ···
आवेदनपत्र लेनेवालेके हस्ताक्षर ··· ···
कार्यालय ··· ···
तारीख ··· ···

'ख' फार्मके अनुसार बालकके दाहिने तथा बायें हाथके अँगूठों तथा अँगुलियोंकी अलग-अलग निशानियाँ और दाहिने तथा बायें हाथकी निशानी लेनेवाले अधिकारीके हस्ताक्षर ··· ···

फार्म च

पंजीयनपत्र

पूरा नाम ... ...
प्रजाति ... ... आयु ... ... ऊँचाई ... ...
वर्णन ... ...

दाहिना अँगूठा

पंजीयकके हस्ताक्षर ... ...
तारीख ... ...
मालिकके हस्ताक्षर ... ...

फार्म छ[1]

मुद्दती अनुमतिपत्र

सूचना

'गजट'में यह सूचना है कि पहली जुलाईको प्रिटोरिया या उसके प्रदेशमें रहनेवाले एशियाईको अपने नये पंजीयनपत्रके लिए जुलाई ३१, १९०७ से पहले रिचर्ड टेरेन्स कोडीके पास ७०, चर्च स्ट्रीटमें आवेदनपत्र देना चाहिए।

श्री कोडी सोमवारसे शुक्रवार तक सवेरे ९ बजेसे शामके ४ बजे तक उपर्युक्त स्थानपर रहेंगे। और शनिवारको दोपहरके २ बजे तक रहेंगे।

धाराओंका प्रभाव

धाराओंमें अनपेक्षित बातें ज्यादातर निम्न प्रकार दिखाई देती हैं:

(१) भारतमें अपनी माँके प्रति हिन्दू और मुसलमान दोनों इतना अधिक आदर रखते हैं कि यदि उसका नाम कोई लेनेके लिए कहे तो कत्ल हो जाता है। उस माताका नाम आवेदनपत्रोंपर चढ़ेगा।

(२) यह स्वप्नमें भी ख़याल नहीं किया गया था कि लड़कोंकी सब अँगुलियोंकी निशानियाँ ली जायेंगी। अब उनकी अठारह अँगुलियोंकी निशानियाँ ली जायेंगी। अनुवादकका अनुभव है कि नौ वर्षके कमजोर बालकको अनजान मनुष्य हाथ लगा दे तो वह रो पड़ता है। ऐसे कोमल भारतीय बालकोंको अब जालिम हाथ लगेगा। उनकी अँगुलियाँ लगाई जायेंगी और बाप बैठा हुआ देखेगा।

(३) सब अँगुलियोंकी निशानी एक बार ही नहीं दो बार देनी होंगी। इकट्ठी और अलग-अलग।

(४) पुलिसको अँगुलियोंकी निशानी लेनेका आदेश है, बड़े छोटे सबकी।

(५) व्यापारी बाहर जाये और उसका मुनीम परवाना माँगे तो उसके हाथमें व्यापारीके दाहिने अँगूठेकी निशानीवाला मुखत्यारनामा होना चाहिए, यह अपमानकी हद है। आगेसे भारतीय मुखत्यारनामेमें हस्ताक्षर पर्याप्त नहीं, अँगूठेकी निशानी चाहिए।

(६) सारे आवेदनपत्र अधिकारी लिखेंगे। वकील या एजेंटसे कोई नहीं लिखवा सकेगा। सरसरी तौरसे देखनेपर यह धारा पैसा बचानेवाली है। किन्तु गहराईसे देखनेपर

१. इस फार्मका विवरण उपर्युक्त च फार्मके अनुसार है।

शेरको सामने बिठाकर खीर खिलानेके समान है। प्रौढ़ भारतीय भी अधिकारीके सामने घबरा जाते हैं तब दुबले-पतले बालककी तो बात ही क्या की जाये।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–७–१९०७

५६. प्रिटोरियाकी आम सभा[1]

नया कानून पहली जुलाईसे प्रिटोरियामें अमलमें आनेवाला था। इसलिए वहाँ रविवार, ३० जूनको एक विराट् आम सभा की गई थी। वहाँ जोहानिसबर्गसे खास-खास भारतीय अपने खर्चसे गये थे। उनमें कार्यवाहक अध्यक्ष श्री ईसप मियाँ, मौलवी साहब अहमद मुख्त्यार, श्री एम० एस० कुवाडिया, श्री इमाम अब्दुल कादिर, श्री उमरजी साले, श्री मकनजी, श्री झीणाभाई, श्री गुलाबभाई कीकाभाई, श्री मोरारजी देसाई, श्री गुलाबभाई पटेल, श्री भूला, श्री रणछोड़ नीछाभाई, श्री नादिरशाह कामा, श्री मुहम्मद इशाक, श्री खुशाल, श्री पीटर मूनलाइट, श्री नायडू, श्री ए० एस० पिल्ले, श्री गांधी वगैरह थे। प्रिटोरियाके लोगोंमें श्री हाजी हबीबके अलावा वहाँकी मसजिदके मौलवी साहब, श्री हाजी कासिम जूसब, श्री हाजी उस्मान, श्री काछलिया, श्री अली, श्री हाजी इब्राहीम, श्री गौरीशंकर व्यास, श्री प्रभाशंकर जोशी, श्री मोहनलाल जोशी, श्री उमरजी वगैरह, कुल मिलाकर लगभग चार सौ भारतीय थे।

जोहानिसबर्गके प्रतिनिधियोंके खाने-पीने, ठहरने आदिकी व्यवस्था श्री हाजी हबीब और श्री व्यासने की थी।

सभा ठीक तीन बजे शुरू होकर शामके सात बजे तक चलती रही थी। श्री हाजी हबीबने सबका स्वागत करते हुए कहा कि नया कानून अत्यन्त ही अत्याचारपूर्ण है। जबतक वह प्रकाशित नहीं हुआ था तबतक तो लगता था कि यदि उसकी धाराएँ ढंगकी हों तो उसे स्वीकार भी किया जा सकता है। किन्तु धाराओंको देखनेके बाद तो यही लगा कि कानूनको कभी स्वीकार नहीं किया जा सकता। भारतीय समाजको एकताके साथ कानूनका विरोध करना चाहिए। इसके बाद उन्होंने श्री ईसप मियाँसे सभापतिका आसन ग्रहण करनेका निवेदन किया।

श्री ईसप मियाँने श्री हाजी हबीबका उपकार माना कि उन्होंने अपना मकान दिया। उन्होंने कहा कि कानून जहरी है। वह हमसे स्वीकार नहीं किया जा सकता। मैं स्वयं अपना काम छोड़कर समाजकी सेवा करनेको तैयार हूँ। सभी भाइयोंको हिलमिलकर रहना है। आज तक हम झुकते आये हैं। किन्तु, अब वैसा नहीं हो सकता। दुनियामें माँका नाम कोई नहीं पूछता। केवल कयामतके दिन ही हमारा माँके नामसे परिचय दिया जायेगा। अब सरकार हमसे माँका नाम पूछनेवाली है। भारतीय समाज इस तरहकी गुलामी कभी स्वीकार नहीं करेगा।

श्री गांधीने यह समझाया कि कानूनका क्या असर होगा, और कहा कि हर भारतीयको — फिर वह गरीब हो या अमीर — स्वतन्त्र होना चाहिए। [साम्राज्य] सरकारने इस कानूनको

१. मूल गुजराती रिपोर्ट "**इंडियन ओपिनियन**के लिए विशेष विवरण" के रूपमें इन शीर्षकोंसे छपी थी, "प्रिटोरियाके भारतीयोंकी विराट् आम सभा : खूनी कानूनका जोरदार विरोध : सब जेलके लिए तैयार।"

मंजूर कर लिया है, उससे कुछ नहीं होता। अभी तो भारतीय समाज द्वारा उसकी मंजूरी बाकी है।

जबतक भारतीय समाज इसे स्वीकार नहीं करता तबतक माना ही नहीं जा सकता कि यह कानून पास हो गया है। यदि कोई बड़े या छोटे भारतीय इस कानूनकी गुलामी स्वीकार कर लें तो भी दूसरोंको उनका अनुकरण नहीं करना चाहिए। जो स्वतंत्र रहेंगे वे जीतेंगे।

मौलवी साहब अहमद मुख्त्यारने बड़े जोशसे भाषण देते हुए समझाया कि मुसलमान और हिन्दू सबको हिल-मिलकर चलना है। सच्चा मुसलमान तो वह है जो दीन और दुनिया दोनोंके काम सँभालता है। हजरत यूसुफ अलैसलामपर जब बला आई थी तब उन्होंने खुदासे प्रार्थना की थी कि हे खुदा, मुझे इस बलाकी अपेक्षा जेल देना। किसी भी भारतीयको जुल्मी कानूनके सामने झुकना नहीं चाहिए। उन्होंने कहा कि एक समितिको गाँव-गाँव घूमकर लोगोंको इस बातका भान कराना चाहिए। यदि ऐसी कोई समिति बनी तो मैं भी उसके साथ जानेको तैयार हूँ।

श्री नायडूने तमिल भाषामें समझाकर कहा कि मेरी जान चली जाये तब भी नये कानूनके सामने नहीं झुकूँगा।

श्री उमरजी सालेने भी भाषण करते हुए कहा कि सभी भारतीयोंको हिल-मिलकर चलना चाहिए और अनुमतिपत्र कार्यालयका बहिष्कार करना चाहिए।

श्री एम० एस० कुवाड़ियाने पहले वक्ताओंका समर्थन किया। श्री कागाने कहा कि यह कानून इतना खराब है कि इसके सामने एक भी भारतीय झुक नहीं सकता। मेरा सब कुछ चला जाये तब भी मैं इस कानूनको स्वीकार नहीं करूँगा।

इमाम अब्दुल कादिरने कहा कि कोई भी भारतीय इस कानूनको स्वीकार करे, मैं तो स्वीकार नहीं करूँगा। यह कानून आजीवन कारावाससे भी बुरी सजा देता है। मौलवी साहबने स्वयं प्रस्तावका समर्थन किया और गाँव-गाँव जानेके लिए अपनी उद्यतता दिखाई।

श्री मकनजीने कहा, मुझे आशा थी कि कानूनमें जरा-सी भी गुंजाइश होगी तो मैं उसे स्वीकार कर लूँगा। लेकिन अब तो मैंने निश्चयकर लिया है कि कोई भी उसे स्वीकार करे, मैं नहीं करूँगा।

श्री हाजी इब्राहीमने भाषण देते हुए अन्तमें कहा कि यह कानून स्वीकार नहीं किया जा सकता।

श्री नूर मुहम्मद अय्यूबने कहा कि भारतीयोंके लिए अपना जोश दिखानेका यह स्वर्ण अवसर है।

श्री इस्माइल जुम्मा, श्री मनजी नथू, श्री त्र्यम्बकलाल और श्री हाजी उस्मान हाजी अबाने भी ऐसे ही भाषण दिये।

श्री काछलियाने कहा कि निन्यानवे प्रतिशत मुसलमानोंके बारेमें तो मैं विश्वास दिला सकता हूँ कि वे जेल जायेंगे।

श्री उमरजीने उनका समर्थन किया।

श्री गौरीशंकर व्यासने कहा कि ईमानदारोंके लिए तो [illegible] है।

श्री भीमजी आणन्दजीने कहा कि कानून हर्गिज स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए।

श्री पिल्लेने भी जोशीला भाषण दिया।

श्री गुलाब रुद्र देसाई, श्री खुशाल छीता, श्री गुलाम मुहम्मद और श्री मूसा सुलेमानने कहा कि यदि कोई आदमी अनुमतिपत्र कार्यालयमें जायेगा तो वे उसे समझाकर रोकेंगे।

श्री हाजी कासिमने कहा कि कानून भारतीय समाजको स्वीकार हो ही नहीं सकता।

मौलवी साहब अहमद मुख्त्यारने कहा कि धर्म-गुरुओंका काम केवल नमाज पढ़ाना ही नहीं, लोगोंके दुःखमें पूरी तरह हाथ बँटाना भी है। गोरे लोग हमारे धर्मका अपमान करना चाहते हैं, इसलिए वे रेल किरायेमें भेद करते हैं। रेलवेवालोंने कहा है कि ईसाई और यहूदी पादरी आधे किरायेपर रेलमें यात्रा कर सकते हैं, किन्तु हिन्दू और मुसलमान धर्म-गुरु नहीं कर सकते। भारतीय समाज इस प्रकारकी गुलामी कभी स्वीकार नहीं करेगा।

श्री ईसप मियाँने अन्तिम भाषण देते हुए श्री गुलाब रुद्र देसाईको उनकी हिम्मतके लिए अपनी शाल दी और कहा कि मैं अपना निजी काम छोड़कर लोकसेवाके लिए तैयार हूँ। इस समय प्रिटोरियाके भारतीयोंपर जिम्मेदारी आई है। मुझे विश्वास है कि वे उसे अच्छी तरह निभायेंगे। श्री हाजी हबीबके आतिथ्यके लिए सारा भारतीय समाज उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करता है।

इस प्रकार बहुत उत्साहके साथ काम पूरा हुआ और सात बजे सभा समाप्त हुई।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–७–१९०७

५७. भेंट: 'रैंड डेली मेल' के प्रतिनिधिको

ट्रान्सवालके सरकारी 'गज़ट' में प्रकाशित हुआ है कि १ जुलाईसे एशियाई कानून लागू होगा। इस नये कानूनसे सम्बन्धित वे धाराएँ भी प्रकाशित हुई हैं जिनके अनुसार सभी अँगुलियोंकी अलग-अलग और इकट्ठी छाप ली जायेगी। धाराओंके प्रति भारतीयोंका रुख जाननेके लिए 'रैंड डेली मेल' के एक प्रतिनिधिने श्री गांधीसे भेंट की थी और तारीख २९के 'रैंड डेली मेल' में निम्नलिखित विवरण प्रकाशित हुआ है:[1]

> एशियाइयोंके लिए बनाया गया जो नया कानून प्रकाशित हुआ है उसे मैं या मेरे साथी कदापि स्वीकार नहीं करेंगे। किन्तु कानूनमें जो अन्तिम सजा कही गई है उसे भोगेंगे। इस कानूनको कोई भी स्वाभिमानी भारतीय स्वीकार नहीं करेगा। मुझे और 'इंडियन ओपिनियन' के सम्पादकको जो पत्र प्राप्त हुए हैं उनसे मालूम होता है कि ट्रान्सवालकी भारतीय आबादीमें से लगभग ५० प्रतिशत व्यक्ति कानूनका विरोध करेंगे। मैंने अभीतक एक भी ऐसा भारतीय नहीं देखा जो कानूनको ठीक समझता हो। कुछ लोग कह रहे हैं कि हम इस देशको छोड़कर चले जायेंगे। किन्तु ऐसा किसीने नहीं कहा कि हम नया पंजीयनपत्र लेंगे। भारतीयोंमें बहुत ही रोष फैला हुआ है और

१. इसके बाद जो विवरण दिया गया है वह "भेंट: 'रैंड डेली मेल' को", पृष्ठ ६०-६१ का सारांश है।

कमसे-कम ६,००० व्यक्ति नया पंजीयनपत्र लेनेसे इनकार करेंगे। यदि सरकार उनपर मुकदमा चलायेगी तो वे लोग जेल जायेंगे, भले उससे उन्हें नुकसान उठाना पड़े। लेकिन वे स्वाभिमानके लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करनेको तत्पर हैं। हमें लगता है कि जब हमारे सम्बन्धमें कानून बनानेमें हमें बोलनेका अधिकार नहीं है, तब हमारे लिए एक ही उपाय शेष रह जाता है कि किसी भी कानूनके सामने घुटने न टेके जायें।

कहा गया है कि कानून नरम है। किन्तु मुझे कहना चाहिए कि मैंने बहुतेरे उपनिवेशोंके कानून पढ़े हैं, लेकिन एक भी उपनिवेशमें इस कानूनके समान अपमान-जनक और कलंकित करनेवाला कानून नहीं देखा। एम्पायर नाटकघरवाली सभामें दो हजारके लगभग लोग उपस्थित थे और उन सबने सर्वसम्मतिसे शपथ ली थी कि वे कभी भी अनिवार्य पंजीयन नहीं करवायेंगे। मुझे आशा है कि लोग उस शपथका अवश्य पालन करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–७–१९०७

५८. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

नया कानून

बहुत समयसे भारतीय जिनका रास्ता देख रहे थे वे नियम प्रकाशित हो गये हैं। "जैसा बाप वैसा बेटा, जैसा बड़, वैसी जड़", इस कहावतके अनुसार जैसा कानून है वैसे ही उसके नियम हैं। जो लोग नियमोंमें कुछ नरमीकी आशा रखते थे, उनकी वह आशा भंग हो गई है। मैं स्वयं इसलिए बहुत खुश हूँ कि नियम अनपेक्षित रूपमें सख्त हैं। इससे प्रत्येक भारतीय दृढ़ हो गया है और अब तो सब कहने लगे हैं कि जेलके बिना चारा नहीं है।

घासमें साँप

अंग्रेजीमें कहावत है कि हरी घासमें प्रायः हरे साँप होते हैं, जो दिखाई नहीं देते। वे काटते हैं तभी उनकी उपस्थितिका ज्ञान होता है। यह कानून भी वैसा ही है। इसमें कुछ साँप छिपे हुए थे, जिनका पता मुझे अभी लगा है। इन नियमोंको मैंने पहले भी पढ़ा था। उस वक्त मुझे इसके कुछ प्रभावोंका ज्ञान नहीं हो सका था। मैं समझता था कि जबतक नया अनुमति-पत्र — गुलामीका पट्टा — नहीं लिया जाता तबतक किसीसे पूछताछ करना सम्भव नहीं है। अब विचार करनेपर देखता हूँ कि इसमें पुलिसको जो सत्ता दी गई है उसके अनुसार वह चाहे जिस भारतीयसे अँगुलियोंकी निशानी माँग सकती है और उसकी वंशावली पूछ सकती है, और वह भी जितनी बार चाहे उतनी बार। इस साँपसे डरकर चलना है। और यदि सरकारने उस चाबीको ऐंठा तो उससे भारतीय समाज शायद परेशान हो जायेगा। रास्ता सीधा है। किसी भारतीयको किसी भी तरह अँगुलियोंकी निशानी देनी ही नहीं है। इतने दिन अँगूठा लगाते रहे। किन्तु अँगूठा लगाना भी अनिवार्य हो गया है, इसलिए उसे लगानेसे भी इनकार कर देना चाहिए। इसका नतीजा क्या होगा? उत्तर है

जेल। जेलका विचार प्रत्येक भारतीयके लिए सामान्य वन जाना चाहिए। पुलिस यदि प्रश्न पूछती है अथवा निशानी माँगती है और उसका उत्तर नहीं दिया जाता है तो नये कानूनके अनुसार उसकी सजा जेल अथवा जुर्माना है। जुर्माना तो देना ही नहीं है। इसलिए जेल ही बची। मेरी सलाह यह भी है कि फोक्सरस्टसे आनेवाले किसी भी भारतीयको अब पुलिसको अँगूठे या अँगुलियोंकी निशानी नहीं देनी चाहिए। परिणामस्वरूप यदि उसे मजिस्ट्रेटके पास ले जायें, तो वहाँ [अपना अधिकार] सिद्धकर देना चाहिए, और इतनेपर भी मजिस्ट्रेट उसे जेल दे तो वह भोगी जाये। किन्तु यह लड़ाई केवल सच्चे लोगोंके लिए है। जिनके पास अपने अँगूठेकी निशानीवाले अनुमतिपत्र हैं, उन्हींपर यह बात लागू होती है। इसमें हिम्मत बड़ी चाहिए। किन्तु उसे रखना है और रखेंगे।

दूसरा साँप

यह तो एक साँप हुआ। दूसरा साँप परवानेसे सम्बन्धित है। मैं मानता था कि परवानेके सम्बन्धमें अँगुलियोंके निशान लगवानेका काम जनवरीमें शुरू होगा। किन्तु अब देखता हूँ कि वह आजसे ही शुरू है। अतः यदि कोई परवाना लेने जायेगा तो उससे अँगुलियोंकी निशानी माँगी जा सकती है। किन्तु यह बात राजस्व-अधिकारियोंको भी मालूम नहीं हुई होगी, और मैं आशा करता हूँ कि सब भारतीयोंने अपना-अपना परवाना ले लिया होगा। लेकिन इस प्रकार हम कबतक चल सकेंगे? सरकारने जगह-जगह अँगुलियोंकी बात लागू की है। अतः अब बहुत ही सचेत होकर चलना है। मैं यह मानता था कि हर बड़ी दूकान पीछे एक व्यक्ति कानूनके निर्वाहके लिए अनुमतिपत्र लेकर बैठ सकता है। लेकिन गम्भीरतापूर्वक विचार करनेपर देखता हूँ कि एक व्यक्ति व्यापार कर सकेगा, ऐसी आशा करना दुराशा-मात्र है। इसलिए मुझे कह देना चाहिए, आवश्यक हो तो व्यापारियोंके लिए व्यापारका लालच छोड़ देना ठीक होगा। देशके लिए, अपने आत्मसम्मानके लिए, व्यापारको छोड़ देनेके लिए तत्पर रहनेसे ऐन वक्तपर घबराहट नहीं होगी। इसके अलावा व्यापारके लिए भी अँगुलियोंकी निशानी देकर कैदी बनना ठीक नहीं मालूम होता। सुन्दर और एकमात्र रास्ता यही है कि खुदापर पूरा भरोसा रखकर देश-हितमें सब-कुछ कुर्बान कर दिया जाये। विजयके लिए हममें इतना निर्मल साहस होना चाहिए।

प्रिटोरियाके लिए अवसर

गुलामीका पट्टा देना पहले प्रिटोरियामें शुरू हुआ है। इसलिए प्रिटोरियापर बड़ी जिम्मेदारी आ पड़ी है। साथ ही बहादुरी दिखानेका अवसर भी उसके हाथ आया है। सारे भारतीय यही चाहते और खुदासे यही प्रार्थना करते हैं कि प्रिटोरिया वही करे जो उसे शोभा दे।

'डेली मेल' की टीका

पिछले शुक्रवारको [रैंड] 'डेली मेल'के एक संवाददाताने श्री गांधीसे मिलकर कुछ जानकारी प्राप्त की।[1] श्री गांधीने बताया कि कमसे-कम ६,००० भारतीय तो निश्चय जेल जायेंगे। भारतीय समाजने खुदाकी शपथ ली है। उससे वह विमुख नहीं हो सकता। कानूनका विरोध करनेमें बेवफाई नहीं होगी। कानूनका विरोध करके भारतीय समाज केवल अपनी टेक व

१. देखिए "भेंट: 'रैंड डेली मेल'को", पृष्ठ ६०-६१।

आत्मप्रतिष्ठा रखना चाहता है। इस तरह विरोध करनेसे छुटकारा कैसे होगा, यह कहा नहीं जा सकता, किन्तु बहादुर उपनिवेशियोंको भारतीयोंकी बहादुरीका पता चल जायेगा। यदि वैसा न हो तब भी भारतीय समाज जेल जायेगा और आखिर ट्रान्सवाल छोड़कर चला जायेगा, किन्तु गुलामीकी हालतमें यहाँ नहीं रहेगा।

इसपर टीका करते हुए 'डेली मेल' सहानुभूति व्यक्त करता है और कहता है कि भारतीय समाजको कानून स्वीकार कर लेना चाहिए, क्योंकि उसमें सरकारका उद्देश्य अपमान करना नहीं है। अँगुलियाँ लगवानेमें सरकारका उद्देश्य दूसरे भारतीयोंको आनेसे रोकना है। इसीके साथ 'डेली मेल' का संवाददाता लिखता है कि सरकारने जान-बूझकर पहले प्रिटोरियाको लिया है, क्योंकि वह सबसे निर्बल है, इसलिए वहांके भारतीय तो निश्चय ही नया पंजीयनपत्र ले लेंगे, और तब दूसरे तो अपने-आप लेंगे। मुझे विश्वास है कि प्रिटोरिया इस चुनौतीको झेल लेगा और बहादुरी दिखायेगा।

श्री गांधीका उत्तर

'डेली मेल'के उपर्युक्त पत्रका श्री गांधीने नीचे लिखा उत्तर दिया है:[1]

'स्टार' की टीका

'स्टार' पत्रने बहुत टीका की है और उसे डर भी लग रहा है, इसलिए वह लिखता है कि भारतीय समाजको दस अँगुलियोंकी निशानी देनेके सिवा और कोई कष्ट नहीं है। फ्रीडडॉर्पसे बिना हर्जाना दिये उन्हें कोई नहीं निकालेगा। ट्राममें उन्हें छूट है ही, और अँगुलियोंकी निशानी तो भारतीय सिपाही भारतमें भी देते हैं।

स्पष्ट ही यह सब सरासर झूठ है। फ्रीडडॉर्पमें हर्जाना मिले तबकी बात तब; ट्राममें भारतीयोंको अभी तो धक्के दिये जाते हैं; और भारतीय स्वेच्छापूर्वक अँगुलियोंकी निशानी दें और अपढ़ सिपाही व्यापारीसे जबरदस्ती अँगुलियाँ लगवाये, इन दोनोंमें अन्तर नहीं है, यह बात तो 'स्टार' ही कह सकता है। किन्तु 'मेल' और 'स्टार' दोनोंकी टीकाओंसे मालूम होता है कि भारतीय कौमकी लड़ाईकी तैयारीसे डर पैदा हो गया है। तब, भारतीय समाज यदि सच्ची बहादुरी बताता है तो क्या नहीं कर सकता?

नेटाल कांग्रेसकी सहानुभूति

नेटाल कांग्रेसकी ओरसे भारतीय समाजके नाम एक तार आया है, जिसमें जेलके निर्णयपर डटे रहकर अपनी टेक बनाये रखने और आर्थिक सहायता देनेके बारेमें कहा गया है। यह सहानुभूति बहुत कामकी है। लेकिन समय ऐसा है कि जो आर्थिक सहायता देनी हो वह अभी पहुँच जानी चाहिए। भारतीय समाज यदि सचमुच पुरुषार्थ दिखाता है तो निस्सन्देह पैसेकी बहुत जरूरत होगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–७–१९०७

१. इसके बाद गांधीजीने पत्रका गुजराती अनुवाद दिया है जो यहाँ नहीं दिया जा रहा है। मूलके लिए देखिए "पत्र: 'रैंड डेली मेल' को" पृष्ठ ६७-६८।

५९. पत्र: 'रैंड डेली मेल' को[1]

जोहानिसबर्ग,
जुलाई ६, १९०७

सेवामें
सम्पादक
['रैंड डेली मेल']

महोदय,

मैं विश्वास करता हूँ, एशियाई प्रश्नकी पुनः चर्चा करनेके लिए मुझे क्षमा-याचनाकी आवश्यकता नहीं है।

मैंने आपके भेंटकर्तासे[2] यह नहीं कहा था कि "अनाक्रामक प्रतिरोध" मेरे देशवासियोंके लिए एक नया मार्ग है। मैंने यह कहा था कि हमें पीढ़ियोंसे, खास तौरसे बड़े पैमानेपर, इसका अभ्यास नहीं रहा है, इसलिए मैं इसके परिणामके सम्बन्धमें पहलेसे कुछ नहीं कह सकता। मुझे, व्यक्तिगत रूपमें, यह देखकर गर्व होता है कि सामूहिक हितके लिए कष्ट-सहनकी क्षमता केवल सुप्त पड़ी थी और परिस्थितियोंके दबावसे वह पुनः शीघ्रतासे क्रियाशील होती जा रही है। धरना भारतीय मानसके लिए कतई नई वस्तु नहीं है। भारतमें विभिन्न जातियोंका जो जाल फैला हुआ है वह इस अस्त्रका उपयोग और मूल्य प्रदर्शित करनेवाला है, बशर्ते कि उसका उचित उपयोग किया जाये। आज भी सामाजिक बहिष्कार और जातीय बहिष्कार दो बहुत शक्तिशाली अस्त्रोंका प्रयोग भारतमें किया जाता है, किन्तु दुर्भाग्यवश छोटे-मोटे मामलोंमें ही। और यदि अब पंजीयन-अधिनियमके कारण मेरे देशवासी इस भयंकर अस्त्रका प्रयोग एक ऊँचे उद्देश्यके लिए करना जान सकेंगे तो लॉर्ड एलगिन और ट्रान्सवालकी सरकार दोनों ही मेरे देशवासियोंकी कृतज्ञताके पात्र होंगे।

इसलिए भारतीय धरनेदार असाधारण (उनके लिए असाधारण) आत्मत्याग और साहस दिखाकर अपने अज्ञानी और निर्बल देश-बन्धुओंको कर्तव्य-पथ दिखानेका प्रयत्न कर रहे हैं तो, सचमुच, इसमें कोई अनोखापन नहीं है। इसके साथ ही, आज पश्चिमी और पूर्वी, या यों कहिए कि भारतीय धरनेदारोंमें, उतना ही अन्तर है जितना प्रकटतः पूर्व और पश्चिममें है। आतंक फैलानेकी हमारी कोई इच्छा नहीं है। हम बहुमतकी इच्छा जबरदस्ती मनवाना नहीं चाहते; किन्तु मुक्ति-सेनाकी[3] अदम्य बालाओंकी भाँति, अपने नम्रतापूर्ण ढंगसे, समझाने-

१. यह "भारतीयोंका धरना" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था, और १३–७–१९०७ के इंडियन ओपिनियनमें उद्धृत किया गया था।

२. देखिए "भेंट: 'रैंड डेली मेल' को", पृष्ठ ६०-६१।

३. सन् १८६५ में विलियम बूथ द्वारा लन्दनमें स्थापित एक धार्मिक संगठन, जिसे "साल्वेशन आर्मी" कहा जाता था। बादमें संगठनने अर्ध-सैनिक रूप ले लिया था। मूलतः यह ईसाई धर्मके सिद्धान्तोंसे सहमत था, लेकिन इसके उपदेश-आदेश व्यावहारिक और सीधे-सादे होते थे। उनमें दूसरोंकी मुक्तिके लिए कष्ट-सहन तथा आत्मबलिदानपर जोर दिया जाता था।

बुझानेकी अपनी समस्त सम्भव शक्तिको काममें लाकर, हम उन लोगोंको, जो जानते नहीं, एशियाई पंजीयन अधिनियमके उस रूपसे परिचित कराना जरूर चाहते हैं, जिसे ठीक माना जाता है। इसके बाद यह बात उन्हीं लोगोंपर छोड़ दी जाती है कि वे हमारी सलाहको मानें या इस अपमानजनक कानूनको स्वीकार कर इस देशमें दीन-हीन जीवन व्यतीत करनेके लिए अपने-आपको बेच दें। जैसा मैंने पहले कहा है, यदि उपनिवेशियोंको मालूम हो जाये कि इस कानूनका अर्थ क्या है तो वे स्वयं उस कानूनको माननेवाले भारतीयोंको ठोकर मारने और घृणा करने योग्य कुत्ते कहकर पुकारेंगे।

भारतमें अँगुलियोंके निशानोंके प्रयोगके सम्बन्धमें आपने श्री हेनरीके कथनको — मेरा खयाल है, भारतीयोंके हितको ही दृष्टिगत करके — उद्धृत किया है। किन्तु हमने उनके सत्प्रयोगसे कभी इनकार नहीं किया। मेरा और मेरे देशवासियोंका विरोध तो इस प्रथाके दुरुपयोगके प्रति है।

आप आशा करते हैं कि मेरे देशवासियोंमें समझ आ जायेगी और वे इस कानूनको मान लेंगे। उसके विपरीत मैं आशा करता हूँ कि यदि मेरे देशवासी उपयुक्त साहस करेंगे और अपना सम्मान और स्वाभिमान खोनेके बजाय अपने सर्वस्वका त्याग करनेके लिए तैयार हो जायेंगे तो आप अपने विचार बदलेंगे और उन्हें अपनी बातके पक्के मानकर उनका आदर करेंगे। मैं आपको याद दिला दूं कि भारतीयोंने ईश्वरको साक्षी बनाकर शपथ ली है कि वे इस कानूनको न मानेंगे। न्यायालयमें ली गई झूठी शपथका प्रायश्चित्त न्यायाधीशके दिये हुए दण्डको भोगनेसे हो सकता है। किन्तु जो परम न्यायाधीश कभी भूल नहीं करता उसके सामने झूठी शपथ लेनेका क्या प्रायश्चित्त हो सकता है? यदि हम उसके सामने ली हुई शपथ झूठी कर देंगे तो सचमुच हम किसी भी सभ्य समाजमें रहनेके अयोग्य होंगे, और पुराने जमानेकी चाण्डाल-बस्तियां ही हमारे लिए उचित और उपयुक्त स्थान होंगी।

आपका, आदि,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

रैंड डेली मेल, ९–७–१९०७

६०. पत्र : 'स्टार' को

पो० ऑ० बॉक्स ५७
प्रिटोरिया
जुलाई ७, १९०७

सेवामें
सम्पादक
'स्टार'
[जोहानिसबर्ग]

महोदय,

आपके प्रिटोरियाके संवाददाताने भारतीय समाजको यह कहकर उचित श्रेय दिया है कि ब्रिटिश भारतीयोंने इस उपनिवेशमें एशियाई पंजीयन अधिनियमको स्वीकार न करनेका जो संघर्ष आरम्भ किया है उससे "किसी गम्भीर उत्पातकी आशंका नहीं है"। महान्यायवादीने भी यह कहकर हमारी बड़ाई ही की है कि उन्हें कानूनके पालक भारतीयोंसे कानूनके विरोधकी आशा नहीं थी। अन्तर केवल यह है कि जहाँ कानूनके पालनकी सहज बुद्धि दंगों और स्थूल प्रतिरोधको असम्भव कर देती है, वहाँ उसका अर्थ यह नहीं होता कि कानूनको कितना ही अरुचिकर होनेपर भी स्वीकार कर लिया जाये। वह सहज बुद्धि हमें बताती है कि अगर हम कानून द्वारा लादा गया जुआ सहन न कर सकें तो हमें कानून भंग करनेके परिणामोंको शान्तिपूर्ण गौरव और समर्पणके भावसे सहन करना चाहिए।

आपके संवाददाताने धमकी दी है कि यदि मेरे देशवासियोंने अपना रवैया न बदला तो दण्ड-विधानकी धाराएँ कड़ाईसे लागू की जायेंगी और उन्हें निष्कासित कर दिया जायेगा। यह धमकी अनावश्यक थी; क्योंकि हमने इस कानून-भंगके परिणामोंको सोच-समझ लिया है। पंजीयन-अधिनियम द्वारा, जिससे समूचे समाजपर अपराधी होनेकी छाप लग जाती है, बलात् लादी गई दासताकी तुलनामें जेल हमें तनिक भी भयभीत नहीं करती। जिसे हमें अपना घर समझना सिखाया गया वहीं कुत्तेकी जिन्दगी बसर करनेके मुकाबले तो देश-निकाला एक मनपसन्द राहत होगी। यदि इस कानूनका हमपर उतना ही भयंकर असर पड़ता है जितना हम बताते हैं तो हम जितना अधिक बलिदान करेंगे, उतना ही कम होगा।

हमें साम्राज्य-भावना और साम्राज्यके सर्व-समाजी स्वरूपका अनोखा अनुभव हो रहा है। यह माना जाता है कि साम्राज्यका हाथ बलवानोंसे निर्बलोंकी रक्षा करेगा। अब ट्रान्सवालके भारतीयोंको यह देखना है कि वह हाथ निर्बल भारतीयोंकी सबल गोरोंसे — अंग्रेजों और दूसरोंसे — रक्षा करता है या नहीं, अथवा उसका उपयोग दुर्बलों और असहायोंको कुचलनेमें अत्याचारीके हाथोंको मजबूत करनेके लिए किया जायेगा। इस शब्दका प्रयोग करनेके लिए क्षमा करें, किन्तु क्या हमारी प्रत्येक भावनाकी और हमारे धर्मोंकी अवहेलना करना अत्याचार नहीं है, क्योंकि यह प्रवासको नियन्त्रित करनेका प्रश्न नहीं है? पुनःपंजीयनके सिद्धान्तको हमने मान लिया है, उसकी विधिपर हम तीव्र रोष प्रकट करते हैं। किन्तु
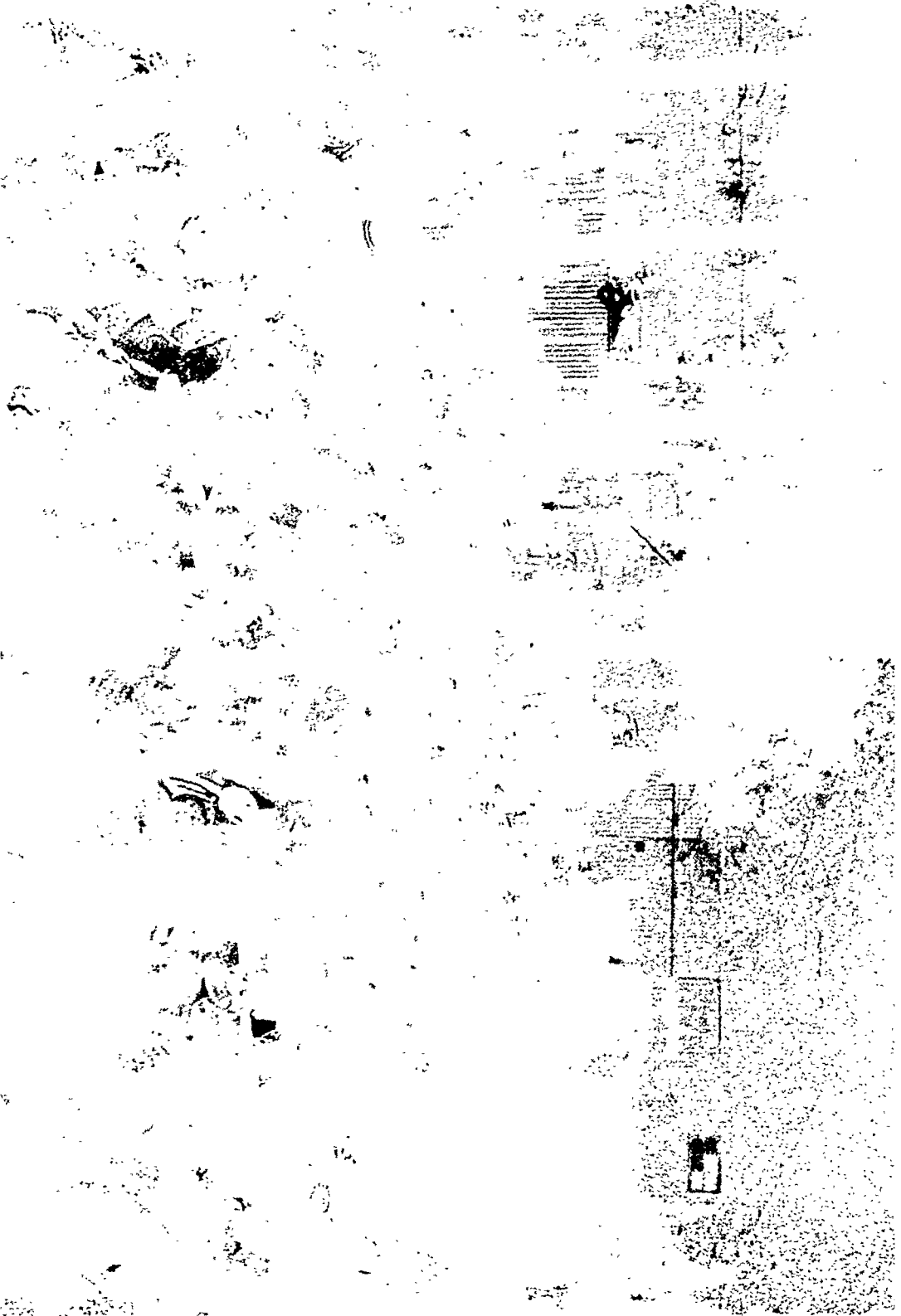
प्रिटोरियामें आम सभा

I have your letter. I note what you say about Ma-Jee. Mr. Polak has just returned from Pretoria. He has done exceedingly well there.

515

I have written to Mr. West about jobs. The Customs Forms, as I have said to Mr. West, are to be sent to the address in your possession of Ebrahim Mahomed. He is one of the subscribers.

S.N. 4674
383

I am certain that it is a short-sighted policy not to print Hindi. We are really not even using our capital. "Ramayana" is bound to sell, and, in my opinion, it will be a work of very considerable merit, for the simple reason that thousands of people who cannot possibly study the whole work will gladly avail themselves of the condensation. If, therefore, a good man is available, you should certainly not hesitate to incur the expense. The reasoning which tells you that, according to the expenses here, the book will be dear is faulty to a degree. It should be plain to us that, if the expenses are high, the prices charged are correspondingly high. The term "high", therefore, is merely relative. The Bhagavad-Gita which we would issue in India for one anna, we charge one shilling for, because the expenses were comparatively high. I am perfectly certain that, whenever we think of having things done cheaply outside the country of our adoption, we bring into play the ordinary weakness, namely, to drive the hardest bargain possible, and it is for that reason that I have condemned in my mind the idea of having the South African book printed in Bombay, and I feel this so keenly, that I have not yet summoned up sufficient zeal for writing out the book. I would ask you to reason this thing out for yourself. Never mind whether we employ an extra hand or not and whether we publish the book or not; that is a matter of detail. The first thing is to lay down the principle. If we cannot enforce it, or if we have not sufficient courage to do it, then we cease to worry about it, and cease to think of enlarging the scope of our work. If you need money, please let me know in time.

Yours sincerely,

सरकार जान-बूझकर हमें अपमानित करना चाहती है। यदि भारतीय इस कानूनको सहन करनेके बजाय अपनी भौतिक सम्पत्तिको खोनेके लिए तैयार हैं तो क्या उनको दोष दिया जायेगा? समूचा गोरा ट्रान्सवाल हमारे विरुद्ध है तो ईश्वर हमारे साथ है।

आपका, आदि,
हाजी हबीब
मन्त्री,
ब्रिटिश भारतीय समिति, प्रिटोरिया

[अंग्रेजीसे]

स्टार, ९–७–१९०७

६१. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

सोमवार [जुलाई ८, १९०७]

धन्य प्रिटोरिया!

प्रिटोरियाने तो हद कर दी। वहाँपर जिन लोगोंसे शायद ही किसीको कोई हिम्मतकी आशा थी, उन लोगोंने भयानक दुःख उठाकर तथा अपना सब-कुछ छोड़कर लोकसेवा शुरू की है और सभी, किस प्रकार लाज रहे, इसके सिवा कुछ नहीं सोचते।

स्वयंसेवकोंपर न्योछावर जाऊँ!

स्वयंसेवकों उर्फ धरनेदारों उर्फ चौकीदारों उर्फ देशसेवकोंने तो अपना नूर चमका दिया है। ट्रान्सवालके भारतीयोंके इतिहासमें उनका नाम अमर रहेगा। वे अपना सारा समय केवल धरना देनेमें बिताते हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं:

सर्वश्री ए० एम० काछलिया, गौरीशंकर प्राणशंकर व्यास, गुलाम मुहम्मद, अब्दुल रशीद, कासिम सिद्धू, खुशाल छीता, मेमन इब्राहीम नूर, गोविन्द प्राग, हुसैन बीबा, मुहम्मद वली, अर्देशर फरामजी, चाउल बेग, गुलाब रुद्र देसाई, मूसा सुलेमान और इब्राहीम नूर।

इतने देशभक्त बारी-बारीसे सारे दिन अनुमतिपत्र-कार्यालयके आसपास फिरते रहते हैं और जो कोई भारतीय कार्यालयके अन्दर जाता है उसे विनयपूर्वक समझाकर रोकते हैं। वे इस समय अपना कामधन्धा छोड़कर केवल देश-सेवापर तुले हुए हैं। चाहे जैसी आफत आये, उसकी उन्हें परवाह नहीं है। वे अपने कामके चाहे जैसे परिणाम झेलनेको तैयार हैं। जहाँ इतनी देशभक्ति हो वहाँ यदि अन्तमें जीत हो तो उसमें आश्चर्य कौन-सा?

इस बहादुरीका सबक

स्वयंसेवकोंके इस कार्यका अनुकरण ट्रान्सवालके प्रत्येक गाँवको करना चाहिए। आज प्रिटोरियामें जो-कुछ हो रहा है वह ट्रान्सवालके प्रत्येक गाँवमें हो सकता है। कुछ समयमें पंजीयनपत्रकी अर्जी देनेके लिए प्रत्येक गाँवमें अधिकारियोंकी नियुक्ति हो जायेगी। उस समय प्रिटोरियासे सबक लेकर हर गाँवके भारतीयोंको स्वयंसेवक खोजने होंगे। मेरी रायमें तो वे बाढ़ आनेके पहले ही बाँध बाँध लें और स्वयंसेवक तैयार कर लें। जिनके लिए सम्भव हो

वे प्रिटोरिया जाकर यह देख आयें कि कितनी तेजीसे काम किया जा रहा है। अनुमतिपत्र-कार्यालयका बहिष्कार यदि ठीक तरहसे किया जा सके तो वादकी लड़ाई बहुत आसान हो सकती है।

व्यापारियोंको सलाह

मैंने सुना है कि कुछ व्यापारियोंने, जो विलायत वगैरह जगहोंसे माल मँगवाते हैं, नये कानूनके कारण माल मँगवाना बन्द कर दिया है। वे लोग धन्यवादके पात्र हैं। जान पड़ता है, उन्होंने जेलका कष्ट झेलनेकी पूरी तैयारी कर ली है। मुझे लगता है कि इस प्रकार यदि हर व्यापारी अपने लेनदारको लिख भेजे या तार भेज दे तो बहुत लाभ हो सकता है। एक तो यह होगा कि स्वयं व्यापारीमें बहुत हिम्मत आ जायेगी और, दूसरे, यूरोपके व्यापारी डरकर स्वयं भी हमारे लिए काम करने लग जायेंगे। यह सब काम वही व्यापारी कर सकेंगे जिनपर देशप्रेमका रंग चढ़ा हो, जिन्हें खूनी कानूनसे होनेवाले नुकसानकी पूरी कल्पना हो गई हो तथा जिन्हें खुदापर पूरा भरोसा हो।

प्रवासी विधेयक

इस विधेयकके सम्बन्धमें श्री गांधीने 'स्टार' में यह पत्र[1] लिखा है:

फेरीवालोंके लिए कानून

फेरीवालोंके जिन नियमोंके सम्बन्धमें मैं पहले लिख चुका हूँ, वे पास हो चुके हैं। अतः जुर्माना किया जानेके पहले जोहानिसबर्गके फेरीवालोंको चेत जाना चाहिए। पिछले अंकोंमें उन नियमोंको देख लिया जाये।

भारतीयकी गिरफ्तारी

पॉचिफस्ट्रूमसे तार द्वारा समाचार मिला है कि वहाँके हाजी उमरको, उनपर धोखेबाजी और दूकानमें आग लगानेका इलजाम लगाकर, गिरफ्तार कर लिया गया है। उनकी जमानत १,५०० पौंड ठहराई गई है।

मंगलवार

खूनी कानूनके सम्बन्धमें विशेष समाचार

'रैंड डेली मेल' तथा 'लीडर' में बड़े-बड़े लेख आने लगे हैं। उनमें बताया गया है कि जोहानिसबर्गके भारतीय दबाव डालते हैं, इसलिए प्रिटोरियामें कोई पंजीयन नहीं करवाता। उन अखबारवालोंने यह भी कहा है कि जुलाईके अन्तिम दिनोंमें सब जाकर छाप लगा आयेंगे: हमें आशा है कि प्रिटोरियाके भारतीय दृढ़ रहकर इस इलजामको झूठा साबित कर देंगे। यदि अन्तिम दिनोंमें लोग टिड्डीके समान प्रिटोरियाके दफ्तरपर टूट पड़े तो सब किया-कराया धूलमें मिल जायेगा।

इसपर विचार

भारतीय समाजको इस समय बहुत ही सावधान रहना चाहिए। बहुत जगहोंसे मैं यह भी सुनता हूँ कि नेताओंके गिरफ्तार होते ही लोग डरके मारे पंजीयन करवा लेंगे।

१. इसके बाद गांधीजीने पत्रका गुजराती अनुवाद दिया है जो यहाँ नहीं दिया जा रहा है। मूलके लिए देखिए "पत्र: 'स्टार' को", पृष्ठ ७०-७१।

यदि ऐसा होना हो तो "लेने गई पूत, खो आई भरतार" वाली कहावत चरितार्थ हो जायेगी। यह समय नेता या किसी दूसरेपर निर्भर रहनेका नहीं है। सबको अपनी-अपनी हिम्मतपर निर्भर रहना है। इस मामलेमें वकील या किसी औरका काम भी नहीं है। हम सब होलीमें पड़े हुए हैं। वहाँ हमें एक-दूसरेकी ओर नहीं देखना है। मैंने सुना है कि कुछ ही दिनोंमें श्री गांधीको गिरफ्तार किया जायेगा और सम्भव है, नेताओंमें से भी किसी एकको। यदि ऐसा हो तो लोगोंको घबड़ानेके बजाय खुश होना चाहिए और उनके जेल जानेसे लोगोंको ज्यादा हिम्मत आनी चाहिए। हकीकत यह है कि अब हम भेड़ नहीं, बल्कि स्वतन्त्र हैं और किसीपर निर्भर नहीं रहना चाहते। जेल डरकी चीज नहीं है, यह जब मनमें समा जायेगा तभी मामला मुकामपर आयेगा। सबकी ढाल एक खुदा है; और उस ढालको लेकर रणमें जूझना है, यही सबको मनमें रखना चाहिए।

"दूसरे लेंगे तो मैं लूँगा"

बहुतेरे गोरे भारतीयोंको सीख देने लगे हैं। वे पूछते हैं आप क्या करेंगे? उत्तरमें बहुत-से भारतीय कहते हैं — "हमारे नेता जैसा करेंगे वैसा हम करेंगे।" कोई कहते हैं — "दूसरे करेंगे वैसा करेंगे"। ये शब्द कायरोंके हैं और इसलिए इनसे नुकसान है। सभी लोगोंको यह उत्तर देना चाहिए कि "मुझे कानून पसन्द नहीं है, इसलिए मैं इसे कभी स्वीकार नहीं करूँगा। मैंने खुदाकी शपथ ली है, इसलिए भी इसे स्वीकार नहीं करूँगा। यह कानून मुझे गुलाम बनाता है, इसलिए उसके बजाय मैं जेलको ज्यादा अच्छा मानता हूँ।" जो ऐसा उत्तर नहीं दे सकता वह आखिर पार भी नहीं हो सकता। दूसरेके तूंबेके सहारे पार नहीं हुआ जाता। अपने बलपर पार होना है। मैं धूल खाऊँ तो क्या पाठक भी खायेंगे? मैं गड्ढेमें गिरूँ तो क्या पाठक भी उसमें गिरेंगे? मैं अपना धर्म छोड़ूँ तो क्या पाठक भी छोड़ देंगे? मैं अपनी माँका अपमान सहन करूँ, अपने लड़केको चोर बनाऊँ और अपनी तथा अपने लड़केकी अँगुलियाँ काटकर दूँ तो क्या पाठक भी वैसा करेंगे? सभी यही कहेंगे कि कभी नहीं। वैसा ही जोश रखकर उत्तर देना है कि "दूसरे क्या करते हैं, इसकी परवाह नहीं। हम तो कानूनके सामने घुटने बिलकुल नहीं टेकेंगे।" इतना सीधा और स्पष्ट उत्तर सब नहीं देते, इसीलिए अखबार इस प्रकारकी टीका करते हैं कि हम आज तो उत्साह दिखा रहे हैं किन्तु आखिर घुटने टेक देंगे। इन सब बातोंपर प्रत्येकको विचार करना चाहिए। यह समय डरका नहीं है, न कुछ छिपानेका है। हमें न कुछ छिपाकर रखना है, न छिपकर रहना है। जिस प्रकार सूरज अपना तेज प्रकट करता है, उसी प्रकार हमें अपना हिम्मत-रूपी सूर्य प्रकट करना है।

चीनियोंका जोर

चीनियोंने पिछले रविवारको सभा की थी। उसमें श्री पोलकको बुलाया गया था। श्री पोलक द्वारा सारी बातें समझा दी जानेके बाद उन लोगोंने फिरसे अपने निर्णयको पुष्ट किया कि कोई भी चीनी नये कानूनके सामने नहीं झुकेगा और यदि झुका तो उसे समाजसे बाहर कर दिया जायेगा।

एशियाई भोजनालय

जोहानिसबर्गकी नगर-परिषद ऐसा कानून बनाना चाहती है कि एशियाई भोजनालयोंके प्रबन्धक गोरे ही हो सकते हैं। तब क्या ट्रान्सवालमें हिन्दू-मुसलमानोंके भोजनालयोंमें गोरे

परोसेंगे और भारतीय देखा करेंगे? यह सब गुलामीका पट्टा लेनेवालोंपर लागू होगा। मुक्त रहनेवालोंको कोई हाथ नहीं लगा सकता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३–७–१९०७

६२. प्रार्थनापत्र : ट्रान्सवाल विधानसभाको

जोहानिसबर्ग
जुलाई ९, १९०७

सेवामें
माननीय अध्यक्ष और सदस्यगण
ट्रान्सवाल विधानसभा

ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यवाहक अध्यक्षका प्रार्थनापत्र

नम्र निवेदन है कि,

१. ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिके इच्छानुसार इस सदनके विचाराधीन प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकके सम्बन्धमें आपका प्रार्थी यह निवेदन करता है।

२. उपर्युक्त संघ यद्यपि इस विधानके सिद्धान्तका समर्थन करता है, तथापि उसकी नम्र सम्मतिमें भारतीय दृष्टिकोणके अनुसार उसके निम्नलिखित कुछ पहलू गम्भीर रूपसे आपत्तिजनक हैं :

(क) यह विधेयक भारतीय भाषाओंको, जिनमें भारी मात्रामें साहित्य है, मान्यता नहीं देता।

(ख) यह उनके दावेको, जो पहले ट्रान्सवालके अधिवासी रह चुके हैं, मान्यता नहीं देता। (बहुत-से भारतीय, जिन्होंने १८९९ से पहले १८८६में संशोधित १८८५के कानून ३ के मातहत ३ पौंड इस देशमें बसनेके लिए अदा किये थे, लेकिन जो इस समय उपनिवेशसे बाहर हैं और जिन्हें शान्ति-रक्षा अध्यादेशके मातहत अनुमतिपत्र नहीं मिले हैं, इस विधेयकके द्वारा इस देशमें तबतक पुनः प्रवेश नहीं कर सकते जबतक कि उनमें शिक्षा सम्बन्धी वे योग्यताएँ न हों जिनके बारेमें इस विधेयकमें व्यवस्था की गई है)।

(ग) खण्ड २ की धारा ४, जैसा कि इस संघको समझाया गया है, उच्च शिक्षा-प्राप्त ब्रिटिश भारतीयोंका भी, जबतक वे एशियाई पंजीयन अधिनियमकी शर्तोंको पूरा नहीं करते, ट्रान्सवालमें प्रवेश करना प्रायः असम्भव कर देती है। (संघकी नम्र रायमें विधेयक द्वारा जो शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षाएँ लाजिमी करार दी गई हैं उनके पास कर लेनेके बाद किसी व्यक्तिका, उपनिवेशमें प्रवेश करनेके लिए, आगे और शिनाख्त देना कोई अर्थ नहीं रखता)।

(घ) जैसा कि संघको समझाया गया है, धारा ४ ब्रिटिश भारतीयोंको अनैतिकता अध्यादेशके अन्तर्गत आनेवाले लोगोंकी श्रेणीमें रख देती है और इसलिए ब्रिटिश भारतीय समाज इसे बहुत ही अपमानजनक समझता है।[1]

(ङ) यह विधेयक, आशाके विपरीत, एशियाई पंजीयन अधिनियमको बरपा करता है।

३. यह संघ माननीय सदनका ध्यान नम्रतापूर्वक इस बातकी तरफ खींचना चाहता है कि ब्रिटिश भारतीयोंका माननीय सदनमें प्रतिनिधित्व नहीं है और इसलिए वे माननीय सदनसे आदरपूर्वक इस बातकी आशा रखते हैं कि वह उनकी बातपर विशेष गौर करेगा।

४. अन्तमें, इस संघका विश्वास है कि इसके प्रार्थनापत्रपर उचित विचार किया जायेगा और जो राहत इन हालतोंमें दी जानी सम्भव हो, वह दी जायेगी। और न्याय तथा दयाके इस कार्यके लिए आपका प्रार्थी कर्तव्य मानकर सदा दुआ करेगा, आदि।

मूसा इस्माइल मियाँ
कार्यवाहक अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल आफिस रेकर्ड्स, सी० ओ० २९/१२२

६३. ट्रान्सवालका नया प्रवासी विधेयक

[जुलाई ११, १९०७के पूर्व]

यह विधेयक अभी कानून तो नहीं बना, फिर भी इससे सरकारका इरादा व्यक्त हो जायेगा, इसलिए इसका संक्षिप्त विवरण हम नीचे दे रहे हैं:

(१) इसके द्वारा अनुमतिपत्रका कानून [१९०३ का शान्ति-रक्षा अध्यादेश] रद हो जाता है। किन्तु एशियाई-पंजीयन कानूनके द्वारा जो सत्ता दी गई है, उसमें से कुछ भी इस विधेयकके द्वारा रद नहीं होती।

(२) नये विधेयकके लागू होनेकी तारीखसे जिन्हें ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेकी अनुमति नहीं है वे लोग निम्नानुसार हैं:

(क) जिन्हें किसी भी यूरोपीय भाषाका अच्छा ज्ञान न हो;
(ख) जिनके पास अपने निर्वाहके योग्य पैसा न हो;
(ग) वेश्या और उनके भड़वे;
(घ) जो प्रवेशकर्ता उस कानूनकी अवहेलना करे जिसके द्वारा सरकार निर्वासित कर सकती है;
(ङ) पागल, कोढ़ी या छूतकी बीमारीवाले;

१. ट्रान्सवाल विधान सभाके सदस्य श्री विलियम हॉस्केनने, जिनकी मार्फत यह प्रार्थनापत्र पेश किया गया था, मूल प्रार्थनापत्रसे यह अनुच्छेद निकाल दिया था।

(च) जिनके बारेमें विलायत या दूसरी जगहोंसे सूचना मिली हो कि वे खतरनाक लोग हैं;
(छ) जिन्हें सरकार राज्यको नुकसान पहुँचानेवाले मानती है;
(ज) जिन्हें उपर्युक्त मर्यादाओंके अनुसार प्रवेश करनेका हक हो उनकी पत्नी तथा बच्चोंपर यह विधेयक लागू नहीं होगा। इसी प्रकार काफिरों और यूरोपीय मजदूरोंपर भी।

(३) इस कानूनको अमलमें लानेके लिए प्रवासी-कार्यालय खोला जायेगा।

(४) इस कानूनको [दक्षिण आफ्रिकामें] अमलमें लानेके लिए गवर्नर दूसरे उपनिवेशोंके साथ इकरार कर सकेगा।

(५) यदि कोई प्रतिबन्धित व्यक्ति प्रवेश करेगा तो उसपर १०० पौंड जुर्माना किया जायेगा अथवा ६ महीनेकी सजा दी जायेगी और निर्वासित किया जायेगा।

(६) जो [१९०३ की] भडुवाईकी धाराके अन्तर्गत अपराध करेगा अथवा जो राज्यकी शान्ति भंग करनेवाला समझा जायेगा, उसे भी निर्वासित करनेका सरकारको अधिकार है।

(७) जो व्यक्ति प्रतिबन्धित व्यक्तिको प्रवेश करनेमें मदद करेगा उसे १०० पौंड दण्ड अथवा ६ महीनेकी जेलका हुक्म दिया जायेगा।

(८) प्रतिबन्धित व्यक्तिको परवाना या पट्टेपर जमीन लेनेका हक न होगा।

(९) प्रतिबन्धित व्यक्तिके सम्बन्धमें जानकारी मिलनेपर उसे बिना वारंट पकड़ा जा सकेगा।

(१०) इस कानूनकी अनभिज्ञता बचाव नहीं मानी जायेगी।

(११) जिस व्यक्तिको सीमा-पार करना पड़े, उसे निकालनेका खर्च, उसकी उपनिवेशमें जो जायदाद होगी, उसमें से वसूल किया जायेगा।

(१२) होटलमें जो लोग आते हैं, होटल-मालिकको उन सबका नाम, देश, पता वगैरह दर्ज करना होगा। उस पुस्तिकाकी जाँच करनेका सरकारको हक है।

(१३) यदि किसी व्यक्तिपर प्रतिबन्ध नहीं है तो इसे सिद्ध करनेका दायित्व उस व्यक्तिपर है।

(१४) हर मजिस्ट्रेटको सारी सजाएँ देनेका हक है।

विधेयकका अर्थ

यह विधेयक बड़ा भयंकर है। इससे बड़ी सरकार धोखा खा सकती है। सरसरी तौरसे देखनेपर इसमें कुछ भी नहीं दिखाई देता, किन्तु भीतर जहरके समान है। इसके द्वारा अनुमतिपत्र-रहित निराश्रितका हक बिलकुल समाप्त हो जाता है। जिनके पास अनुमतिपत्र हैं किन्तु नये कानूनके अनुसार जिन्होंने बदलवाये नहीं हैं, यदि वे लोग ट्रान्सवालसे बाहर जाते हैं तो उन्हें भी वापस आनेका अधिकार नहीं रहता।

पढ़े-लिखे भारतीयोंको एक ओरसे अधिकार मिलता है किन्तु दूसरी ओरसे छिन जाता है। क्योंकि शिक्षणके आधारपर प्रवेश करनेवालोंको खूनी कानूनके अनुसार आठ दिनके अन्दर अँगुलियाँ आदि लगाकर अनुमतिपत्र ले लेना चाहिए। यदि उन्होंने ऐसा नहीं किया तो उन्हें निर्वासित कर दिया जायेगा।

अतः इस कानूनसे भारतीयोंको जरा भी लाभ होना सम्भव नहीं है।

हस्ताक्षरके लिए इस कानूनको लॉर्ड एलगिनके पास भेजना होगा। यदि यह हुआ तो भारतीय समाजको वहाँ [लन्दनमें] टक्कर लेनी चाहिए। यह तो लिखा जा चुका, किन्तु इसके छपनेके पहले, यानी गुरुवार, तारीख ११ को, विधेयकके बारेमें और भी बातें मालूम होंगी। वे सब दूसरे अंकमें दी जा सकेंगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३–७–१९०७

६४. पत्र : छगनलाल गांधीको

[जोहानिसबर्ग
जुलाई ११, १९०७के पूर्व][1]

[चि० छगनलाल,]

तुम्हारा पत्र मिला। काजीके सम्बन्धमें तुमने जो लिखा वह मैंने ध्यानमें रख लिया है। श्री पोलक[2] प्रिटोरियासे अभी लौटे हैं। वहाँ उनका काम बहुत ही अच्छा रहा।

मैंने फुटकर छपाईके बारेमें श्री वेस्टको[3] पत्र लिखा है। जैसा मैं उनसे कह चुका हूँ, इब्राहीम मुहम्मदका जो पता तुम्हारे पास है, चुंगीके फार्म उसपर भेजने हैं। वे ग्राहक हैं।

मुझे निश्चय है कि हिन्दी न छापना अदूरदर्शितापूर्ण नीति है। हम दरअसल अपने मूल धनका भी उपयोग नहीं कर रहे हैं। 'रामायण' की बिक्री निश्चितरूपसे होगी और मेरी सम्मतिमें यह कार्य बड़ा मूल्यवान होगा। इसका सीधा-सादा कारण यह है कि हजारों लोग, जो पूरी रचनाका अध्ययन नहीं कर सकते, इस संक्षिप्त संस्करणका लाभ प्रसन्नतापूर्वक उठायेंगे। इसलिए यदि कोई अच्छा आदमी मिले तो तुम्हें निश्चय ही खर्च करनेमें झिझकना न चाहिए। जिस तर्कसे तुम इस परिणामपर पहुँचते हो कि यहाँकी लागतके अनुसार किताब महँगी होगी, वह एक हद तक गलत है। हमारे सामने यह स्पष्ट होना चाहिए कि यदि खर्च अधिक आता है तो हम मूल्य भी उतना ही अधिक लेते हैं। यहाँ "अधिक" शब्द सापेक्ष है। जिस 'भगवद्गीता' को[4] हम भारतमें एक आनेमें बेचते उसीका हम यहाँ एक शिलिंग लेते हैं, क्योंकि लागत अपेक्षाकृत अधिक है। मुझे पूरा निश्चय है कि हम, जिस देशमें रहते हैं,

१. स्पष्ट है, गांधीजीने यह अपने ११ जुलाईके पत्रसे पूर्व लिखा था। अगला शीर्षक देखिए, जिसमें गांधीजीने **रामायण**के प्रकाशनके बारेमें लिखा है।

२. **इंडियन ओपिनियन**के सम्पादक और गांधीजीके साथी; देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ३५२; **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास**, अध्याय १९, २३, ४५ और **आत्मकथा** भाग ४, अध्याय, १८, २१।

३. अल्बर्ट एच० वेस्ट, **इंडियन ओपिनियन**के मुद्रक और फीनिक्स आश्रमके निवासी; देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ३५२; **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास**, अध्याय २३, ४७ और **आत्मकथा** भाग ४, अध्याय १६, १८ आदि।

४. यह श्रीमती बेसेंटके अनुवादके संस्करणका उल्लेख है जो १९०५ में प्रकाशित किया गया। देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४५९।

जब भी उससे बाहर कम खर्चमें काम करानेका खयाल करते हैं, तब हम अत्यन्त कसकर सौदेबाजी करनेकी सामान्य दुर्बलताका परिचय देते हैं। इसी कारण मैंने अपने मनमें दक्षिण आफ्रिकाकी किताब[1] बम्बईमें छपानेके विचारको बुरा माना है। और मैं इसको इतनी तीव्रतासे अनुभव करता हूँ कि अभीतक किताब लिखने योग्य उत्साह संचित नहीं कर पाया हूँ। मैं तुमसे यही कहूँगा कि तुम खुद सोच-विचार कर यह खयाल अपने मनसे निकाल दो। हम अतिरिक्त आदमी नियुक्त करें या न करें और किताब छापें या न छापें, इसकी चिन्ता मत करो; यह तो तफसीलकी बात हुई। पहली बात सिद्धान्त स्थिर करनेकी है। यदि हम उसको कार्यान्वित नहीं कर सकते या ऐसा करनेके लिए हममें पर्याप्त साहस नहीं है तो हम उसके सम्बन्धमें चिन्ता करना ही छोड़ दें और अपने कार्यके क्षेत्रको बढ़ानेका विचार भी न करें। यदि तुम्हें रुपयेकी आवश्यकता हो तो मुझे समयपर सूचित करना।

तुम्हारा शुभचिन्तक,

टाईप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४६७४)से।

६५. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
जुलाई ११, १९०७

प्रिय छगनलाल,

मैं प्रागजी खंडूभाई देसाईका पत्र साथ भेज रहा हूँ। यदि वह जरा भी वाञ्छनीय जान पड़े तो मेरा सुझाव है कि तुम उसे ३ पौंडपर परीक्षाकी शर्तपर रख लो और गुजराती केसपर लगा दो, जिससे कि तुम 'रामायण' का काम जारी रख सको। गुजराती विभागमें हमारे पास निश्चय ही कार्यकर्ताओंकी कमी है। परन्तु मैं सिर्फ सुझाव दे रहा हूँ। हो सकता है कि वह सर्वथा अव्यावहारिक हो। इसलिए तुम जो सर्वोत्तम समझो वही करना।

तुम्हारा शुभचिन्तक
मोहनदास[2]

श्री कॉर्डीज[3] कैसे लगते हैं आदि हकीकतें लिखना।[4]

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त मूल अंग्रेजी टाइप-प्रतिकी फोटो नकल (एस० एन० ४७५७) से।

१. विचार था कि **इंडियन ओपिनियन** दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंकी मुसीबतोंपर एक पुस्तक प्रकाशित करे। देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ४३०।

२. मूल प्रतिमें हस्ताक्षर गुजरातीमें हैं।

३. एक जर्मन थियॉसफिस्ट जो गांधीजीके साथी बन गये थे। वे कुछ समय तक फीनिक्स स्कूलके प्रबन्धक रहे थे। उनका देहान्त १९६० में सेवाग्राममें हुआ था।

४. मूल प्रतिमें यह पंक्ति गांधीजीकी गुजराती लिखावटमें है।

६६. भारतीयोंकी कसौटी

आजतक भारतीय समाजका मूल्यांकन नहीं हुआ। मुट्ठी बँधी रही है और किसीने उसका अन्दाजा नहीं लगाया। सामान्य विचार यह रहा है कि भारतीय निर्माल्य और जीवन-रहित हैं।

किन्तु सौभाग्यसे अब ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी कसौटी हो रही है। यह अवसर लॉर्ड एलगिन, जनरल बोथा और उनके भाइयोंने दिया है। यह लिखते समय तो भारतीय कसौटीपर चढ़ चुके हैं। हम जो चिट्ठियाँ प्रकाशित करते हैं उनसे मालूम होता है कि प्रिटोरियाने, जिसे गोरे निर्बल मानते थे, एकाएक जोर दिखाया है। वहाँ एक भी भारतीयने खूनी चिट्ठी नहीं ली। एक मद्रासी गया था। किन्तु अँगुलियोंकी निशानीकी बात देखते ही उसने भी अर्जी फेंक दी और कहा: "अँगुलियाँ तो मैं हर्गिज नहीं लगाऊँगा।" एक मद्रासी पोस्ट मास्टरने अपनी नौकरी छोड़ना मंजूर किया, किन्तु नया अनुमतिपत्र लेनेसे इनकार कर दिया। जहाँतक हमने सुना है, श्री चैमनेके पंजाबी नौकरने नया अनुमतिपत्र लेनेसे साफ इनकार कर दिया है। इस सबसे जाहिर होता है कि परीक्षाके समय भारतीय प्रजा कमजोर साबित होगी, सो बात नहीं।

जाको राखे साइयाँ, मारि सकै नहिं कोय। भारतीय समाज आस्तिक है, ईश्वरको माननेवाला है। वह ईश्वरपर भरोसा रखकर हाथमें लिया हुआ काम सहज ही पूरा कर सकेगा। कहा जाता है कि नरसिंह मेहताने[1] अपनी आस्थाकी बदौलत पैसा न होते हुए भी ममेरा[2] चढ़ाया था। पैगम्बर मूसाने खुदाकी मददसे महान संकटोंका सामना करके दुश्मनोंपर विजय प्राप्त की थी। वही जगत-कर्ता भारतीय समाजकी सहायता करेगा।

ट्रान्सवालके भारतीयोंपर इस समय हर भारतीयकी नजर है; और सब मुँह फाड़े यही प्रश्न कर रहे हैं कि भारतीय अपने उठाये हुए बीड़ेको बनाये रखेंगे या नहीं। प्रिटोरिया जवाब दे रहा है कि भारतीय समाज अब पीछे पैर रख ही नहीं सकता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३–७–१९०७

१. गुजरातके सुप्रसिद्ध सन्त कवि।

२. सतवाँसा: पुत्रीके प्रथम गर्भके सातवें मासमें एक धार्मिक संस्कार होता है, जिसे 'सतवाँसा' कहते हैं। उस अवसरपर माता-पिता पुत्रीको कुछ भेंट देते हैं। कहा जाता है कि भगवान अपने भक्त नरसिंह मेहताकी सहायताके लिए एक व्यापारीका रूप धरकर आये थे।

६७. डर्बनका कर्तव्य

प्रिटोरियाके काम और वहाँके भारतीय स्वयंसेवकोंका जोश देखकर किस भारतीयको हर्षसे रोमाञ्च न होता होगा? शाबाशी देना आसान है। सच्ची शाबाशी तो इसमें है कि उनके समान काम करके दिखाया जाये। जिस प्रकार ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्र कार्यालयका बहिष्कार किया जा रहा है, उसी प्रकार डर्बनमें भी किया जाना चाहिए। इस समय डर्बनसे एक भी भारतीयका ट्रान्सवाल आना दूधमें मक्खी गिरनेके समान है। ट्रान्सवालके भारतीयोंको आज सच्चे बलिदानके लिए तैयार होना है। जो भारतीय खास तौरसे ट्रान्सवालमें मदद करनेके लिए नहीं, बल्कि अपने कामके लिए आता है, वह यहाँ आकर भारतीयोंका बल नहीं बढ़ाता बल्कि उल्टे उन्हें कमजोर बनाता है। इसके अलावा चूँकि वह डर्बनके अनुमतिपत्र-कार्यालयमें जानेके बाद ही ट्रान्सवालमें प्रवेश कर सकता है इसलिए यही माना जायेगा कि बहिष्कारका भंग हुआ है। किन्तु यदि कोई भी भारतीय अनुमतिपत्र-कार्यालयमें नहीं जाये तो डर्बनका अनुमतिपत्र कार्यालय चल नहीं सकता। इसलिए डर्बनके भारतीयोंको प्रिटोरियाका अनुकरण करना चाहिए।

नेटाल भारतीय कांग्रेसने ट्रान्सवालके लोगोंको आर्थिक सहायता देनेके बारेमें लिखा है, सार्वजनिक सभा करके जोश भरा है। चन्दा इकट्ठा करनेकी बात भी हाथमें ली है। यह प्रशंसनीय है। इसके अलावा डर्बनके अनुमतिपत्र-कार्यालयके बहिष्कारका काम भी हाथमें लेना जरूरी है। बहिष्कार तीन तरहसे किया जा सकता है। एक तो डर्बनके कार्यालयपर धरना दिया जाये, जिससे वहाँ कोई भारतीय न जा सके। दूसरे, ट्रान्सवालकी रेल पहुँचे तब वहाँ इस बातकी जाँच की जाये कि वहाँ कौन भारतीय उतर रहा है, और वह नया अनुमतिपत्र लेकर जा रहा हो या पुराना, यदि वह जेल जानेको तैयार न हो तो उसे रोकनेके लिए आजिजी की जाये। तीसरे, इस बातकी व्यवस्था की जाये कि जहाजपर कोई भी भारतीय अँगुलियोंकी निशानी न दे। इस तरहसे डर्बनकी बड़ी सहायता होगी और छुटकारा मिलनेमें शीघ्रता होगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३–७–१९०७

६८. पूर्व ज्ञानमाला[1]

ये पुस्तकें अभी-अभी अंग्रेजीमें छपी हैं। किसीने इनका गुजराती अनुवाद नहीं किया। किन्तु ज्यों-ज्यों समय बीतेगा, हम इस प्रकारकी पुस्तकोंका सारांश देते जायेंगे। इसी हेतुसे पैगम्बरका जीवन-चरित्र देना आरम्भ किया है।[2] इस बीच अंग्रेजी जाननेवाले उपर्युक्त पुस्तकें मँगवा सकते हैं।

सम्पादक
इंडियन ओपिनियन

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३–७–१९०७

६९. भाषण : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें[3]

जोहानिसबर्ग
जुलाई १४, १९०७

श्री गांधीने उस तारीख तकके मामलोंकी स्थितिका संक्षेपमें सारांश दिया और नये कानूनकी अन्यायपूर्ण धाराओंका अन्ततक विरोध करनेके लिए अपने श्रोताओंको एक बार फिर प्रोत्साहित किया और कहा कि उन्हें किसी भी अवस्थामें दबावके कारण कदापि पुनः पंजीयन नहीं कराना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–७–१९०७

१. यह गांधीजीने नारखुडवासी एम० एच० उगतके १९ जून १९०७ के पत्रके उत्तरमें लिखा था। श्री उगतने **पूर्वका ज्ञान** (पृष्ठ ४२-४३) का उल्लेख करते हुए इस प्रकार लिखा था: "गत १५ तारीखके अंकमें **पूर्वनुं ज्ञान, जलालुद्दीन रूमी, कुरान शरीफनो सार, बुद्ध शिक्षा, जरथुस्त्रना शिक्षण** आदि पुस्तकोंके सम्बन्धमें ध्यान दिलाकर उन्हें मँगानेकी जो सिफारिश की है वह शुभ है। परन्तु हमारा समाज चूँकि कमोबेश गुजराती जाननेवाला है इसलिए मेरा खयाल है कि उपर्युक्त पुस्तकें गुजरातीमें हों तो थोड़ी-बहुत खपेंगी। आशा है आप खुलासा करेंगे।"

२. देखिए "पैगम्बर मुहम्मद और उनके खलीफा", पृष्ठ ५४-५५।

३. गांधीजीने भारतीय बस्तीमें आयोजित हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें भाषण दिया था। यह उनके भाषणका सारांश है।

७०. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

सोमवार [जुलाई १५, १९०७]

प्रिटोरियाकी टेक

अभी प्रिटोरियाका जोश कायम है। उसकी टेक निभ रही है। दूसरा सप्ताह सकुशल बीत रहा है। कोडी साहबको दूसरे सप्ताह भी "छुट्टी" मिली और बहादुर धरनेदारों — स्वयंसेवकोंने अपना नाम उज्ज्वल कर दिया। गोरे दाँतों-तले अँगुली दबाये हैं और परेशान हैं कि "यह क्या है? क्या हमारी ठोकरें खानेवाले भारतीय मूँछोंपर ताव दे सकेंगे?" कोई-कोई अंग्रेज औरतें सब्जीके फेरीवालोंसे पूछती हैं कि क्या वे अनुमतिपत्र लेंगे। बहादुर फेरीवाले साफ इनकार करते हैं। यदि यही जोश अन्ततक रहा तो भारतीय समाजका नाम ऊँचा चढ़ जायेगा और नया कानून धूलमें लोटने लगेगा। और इसका श्रेय प्रिटोरियाके भारतीयों और उनके धरनेदार स्वयंसेवकोंको है, यह बात सब एक स्वरसे कह सकेंगे।

गोरेकी शरारत

मैंने सुना है कि श्री स्टीफेन फ्रेज़रका एक आदमी विशेष तौरसे गाँव-गाँव घूम रहा है। वह प्रत्येक भारतीयको भड़काता है। पीटर्सबर्गके भारतीयोंको उसने इस तरह डराया है कि यदि भारतीय समाज श्री गांधीकी सलाह मानेगा और इस तरह कानूनके सामने नहीं झुकेगा तो वह बरबाद हो जायेगा, और उसका माल सरकार जब्त कर लेगी। जैसे-जैसे आखिरी दिन निकट आयेगा वैसे-वैसे शत्रुओं या स्वार्थी गोरों द्वारा निस्सन्देह ऐसे षड्यन्त्र रचे जायेंगे। मुझे कहना चाहिए कि ऐसे व्यक्तिको झिड़क देना हर भारतीयका कर्तव्य है। अभी जनानी सीख सुननेका भी समय किसी भारतीयको नहीं है। सरकार माल जब्त कर लेगी, यह सरासर झूठ है। माल जब्त करनेका अधिकार उसे बिलकुल नहीं है। और बरबाद होनेके बारेमें तो हम जानते हैं कि हाजी हबीबने 'स्टार'को वैसी सूचना दे दी है। बात यह है कि बरबाद भले हो जायें, हमारी नाक बनी रहेगी और हम टेकवाले कहलायेंगे। अतः हम कानूनका विरोध श्री गांधीकी सलाह मानकर करते हैं सो बात नहीं, हम तो अपनी मर्दानगीकी रक्षाके हेतु विरोध कर रहे हैं। यदि हम मर्द होंगे तो जहाँ ठोकर मारेंगे वहाँ पैसा निकलेगा। किन्तु यदि मर्द होते हुए भी औरत बन गये तो बचे-खुचे धनको भी बचाना मुश्किल होगा और वह धन भी खाने दौड़ेगा। इंग्लैंडका पुराना राजा तीसरा रिचर्ड अपने सम्बन्धियोंको मारकर गद्दीपर बैठा था। किन्तु उससे गद्दीको पचाया नहीं जा सका। सम्बन्धियोंके खूनमें सनी तलवारको हाथमें पकड़ते हुए वह कांपता था और आखिर घुल-घुलकर बुरी मौत मरा। ऐसा कौन भारतीय है जो अपने भाईकी बेइज्जतीकी परवाह न करके पैसेके लोभमें सबका काम बिगाड़ेगा? ऐसा व्यक्ति रिचर्डके समान घुल-घुलकर पश्चात्तापमें ही मर जायेगा। ऐसे नाजुक समयमें गोरा मुँह लेकर और काला दिल रखकर यदि कोई सलाह दे तो मैं चाहता हूँ कि भारतीय कौम उसे ठुकरा दे।

दो अन्य गोरे

श्री स्टीफेन फ्रेज़रके आदमियोंने उपर्युक्त नालायकीकी वात कही है तो दूसरे दो गोरे, जिनका भारतीयोंके साथ वड़ा व्यापार है, सीधी वात करते हैं और स्वीकार करते हैं कि भारतीय समाजको प्रतिष्ठाकी खातिर तो जेलके निर्णयपर अटल रहना ही चाहिए। यदि सभी उसपर अटल रहें तो निस्सन्देह जीत होगी। कोई कहेगा कि इसमें "यदि" शब्द वहुत महत्त्वपूर्ण है। किन्तु "यदि" शब्द महत्त्वपूर्ण केवल कायरोंको मालूम होगा। वहादुर तो दूसरोंको भी वहादुर मानकर यही कहेंगे कि इस वार भारतीय समाज निश्चय ही अपनी टेक निभायेगा।

जोहानिसबर्गमें सभा

हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके सभा-भवनमें पिछले रविवारको एक वहुत वड़ी सभा हुई थी। सभाका समय २–३० वजेका था। किन्तु उसके पहले ही भवन खचाखच भर गया था। जो भीतर न आ सके, वे लोग वाहर थे। जर्मिस्टनके भी वहुत लोग आये थे। हाफिज़ अब्दुल सैयद अध्यक्ष पदपर आसीन थे। श्री फैन्सी द्वारा कार्य-विवरण पढ़ा जानेके वाद श्री गांधीने खूनी कानूनकी वातें समझाईं। और वादमें जर्मिस्टनके श्री रामसुन्दर पण्डितने एक सुन्दर और जोशीला भाषण दिया। उन्होंने कहा कि जर्मिस्टनमें लोगोंमें वहुत ही जोश है। और स्वयंसेवक भी तैयार हैं। जैसा प्रिटोरियाने कर दिखाया है, वैसा ही जर्मिस्टन करेगा। प्रिटोरियामें स्वयंसेवकोंने वहुत ही स्वदेशाभिमान व्यक्त किया है। इमाम अब्दुल कादिरने कहा कि इस कानूनको कोई भी एशियाई स्वीकार नहीं कर सकता। प्रिटोरियाकी सभामें उन्हें जिस जोशका दर्शन हुआ था, उसका उन्होंने वर्णन भी स्वयं सुनाया।

श्री नवाव खाँने कहा कि नया कानून छोटे या वड़े किसी भी भारतीय द्वारा मंजूर नहीं किया जा सकता। विलायतकी औरतोंमें जव इतना जोश है तव भारतीय मर्द क्या जेल या किसी नुकसानसे डर सकता है? श्री अब्दुर्रहमानने कहा कि पाँचेफ्स्ट्रूमके भारतीय वहुत ही सतर्क हैं। स्टीफेन फ्रेज़रके आदमीने मुझसे कहा कि स्टीफेन माल तभी उधार देंगे जव मैं कानून स्वीकार करनेका वचन दूँगा। इसके उत्तरमें मैंने स्वयं कहा कि हजार स्टीफेन फ्रेज़र भी माल उधार देना वन्द कर देंगे, तव भी मैं कानूनकी गुलामी मंजूर नहीं करूँगा। पाँचेफ्स्ट्रूमके व्यापारी चाहे जितना नुकसान सहन करेंगे, किन्तु इस जुल्मी कानूनके सामने नहीं झुकेंगे।

श्री उमरजीने वहुत ही जोशीला भाषण दिया और "सतिया सत नव छोड़िए"[1] वाला दोहा सुनाया। फिर श्री शहावुद्दीन और श्री कामाने कुछ प्रश्न पूछे और सभा समाप्त हुई। इस सभामें एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं दिखाई दिया जिसके मनमें कानूनको स्वीकार करनेकी जरा भी इच्छा हो। इस सभामें श्री पोलकने भी भाषण दिया, जिसमें प्रिटोरियाके जिस स्वयंसेवकको उन्होंने स्वयं देखा था उसकी तारीफ की।

हुजूरियोंकी सभा

श्री डेविड अर्नेस्टने ट्रान्सवाल फुटवाल संघके सदस्योंकी वैठक एवनेज़र विद्यालयमें वुलाई थी। उसमें लगभग ५० हुजूरिये उपस्थित हुए थे। वह वैठक सोमवारकी शामको

१. पूरा दोहा इस प्रकार है :

सतिया सत नव छोडिये सत छोड़े पत जाय।
सतकी वाँधी लक्ष्मी फेर मिलेगी आय॥

468

साढ़े तीन बजे हुई थी। श्री गांधीने उस बैठकमें कानून सम्बन्धी बातें कहीं। उनके बाद श्री नायडूने वही बातें तमिल भाषामें कहीं। फिर श्री पोलकने भाषण दिया। श्री पोलकने कहा कि पुराने जमानेमें एक जानवर था। उसकी यह विशेषता थी कि यदि कोई उसका सिर काटता तो बदलेमें दो सिर हो जाते थे। इस प्रकार जब उसका सिर कटता तब दो सिर रहते थे। इस बातका जब लोगोंको पता चला तब कोई उसे छेड़ता ही न था। भारतीयोंको इस समय वैसा ही करना है। उन्हें किसी नेतापर भरोसा करके नहीं बैठना है। सभी नेता हैं, यह समझना चाहिए और यदि सरकार एकको जेलमें बन्द करे तो बदलेमें दो व्यक्तियोंको नेता बनने, जेल या निर्वासन भोगनेके लिए तैयार रहना चाहिए। इस तरह होनेपर सरकार बिना हारे नहीं रह सकती। हुजूरियोंको समझना चाहिए कि वे नौकर होनेके पहले मर्द हैं। इस प्रकार संकटको समझकर नौकरीका भय रखे बिना उन्हें दृढ़तापूर्वक कानूनका विरोध करना है।

सरकारी दुभाषिये श्री डेविडने कहा कि सरकारने उन्हें पंजीयन करवानेके लिए कहा तो उन्होंने साफ इनकार कर दिया।

इसके बाद श्री गांधीने प्रश्न पूछा तो हरएकने खड़े होकर बताया कि हमारी नौकरी जायेगी तब भी हममें से कोई पंजीयन करवाने नहीं जायेगा। पौने पाँच बजे सभा समाप्त हुई।

जर्मिस्टनमें सभा

जर्मिस्टनके भारतीय बड़ा जोश दिखा रहे हैं। पण्डित रामसुन्दर महाराज आगे रहकर बेधड़क काम करते हैं और लोगोंको समझाते हैं। उन्होंने विशेष सभा करके यह प्रस्ताव पास किया है कि चाहे जितनी जोखिम उठानी पड़े, उनमें से कोई नये कानूनके सामने नहीं झुकेगा। उस प्रस्तावमें दो सौसे ज्यादा व्यक्तियोंने हस्ताक्षर किये हैं। इसके अलावा कुछ बहादुर लोग प्रिटोरियाके समान स्वयंसेवक बननेको भी निकल पड़े हैं।

प्रवासी कानून

प्रवासी-विधेयकका दो बार वाचन किया जा चुका है। श्री स्मट्सने विधेयकके पेश किये जानेका उद्देश्य बताया था। उसमें श्री हॉस्केन, श्री लिंडसे, श्री बाइबर्ग[1], श्री नेसर और श्री ह्वाइटसाइड आदि सदस्योंने भाग लिया था। श्री हॉस्केनने भारतीयोंके पक्षमें बोलते हुए कहा कि नया विधेयक तो रूसमें शोभा दे सकता है। इस कानूनकी कुछ धाराएँ तो अंग्रेजी राज्यमें होनी ही नहीं चाहिए।

संघकी अर्जी

इस विधेयकके विरोधमें संघने अर्जी[2] दी है। वह अंग्रेजी विभागमें दी जा चुकी है। उसका सारांश इस प्रकार है:

यह संघ यद्यपि आव्रजनपर अंकुश रखनेकी नीतिके विरुद्ध नहीं है फिर भी नम्रतापूर्वक निम्न आपत्तियाँ पेश करता है; (क) इस विधेयकमें भारतकी एक भी भाषाको स्वीकार नहीं किया गया। (ख) ट्रान्सवालके पुराने निवासियोंके अधिकारोंकी यह विधेयक रक्षा नहीं करता;

१. ट्रान्सवालके खान-आयुक्त।
२. देखिए "प्रार्थनापत्र: ट्रान्सवाल विधान सभाको", पृष्ठ ९२-९३।

उदाहरणार्थ बहुतेरे भारतीयोंने ट्रान्सवालमें रहनेके लिए बोअर सरकारको ३ पौंड दिये थे, किन्तु उनमें से बहुतोंको अनुमतिपत्र नहीं मिले। ऐसे लोगोंके हक, यदि उन्हें यूरोपीय भाषाका ज्ञान न हो तो, नष्ट हो जाते हैं। (ग) दूसरी धाराकी चौथी उपधाराके अनुसार जिन्हें कानूनन आनेका अधिकार है, ऐसे लोगोंपर भी नया एशियाई कानून लागू होता है। इस तरह कानूनके लागू किये जानेका कुछ भी उद्देश्य नहीं है, क्योंकि ज्यादा पढ़े हुए लोगोंकी पहचान तो उनका ज्ञान ही है। (घ) इसके अतिरिक्त उसी धाराके द्वारा भारतीय समाजको वेश्या और भड़वोंकी श्रेणीमें रखा गया है। (ङ) पहले बहुत आश्वासन दिये गये थे किन्तु उनके विपरीत इस विधेयकके द्वारा एशियाई पंजीयन कानून कायम रहता है।

संसदको ध्यानमें रखना चाहिए कि एशियाई समाजके पास मताधिकार नहीं है, और इसलिए उसकी अर्जीपर ध्यान देना उसका दुहरा कर्तव्य है। अतः संघ प्रार्थना और आशा करता है कि उसकी अर्जीपर पूरा ध्यान दिया जायेगा तथा न्याय किया जायेगा।

यह अर्जी श्री हॉस्केनने पेश की है। समितिमें इस विधेयककी बुधवारको छानबीन की जायेगी। यह पत्र मैं सोमवारको लिख रहा हूँ। इसलिए कुछ परिवर्तन होता है या नहीं, यह 'इंडियन ओपिनियन' के प्रकाशित होनेके पहले ही मालूम हो जायेगा।

जेलमें अखबार मिलेगा?

एक भाईने यह प्रश्न किया है। उत्तरमें यही कहना है कि यह इस बातपर निर्भर है कि जेल किस प्रकारकी मिलती है। यदि कड़ी सजा मिली तो अखबार नहीं मिलेगा। किन्तु हर कैदीसे उसके सगे-सम्बन्धी महीनेमें एक बार मिल सकेंगे। उन सगे-सम्बन्धियोंको मेरी सलाह है कि वे "इंडियन ओपिनियन' का सारांश याद करके जेल-महलमें रमनेवाले भारतीयको सुना आयें।

सुनवाई नहीं हुई

प्रिटोरियाके कुछ भाइयोंको यह लगा है कि स्थानीय सरकारसे कुछ माँग करें और यदि वह दे दे तो जेलकी झंझटसे छूट जायें। किन्तु खुदा हमें पूरी तरह कसना चाहता है। इसलिए माँगका कुछ भी नतीजा नहीं निकला। उन लोगोंने श्री स्मट्ससे निम्नानुसार माँग की थी:

(१) दस अँगुलियाँ न लगवाई जायें;
(२) माँका नाम छोड़ दिया जाये;
(३) बड़ोंका पंजीयन किया जाये और बच्चोंको परेशान न किया जाये;
(४) काफिर पुलिस जाँच नहीं कर सकेगी;
(५) तुर्कीके ईसाई और मुसलमानके बीच भेदभाव किया गया है, वह समाप्त किया जाये;
(६) ऑरेंज रिवर कालोनीका नाम अनुमतिपत्रपर है, उसे रहने दिया जाये;
(७) बच्चोंकी उम्र कितनी है, इसे तय करना पंजीयकके हाथमें नहीं, अदालतके हाथमें रखा जाये;
(८) व्यापारीके नौकरोंको आने-जानेके मियादी अनुमतिपत्र उदारतापूर्वक दिये जाने चाहिए;

(९) इसके बाद और कानून नहीं बनाया जायेगा, इसका आश्वासन मिलना चाहिए।

श्री स्मट्सने लम्बा उत्तर दिया है। उसमें एक बड़ी खूबी है। मीठे शब्दोंसे कोई मर सकता हो तो उसे मार डालना चाहते हैं। वे माँगके उत्तरमें कहते हैं कि यदि सभी भारतीय पंजीयन करवा लेंगे तो माँका नाम बतलानेके लिए मजबूर नहीं किया जायेगा, काफिर पुलिस-सिपाही अँगुलियोंकी निशानी नहीं माँगेगा — यानी अनुमतिपत्र तो माँग सकेगा; और कानून बनाया जायेगा या नहीं यह भारतीय समाजपर निर्भर है। यदि वे ठीक तरह कानूनके अनुसार चलेंगे तो स्मट्स साहबका कहना है कि शायद ज्यादा सख्ती नहीं बरती जायेगी।

खून खौलता है

इस उत्तरका ब्योरा देते हुए मेरा खून खौलता है। अगर सीधे चलेंगे तो ज्यादा सख्ती नहीं करेंगे। इसका क्या मतलब हुआ? खूनी कानूनके द्वारा हमें जीते-जी मुर्दे बनाकर क्या अब मुर्देको ठोकर मारनेके लिए नया सुधार करेंगे? देखनेकी बात यह है कि श्री स्मट्सने किसी भी बातमें अपनी हठ नहीं छोड़ी है। क्योंकि, माँका नाम न दिया जाये, यह भी वे नहीं कहते। सभी भारतीय पंजीयन करवा लेंगे, तब वह पवित्र नाम बतलाना या न बतलाना हमारी इच्छा-पर निर्भर है। काफिर पुलिस अँगुलियोंकी निशानी नहीं माँग सकती, पर पास तो माँग ही सकेगी। यदि नया कानून स्वीकार कर लिया गया तो "ऊफी पास" का गीत भारतीयोंके सिर जड़ा ही समझिए।

किन्तु ठीक हुआ

इस तरहका जुल्मी वार रेशममें लपेटकर किया गया, यह ठीक ही हुआ है। अब भार-तीय समाज और भी ज्यादा जोर करेगा। जिस तरह खतरनाक कानूनके अन्तर्गत खतरनाक नियम ही बन सकते हैं, उसी प्रकार उसका उत्तर भी खतरनाक ही होगा। खतरनाक नियमोंसे भारतीय उत्तेजित हुए थे, किन्तु यह उत्तर उस उत्तेजनाको और भी मजबूत कर देगा। खुदाको बीचमें खड़ा करके हमने कानूनका बहिष्कार किया है। उसी खुदाको बीचमें रखकर हमें हिम्मत रखनी है।

सुधार

स्वयंसेवकोंमेंसे एकने श्री ईसप मियाँको शाल उढ़ाया था। एक सज्जन सूचित करते हैं कि उक्त व्यक्तिका नाम देनेमें मुझसे भूल हुई है। मैं उनका आभार मानता हूँ। शाल श्री गुलाम मुहम्मदने उढ़ाया था। मैं इसके लिए श्री गुलाम मुहम्मदसे माफी माँगता हूँ।

ट्रान्सवाल प्रवासी-विधेयक[1]

प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक परिषद्में दूसरी बार पढ़ा गया। और बुधवारको उसका तीसरा वाचन हुआ।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–७–१९०७

१. यह "विशेष तार द्वारा" भेजा गया था।

७१. पत्र : उपनिवेश सचिवको

२५ व २६, कोर्ट चेम्बर्स
रिसिक स्ट्रीट
जोहानिसबर्ग
[जुलाई १६, १९०७[१]]

सेवामें
माननीय उपनिवेश सचिव
प्रिटोरिया

महोदय,

मेरे संघकी समितिकी इच्छा है कि मैं सरकारका ध्यान संघके उस प्रार्थनापत्रकी[२] ओर आकृष्ट करूँ जो संघने प्रवासी-प्रतिबन्धक विधेयकके [विषयमें] माननीय विधान [सभा][३]की सेवामें प्रस्तुत किया है। इसमें जो मुद्दे उठाये गये हैं वे मेरे संघकी विनम्र रायमें उस समाजके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं जिसका कि मेरा संघ प्रतिनिधित्व करता है। मेरे संघका खयाल है कि यदि प्रार्थनाके अनुसार राहत बख्शी गई तो भी विधेयकके सिद्धान्त ज्योंके-त्यों बने रहेंगे।

इस बातका कोई कारण मेरे संघकी समझमें नहीं आता कि सुशिक्षित भारतीयोंसे पंजीयन अधिनियमका पालन करानेकी आवश्यकता क्यों है? जिन ब्रिटिश भारतीयोंने ट्रान्सवालमें बसनेके लिए ३ पौंडका कर चुका दिया है, परन्तु जिन्हें शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत परवाने नहीं मिले हैं, उन्हें अपने अपनाये हुए देशमें लौटनेके अधिकारसे वंचित रखना बड़ा गम्भीर अन्याय प्रतीत होता है।

इसलिए मेरे संघको भरोसा है कि सरकार उसकी प्रार्थनापर अनुकूल विचार करनेकी कृपा करेगी।

आपका, आदि,
मूसा इस्माइल मियाँ
कार्यवाहक अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–७–१९०७

१. यह पत्र **इंडियन ओपिनियन**में बिना तारीखके छपा है, परन्तु ट्रान्सवाल विधानसभाके अभिलेख संग्रहालयमें प्राप्त सरकारी कागजोंसे इसी तारीखका संकेत मिलता है।

२. देखिए "प्रार्थनापत्र: ट्रान्सवाल विधानसभाको", पृष्ठ ९२-९३।

३. चौकोर कोष्ठकोंमें दिये गये शब्दोंके पर्याय मूलमें नहीं हैं।

७२. घोर मान-हानि

ट्रान्सवालके एशियाई अधिनियमके बारेमें आगे जो पत्र-व्यवहार हुआ है और जो लॉर्ड ऐम्टहिलकी माँगपर सदनमें पेश किया गया है, अब हमें प्राप्त हो गया है। लॉर्ड सेल्बोर्नने लॉर्ड एलगिनका ध्यान इस विधानकी ओर आकर्षित करनेके लिए निम्नलिखित उद्गार प्रकट किये हैं :

> मुझे आशा है कि आप यथाशीघ्र मुझे यह सूचना दे सकेंगे कि महामहिमको यह सलाह नहीं दी जायेगी कि वे इस अधिनियमको अस्वीकृत करनेके अपने अधिकारका प्रयोग करें, जिससे अधिनियम तुरन्त अमलमें आ सके और इस प्रकार *गैर-कानूनी तौरपर एशियाइयोंका ट्रान्सवालमें आव्रजन, जो इस समय बड़े जोरोंके साथ बढ़ रहा है, रोका जा सके।*

तिरछे अक्षर हमारे हैं।

हमें यह कहनेमें जरा भी संकोच नहीं है कि गैरकानूनी आव्रजनके बारेमें लॉर्ड सेल्बोर्नका ज़ोरदार कथन हमारी साफ और सच्ची मानहानि है। लॉर्ड महोदयने एशियाइयोंके गैरकानूनी आव्रजनके बारेमें अपने सामने पेश किये गये बयानोंको निस्संकोच भावसे स्वीकार कर लिया है, हालाँकि ये बयान एकतरफा ही हो सकते थे। भारतीयोंने कहा है कि ऐसा कोई आव्रजन नहीं हो रहा है। और उन्होंने इसकी जाँच करनेके लिए चुनौती भी दी है[1]। लेकिन अभीतक कोई जाँच नहीं की गई और फिर भी लॉर्ड सेल्बोर्नने, अपने कंधोंपर भारी दायित्वोंका बोझ होनेपर भी, इस बेसबूत इल्जामपर अपने अधिकारकी मुहर लगा देना ठीक समझा है।

यह आरोप सहज ही झूठा है। अगर ऐसा दाखिला प्रत्यक्ष रूपमें होता रहा है तो ऐसे प्रवेशकर्ताओंको उपनिवेशमें रहने ही क्यों दिया गया? या तो लॉर्ड महोदयको सूचना देनेवाले लोग यह जानते थे कि इस प्रकार किन लोगोंने प्रवेश किया है, या वे नहीं जानते थे। अगर वे जानते थे तो शान्ति-रक्षा अध्यादेशके मातहत उनके पास सारे आवश्यक उपाय थे कि वे उन लोगोंको अदालतके सामने पेश करते। इसलिए लॉर्ड सेल्बोर्नने जो तौहीन की है, वह इस बातको साबित करती है कि दक्षिण आफ्रिकामें, सिवाय अदालतके, कहीं भी एशियाइयोंकी सच्ची सुनवाई होना अगर असम्भव नहीं तो कितना कठिन है। और इस तरहके मामलेमें तो उनके लिए अदालतें भी बन्द हैं; इसलिए उन्हें चुप होकर बैठना पड़ता है और अपनी मुसीबतोंको यथाशक्ति हँसकर सहना पड़ता है।

जब हम लॉर्ड एलगिनके जवाबपर विचार करते हैं तब देखते हैं कि वह ब्रिटिश भारतीयोंको निराशामें भर देनेके लिए काफी है। उपनिवेश-मन्त्रीने इस विधानको मंजूरी इसलिए नहीं दी कि वे इसे न्यायोचित समझते हैं, बल्कि इसलिए दी है कि इसके पीछे गोरोंके अधिकारका बल है। तो इसका यही अर्थ हुआ कि यदि किसी उपनिवेशकी विधानसभाका कोई भी कानून सर्वसम्मत हो तो साम्राज्य सरकार भी, बिना उस कानूनके औचित्य-अनौचित्यको

१. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४१८, ४३३-३४ और खण्ड ६, पृष्ठ १, ३, ६, और ५२।

देखे, उससे बँध जायेगी। और अगर यह मसला आलोचनासे परे है तो लॉर्ड एलगिनका यह वक्तव्य — कि "महामहिमकी सरकारकी अब भी यही राय है कि एशियाइयोंपर इस समय जो पाबन्दियाँ लगी हुई हैं उनमें संशोधन करनेकी आवश्यकता है," —एक सदिच्छामात्र है, जिससे ब्रिटिश भारतीय बहुत आशा नहीं रख सकते। और हो सकता है, जबतक वह कानून, जिसके खिलाफ लड़नेके लिए ट्रान्सवालवासी एशियाइयोंने अपना सर्वस्व दाँवपर लगा दिया है, उनके सामने एक कठोर वास्तविकता बनकर खड़ा है, तबतक यह इच्छा कभी फलित न हो। विनिमयोंमें सुधार करनेके लिए जनरल बोथाने जो वचन दिये हैं उनसे भारतीयोंका कोई विशेष सम्बन्ध नहीं। परन्तु प्रसंगवश यह बता दिया जाये कि जिस उग्र पूर्वग्रहसे स्थानीय सरकार ओतप्रोत है उसका ही यह एक लक्षण है कि जनरल अपने वचनको पूरा नहीं कर सके। उपनिवेश सरकारके विचारोंमें भारतीयोंकी भावनाओंका कोई महत्त्व नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–७–१९०७

७३. ट्रान्सवाल प्रवासी-विधेयकपर बहस

ट्रान्सवालकी विधानसभामें प्रवासी-प्रतिबन्धक विधेयकके दूसरे वाचनपर जो विवाद हुआ, वह कई बातोंमें आँखें खोल देनेवाला है। श्री स्मट्सने विधेयकको सदनमें बहुत ही सरसरी तौरपर पेश किया। माननीय महानुभावने ब्रिटिश भारतीयोंको प्रभावित करनेवाले मुद्दोंको छुआतक नहीं। उन्होंने उन बातोंको इस लायक भी नहीं समझा कि उनमें सदस्यों या जनताको दिलचस्पी हो सकती है। उन्होंने इसे निश्चित मान लिया कि एशियाई पंजीयन अधिनियमको ट्रान्सवालके कानूनका एक स्थायी अंग होना चाहिए। श्री डंकनने इस विधानके पेश होने-पर जो-कुछ कहा था[1] उसके विपरीत, उन्होंने इसे भी निश्चित मान लिया कि जहाँतक एशियाई समुदायोंका सम्बन्ध है, प्रवासी विधेयक उसका स्थान लेनेके लिए नहीं, बल्कि उसकी कठोरतामें जो कमी रह गई थी उसको पूरा करनेके लिए बनाया गया है। उन्होंने सदस्योंको यह सूचित करनेका कष्ट नहीं किया कि इस विधेयक द्वारा सन् १८८५के कानून ३ की, जो बोअर सर-कारको ३ पौंड देनेवाले एशियाइयोंको निवास-सम्बन्धी संरक्षणकी गारंटी देता था, अवहेलना होगी; और उन्हें इस धारामें कुछ भी आपत्तिजनक बात दिखाई नहीं दी, जिसके अनुसार उच्च शिक्षा-प्राप्त एशियाई भी उपनिवेशमें आनेपर एशियाई पंजीयन अधिनियम द्वारा निश्चित अग्नि-परीक्षामें से जबतक गुजर नहीं जाते तबतक वर्जित प्रवासी माने जायेंगे।

श्री नेसरके इस नम्र कथनके उत्तरमें, कि किसी व्यक्तिको बिना मुकदमा चलाये, उसके अपने ही खर्चेसे उपनिवेशसे निकाल देनेका असाधारण अधिकार सरकारको देना बड़ी खतरनाक चीज होगी, श्री वाइबर्गने अत्यधिक रोष प्रकट किया। किन्तु श्री वाइबर्गके उद्गारोंको हम सिर्फ आत्म-विस्मृति जनित मूर्खता कह सकते हैं। यही बात कोई दूसरा व्यक्ति कहता तो वह बहुत बड़ी गुस्ताखी होती। इस धारापर विचार करते हुए और सरकारसे उसपर दृढ़

१. देखिए खण्ड ६ पृष्ठ १५७। श्री पैट्रिक डंकन १९०३ से १९०६ तक उपनिवेश-सचिव थे।

रहनेका अनुरोध करते हुए उन्होंने भारतमें हुई हालकी घटनाओंका जिक्र किया। हम इस विवादके गुण-दोषोंकी चर्चामें नहीं पड़ना चाहते; परन्तु हम यह आशा रखते हैं कि श्री वाइवर्ग जैसा एक जिम्मेदार राजनीतिज्ञ विधानसभामें अपने आसनसे दक्षिण आफ्रिकाकी जनतासे ऐसे निहायत गैरजिम्मेदार तरीकेसे बात न करेगा। अगर उन्होंने भारतीय समस्याओंका विशेष अध्ययन न किया हो तो यह साफ जाहिर है कि वे सिर्फ उतना ही जान सकते हैं जितना समुद्री तारों द्वारा भेजे गये घटनाओंके सारांशोंसे संसारको विदित हो पाता है। और अगर वे यह नहीं मानते कि सभी सरकारें भूल-भ्रान्तियोंसे परे हैं तो उन्हें यह माननेका कोई हक नहीं है कि भारतीय नेताओंको निर्वासित करनेकी अधिकारियोंकी कार्यवाही या तो अपने-आपमें अच्छी थी या उसका कोई शान्तिजनक परिणाम हुआ है। शायद हम माननीय सदस्यकी अपेक्षा कुछ अधिक जाननेका दावा कर सकते हैं, फिर भी ब्रिटिश साम्राज्यके उस भागमें जो घटनाएँ घट रही हैं उनके निकट-सम्पर्कमें न होनेके कारण हमने कुछ न कहनेमें ही बुद्धिमानी समझी है।

श्री वाइवर्गने एक नासमझी और की है कि उन्होंने भारतमें होनेवाली घटनाओंसे यह नतीजा निकाला कि ट्रान्सवालमें अनाक्रामक प्रतिरोधके लिए भड़कानेवाले भारतीयोंको निर्वासित करनेके लिए इस धारा द्वारा दिये गये अधिकार उपयोगी हो सकते हैं। यहाँ उन्होंने यह प्रकट कर दिया कि उनमें विषयको समझनेकी क्षमता नहीं है। भारतकी घटनाओंको बगावतका रंग दिया गया है और उनका अर्थ ब्रिटिश राजके विरुद्ध विद्रोह लगाया गया है। ट्रान्सवालके भारतीयोंके धर्मयुद्धकी किसी भी विद्रोही आन्दोलनसे जरा भी समानता नहीं है। इसका अर्थ इतना ही है कि यह समुदाय अपनी नैतिक भावनाको नष्ट होने देनेके बजाय घोर शारीरिक कष्ट सहन करनेको तैयार है। यह ट्रान्सवालके भारतीयोंका नाज़रथके देवदूतके इस उपदेशपर चलनेका प्रयत्न मात्र है कि "बुराईका विरोध न करो"।

निःसन्देह इस बातकी ब्रिटिश भारतीयोंको जरा भी परवाह नहीं कि श्री वाइवर्ग सदनको उनके विरुद्ध भड़का रहे हैं। वे किसी धमकीसे कर्तव्य-विमुख होनेवाले नहीं हैं। उन्होंने बुरेसे-बुरा परिणाम पहले ही सोच लिया है। उनका साहस उद्देश्यकी पवित्रता और आत्मसम्मानको कलंकित न होने देनेके निश्चयसे पैदा हुआ है। हम श्री वाइवर्गके उद्‌गारोंकी चर्चा सिर्फ इसलिए कर रहे हैं कि हम उन्हें सच्चा, किन्तु गुमराह व्यक्ति मानते हैं और यह दिखाना चाहते हैं कि पूर्वग्रहपूर्ण वातावरणमें एक सन्तुलित मानस भी कैसे विचलित हो जाता है। विधानसभाके सब सदस्योंमें अकेले श्री हॉस्केन ही ऐसे थे जिन्होंने श्री वाइवर्गके भाषणकी प्रतिशोधवृत्तिकी जोरदार भर्त्सना की। श्री हॉस्केनको यह कहनेमें कोई संकोच नहीं हुआ कि यह विधेयक रूसी या जर्मन इलाकेमें ही सम्भव है, ब्रिटिश भूमिपर नहीं। श्री वाइवर्ग क्या जानें कि किसी विशेष वर्गके लोगोंका दमन करनेके लिए ग्रहण किये हुए निरंकुश अधिकार उलटकर उन लोगोंपर असर करते हैं, जिनके बारेमें स्वप्नमें भी नहीं सोचा जाता। परन्तु हमें आशा है कि शान्त होकर सोचनेपर उन्हें अपनी भूलपर पश्चात्ताप हुआ होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०-७-१९०७

७४. गिरमिटिया प्रवासी

हम इस सप्ताह उस महत्त्वपूर्ण पत्रको छाप सकते हैं जो भारतीय प्रवासी न्यास-निकाय सचिवने गिरमिटिया भारतीयोंके मालिकोंको भेजा है। उसमें इन मजदूरोंको नेटालमें लानेके खर्चके सम्बन्धमें जानकारी दी गई है। यह कागज सर्वश्री इवान्स और रॉबिन्सनके[1] देखने योग्य है, जिन्होंने पूरी तरह विचार करनेके बाद यह निष्कर्ष निकाला है कि नेटालमें गिरमिटियोंका प्रवास बन्द किया जाना चाहिए। हम चूँकि श्री हैगरको जानते हैं, इसलिए उनका उल्लेख इसी श्रेणीमें नहीं कर सकते। यद्यपि हम संयोगसे गिरमिटिया भारतीयोंका प्रवास बन्द करनेके प्रयत्नमें उनसे सहमत हैं, किन्तु हमारे हेतु एक नहीं हैं और भारतीय समाजका उस सदस्यसे बहुत कम सरोकार हो सकता है, जो उनकी मानहानि करनेमें तनिक भी संकोच नहीं करता, और जब उसे अपने कथनको सिद्ध करनेकी चुनौती दी जाती है तब उसमें उसे सिद्ध करनेकी या क्षमा माँगनेकी मर्दानगी भी नहीं होती। श्री राइक्रॉफ्टने जो पत्र लिखा है उसमें यूरोपीयोंके दृष्टिकोणसे इन मजदूरोंका आव्रजन बन्द करनेका प्रायः पूरा औचित्य बताया गया है। यह प्रत्यक्ष है कि मालिक उनको लानेका खर्च मुश्किलसे ही उठा सकते हैं। अनिवार्य प्रत्यावर्तन, यदि भारत सरकार अपनी संरक्षकता छोड़कर ऐसी किसी शर्तको मान भी ले तो, उनके लिए और अधिक बुरा होगा। यह बताया गया है कि १९०५ में मालिकोंने जहाँ मजदूरोंको लानेके खर्चमें केवल २० पौंड दिये वहाँ वास्तविक व्यय प्रति वयस्क पुरुषपर ३१ पौंड १० शिलिंग ९ पेंस आया। और, जैसे-जैसे ३ पौंडी करके भारके कारण अधिकाधिक भारतीय बिना किरायेके भारत-वापसीका लाभ उठायेंगे, वैसे-वैसे यह खर्च बढ़ेगा ही। इस प्रकार यह प्रतीत होता है कि विशुद्ध आर्थिक दृष्टिकोणसे गिरमिटिया मजदूरोंको लाना जितना जल्दी बन्द कर दिया जाये, उतना ही दोनों पक्षोंके लिए अधिक अच्छा होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–७–१९०७

१. वकील।

७५. जनरल स्मट्सका हठ

एशियाई पंजीयन अधिनियमके कारण सरकारने अपने आपको जिस गलत स्थितिमें डाल लिया है, उससे निकलनेके लिए प्रिटोरियाके भारतीयोंने उसे एक मौका और दिया था। वह पत्र-व्यवहार लम्बा है और दुर्भाग्यवश हम इस अंकमें उसको शामिल करनेमें असमर्थ हैं। पंजीयन अधिनियमकी अत्यन्त आपत्तिजनक धाराओंके बारेमें सम्बन्धित भारतीयोंके वकीलोंने बहुत ही उचित सुझाव दिये थे। उपनिवेश-सचिवने प्रायः प्रत्येक प्रार्थनाको साफ-साफ शब्दोंमें अस्वीकार कर दिया है। हम स्पष्ट रूपसे स्वीकार करते हैं कि सरकार इससे भिन्न कुछ कर भी नहीं सकती थी। हमारी रायमें उसे इस पत्रका यह अर्थ लगानेका अधिकार था कि भारतीयोंमें अपने जेल-सम्बन्धी प्रस्तावको कार्यान्वित करनेकी पर्याप्त शक्ति नहीं है। इसलिए सरकारने प्रत्यक्षतः इस अत्यन्त उचित पत्रका गलत अर्थ किया है। उसने अधिनियमके अनुरूप नियम स्वीकार कर लिये हैं, और प्रिटोरियाके भारतीय प्रार्थियोंको अपना उत्तर उसी नीतिके अनुसार भेजा है। इस पत्र-व्यवहारसे कुछ लाभ होगा; क्योंकि इससे भारतीय समाजका अनिवार्य पंजीयन स्वीकार न करनेसे होनेवाले कष्टोंको सहन करनेका निश्चय दृढ़ होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–७–१९०७

७६. द० आ० ब्रि० भा० समितिका काम

दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति इस समय भी बड़ी मेहनत कर रही है। कुछ ही दिन पहले सर विलियम बुल और डॉ० रदरफोर्डने लोकसभामें प्रश्न पूछे थे। इससे मालूम हो सकता है कि समितिने यद्यपि ट्रान्सवालके कानूनका विरोध न करनेकी सलाह दी है और भारतीय समाजने उसे नहीं माना है, फिर भी उसका कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ा। समिति अपना काम किये जा रही है; और ऐसा होना भी चाहिए। समितिकी प्रत्येक सलाह माननेके लिए भारतीय समाज बाध्य नहीं है। समितिके सदस्य उदार-हृदय हैं और वे अपना काम किये जाते हैं।

सर मंचरजी भावनगरी इतनी सावधानी और दूरदेशीसे चलनेवाले व्यक्ति हैं कि उनकी अध्यक्षतामें समिति भारतीयोंका काम छोड़ नहीं सकती। इसके अलावा श्री रिचने लॉर्ड ऐम्टहिलके नाम जो पत्र लिखा है, उससे मालूम होता है कि वे समितिके सामने भारतीय विचारोंको साफ-साफ रखनेमें कभी संकोच नहीं करते।

डेलागोआ-बे

सर विलियम बुलके प्रश्नोंसे डेलागोआ-बेके भारतीयोंको मालूम हो गया होगा कि उनका प्रश्न भी भुलाया नहीं गया है। 'इंडियन ओपिनियन' में श्री कोठारीका पत्र प्रकाशित

किया गया तो उसके आधारपर सर विलियम वुलने तुरन्त भारतीयोंपर होनेवाले जुल्मोंकी शिकायत की। हमें यहाँ कहना चाहिए कि डेलागोआ-बेके भारतीयोंकी ओरसे समितिको बिलकुल मदद नहीं दी गई है। उनपर इस समय ज्यादा मुसीबत नहीं है, फिर भी हम मानते हैं कि समितिके खर्चमें उन्हें हाथ बँटाना चाहिए।

रोडेशिया

जिस तरह डेलागोआ-बे नहीं भुलाया गया, उसी तरह रोडेशियाका भी हुआ है। हमारे पाठकोंको खयाल होगा कि भारतीयोंके प्रति रोडेशिया परिषदके जो विचार थे, उन्हें हमने इसी बीच प्रकाशित किया था। विलायत पहुँचते ही श्री रिचने उनका उपयोग किया है और सम्भव है कि रोडेशियामें अधिक सख्त कानून नहीं बन पायेंगे। इस विषयमें विचार करते हुए सबको स्वीकार करना होगा कि क्या रोडेशिया और क्या डेलागोआ-बे, दोनों देशोंकी इज्जत वास्तवमें ट्रान्सवालके भारतीयोंकी लड़ाईपर निर्भर है। वे लाज रखेंगे तो रहेगी, नहीं तो समिति या अन्य कोई ऐसी स्थितिमें नहीं रहेगा कि कुछ सहायता कर सके।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–७–१९०७

७७. लोबिटो-बे

हमारे संवाददाताने समाचार भेजा है कि लोबिटो-बेके मजदूरोंकी हालत बहुत बुरी है। उसके आधारपर हमने ग्रिफिथ पेढ़ीके एजेंटकी मारफत पूछताछ की। उसका नीचे लिखा उत्तर आया है:

> **रिपोर्ट बे-बुनियाद है। डाक्टरी सहायता बहुत मिल रही है। मजदूरोंके लिए विशेष चिकित्सालय और डॉक्टरकी व्यवस्था है। यदि आवश्यक समझें तो आप नेटाल-सरकारसे कहियेगा कि जाँच करनेके लिए किसी व्यक्तिको भेजे। मजदूरोंकी स्थिति अच्छी है। उन्हें सन्तोष है। पानी उत्तम है। खाद्य-सामग्री बहुत है।**

हमारे संवाददाता द्वारा भेजे गये समाचारमें और इसमें विरोध है। हमारा संवाददाता बहुत ही सावधानीसे काम लेनेवाला और निःस्वार्थ व्यक्ति है। इसलिए उसका समाचार बेकार नहीं है। हम दोनों समाचारोंको मिलाकर यह अर्थ करते हैं कि जब मजदूर वहाँ पहुँचे तब उन्हें बहुत कष्ट थे और वह समाचार हमारे संवाददाताको मिला। इस समय उनकी हालत उतनी खराब नहीं है। साधारणतः वे सुखी होंगे। फिर भी इतना तय है कि अभी भारतीयोंके लिये साहस करके वहाँ जानेका विचार करना बेकार है। बेंगुएला पहुँचने तक निःसन्देह बहुत कष्ट हैं, और बेंगुएला पहुँच जानेके बाद भी कोई स्वतन्त्र रहकर कुछ कारोबार कर सके, सो स्थिति अभी नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–७–१९०७

७८. नेटालमें परवाने और टिकटका विधेयक

राजस्व परवानेके सम्बन्धमें कुछ संशोधन करनेके लिए एक विधेयक १२ जुलाईके नेटालके सरकारी 'गज़ट' में प्रकाशित हुआ है। उसमें से महत्त्वपूर्ण बातें हम नीचे दे रहे हैं:

(१) १८९७का व्यापार कानून अबसे काफिर भोजनालयपर लागू होगा।

(२) मजिस्ट्रेटके एक विभागमें फेरी लगानेका परवाना मिला हो तो उसका दूसरे विभागमें उपयोग नहीं किया जा सकता।

(३) कोई फेरीवाला एक फार्मपर १२ घंटेसे ज्यादा नहीं ठहर सकता, और उसी जगहपर चार दिन तक दूसरी बार नहीं जा सकता।

(४) नगर-परिषदमें परवानेपर उसकी कीमतके अलावा उसके दसवें हिस्सेके दूसरे टिकट लगाने होंगे। वह दसवाँ हिस्सा परवानेवाला देगा और सरकारको मिलेगा।

(५) विदेशी पेढ़ीके एजेंटको परवाना लेना होगा। और यदि नीलाम करनेवाला वैसा माल बेचे तो उसे भी परवाना लेना होगा।

(६) अपने व्यापारका परवाना लेते समय हर व्यक्ति, यदि उसके पास एजेंसी हो तो, अधिकारीके सामने यह बात कहनेके लिए बाध्य है।

(७) वतनी अथवा भारतीयको किरायेकी रसीद दी हो तो उसके लिए अलगसे रसीद-बुक रखी जाये, उसपर क्रम-संख्या डाली जाये और पन्नोंपर मुहर उभरी हुई होनी चाहिए। चिपकाई हुई मुहरसे काम नहीं चलेगा।

यह विधेयक अभी कानून तो नहीं बना है, किन्तु माना जा सकता है कि कानून बन जायेगा। उसमें कुछ परिवर्तन होना सम्भव है, लेकिन बहुत छोटे-मोटे यह सबपर लागू होता है, इसलिए इसका विरोध करना कठिन है। इस विधेयकका मतलब यह है कि उपनिवेशमें इस समय पैसेकी तंगी है, इसलिए जहाँ-तहाँसे पैसा इकट्ठा किया जाये। गुस्सा आनेपर कुम्हार गधीके कान खींचता है, उसी प्रकार सरकारके पास पैसेकी कमी है इसलिए उसने फेरीवाले जैसे गरीबोंपर हमला किया है। संक्षेपमें सारा दक्षिण आफ्रिका इस समय कंगाल बन गया है। इसलिए सरकार पैसेके लिए इधर-उधर भटक रही है। परवानोंकी जो विभिन्न दरें रखी गई हैं उन्हें हम इस समय नहीं दे रहे हैं, किन्तु यदि विधेयक पास हुआ तो आवश्यकता मालूम होनेपर प्रकाशित करेंगे। उपर्युक्त सारी उपधाराओंमें किरायेकी रसीदकी उपधारा भयंकर है। उसके सम्बन्धमें लड़ाई लड़नी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–७–१९०७

७९. गिरमिटिया भारतीय

भारतीय प्रवासी न्यास-निकाय (इंडियन इमिग्रेशन ट्रस्ट बोर्ड)के सचिव श्री राइ-क्रॉफ्टने गिरमिटिया भारतीयोंके मालिकोंके नाम जो पत्र लिखा है उसे हम अंग्रेजी विभागमें पूरा-पूरा प्रकाशित कर रहे हैं। उससे पता चलता है कि भारतीय गिरमिटियोंको दाखिल करवानेका खर्च सेठोंको भारी पड़ता है और यदि भारतीय मजदूर अपने इकरारके वर्ष पूरे हो जानेपर स्वदेश लौटते हैं तो बहुत ही ज्यादा खर्च होता है। इससे श्री राइक्रॉफ्टका कहना है कि मजदूरोंको यदि बलात् लौटा देनेका कानून बनाया गया तो सेठोंका नुकसान होनेकी सम्भावना है।

इस दृष्टिसे गिरमिटियोंके सेठोंकी हालत साँप-छछूंदरकी-सी हो गई है। अगर मजदूरोंको जाने दें तो उनके बमीठे बैठ जायें। यदि वे रोक लें और इधर उन मजदूरोंको भारत भेजनेका कानून बन जाये तो उन्हें बहुत ज्यादा खर्च उठाना होगा। इस संकटमें क्या किया जाये, यह एक जबरदस्त सवाल पैदा हो गया है। इस लड़ाईसे भारतीय मजदूरोंको किसी प्रकारका लाभ होनेकी सम्भावना नहीं है। मजदूर न बुलाये जायें यह कहनेवाले और बुलाये जायें यह कहनेवाले दोनोंमें से किसीको भी भारतीयोंकी चिन्ता नहीं है। यदि भारतीय मजदूर और भी कम वेतनपर आयें और गिरमिटके अन्तमें चाहे उन्हें लौटना पड़े फिर भी कोई कुछ कहेगा सो बात नहीं। दोनों पक्ष प्रसन्न होंगे। भारतीय समाजका एक ही तरीकेसे लाभ हो सकता है और वह है, मजदूरोंको बुलाना बिलकुल बन्द हो। मजदूर यहाँ आकर गुलामीकी हालतमें अपना स्वार्थ सिद्ध नहीं कर सकते, उनकी स्वतन्त्र रहनेकी कोई स्थिति नहीं है। हमें यह देखकर प्रसन्नता होती है कि गिरमिटियोंपर पड़नेवाले कष्टोंसे सारे भारतीय समाजको सहानुभूति हो रही है। यह हमारी जागृतिका लक्षण है। इसलिए यदि हम अब एक कदम आगे बढ़कर गिरमिटपर आनेवाले भारतीयोंको रोक सकें तो भारतीयोंकी गुलामी समाप्त होगी और इस समय दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय समाजके जितने लोग रह रहे हैं उन्हें कुछ राहत मिलेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–७–१९०७

८०. भाषण: नेटाल भारतीय कांग्रेसकी सभामें[1]

डर्बन
जुलाई २०, १९०७

तेरह वर्षोंकी लड़ाईमें आजकी लड़ाई ही बड़ी आनबानकी है। इसलिए इसका परिणाम भी उतना ही भारी होना चाहिए। इस कानूनका सारे दक्षिण आफ्रिकापर समान असर पड़ेगा। रोडेशिया और जर्मन आफ्रिकामें तो इसके छींटे उड़े ही हैं, किन्तु भारतमें भी इसका बुरा असर पहुँचे बिना नहीं रहेगा। नेटालके भारतीयोंको तो ज्यादा डरना है। [यहाँ १८ मई तथा ६ जुलाईके 'ओपिनियन' से कुछ उदाहरण दिये गये थे]। गोरे कहते हैं कि भारतीय नौकर तो मंजूर हैं लेकिन स्वतन्त्र भारतीय नहीं चाहिए। इसके अतिरिक्त झूठेके साथ सच्चेको बैठाते हैं। पोरबन्दरके किसी गरीब हासिमका मामला मुझे याद आता है। अपनी लगभग १०० रुपयेकी मौरूसी जमीन छिन जानेके कारण वह बम्बईमें मेरे पास आया। मैंने सलाह दी कि १०० रुपयेकी जमीनके लिए ५०० रुपयेपर पानी क्यों फेरता है? उसने जवाब दिया कि मेरे पुरखोंकी जमीन है। चाहे जो हो, मैं उसे वापस लूँगा। मैं अपना पट्टा झूठा नहीं होने दूँगा। किन्तु ट्रान्सवालके सम्बन्धमें तो कौमका पट्टा है। एक है, उसे छीनकर दूसरा अपनी मर्जीके मुताबिक देना चाहते हैं। और वह भी केवल भारतीयोंको ही। इसके अलावा पट्टा देते समय, जैसा नाटकमें[2] देखा है, बाप, माँ, पत्नी आदिके नाम तथा पहले दस अँगुलियोंकी और उसके बाद आठकी छाप माँगते हैं। इतना सब लेनेके बाद मर्जी हो तो मर्जीके अनुसार पट्टा देनेकी बात कहते हैं। ऐसी गुलामी कौन सहन करेगा? तीन-चार पौंड कमानेवाला आदमी जहाँ ठोकर मारे वहीं अपना पेट भर सकता है, तो इतनी छोटी-सी रकमके लिए ट्रान्सवालमें बेइज्जतीके साथ रहना क्यों पसन्द करेगा? इसके अलावा ४०० पौंड कमानेवालेको पैसेसे इज्जत प्यारी होती है। शायद गरीब-अमीर सभी लोग हजूरिये बनकर बेइज्जती सहन कर लें, लेकिन यदि उनके आठ-दस वर्षके लड़केपर जुल्म हो तो वह उनसे कदापि सहन नहीं होगा। बोअर लोग बहादुर हैं। उनका विरोध नहीं किया जा सकता। किन्तु यदि वे गलत हुक्मके सामने झुकनेके लिए कहें, यानी गुलाम बननेके लिए कहें, तो इनकार किया जा सकता है। हमें लोग खोटे सिक्केके रूपमें जानते हैं। सच्चा सिक्का बननेका यह अच्छा अवसर है। यदि इस कसौटीपर सच्चे उतर जायें तो दुनियामें कहीं भी रहनेवाले भारतीयोंको इससे लाभ होगा। भारतमें आज बन्दर-न्याय हो रहा है। मुसलमान और हिन्दू, इन दो बिल्लियोंको लड़ाकर सरकार अपना काम बना रही है। यहाँ वह हालत नहीं है। दोनों कौमें एक हैं, इसलिए हमारा साहस सफल होगा। इन सारी बातोंका विचार करके सितम्बरकी सार्वजनिक सभामें[3] मैंने जेलकी सलाह दी। इससे सबने खुदाको बीचमें रखकर हाथ ऊँचे करके जेल जानेकी शपथ ली। उस दिनसे आजतक की हकीकत सब जानते हैं। अब यदि शपथ नहीं निभाते हैं तो हम खुदाके चोर माने जायेंगे। एकके बाद एक नये-नये कानून बनेंगे, हम बिना पानीके माने जायेंगे। तबतक कुत्तोंकी

१. नेटाल भारतीय कांग्रेसकी आम सभा शनिवारको श्री दाऊद मुहम्मदकी अध्यक्षतामें हुई थी। उसमें एशियाई अधिनियमके फलितार्थोंपर गांधीजी बोले थे।

२. विक्टोरिया इंडियन थियेटर, डर्बनमें १३ जुलाई १९०७ को खेला गया एक प्रहसन।

३. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४३०–३४।

जिन्दगी नष्ट हो गई। एक बार एक गोरी महिलाने कहा कि लात खानेवाला कुलीवाला (भारतीय) मान-अपमान क्या समझे? मैंने जवाब दिया कि एक बार यदि उसे यह हलकापन महसूस हो गया तो फिर जिन्दगीभर पंजीयन नहीं करवायेगा। इसका निश्चय करनेके लिए वह जो भी फेरीवाला उसके आँगनमें आता उससे पूछती थी कि तू नया पंजीयन करवायेगा या नहीं? उस महिलाको जवाब मिलता कि पंजीयन नहीं करवाऊँगा। आज उसे मालूम हो गया है कि भारतीयोंमें कुछ तो बहादुर हैं। इसलिए अब वह कहती है कि जब भारतीय जेलमें होंगे तब वह उनकी खबर लेती रहेगी और यथासम्भव सार-सँभाल करती रहेगी। श्री हॉस्केन कहते हैं कि सारे भारतीय यदि जेल चले जायें तो सरकारकी ताकत नहीं कि फिर अँगुली उठाये। इससे हमें समझना चाहिए कि यदि हम टेक रखें, तो हमारा दिन निकला ही समझिए। इस समय तो हमारे प्रति यह खयाल है कि हम कोरे शोर मचानेवाले हैं। इसलिए प्रवासी कानूनके खिलाफ की गई हमारी अपील रद्दीकी टोकरीमें फेंक दी गई है। यह सब आपके सामने इसलिए कहना आवश्यक है कि इन उदाहरणोंसे आप सीखें और तैयार रहें। आप और हम एक ही हैं, इसलिए यदि आप हमारे दुःखमें हाथ बँटायें तो कोई नई बात नहीं होगी। बातें करके, यानी प्रस्ताव पास करके तथा पत्र-व्यवहार करके मदद दें, सो काफी नहीं है। असल मदद तो वह भीख मुझे देना है जिसके लिए मैं आया हूँ। ट्रान्सवालमें सारे भारतीय जब जो नुकसान उठानेको तैयार हैं, तब आपको पैसेसे मदद करनेमें पीछे नहीं रहना है। आप इसमें कुछ अधिक नहीं कर रहे, बल्कि अपना फर्ज अदा कर रहे हैं। बहुत-से लोग जब जेल चले जायें, तब उनके पीछे रहनेवालोंका भरण-पोषण आपको करना होगा। अतः पानी आनेके पहले बाँध बाँध लेना चाहिए। मुझे विश्वास है कि आप मदद करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७-७-१९०७

८१. प्रार्थनापत्र[1]: ट्रान्सवाल विधान-परिषदको

जोहानिसबर्ग
जुलाई २२, १९०७

माननीय अध्यक्ष और सदस्यगण
ट्रान्सवाल विधान-परिषद

ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यवाहक अध्यक्ष ईसप इस्माइल मियाँका प्रार्थनापत्र

नम्र निवेदन है कि:

१. आपका प्रार्थी ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघका कार्यवाहक अध्यक्ष है।

२. उक्त संघ माननीय सदनसे उस विधेयकके सम्बन्धमें प्रार्थना करता है जो इस देशमें वर्जित प्रवासियों और अन्य लोगोंके प्रवेशपर प्रतिबन्ध लगाने, उनको देशसे निकाल बाहर करने और एक 'प्रवासी विभाग' स्थापित करने और कायम रखनेके उद्देश्यसे अब माननीय सदनके सम्मुख विचारार्थ प्रस्तुत है, या जल्दी ही प्रस्तुत किया जायेगा।

१. इसकी एक नकल एल० डब्ल्यू० रिचने १४ अगस्तको उप-उपनिवेश-मन्त्रीको भेजी थी। वह "आवेदनपत्र: उपनिवेश-मन्त्रीको", (पृष्ठ १८३-८८) के साथ भी संलग्न की गई थी।

३. प्रार्थी संघ जहाँ प्रवासपर प्रतिबन्ध लगानेके सिद्धान्तकी पुष्टि करता है, वहाँ माननीय सदनका ध्यान सादर निम्न बातोंकी ओर आकर्षित करता है:

(क) विधेयक एशियाई कानून संशोधन अधिनियमको स्थायित्व प्रदान करता है।
(ख) उसमें किसी भी प्रमुख भारतीय भाषाको मान्यता नहीं दी गई है।
(ग) उससे उन ब्रिटिश भारतीयोंके अधिकार समाप्त हो जाते हैं, जिन्होंने गत युद्धसे पूर्व ट्रान्सवालमें अधिवासका अधिकार प्राप्त करनेके लिए तीन पौंड दिये थे और जिनको, शरणार्थी होनेके कारण, शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत अनुमतिपत्र नहीं मिले हैं।
(घ) उसकी धारा २ की उपधारा घ के द्वारा, वे भारतीय भी, जो शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षा पास कर लें और अन्यथा वर्जित न हों, एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके अन्तर्गत आ जाते हैं। (सादर निवेदन है कि शिक्षा-सम्बन्धी योग्यता प्राप्त भारतीयोंको आगे शिनाख्तकी आवश्यकता नहीं रहती।)

४. प्रार्थी संघ सविनय निवेदन करता है कि ऊपर गिनाई गई आपत्तियाँ माननीय सदनके लिए विचारणीय हैं।

५. प्रार्थी संघ माननीय सदनको सादर स्मरण दिलाता है कि जिन समुदायोंका इस उपनिवेशकी संसदमें प्रतिनिधित्व नहीं है उनके हितोंकी रक्षा करना उसका विशिष्ट कर्तव्य है और प्रार्थी संघ एक ऐसे ही समुदायका प्रतिनिधित्व करता है।

६. प्रार्थी संघ इसी कारण सादर प्रार्थना करता है कि माननीय सदन जितनी सहायता उचित समझे उतनी दे। और इस कार्यके लिए हम कृतज्ञ होंगे, आदि, आदि।

[आपका आदि,
ईसप इस्माइल मियाँ]
कार्यवाहक अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: सी० ओ० २९१/१२२

८२. प्रार्थनापत्र : नेटाल विधान-सभाको

डर्बन
जुलाई २५, १९०७

सेवामें
माननीय अध्यक्ष और सदस्यगण
नेटाल उपनिवेशकी विधान-सभा
पीटरमैरित्सबर्ग

नेटाल भारतीय कांग्रेसके प्रतिनिधियोंके रूपमें उसके अध्यक्ष और
संयुक्त मन्त्रियोंका प्रार्थनापत्र

नम्र निवेदन है कि,

१. आपके प्रार्थी नेटाल भारतीय कांग्रेसके, अध्यक्ष और संयुक्त मन्त्रियोंके रूपमें उसका प्रतिनिधित्व करते हैं।

२. आपके प्रार्थियोंने गत २५वीं जूनके सरकारी 'गज़ट'में प्रकाशित, भूमि-कर लागू करनेवाला विधेयक पढ़ा है।

३. आपके प्रार्थी इस सम्बन्धमें इस माननीय सदनका ध्यान आकृष्ट करते हैं और उस भेद-भावका जो इस विधानमें, जहांतक करकी दरका सम्बन्ध है, यूरोपीय और भारतीय किरायेदारोंके बीच किया जानेको है विरोध करते हैं।

४. आपके प्रार्थियोंकी विनम्र सम्मतिमें उद्दिष्ट भेद जातिगत होनेके कारण ब्रिटिश भारतीयोंके लिए अपमानजनक तो है ही, यह उनपर अनावश्यक कठिनाइयां भी लाद देता है।

५. इसलिए आपके प्रार्थी नम्र निवेदन करते हैं कि यह माननीय सदन इस विधानमें ऐसा संशोधन करे कि उपर्युक्त कठिनाई दूर हो जाये; और न्याय और दयाके इस कार्यके लिए आपके प्रार्थी कर्तव्य समझकर सदा दुआ करेंगे, आदि।

दाउद मुहम्मद
दादा उस्मान
एम० सी० आँगलिया

[अंग्रेजीसे]

नेटाल आर्काइव्ज़ पीटरमैरित्सबर्ग : विधानसभाके वोट्स ऐंड प्रोसीडिंग्ज़, १९०७

८३. परवाना-कार्यालयके बहिष्कारका भित्तिपत्र[1]

[प्रिटोरिया
जुलाई २६, १९०७ के पूर्व]

बहिष्कार करो, परवाना कार्यालयका बहिष्कार करो। जेल जाकर हम प्रतिरोध नहीं करते, अपने सामूहिक हित और आत्मसम्मानके लिए कष्ट सहते हैं। बादशाहके प्रति वफादारी बादशाहोंके बादशाहके प्रति वफादारी चाहती है।

भारतीयो! स्वतन्त्र हो!

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–७–१९०७

८४. प्रिटोरियाकी लड़ाई[2]

जोहानिसबर्ग,
शुक्रवार, २ बजे
[जुलाई २६, १९०७]

अन्तिम समाचारसे मालूम होता है कि अनुमतिपत्र कार्यालयमें पंजीयनके लिए अभीतक एक भी अर्जी नहीं दी गई है; परन्तु ऐसी अफवाह है कि अनुमतिपत्र अधिकारी एक निजी मकानमें पंजीयनके लिए रातको अर्जियाँ लेने लगे हैं।

गुरुवारको दोपहरमें भारतीयोंकी एक सभा बुलाई गई थी। उसमें यह बताया गया कि कानूनके सामने न झुकनेके लिए हर वैधानिक रीतिसे समझानेका प्रयत्न किया जायेगा। उसके बाद सभी अपनी मर्जीके मुताबिक चल सकते हैं। एक निजी मकानमें रात्रिके समय पंजीयनके लिए अर्जियाँ देना और अनुमतिपत्र अधिकारियोंका इस प्रकारसे चलना कलंककी बात है। सभा जेलके बारेमें दृढ़ है तथा बड़े उत्साहसे काम कर रही है।

नगरके मुख्य स्थानोंसे सरकारने बहिष्कारके भित्तिपत्रोंको[3] उखड़वा डाला है। अनुमतिपत्र कार्यालयके द्वारपर लगे हुए भित्तिपत्रने बड़ा मजा दिया। सरकारके यह पूछनेपर कि भित्तिपत्र किसने बनाया है, उसकी सारी जिम्मेदारी श्री गांधीने अपने सिर ले ली है।

१. इस सन्देशके भित्तिपत्र अनाक्रामक प्रतिरोध संघर्षके दिनोंमें प्रिटोरियामें लगाये गये थे। सरकारने उनको प्रमुख स्थानोंसे हटवा दिया था और उनके लेखकके सम्बन्धमें पूछताछ की थी। उनका उत्तरदायित्व गांधीजीने स्वीकार किया था। देखिए अगला शीर्षक।

२. यह 'विशेष तार द्वारा प्राप्त ताजा समाचार' शीर्षकसे प्रकाशित किया गया था।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

तारीख ३१को विराट् सभा होगी। सारे कारोबार बन्द रखने हैं। विज्ञप्तियाँ निकाली जा रही हैं। इसके लिए एक समर्थ समिति नियुक्त की गई है। जैसा पहले कहा गया था, चार दिन तक दूकानें बन्द नहीं रखनी हैं। पंजीयनपत्र ले लेनेकी अवधिका अन्त निकट आ रहा है, इसलिए गम्भीरता हर क्षण बढ़ती जा रही है। महीना पूरा होनेसे पहले सम्भव है जानने योग्य कई नई-नई बातें सामने आयें।

डर्बनके हमदर्द भाइयोंकी ओरसे हिम्मत और मदद देनेके सम्बन्धमें ढेरके-ढेर तार आये हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–७–१९०७

८५. "मानवजातिका विस्मय"

कहा जाता है कि भूतपूर्व राष्ट्रपति क्रूगरने[1] एक शक्तिशाली साम्राज्यके साथ असमान लड़ाई छेड़कर "मानवजातिको विस्मित कर दिया" था। उन्हींके भूतपूर्व देशमें — यद्यपि वह अब नामभरको ब्रिटिश है — ट्रान्सवालके भारतीयों द्वारा इतिहास दोहराया जायेगा। लेकिन यह तुलना पूर्ण रूपसे सही नहीं है। भूतपूर्व राष्ट्रपति एक रक्तरंजित युद्धमें लड़े थे। ट्रान्सवालके भारतीय एक बूंद खून गिराये बिना ही मानवजातिको विस्मित कर देंगे। हम बिना किसी अनादर भावके कहना चाहते हैं कि भारतीय भूतपूर्व राष्ट्रपतिसे भी अधिक करके दिखानेवाले हैं। अपने सम्मानके लिए — कुछ लोग इसे निरी भावुकता कह सकते हैं — वे अपना सर्वस्व न्योछावर करनेको तैयार हैं। उनका यह दान विधवाका-सा श्रेष्ठ और अक्षय दान होगा।

बहुत-से मित्र कहते हैं कि स्थानीय सरकार एशियाई अधिनियमको हर तरहसे लागू करनेपर तुली हुई है और उनकी बुरीसे-बुरी आशंकाओंके सही उतरनेकी सम्भावना है। भारतीय इसके जवाबमें कहते हैं कि वे इस सम्भावनाके लिए तैयार हैं। उन्हें जेल भेजेंगे? वे तैयार हैं। उन्हें जबरदस्ती देश निकाला देंगे? इसके लिए भी वे तैयार हैं। वे अपराधियोंकी तरह जियें और ईश्वरके सामने विश्वासघाती बनें, इससे तो कुछ भी, यहाँतक कि — मौत भी ज्यादा अच्छी होगी।

हो सकता है कि वे गुमराह हों और उनका ध्येय वास्तवमें सही न हो। अगर ऐसा है तो वे फिर उसी उदाहरणका सहारा लेते हैं, जिसका हमने उल्लेख किया है, और जवाब देते हैं कि यद्यपि बहुत-से लोगोंके विचारसे भूतपूर्व राष्ट्रपति क्रूगरने ब्रिटिश सरकारके विरुद्ध खड़े होकर बड़ी गलती की थी, तथापि उनमें अपने विश्वासोंपर दृढ़ रहनेका साहस था इस-लिए प्रत्येक व्यक्ति उनकी प्रशंसा करता है। इतना ही काफी है कि वे एक ऐसे ध्येयके लिए लड़े जिसे वे सही समझते थे। लेकिन राष्ट्रपति पुरानी धर्म-पुस्तिका (ओल्ड टेस्टामेंट) की प्रेरणाके अनुसार उसी पवित्र ग्रन्थके वीरोंके आदर्शपर लड़े थे। भारतीय, जो इस देशमें ईमानदारीकी रोजीकी खोजमें आकर बसे हैं और जिनके सामने नागरिक और सामाजिक विनाश मुँह बाये खड़ा है, नई धर्म-पुस्तिका (न्यू टेस्टामेंट)की प्रेरणासे लड़ रहे हैं। दुनियाके सबसे बड़े अनाक्रामक प्रतिरोधी करुणावतार ईसा उनके आदर्श हैं। अगर ट्रान्सवालके शासक

१. एस० जे० पॉल क्रूगर (१८२५–१९०४); ट्रान्सवालके राष्ट्रपति, १८८३–१९००।

उनके प्रस्तावोंको ठुकरा देते हैं, अगर उनके परम प्रभु सम्राट् एडवर्ड, महमूद गजनवीकी[1] तरह, उनकी रक्षा कर सकनेमें अपनेको असमर्थ घोषित करते हैं, तो इसमें उनका क्या बनता-बिगड़ता है? ईसाको ठुकराया गया, उन्हें चोरों और डाकुओंके साथ ऐसी मौतका भय दिखाकर जो उनके उत्पीड़कोंकी दृष्टिमें लज्जाजनक थी, उनसे ईश्वर निन्दा करवानेका प्रयत्न किया गया, फिर भी क्या उन्होंने अन्ततक उसका विरोध नहीं किया? लेकिन काँटोंका ताज उस लहू-लुहान मस्तकपर आज जितना फब रहा है उतना बढ़ियासे-बढ़िया हीरोंसे जड़ा ताज भी किसी सम्राट्के मस्तकपर नहीं फबता। वे मरे, इसमें शक नहीं, लेकिन फिर भी ईश्वरके सच्चे भक्तोंकी स्मृतिमें वे आज भी जीवित हैं; और उसके साथ वे चोर भी जीवित हैं, जिन्होंने उस विनम्र नाजरथवासी और उसके उपदेशोंको ग्रहण किया था।

इसी प्रकार, ट्रान्सवालके भारतीय, अगर वे अपने परमात्माके प्रति सच्चे बने रहे तो अपनी उन सन्तानों और देशवासियोंकी स्मृतिमें जीवित रहेंगे, जो उनके इस क्षण-भंगुर संसारको छोड़ जानेपर कह सकेंगे कि "हमारे बापदादोंने रोटीके एक टुकड़ेके लिए हमारे साथ विश्वासघात नहीं किया।"

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–७–१९०७

८६. श्री पारसी रुस्तमजीकी उदारता

श्री रुस्तमजीने[2], जिनका नाम दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंका बच्चा-बच्चा जानता है, हमें एक मार्केका पत्र गुजरातीमें लिखा है। उसका अनुवाद हम नीचे देते हैं:

> यद्यपि मैंने अक्सर ट्रान्सवालमें रहनेवाले अपने देशवासियोंकी दशाके बारेमें अपने विचार जनताके सामने प्रकट किये हैं, फिर भी शायद आप मुझे अपने पत्र द्वारा उन्हें प्रकट करनेका मौका देंगे। ट्रान्सवालके भारतीय जिस संघर्षमें लगे हुए हैं, उसके फलका दक्षिण आफ्रिकाका प्रत्येक भारतीय भागीदार होगा। हम लोग, जो उस देशसे बाहर हैं, उनके शारीरिक कष्टोंमें सम्भवतः हिस्सा नहीं बँटा सकते। उन्हें सिर्फ जेलकी ही मुसीबतें नहीं झेलनी पड़ेंगी बल्कि बहुतेरोंको अपना सर्वस्व गँवा देना होगा। अगर हम जेल नहीं जा सकते तो कमसे-कम उनके उच्चादर्शका अनुकरण करके सर्वसाधारणकी भलाईमें अपनी माल-मिल्कीयत तो कुर्बान कर ही सकते हैं। इसलिए मैं, पूर्ण नम्रताके साथ और ईश्वरको साक्षी रखकर, ट्रान्सवालमें रहनेवाले अपने देशवासियोंको सूचित करता हूँ कि मेरी यह आन्तरिक अभिलाषा है कि मैं उनके दुःखमें हाथ बटाऊँ; इसलिए आजसे इस दुनियामें माल-मिल्कीयतके नामपर मेरे पास जो-कुछ भी है वह सब तबतक ट्रान्सवालमें रहनेवाले मेरे देशवासियोंकी धरोहर होगी, जबतक कि इस संघर्षका अन्त न हो जायेगा। मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि दक्षिण आफ्रिकामें मेरे

१. सन् ९९७ ई० में गजनीकी गद्दीपर बैठनेके बाद उसने भारतपर १७ बार चढ़ाई की, किन्तु अपनी विजयको स्थायी नहीं बना सका। देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३९०।

२. नेटालके प्रमुख भारतीय व्यापारी; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३९५।

बहुत-से मित्र अपना कर्तव्य समझकर ट्रान्सवालके भारतीयोंको इसी प्रकारकी आर्थिक सहायता देनेको तैयार हैं। सचमुच, प्रिटोरियाने हमारे दिलोंको आशासे भर दिया है। हमें भरोसा है कि वहाँ बसनेवाले और ट्रान्सवालके दूसरे हिस्सोंमें रहनेवाले हमारे देशवासी अपने संकल्पको अन्ततक निबाहेंगे।

इस पत्रसे सारी बातें स्वयं ही प्रकट हैं। हम तो सिर्फ अपनी रायके तौरपर इतना कहना चाहते हैं कि जो लोग श्री रुस्तमजीको जानते हैं, उन्हें मालूम है कि इस वचनका अर्थ कितनी बड़ी ठोस सहायता है। यह ऐसा पत्र है जिससे प्रत्येक भारतीयका हृदय नये साहस और उमंगसे भर जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७-७-१९०७

८७. श्री आदमजी मियाँखाँकी मृत्यु[1]

गुलाम हुसेन मियाँखाँ ऐंड कंपनी, डर्बनकी पेढ़ीके मालिक और नेटाल इंडियन कांग्रेसके उपसभापति श्री आदमजी मियाँखाँका, इसी महीनेकी २० तारीखको अहमदाबाद, भारतमें ४१ वर्षकी अपेक्षाकृत अल्पायुमें, देहान्त हो गया। श्री आदमजी गत फरवरीमें भारतकी यात्राको गये थे और डर्बनमें उनके भाईको उनके पत्र नियमित रूपसे मिल रहे थे। किन्तु किसी गम्भीर बीमारीकी शिकायत नहीं मिली थी। श्री आदमजीने नेटालके भारतीय समाजकी बड़ी सेवाएँ की हैं और उनकी भलाईसे सम्बन्धित सभी मामलोंमें उनकी योग्य तथा स्वेच्छाजनित सहायताकी कमी बहुत महसूस की जायेगी। गुजरातकी राजधानीमें गोटाकिनारीके व्यापारियोंके एक प्रसिद्ध घरानेमें जन्म लेकर, श्री आदमजी मियाँखाँ अपने पिता और अपने भाई श्री गुलाम हुसैनके साथ १८ वर्षकी आयुमें, सन् १८८४ में, दक्षिण आफ्रिकामें आकर बस गये थे। उनके अंग्रेजी ज्ञानने भारतीयों और अनेक यूरोपीय मित्रोंके बीच प्रसिद्धि प्राप्त करनेमें उनकी बड़ी सहायता की थी। किन्तु भारतीय सार्वजनिक मामलोंसे उनका निकट सम्पर्क १८९६ से पहले नहीं हुआ था। कांग्रेसके तत्कालीन अवैतनिक मन्त्रीके कुछ दिनोंके लिए अलग हो जानेपर श्री आदमजी, अपने कार्य और सुनहले गुणोंके कारण कांग्रेस द्वारा अवैतनिक मन्त्रीके रूपमें कार्य करनेके लिए सर्वसम्मतिसे निर्वाचित हुए। उनके इस कार्यकालमें श्री अब्दुल करीम हाजी आदम झवेरीने बड़ी योग्यतापूर्वक उनकी सहायता की। श्री आदमजीने कांग्रेसकी पूंजीको १०० पौंडसे बढ़ाकर १,१०० पौंड कर दिया और १८९६ के अन्तमें तथा १८९७ के आरम्भमें, जब प्रसिद्ध भारतीय विरोधी प्रदर्शन डर्बनमें हुआ तब श्री आदमजी अपने धैर्य, शान्ति और दृढ़तासे समाजकी गम्भीर कठिनाइयोंका सामना करनेमें सहायक हुए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७-७-१९०७

१. अगला शीर्षक भी देखिए।

८८. आदमजी मियाँखाँका शोकजनक अवसान

ईश्वरकी गति गहन है। हमारे प्रसिद्ध नेता श्री आदमजी मियाँखाँको स्वदेश गये हुए केवल पाँच ही महीने हुए हैं। इतनेमें खबर आई है कि वे पीठके फोड़ेसे २० दिन बीमार रहकर २३[1] तारीखको अचानक अहमदाबादमें चल बसे। नेटाल और दक्षिण आफ्रिकाके अन्य भागोंमें जो उनके नाम और कामसे परिचित होंगे वे इस शोक समाचारसे दुःखी हुए बिना नहीं रहेंगे। दक्षिण आफ्रिकामें ऐसा समय आता जा रहा है जब देशसेवकोंकी आवश्यकता दिनोंदिन महसूस होगी। ऐसे समयमें श्री आदमजी मियाँखाँ जैसे एक दक्ष और जीवटवाले नेताके अवसानसे जो क्षति हुई है उसकी पूर्ति करना मुश्किल है। उनका स्वदेशाभिमान और दूसरे मूल्यवान सद्गुण सर्वविदित हैं। काँग्रेसके कार्यवाहक मन्त्रीके रूपमें तथा बादके सार्वजनिक जीवनमें उन्होंने बुद्धि, शान्ति, तत्परता और आत्मबलिदान आदि सद्गुणोंका जो परिचय दिया वह सब सबक लेने योग्य है। स्वदेश लौटते समय उनके सम्मानमें किये गये समारम्भोंसे उनकी लोकप्रियता प्रकट हुई थी। दक्षिण आफ्रिकाके कष्टोंके लिए भारतमें भी आवाज उठानेका उनका इरादा था। ऐसे लोकोपकारी सज्जनकी केवल ४१ वर्षकी आयुमें मृत्यु हो जानेसे खेद होना स्वाभाविक है। हम हृदयसे चाहते हैं कि मृतात्माके परिवारको शान्ति मिले, तथा उनपर श्रद्धा रखनेवालोंसे अनुरोध है कि वे उनके विशाल सद्गुणोंका अनुकरण करें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–७–१९०७

८९. खुदाई कानून

खूनी कानूनकी ताकत देखनेका समय नजदीक आता जा रहा है। पहली अगस्तको सरकार क्या करती है, इसे देखनेके लिए सारे भारतीय चिन्तातुर रहेंगे। लेकिन वास्तवमें चिन्ताके बजाय हिम्मतके साथ बैठना चाहिए। खूनी कानूनसे बचनेके लिए दूसरे चाहे जितने दुःख भोगने पड़ें, उन्हें सुख-रूप समझना चाहिए, और हर भारतीयको यही मनाना चाहिए कि "मेरे भाइयोंका दुःख दूर करनेके लिए मुझे पहले जेल हो तो भले हो।"

खूनी कानूनके सामने न झुकनेके कारणोंकी तो हम बहुत छानबीन कर चुके हैं। खूनी कानूनका विरोध करके हम खुदाई कानूनको मानते हैं, यह समझने जैसी बात है। खूनी कानूनके सामने झुकनेमें पाप है, उसी प्रकार खुदाई कानूनको भंग करनेमें पाप है। खुदाई कानूनके सामने झुकनेवाला इस दुनियामें और दूसरी दुनियामें सुख भोगेगा। वह खुदाई कानून कौनसा है? वह है: सुख भोगनेके पहले दुःख भोगना, और चूँकि परमार्थमें स्वार्थ है इसलिए दूसरेके लिए हम आत्मबलिदान करें, दुःख उठायें। उसके थोड़े उदाहरण लें:

मिट्टी धूल बन जानेपर पानीके साथ मिलकर साग-सब्जी पैदा करती है; और साग-सब्जी अपने-आपका बलिदान करके प्राणि-मात्रका पोषण करती है; प्राणी अपना बलिदान करके

१. पिछले शीर्षकमें 'ता. २०' का उल्लेख है।

करते हुए अगस्त महीनेमें जो-कुछ हो उसे सहन करनेके लिए हमारे भाई ट्रान्सवालमें तैयार रहें, यह हम अति पवित्र मनसे ईश्वरसे माँगते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–७–१९०७

९०. अलीकी भूल

इस बार श्री रिचके पत्रके साथ श्री अलीने न्यायमूर्ति अमीर अलीके नाम जो पत्र भेजा है वह भी आया है। दोनों पत्र पढ़ने और विचार करने योग्य हैं। इन पत्रोंको प्रकाशित किया जाये या नहीं, हमारे लिए यह प्रश्न था। आखिर विचार करनेपर देखा कि देशहितके लिए हमें उन्हें प्रकाशित कर ही देना चाहिए। यह समय इतना नाजुक है कि किसी व्यक्तिके मनपर क्या असर होगा, इसकी कल्पना नहीं की जा सकती। हमें यही सोचना है कि जनसाधारणका भला किस तरीकेसे हो।

हम मानते हैं कि श्री अलीने न्यायमूर्ति अमीर अलीके नाम पत्र लिखनेमें उतावली और भूल की है। समितिकी ओरसे वह पत्र, जिसमें जेल भिजवानेवाली लड़ाई न लड़नेकी सलाह दी गई थी, क्यों आया, इसका कारण अब समझमें आ सकता है। श्री अलीके पत्रपरसे समितिने विचार किया कि हममें मतभेद है और यदि मतभेद हो तो कोई भी व्यक्ति, जिसे पूरी बात न मालूम हो, यही सलाह देगा कि हमें जेल भिजवानेवाली लड़ाई छोड़ देनी चाहिए। वास्तवमें कोई मतभेद नहीं था, तब न्यायमूर्ति अमीर अलीको वैसा पत्र लिखनेकी जरूरत नहीं थी। इसके अलावा जनरल बोथासे मिलनेके सम्बन्धमें किसीने लापरवाही नहीं की, बल्कि ब्रिटिश भारतीय संघने पूरी मेहनत की। इतना करनेपर भी जब उन महाशयने मिलनेसे इनकार कर दिया तब उनसे एक लिखित निवेदन किया गया कि भारतीय समाजको माँग स्वीकार की जानी चाहिए।

सारे भारतीय व्यापारी मुसलमान हैं और सभी फेरीवाले हिन्दू, वगैरह टीकाको हम जहरी समझते हैं। ऐसे शब्द श्री अलीकी कलमसे निकलें, इसमें हम कौमकी बेइज्जती देखते हैं। ट्रान्सवालकी लड़ाई हिन्दू और मुसलमान दोनोंके लिए एक समान है। दोनोंके हक डूबते हैं। और विचार करनेपर हम देख सकते हैं कि व्यापारियोंके बिना यह लड़ाई शोभा भी नहीं देगी। भारतीयोंके पीछे ऐसा खूनी कानून लगा हुआ है कि जितने ज्यादा इज्जतदार उतनी ही ज्यादा मुसीबतें। जिसे इज्जतकी जितनी ज्यादा परवाह है, वह कानून उसके द्वारा उतना ही ज्यादा धिक्कारा जाने योग्य है। अतः हिन्दू-मुसलमानका प्रश्न ही नहीं उठता। इतना ही नहीं, दक्षिण आफ्रिकामें दोनों धर्मोंके बीच कोई कड़ुवाहट नहीं है। कुल मिलाकर सब हिलमिलकर रहते हैं। इस स्थितिमें समितिको, जो उपर्युक्त बातें लिखी गई हैं, उनका भारतीय कौमके लिए हम बहुत ही बुरा परिणाम देखते हैं। इसलिए यह पत्र छापकर तथा उसपर यह टीका करके हम सब भारतीयोंको चेतावनी देते हैं कि जब हमारे लिए स्वतन्त्र होनेका समय आया है तब कोई यह स्वप्नमें भी खयाल न करे कि हिन्दू और मुसलमानोंके बीच फूट है या फूट डालनी है।

इस विषयकी खुली चर्चा करके हम श्री अलीका दिल दुखाना नहीं चाहते। जिनका उनसे मतभेद हो उन्हें उनपर गुस्सा करनेके बजाय उनकी भूलके लिए उनपर दया करनी चाहिए। इसका मुख्य हेतु यह समझना चाहिए कि जो व्यक्ति सार्वजनिक काममें भाग ले उसे एक प्रतिज्ञा करनी होगी कि चाहे जो हो, वह ऐसा काम तो कर ही नहीं सकता जिससे सब लोगोंका नुकसान हो। साथ ही हम श्री अलीको सलाह देते हैं वे अपनी भूल ठीक करें।

उपर्युक्त पत्रोंसे हम यह भी देख सकते हैं कि यदि श्री अलीका पत्र न जाता तो समितिकी ओरसे हमें रोका नहीं जाता। फिर भी समितिकी सलाह इस समय हमारे लिए बेकार है, यह बात हमारे लिए सदा याद रखने योग्य है। रणमें जानेवाले घरमें बैठनेवालोंकी सलाह नहीं सुन सकते। हमें अब अपने बलपर जूझना है। यदि यह कानून हमें पापस्वरूप जान पड़ता हो तो हमें समिति या दूसरे कोई भी सलाह दें, हम पाप नहीं करने लगेंगे। हमें हिसाब समितिको नहीं, खुदाको देना है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–७–१९०७

९१. केपके भारतीय

केप-संसदका नया चुनाव, सम्भव है, कुछ ही समयमें हो जायेगा। केपके काले और गेहुँए लोग अपने मताधिकारका किस प्रकार उपयोग करेंगे, इस प्रश्नकी चर्चा हो रही है। यह चर्चा सिर्फ केपमें ही नहीं, दक्षिण आफ्रिकाके दूसरे भागोंमें भी हो रही है। हमें जो-कुछ कहना है, वह विशेषकर भारतीय मतदाताओंके लिए है।

हम मानते हैं कि केपके भारतीय मतदाताओंने केप तथा अन्य जगहोंमें भारतीयोंकी स्थितिमें सुधार करनेका अवसर बहुत बार खोया है। प्रसंग आनेपर यदि मताधिकारका ठीक-सा उपयोग न किया जा सके तो वह अधिकार किसी कामका नहीं। केपके काले लोग और भारतीय लोग यदि अपने मताधिकारकी कीमत समझें तो वे आज भी कई परिवर्तन करवा सकते हैं।

इस सम्बन्धमें पहले तो इतना याद रखना जरूरी है कि काले और भारतीय लोगोंके मत हमेशा एक ही पक्षमें गिरें, ऐसा कोई नियम नहीं है। दोनोंको अलग-अलग प्रकारके हक चाहिए। दोनोंकी लड़ाई भिन्न प्रकारकी है। जैसे केपका प्रवासी कानून भारतीय समाजको रोकनेवाला है, उसका काले लोगोंपर कम प्रभाव पड़ता है; उसी प्रकार व्यापारका कानून केवल भारतीयोंपर ही असर करता है। इसके अलावा काले लोगोंकी जन्मभूमि दक्षिण आफ्रिका है, इसलिए उन्हें हमसे ज्यादा अधिकार हैं। १८५८ की घोषणाके कारण तथा भारतीयोंकी सभ्यता चूँकि बहुत पुरानी है इसलिए वे काले लोगोंकी अपेक्षा अधिक दृढ़ताके साथ अधिकार माँग सकते हैं। वैसे परस्पर लाभ दोनोंको है, इसलिए भारतीय समाज किस प्रकार मत दे, इसपर अलगसे विचार करना है।

दूसरी बात यह याद रखनी है कि मतदाता किसी एक या दूसरे पक्षको मत देनेके लिए बँधा हुआ नहीं है। कभी-कभी तो यह होता है कि मत न देकर बहुत जबरदस्त असर डाला जा सकता है। हमें मालूम है कि डर्बनके इने-गिने भारतीय मतदाताओंने एक बार मत

बिलकुल न देनेका निर्णय किया था। इसका असर इतना हुआ था कि एक बड़े अधिकारीने उन्हें बुलाकर कुछ आश्वासन दिये थे और उनका पालन भी किया गया था।

उपर्युक्त दोनों बातोंको ध्यानमें रखकर हम केपकी स्थितिपर विचार कर सकते हैं। केपमें दो दल हैं। बॉंड[1] या डच, प्रगतिशील (प्रोग्रेसिव) या ब्रिटिश और विदेशी (फॉरेन)। हमें स्वीकार करना होगा कि इन दोनों दलोंमें इस समय तो इतनी समानता है कि कठौते और कुंडेमें क्या होगी? दोनों एक ही कूचीसे रंगे गये हैं। दोनोंमें से किसीको भी काले व्यक्तिके प्रति स्नेह नहीं है। स्वर्गीय श्री रोड्सने[2] जो वचन दिया था उसपर प्रगतिशील दलने पानी फेर दिया है। हम केपके भारतीय समाजको सलाह देते हैं कि वे दोनों पक्षोंके प्रमुखोंसे लिखकर पूछें कि वे प्रवासी कानून तथा व्यापार कानूनमें अमुक परिवर्तन कर सकते हैं या नहीं। जो बेखटके और प्रामाणिकतापूर्वक साफ-साफ बात कहें, उन्हें मत दिये जायें। किन्तु यदि दोनों स्पष्ट उत्तर देनेमें आगे-पीछे देखें, व्यक्तिगत रूपमें एक बात कहें और सार्वजनिक रूपमें दूसरी, तो वैसे कपटी लोगोंको कतई बढ़ावा नहीं दिया जाये; और साफ कह दिया जाये कि ऐसी स्थितिमें भारतीय समाज किसीको भी मत नहीं देगा।

इस तरह करनेसे हमें विश्वास है कि भारतीय समाजकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी और दोनोंमें से एक दल, इस बार नहीं तो अगली बार निश्चय ही वचन देगा। हमारी केपके भारतीयोंसे प्रार्थना है कि उन्हें इस बार अपने भलेके लिए ही यह काम करना है। गोरे यदि उनके मित्र हों अथवा वे पाँच-सात भारतीयोंको कुछ अधिकार देना चाहते हैं तो उसकी वे परवाह न करें। कितना और क्या माँगा जाये, इसका विचार दूसरी बार करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–७–१९०७

९२. धर्मपर हमला

पाठशालाओंमें हमें सिखाया जाता है कि अंग्रेजी राज्यमें:

> जहर चला गया, वैर चला गया और काला कहर भी चला गया। दूसरी जातिके लोग देशकी जातियोंसे मेलजोल करके इस संसारमें चल रहे हैं। देख लो, रास्ते चलती हुई बेचारी बकरीका भी कोई कान नहीं पकड़ता। हे भारत, यह ईश्वरका उपकार मानकर अब तू खुशी मना।[3]

परन्तु अब इस कविताको निम्न प्रकार बदलकर गाना चाहिए या गा सकते हैं:

> विषोंकी भरमार हो गई है और वैर बढ़ता ही चला जा रहा है; दूसरी जातिके लोग देशके लोगोंसे संसारमें दुश्मनी करते चल रहे हैं। देख लो, कोई भी

१. ऐफ्रिकॉंडर बॉंड।
२. (१८५३–१९०२), केप कालोनीके प्रधान मंत्री, १८९०–९६।
३. झेर गयां ने वेर गयां, वळी कालंकेर गया करतार;
पर नातीला जातीला थी, संप करी चाले संसार।
देख बिचारी बकरीनो पण, कोई न जाता पकड़े कान;
ऐ उपकार गणी ईश्वरनो पण, हरख हवे तुं हिन्दुस्तान।

९३. ईस्ट लन्दनको चेतावनी

ईस्ट लन्दनके भारतीय एक शिष्टमण्डल केप ले गये थे। उसके कामके सम्बन्धमें विलायतके अखबारोंमें तार छपा है। उसमें यह कहा गया है कि 'कुली भारतीयों' के नियन्त्रणके लिए कानून बनाये जाने चाहिए, इस बातको भारतीय समाज स्वीकार करता है। किन्तु वह इज्जतदार भारतीयोंके लिए छूटके विशेष कानूनकी माँग करता है। उसमें यह भी कहा गया है कि जैसे काफिरोंको छूटके पत्र मिलते हैं वैसे कुछ भारतीयोंको भी दिये जायें।

हम नहीं मानते कि ईस्ट लन्दनके भारतीयोंने ऐसी कोई माँग की होगी। हमारे दुश्मन तो ऐसी भूलकी प्रतीक्षामें ही बैठे हुए हैं। क्योंकि हम यदि ऐसा भेदभावपूर्ण कानून माँग लें तो वह तो अपने हाथों अपने पैरोंपर कुल्हाड़ी मारनेके समान होगा। अच्छे और बुरे लोगोंके बीच दुनियामें सदा ही अन्तर रहा है, और रहेगा। किन्तु अच्छे कौन और बुरे कौन, नीच कौन और ऊँच कौन, यह मर्यादा कानून नहीं बाँध सकता। आज जो फेरी लगाता होगा वह कल व्यापारी बन सकता है। व्यापारी गरीब बन सकता है और नौकरी कर सकता है। यह होता ही रहता है। इसमें 'कुली' कौन कहलायेगा? भेद कैसे रह सकता है? ऐसे भेद कौन कर सकता है? गोरे अधिकारीके हाथसे ऊँच या नीचका टीका लगवाने कौन जायेगा? हमें निश्चित मालूम होता है कि कानून भेद बरतकर कुछ भारतीयोंको छूटके पत्र नहीं दे सकता। वैसा करना अपने हाथों गुलामीको निमन्त्रण देनेके समान होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–७–१९०७

९४. रूसका उदाहरण

हमारे पाठकोंको मालूम है कि रूसके ज़ारने ड्यूमा,[1] यानी संसद, की स्थापना की है। अंग्रेजी अखबारोंमें अभी यह खबर प्रकाशित हुई है कि ड्यूमाके बहुतेरे सदस्य देशहितके लिए कैद अथवा निर्वासन भोग चुके हैं। इसलिए इस संसदका प्यारका नाम 'कैदियोंकी सभा' भी है। ड्यूमाके सदस्योंके चुनावमें लोगोंने जेलसे लौटे हुए लोगोंको ज्यादा पसन्द किया। ये कोई बिना पढ़े-लिखे या ग्रामीण नहीं, बल्कि विद्वान लोग हैं। कोई-कोई बड़े वकील और चिकित्सक हैं। उनमें एक श्री गोबरनाफ़ नामक सदस्य हैं। उन्हें मौत तक की सजा हुई थी। श्री सिम्बसंकको अनेक वर्षोंके लिए साइबेरियामें निर्वासित कर दिया गया था। ऐसे लोगोंके चुने जानेसे रूसके शासक बहुत बार नाराज होते हैं। किन्तु सदस्य

१. इसकी स्थापना १९०५ में की गई थी। इसके सदस्य सीमित मताधिकारके आधारपर चुने गये थे। १९१७ में इसे तोड़ दिया गया था।

तथा उनके निर्वासित इसकी परवाह नहीं करते। डीमिट्रिअस पर्लेशिन नामक एक सदस्य सरदार घरानेके हैं। उन्होंने दो वर्ष जेलकी सजा भोगी है। ऐसे हम अनेक नाम दे सकते हैं। किन्तु पाठकोंके लिए उपर्युक्त नाम काफी हैं। इतना और याद रखना है कि रूसकी जेलें सचमुचमें कारागृह हैं। उनमें कोई सुविधा नहीं होती। इसके अलावा रूसमें सर्दी बहुत ही सख्त होती है। जेलर बड़े दुष्ट होते हैं। किन्तु ये बहादुर लोग जनताकी भलाईके लिए सब कष्ट सहते हैं। सर्दी-गर्मीकी परवाह नहीं करते। उनके सम्राट् खुश होंगे या नाराज, इसकी परवाह नहीं करते। किन्तु जिसमें उन्हें अपने देशका कल्याण दिखाई देता है उसे बेधड़क किये जाते हैं। इतना होनेपर भी रूसी लोगोंको स्वतन्त्रता नहीं मिली, इससे वे घबराते नहीं हैं। अपना कर्तव्य पूरा करते जा रहे हैं; और वह भी इस भावनासे कि आखिर वे नहीं भोग सके तो उनके बादमें आनेवाली पीढ़ी उनके कष्टोंके लाभ भोगेगी और रूस स्वतन्त्र होगा।

ऐसे बलवान स्वदेशाभिमानी पुरुषोंके उदाहरण सामने रखकर, खुदाकी ओर मुंह करके उनके नामको निरन्तर अपने मनमें स्मरण करते हुए, ट्रान्सवालके भारतीय खूनी कानून-रूपी वैतरणीको पार कर जायेंगे, यह हमारी कामना है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७-७-१९०७

९५. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

खूनी कानून

इस अंकके प्रकाशित होते समय जुलाईके चार दिन बाकी रहेंगे। इसके बादके अंकके लिए इस आशयके तार फीनिक्स भेजनेकी आशा करता हूँ कि नये पंजीयनपत्र न लेनेके कारण सरकारने भारतीयोंको पकड़ना शुरू कर दिया है। किन्तु यह मानना गलत न होगा कि जैसे मैं आशा कर रहा हूँ वैसे कुछ लोग डर भी रहे होंगे।

प्रिटोरियासे प्रार्थना

इस बीच प्रिटोरियाके भाइयोंसे मैं विनती करता हूँ कि अबतक आपने अपनी और भारतीय कौमकी इज्जत रखी है, ऐसे ही अन्ततक रखिए। मुझे विश्वास है कि प्रिटोरियामें एक भी ऐसा भारतीय नहीं निकलेगा जो आखिरी दिन अनुमतिपत्र-कार्यालय रूपी नरकसे कलंकित होकर आयेगा। वहाँ कलंकके सिवा और कुछ नहीं मिलना है। इसे ठीक मानकर मैं समझता हूँ कि कोई वहाँ स्वप्न में भी जानेका विचार नहीं करेगा।

आगे क्या होगा?

इस प्रश्नका मैं भिन्न-भिन्न अवसरोंपर उत्तर दे चुका हूँ। किन्तु फिर भी देना ठीक समझता हूँ। जुलाईमें जो बहादुरी दिखाई गई वह एक प्रकारकी है। अगस्तकी बहादुरी दूसरे प्रकारकी है। जुलाईमें हमें घर सँभालकर बैठनेकी हिम्मत दिखानी थी। अगस्तमें हमें पकड़कर जब न्यायाधीशके पास ले जायेंगे तब हिम्मतसे जवाब देना है। अदालतका

नाम आते ही हम डरते हैं। हमें अदालतमें खड़ा किया जायेगा तब क्या होगा? उस समय हिम्मत रखना अधिक मुश्किल है, फिर भी बिलकुल आवश्यक है।

पुलिस पकड़ेगी

पहले तो पहली अगस्तको किसी एकको अथवा सभी भारतीयोंको नये पंजीयनके लिए अर्जी न देनेके अपराधमें गिरफ्तार कर सकते हैं, तभी अपनी टेकका पता चल जायेगा।

जमानत न दी जाये

इस बार सभी भारतीयोंको याद रखना है कि गिरफ्तार किये जानेवालोंको जमानत देकर नहीं छूटना है, न किसीको छुड़वाना है। जेल-महलकी तालीम यहींसे शुरू होगी। पकड़े गये भारतीयको उसी दिन या दूसरे दिन मजिस्ट्रेटके पास ले जाया जायेगा।

बचावका प्रश्न

सम्भावना यह है कि पंजीयनकी अर्जी न देनेके सम्बन्धमें उसपर मुकदमा चलाया जायेगा। उस वक्त यदि वह व्यक्ति सच्चा अनुमतिपत्रवाला होगा या लड़का होगा, जिसे अनुमतिपत्रकी जरूरत नहीं होती, तो ऐसे व्यक्तिका श्री गांधी बिना शुल्कके बचाव करेंगे। वे तथा श्री ईसप मियाँ बयान देंगे कि भारतीय कौम शपथ और प्रस्तावके कारण नये कानूनके सामने न झुकनेके लिए बँधी हुई है। अभियुक्तने वह प्रस्ताव स्वीकार किया है। और यदि किसीको सजा दी जानी चाहिए तो वह पहले संघके पदाधिकारियोंको दी जानी चाहिए। बादमें यदि अभियुक्तके लिए बयान देना आवश्यक हुआ तो उसे कहना है कि नया पंजीयन करवानेका उसका इरादा नहीं है, वह सिर्फ इसलिए नहीं कि उसे कौमके प्रस्तावका आदर करना है, बल्कि इसलिए कि उसे खुदको कानून पसन्द नहीं है और इसलिए नया पंजीयनपत्र लेनेका इरादा नहीं है, किन्तु यदि सरकार जेल भेजेगी तो वह जेल जायेगा। जुर्माना भी वह नहीं देगा।

बचावका नतीजा

उपर्युक्त बचाव किया जानेके कारण शायद ईसप मियाँ तथा श्री गांधीको पहले पकड़ा जाये और अभियुक्त छूट जाये। किन्तु यदि ऐसा न हो तो अदालत निश्चय ही अभियुक्तको सजा देगी। अदालतको जुर्माना करनेका अधिकार है। अतः शायद वह जुर्माना करे, और जुर्माना न देनेपर वह जेलमें भेजा जाये।

जुर्माना न दिया जाये

यह बिलकुल याद रखना चाहिए कि इस बार जुर्माना न देकर जेल जाना है। मेरी सलाह है कि कोई भी भारतीय पहली अगस्तसे अपनी जेबमें, जहाँतक सम्भव हो, पैसे न रखे और सोना तो कभी न रखे। लालच बुरी चीज है। जेलकी आदत न होनेके कारण जुर्मानेकी आवाज सुनकर अभियुक्तके हाथ अनजाने जेबमें चले जायेंगे और उसकी नजर अपने दोस्तोंपर पड़ेगी। ऐसा हो तब भारतीयको मनमें तत्काल खुदासे माफी माँगकर सावधान हो जाना चाहिए और जेबमें से हाथ निकालकर गला साफ करके कहना चाहिए कि मुझे जुर्माना नहीं देना है। मैं कारावास भोगूँगा। साथमें यह भी याद रखा जाये कि विलायतकी

बूढ़ी और जवान औरतोंने आधे क्राउनका[1] जुर्माना देनेसे इनकार करके अधिकारके लिए कारावास पसन्द किया है।

दूसरे क्या करें?

हम सामान्यतः मान लें कि सारे भारतीयोंको एक साथ तो पकड़ा ही नहीं जायेगा। अतः जेलके बाहर रहनेवाले क्या करें? इसका उत्तर सरल है। जो भाई हिम्मत करके जेल गया है उसे बधाई दें, उसके सगे-सम्बन्धियोंकी मदद करें और स्वयं डरकर पंजीयन लेनेके लिए जानेके बजाय यह प्रार्थना करें कि दूसरी बार जेल जानेका सौभाग्य उन्हें प्राप्त हो।

श्री गांधीको ही पहले पकड़ा जाये तो?

ऐसा हो तो बचाव करनेका कोई काम नहीं रहता। उनपर मुकदमा चलेगा तब साफ हो जायेगा। और यदि उनके जेल जानेके बाद अथवा निर्वासित किये जानेके बाद भारतीय समाज कानूनका विरोध करनेवाले प्रस्तावपर डटा रहेगा तो तुरन्त ही नतीजा सामने आयेगा। चाहे जिस व्यक्तिको जेल हो, चाहे जिसका निर्वासन हो, भारतीय समाज दृढ़ बना रहेगा तभी आजतक की लड़ाईकी शान रहेगी।

यदि पंजीयन पत्र लिये गये तो?

किन्तु यदि भारतीय समाज डरकर पंजीयन-पत्र ले लेगा अथवा जुर्माना देकर जेलसे बच जायेगा तो आजतक की लड़ाईपर पानी फिर जायेगा। यह निश्चय हो जायेगा कि हमारा साहस मिथ्या था। और माना जायेगा कि नेता लोग केवल भड़कानेका काम करते थे। आजतक जो चमक-दमक दिखाई दे रही थी वह ऊपरी कलई थी। वह कलई खुल जायेगी और जाहिर हो जायेगा कि हम सच्चा सोना नहीं, बल्कि तांबा हैं और हमारी कीमत पाईके बराबर हो जायेगी।

सरकारके दूसरे हथियार

मैं ऊपर कह चुका हूँ कि सरकार यह इलजाम लगानेके बजाय कि नये पंजीयनके लिए अर्जी नहीं दी, दूसरे कदम भी उठा सकती है। जैसे मौजूदा अनुमतिपत्र व पंजीयनपत्र तो सबके रद हो गये हैं। इसलिए उनपर बिना अनुमतिपत्रके रहनेका आरोप लगाया जा सकता है। यदि यह आरोप लगाया जाये तो, जैसा मैंने पहलेके पत्रोंमें कहा है, पहला मुकदमा चलते समय अभियुक्तको अमुक समयमें देश छोड़नेकी सूचना मिलेगी। उस अवधिमें यदि देश न छोड़े तो उसे कमसे-कम एक महीनेकी सजा हो सकती है। इस प्रकार मुकदमा चले तब भी बचाव तो ऊपर लिखे अनुसार ही किया जायेगा। ऐसे मुकदमेकी सूचना मिलनेपर किसीको चले नहीं जाना है, बल्कि सूचनाकी अवधि पूरी करके गिरफ्तार होकर जेल जाना है।

क्या व्यापारी डरें?

इसमें बड़े व्यापारियोंको डरना नहीं है। एक ही दूकानके सभी व्यक्तियोंका एक साथ पकड़ा जाना सम्भव नहीं है। दूकानें लुटवा दी जायें सो भी नहीं होगा। अधिकसे-

१. ढाई शिलिंग।

अधिक नुकसान यही होगा कि कुछ दिन दूकान वन्द रहेगी। इसके अलावा और कुछ भी होना सम्भव नहीं। किन्तु सब व्यापारी अपना स्टॉक वगैरह ले रखें, इसमें वुद्धिमानी मानी जायेगी। इसका उद्देश्य केवल इतना ही कि लेनदार व्यापारी अधीर हो तो उनका हिसाव तुरन्त साफ किया जा सके।

मण्डलोंका कर्तव्य

इस वार ट्रान्सवाल तथा ट्रान्सवालके वाहरके मण्डल, जैसे संघ, कांग्रेस, वगैरहका कर्तव्य है कि सार्वजनिक तौरसे फिरसे सहानुभूतिके प्रस्ताव पास करें, गिरफ्तारशुदा व्यक्तिके पीछे रहनेवाले लोगोंकी सार-सँभाल करनके लिए पैसे भेजें, और देश-परदेशमें यथासम्भव इस आन्दोलनकी चर्चा करें।

'संडे टाइम्स' का प्रश्न

'संडे टाइम्स' के सम्पादकने कानूनपर टीका करते हुए पूछा है कि जिन लोगोंने अगस्त महीनेमें नया पंजीयनपत्र न लिया हो उन्हें जेलमें वन्द करनेके लिए सरकार क्या व्यवस्था करना चाहती है? क्या नये जेलखाने वनायेगी? यह प्रश्न मजाकके रूपमें पूछा गया है। किन्तु इससे यह भी प्रकट होता है कि वे भारतीय समाजके आन्दोलनसे घवड़ा रहे हैं।

मिडेलवर्गके भारतीय

मिडेलवर्गकी भारतीय वस्तीको वहाँकी नगर-परिपदने फिरसे निकालनेका प्रस्ताव किया है। उसका यह इरादा है कि किसी एक भारतीयपर मुकदमा चलाकर देख लिया जाये कि नगर-परिषदको अधिकार है या नहीं।

चेतावनी

कुछ भारतीयोंके मनमें यह विचार है कि यदि एक भी भारतीय नया अनुमतिपत्र ले ले तो फिर दूसरेका रुकना कठिन है। ऐसे सोचनेवाले, साफ है, लड़ाईको नहीं समझते। एक आदमी कुएँमें गिरेगा या वुरा काम करेगा तो क्या उसके पीछे सारा समाज कुएँमें जा गिरेगा या वुरा काम करने लगेगा? यदि ऐसा नहीं करेगा तो फिर नया कानून, जोकि वुरा है, भौंडा है, कुएँसे ज्यादा भयानक है, उसमें कैसे गिरा जा सकता है? इसके अलावा, यह मान लेना कि एक भी भारतीय गुलाम नहीं वनेगा, वहुत ही ज्यादा अपेक्षा रखना है। यदि भारतीय समाजमें इतना जोश हो तो आज दक्षिण आफ्रिकामें या दूसरी किसी भी जगह उसका हलका दर्जा क्यों होगा? इतना याद रखना चाहिए कि इस लड़ाईमें हर भारतीयको अपनी स्वतन्त्र वुद्धिका उपयोग करना है। एक-दूसरेके मुँहकी ओर नहीं देखना है। नया पंजीयनपत्र कोई लड्डू नहीं है जिसे यदि एक छू ले तो दूसरे उसपर टूट पड़ें। जवतक इस वातका ध्यान नहीं रखा जाता तवतक हमारी जीत कभी नहीं होगी। इसे अच्छी तरह लिख लें। मैं तो यह सलाह देता हूँ कि यदि कोई भारतीय अपनी नामर्दी या कमजोरी या अज्ञानके कारण नया पंजीयनपत्र विना लिये न रह सके तो उसे अपनी उस कमजोरीको मंजूर करना चाहिए और दूसरेको वैसा न करनेकी सलाह देनी चाहिए तभी ठीक माना जायेगा।

प्रिटोरियाकी सभा

प्रिटोरियामें मंगलवार शामको विशेष सभा की गई थी। उसमें श्री रूज़ वकील भी हाजिर थे। उन्होंने कहा कि जनरल स्मट्स यह जाननेके लिए आतुर हैं कि उनके पत्रका क्या असर पड़ा। उन्हें वहम है कि भारतीय नेता जनरल स्मट्सके पत्र जाहिर नहीं करते। इसलिए सभाकी क्या राय है, यह जाहिर हो तो अच्छा। श्री गांधीने श्री रूज़को 'इंडियन ओपिनियन' देकर बताया कि जनरल स्मट्सके पत्रका अर्थ प्रत्येक भारतीयके सामने पेश किया जा चुका है। वह श्री रूज़ने श्री स्मट्सको बतानेके लिए कहा। इस सभामें श्री गांधीके अलावा जोहानिसबर्गसे श्री ईसप मियाँ और श्री उमरजी सालेजी आये थे।

श्री गांधीने श्री स्मट्सके पत्रका अनुवाद करके सुनाया और सभाको सलाह दी कि कोई भी व्यक्ति नये कानूनके सामने हरगिज न झुके।

श्री हाजी हबीबने यह प्रस्ताव किया कि यदि जनरल स्मट्स श्री रूज़के पत्रमें व्यक्त की गई माँगको स्वीकार नहीं करेंगे तो नया कानून कभी नहीं माना जायेगा। इसके अलावा उन्होंने जनरल स्मट्सके साथका पत्र-व्यवहार प्रकाशित करनेकी सूचना दी। श्री हाजी हबीबके प्रस्तावका श्री रूज़ने समर्थन किया। श्री अयूब बेग मुहम्मद तथा श्री उमरजीने भी समर्थन किया। श्री रूज़ने भाषण देते हुए बताया कि कानून स्वीकार किया जाना चाहिए और फिर जो माँग करनी हो वह कायदेसे करनी चाहिए। इतना होनेपर भी श्री हाजी हबीबका प्रस्ताव सर्वानुमतिसे पास हुआ।

सभाने इतना जोर दिखाया है। फिर भी दिन जैसे-जैसे नजदीक आता जा रहा है, वैसे-वैसे स्थिति जरा गम्भीर होती जा रही है। अन्ततक सारा समाज सावधान रहेगा या नहीं, इस सम्बन्धमें तर्क-वितर्क होता रहता है।

इस समय सब भारतीयोंको एक बात याद रखनी है कि चाहे जितने लोग नया अनुमतिपत्र लें, जिनमें हिम्मत है वे तो कभी न लें।

स्मट्सका इरादा

श्री स्मट्सने उत्तरमें कहा है कि तटवर्ती अनुमतिपत्र कार्यालयकी जरूरत है। इतने दिन तक अंग्रेज सरकार हस्तक्षेप करती थी इसलिए पुराने डच कानूनोंपर अमल नहीं होता था। अब अंग्रेज सरकार हस्तक्षेप नहीं कर सकती। अतः जो 'कुली' एक दफा बाहर जायेगा वह वापस न आ सके, इसके लिए तटवर्ती कार्यालयकी जरूरत है। इस तरहके जवाब होते हुए भी भारतीय समाज नये कानूनको स्वीकार करता है, तो उससे बुरा और क्या होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७-७-१९०७

९६. पत्र : उपनिवेश-सचिवको[1]

प्रिटोरिया
जुलाई २७, १९०७

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
प्रिटोरिया

महोदय,

मेरी समितिको यह जानकर खेद हुआ है कि सरकारी कर्मचारी एशियाइयोंके पंजीयनके आवेदनपत्र बहुत रातमें और व्यक्तिगत दूकानों या दूसरी जगहोंपर ले रहे हैं। मेरी समितिको यह भी पता चला है कि यह तरीका सरकारको दी गई इस आशयकी दर्खास्तोंकी बिनापर अख्तियार किया गया है कि जो ब्रिटिश भारतीय अधिनियमके अन्तर्गत आवेदन देना चाहते हैं उनको मारपीट आदिकी धमकी दी जाती है।

मेरी समिति जहाँतक जानती है, समाजके किसी भी उत्तरदायी सदस्यने ऐसी कोई धमकी नहीं दी है। समितिकी कार्रवाई अधिनियमकी धाराओंको स्वीकार करनेमें जो अप्रतिष्ठा और हानि है उसको बताकर जोरदार प्रचार करने तक ही सीमित है।

यह स्वीकार किया जायेगा कि स्वयंसेवकोंने सेवाव्रत ही निभाया है। मेरी समितिने खुल्लमखुल्ला और जोरदार शब्दोंमें ब्रिटिश भारतीयोंको सूचित कर दिया है कि अगर कोई सदस्य आवेदन देना चाहे तो उसे किसी प्रकारकी हानि न पहुँचाई जायेगी, बल्कि यदि वह चाहेगा तो, पंजीयन कार्यालय तक सुरक्षित पहुँचा दिया जायेगा।

समितिकी विनम्र रायमें, उन भारतीयोंने, जिन्होंने गुप्त रूपसे और रातमें आवेदन दिये हैं, ऐसा इसलिए किया है कि जिस बातको, समाजके दूसरे सदस्योंके साथ-साथ, उन्होंने भी अपने सम्मानके विरुद्ध माना है, उसको वे दूसरे ब्रिटिश भारतीयोंसे छिपा सकें।

मेरी समितिकी विनम्र रायमें, दफ्तरके वक्तके बाद और निजी दूकानोंमें गुप्त रूपसे पंजीयन कराना, यदि गैरकानूनी न भी हो, तो भी, गौरवास्पद नहीं माना जा सकता। कुछ भी हो, मेरी समिति सरकारको सादर आश्वासन देती है कि भारतीय समाज जिस संघर्षको अपने जीवन और मृत्युका संघर्ष मानता है, उसमें डराने-धमकानेका या ऐसे उपायोंका, जो किसी भी तरह निन्दनीय माने जायें, आश्रय लेनेका कोई विचार नहीं रखता।

आपका, आदि,
हाजी हबीब
अवैतनिक मन्त्री,
ब्रिटिश भारतीय समिति

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ३–८–१९०७

१. इसे अनुमानतः गांधीजीने तैयार किया था।

९७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

[जुलाई २९, १९०७]

नया कानून : घोर विश्वासघात

मुझे लगता है कि जितने खेदके साथ मैं यह चिट्ठी लिख रहा हूँ, उतने खेदसे मैंने शायद ही कोई चिट्ठी लिखी हो। मैं जो खबर देनवाला हूँ वह दूँ या नहीं, यह भी विचारणीय प्रश्न बन गया है। फिर भी मैं समझता हूँ कि, यदि हमें सत्यकी रक्षा करनी हो और बहादुर बनना हो तो प्रिटोरियाके भारतीय समाजमें जो एक घटना हो गई है उसका लेखा मुझे लेना ही होगा।

जुलाईका अन्तिम सप्ताह दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय समाजको बहुत याद रहेगा। जहाँ यह आशा थी कि हमारे जीतनेका समय साफ आ गया है, वहाँ भारतीय समाजके साथ विश्वासघात हुआ है और यह प्रश्न खड़ा हो गया है कि जीत होगी भी या नहीं। बुधवार तारीख २४को रातको १० बजेके बाद प्रिटोरिया स्टेशनपर अनायास इस धोखेकी खबर मिली। श्री गांधी आनेवाले थे और उन्हें मिलनेके लिए श्री काछलिया, श्री व्यास, श्री बेग और दूसरे भारतीय हाजिर थे। उन्हें पता लगा कि श्री खमीसाकी दूकानमें कुछ गड़बड़ी हो रही है। उसमें गोरे हैं, और दूकानके पास खुफिया पुलिस है। यह खबर पाते ही उपर्युक्त सज्जनोंने सोचा कि श्री खमीसाकी दूकानका दरवाजा खटखटाया जाये और यदि दरवाजा खुले और वहाँ नये कानूनके सामने झुकनेकी कोई कार्रवाई हो रही हो तो उन्हें समझाया जाये। श्री गांधीने दरवाजा खटखटाया। श्री व्यासने भी खटखटाया। एक व्यक्तिने आकर पूछा कौन है? श्री गांधीने जवाब दिया और अन्दर आनेकी इजाजत माँगी। दरवाजा किसीने नहीं खोला। इस बीच खुफिया पुलिसका एक आदमी आया और उसने कुछ पूछताछ शुरू की। श्री बेगने आवेशसे जवाब दिया। फिर श्री गांधीने उससे बात की। इसपर उसने कहा: "आप कानून जानते हैं। जो ठीक हो वह कीजियेगा।" यों कहकर वह चला गया। कुछ मिनट बाद वह और दूसरे दो अधिकारी आये। इस बीच श्री व्यास श्री हबीबको लेने गये थे। खुफियाने उपर्युक्त लोगोंमें से प्रत्येकपर हाथ रखकर वहाँसे रास्ता नापनेको कहा। सब चले गये। सब समझ गये, श्री खमीसाकी दूकानमें जरूर कुछ दगा शुरू हुआ है।

सारी रात बहुतेरे भारतीय जागते रहे। गुरुवारको सवेरे सारे भारतीय समाजमें खल-बली मच गई। गाँव-गाँव पत्र और तार भेजे गये। कहा जाता है कि श्री खमीसाकी दूकानमें आधी रातको करीब बीस व्यक्तियोंने अपने हाथ और मुँह काले करके भारतीय समाजको बट्टा लगाया है।

इसमें दोष किसका?

यह प्रश्न सब भारतीयोंके मनमें उठेगा। मैं स्वयं मानता हूँ कि जिन्होंने पंजीयनके लिए अर्जी दी है, उन्हें हम निर्दोष नहीं कह सकते। नया कानून अच्छा है और उसके

सामने झुकनेमें जरा भी अपमान नहीं है यह समझकर यदि वे खुले *आम गुलामीका* पट्टा लेनेके लिए अर्जी देने जाते तो उन्हें कुछ भी नहीं कहा जा सकता था। किन्तु उन्होंने बहुत ही लज्जाजनक काम करनेकी बात सोची और इसीलिए चोरीसे रातको अनुमतिपत्र लेना चाहा। इससे सिद्ध होता है कि उन्हें अपने अपराधका पता था और इसलिए वे भारतीय समाजके प्रति अपराधी हैं। किन्तु जैसे उपर्युक्त भारतीय दोषी हैं वैसे ही और उससे भी ज्यादा दोषी अधिकारियोंको माना जा सकता है। लोगोंकी दूकानोंमें जाकर रातको चोरीसे अर्जी लेनेसे सिद्ध होता है कि वे लोगोंको नये कानूनके सामने झुकानेकी बहुत कोशिश कर रहे हैं। और यदि लोग न झुके, तो उन्हें डर है कि उनकी स्थितिको धक्का पहुँचेगा। यदि सरकार इस हद तक गिरती है और उससे यदि लोग लालचमें फँसते हैं तो उसमें आश्चर्य ही कौनसा?

जलेपर नमक

इस प्रकार चोरीसे पंजीयन करनेका कारण यह बताया गया मालूम होता है कि भारतीय समितिने धमकी दी है कि जो लोग नये पंजीयन-पत्र लेंगे उन्हें नुकसान पहुँचाया जायेगा। यह इल्जाम सरासर झूठ है। दगाबाज लोगोंने पंजीयन-पत्र लेनेके साथ ही अपनी निर्लज्जता ढाँकनेके लिए सारे समाजपर यह गलत आरोप लगाया है, और असत्य गढ़ा है।

हाजी हबीबका पत्र

यह इल्जाम सहन करके बैठा नहीं जा सकता, इसलिए श्री हाजी हबीबने उपनिवेश-सचिवके नाम निम्नानुसार पत्र लिखा है[1]:

किन्तु बुरेमें से अच्छा

इस प्रकार विश्वासघात हुआ है फिर भी चूँकि भारतीय समाजकी लड़ाई सच्ची है, इसलिए जान पड़ता है कि उससे भला ही हुआ है। चोरीसे अनुमतिपत्र लेनेमें निर्दोष भावनासे जानेवाले एक अब्दुल करीम जमाल नामक भारतीय भी थे। उन्होंने भय तथा प्रलोभनके वशमें अनुमतिपत्रकी अर्जी दी थी। किन्तु चूँकि वे दगाबाज दलमें नहीं थे इसलिए उन्हें अर्जीमें झूठे तथ्य देनेके अपराधमें पकड़ लिया गया है। उन्हें १०० पौंडकी जमानतपर छोड़ा गया है। उनपर मुकदमा चलेगा। इससे सारा प्रिटोरिया आतंकित हो गया है। भारतीय समझ गये हैं कि नये कानूनके अन्तर्गत अनुमतिपत्रके लिए अर्जी देनेसे केवल यही डर नहीं है कि अनुमतिपत्र नहीं मिलेगा, बल्कि सच्चे कैदीकी जेल भोगनेका भी समय आ सकता है। श्री अब्दुल करीम जमालने अपराध किया या नहीं, यह बात अलग है। किन्तु इतना तो साफ है कि निरपराध लोगोंको घसीटनेमें भी देर नहीं लगेगी। यह कानून इतना भयंकर है। और इस कानूनसे मुक्त रहनेमें ही प्रतिष्ठा और सुरक्षा है। यह मामला सबके लिए चेतावनी स्वरूप है। गुलामीका पट्टा लेनेके बाद भी कोई ट्रान्सवालमें रह ही सकेगा इस सम्बन्धमें कोई विश्वास नहीं दिला सकता।

१. इसके नीचे पत्रका पाठ दिया गया है, देखिये पिछला शीर्षक।

"दया धर्मको मूल है"

इस प्रसिद्ध दोहेकी याद करके उन लोगोंके साथ दया वरतनी चाहिए जिन्होंने भारतीय समाजके साथ विश्वासघात किया है। हमारे मनमें रोष आना स्वाभाविक है। किन्तु उस रोषको दवाकर हमें यही समझना चाहिए कि उन्होंने अज्ञानवश काला दाग लगाया है। इसके अलावा हमें यह भी याद रखना है कि इस लड़ाईमें हमने किसी भी भारतीयपर हाथ उठाया अथवा किसीको नुकसान पहुँचाया तो उससे सारी लड़ाईको धक्का पहुँचेगा। इस विचारके सिलसिलेमें मुझे खेदपूर्वक वतलाना होगा कि श्री खमीसाने अपने प्रत्येक भारतीय देनदारके नाम सन्देश भेजा है कि यदि वह सोमवारको सवेरे गुलामीके नये पट्टेके लिए अर्जी न दे तो उसपर जो रकम निकलती हो वह चुका दे। नहीं तो उसपर तत्काल समन्स जारी किया जायेगा। इससे खलवली मच गई है। किन्तु श्री ईसप मियाँ, श्री अस्वात, तथा श्री उमरजीने श्री खमीसाको समझाया, इसलिए उन्होंने अपनी सूचना वापस लेना स्वीकार कर लिया है।

सहानुभूतिके तारोंकी वर्षा

प्रिटोरियामें प्रमुख भारतीयोंके नाम तार आया ही करते हैं। कोई-कोई विश्वासघातकी सख्त टीका करते हैं। श्री पारसी रुस्तमजी तथा डर्वनके स्वयंसेवकोंने हर स्वयंसेवकको वधाईके तार भेजे हैं। नाइयोंकी ओरसे नाइयोंके नाम दृढ़ रहनेके लिए तार आये हैं। उसी प्रकार वलेर, टौंगाट, डेलागोआ-वे, डंडी, लेडीस्मिथ, एस्टकोर्ट, केप टाउन आदि विभिन्न स्थानों और विभिन्न व्यक्तियोंकी ओरसे तार आते ही रहते हैं।

आज सोमवारकी शाम तक किसी भी भारतीयने अनुमतिपत्र कार्यालयसे अनुमतिपत्र नहीं लिया।

हमीदिया सभा

जोहानिसवर्गकी हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके सभाभवनमें रविवारको एक भारी सभा हुई थी। उसमें वहुत उत्साह दिखाया गया था। श्री पोलकने सारी वातें समझाईं। इमाम अब्दुल कादिर वावजीर सभापति थे। मौलवी हाजी अब्दुल मुख्तारने एक लम्वा और प्रभावशाली भाषण दिया। उपर्युक्त सभामें पंजीयनपत्र लेनेवालोंके कामको दगावाजी और फन्देवाजी कहकर उसकी वहुत ही छीछालेदर की गई। श्री पोलकने वताया कि सम्भव है अव जोहानिसवर्गकी वारी आयेगी, इसलिए हमें स्वयंसेवक नियुक्त कर देना चाहिए। फलतः कौन-कौन लोग स्वयंसेवक वननेको तैयार हैं, यह पूछा गया। इसपर नवावखान जमालदार सवसे पहले आगे आये और उन्होंने जोशीला भाषण दिया। वादमें निम्नलिखित नाम दिये गये :

मुहम्मद हुसैन, मीर अफजुलखान कावुली, नुरुद्दीन, इमामुद्दीन, जामाशाह, साहेवदीन, मूसा मुहम्मद, अलीभाई मुहम्मद, ईसप दासू, अलीभाई इस्माइल, उमर हसन, मूसा आनन्दजी, रामलगन, अली उमर, इस्माइल मुहम्मदशाह, मुहम्मद इस्माइल, सुलेमान आमद सूरती। इतने नाम आ जानेके वाद यह घोषित किया गया कि और नाम नहीं चाहिए। सभामें वहुत उत्साह था।

मद्रासियोंकी सभा

मद्रासियोंने उसी दिन शामको सभा की। उन्हें भी श्री पोलकने ठीक तरहसे समझाया। लोगोंमें बहुत उत्साह और जोश है। सब यही कहते हैं कि दूसरे लोग कुछ भी करें, वे स्वयं तो नये पंजीयनपत्र लेकर कलंक लगाना कभी स्वीकार नहीं करेंगे। स्वयंसेवकोंके रूपमें सभामें श्री पी० के० नायडू, डब्ल्यू० जे० आर० नायडू, एस० मैथ्यूज, एस० लिंगम्, डी० एन० नायडू, एस० कुमार स्वामी, एस० वीरासामी, तम्बी नायडू, एस० पी० पडियाची, आर० के नायडू, आर० दण्डपाणि, के० के० सामी, के० एन० दादलानी, जे० के० देसाई, वगैरह आगे आये थे।

डर्बनसे आनेवालोंको चेतावनी

फोक्सरस्टसे एक भाईने सूचित किया है कि नेटालकी ओरसे आनेवाले लोगोंके पंजीयन-पत्र व अनुमतिपत्र अधिकारी ले लेते हैं और फिर लोगोंसे कहते हैं कि वे अपने अनुमतिपत्र प्रिटोरियासे ले लें। यह बिलकुल अनुचित है, और लोगोंको खर्चमें डालनेवाला तथा उन्हें अनुमति कार्यालयमें जानेके लिए मजबूर करनेवाला है। अतः सभी भारतीयोंको सूचना दी जाती है कि फिलहाल ट्रान्सवालमें कोई न आये। उपर्युक्त बात नये कानूनसे निकलती है। इसपरसे नये कानूनकी बारीकियोंपर विचार करना जरूरी है।

फ्रीडडॉर्पके भारतीय

फ्रीडडॉर्प अध्यादेश तुरन्त नहीं लागू किया जायेगा इतना तो निश्चित है। किन्तु यह न समझा जाये कि इससे भारतीयोंको निश्चित लाभ हुआ है। क्योंकि वह अध्यादेश गोरे साहबोंको पसन्द नहीं है। इसके द्वारा जो अधिकार प्राप्त हो रहे हैं उतने पर्याप्त नहीं हैं, इसलिए अधिक माँगते हैं। वे अधिकार सरकारने देने स्वीकार किये हैं। इसलिए अध्यादेश नया बनेगा। उसमें भी भारतीयोंके अधिकार सुरक्षित नहीं हैं। तूतीकी आवाज सुननेवाला कोई है ही नहीं। फ्रीडडॉर्पके डच गरीब हैं, फिर भी उन्हें निर्वाचन अधिकार है, और वे शमशेर बहादुर हैं। अतः उनके लिए सब कुछ किया जायेगा। भारतीयोंको मताधिकार भी नहीं है। शमशेर तो देखी भी नहीं होगी। किन्तु यदि वे हिम्मतके साथ खूनी एशियाई अधिनियमको जेलरूपी अग्निमें जला दें तो उनकी कीमत जरूर हो सकती है। नहीं तो भारतीयोंके हक राम नाम बोल जायेंगे इसमें मुझे तो जरा भी शक नहीं।

लोकसभामें एशियाई कानून

स्थानीय अखबारोंमें ऐसा तार छपा है कि बड़ी संसदमें सर विलियम बुलने ट्रान्सवालके भारतीयोंके सम्बन्धमें प्रश्न पूछा था। उत्तरमें श्री चर्चिलने सूचित किया कि ऐसा मालूम हुआ है कि पंजीयनमें अँगुलियोंकी निशानीके सिवा कोई चारा नहीं है। लॉर्ड एलगिनने ट्रान्सवालके रुखपर खेद प्रकट किया, किन्तु उन्होंने बताया कि ट्रान्सवालकी ओरसे यह हो जानेके बाद कि शिनाख्तके इस तरीकेमें आपत्ति करने जैसी कुछ बात नहीं है, मुझे नहीं लगता कि मैं फिरसे विचार करनेके लिए दबाव डाल सकूँगा।

लॉर्ड एलगिनने खेद व्यक्त किया इससे साफ मालूम होता है कि वे स्वयं इस कानूनको सख्त मानते हैं। अतः जब भारतीय जेल जायेंगे, उनकी सहानुभूति भारतीयोंकी ओर रहनी चाहिए।

रेलवेमें तकलीफ

ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यवाहक मन्त्री श्री पोलकके हस्ताक्षरसे निम्नलिखित पत्र रेलवे अधिकारीके पास भेजा गया है :

> संघके भूतपूर्व अध्यक्ष श्री अब्दुल गनी और श्री गुलाम मुहमदको एक तार मिला था। इसलिए जरूरी कारणसे उन्हें कल ४–४० की रेलसे प्रिटोरिया जाना था। किन्तु उन्हें टिकट देनेसे इनकार कर दिया गया। मेरा संघ इसका निश्चय करनेको आतुर है कि कहीं रेलवे विभाग भारतीय समाजके आम हकोंपर अब विशेष अंकुश तो नहीं लगाना चाहता? इस सम्बन्धमें जाँच पड़ताल करनेकी कृपा करें।

रेलगाड़ियोंकी तकलीफोंका यह ताजा उदाहरण साफ बताता है कि अधिकारियोंकी आँख खोलनेके लिए किसी भी भारतीयको जेल जानेका अवसर हाथसे नहीं छोड़ना चाहिए। जबतक यह न दिखा दिया जायेगा कि भारतीयोंमें पानी है तबतक, सम्भव है, ये सारे कष्ट दिनोंदिन घटनेके बजाय बढ़ते ही रहेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–८–१९०७

९८. भाषण : प्रिटोरियामें[1]

[प्रिटोरिया
जुलाई ३१, १९०७]

श्री गांधीने कहा कि श्री हॉस्केनने[2] अध्यादेशके बारेमें बहुत-सी बातें समझाई हैं। उन्होंने इस संकटके समय भारतीयोंके साथ सहानुभूति भी प्रकटकी है। परन्तु उनका खयाल है कि यद्यपि हमारे संघर्षका आरम्भ सही विचारोंसे हुआ है, तथापि हम गुमराह कर दिये गये हैं; हमें अध्यादेशको मान लेना चाहिए; अर्थात् अध्यादेशके पीछे छिपी जबर्दस्ती तथा दसों अँगुलियोंकी छापवाले हुक्मके सामने भारतीयोंको अपना सर झुका देना चाहिए। श्री हॉस्केनने अपनी इस सलाहकी पुष्टिमें बहुत-सी दलीलें दी हैं। उनमें से एक यह भी है कि जो बात अवश्यम्भावी है, उसे मान लेना चाहिए। श्री गांधीने आगे कहा : मैं इस अवश्यम्भावी[3] बातकी दलीलको लेकर ही कुछ कहना चाहता हूँ। मेरा खयाल है और मैं इस बातको बहुत गहराईसे महसूस करता हूँ कि न तो श्री हॉस्केन और न पश्चिमी जातिका कोई सदस्य यह समझ सकता है कि पूर्वके मानसमें 'अवश्यम्भावी' का वास्तविक अर्थ क्या है, और यह बात मैं अत्यन्त नम्रताके साथ कह रहा हूँ। श्री हॉस्केनने हमें बताया है कि एशियाई पंजीयन कानूनके पीछे गोरे निवासियोंके लोकमतका

१. एशियाई अधिनियमके अन्तर्गत प्रार्थनापत्र देनेकी अन्तिम तारीख ३१ जुलाईको प्रिटोरियामें सारे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी एक सभा हुई थी। गांधीजीके भाषणकी तार द्वारा भेजी गई रिपोर्ट ३–८–१९०७ के **इंडियन ओपिनियन**में छपी थी यह उसकी पूरी रिपोर्ट है।

२. विलियम हॉस्केन जनरल बोथाके अनुरोधपर सभामें आये थे और उन्होंने भारतीयोंसे कहा था कि सरकार अध्यादेशको लागू करनेकी नीतिपर दृढ़ है।

३. देखिए "श्री हॉस्केनकी अवश्यम्भावी", पृष्ठ १५१-५२।

बल है, इसलिए उसको पलटा नहीं जा सकता। उसके सामने झुकना ही होगा। परन्तु मैं उसे अवश्यम्भावी नहीं मानता। अवश्यम्भावी तो यह है कि जिन ब्रिटिश भारतीयोंको इस देशमें मताधिकार नहीं है, जिनकी कोई पूछ नहीं है, जिनके प्रार्थनापत्र रद्दीकी टोकरीमें फेंक दिये जाते हैं और जिनके लिए विधान-सभामें एक आदमीने भी अपनी आवाज नहीं उठाई है — और तो और खुद श्री हॉस्केन भी जिनके पक्षमें एक शब्द नहीं कह सके, क्योंकि वे जानते थे कि उन्हें सुसंगठित और ठोस विरोधका मुकाबला करना पड़ेगा — वे भारतीय इस कानूनका विरोध करें। ऐसी स्थितिमें अवश्यम्भावी है, ईश्वरकी इच्छाके सामने ही अपना सर झुका देना। अगर उसकी यह इच्छा है कि पूरेके-पूरे १३,००० भारतीय अपने सर्वस्वका बलिदान कर दें, इस संसारमें हमें आर्थिक लाभ पहुँचानेवाली जो भी चीजें हैं उन सबको छोड़ दें, तो भारतीयोंको इस नियतिके सामने सर झुकाना है। परन्तु इस अपमान और नीचे गिरानेवाले कानूनको हरगिज नहीं मानना है। श्री हॉस्केनके प्रति पूर्ण आदर रखते हुए भी मेरा विचार है कि वे अपनी चमड़ीका रंग नहीं बदल सकते। और न ही वे इस देशमें रहनेवाले भारतीयोंको उनके जीवन-मरणके प्रश्नके सम्बन्धमें सलाह दे सकते हैं।

मैं इस देशमें तेरह वर्षसे रह रहा हूँ और अपने देशभाइयोंकी सेवा करता आया हूँ (करतल ध्वनि)। मैं अपने-आपको दक्षिण आफ्रिकाके शान्ति-प्रेमियोंमें गिनता हूँ। और बहुत सोच-विचार और सलाह-मशविरेके बाद ही मैंने यह धर्म-युद्ध छेड़ा, अपने देशभाइयोंको इसमें शामिल होनेकी सलाह दी। मैंने एशियाई कानूनकी एक-एक धारा पढ़ी है और उपनिवेशके प्रायः सारे कानून भी पढ़ लिये हैं। उसके बाद ही मैं विचारपूर्वक इस निश्चयपर पहुँचा हूँ। और मुझे नहीं लगता कि मैं इस निर्णयको बदलूँगा, क्योंकि यदि एशियाई इस कानूनको मान लेते हैं तो उनकी स्थिति शुद्ध गुलामोंकी-सी हो जायेगी। इससे जरा भी कम नहीं।

सो कैसे? जब मैं लन्दनमें था तब श्री हॉस्केनके देशभाइयोंको मैंने एक मिसाल सुनाई थी। मैंने कहा था, "यहाँ राह चलता हर आदमी एक रेशमका टोप पहनता है। अब मान लीजिए कि लन्दनमें इस आशयका एक कानून जारी किया जाता है कि हर अंग्रेजके लिए रेशमका टोप पहनना अनिवार्य होगा तो क्या सारा लन्दन टोप पहनना छोड़ नहीं देगा?" वहाँके मित्रोंके सामने मैंने यही स्थिति रखी थी। यह एक बहुत तुच्छ-सा उदाहरण है। यहाँ यह केवल एक प्रकारका टोप पहननेकी बात है। परन्तु अंग्रेज जाति अपनी स्वतन्त्रताको इतना कीमती समझती है कि यदि उसके अपने देशमें कोई ऐसी जबरदस्ती करनेवाला कानून बनाया जाये, फिर उसका उद्देश्य कुछ भी हो, तो हर अंग्रेज निश्चय ही उसका विरोध करेगा। दक्षिण आफ्रिकाका प्रश्न टोप जैसा छोटा नहीं है। यहाँ तो बाँहों और पेशानीपर गुलामीकी निशानी धारण करनेकी बात है। मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप यह निशानी कदापि धारण न करें।

आपको यह सलाह देनेके लिए मैं अपने-आपको पूरी तरहसे जिम्मेवार मानता हूँ। परन्तु उसके साथ मैं यह कह देना चाहता हूँ, कि इस कानूनके पीछे छिपी मानहानिको मेरे भाई मेरी अपेक्षा कहीं अधिक अनुभव कर रहे हैं। क्योंकि मैं तो इस कानूनकी उन खामियोंको जानता हूँ जो मेरे देशभाइयोंके पक्षमें जाती हैं। मैं यह भी जानता हूँ कि ऐसे देशमें रहते हुए हमें कुछ पूर्वग्रहोंकी गुंजाइश तो रखनी ही पड़ेगी। इसलिए हमने कुछ अपमान और थोड़ी बेइज्जती चुपचाप बरदाश्त भी कर ली। परन्तु अब तो प्याला लबालब भर गया है। ब्रिटिश

भारतीय अब जान गये हैं कि इस कानूनमें जो अपमान और गिरावट निहित है उसे सहकर इस देशमें रहना अब हमारे लिए सम्भव नहीं है। हम खुद सोच-विचारके बाद इस नतीजे तक पहुँचे हैं कि अब हमारे लिए इस देशमें रहना सम्भव नहीं है। अगर कानूनके बारेमें मेरे देशभाइयोंके ये विचार और ये भावनाएँ न हों तो मैं सबसे पहिले अपनी गलती स्वीकार कर लूँगा। मैं इस कानूनका पालन करूँगा और खुले तौरपर ऐलान कर दूँगा कि इस मामलेमें मुझसे भूल हो गई है और हम इस अध्यादेशके पात्र हैं।

श्री ईसप मियाँने सारी स्थिति बड़ी स्पष्टताके साथ हमारे सामने रखी है, अधिनियम और स्वेच्छया पंजीयनका अन्तर बताया है। अब सारी स्थिति हमारे सामने है। स्वेच्छया पंजीयन करवानेसे और इस अध्यादेशके अन्तर्गत अनिवार्य पंजीयन करानेसे हमारी स्थिति कैसी हो जायेगी, हम इन दोनों तस्वीरोंकी कल्पना कर लें। इस कानूनकी तफसीलोंमें जाना मेरा काम नहीं है। परन्तु मौलवी साहबने हमें समझानेके लिए एक-दो मिसालें बताई हैं। श्री हॉस्केन मौलवी साहबकी भाषा नहीं जानते थे। इसलिए उन्होंने समझ लिया कि वे कोई निजी शिकायत सुना रहे हैं। परन्तु जो लोग कौमकी सेवा करना चाहते हैं उनके लिए निजी शिकायत जैसी कोई चीज ही नहीं हो सकती। मौलवी साहबने तो कहा था कि वह कानून घृणाके लायक है। और मैं पूरी नम्रता, किन्तु और भी अधिक जोरके साथ कहता हूँ कि वह अत्यन्त घृणित और अपमानजनक है और मुसलमानों और ईसाइयोंमें भेद करता है। तुर्कीके मुसलमानोंपर तो वह लागू किया जा रहा है, परन्तु वहाँके ईसाइयों और यहूदियोंको उससे मुक्त रखा गया है। मैं ऐसे किसी तुर्की मुसलमानको नहीं जानता जिसका तुर्किस्तानके किसी ईसाई या यहूदीसे कोई झगड़ा हो। इस अपमानको, इस कड़वी घूँटको, पीना तो उनके लिए भी मुश्किल है।

परन्तु मान लीजिये कि इस देशमें किसी तरह अपना पेट पालनेके लिए हम इन सब बातोंको बरदाश्त कर लेते हैं तो भी इसका क्या भरोसा कि हमारी माली हालत निश्चित रूपसे सुधर ही जायेगी; और हमारे जो अधिकार पहले ही से छिन गये हैं वे हमें वापस मिल जायेंगे? कहीं कुछ गौण फेरफार कर भी दिये जायें तो भी हमसे सम्पत्तिका अधिकार छिन ही जायेगा, अलग बस्तियोंमें भी रहना होगा, और पता नहीं क्या-क्या हो। इन सारी परिस्थितियोंका सामना हमें करना है। इसीलिए मैं अपने देशभाइयोंको सलाह देता हूँ कि वे इस अधिनियमको न मानें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-८-१९०७

९९. प्रिटोरियाकी सार्वजनिक सभाके प्रस्ताव[1]

[प्रिटोरिया
जुलाई ३१, १९०७]

प्रस्ताव १ : प्रिटोरियामें की गई ब्रिटिश भारतीयोंकी यह सार्वजनिक सभा इस प्रस्ताव द्वारा अत्यन्त खेदके साथ उल्लेख करती है कि भारतीय समाजमें कुछ ऐसे लोग पाये गये हैं, जिन्होंने अपने आपको और अपनी परम्पराओंको बिलकुल भुला दिया है और जो, भलीभाँति यह जानते हुए भी कि एशियाई कानून संशोधन अधिनियमका पालन करना कितना अपमानास्पद है, पहले गुप्त रूपसे और फिर खुल्लमखुल्ला, उसके अन्तर्गत प्रमाणपत्रोंके लिए आवेदन करते हैं।

प्रस्ताव २ : प्रिटोरियामें की गई ब्रिटिश भारतीयोंकी यह सार्वजनिक सभा एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके अधीन न होनेपर और उसके अधीन न होनेके गम्भीर परिणामोंका सामना करनेपर प्रिटोरियावासी भारतीयोंकी भारी बहुसंख्याको बधाई देती है। और जिन साहसी भारतीयोंने इस अधिनियमकी धाराओंके सम्बन्धमें समाजके सदस्योंको सच्ची जानकारी देनेका पुण्यकार्य करके अन्याय और अत्याचारका ऐसा उल्लेखनीय सामना करनेकी स्थिति सम्भव बना दी है, उनको भी बधाई देती है।

प्रस्ताव ३ : प्रिटोरियामें की गई ब्रिटिश भारतीयोंकी इस सार्वजनिक सभाकी नम्र सम्मतिमें अधिनियम अपने अभीष्ट उद्देश्यकी सिद्धिके लिए अनावश्यक है। इसलिए सभा प्रार्थना करती है कि सरकार कृपा करके अध्यक्षके भाषणमें उल्लिखित स्वेच्छया पुनः पंजीयनके प्रस्तावको स्वीकार कर हमारे समाजको इस अधिनियमके आगे नहीं झुकनेसे होनेवाले कष्टमें न डाले।

प्रस्ताव ४ : प्रिटोरियामें की गई ब्रिटिश भारतीयोंकी यह सार्वजनिक सभा इस प्रस्ताव द्वारा अध्यक्षको अधिकार देती है कि वे पहलेके तीन प्रस्ताव सरकारको भेज दें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–८–१९०७

१. यद्यपि इन प्रस्तावोंको भारतीय समाजके विभिन्न प्रवक्ताओंने प्रस्तुत और अनुमोदित किया था, फिर भी यह स्पष्ट है कि ये गांधीजीने तैयार किये थे।

१००. भेंट[1] : 'रैंड डेली मेल' को

[प्रिटोरिया
जुलाई ३१, १९०७]

. . . यदि सरकार स्वेच्छया पंजीयनके लिए कुछ काल, उदाहरणार्थ दो मासका, देनेके लिए तैयार हो जाये तो भारतीयोंका बहुमत इन शर्तोंको मान लेगा, यद्यपि अँगुलियोंके निशान देनेका तरीका फिर भी मुश्किल पैदा करेगा। उन्होंने स्वीकार किया कि यह एक गम्भीर बाधा है, और उनकी राय थी कि भारतीयोंकी शर्तें तभी मानी जायेंगी जब वे, या उनमें से बहुतसे, अध्यादेशके अन्तर्गत कष्ट सहेंगे।

[अंग्रेजीसे]

रैंड डेली मेल, १–८–१९०७

१०१. ट्रान्सवालकी लड़ाई

जुलाई महीना पूरा हो गया है। ट्रान्सवाल और शायद सारे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके इतिहासमें यह सदैव महत्त्वपूर्ण समझा जायेगा। ३१ तारीखकी विराट सभा ऐसे महत्त्वपूर्ण महीनेके अन्तके लिये उचित पूर्णाहुति रही। यह देखकर हमें प्रसन्नता हुई है कि ट्रान्सवालके इस सम्मेलनने, जिसमें हर जगहसे प्रतिनिधि आये थे, सर्वसम्मतिसे फिर उस अध्यादेशकी भर्त्सना की है। अर्थात् समूचा ट्रान्सवाल आज एक स्वरसे जेल, जेल और जेलके लिए तैयार खड़ा है, यद्यपि कुछ लोगोंने सारे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके भविष्यपर असर डालनेवाली इस लड़ाईके मूल्यको भुलाकर समाजके साथ दगा किया है। यह कार्य भारी देशद्रोहके समान है, यद्यपि ऐसे लोगोंकी संख्या बहुत ही थोड़ी है, इसके अतिरिक्त उनमेंसे बहुतेरोंको जो पछतावा और खेद हुआ है तथा एकाध हकदार व्यक्तिके अनुमतिपत्रको झूठा ठहरा कर उसकी जो दुर्दशा की गई है, हम आशा करेंगे कि उससे सचेत होकर ट्रान्सवालमें हर जगह जो भी डगमगाता रहा हो, वह दृढ़ हो जायेगा। प्रिटोरियाने जो कर दिखाया उससे भी बढ़िया अब पीटर्सबर्ग और अन्य जिलोंको करके दिखानेका समय आया है। और यदि ऐसा कर दिखाया तो इस लड़ाईका परिणाम एक ही होगा, और वह है विजय। इस समय प्रिटोरियाके बहादुर भाइयोंसे हम इतना ही कहेंगे कि उन लोगोंने जुलाईमें जो कुछ करके दिखाया है उसे निभानेके लिए कारावास भोगने, सरकार चाहे तो कठोर कारावास भोगने, निर्वासित होने, संक्षेपमें, चाहे जो सहन करनेके लिए बेधड़क तैयार रहना है। इस समय हम रण-संग्रामके मध्यमें हैं। इसलिए पीछे मुड़कर देखनेका समय नहीं है। हमारी लड़ाई न्यायकी है, इसलिए स्वयं जगतका महान कर्ता हमारे पक्षमें है। अबतक की लड़ाईमें सरकारने नीचे उतरनेमें कोई कसर नहीं रखी है। यह विजय हमारी अबतक की दृढ़ताका परिणाम है। और भी क्या नहीं किया जा सकता, यह हम कूत नहीं

१. सभाके समाप्त हो जानेपर गांधीजीने एक भेंट दी थी जिसकी यह संक्षिप्त रिपोर्ट है।

सकते। प्रिटोरियाने जो कुछ किया है, उसके लिए उसे हम हार्दिक बधाई देते हैं, और खुदासे इबादत करते हैं कि वह सदा जेल जानेवालोंकी पीठपर रहे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–८–१९०७

१०२. नेटालके भारतीयोंमें जागृति

हम बार-बार नेटालके भारतीयोंसे जागते रहनेके लिए कहते आये हैं। हमें खुशीके साथ कहना चाहिए कि वे अब सोते हुए नहीं जान पड़ते। वे ट्रान्सवालके भारतीयोंको तन, मन, धनसे मदद देनेकी कोशिश कर रहे हैं। कांग्रेसके अग्रगण्य लोगोंमें से श्री दाउद मुहम्मद, पारसी रुस्तमजी, दादा उस्मान, इस्माइल गोरा, डॉ० नानजी, डॉ० हीरा माणिक, वगैरह डर्बनमें चन्देके लिए हमेशा कोशिश करते हैं। श्री एम० सी० आँगलियाने अब्दुल कादिर, पीरन मुहम्मद, तैयब मूसाके साथ जाकर मैरित्सबर्गमें दो ही दिनमें चन्देकी बहुत बड़ी रकम इकट्ठा की है। इससे सबक लेकर नेटालके सब भारतीयोंको अपने-अपने विभागमें शक्तिभर चन्दा इकट्ठा करना चाहिए। कांग्रेसके नेता जब यह कोशिश कर रहे हैं तब साधारण वर्गके लोग भी पीछे नहीं हैं; रेलवेसे जोहानिसबर्ग जानेवाले मुसाफिरोंका पता रखनेवाले तीन स्वयंसेवकोंके अलावा सर्वश्री हुसेन दाउद (श्री दाउद मुहम्मदके लड़के), यू० एम० शेलत, छबीलदास बी० मेहता, रुकनुद्दीन तथा डी० के० गुप्तेने भी अपना सारा समय कांग्रेसको अर्पित किया है। इधर कुछ दिनोंसे दिन-भर यहाँसे प्रिटोरियाको तार भेजे जाते रहे हैं। और वहाँके तारोंकी आतुरतासे प्रतीक्षा की जाती है। नेटालके भारतीयोंकी इस हमदर्दीसे ट्रान्सवालके भारतीयोंको समझना चाहिए कि यहाँ की लड़ाईमें वे अकेले नहीं हैं, बाहरके भारतीय भी तन-मन-धनसे, निर्भयतापूर्वक उनके साथ खड़े हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–८–१९०७

१०३. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

[अगस्त ५, १९०७]

पीटर्सबर्गपर बला

अनुमतिपत्र कार्यालय रूपी बला पीटर्सबर्ग गई है। इस पत्रके छपते-छपते मालूम हो जायेगा कि पीटर्सबर्गके भारतीय सिंह हैं या सियार। यह पत्र सोमवारको लिख रहा हूँ, फिर भी मैं मानता हूँ कि वे सिंह हैं। अनुमतिपत्र कार्यालय केवल ७ तारीखसे १० तारीख तक गुलामीका पट्टा देनेके लिए पीटर्सबर्गमें रहेगा। यह मालूम होते ही वहांके नेता प्रिटोरिया जा पहुँचे। अत्यन्त जागरूक सेक्रेटरी श्री हाजी हबीब जो कामसे जोहानिसबर्ग आये हुए थे तत्काल वापस प्रिटोरिया गये और उन्होंने पीटर्सबर्गके नेताओंको उत्साह दिलाया। उन्होंने बीड़ा उठाया है कि पीटर्सबर्गमें अनुमतिपत्र कार्यालयका बिलकुल बहिष्कार होगा।

पीटर्सबर्गमें बला क्यों गई?

यह प्रश्न सबके मनमें उठेगा। मुझे खेदपूर्वक कहना चाहिए, इसमें दोष पीटर्सबर्गके भारतीय भाइयोंका है। वे ३१ जुलाईकी प्रसिद्ध सार्वजनिक सभामें नहीं आये। उनका भेजा हुआ तार कमजोर था और उस दिन जहां सारे ट्रान्सवालकी दूकानें — श्री खमीसा की दूकान भी — बन्द रहीं, वहां पीटर्सबर्गके भारतीयोंकी दूकानें खुली थीं। इससे सामान्यतः सरकारने अनुमान लगाया कि पीटर्सबर्गके भारतीय बहुत आसानीसे गलेमें गुलामीकी जंजीर डाल लेंगे और खूनी पट्टा-रूपी पंजीयनपत्र ले लेंगे। इसके अलावा चूंकि श्री खमीसा और हाजी इब्राहीमने मेमन लोगोंके नामपर बट्टा लगाया है और, दूसरे, पीटर्सबर्गमें मेमन लोगोंकी बस्ती है, इसलिए सरकारने सोचा कि पीटर्सबर्गमें उनका गोला-बारूद कामयाब हो जायेगा और भारतीय स्वतन्त्रताका किला पीटर्सबर्गमें ढह जायेगा।

किन्तु पीटर्सबर्गकी जमात श्री खमीसा तथा हाजी इब्राहीमसे आदर्श ग्रहण करेगी, यह माननेमें सरकारने भूल की है। मैं मानता हूँ कि ये दोनों भारतीय भी अब पछताते हैं। उनके नये पंजीयनपत्र उन्हें भारी पड़ गये हैं। यद्यपि भारतीय उनसे सम्बन्ध विच्छेद नहीं कर रहे हैं और न वे उन्हें सताते हैं, फिर भी वे अब लज्जित हो गये हैं और उन्हें लोगोंके कड़वे शब्द सुनने पड़ते हैं। इसलिए किसी भारतीयकी यह हिम्मत नहीं कि कोई उनका अनुकरण करे। इसके अलावा जाहिर तौरपर तो वे यही कहते दिखाई देते हैं कि "हमने तो हाथ और मुँह काले किये किन्तु हमारे जैसा दूसरे भारतीय न करें।"

प्रिटोरियाको रियायत

पीटर्सबर्गके नोटिसमें सरकारने यह भी कहा है कि प्रिटोरियाके भारतीयोंको भी वहाँ नये पंजीयनपत्र लेनेकी छूट है। इसे मैं बन्धन मानता हूँ। लालच बुरी चीज है। नये पंजीयनपत्र लेना मैं अपराध मानता हूँ। प्रिटोरियाके भारतीयोंको इस अपराधमें फंसानेके लिए सरकारने जो दरवाजा खोला है उसे छूट मानना गलत है। यह तो एक फन्दा है। मैं तो विश्वासपूर्वक मानता हूँ कि उस प्रलोभनमें फँसनेके लिए कोई भी भारतीय प्रिटोरियासे नहीं जायेगा।

करीम जमालका मुकदमा

करीम जमालके मुकदमेसे भारतीय लोग नये कानूनके प्रति और भी ज्यादा सतर्क हो गये हैं। उसके सामने झुकना उन्हें नींद बेचकर जागरण मोल लेनेके समान मालूम हुआ है। श्री करीम जमालका मुकदमा वापस ले लिया गया है। सरकारी वकीलने स्वीकार किया है कि यह मुकदमा भूलसे दायर हुआ था। इससे श्री करीम जमालको क्या लाभ? उन्हें तो तकलीफ उठानी ही पड़ी और धनकी बरबादी भी हुई। इस बरबादी और मुसीबतसे तंग आकर उन्होंने पंजीयनकी अर्जी वापस ले ली है। (इस सम्बन्धमें पंजीयकके नाम लिखा हुआ पत्र दूसरी जगह दिया गया है। वह देखिए)।[1]

इस पत्रसे सबको चेत जाना चाहिए कि यह कानून गरीब आदमीपर कितनी मुसीबत ढा सकता है।

एक गोरेकी निशानी लगानेके विरुद्ध लड़ाई

एक गोरेको चोरीके अभियोगमें गिरफ्तार किया गया है। जेलका कानून ऐसा है कि जो भी व्यक्ति जेल जाये, वहाँ पुलिसको उसकी अँगुलियोंकी निशानी लेनेका अधिकार है। इस अधिकारके कारण पुलिसने गोरेसे जेलमें अँगुलियोंकी निशानी माँगी। गोरेने देनेसे इनकार किया। उसे मजिस्ट्रेटके सामने खड़ा किया गया। फिर भी गोरेने निशानी लगानेसे साफ इनकार कर दिया। कानूनमें जबरदस्ती हाथ दबाकर निशानी लगवानेकी सत्ता तो है नहीं। इसलिए मजिस्ट्रेटने उस गोरेको तीन दिन अँधेरी कोठरीमें बन्द रखनेकी सजा दी। वह उसने बहादुरीसे भोगी, किन्तु अँगुलियोंकी निशानी देनेसे इनकार किया।

लड़ाईमें पैसेकी सहायता

बॉश बैंकसे श्री भटने संघको लिखा है कि वहाँ भारतीयोंमें बड़ी हिम्मत है और वे चन्दा उगाह रहे हैं। कोई जेल जायेगा तब यदि मदद की आवश्यकता हुई तो देंगे। यह खबर बहुत ही सन्तोषजनक है। मुझे इस सम्बन्धमें कहना चाहिए कि नेटालमें जितना धन इकट्ठा हो वह कांग्रेसके मन्त्रीको भेज दिया जाये। और इसी प्रकार जहाँ भी चन्दा जमा हो, वह वहाँके संघको भेज दिया जाना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति अपने पास या गाँवमें ही किसी नेताके पास चन्देकी रकम रखे रहेगा तो आवश्यकताके समय उसे पहुँचाना कठिन हो जायेगा। ट्रान्सवालमें एक ही जगहसे पैसा माँगना पड़े — ऐसी व्यवस्था होना जरूरी है। इस समय किसीको इसमें न बड़प्पन मानना चाहिए और न उसकी अपेक्षा रखनी चाहिए, बल्कि सबको अपना-अपना फर्ज अदा करना चाहिए।

सार्वजनिक सभा

प्रिटोरियाकी सार्वजनिक सभा बहुत ही अच्छी रही। कह सकते हैं कि एम्पायर नाटकघरकी और गेइटी नाटकघरकी सभा उसके सामने कुछ नहीं थी। इसके अलावा वह चूँकि मसजिद जैसे पवित्र स्थानके मैदानमें हुई, इससे जान पड़ता है, भारतीय समाजको विजय निश्चय ही मिलेगी। इस सभामें "प्रिटोरिया न्यूज़" के सम्पादक स्वयं उपस्थित थे, जब कि अन्य सभाओंमें केवल संवाददाता ही आते थे। पहली दो आम सभाओंमें यहाँके संसद-सदस्य नहीं थे।

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

हॉस्केनकी उपस्थिति

इस सभामें प्रसिद्ध संसद-सदस्य श्री हॉस्केन आये थे। श्री हॉस्केनके भाषणसे हमें उत्साहित होना चाहिए। उन्होंने जो सीख दी है उसके अलावा वे और कुछ कह ही नहीं सकते। किन्तु वे इसलिए आये कि उन्हें जनरल बोथा, जनरल स्मट्स और श्री हलने भेजा था। इससे मालूम होता है, सरकारपर जुलाई महीनेके कामका प्रभाव पड़ा है। दो पक्ष लड़ते हैं तब सामान्यत: अन्ततक दोनों अपनी-अपनी तरफ खींचते हैं। उसमें जिसका पक्ष सच्चा होता है और जो अन्ततक जोर दिखाता है वह विजयी होता है। अत: सरकार यदि यह सन्देश भेजती है कि कानूनमें संशोधन बिलकुल नहीं होगा और स्वेच्छया पंजीयनकी बात स्वीकार नहीं की जायेगी, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। आजतक हमारी बात कोई नहीं सुनता था। उसके बदले अब सरकारको सुननेकी इच्छा हुई, इसे विजयकी ओर पहला कदम मानना चाहिए।

दूसरे शुभ शकुन

जैसे मैं मसजिदकी सभा और श्री हॉस्केनकी उपस्थितिको अच्छे लक्षण मानता हूँ, वैसे ही श्री हाजी कासिमकी लाई हुई इस खबरको भी, कि सरकार तत्काल किसीको जेल भेजनेवाली नहीं है, शुभ शकुन मानना होगा। वास्तवमें तो यह बिलकुल बेकार बात है। सरकार जितनी जल्दी हमपर हाथ डालेगी उतनी ही जल्दी फैसला होगा। किन्तु यह खबर सभाके दिन मिली इस संयोगको मैं अच्छा मानता हूँ। सबसे अच्छा शकुन तो यह है कि कि ३१ तारीखको सबेरे विलायतसे तार मिला है कि दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति सर हेनरी कैम्बेल बेनर-मैनसे मिलनेकी तजवीज कर रही है। इस तारसे सबको प्रसन्नता हुई है। सबको सन्तोष हुआ है कि समिति हमें बिलकुल छोड़ देनेवाली तो नहीं है।

रायटरको तार

सभा समाप्त हो जानेके बाद प्रिटोरिया समितिने रायटरको लम्बा तार भेजा तथा एक तार सीधा समितिके नाम भेजा। इसमें लगभग ७ पौंड खर्च हुए। तारके उत्तरमें समितिकी ओरसे सूचना मिली है कि इस प्रश्नपर लोकसभामें बहस की जायेगी और ट्रान्सवालको जो पचास लाख पौंडका कर्ज चाहिए उसके सिलसिलेमें हमारा प्रश्न उठेगा। इससे आशा तो है कि हमें लाभ होगा, किन्तु ऐसी मददपर किसीको ज्यादा भरोसा नहीं रखना चाहिए। इसमें यदि निराशा हो तो आश्चर्यकी कोई बात नहीं। मुख्य बात यह है कि सब-कुछ हमारे बलपर निर्भर है और यह निश्चय मानना चाहिए कि जेलके दरवाजेसे गुजरे बिना हमारा छुटकारा नहीं होगा।

और भी सहायता

श्री मोतीलाल दीवान लिखते हैं कि ट्रान्सवालके भारतीय आत्म-बलिदान करके सेवा करनेको तैयार हैं। यदि कोई भारतीय जेल जाये तो वे उसके बाल-बच्चोंकी व्यवस्था करने और उसका स्वागत करनेके लिए चार्ल्सटाउन तक जानेको तैयार हैं। ऐसे उदाहरणोंसे हमें बहुत ही मदद मिलती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-८-१९०७

१०४. तार: सी० बर्डको

मर्क्युरी लेन
[डर्बन]
अगस्त ८, १९०७

श्री सी० बर्ड,[१] सी० एम० जी०
पी० मै० बर्ग[२]

महामहिम सम्राट्ने आपको मान[३] प्रदान किया तदर्थ बधाई देता हूँ।

गांधी

हस्तलिखित दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ३८७७) से।

१०५. पत्र: जनरल स्मट्सके निजी सचिवको

जोहानिसबर्ग
अगस्त ८, १९०७

जनरल स्मट्सके निजी सचिव
प्रिटोरिया

महोदय,

मुझे एकाधिक सूत्रोंसे यह सूचना मिली है कि जनरल स्मट्सकी रायमें एशियाई कानून संशोधन विधेयकके विरुद्ध आन्दोलनके लिए मैं जिम्मेदार हूँ और मेरे कामको वे बहुत नापसन्द करते हैं। यदि इस आरोपका मतलब यह है कि मेरे देशवासी कानूनका बिलकुल विरोध नहीं करते लेकिन मैं बेजरूरत उन्हें भड़काता हूँ, तो मैं इससे कतई इनकार करनेकी धृष्टता करता हूँ। दूसरी ओर, यदि इसका यह अर्थ है कि मैंने उनके भावोंको प्रकट किया है और पूरी योग्यताके साथ उनके सामने ठीक-ठीक यह रखनेका प्रयत्न किया है कि कानूनका क्या उद्देश्य है, तो मैं पूरी जिम्मेदारी स्वीकार करता हूँ। मैं महसूस करता हूँ कि, चूँकि मेरे माता-पिताने मुझे व्यापक ढंगकी शिक्षा दी है और मैंने भी एक खास हद तक आधुनिक इतिहास पढ़ा है, इसलिए यदि मैं इतना भी नहीं करता तो अपने प्रति और अपने देशके प्रति सच्चा नहीं उतरूँगा।

श्री डी' विलियर्ससे अपने पेशेसे सम्बन्धित मेरे ताल्लुकात रहे हैं। इसलिए उनपर भरोसा करके मैं उनसे निजी तौरपर मिला और कठिनाईका कोई हल ढूँढ़नेके खयालसे मैंने उनसे गैर-सरकारी तौरपर दखल देनेके लिए कहा। उन्होंने जनरल स्मट्ससे मिलकर मुझे सूचित करनेका वचन दिया था। उन्होंने ऐसा किया भी। लेकिन मैं उनसे स्वयं फिर नहीं मिल सका। वे इस आशयका सन्देश अपने सचिवके पास छोड़ गये थे कि, यद्यपि उनसे मेरी

१. ट्रान्सवाल उपनिवेश-सचिवके निजी सचिव।
२. पीटरमैरित्सबर्ग।
३. कम्पेनियन ऑफ़ (दि ऑर्डर ऑफ़) सेंट माइकेल ऐंड सेंट जॉर्ज।

सुझाई हुई दिशामें किसी सहायताके मिलनेकी वहुत कम आशा है तथापि मुझे सीधा जनरल स्मट्ससे निवेदन करना चाहिए।

मुझे विश्वास है कि मैं सरकारकी सेवा करनेके लिए उतना ही उत्सुक हूँ जितना अपने देशवासियोंकी सेवा करनेके लिए। और मैं समझता हूँ कि यह प्रश्न वड़ा महत्त्वपूर्ण है और साम्राज्यके लिए भी महत्त्वका है। इसलिए मैं इसके साथ प्रवासी प्रतिवन्धक विधेयकके संशोधनका एक जल्दीमें तैयार किया हुआ मसविदा संलग्न कर रहा हूँ। मेरी विनम्र रायमें इसमें सरकारका दृष्टिकोण पूरी तरहसे आ जाता है और इससे वह लाञ्छन भी मिट जाता है जो, सही या गलत, मेरे देशवासियोंकी रायमें एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके आगे झुक जानेसे, उनपर लगता है।

मैंने दक्षिण आफ्रिकी ब्रिटिश भारतीय समितिको भेजे हुए जनरल स्मट्सके उत्तरका तारसे प्राप्त सार भेजा है। उन्होंने यह कहनेकी कृपा की है कि भारतीय समाजके नेताओंसे सहयोग करना सम्भव नहीं है, क्योंकि उन्होंने मुकावला करनेका रुख अख्तियार किया है। मैं आदरपूर्वक कहूँगा कि हमारे रुखमें मुकावला करनेका भाव नहीं है, वल्कि ईश्वरकी इच्छा-पर सव कुछ छोड़ देनेकी भावना है; क्योंकि उसके नामपर भारतीयोंने शपथ ली है कि वे अपने पौरुष और स्वाभिमानको नहीं छोड़ेंगे, जिसपर, उनकी रायमें, पंजीयन अधिनियम द्वारा गम्भीर आक्रमण होता है।

मैं आशा करता हूँ कि इसके साथ भेजा हुआ प्रस्ताव उसी भावनासे ग्रहण किया जायेगा जिस भावनासे वह पेश किया गया है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[संलग्न पत्र :]

एशियाई पंजीयन अधिनियम सम्बन्धी कठिनाई हल करनेके लिए प्रस्ताव

निवेदन है कि प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक, जो अव भी वापस लिया जा सकता है और संशोधित किया जा सकता है, सम्पूर्ण कठिनाईको नीचे लिखे अनुसार दूर कर सकता है :

१. विधेयकके खण्ड १ में "किन्तु" से "दिये जा चुके हैं" तक छोड़ दिया जाये।

२. खण्ड २ में निम्न वातें जोड़ दी जायें : "वर्जित प्रवासी" शब्दोंके अन्तर्गत उन एशियाइयोंका समावेश न होगा और उनसे वे पुरुष एशियाई न समझे जायेंगे जो इसकी उपधारा (क), (ख), (ग) और (घ) के अन्तर्गत आते हैं, इसके वावजूद कि इनसे उपखण्ड १ की शर्तें पूरी न हो सकती हों :

(क) कोई भी एशियाई, जिसने नियमानुसार क्षतिपूर्ति और शान्ति-रक्षा अध्यादेश १९०२ या उसके किसी संशोधनके अन्तर्गत दिये गये परवानेके द्वारा या १ सितम्वर १९०० और कथित अध्यादेशके पास होनेकी तारीखके वीच दिये गये परवाने द्वारा, जवतक वह परवाना जाली तौरपर लिया हुआ न हो, उपनिवेशमें आने और रहनेका उचित अधिकार प्राप्त किया हो; व्यवस्था की जाती है कि ऐसे परवानेमें किसी एशियाईको केवल सीमित समय तक इस उपनिवेशमें रहनेका अधिकार वताया गया हो तो वह इस उपखण्डके संशोधनके भीतर परवाना न समझा जायेगा;

(ख) कोई भी एशियाई जो इस उपनिवेशका निवासी हो और ३१ मई १९०२ को प्रत्यक्षतः यहाँ रहा हो;

(ग) कोई भी एशियाई जो ३१ मई १९०२के बाद इस उपनिवेशमें उत्पन्न हुआ हो, किन्तु इस उपनिवेशमें १९०४ के श्रम आयात अध्यादेशके अन्तर्गत लाये हुए किसी मजदूरका बच्चा न हो;

(घ) कोई भी एशियाई, जिसने ११ अक्तूबर १८९९ से पूर्व १८८६ में संशोधित रूपमें १८८५ के कानूनके अनुसार ३ पौंडकी रकम दे दी हो।

व्यवस्था की जाती है कि ऐसा एशियाई उस तारीखसे पूर्व, जिसे उपनिवेश-सचिव निश्चित करेगा, नियमके द्वारा, विहित फार्मके अनुसार अधिवासी प्रमाणपत्र ले लेगा और यह व्यवस्था भी की जाती है कि १६ वर्षकी आयु तक के बच्चे इस धाराके अमलसे मुक्त होंगे; १६ वर्षके होनेपर वे अधिवासी-प्रमाणपत्र लेनेके लिए बाध्य होंगे जिससे वे पहले उल्लिखित छूटकी माँग कर सकें।

३. एशियाई शब्दका अर्थ होगा ऐसा कोई भी पुरुष जैसा कि १८८५ के कानून ३ की धारा १ में बताया गया है; किन्तु वह उपनिवेशमें १९०४ के श्रम आयात अध्यादेशके अन्तर्गत लाया हुआ व्यक्ति न हो।

४. संसदके प्रस्ताव, १२ अगस्त १८८६ की धारा १४१९ और १० मई १८९० की धारा १२८ द्वारा संशोधित रूपमें १८८५ के कानून ३ की धारा २ का (ग) उपखण्ड और एशियाई कानून संशोधन अधिनियम इसके द्वारा रद किये जाते हैं।

५. उपखण्ड १५ में जोड़ा जाये। उपखण्डके अन्तर्गत अधिवासी प्रमाणपत्रके फार्म और उसके लिए प्रार्थनापत्र देनेकी विधि एवं वह समय जिसके भीतर १६ वर्षसे कम आयुका एशियाई बच्चा १६ वर्षका होनेपर अधिवासी प्रमाणपत्रके लिए प्रार्थनापत्र देगा, भी बताये जायें।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४-८-१९०७

१. गांधीजीने गुजराती स्तम्भोंमें प्रस्तावको संक्षिप्त रूपमें दिया था और उसके मुख्य मुद्दे ये बताये थे: यह निवेदन है कि प्रवासी-प्रतिबन्धक विधेयकसे, जिसमें संशोधन किया जा सकता है, समस्त कठिनाई निम्न प्रकार दूर की जा सकती है:

(१) नया अधिनियम वापस ले लिया जाये।

(२) "निषिद्ध प्रवासी" शब्दोंमें निम्न वर्गोंके लोग सम्मिलित न होंगे, जिनके पास वैध परवाने हों और जो उनको बताये गये समयके भीतर बदलवा कर नये ले लें।

(३) कोई एशियाई, जिसके पास कोई परवाना नहीं है; किन्तु जिसने ११ अक्तूबर १८९९ से पूर्व डच-सरकारको ३ पौंडकी रकम दे दी थी, बशर्ते कि ऐसा एशियाई उपनिवेश-सचिव द्वारा नियत की जानेवाली तारीखसे पहले नियम द्वारा निश्चित फार्मके अनुसार अधिवासी प्रमाणपत्र ले ले।

(४) अपने परवानोंको बदलवानेकी यह बाध्यता सोलह वर्ष तक की आयुके बच्चोंपर लागू न हो। वे जब सोलह वर्षके हो जायें तब अधिवासी प्रमाणपत्र ले सकते हैं, ऐसा नियम कर दिया जाये।

(५) "एशियाई" शब्दमें सब एशियाइयोंका समावेश हो।

(६) ३ पौंडकी अदायगीसे सम्बन्धित उपधारा रद कर दी जाये।

(७) सरकारको अधिवासी प्रमाणपत्रोंके फार्म और उनके लिए प्रार्थनापत्र देनेकी विधि निश्चित करनेका अधिकार हो।

१०६. तार : प्रिटोरिया समितिको[1]

जोहानिसबर्ग
[अगस्त १०, १९०७ के पूर्व]

[प्रिटोरिया समिति
ब्रिटिश भारतीय संघ
प्रिटोरिया]

संघ की समितिने तथा हाइडेलबर्ग, पाँचेफस्ट्रूम, फ्रेनीखन (वेरीनिगिंग), मिडेलबर्ग, क्रूगर्संडॉर्प और अन्य शहरोंके प्रतिनिधियोंने भी, अपनी बैठकमें दासताके प्रमाणपत्रोंके लिए प्रार्थनापत्र देनेके समस्त विचारपर घृणा व्यक्त की। बैठकने प्रिटोरियाके भारतीयोंसे आग्रहपूर्वक अनुरोध किया कि वे अन्ततक मजबूत और वफादार रहें जिससे उनकी कायरता और स्वार्थपरता उनके देश और देशवासियोंके प्रति विश्वासघातका कारण न बने। यदि सब मजबूत रहे, जीत हमारी है। प्रिटोरियाको सब भारतीयोंके सम्मुख उत्साहवर्द्धक उदाहरण रखना है।

[ब्रि० भा० सं०]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–८–१९०७

१०७. श्री हॉस्केनकी "अवश्यम्भावी"

सारे दक्षिण आफ्रिकामें श्री हॉस्केन अश्वेत जातियोंके मित्र समझे जाते हैं। वे दक्षिण आफ्रिकाके उन गिने-चुने लोगोंमें से हैं जो अपने विचारोंपर दृढ़ रहनेका साहस रखते हैं। इसलिए प्रिटोरियाके भारतीयोंकी आम सभामें उन्होंने जो बातें कहीं, वे बहुत ध्यान देने लायक हैं।

आइये, हम उनके बताये हुए सिद्धान्तका विश्लेपण करें। सिद्धान्त यह है कि भारतीयोंको प्राच्य जातीय होनेके नाते "अवश्यम्भावी" को मान्य करके उसके सामने सिर झुका देना चाहिए। इस शब्दसे श्री हॉस्केन यह समझाना चाहते हैं कि यह अधिनियम चूँकि ट्रान्सवालके गोरोंकी माँगपर स्थानीय संसदने सर्वसम्मतिसे स्वीकार किया है, इसलिए इसे उन्हें ईश्वरीय विधानके समान समझना चाहिए। श्री हॉस्केनके इस प्रस्तावपर हम आपत्ति करनेके लिए विवश हैं। माननीय महानुभावने स्वीकार किया है कि वे स्वयं इस कानूनको पसन्द नहीं करते और अगर उनके लिए सम्भव होता तो वे स्वयं भारतीयोंकी प्रार्थना स्वीकार कर लेते। उन्होंने यह भी स्वीकार किया है कि "अनाक्रामक प्रतिरोध" अपनी सच्ची शिकायतोंको दूर करनेका सही

१. यह ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा भेजा गया था और इसका मसविदा अनुमानतः गांधीजीने बनाया था।

तरीका है। इसलिए श्री हॉस्केनका यह कथन कि यह कानून ईश्वरीय कानूनके समान है, स्वयं उन्हींकी वातोंसे कट जाता है। लेकिन हम तो इससे भी आगे जाते हैं। प्राच्य लोगोंके विचारानुसार कोई भी मानवीय कृत्य, जवतक कि वह वास्तवमें न्यायोचित न हो, दैवी होनहार नहीं समझा जाता। और जव-कभी कोई प्राच्य व्यक्ति किसी जाहिरा होनहारके सामने झुक जाता है तो उसके इस आचरणके पीछे हमेशा दैवी हाथकी मान्यताका भाव नहीं होता, वल्कि नीच स्वार्थपरता होती है। तव आत्मा चाहती है, पर देह साथ नहीं देती।

वह कौन-सी वात है जिसे श्री हॉस्केन भारतीयोंसे करवाना चाहते हैं? क्या यह कि वे इस देशमें वने रहनेके लिए गुलामीके कानूनको मान लें? दूसरे शब्दोंमें, श्री हॉस्केन, जो ईश्वरके भक्त हैं, भारतीयोंको यह सलाह देना चाहते हैं कि वे पार्थिव लाभके लिए अपने पवित्र संकल्प और सम्मानको लात मार दें। हम उनके प्रभुकी भाषामें जवाव देते हैं, "तुम पहले ईश्वरके राज्य और सदाचारके पंथकी खोज करो, फिर तुमको सव-कुछ मिल जायेगा।" हमारा विश्वास है कि इस निकम्मे कानूनका विरोध करके भारतीय "ईश्वरका राज्य" खोजेंगे।

श्री हॉस्केन कहते हैं कि शपथ वन्धनकारी नहीं है क्योंकि वह गलतीसे ली गई है। लेकिन वह पवित्र घोषणा तो भारतीयोंने वहुत सोच-विचार कर की है और उन्होंने इस कानूनका विरोध करने और कैद या उससे भी अधिक कष्ट सहन करनेका जो निश्चय किया है वह केवल अपने ही सम्मानके लिए नहीं, वल्कि अपने प्रियजनों और स्वदेशकी प्रतिष्ठाके लिए भी किया है।

इसलिए, हमें विश्वास है कि श्री हॉस्केन, असहायोंके प्रति अपने स्वाभाविक उत्साहके साथ, एशियाई-प्रश्नको समझनेका प्रयत्न करेंगे और हमें निश्चय है कि भारतीय समुदायके सम्पूर्ण पक्षको मान लेंगे। वे सभामें सरकारकी ओरसे शान्तिदूत वनकर गये थे। हमें इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि अगर वे भारतीय दृष्टिकोणको ठीक-ठीक समझ लेंगे तो एक सच्चे मध्यस्थका कर्तव्य पूरा करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–८–१९०७

१०८. श्री अलीका विरोध[1]

श्री अलीने अखबारोंको जो पत्र लिखा है उसकी तरफ हम ट्रान्सवाल-सरकारका ध्यान खींचना चाहते हैं। पाठकोंको याद होगा कि श्री अली उस शिष्टमण्डलके एक सदस्य थे जो लॉर्ड एलगिनसे एशियाई अध्यादेशके सम्बन्धमें मिला था। 'रैंड डेली मेल' उसे एक कटु विरोध कहता है, और वह है भी। शायद, श्री अलीका मामला असाधारण हो, लेकिन इससे यह साफ जाहिर है, ऐसा और किसी तरह जाहिर नहीं हो सकता था, कि इस कानूनसे भारतीय समुदायको कितना कष्ट होनेवाला है। भारतीयोंकी आपत्तिको कोरी भावुकता कहकर दवा दिया गया है। श्री डंकनने विना यह जाने कि इस कानूनका मतलव क्या है, यह कहनेकी कृपा की है कि एशियाइयोंके एतराजको दवा देना चाहिए। लेकिन हम पूछते हैं कि क्या श्री अलीने सिर्फ भावुकताके कारण ही यह रवैया अपनाया है? क्या भारतीय समुदायसे यह कहा जायेगा कि श्री अली एक मूर्खताभरी भावुकताके पीछे ही, कदाचित्, भुखमरीका सामना करने जा रहे हैं? या लॉर्ड एलगिनकी आँखें खुलेंगी कि आखिरकार, ब्रिटिश प्रजाको, भले ही वह भारतीय हो, जहाँ-कहीं ब्रिटिश झंडा लहराता हो वहाँ वैयक्तिक स्वतन्त्रता और सुरक्षाका अधिकार है?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-८-१९०७

१०९. ट्रान्सवालके भारतीय

सरकारने पीटर्सवर्गके सम्वन्धमें जो सूचना प्रकाशित की है वह निःसन्देह नब्ज़ टटोलनेके लिए है और ऐसा लगता है कि सरकारको अव भी शक है कि एशियाई अधिनियमके खिलाफ जो विरोधकी भावना है, वह व्यापक और आम लोगोंमें फैली हुई है या सिर्फ मुट्ठी-भर "आन्दोलनकारियों" तक सीमित है। इस दृष्टिसे पीटर्सबर्गकी सूचना न्यायोचित है। पीटर्सबर्गके भारतीयों द्वारा दिये गये जवावसे जनरल स्मट्सके दिमागमें जो भी शंका हो, वह दूर हो जानी चाहिए। पीटर्सवर्गके भारतीय अपने शहरमें पंजीयन कार्यालयका भेजा जाना एक ऐसी आफत समझते हैं, जिससे वचना चाहिए। उन्होंने सरकारको प्रार्थनापत्र भेज कर जो बहादुरी दिखाई है, उसपर हम उन्हें वधाई देते हैं; लेकिन हम उन्हें और सारे ट्रान्सवालवासी भारतीयोंको भी, सावधान कर देना चाहते हैं कि सरकारने पूर्वग्रहोंकी जो अभेद्य दीवार उनके सामने खड़ी कर दी है, उसमें दरार करनेके लिए उन्हें बहुत ही कठिन और लम्वी लड़ाई लड़नी पड़ सकती है। खून वहाये विना पापका प्रायश्चित्त नहीं हो सकता। ब्रिटिश भारतीयोंके लिए इसका यह अर्थ लगाया जा सकता है कि जेल और निर्वासन तक के कष्ट भोगे विना उन्हें आजादी नहीं मिल

१. देखिए "अलीका पत्र", पृष्ठ १५६।

सकती। जिन राहतोंको पानेके लिए वे लड़ रहे हैं, उन्हें पानेसे पहले उन्हें अपने आपको उनके योग्य साबित करके दिखलाना होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–८–१९०७

११०. अब क्या होगा?

सार्वजनिक सभा[1] समाप्त हो गई। प्रिटोरियाने बहादुरी दिखाई। अगस्तके दिन बीत चले, लेकिन अभी तक किसीको पकड़ा नहीं गया। अब क्या होगा? यह प्रश्न बहुत जगह किया जा रहा है। ऐसा दिखाई देता है कि प्रिटोरियाके नोटिसके आधारपर सरकारने कोई कदम उठानेका इरादा नहीं किया था। सरकारका यह इरादा जान पड़ता है कि ट्रान्सवालके सारे भारतीयोंको गुलामीका पट्टा लेनेका मौका मिल जानेके बाद ही जेल भेजना शुरू किया जाये। अब पीटर्सबर्गमें बहिष्कार सफल होना सम्भव है। इसलिए यदि दफ्तर कहीं खुल सकता है तो वह जोहानिसबर्गमें ही, और वहाँ नोटिसकी अवधि पूरी हो जानेके बाद गिरफ्तारियाँ शुरू होंगी। जो खबरें मिली हैं उनसे मालूम होता है कि सरकार सबसे पहले नेताओंको गिरफ्तार करेगी। यह निर्णय ठीक माना जायेगा। यदि उसे यह सन्देह हो कि केवल नेताओंके बहकानेसे लोग नये कानूनका विरोध कर रहे हैं, तो नेताओंकी गिरफ्तारीके बाद भी यदि समाज दृढ़ रहे तो वह सन्देह दूर हो जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–८–१९०७

१. देखिए "भाषण: प्रिटोरियामें", पृष्ठ १३९-४१।

१११. समितिकी लड़ाई

दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिने फिर कानून सम्बन्धी लड़ाई शुरू की है और इसमें कोई शक नहीं कि वह सार्वजनिक सभाका फल है। श्री चर्चिलने श्री रॉबर्टको जवाब देते हुए कहा है कि बड़ी सरकार मानती है, यह मामला बहुत ही गम्भीर हो गया है। बड़ी सरकारने लॉर्ड सेल्बोर्नसे हमेशा तार भेजते रहनेको कहा है। और यह भी सूचित किया है कि वे ऐसी सब कार्रवाई करें, जिससे स्वराज्य प्राप्त उपनिवेशके हकोंको धक्का न पहुँचे।

उधर, श्री कॉक्सने[1] नोटिस दिया है कि यदि भारतीयोंके हकोंकी रक्षा न की जा सके, तो ट्रान्सवालको पचास लाख पौण्ड कर्जकी सहायता नहीं दी जानी चाहिए।

इन घटनाओंसे पता चलता है कि बड़ी सरकार ट्रान्सवालके भारतीयोंको छोड़ नहीं देगी। किन्तु इसमें खुली शर्त यह है कि ट्रान्सवालके भारतीय अपने आपको न छोड़ें। उनकी जेल जानेकी शक्तिपर सब कुछ निर्भर है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–८–१९०७

११२. जनरल स्मट्सका उत्तर

दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिने जनरल बोथाके नाम जो पत्र भेजा था उसका उत्तर जनरल स्मट्सने दिया है। उसका सारांश 'स्टार' आदि समाचारपत्रोंको तार द्वारा प्राप्त हुआ है। यह उत्तर एक मास पुराना है, इसलिए इसे अधिक महत्त्व देनेकी जरूरत नहीं। इसके बाद तो बहुतसी घटनाएँ हो चुकी हैं, और उनका क्या प्रभाव पड़ा है यह अभी नहीं कहा जा सकता। परन्तु श्री स्मट्सका एक महीने पहलेका उत्तर बता रहा है कि यदि उनका वश चले तो वे एक भी भारतीयको नहीं रहने देंगे। भूमि सम्बन्धी अधिकार वे देंगे नहीं, अँगुलियोंकी छाप तो देनी ही है, ट्रामका कानून भारतीयोंके हितके लिए है, वैसी ही रेलवेकी बात है। तब फिर शेष क्या रहा? इतनेपर भी जनरल स्मट्स कह रहे हैं कि भारतीय नेतागण कानूनके सामने झुकना नहीं चाहते, इसलिए वे उन लोगोंकी सलाह नहीं लेना चाहते, यानी भारतीय समाजको किस प्रकार गुलाम बनाया जाये, इसे वे महानुभाव खुद अच्छी तरह जानते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–८–१९०७

१. पत्रकार; ब्रिटिश संसद्के सदस्य। देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ११।

११३. अलीका पत्र

श्री अलीने समाचारपत्रोंको पत्र लिखा है, इसे हम उचित कदम समझते हैं। हम मानते हैं कि श्री अलीका मामला बहुत ठोस है। उसका प्रभाव विलायतमें और दक्षिण आफ्रिकामें पड़े बिना नहीं रहेगा। श्री अलीने समितिको जो पत्र[1] लिखा था उससे हुई भूल इस पत्रके द्वारा कुछ मात्रामें सुधर जाती है। श्री अली केप जानेवाले हैं। वहाँ वे चाहें तो देश-सेवा कर सकते हैं। केपके भारतीयोंने ट्रान्सवालकी लड़ाईमें काफी भाग लेना शुरू किया है। उसे श्री अली बल दे सकते हैं। हम आशा करते हैं कि श्री अली केपमें पूरी तरह लड़ाई लड़ेंगे और केपके भारतीय भाई उनसे सहायता प्राप्त करेंगे। इस सम्बन्धमें हमें इतना कहना चाहिए कि जो सहायता करनेके लिए तैयार हैं उन्हें जेलके प्रस्तावका समर्थन करना है, ट्रान्सवालको जोश दिलाना है और जिनपर मुसीबत आये उन्हें आर्थिक सहायता देनी है। इससे भिन्न जो कुछ भी किया जायेगा वह सहायक होनेके बदले नुकसान करनेवाला होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-८-१९०७

११४. हमारा कर्तव्य

हम इस अंकमें दो पत्र ऐसे प्रकाशित कर रहे हैं जिनमें उन लोगोंके नाम हैं जिन्होंने ३१ जुलाईको अपनी दूकानें बन्द नहीं कीं। इसके अलावा जिन्होंने प्रिटोरियामें गुलामीके पट्टेके लिए अर्जी दी थी उनके जो नाम हमारे पास पहुँचे हैं, उन्हें भी हम छाप रहे हैं। यह सब हमने अत्यन्त खेदके साथ प्रकाशित किया है। किन्तु हम समझते हैं कि जब एक महान लड़ाई लड़ी जा रही है तब हमें अपराधियोंके नाम छिपाने नहीं चाहिए। उनमें से एकपर भी हमें रोष नहीं है। किन्तु हम मानते हैं कि नामोंको इस प्रकार प्रकाशित करके हम देशसेवा कर रहे हैं। इस समय जरूरत यह है कि सारे भारतीय पूरी ताकत पकड़ लें और स्वार्थको छोड़ें। इसलिए कमजोर लोगोंके नाम प्रकाशित करनेमें हमारा उद्देश्य यह है कि दूसरे बलवान बनें। जिन लोगोंके नाम दिये गये हैं उन्हें कुछ सफाई देनी हो और वह संक्षेपमें हो तो उसे भी प्रकाशित किया जायेगा। जिन्हें अपनी भूल दिखाई दे और वे पश्चात्तापके पत्र लिखें तो उन्हें भी हम छापेंगे। वे भी हमारे ही देशके हैं, यह समझकर हमें उनके कल्याणकी इच्छा करनी है और आशा है, इसी तरह हमारे पाठक भी चाहेंगे। हमारी लड़ाईमें गुस्सा, द्वेष, अहंकार, स्वार्थ-भावना, मारपीट, ये सब निकम्मे ही नहीं, हानिकारक भी हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-८-१९०७

१. देखिये "अलीकी भूल", पृष्ठ १२४-२५।

११५. केपके भारतीय

हम अपने २७ जुलाईके अंकमें[1] लिख चुके हैं कि केपके भारतीयोंको क्या माँगना चाहिए, इसपर बादमें विचार करेंगे। अब यहाँ विचार करें।

केपमें एक कष्ट तो प्रवासी कानूनका है। उसमें केपसे बाहर जानेवाले भारतीयोंपर एक वर्षकी अवधिका पास लेनेका बन्धन है। यदि वे यह पास न लें और उन्हें अंग्रेजी न आती हो तो वे वापस नहीं आ सकते। इस कानूनको हम बहुत ही सख्त मानते हैं। ऐसा अनुमतिपत्र लेना स्वतन्त्र व्यक्तिका काम नहीं है। जिन्हें केपमें रहनेका हक है वे यदि एक बार परवाना ले लें तो वह हमेशा कायम रहना चाहिए। एक वर्षसे अधिक समय तक यदि कोई व्यापारी बाहर रहे तो क्या वह अपना व्यापार सँभालनेके लिए केप वापस नहीं आ सकता? इसलिए अवधिकी यह उपधारा निकल जानी चाहिए।

इसके अलावा मियादी पास लेनेवालोंसे फोटो माँगा जाता है। अँगुलियोंकी छापकी अपेक्षा फोटो देना हम अधिक लज्जाजनक मानते हैं। ऐसी धाराएँ खत्म की जानी चाहिए।

दूसरा कानून व्यापारी परवानेका है। इस सम्बन्धमें परवाना अधिकारीके फैसलेपर अन्ततः सर्वोच्च न्यायालयमें अपील करनेका हक होना चाहिए। फेरीवालोंपर हर मुहल्लेके लिए अलग-अलग परवाना लेनेका जो बंधन है, वह भी दूर होना चाहिए।

ईस्ट लंदनमें पैदल पटरियों तथा बस्तियोंके विशेष नियम हैं। उनमें परिवर्तन करनेके लिए कहा जाना चाहिए। शिक्षाके सम्बन्धमें भारतीय समाजको पूरी सुविधाएँ देनेके लिए हलचल की जानी चाहिए।

इतनी बातोंके बारेमें जो सर्वथा सन्तोषजनक उत्तर दें उन्हींको मत दिया जाये। यदि ऐसा कोई न मिले तो किसीको मत न दिया जाये। हम समझते हैं कि इसमें भारतीय समाजकी प्रतिष्ठा है और ऐसा करना उसका कर्तव्य है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-८-१९०७

१. देखिए "केपके भारतीय", पृष्ठ १२५-२६।

११६. एस्टकोर्टकी अपील

एस्टकोर्टके भारतीयोंने नगरपालिका-मताधिकारके सम्बन्धमें जो अपील दायर की थी, उसका निर्णय उनके पक्षमें हुआ है। उसके लिए हम एस्टकोर्टके भारतीय बन्धुओंको बधाई देते हैं। इस अपीलका यह निर्णय हुआ है कि भारतीय समाजको एस्टकोर्ट नगरपालिकाके चुनावमें मत देनेका अधिकार है। अब सवाल यही रह जाता है कि उसके लिये आवश्यक सम्पत्ति आवेदकोंके पास है या नहीं। इस विजयसे बहुत फूलनेकी बात नहीं है, क्योंकि अभी नगरपालिका-विधेयक तो विलायतमें वैसा ही विचाराधीन है। परन्तु समितिके प्रयत्नसे मालूम होता है, उस विधेयकपर बड़ी सरकारकी स्वीकृति नहीं मिलेगी। फिर भी जिन्होंने अर्जी दी है वे अपने नाम मतदाता सूचीमें दर्ज करवा दें। इसके अतिरिक्त और कोई कदम उठाना हम उचित नहीं समझते।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–८–१९०७

११७. रॉसका पत्र

नेटाल रेलवेके मुख्य प्रबन्धक श्री रॉसने भारतीय समाजको अँगूठा दिखा दिया है। इस पत्रके कारण हम भारतीय समाजको बधाई देते हैं। जैसे-जैसे ये लोग हमारे धर्मोंका अधिकाधिक अपमान करेंगे, हमारे रंगका अधिकाधिक तिरस्कार करेंगे वैसे-वैसे, यदि हम सच्चे होंगे तो, हम अधिक जोर कर सकेंगे। जैसा पत्र श्री रॉसने लिखा है वैसे पत्रोंसे हमें ज्ञात होता है कि दक्षिण आफ्रिकामें हमारी स्थिति कितनी दयनीय है। यदि हमें बाकायदा हक नहीं मिलते, तो हमारा धन हमें खाने दौड़ेगा। समझदार व्यक्तिके लिए उसका धन प्रतिष्ठाके बिना काँटेके समान बन जाता है। सहाराके रेगिस्तानमें किसीकी जेबमें सोनेकी ईंटें हों, किन्तु पानीकी बूँद न मिले तो वे ईंटें जहरके समान लगेंगी। उसी प्रकार इस देशमें बिना मानके हमारा धन जहरके समान बन जायेगा। श्री रॉसके पत्रके आधारपर तत्काल कुछ करनेकी आवश्यकता नहीं दिखाई देती। हमारी रायमें इन प्रश्नोंका निर्णय ट्रान्सवालकी लड़ाईके परिणामपर निर्भर है। बहुत आजिजी करनेसे हमारे मौलवियों, पादरियों और पुजारियोंको आधी कीमतमें टिकट मिल सकते हैं, किन्तु हमारे सामने यह प्रश्न नहीं है कि टिकट मिलेंगे या नहीं। सच्चा प्रश्न तो यह है कि गोरोंकी नजरोंमें हमारी कोई गिनती नहीं है, और यही बात नुकसानदेह है। गिनतीमें आनेका यही रास्ता है कि ट्रान्सवालके भारतीय अन्ततक — मृत्यु पर्यन्त — जूझें और प्रतिष्ठा प्राप्त करें। तब हम बिना मताधिकारके भी मताधिकारी हो जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–८–१९०७

११८. डर्बनकी कृषि-समितिका ओछापन

हमारे अंग्रेजी विभागमें एक भारतीय व्यापारीने लिखा है कि समितिने भारतीयोंको डर्बन-प्रदर्शनीकी प्रतियोगितामें भाग लेनेसे मना कर दिया है। यह बात बहुत ही बुरी है। गोरे भारतीयोंके परिश्रमसे डरते हैं, यह हम जानते हैं। मालूम होता है, वे भारतीयोंकी कुशलतासे भी डरते हैं और इसलिए नांदमें बैठे हुए कुत्तेका अनुकरण करते जान पड़ते हैं। वे न खाते हैं और न खाने देते हैं। समितिके इस कामसे सिद्ध होता है कि इस समय हमारा एक ही कर्तव्य है और वह है: मान-मर्यादा प्राप्त करना। यह बात अभी तो ट्रान्सवालके भारतीयोंके हाथमें है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–८–१९०७

११९. उमर हाजी आमद झवेरी

जून १८ के 'अखबारे सौदागर'[1] से मालूम होता है कि श्री उमर झवेरीने बम्बईके किनारे-पर पैर रखते ही भारतकी सेवा शुरू कर दी है। उनके सम्मानमें श्री जगमोहनदास सामलदासने अपने बंगलेमें समारोह किया था। उसमें श्री उमर झवेरीने[2] भारतीयोंकी हालतका चित्र खींचा। इसके अलावा उसी अखबारमें संवाददाताने उनके साथ मुलाकातका विवरण भी दिया है। वह तीन कालमोंमें छपा है। उसमें दक्षिण आफ्रिकामें होनेवाले कष्टोंका सारा विवरण दिया गया है। उपायके रूपमें बताया गया है कि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय तीस करोड़ भारतीयोंकी मददपर भरोसा रखते हैं। श्री उमर झवेरीने अपने भाषणमें देशके भलेके लिए बैरिस्टर बननेका अपना इरादा फिर व्यक्त किया।

इस सबपर टीका करते हुए 'अखबारे सौदागर' के सम्पादकने श्री उमर झवेरीकी माँगका समर्थन किया है और भारतीय समाजसे मदद करनेकी सिफारिश की है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–८–१९०७

१. बम्बईसे प्रकाशित होनेवाली एक गुजराती पत्रिका।
२. भूतपूर्व संयुक्त अवैतनिक मंत्री, नेटाल भारतीय कांग्रेस; देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ४७४-५।

१२०. एक पारसी महिलाकी हिम्मत

श्रीमती भीकाईजी रुस्तमजी के० आर० कामाने 'सोशियालॉजिस्ट'में एक पत्र लिखा था, जो 'जामे जमशेद' में उद्धृत किया गया है। उसके इन जोरदार शब्दोंकी ओर हम अपने ट्रान्सवालके पाठकोंका ध्यान आकर्षित करते हैं:

> भारतके पुरुषो और महिलाओ, मेरे शब्दोंपर ध्यान दो और इस पाप-कर्मका सामना करो। यह एक पुरानी कहावत है कि जो अपनी आजादी खोता है वह अपने आधे सद्गुण खोता है। इसलिए आजादी, इन्साफ और सच्चाईके लिए लड़नेको बाहर निकल पड़ो। भारतके लोगो, अपने मनमें निश्चय करो कि ऐसी गुलामीमें जीनेके वजाय सारी जनता मर जाये, वही अच्छा। यदि आप गुलामीमें जीते हैं तो भारत, ईरान और अरबिस्तानके प्राचीन स्वर्ण-युगकी बातें करना बेकार है। बहादुर राजपूतो, सिक्खो, पठानो, गुरखो, देशाभिमानी मराठो और बंगालियो, चंचल पारसियो, बहादुर मुसलमानो और आखिरमें नम्र जैनो और धैर्यवान तथा महान बहुसंख्यक जनसमाजकी सन्तान हिन्दुओ, अपने प्राचीन इतिहासके अनुसार जिन्दगी क्यों नहीं बिताते? इस तरह गुलामीमें क्यों जी रहे हो? बाहर निकलो।

श्रीमती भीकाईजी कामाको राजनीतिक जीवनका २० वर्षका अनुभव है। वे इस समय पेरिसमें रहती हैं। उन्हें अपने देशके लिए दर्द है। उन्होंने ये शब्द यद्यपि भारतके प्रति कहे हैं, फिर भी इस समय तो ट्रान्सवालके भारतीयोंपर लागू हो रहे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-८-१९०७

१२१. भाषण[१]: हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें

जोहानिसबर्ग
अगस्त ११, १९०७

हमीदिया इस्लामिया अंजुमन लगभग दो महीनेसे हर हफ्ते बैठक बुलाकर लोगोंमें साहस और उत्साह भर रही है। प्रिटोरियाकी सार्वजनिक सभाके लिए प्रिटोरियावालोंकी मदद करनेके विचारसे एक विशेष ट्रेनका इन्तजाम करके लगभग छ: सौ व्यक्ति वहाँ गये थे। अंजुमनका समाजपर यह एहसान है। हम आशा करते हैं कि अंजुमन हमेशा ऐसे ही कदम उठाती रहेगी। यद्यपि प्रिटोरियामें कुछ लोगोंने पंजीयन करा लिया है, किन्तु वे पछता रहे हैं। इसलिए हमारी बाजी बिगड़ी नहीं है। प्रिटोरियावालोंने लाज रखी है और उनसे भी अधिक पीटर्स-

१. गांधीजीने हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी एक बैठकमें पंजीयन अधिनियम-विरोधी आन्दोलनका विवरण दिया था। यह उन्हींके भाषणकी रिपोर्ट है।

वर्गवालोंने अपना कर्तव्य किया है। वहाँ किसी भी सज्जनने पंजीयन नहीं कराया, यह बधाईकी बात है। सरकार जहाँ-जहाँ कमजोरी देखती है, वहाँ-वहाँ पंजीयन-कार्यालयको भेज देती है। मुझे लगता है कि श्री चैमनेको शायद यह खबर भी मिली हो कि पीटर्सबर्गमें लोग कमजोर हैं और वे सार्वजनिक सभामें भी शामिल नहीं हुए। इसलिए कार्यालय वहाँ गया था, किन्तु सौभाग्यसे श्री जुसब हाजी वली और दूसरे लोगोंने मिलकर साफ इनकार कर दिया। उन्होंने कहा कि सरकार स्वेच्छया पंजीयन कराने देगी, तभी वे उसे मानेंगे, नहीं तो भले ही वह उन्हें देश-निकाला या जेल दे, वे इस जहरीले कानूनको नहीं मानेंगे। अब सरकार शिथिल पड़ गई लगती है, क्योंकि पीटर्सबर्गकी जेलमें जो दो आदमी थे, उन्हें फुसलाकर अँगुलियोंकी छाप ली गई है। यह बड़ी शर्मकी बात है।

'जूटपॅांसबर्ग रिव्यू' लिखता है कि भारतीय समाज चतुर और योग्य है। उसके साथ सोच-विचार कर बर्ताव किया जाना चाहिए। हमारी लन्दनकी समिति भी इस समय बड़ी मेहनत कर रही है। यह सार्वजनिक सभाओंका फल है। इस प्रकार हमें सभी स्थानोंसे मदद मिलनी शुरू हो गई है। फिर भी, हमें इतना तो याद रखना ही चाहिए कि कुछ व्यक्तियोंको जेलमें तो जाना ही है और यह सम्भव है कि सरकार उनमें से पहले मुझे पकड़े। दूसरे नेताओंके विषयमें ऐसा ही है। सरकार चाहे मुझे और दूसरे नेताओंको पकड़े, किन्तु यदि आप लोगोंने जो हिम्मत की है उसे कायम रखा, तो अन्तमें हमारी जीत है ही। अधिकारी परवानोंके बारेमें धमकी देते हैं, किन्तु यह उनकी गलती है। हम बिना परवानोंके व्यापार कर सकते हैं। इसके कारण वे हमपर जुर्माना कर सकते हैं और यदि हम जुर्माना न दें, तो हमें जेल भेज सकते हैं। किन्तु परवाना कानूनमें ऐसी व्यवस्था नहीं है कि हमें देश-निकाला दिया जा सके। इसलिए हमारे लिए इसमें डरनेकी भी कोई बात नहीं है। अब पंजीयन कार्यालय पॉचेफस्ट्रूम और क्लार्क्सडॉर्प जायेगा। यदि वहाँके लोगोंने बुलाया, तो हम जायेंगे, नहीं तो जाना आवश्यक नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–८–१९०७

१२२. तार[1] : पीटर्सबर्गके भारतीयोंको

[जोहानिसबर्ग
अगस्त ११, १९०७]

अंजुमन पीटर्सबर्गके भारतीयोंको उनके शानदार बेदाग कामों और वीरताके साथ डटे रहनेपर बधाई देती है। यदि हम अन्त तक दृढ़ रहेंगे तो परमात्मा हमें सफलता प्रदान करेगा।

[हमीदिया इस्लामिया अंजुमन]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–८–१९०७

१२३. तार : पॉचेफस्ट्रूमके भारतीयोंको

[जोहानिसबर्ग
अगस्त ११, १९०७]

आशा है वहाँके भारतीय अनुमतिपत्र कार्यालय रूपी महामारीसे बचेंगे। उसका स्पर्श हमारी राष्ट्रीयताको भ्रष्ट और हमारे धर्मपर आघात करता है।

[हमीदिया इस्लामिया अंजुमन]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–८–१९०७

१. गांधीजी हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें, जो ११ अगस्तको हुई थी, शामिल हुए थे और बोले थे। इस सभामें तय हुआ था कि पीटर्सबर्ग और पॉचेफस्ट्रूमके भारतीयोंको तार भेजे जायें (देखिए अगला शीर्षक)। अनुमानतः इन तारोंकी जिम्मेदारी गांधीजीपर थी।

१२४. पत्र: 'रैंड डेली मेल' को

जोहानिसबर्ग
अगस्त १२, १९०७

सेवामें
सम्पादक
[रैंड डेली मेल]

महोदय,

आपने एशियाई अधिनियमपर अपने विशेष लेखको इस उत्तेजक शीर्षकसे आरम्भ किया है, "भारतीय कर्ज नहीं चुकायेंगे"। इस लेखकी संयत भाषा प्रकट करती है कि यह किसी बुरे इरादेसे नहीं लिखा गया है। साथ ही यदि आप तबतक काल्पनिक-जैसी दीखनेवाली इस बातको छापनेसे हाथ रोके रहते, जबतक ब्रिटिश भारतीय समाजके नेताओंसे मिल न लेते, तो यह आपके पाठकोंकी अवश्य ही अधिक अच्छी और अधिक उपयोगी सेवा हुई होती। जाहिर है कि आपको उन नेताओंकी रायें मालूम नहीं हैं।

अब मुझे यह कहनेकी इजाजत दी जाये कि, जहाँतक मैं जानता हूँ, एक भी प्रतिष्ठित भारतीय ऐसा नहीं है जिसने कभी इस आशयका बयान दिया हो कि प्रत्येक भारतीय "जो अनाक्रामक प्रतिरोधके कारण जेलमें जायेगा अथवा अपने व्यापार या फेरीके परवानेसे वंचित किया जायेगा, अपना ऋण चुकानेसे इनकार कर देगा।" यह हमारे संघर्षकी भावनाके सर्वथा विरुद्ध होता। हमने ईश्वरके ऊपर पूरा भरोसा करके स्वयं कष्ट सहन करनेकी दृष्टिसे इस आन्दोलनको आरम्भ किया है। इसलिए, अपने वाजिब कर्जसे इनकार करनेका विचार रखना और उसे देनेसे इनकार करना हमारे लिए दुष्टताकी बात होती। चाहे हम हिन्दू हों या मुसलमान, हमारा विश्वास है कि जो कर्ज हम इस जिन्दगीमें अदा नहीं कर सकते वे दूसरे जन्ममें कठोर दण्डके साथ हमें चुकाने होंगे। कयामतके दिन हमें अपने पापोंका जवाब देना होगा और कर्ज न चुकाना उन पापोंमें कोई छोटा पाप नहीं है।

हम अवश्य ही हर तरफसे जोर डालना चाहते हैं। हम बेशक शाही संरक्षण चाहते हैं और उपनिवेशियों और सरकारकी सहानुभूति भी उससे कम नहीं चाहते; परन्तु हम यह किसी ऐसे उपायसे नहीं प्राप्त करना चाहते जो बिलकुल स्वच्छ और प्रामाणिक न कहा जा सके। हम जिसे अपनी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और प्रतिष्ठापर अकारण आक्रमण मानते हैं, उसके विरुद्ध हमारे बचावका केवल एक ही अस्त्र है कि हम दक्षिण आफ्रिकाके लोगों और उस विशाल साम्राज्यके नागरिकोंको, जिसके अंग होनेका गोरोंके समान हमारा भी दावा है, दिखा दें कि जिसे हम हृदयसे महा अन्याय समझते हैं उसके लिए कष्ट उठानेकी मर्दानगी हममें है।

मैं अपने साथी व्यापारियोंसे, जिनसे जल्दीमें मैं मिल सकता था, मिला हूँ। वे हैं — सर्वश्री एम० सी० कमरुद्दीन ऐंड कम्पनी, एम० एस० कुवाड़िया, एम० ए० करोड़िया, ए० एफ० कैमे ऐंड कम्पनी, आमद मूसाजी ऐंड कम्पनी, एम० पी० फैन्सी, मुहम्मद हुसैन ऐंड कम्पनी और जुसब इब्राहीम। और हम लोग पिछले महीनेसे अबतक लगभग १८,००० पौंड यहाँकी और लन्दनकी

थोक व्यापारी फर्मोंको चुकता कर चुके हैं। हममें से कुछने आकस्मिक जरूरतोंकी तैयारी करनेके लिए अवधिसे पहले ही अपने ऋण चुका दिये हैं। यह सत्य है कि हममें से बहुतोंने इस संघर्षके कारण अपने माल खरीदनेके आदेश रद कर दिये हैं। उन थोक व्यापारी फर्मोंके लिए और हमारे लिए उचित भी यही है। हमें अफसोस है कि हमारे ऐसा करनेसे उन थोक व्यापारी फर्मोंको हमारे साथ-साथ हानि उठानी पड़ेगी; परन्तु वह अनिवार्य है।

आपका, आदि

ईसप इस्माइल मियाँ

सुलेमान इस्माइल मियाँ व कम्पनीके प्रबन्धक साझी

और कार्यवाहक अध्यक्ष

ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

रैंड डेली मेल, १३–८–१९०७

१२५. पत्र: जनरल स्मट्सके निजी सचिवको

जोहानिसबर्ग

अगस्त १५, १९०७

जनरल स्मट्सके निजी सचिव
प्रिटोरिया

महोदय,

आपने एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके सम्बन्धमें मेरे ८ तारीखके पत्रके उत्तरमें १४ तारीखको जो पत्र भेजा है, मुझे उसकी प्राप्ति स्वीकार करनेका सम्मान प्राप्त हुआ। मैं सम्बन्धित अधिनियमके सम्बन्धमें अपने विचार[1] स्पष्ट रूपसे बतानेके लिए जनरल स्मट्सको धन्यवाद देता हूँ।

मेरी विनीत सम्मतिमें, मेरे सुझाये हुए संशोधनोंसे एशियाई कानून संशोधन अधिनियमका प्रधान मन्तव्य कार्यान्वित हो जायेगा, अर्थात् उनसे उपनिवेशमें रहनेके अधिकारी प्रत्येक एशियाईकी शिनाख्त हो जायेगी।

१. जनरल स्मट्सके निजी सचिवने गोपनीय रूपसे लिखा था: "...मुझे आपको यह सूचित करनेका निर्देश दिया गया है कि श्री स्मट्स उन संशोधनोंको स्वीकार करनेमें असमर्थ हैं जो आपने प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकमें रखे हैं, क्योंकि उस विधेयकमें ऐसे संशोधनोंसे, यदि वे सम्भव हों तो, १९०७ के एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके सब विधान बिल्कुल समाप्त हो जायेंगे और इसके अतिरिक्त चूँकि विधेयकमें इस स्तरपर इन संशोधनोंको स्वीकार करना असम्भव है... उपनिवेश-सचिव एशियाई कानून संशोधन अधिनियमकी सब धाराओंको पूरी तरह अमलमें लायेंगे और यदि इस देशके निवासी भारतीयोंके प्रतिरोधसे वे परिणाम निकलते हैं, जो इस समय उनके सामने गम्भीर रूपमें प्रस्तुत नहीं हैं, तो इसमें दोष केवल उनका और उनके नेताओंका होगा।"

मैंने जनरलका ध्यान अधिनियमके सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीयोंकी गम्भीर घोषणाकी ओर आकर्षित किया, इसके लिए मैं कोई क्षमा-याचना नहीं करता। जहाँतक मैं अपने देशवासियोंको सलाह दे सकता हूँ, परिणाम जो भी हों, मेरे लिए उनको अपनी ऐसी विचारपूर्वक की गई घोषणाको त्याग देनेकी सलाह देना सम्भव नहीं है। और यदि ऐन वक्तपर जनरल स्मट्सके लिए अधिनियमके मन्तव्यको किसी प्रकार सीमित किये विना उस घोषणाको मान लेना सम्भव हो तो मैं उनकी सहानुभूति और सहायताका प्रार्थी हूँ। मैंने अपने देशवासियोंको जो सलाह दी है उसपर चलनेके सम्भावित परिणामोंसे कभी अपनी आँखें वन्द नहीं की हैं, अर्थात् यदि प्रवासी प्रतिवन्धक विधेयक उपनिवेशकी विधि संहितामें सम्मिलित हो जाये तो प्रत्येक भारतीयको जेल भेजा जा सकता है, व्यापारियों और फेरीदारोंके व्यापारिक परवाने छीने जा सकते हैं और नेताओंको निर्वासित किया जा सकता है। किन्तु मैं सम्मानपूर्वक कहना चाहता हूँ कि अधिनियमका पालन करना उन सव जोखिमोंसे अधिक वुरा होगा जो उसका पालन न करनेसे उनपर आ सकती हैं।

मेरा यह पत्र-व्यवहार जनरल स्मट्ससे व्यक्तिगत अनुरोधके रूपमें है और खानगी है; किन्तु चूँकि मैं इस वातके लिए उत्सुक हूँ कि सरकारके इरादे यथासम्भव मेरे देशवासियोंके सम्मुख व्यापक और यथार्थ रूपमें रखे जायें, इसलिए यदि जनरल स्मट्सको कोई आपत्ति न हो तो मैं इस पत्र-व्यवहारको प्रकाशित करना चाहूँगा।[1]

आपका आज्ञाकारी सेवक,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४-८-१९०७

१. यह २४-८-१९०७ के **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित हुआ था। देखिए "पत्र: 'इंडियन ओपिनियन' को", पृष्ठ १७७।

१२६. भारतीय प्रस्तावका क्या अर्थ?

अब अनुमतिपत्र कार्यालय गाँव-गाँव भटकता फिर रहा है। अधिकारी लोग घर-घर दलालोंके समान घूम रहे हैं। वे लोगोंको बहकाते और समझाते हैं कि उन्हें नये कानूनके अनुसार पंजीयन-पत्र लेना चाहिए। इसके अलावा वे उलटे लोगोंसे ही पूछते हैं कि उनकी माँग क्या है। इसलिए यह जरूरी है कि स्वयंसेवक प्रत्येक भारतीयको पंजीयनका अर्थ समझाएँ। हमें देखकर खुशी है कि इस प्रकार लोगोंकी परीक्षा हो रही है। नये कानूनके बारेमें प्रत्येक भारतीयको पूरी और स्वतन्त्र बूझ होनी चाहिए। हमें आश्चर्य लोगोंकी परीक्षासे नहीं, बल्कि तब होगा जब हम जवाब न दे सकेंगे। अतः अब हम स्वेच्छया-पंजीयनके अर्थपर विचार करें।

कानूनके अनुसार सरकार लोगोंको नये पंजीयनपत्र लेनेके लिए विवश कर सकती है। इतना ही नहीं वह उन पंजीयनपत्रोंको बार-बार बदलवानेके लिए भी विवश कर सकती है। साथ ही वह लोगोंसे चाहे जब अँगुलियाँ लगवा सकती है। बच्चोंकी अँगुलियाँ भी लगवा सकती है। और परवाना लेते समय अँगुलियाँ लगवा सकती है। संक्षेपमें, नये कानूनकी सारी खूनी उपधाराएँ लागू हो सकती हैं। यह हमें मंजूर नहीं है। इसके बदलेमें हम सरकारसे कहते हैं कि उसका शक दूर करनेके लिए हम मौजूदा अनुमतिपत्र बदलनेको तैयार हैं। इस प्रकार जो खुशीसे पंजीयनपत्र बदलवा लें उनपर नया कानून लागू नहीं हो सकता, और न कोई उपधारा ही लागू हो सकती है। यानी हमें जगह-जगह अँगुलियाँ नहीं लगानी पड़ेंगी। और यदि प्रत्येक भारतीय स्वेच्छया पंजीयनपत्र ले ले तो खूनी कानून बिलकुल रद हो जायेगा। यदि कोई भारतीय गफलतमें या जान-बूझकर अनुमतिपत्र न बदलवाये तो केवल उसीपर नया कानून लागू होगा। इस प्रकार हमारी माँग और सरकारी कानूनमें जबरदस्त अन्तर है। सरकारी कानून तो गधेकी सवारी है। और उस सवारीसे भारतीय समाजकी फजीहत होती है। हमारी माँग हाथीकी सवारी है और उससे हम बादशाही और मान भोगते हैं।

इस माँगके अलावा प्रिटोरियाके कुछ लोगोंने वकीलकी मारफत श्री स्मट्सको जो पत्र लिखा है उसपर जरा विचार करें। श्री स्मट्ससे कुछ परिवर्तन करनेकी माँग की गई है। उसे हम सहलाना कहते हैं। भगंदरको साधारण फोड़ा मानकर यदि कोई खरोंच डालता है तो कभी-कभी जख्म ऊपर-ऊपर सूख जाता है। इससे भगंदरका रोगी कभी-कभी मान लेता है कि उसका रोग मिट गया। किन्तु वास्तवमें भगंदर तो भीतर-ही-भीतर काम करता रहता है और भ्रममें पड़ा हुआ रोगी थोड़े दिनोंमें दूसरी जगह फोड़ा देखता है और जबतक वह भगंदरका इलाज नहीं करता, फोड़े होते और मिटते रहते हैं। यही बात हम उपर्युक्त कागजके सम्बन्धमें समझते हैं। भगंदरके रोगरूपी इस कानूनके लिए दो-चार चीजें निकाल देना कतई कोई इलाज नहीं है। यह केवल मन-बहलावके लिए है और हम मानते हैं कि इससे आखिर अधिक दुःख सहन करना होगा। इस भगंदरी कानूनके लिए जबरदस्त शल्य प्रक्रिया किये बिना और कोई चारा नहीं है। यह बात प्रत्येक भारतीय को जाननी चाहिए। अतः कानूनके बारेमें जब भी पूछताछ हो तो हमारी यही माँग होनी चाहिए कि कानून बिलकुल रद किया जाये; यह हमें साफ तौरसे समझ लेना चाहिए। और यदि यह कानून रद हो तो

हम झूठ लोगोंको छिपाना नहीं चाहते, यह सिद्ध करनेके लिए हम स्वेच्छया पंजीयन करवाने को तैयार हैं; किन्तु उतना करवा लेनेके बाद हम अपनेपर कानूनका हमेशाका सिर-दर्द नहीं रखना चाहते।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–८–१९०७

१२७. पीटर्सबर्गको बधाई

प्रिटोरियाने ठीक कर दिखाया। लेकिन पीटर्सबर्गने तो हद कर दी। वहाँ एक भी "कल-पगा या कल-मुँहा" नहीं निकला। अनुमतिपत्र कार्यालयका शत-प्रतिशत बहिष्कार किया गया, और अनुमतिपत्र कार्यालयको बिना कलेवा, खाली पेट लौटा दिया गया। वह बला फिर पीटर्सबर्गमें कदम न रखे, इसके लिए सरकारके पास पहले ही आवेदन भेज दिया गया है कि हमें कार्यालय नहीं चाहिए। इससे अधिक कोई भी गाँव नहीं कर सकता और इससे कम एक भी गाँवको करना नहीं चाहिए।

कैदमें पड़े हुए दो व्यक्तियोंको जबरदस्ती अनुमतिपत्र दिया गया उससे पीटर्सबर्गका सम्मान रत्ती-भर भी नहीं घटता। देशमें अकाल आता है तो अकाल-पीड़ित लोग पेट भरनेके लिए अखाद्य वस्तुएँ खा जाते हैं। भूखे कुत्ते पाखाना चाटते हैं। उसी तरह खूनी कानूनके अधिकारीने भक्ष्य न मिलनेपर जेलमें जाकर जबरदस्तीसे जो नया अनुमतिपत्र दिया उसमें उसने अकाल-पीड़ितके समान ही काम किया है और वह बताता है कि नये अनुमतिपत्र लेनेमें सम्मान नहीं, बल्कि अपमान है। हम पीटर्सबर्गके लोगोंको बधाई देते हैं। उन्होंने जुलाईकी अन्तिम तारीखको दूकानें बन्द न करनेका जो महान अपराध किया था वह इसके द्वारा धुल गया है और वे बहादुर भारतीयोंकी दूसरी पंक्तिमें आ बैठे हैं। अपनी इस तरक्कीमें उन्हें यह याद रखना है कि वास्तविक लड़ाई अब आनेवाली है। जेलमें जाने और यह दिखानेका समय चला आ रहा है कि धनसे मान व देश अधिक प्यारा है। उस समय भी, हमें आशा है, पीटर्सबर्ग हिम्मतभरा उत्तर देगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–८–१९०७

१२८. हनुमानकी पूँछ

कहा जाता है कि लंका जलाये जानेके पहले जैसे-जैसे वानर हनुमानजी आगे वढ़ते गये वैसे-वैसे उनकी पूँछ वजनमें वढ़ती गई थी। उसी प्रकार नये पंजीयनका दफ्तर भी जैसे-जैसे आगे वढ़ता है वैसे-वैसे उसका वजन वढ़ता जा रहा है। प्रिटोरियाका नोटिस निकला तव प्रिटोरियाके सव भारतीयोंको पंजीकृत होना था। कार्यालय जब पीटर्सवर्ग पहुँचा तव प्रिटोरियाको पीटर्सवर्गमें पंजीकृत होनेका अधिकार मिला। पॉचेफ्स्ट्रूममें वहाँके भारतीयोंके अलावा प्रिटोरिया तथा पीटर्सवर्गके भारतीय भी पंजीकृत हो सकेंगे। और क्लार्क्सडॉर्पमें उपर्युक्त तीनों शहरोंके भारतीयोंको गुलामीका पट्टा लेनेका अवसर दिया जायेगा। इस प्रकार पंजीयन कार्यालयकी पूँछ लम्वी होती जा रही है। हम प्रिटोरियाके भाइयोंके प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हैं, क्योंकि जवतक कार्यालय आखिरी जगहपर नहीं पहुँचेगा तवतक उनका पीछा नहीं छूटेगा। यह सजा कहीं इसलिए तो नहीं दी गई है कि प्रिटोरियामें गद्दार अधिक मिले हैं? किन्तु हनुमानजी और कार्यालयमें वहुत अन्तर है। हनुमानजीकी पूँछपर जितना तेल डाला गया तथा चीथड़े लपेटे गये उतनी ही लंकामें ज्यादा आग लगी किन्तु हनुमानजीको आँच नहीं लगी। पंजीयन कार्यालयका काम खूनी कानूनको अमलमें लाना है। इसलिए उसकी यात्रासे जो गर्मी पैदा होगी उसमें, सम्भव है, वह कानून और कार्यालय दोनों जलकर भस्म हो जायेंगे, क्योंकि भारतीय समाज-रूपी लंकाको जलाना सम्भव नहीं है। भारतीय समाज निर्दोष है और जलानेवाला कानून दोषी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–८–१९०७

१२९. नेटालके व्यापारियोंको चेतावनी

नेटाल सरकारके 'गज़ट' में एक विधेयक प्रकाशित हुआ है। उसके पास हो जानेपर यदि कोई व्यापारी अपनी दूकान वेचना चाहेगा तो उसे 'गज़ट' में और अपने आसपास प्रकाशित होनेवाले अखवारमें चौदह दिन पहले सूचना छपवानी होगी। नये परवाने लेनेवालोंको भी वैसी ही सूचना छपवानी होगी। ये दोनों शर्तें कड़ी हैं, फिर भी भारतीय कौम इनका विरोध नहीं कर सकती; क्योंकि ये सवपर लागू होती हैं। उसी विधेयकमें एक शर्त यह भी है यदि किसी कर्जकी मीयाद पूरी हो गई हो और कोई विशेष इकरार न हो तो उसपर अदालत आठ प्रतिशतसे ज्यादा व्याज नहीं दिला सकती। किसी व्यापारीने किसी चीजकी वहुत ज्यादा कीमत ली हो तो उसके कारण इकरार रद नहीं हो सकता। यह विधेयक सरकारी है और सम्भव है पास हो जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–८–१९०७

१३०. धोखा?

इस अंकको बहुत-कुछ सामग्री लिखी जा चुकी थी तब हमने सुना कि प्रिटोरियाके गद्दारोंकी जो सूची हमने प्रकाशित की है वह पूरी नहीं है। पिछले अंकमें हमने कुछ मेमन लोगों और एक हिन्दूका नाम प्रकाशित[1] किया है। हमें अभी मालूम हुआ है कि उनमें कुछ कोंकणी भी हैं। उनके नाम हम यहां दे रहे हैं[2] :

साथ ही हमने यह भी सुना है कि पीटर्सबर्गमें जेलके अन्दरके दो व्यक्ति ही नहीं, तीन-चार और भी पंजीकृत हुए हैं। यदि यह बात सच है तो बहुत खेदजनक है। समाजमें ऐसे लोग मौजूद जान पड़ते हैं जो काला मुँह करनेके बाद भी मनुष्य होनेका पाखण्ड करते हैं। कोंकणियोंने प्रिटोरियामें साफ-साफ कहा है कि एक भी कोंकणीने अर्जी नहीं दी। पीटर्सबर्गमें तो उपनिवेश-सचिवको जो अर्जी दी गई है उसमें उपर्युक्त चारों व्यक्ति शामिल हैं। इसलिए दगाबाजीके ये दोनों मामले बहुत बड़े माने जायेंगे। सौभाग्यकी बात यही है कि ऐसे दगाबाज लोग बहुत थोड़े हैं। फिर भी समाजमें ऐसे लोग मौजूद हैं, इससे अच्छे लोगोंको बहुत चेतकर चलना चाहिए। ये सब कुल्हाड़ीके बेंटकी बात याद दिलाते हैं। इस समाजको ऐसे लोगोंके द्वारा जितना नुकसान पहुँचेगा, उतना खूनी कानून या सरकारसे नहीं। जो खुले आम जाकर पंजीयन करवायेगा वह एक प्रकारसे मर्द माना जायेगा। किन्तु जो चोरीसे पंजीयन करवाकर साहूकार बनेगा उसे हम कौनसी उपमा दें?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–८–१९०७

१. देखिए "हमारा कर्तव्य", पृष्ठ १५६।
२. मूलमें दिये गये नौ नाम यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं।

१३१. मोरक्कोमें उपद्रव

मोरक्कोमें अभी होली सुलग रही है। रसूलीने आतंक फैला रखा है। तेंजियरमें लूटपाट मची है। बहुत लोग कत्ल हो गये हैं। दो सौ औरतें गिरफ्तार की गई हैं। बलात्कार भी हो रहा है। यहूदियोंको ज्यादा नुकसान पहुँचा है। कासाब्लेंकामें अन्धेर हो रहा है। ऐसे तार रायटरके आये हैं। रायटरने यह भी कहा है कि मोरक्कोके सुलतानका कहना है कि यदि यूरोपीय सेनाएँ आ जायेंगी तो जितनी कौमें उनके काबूमें हैं वे भी नहीं रहेंगी। इसमें कितना सच है यह हम नहीं जान सकते। कहा जाता है कि रसूलीने सर हेनरी मैक्लीनको छोड़ दिया है। रसूलीके बारेमें एक जर्मन लेखकका कहना है कि वह तेजस्वी और बहादुर योद्धा है। बचपनसे उसे मवेशी लूटनेकी आदत थी। कुछ समयके लिए वह तेंजियरका सूबेदार भी नियुक्त किया गया था। किन्तु अभी कुछ वर्षोंसे लुटेरे-डकैतका काम कर रहा है। उसने बहुत-से गोरोंको पकड़ रखा है। वह मौतको साथ लेकर फिरता है और उसका कहना है कि उसकी मृत्यु किसीकी चोटसे नहीं होनी चाहिए। रसूलीको मारनेका बहुत लोगोंने प्रयत्न किया है, किन्तु वह इतना सतर्क और फुर्तीला है कि सबके हाथसे बच जाता है। हमें आशा है कि हम आगे चलकर बतायेंगे कि मोरक्कोमें कैसा अंधेर हो रहा है। इससे हमारे पाठकोंको वहाँकी स्थिति और भी अच्छी तरह मालूम हो सकेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–८–१९०७

१३२. हेगर साहबका नया कदम

हेगर साहब भारतीयोंके पीछे पड़े हुए हैं। एक बात समाप्त हुई तो दूसरी खड़ी ही है। अब वे महाशय उन गरीब भारतीयोंके पेटपर लात मारना चाहते हैं जो इंजनके कामसे रोटी कमाते हैं। वे संसदमें ऐसा विधेयक पेश करना चाहते हैं जिससे नेटालमें कोई भी भारतीय किसी गोरे अधिकारीकी देखरेखके बिना इंजनका काम कर ही न सके। यदि यह कानून अमलमें आया तो कुछ भारतीयोंकी रोजी जाना सम्भव है। किन्तु आशा तो की जा सकती है कि यह विधेयक मंजूर नहीं होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–८–१९०७

१३३. कच्ची उम्रमें बीड़ी पीना रोकनेका कानून

कुछ ही दिन हुए नेटाल संसदमें उपर्युक्त कानून पास हुआ है। उसका अनुवाद धारा-प्रति-धारा नीचे दिया जाता है:

(१) १६ वर्षसे कम उम्रके लोगोंका तम्बाकू, सिगरेट या सिगार पीना गैर-कानूनी माना जायेगा। [ऐसे लोगोंके पास] तम्बाकू, चिलम, सिगार, सिगरेट या सिगरेट होल्डर दिखाई दे तो गोरा पुलिस-अधिकारी उसे जब्त करके सरकारको सौंप दे।

(२) पाठशालामें जानेवाले किसी बच्चेके पास उपर्युक्त सिगरेट आदि जो भी चीजें मिलेंगी, उन्हें पाठशालाका शिक्षक छीनकर उसके अभिभावकको सौंप देगा। यदि शालामें जानेवाले बच्चे तम्बाकू पीते मालूम होंगे तो उन्हें शालाके नियमके विरुद्ध काम करनेके अपराधमें दण्ड दिया जा सकेगा।

(३) माता-पिता, अभिभावक या मालिककी चिट्ठी न हो तो १६ वर्षसे कम उम्रके बच्चेको तम्बाकू, सिगार या सिगरेट न दी जाये या न बेची जाये। चिट्ठी अथवा हुक्ममें यह लिखा होना चाहिए कि सिगरेट वगैरह चीजें १६ वर्षसे अधिक उम्रके लोगोंके उपयोगके लिए हैं, और वे हस्ताक्षरकर्त्ताको सौंप दी जायेंगी। इस तरहका लिखित पत्र प्राप्त हुए बिना १६ वर्षसे कम उम्रके बच्चोंको सिगरेट वगैरह देना या बेचना गैर-कानूनी माना जायेगा। इस धाराके उल्लंघन करनेवालेको प्रति अपराधके लिए ५ पौंड तक जुर्मानेकी अथवा एक महीने तक की कैदकी सजा दी जा सकेगी।

(४) जो माता-पिता, अभिभावक या मालिक न होते हुए भी १६ वर्षसे कम उम्रके लड़केको सिगरेट वगैरह खरीदने भेजेगा उसे ५ पौंड तक का जुर्माना अथवा एक महीने तक की सजा दी जा सकेगी।

(५) इस कानूनके सम्बन्धमें उम्रका प्रश्न खड़ा होनेपर अन्य सन्तोपजनक सबूतोंके अभावमें अदालत व्यक्तिके चेहरेपर से उम्र निश्चित करेगी और वह ठीक मानी जायेगी।

(६) इस कानूनको १९०७ का धूम्रपान-निरोधक कानून कहा जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७-८-१९०७

१३४. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

पीटर्सबर्गकी बहार

पीटर्सबर्गकी बहादुरीकी सब जगह प्रशंसा हो रही है। अब धावा पॉचेफस्ट्रूम और क्लार्क्सडॉर्पपर है। ये दोनों नगर पीटर्सबर्गसे आगे बढ़ जायेंगे सो नहीं, किन्तु पीटर्सबर्गसे कम तो किसीको करना ही नहीं है। पीटर्सबर्गके जोशसे अखबारों और लोगोंमें खलबली मची हुई है। भारतीयोंका उत्साह बढ़ गया है। पीटर्सबर्ग हमारी सफलताको दो कदम आगे ले गया है। प्रिटोरियाके समान पीटर्सबर्गमें भी स्वयंसेवक बने थे। उनके नाम ये हैं:

श्री हंसराज, श्री ए० गोकल, श्री डी० एच० जुमा, श्री तैयब एन० मुहम्मद, श्री कासिम सुलेमान, श्री ए० देसाई, श्री गुलाब तथा मुख्य स्वयंसेवक श्री हासिम मुहम्मद काला।

ये बहादुर बधाईके पात्र हैं।

'कलेवाके बिना'

जोश भरे तार बहुत-से भारतीयोंको भेजे गये थे। उनमें से एकने तुरन्त जवाब दिया है कि पंजीयन कार्यालय पीटर्सबर्गसे कलेवा बिना जायेगा; यानी उस कार्यालयका भक्ष्य भारतीय हैं, और भारतीय पंजीयन न करायेंगे तो कार्यालय भूखा ही कहलायेगा। उसका उपवास टूट ही नहीं पाया, तो वह बिना कलेवेके गया इसके अलावा क्या माना जायेगा? जेलके अन्दर पंजीयनके लिए जो अर्जी दी गई है, उसे गिनतीमें नहीं लिया जा सकता।

पीटर्सबर्गको तार

संघ और हमीदिया अंजुमनने बधाईका तार भेजा है। अंजुमनने बधाई देते हुए कहा है: "अगर हम आखिर तक जोर कायम रखेंगे तो खुदा हमें फतह देगा।"[1]

पॉचेफस्ट्रूम और क्लार्क्सडॉर्प

कार्यालय इन दोनों शहरोंमें इस सप्ताहके अन्ततक पहुँच जायेगा। इससे हमीदिया अंजुमनने निम्नलिखित तार भेजा है:

आशा है कि अनुमतिपत्र कार्यालय रूपी महामारीसे आप मुक्त रहेंगे। उसके स्पर्शसे हमारे समाजको धब्बा लगता है और हमारी धर्म-भावनाको चोट पहुँचती है।[2]

इन दोनों जगहोंसे तारपर-तार आये हैं कि दोनों स्थान बहुत दृढ़ हैं। नया पंजीयनपत्र लेनेवाला कोई नहीं है। दोनों जगहोंके लोगोंका कहना है कि "हमें जोहानिसबर्गसे किसीकी मदद नहीं चाहिए। हम सब एम्पायर नाटकघरमें ली हुई शपथपर दृढ़ हैं।" हम चाहते हैं कि सारे भारतीय ऐसा जोश अन्ततक रखें।

१. देखिए "तार: पीटर्सबर्गके भारतीयोंको", पृष्ठ १६२।
२. देखिए "तार: पॉचेफस्ट्रूमके भारतीयोंको", पृष्ठ १६२।

लड़ाईका असर

कह सकते हैं, आज तक की लड़ाईका असर अच्छा हुआ है। 'रैंड डेली मेल' में प्रकाशित हुआ है कि भारतीयोंपर गोरोंका कर्ज है। यदि भारतीय जेल गये अथवा उन्हें परवाना नहीं मिला तो वे वह रकम नहीं चुकायेंगे। 'मेल' वाला यह उड़ती हुई वात लिख कर कहता है कि भारतीय नेताओंके विचारोंका कुछ पता नहीं है। इस खवरसे गोरे व्यापारी घबड़ाये जान पड़ते हैं। यह असर अच्छा मानना है। अब कोई भारतीयोंका मजाक नहीं उड़ाता बल्कि लोग मानते हैं कि मामला नाजुक है। 'मेल' वाले ने यह भी लिखा है कि भारतीय समाजको विलायतके कई बड़े-बड़े लोगोंकी मदद है। श्री रिच काम कर रहे हैं और लोकसभाके सौ सदस्योंने कहा है कि यदि भारतीयोंके साथ न्याय नहीं किया गया तो ट्रान्सवालको जो ५०,००,००० पौंडकी सहायता दी जानेवाली है उसका विरोध किया जायेगा।

ईसप मियाँका जवाब

उपर्युक्त लेखका श्री ईसप मियाँने निम्नानुसार जवाब दिया है:[1]

'स्टार' की टीका

'स्टार' समाचारपत्रने 'डेली मेल' के लेखपर तुरन्त ही एक लम्बी टिप्पणी प्रकाशित की है। उसका सारांश निम्नानुसार है:

> ब्रिटिश भारतीय संघका अनाक्रामक प्रतिरोध अभीतक बहुत सफल रहा है। भारतीय नेता मानते हैं कि कानूनपर उसकी अन्तिम सीमा तक अमल नहीं किया जायेगा यानी जिन्होंने अनिवार्य पंजीयन कानूनके अन्तर्गत पंजीयन न करवाया हो, उन्हें कैद या निर्वासित नहीं किया जायेगा। प्रलोभनमें आकर पंजीयन करवानेवाले भारतीयोंकी संख्या राजधानीमें ७० है। पीटर्सबर्ग और जूटपान्सबर्गके भारतीयोंने पंजीकृत होनेसे इनकार कर दिया है। पाँचेफस्ट्रूम और क्लार्क्सडॉर्पके लोगोंने भी इसी तरहका निर्णय जाहिर किया है। जोहानिसबर्गमें बहुत भारतीय हैं। उनमें कुछ धनवान हैं। उन सभीने कानूनका विरोध करनेका निर्णय किया है। सरकार जोहानिसबर्गमें कार्यालय खोलेगी या नहीं, इस विषयमें भारतीय अनेक अनुमान लगा रहे हैं। सरकार धीरे-धीरे चल रही है। श्री चैमनेकी रिपोर्ट पहुँचनेपर निश्चित कदम उठाये जायेंगे। जोहानिसबर्गमें सरकार कार्यालय न खोले, ऐसे लक्षण तो अभी दिखाई नहीं दे रहे हैं।
>
> देश छोड़नेका समय आ जाये तो उसके लिए भी भारतीय व्यापारी धीरे-धीरे तैयारी करने लगे हैं। कामा और कम्पनी ('स्टार' द्वारा भूलसे लिखे अनुसार चैमने और कम्पनी) के बड़े साझेदार एक पारसी सज्जन श्री कामासे 'स्टार' का प्रतिनिधि मिला था। उस समय बताया गया कि उक्त कम्पनीने अपने विदेशोंके आर्डर रद कर दिये हैं, और स्टाक कम करना शुरू कर दिया है, जिससे जब भी उसे ठिकाने लगाना हो, आसानीसे लगाया जा सके। और यही बहुतसी जगहोंमें हो रहा है। एक सहयोगीने प्रकाशित किया है कि वे कर्जकी रकम चुकानेसे इनकार करते हैं। इस बातका भारतीय व्यापारियोंने पूरी जिम्मेदारीसे खण्डन किया है। एक व्यापारीने आज कुल ४३७ पौंडका

1. यहाँ रैंड डेली मेलको प्रेषित पत्र छपा था, देखिए पृष्ठ १६३।

विल चुकाया है। दूसरे व्यापारीने आज सवेरे ७०० पौंड दिये। कर्जकी रकम न लौटानेकी सलाह संघने नहीं दी। अखवारमें इस तरहकी गलत खवर छपनेसे उन्हें आश्चर्य हुआ था।

अनाक्रामक प्रतिरोधके इस आन्दोलनके नेता प्रसिद्ध भारतीय वैरिस्टर श्री मो० क० गांधी हैं। जान पड़ता है, सचमुच ही उन्होंने अपनी सेनाको अच्छी तालीम दी है। सामान्यतः भारतीय अन्ततक उनके पीछे चलनेको तैयार हो गये हैं।

इस सवसे सिद्ध होता है कि भारतीयोंने जो शक्ति दिखाई है उसे फल लगने लगा है।

फ्रीडडॉर्प अध्यादेश

यह अध्यादेश अव ठिकाने लग गया है। पहला अध्यादेश रद हो गया है और नया पास किया गया है। उसके अनुसार भारतीयोंको चार वर्ष तक नहीं निकाला जा सकता और चार वर्षके वाद भी उन्हें जो नुकसान होगा उसका हर्जाना दिया जायेगा। इसे नुकसानके लिए चार वर्षका नोटिस कहना होगा। इसमें व्यापार और उधारीके नुकसानका तो समावेश नहीं है, किन्तु वँधे हुए मकानोंकी कीमतका समावेश है। अतः अव मानना चाहिए कि फ्रीडडॉर्पके भारतीय व्यापारियोंको चार वर्षकी अवधि मिली है। इस जीतका श्रेय श्री रिचको दिया जाना चाहिए। उन्होंने विलायतमें वहुत परिश्रम किया। उसीका यह परिणाम है। केवल यही एक उपधारा रह गई है कि चार वर्ष वाद नौकर वर्गके सिवा और कोई काले लोग नहीं रह सकेंगे। लेकिन इसे रद करना सम्भव नहीं है। श्री स्मट्सका उत्तर देख लिया जाये। लेकिन चार वर्ष लम्वे होते हैं "जेल-महलमें जायें हिन्दके हीरे"।[१] फिर भारतीय फ्रीडडॉर्पमें भी रह जायें तो इसे दक्षिणामें मोतीका थाल समझ लेना चाहिए।

एम० एस० कुवाड़िया

स्वदेशसे खवर आई है कि संघके कोषाध्यक्ष श्री एम० एस० कुवाड़ियाकी पत्नीका स्वर्गवास हो गया है। यह खवर मैं शोकके साथ प्रकाशित करता हूँ और श्री कुवाड़ियाके प्रति सहानुभूति व्यक्त करता हूँ।

मुहम्मद ईसप शहरी

श्री मुहम्मद ईसप, जो हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके सदस्य हैं, इस मासके अन्तमें हज करनेके लिए मक्का शरीफ जानेवाले हैं। उनकी मुराद पूरी हो यह मेरी कामना है।

हमीदियाकी बैठक

हमीदिया इस्लामिया अंजुमन नये कानूनके सम्वन्धमें पूरी ताकतसे काम कर रही है। हर हफ्ते वैठक वुलाई जाती है, जिसमें सभी कौमोंके भारतीय भाग लेते हैं। पिछले रविवारकी वैठकके अध्यक्ष इमाम अव्दुल कादिर थे। श्री गांधीने सारी हकीकत समझाई। उनके वाद ईसप मियाँ वोले। उन्होंने कहा कि इस मौकेपर श्री गांधी जेल जायें या निर्वासित हों फिर भी लोगोंको पूरी हिम्मतके साथ रहना चाहिए। धनकी भी जरूरत होगी। अतः जिनके पास धन हो उन्हें धन देना चाहिए। अन्तमें मौलवी अहमद मुख्त्यार तथा महाराज रामसुन्दर पण्डितने

१. प्रतियोगितामें भेजी गई एक कविताका उद्धरण : "जेल-महलमें जायें हिन्दके हीरे"। देखिए "नये कानूनसे सम्वन्धित पुरस्कृत कविता", पृष्ठ ४७-४८।

विवेचन किया और श्री आमद कुवाड़ियाने श्री पोलककी मेहनतके सम्बन्धमें दो शब्द कहे। इसके वाद अध्यक्ष महोदयने सभा वरखास्त की।

जेल जानेवालेके पीछे क्या होगा?

इस प्रश्नका उत्तर मैं पहले भी इस चिट्ठी में दे चुका हूँ। किन्तु फिर पूछा गया है, इसलिए देता हूँ। मेरी समझमें जो जेल जानेको तैयार वैठे हैं वे यथासम्भव सारी व्यवस्था कर ही लेंगे, यानी समाजपर उनका वोझ कम ही रहेगा। एक ही मुहल्ले या एक ही दूकानके सभी व्यक्ति एक साथ पकड़ लिये जायें सो तो नहीं होगा। यदि यह विचार ठीक हो तो गिरफ्तार किये जानेवालोंके सगे-सम्वन्धी या दोस्त उनके वाल-वच्चों और जायदादकी रक्षा कर लेंगे। जो लोग दूसरे कानूनोंके अन्तर्गत गिरफ्तार किये जाते हैं हमने देखा है, उनकी, इसी प्रकार व्यवस्थाकी जाती है। फिर भी इतना पर्याप्त नहीं है। जो व्यक्ति नये कानूनके अन्तर्गत गिरफ्तार किया जायेगा उसकी सार-सँभाल संघ करेगा। उसके वाल-वच्चे कहाँ हैं, तथा किस हालतमें हैं, उन्हें कोई देखनेवाला है या नहीं, संघ इन वातोंकी जाँच-पड़ताल करेगा और निर्वाहकी व्यवस्था करेगा। अतः नये कानूनके अन्तर्गत गिरफ्तार किये जाने-वाले व्यक्तिके लिए दुहरी मदद मौजूद है। जेल जानेवाले व्यक्तिकी मर्जीके मुताविक उसकी दूकान तथा वाल-वच्चोंकी व्यवस्था हो सकेगी। श्री पारसी रुस्तमजी जैसे वीरोंने जो पत्र लिखे हैं ऐसे अवसरपर उनका लाभ हमें मिलेगा। इस लड़ाईमें हम सत्यके लिए मरनेवाले हैं। इसलिए कदम-कदमपर हमें खुदाकी मदद मिलेगी। ऐसी मदद वह खुद नीचे उतरकर नहीं करता, वल्कि इन्सानके दिलमें वैठकर उससे परोपकारके रूपमें करवाता है। उपर्युक्त प्रश्न उठते रहते हैं, इससे मालूम होता है कि हमने इतना वड़ा कौमी काम पहली वार हाथमें लिया है, इसलिए डर लग रहा है। यह वात समझमें आ सकती है। किन्तु विचार करनेपर सव देख सकेंगे कि घवड़ाने-जैसी कोई वात नहीं है। यह भी प्रश्न उठा है कि कहीं १३,००० भारतीयोंको एक साथ जेलमें भेज दें तो क्या होगा? फिर वाल-वच्चोंकी सार-सँभाल कौन करेगा? यह सवाल केवल डरके कारण ही उठता है। खुदापर तिल-मात्र भी भरोसा रखने-वाला ऐसा प्रश्न नहीं उठा सकता, फिर भारतीय मानस, जो कि खुदा या ईश्वरसे सदा डरनेवाला है, ऐसे प्रश्न कैसे उठा सकता है? १३,००० भारतीय एक साथ जेल जायें ऐसा शुभ अवसर एक तो आनेवाला नहीं है और यदि आ गया तो सवको मानना चाहिए कि उनके पीछे रहनेवालोंको सँभालनेवाला महवूव वड़ा है। इसके अलावा यदि उपर्युक्त प्रश्न उठता है तो हम यह भी प्रश्न उठा सकते हैं कि यदि भूकम्पमें सारेके-सारे १३,००० भारतीय मर जायें तो उनके पीछे रहनेवालोंको कौन सँभालेगा? उन्होंने ऐसा कौन-सा अपराध किया है जो केवल उनके वाल-वच्चे अथवा जायदाद अनाथ वन जायें। किन्तु यदि अनाथ ही होना है तो उतनी देशसेवा हम क्यों न करें? यदि देशसेवा न करेंगे तो हमें इज्जत कैसे मिलेगी? देशकी सेवा किसे कहा जायेगा?

"प्रगटे जो दिलमां प्रेम प्राण शुं[1] प्यारो
हिमतनी[2] मददे खुदा सदा छे[3] यारो"

१. क्या।
२. की।
३. है।

एक बहादुर भारतीय

कलकत्ताकी ओरके वख्तावर नामक एक भारतीयको अनुमतिपत्र कार्यालयने अँगुली लगानेको कहा, किन्तु उसने इनकार कर दिया। फिर उससे नये कानूनके अन्तर्गत अर्जी देनेको कहा गया। किन्तु उसने उसके लिए भी इनकार कर दिया। ऐसी हिम्मत प्रत्येक भारतीयमें होनी चाहिए।

लन्दनमें हलचल

खूनी कानूनके वारेमें लन्दनमें जोरोंसे हलचल हो रही है। वहुतेरे सदस्य प्रश्न पूछते रहते हैं। एक प्रश्नके उत्तरमें श्री चर्चिलने कहा है कि कानूनके अमलके सम्वन्धमें वड़ी सरकार हस्तक्षेप नहीं कर सकती। इस उत्तरसे मैं लोगोंमें कुछ घवड़ाहट देखता हूँ। किन्तु घवड़ानेका कारण नहीं है। क्योंकि, पहली वात तो यह है कि हम अपनी हिम्मतके वलपर लड़ रहे हैं। इसमें वड़ी सरकार दखल नहीं देगी। किन्तु हम जिसे खराव काम मानते हैं उसे नहीं करते। दूसरे, वड़ी सरकार भले कानूनके अमलमें हस्तक्षेप न करे। किन्तु कानूनके जुल्मके समय तो हस्तक्षेप किये विना चल ही नहीं सकता। यदि हस्तक्षेप नहीं करेगी तो उसकी आवरू दो कौड़ीकी हो जायेगी। और आखिर ब्रिटिश साम्राज्य समाप्त हो जायेगा। अतः श्री चर्चिलके उत्तरका मैं यही अर्थ करता हूँ कि जाहिरा तौरसे वे चाहे कुछ भी करें, किन्तु नाजुक समय आनेपर विना हस्तक्षेप किये काम नहीं चलेगा। लेकिन नाजुक समयका अर्थ है हमारे जेल जानेके वादका समय।

चेत कर चलो

वुधवारको क्रूगर्सडॉर्पके श्री सुलेमान वाड़ीपर एक काफिरको शराव वेचनेका मुकदमा चला। दो गोरों और दो काफिरोंने खुफिया पुलिसको यह प्रमाण दिया कि श्री सुलेमानने आधी वोतल शराव वेची थी। श्री स्टैगमान तथा श्री गांधी वकील थे। वहुत मेहनत की गई। वयानसे सावित हुआ कि शराव वेचना धर्मके विरुद्ध है। वैंकके हिसाव-नवीस और दूसरे गोरोंने वयान दिया कि श्री वाड़ी वहुत इज्जतदार व्यक्ति हैं। हकीकत भी ऐसी ही मालूम होती है कि श्री वाड़ीपर जाली मुकदमा चलाया गया है। वे निर्दोष हैं। फिर भी मजिस्ट्रेटने उन्हें दोषी ठहराकर छः महीनेकी सजा दे दी है। श्री वाड़ीने अपील की है। नतीजा जो भी होना होगा, होगा। लेकिन सभी भारतीयोंको चेतकर चलना चाहिए। गोरे और काफिर अपने स्वार्थके लिए लोगोंको फँसानेसे हिचकनेवाले नहीं हैं। श्री वाड़ी निर्दोष हैं। अतः उनके लिए लज्जित होनेकी कोई वात नहीं है। जेल जानेमें शर्म नहीं है, शर्म है अपराध करनेमें। वे वेकार खर्चमें पड़े, यह वुरा हुआ। और अनजान लोग वदनाम करते हैं सो अलग।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–८–१९०७

१३५. पत्र : 'इंडियन ओपिनियन' को

जोहानिसबर्ग
अगस्त १७, १९०७

सम्पादक
'इंडियन ओपिनियन'

महोदय,

एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके बारेमें मेरे और जनरल स्मट्सके बीच जो पत्र-व्यवहार[1] हुआ है उसकी प्रतिलिपि प्रकाशनके लिए इसके साथ भेजता हूँ। मेरी विनम्र रायमें इस प्रश्नने स्थानीयसे अधिक महत्त्व प्राप्त कर लिया है। मैं आखिरी दम तक यह मानता रहूँगा कि उपनिवेशियोंकी मानवता उनके विद्वेषभावपर विजय प्राप्त करेगी और यदि मेरे देशवासियोंने वे कष्ट सहन कर लिये, जिनका उन्होंने निश्चय किया है, तो उनकी माँग न्यायपूर्ण मान ली जायेगी। लेकिन बात ऐसी हो या न हो, मैं केवल एक सलाह दे सकता हूँ; और वह है कि, हमें स्वार्थ की पूर्ति करनेके बजाय निडर होकर अपनी शपथपूर्ण घोषणाको पूर्ण करनेमें लग जाना चाहिए।

इसलिए आवश्यक है कि जनरल स्मट्सने अपने पत्रमें जो जोरदार चेतावनी[2] दी है, उसको मेरे देशवासी समझें। शायद उस जनताके लिए, जिसके नामपर यह कानून पास किया गया है और लागू किया जा रहा है, यह जानना भी जरूरी है कि मैंने उसके बदलेमें जो सुझाव देनेका विनम्र साहस किया है उससे यह कठिनाई पूरी तरह हल हो सकती है। उससे उपनिवेशमें रहनेवाले प्रत्येक एशियाईकी शिनाख्त हो जाती है और, एशियाई अधिनियमके विपरीत, उन एशियाइयोंकी संख्या हमेशाके लिए निश्चित हो जाती है जो (उन थोड़ेसे लोगोंको छोड़कर, जो प्रवासी विधेयककी शैक्षणिक धाराका लाभ उठानेके योग्य हो सकते हैं) उपनिवेशमें रहनेके अधिकारी होंगे। इसीलिए असली सवाल, जहाँतक मैं समझ सकता हूँ, अँगुलियोंके निशानोंका अथवा दूसरे ब्यौरोंका नहीं है, बल्कि मोटे रूपमें यह है कि सरकार भारतीयोंकी भावनाओंकी, यद्यपि उनको मत देनेका अधिकार नहीं है, कद्र करेगी या नहीं; या यदि सरकार भारतीयोंकी भावनाकी कद्र नहीं करती तो भारतीय अपने ईश्वर और अपने प्रति सच्चे रहेंगे या नहीं और अपने सर्वस्व का बलिदान करेंगे या नहीं।

आपका आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–८–१९०७

१. देखिए "पत्र : जनरल स्मट्सके निजी सचिवको", पृष्ठ १४८-४९ तथा १६४-६५।
२. देखिए "पत्र : जनरल स्मट्सके निजी सचिवको", पृष्ठ १६४ के साथ दी गई पादटिप्पणी।

१३६. पत्र : 'स्टार' को[1]

जोहानिसबर्ग
अगस्त १९, १९०७

सेवामें
सम्पादक
'स्टार'
[जोहानिसबर्ग]

महोदय,

आपने उस विषयको, जिसे आप एशियाई कानून संशोधन अधिनियमसे सम्बन्धित मेरी 'योजना'[2] कहते हैं, एक सम्पादकीय टिप्पणीसे गौरवान्वित किया है। किन्तु, ऐसा करते समय आपने उसे सरसरी तौरपर पढ़कर उसके और मेरे प्रति न्याय नहीं किया। मेरे मसविदेमें बताई गई धाराओंको प्रवासी विधेयकमें शामिल कर लेनेसे सरकारको हर अनुमतिपत्र वापस लेने और उसके स्थानपर ट्रान्सवालके प्रत्येक वास्तविक एशियाई निवासीको अधिवासी-प्रमाणपत्र जारी करनेका कानूनी अधिकार प्राप्त हो जाता है। और यदि आप मेरा मसविदा दुबारा पढ़ें तो देखेंगे कि इन प्रमाणपत्रोंके स्वरूपका विनियमन सरकारपर छोड़ दिया गया है। अतः, अँगुलियोंके निशानोंके प्रश्नको कभी विवाद-विषयक नहीं बनाया गया है; और न ही, जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, यह कभी कोई बुनियादी सवाल रहा है। मुख्य आपत्ति विधेयकमें निहित अनिवार्यता और उसके उस रुखके प्रति है जिससे भारतीयोंके साथ जरायमपेशा लोगोंकी तरह बर्ताव करनेकी बू आती है। मेरे द्वारा प्रस्तुत मसविदेसे सरकार उपनिवेशमें अधिवासाधिकारकी माँगके हकदार एशियाइयोंकी ठीक संख्या मालूम कर सकेगी और ऐसे एशियाइयोंकी शिनाख्त भी पूरी तरह हो जायगी। मसविदा जिन बातोंको छोड़ देता है वे हैं एशियाई पंजीयन अधिनियममें निर्दिष्ट विस्तृत तन्त्र और दण्ड-विधान। मसविदा १६ बरससे कम आयुके बच्चोंको भी तबाहीसे बचाता है और उस कष्टप्रद निरीक्षणको टाल देता है, जो पंजीयन अधिनियमके अन्तर्गत अपेक्षित शिनाख्तके सिलसिलेमें आते-जाते कहीं भी किया जा सकता है। किन्तु मैं यह कह दूँ कि यह बच्चोंके जाली प्रवेशका निराकरण पूर्ण रूपसे कर देता है, क्योंकि मसविदेमें यह स्पष्ट कर दिया गया है कि अधिवासी-प्रमाणपत्रोंपर १६ वर्षसे कम आयुवाले बच्चोंकी संख्या लिखी जायेगी और १६ वर्षके होनेपर उन्हें अधिवासी-प्रमाणपत्र लेना पड़ेगा। फिर भी यदि मेरी योजनाको सदोष माना जाये तो कमसे-कम प्रवासी विधेयकमें शिनाख्त सम्बन्धी विधान शामिल करनेके सिद्धान्तको तो सदोष नहीं माना जा सकता, और उन सारे दोषोंका निराकरण किया जा सकता है जिनपर मेरी निगाह नहीं पड़ी है। इसलिए, अब भी प्रश्न यही है कि महामहिमकी भारतीय प्रजाके कल्याणकी दृष्टिसे जनता इस वैकल्पिक प्रस्तावका गम्भीरतापूर्वक अध्ययन करेगी या नहीं।

१. यह २४-८-१९०७ के **इंडियन ओपिनियन**में उद्धृत किया गया था।

२. यहाँ जनरल स्मट्सके निजी सचिवके नाम लिखे पत्रके साथ भेजे गये प्रस्तावकी ओर संकेत किया गया है। देखिए पृष्ठ १४९-५०।

आपकी सम्पादकीय टिप्पणीके दूसरे हिस्सेके[1] बारेमें मैं इतना ही कह सकता हूँ कि यदि मेरे देशवासियोंको सम्मानास्पद दर्जेका आश्वासन [नहीं][2] दिया गया तो, चाहे वे कितने ही गिरे हुए हों, अपने आत्माभिमानकी बलि देने और अपनी गम्भीर प्रतिज्ञाको तोड़नेके मुकाबले जेल, देश-निकाला और उसी प्रकारकी अन्य विपत्तियाँ उनके लिए वरदान-स्वरूप होंगी। और एक बातके लिए मैं आपको जोर देकर आश्वस्त कर सकता हूँ कि ऐसा एक भी भारतीय नहीं है जो इस अधिनियमको अपने हृदय-तलसे नापसन्द नहीं करता। मैं उनमें से अधिकांश लोगोंको जानता हूँ जिन्होंने प्रिटोरियामें इस अधिनियमके अन्तर्गत पंजीयन स्वीकार किया है, और मैं यह भी जानता हूँ कि वे इसे अपनी राष्ट्रीयता और ईश्वरके प्रति अपराध मानते हैं; और फिर भी उन्होंने ऐसा किया, क्योंकि, उनके ही शब्दोंमें, उन्होंने पैसेकी कीमत प्रतिष्ठासे ज्यादा आँकी।

आपका आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

स्टार, २०-८-१९०७

१३७. भारतीय मुसलमानोंसे अपील[3]

जोहानिसबर्ग
अगस्त १९, १९०७

हम निम्न हस्ताक्षरकर्ता मुसलमान व्यापारी और ट्रान्सवालके हमीदिया इस्लामिया अंजुमन के अध्यक्ष, मन्त्री और सदस्य, इसके द्वारा आपको उस स्थितिका खयाल कराना चाहते हैं, जो एशियाई कानून संशोधक विधेयकके अन्तर्गत मुसलमान भारतीयोंकी हो जायेगी। हम मान लेते हैं कि अधिनियमके विरुद्ध हमारी जो मुख्य आपत्तियाँ हैं उनको आपने जान लिया है। किन्तु हम आपका ध्यान विशेष रूपसे एक आपत्तिकी ओर आकर्षित करेंगे, जिसका प्रभाव हमपर मुसलमान होनेके नाते पड़ता है। यह वह खण्ड है जो तुर्कीके मुसलमानोंपर लागू होता है, जब कि तुर्कीके ईसाई और यहूदी उससे मुक्त हैं।

१. वह इस प्रकार था: "... श्री गांधी और उनके सहयोगी नेताओंने यह माननेकी भयंकर भूल की है कि इंग्लिश रेडिकल नानकन्फ़र्मिस्ट लोगोंसे उधार लिये हुए उनके दाँव-पेंचोंका ब्रिटिश उदारदलीय सज्जन किसी भी हद तक जाकर समर्थन करेंगे। उन्होंने अब अपनी भूल देख ली है और इसलिए हमें भरोसा है कि वे अपने असंगत रवैयेसे बाज आयेंगे, या कमसे-कम भविष्यमें अपने देशभाइयोंके असंस्कृत हिस्सेको उसकी अपनी सामान्य बुद्धिके मुताबिक चलनेके लिए छोड़ देंगे। अगर उसमें से ज्यादातर लोग कानूनकी मुखालिफत करना और उसके परिणाम — जिनमें व्यापार करनेके अधिकारोंका खात्मा भी शामिल है — भोगना पसन्द करें तो ट्रान्सवाल सरकार कानूनी और नैतिक दृष्टिसे कसूरवार नहीं ठहरेगी ...।"

२. **इंडियन ओपिनियन**के पाठमें यह शब्द आया है। स्पष्ट है, **स्टार**में यह भूलसे छूट गया।

३. कदाचित् यह गांधीजी द्वारा लिखी गई थी, क्योंकि वे इसको भारतमें प्रचारित कराना चाहते थे; देखिए "पाठकोंको सूचना", पृष्ठ १९० और "हमीदिया इस्लामिया अंजुमनका पत्र", पृष्ठ १९४।

वस्तुतः यह अधिनियम समस्त भारतीयोंपर लागू होता है; और इसीलिए इसका सम्बन्ध समस्त भारतीय जनतासे है। किन्तु यह मुसलमानोंपर दुहरी कठोरतासे लागू होता है, क्योंकि इससे हमारे धर्मका विशेष रूपसे अपमान होता है; और दूसरोंकी अपेक्षा भारतीय मुसलमानोंके आत्मसम्मानको अधिक आघात लगता है, क्योंकि वे समाजके अधिक धनी और सम्मानित अंग हैं।

हम कह सकते हैं कि सौभाग्यसे, दक्षिण आफ्रिकामें मुसलमानों और हिन्दुओंमें कोई विरोध भाव नहीं है। हम सब मिलकर भारतीयोंके रूपमें शान्ति और मित्रभावसे रहते हैं, आपसमें स्वतन्त्रतापूर्वक व्यवहार करते हैं, और अपने प्रति विद्वेष और अत्याचारसे मिलकर लड़ाई लड़ते हैं। इसलिए यदि हम उस शिकायतपर, जो हमें प्रभावित करती है, जोर देते हैं तो हम ऐसा केवल अपनी अनिश्चित स्थितिकी ओर समस्त भारतके मुसलमानोंका ध्यान आकर्षित करनेके लिए करते हैं; ताकि हम अपने संघर्षमें आपकी अत्यन्त सक्रिय सहायता प्राप्त कर सकें। और हम आपसे मुसलमानों और भारतीयोंके रूपमें यह प्रार्थना करनेका साहस करते हैं कि आप हमारा मामला सरकारके सम्मुख प्रस्तुत करके, और अन्य तरीकोंसे भी, जिन्हें आप वाञ्छनीय समझें, हमारे साथ अपनी सहानुभूति प्रकट करें। जब कि हमें इंग्लैंडसे बहुत सहायता मिल रही है, तब हमें वे गोरे उपनिवेशी भी, जिनकी हमारे साथ सहानुभूति है, पूछते हैं कि हमारा देश भारत हमारे लिए क्या कर रहा है।

भवदीय

इमाम अब्दुल कादिर सालिम बावज़ीर (अध्यक्ष)
एम० पी० फैन्सी (मन्त्री)
इब्राहीम सालेजो कुवाड़िया (कोषाध्यक्ष)
ईसप इस्माइल मियाँ (संरक्षक)
अब्दुल गनी, एम० सी० कमरुद्दीनकी पेढ़ी (संरक्षक)
[और ३३ अन्य]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९०७

१३८. पत्र : 'स्टार' को[1]

जोहानिसवर्ग
अगस्त २०, १९०७

सेवामें
सम्पादक
'स्टार'
[जोहानिसवर्ग]

मैं एक वार फिर, अनिच्छापूर्वक, आपके सौजन्यका लाभ उठानेके लिए विवश हुआ हूँ। क्या मैं कह सकता हूँ कि आपने अव भी पूरी तरहसे मसविदेको[2] नहीं पढ़ा है? मैंने जो सुझाव दिये हैं उनका अर्थ यह नहीं है कि एशियाई अधिनियमकी कुछ धाराओंको रद कर दिया जाये और इस प्रकार कुछ अंश तो उस अधिनियमसे और अधिकांश प्रवासी विधेयकसे रख लिये जायें, वल्कि यह है कि पहलेवाले अधिनियमका सर्वथा अन्त कर दिया जाये; क्योंकि, मेरी रायमें, मेरे प्रस्तावसे, मेरे देशवासियोंको वहुत नाराज किये विना ही, उपनिवेशियोंको सव-कुछ मिल जाता है। मेरे लिए यह सम्भव नहीं है कि मैंने और मेरे साथियोंने जो कुछ लिखा है, उसके लम्वे उद्धरणोंके अध्ययनका भार आपपर डालकर यह दिखाऊँ कि यद्यपि इस अत्यन्त आपत्तिजनक अधिनियममें अँगुलियोंके निशानोंका सवाल हमेशा एक वड़ी गम्भीर वात मानी गई है, तथापि जवतक उसका प्रयोग एक अनिवार्य शर्तके रूपमें नहीं होगा तवतक यह प्रश्न कोई सर्वोपरि महत्त्वका विषय नहीं रहेगा। आपको यह भी आसानीसे याद आ जायेगा कि हमने स्वेच्छासे उन अनुमतिपत्रोंपर अँगुलियोंके निशान दिये थे, जो लॉर्ड मिलनरकी सूचनाके अनुसार जारी किये गये थे।[3] उस समय यह स्वेच्छासे करनेकी वात थी और वह भी सिर्फ एक अँगूठेका निशान लगानेकी। एशियाई अधिनियममें दसों अँगुलियोंके निशान देनेका प्रश्न है और वह भी एक वार नहीं, वल्कि जितनी वार अधिकारीगण लेना चाहें। यदि मैं अपने देशवासियोंको दसों अँगुलियोंके निशान स्वेच्छासे देनेकी सलाह दे भी दूँ तो मैं समझता हूँ कि मेरी सलाह तुरन्त अस्वीकार कर दी जायेगी। लेकिन मुझे और कुछ कहनेकी जरूरत नहीं है। मुझे खेद है कि भारतीयोंके पक्षको अव भी गम्भीर और निर्विकार भावसे नहीं समझा जा रहा है। मेरे देशवासी केवल इतना कह सकते हैं कि भले ही सारा गोरा ट्रान्सवाल हमारे विरुद्ध हो, ईश्वर अव भी हमारे साथ है।

आपका आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
स्टार, २१–८–१९०७

१. यह वादमें २४–८–१९०७ के **इंडियन ओपिनियन**में उद्धृत किया गया था।
२. देखिए "पत्र : जनरल स्मट्सके निजी सचिवको", पृष्ठ १४८-४९।
३. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ २२४-३१।

१३९. पत्र : 'रैंड डेली मेल' को

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त २०, १९०७

सेवामें
सम्पादक
'रैंड डेली मेल'
[जोहानिसबर्ग]

महोदय,

जनरल स्मट्सको भेजे मेरे प्रस्तावको आपने सम्पादकीय टिप्पणी लिखकर मान प्रदान किया है, उसमें एशियाई आबादीको सलाह दी है कि "वह अपने निश्चयपर और विचार करे, क्योंकि वह निश्चय एक जोशके क्षणमें और शायद इस बातको पूरी तरह समझे बिना किया गया है कि एक ऐसे देशमें, जहाँकी बहुत बड़ी आबादी अर्ध-बर्बर लोगों की है, कानूनका संगठित विरोध करना कितनी गम्भीर बात है।" यह एक विचित्र बात है कि आप एक ऐसे संकल्पको, जिसपर पिछले दस महीनोंसे लोग दृढ़ हैं, "जोशके क्षणमें किया गया" समझते हैं।

फिर भी, मैं ये चन्द पंक्तियाँ यह मालूम करनेके लिए लिख रहा हूँ कि क्या आप जनताको बता सकते हैं कि "कानूनका संगठित विरोध करनेकी गम्भीरता" और "बहुत बड़ी अर्ध-बर्बर आबादी" के बीच क्या सम्बन्ध है? क्या इस आबादीसे ब्रिटिश भारतीयोंपर हमला कराया जायेगा, क्योंकि ब्रिटिश भारतीय ऐसे कानूनको माननेके लिए तैयार नहीं हैं जो उन्हें नामर्द बनानेवाला है?

आपका आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
रैंड डेली मेल, २२-८-१९०७

१४०. आवेदनपत्र: उपनिवेश मन्त्रीको[1]

पो० ऑ० बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
अगस्त २३, १९०७

सेवाम
परममाननीय उपनिवेश मन्त्री
लन्दन

साम्राज्य सरकारको ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षका प्रार्थनापत्र

सविनय निवेदन है कि:

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय संघकी समिति ट्रान्सवालकी संसद द्वारा पास किये गये प्रवासी-प्रतिबन्धक विधेयकके बारेमें महामहिमकी सरकारकी सेवामें सविनय निवेदन करती है कि:

उक्त समितिने इस कानूनके बारेमें ट्रान्सवाल संसदके दोनों भवनोंके सम्मुख विनयपूर्वक अपना प्रार्थनापत्र प्रस्तुत किया। इन प्रार्थनापत्रोंको देखनेसे यह विषय और भी अच्छी तरहसे साफ हो जायेगा। इसलिए उक्त दोनों भवनोंमें प्रस्तुत किये गये प्रार्थनापत्रोंकी नकलें इस प्रार्थनापत्रके साथ नत्थी कर दी गई हैं। उनपर क तथा ख[2] चिह्न लगा दिये गये हैं।

उक्त समिति सविनय निवेदन करती है कि उक्त विधेयकपर निम्नलिखित कारणोंसे एतराज किया जा सकता है:

(१) यह एशियाई कानून संशोधक अधिनियमको स्थायित्व प्रदान करता है।

(२) यह उन भारतीयोंके अधिवास-अधिकारकी अवहेलना करता है जो ट्रान्सवालमें युद्धसे पूर्व बस चुके थे और जिनमें से अनेक १८८५ के कानून ३ के अन्तर्गत अपने अधिवासके मूल्य-स्वरूप तीन पौंडकी रकम भी दे चुके हैं, किन्तु अभीतक ट्रान्सवाल नहीं लौट सके हैं। इसका कारण या तो यह है कि उनके प्रार्थनापत्र देनेपर भी उनको लौटनेके अनुमतिपत्र नहीं मिले हैं अथवा उन्होंने शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अधीन ऐसे अनुमतिपत्रोंके लिए प्रार्थनापत्र ही अबतक नहीं दिये हैं।

(३) इसमें विधेयककी शर्तके अनुसार किसी भी भारतीय भाषाको शिक्षा सम्बन्धी योग्यताका अंग नहीं माना गया है।

(४) इस विधेयकके खण्ड २ के उपखण्ड ४ के[3] अनुसार विधेयक द्वारा निश्चित शिक्षाकी परीक्षा पास करनेवाले भारतीयोंपर भी एशियाई कानून संशोधन अध्यादेश लागू होता है।

१. यह आवेदनपत्र **इंडियन ओपिनियन** के ३१-८-१९०७ के अंकमें और इसका गुजराती अनुवाद २४-८-१९०७ के अंकमें छपा था।

२. ये पहले तिथि-क्रमानुसार दिये जा चुके हैं; देखिए क्रमशः "प्रार्थनापत्र: ट्रान्सवाल विधानसभाको" पृष्ठ ९२-९३ और "प्रार्थनापत्र: ट्रान्सवाल विधान-परिषद्को", पृष्ठ ११५-११६।

३. देखिए आवेदनपत्रके साथ दिया गया परिशिष्ट 'ग'।

(५) ट्रान्सवालमें पहलेसे बसे हुए भारतीय व्यापारियोंको उसके अन्तर्गत यह सुविधा नहीं दी गई कि वे अपने विश्वासी क्लार्कों, सहायकों व घरेलू नौकरोंको अस्थायी रूपसे बाहरसे बुलवा सकें।

(६) इस विधेयकके खण्ड ६ के उपखण्ड ग द्वारा यह अधिकार दिया गया है कि एशियाई कानून संशोधक अधिनियमकी सीमामें आनेवाले लोगोंको पकड़कर जबर्दस्ती निर्वासित किया जा सकेगा।

उपर्युक्त विषयपर दलीलें

उक्त समिति अब एतराजके उपर्युक्त कारणोंके बारेमें क्रमशः चर्चा करनेकी सविनय अनुमति माँगती है।

प्रथम कारण

जैसा कि महामहिमकी सरकारको पता है, एशियाई कानून संशोधक अधिनियम ट्रान्सवालमें रहनेवाले भारतीयोंमें अधिकसे-अधिक सन्ताप पैदा कर रहा है, उसकी शर्तें उस समाजके स्वाभिमानके लिए इतनी अपमानजनक तथा हानिप्रद महसूस की जा रही हैं कि उसके बहुतसे सदस्य उसके अधीन पंजीयन स्वीकार करनेकी अपेक्षा अपनी समस्त सांसारिक सुख-सुविधाओंके छिन जानेका खतरा मोल लेकर भी नम्रतापूर्वक अपना पंजीयन न करानेका दण्ड भुगतनेको तैयार हैं। पहले-पहल पेश किये जानेपर इस विधानको अस्थायी रूप देनेकी बात थी और कहा गया कि उसे एशियाइयोंके प्रवासके बारेमें जनता द्वारा निर्वाचित सभाका अभीसे निर्णय न माना जाये। साथ ही यह भी कहा गया था कि वर्तमान विचाराधीन विधेयकको केवल इसलिए उपस्थित किया जा रहा है कि इस सम्बन्धमें कोई और कानून मौजूद नहीं है। इस विधेयकका पहला खण्ड ही एशियाई कानून संशोधक अधिनियमको स्थायी बना देता है और शान्ति-रक्षा अध्यादेशकी शर्तोंको भी वहाँतक बनाये रखता है, जहाँतक एशियाई कानून संशोधक अधिनियमके अमलके लिए उसकी आवश्यकता पड़े।

दूसरा कारण

यह सर्वविदित है कि बहुतसे भारतीय जो युद्ध आरम्भ होनेपर ट्रान्सवालसे चले गये थे, अपने अपनाये हुए देशमें अभीतक वापस नहीं आये हैं। इस देशमें बस जानेके उद्देश्यसे उनमेंसे अनेक पुरानी डच सरकारको ३ पौंड दे चुके हैं। शान्ति-रक्षा अध्यादेशके कारण उनके अनुमति पत्र मिलनेके मार्गमें इतनी गम्भीर बाधाएँ खड़ी हो गई हैं — यद्यपि पराये यूरोपीय भी उन्हें माँगते ही पा जाते हैं — कि वे ट्रान्सवालमें अभीतक वापस नहीं आ सके हैं। उनमें से कुछने तो अभी अर्जियाँ भी नहीं दी हैं। इन शरणार्थियोंको इस विधेयकके अनुसार कोई यूरोपीय भाषा न जाननेके कारण ट्रान्सवालमें वर्जित प्रवासी करार दे दिया जायेगा। यह निषेध निहित स्वार्थ रखनेवाले सुपात्र ब्रिटिश प्रजाजनोंके विरुद्ध बहुत सख्तीसे लागू किया जायेगा। इस प्रकार स्थायी निवासके अधिकारको मंसूख करनेमें यह विधेयक केप उपनिवेशमें प्रचलित ऐसे कानूनोंसे आगे निकल जाता है।

तीसरा कारण

भारतीय भाषाओंको मान्यता देनेसे इनकार करके यह विधेयक अनुचित तथा अन्यायपूर्ण भाव उत्पन्न कर रहा है।

चौथा कारण

उक्त समितिकी नम्र सम्मतिमें खण्ड २ का उपखण्ड ४ अत्यन्त अस्पष्ट है और उसकी व्याख्या करना मुश्किल है। तो भी यह स्पष्ट है कि वह, दूसरी बातोंके अलावा योग्य भारतीयोंको निशाना बनाता है। एशियाई कानून संशोधक अधिनियमकी शर्तोंको उनसे पूरा करानेका विधान करके वह जो-कुछ एक हाथसे देता है उसे दूसरे हाथसे छुड़ा लेता है; क्योंकि यह कल्पना भी नहीं की जा सकती कि कोई भारतीय व्यापक शिक्षा पानेके बाद कभी इस अधिनियमकी शर्तोंको स्वीकार करेगा। ऐसे भारतीयोंको ऐसे अधिनियमका शिकार बनानेके लिए कोई दलील भी दिखाई नहीं देती जिसका उद्देश्य ट्रान्सवालमें रहनेवाले भारतीयोंकी शिनाख्त करना है, क्योंकि ऐसे भारतीय तो यूरोपीय भाषाके अपने ज्ञानके कारण अपने-आप पहचानके चिह्न रखते ही हैं। एशियाई कानून संशोधक अधिनियम इसलिए जरूरी माना गया है कि इस उपनिवेशमें रहनेवाले अधिकांश एशियाइयोंको अक्षर-ज्ञान भी नहीं है। शिक्षित भारतीयोंसे इस अधिनियमका पालन कराना उक्त समितिकी नम्र सम्मतिमें उनका अकारण अपमान है, साथ ही वह भारतीयोंको इस विधेयककी शिक्षा सम्बन्धी धाराके लाभसे वंचित करनेका अप्रत्यक्ष ढंग है।

पाँचवाँ कारण

इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता कि जिन भारतीयोंको ट्रान्सवालमें रहनेका हक है उनको अपने अस्थायी सहायक बाहरसे बुला सकनेकी सुविधासे वंचित करना एक गम्भीर शिकायत है।

छठा कारण

मूल मसविदेमें खण्ड ६ का उपखण्ड (ग) नहीं था। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, ट्रान्सवालके भारतीय एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके बारेमें, जीवन-मरणके युद्धमें लगे हुए हैं। अनुमान है कि हजारों भारतीय उक्त अधिनियमके सामने सिर झुकानेकी अपेक्षा जेलकी कठिनाइयाँ सहनेको तैयार हैं। उनमें से बहुतोंके लिए ट्रान्सवाल उनका अपना घर है, जहाँ वे ईमानदारीसे अपनी रोजी कमाते हैं। उनको देशसे निकाल देना, शायद उनको भुखमरीका सामना करनेको — निश्चय ही, अपने भावी जीवनकी सम्भावनाओंको नष्ट कर देनेको विवश करना है। जहाँ एशियाई कानून संशोधक अधिनियमके अनुसार पंजीयनका प्रमाणपत्र न लेनेपर उसे उपनिवेशसे निकल जानेकी सूचना दी जा सकती है, वहीं इस प्रकारकी सूचनाकी उपेक्षा करनेपर अपराधीको जेल भेजा जा सकता है। ऊपर जिस उपखण्ड (ग) का उल्लेख किया गया है उसके अनुसार स्थानीय सरकारको यह अधिकार मिल जाता है कि वह एशियाई कानून संशोधक अधिनियमके अधीन दी गई सूचनाकी अवहेलना करनेवाले किसी भी व्यक्तिको उसीके खर्चपर जबरदस्ती पकड़कर देशसे बाहर निकाल सके। इस प्रकार नम्रता-पूर्वक निवेदन किया जाता है कि उक्त खण्ड अपने-आपमें न केवल एक निर्दय नियम है वरन् वह अत्यधिक अन्यायपूर्ण भी है; क्योंकि वह अप्रत्यक्ष रूपसे एशियाई कानून संशोधक अधिनियममें इस तरहका परिवर्तन करता है जिससे सम्बन्धित व्यक्तियोंको बहुत ही असुविधा होगी। उक्त समितिको इस बातका विश्वास है कि यदि ऐसा संशोधन स्वयं उस अधिनियममें ही किया गया होता तो उसे शाही स्वीकृति नहीं मिलती। अतएव उक्त समितिको विश्वास है कि महामहिम सम्राट्की सरकार उक्त अधिनियमके अनुसार असाधारण अधिकार देनेवाले उक्त

उपखण्डको अपेक्षाकृत बहुत अधिक आपत्तिजनक मानेगी। इसके अलावा जबरदस्ती देश निष्कासनका यह असर होगा कि निर्वासितकी सम्पत्ति जप्त हो जायेगी। और उसमें यह व्यवस्था नहीं है कि निर्वासित व्यक्ति कहाँ भेजे जायेंगे। केप और नेटाल तो ऐसे व्यक्तियोंको अपने यहाँ नहीं आने देंगे। इसलिए उनको भूखों मरनेके लिए जबरदस्ती भारत भेजा जायेगा। अतएव इस क्षन्तव्य अपराध (यदि इसे अपराध माना ही जाये) के लिये दिया जानेवाला वह निर्वासित दण्ड भयंकर अपराधके लिए दिये हुए निर्वासित दण्डसे कहीं अधिक बुरा होगा; क्योंकि इस दूसरे निर्वासनमें अपराधीको कमसे-कम निवास-स्थान तथा भोजन तो दिया जाता है।

सामान्य बातें

उक्त समितिकी यह नम्र राय है कि देशपर ब्रिटिश अधिकार होनेके समयसे लगातार अबतक महामहिम सम्राट्की सरकारने भारतीयोंके स्वत्वोंकी उपेक्षा की है अथवा उनपर ध्यान नहीं दिया है, क्योंकि वे निर्बल थे। वह स्वार्थी लोगोंकी चिल्लाहटके सामने झुकती रही है, क्योंकि वे बलवान थे। और ऐसा उसने भारतीयोंको बार-बार दिये हुए वचनों और आश्वासनोंकी परवाह न करते हुए किया है। साथ ही उक्त समिति विनयपूर्वक महामहिमकी सरकारका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करती है कि विधानसभामें भारतीयोंको लेशमात्र भी प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया है; कि जब प्रार्थियोंकी ओरसे उस सम्मानित सदनको प्रार्थनापत्र दिया गया तब उसके पक्षमें किसी सदस्यने एक शब्द तक नहीं कहा; और इस प्रकारके प्रार्थनापत्रकी ऐसी ही गति विधान-परिषदमें भी हुई और उस दशामें जब कि — उसकी रचना ही — अन्य बातोंके साथ-साथ उन स्वार्थोंकी रक्षाके लिए की गई है, जिनका बृहत् तथा निर्वाचित सदनमें प्रतिनिधित्व न हो। उक्त समिति विनयपूर्वक निवेदन करती है कि इन परिस्थितियोंमें ब्रिटिश भारतीयोंको यह अधिकार होना चाहिए कि साम्राज्यकी केन्द्रीय सत्ताके रूपमें महामहिमकी सरकारसे उनको विशेष संरक्षण मिले।

प्रार्थना

अतएव उक्त समिति अनुनयपूर्ण प्रार्थना करती है कि उक्त विधेयकको अस्वीकार कर दिया जाये और महामहिमकी सरकार अपना प्रभाव डालकर उस विधेयकमें ऐसा संशोधन कराये जिससे एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके कारण महामहिम सम्राट्की भारतीय प्रजापर बुरा असर डालनेवाला मौजूदा तनाव कम हो।

लेकिन अगर, जिस समाजकी प्रतिनिधि यह समिति है, उसका कष्ट निवारण करना महामहिमकी सरकारके लिए असम्भव प्रतीत हो तो उसकी नम्र रायमें उसके लिए साम्राज्यके अन्दर शान्ति बनाये रखनेकी दृष्टिसे यह अच्छा होगा कि सम्राट्की समस्त भारतीय प्रजाको ट्रान्सवालसे हटा लिया जाये और उसके निहित तथा प्राप्त अधिकारोंका स्थानीय या साम्राज्यीय कोषसे पूरा हरजाना दिया जाये।

और न्याय तथा दयाके इस कार्यके लिए प्रार्थी, कर्तव्य मान कर, सदा दुआ करेंगे।

[आपका, आदि]
ईसप इस्माइल मियाँ
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

परिशिष्ट ग

उपर्युक्त प्रार्थनापत्रमें विधेयकके जिन अंशोंकी चर्चा की गई है, उनके उद्धरण नीचे दिये जाते हैं:

खण्ड १ : शान्ति-रक्षा अध्यादेश, १९०३ को मंसूख किया जाता है, किन्तु उसमें यह व्यवस्था है कि ऐसी किसी मंसूखीसे एशियाई कानून-संशोधक-अधिनियम, १९०७ से मिले हुए उन अधिकारों अथवा अधिकार-क्षेत्रपर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, जो इस अधिनियमको अमली जामा पहनानेके लिए दिये जा चुके हैं। परन्तु उक्त अध्यादेश उस अधिनियमके सभी उद्देश्योंके लिए पूरी तरहसे अमलमें लाया जायेगा।

खण्ड २ : उपखण्ड १ और ४ : "वर्जित प्रवासी" से अभिप्राय यह है कि उसमें निम्नलिखित वर्गोंके उन व्यक्तियोंको शामिल किया जायेगा जो इस अधिनियमके लागू होनेके बाद उपनिवेशमें प्रवेश करनेकी इच्छा करें या प्रवेश करें।

१. कोई भी व्यक्ति जो इस उपनिवेशके अन्दर अथवा इसके बाहर, नियमानुसार अधिकार-प्राप्त अधिकारीके समक्ष किसी यूरोपीय भाषाके अल्प ज्ञानके कारण (इमला अथवा दूसरे प्रकारसे) किसी यूरोपीय भाषाके अक्षरोंमें इस उपनिवेशमें आनेके लिए प्रार्थनापत्र या कोई दस्तावेज, जो उक्त अधिकारी चाहे, लिखनेमें अथवा उसपर हस्ताक्षर करनेमें असमर्थ होगा। इसमें यह व्यवस्था है कि इस उपखण्डके उद्देश्यके लिए यीडिश भाषाको यूरोपीय भाषा माना जायेगा।

२. कोई भी व्यक्ति जो इस उपनिवेशमें प्रवेश करने अथवा प्रवेश करनेके प्रयत्नकी तारीखको किसी ऐसे कानूनके अधीन हो या प्रवेश करनेपर हो जाये, जो उस तारीखको अमलमें हो, और जिसके अनुसार उसको उस तारीखको या उसके बाद वहाँ पाये जानेपर उपनिवेशसे निकाला जा सके अथवा उसे उस उपनिवेशसे चले जानेकी आज्ञा दी जा सके; चाहे वह ऐसे कानूनके विरुद्ध जेलकी सजा दी जानेपर या उसकी शर्तोंका उल्लंघन करनेपर अथवा उसकी शर्तोंके अन्तर्गत और किसी कारण हो। इसमें यह व्यवस्था है कि ऐसी सजा उस व्यक्तिको उस उपनिवेशके अलावा किसी और जगह किये हुए अपराधको करनेपर न दी गई हो, जिसके लिए उसको बिना शर्त माफ कर दिया गया हो।

खण्ड ६ : कोई व्यक्ति जो:

(क) इस अधिनियमके अमलमें आनेकी तारीखके बाद अनैतिकता-अध्यादेश, १९०३ की तीसरी, तेरहवीं या इक्कीसवीं या उन धाराओंके किसी संशोधनका उल्लंघन करनेके कारण सजा पा चुका हो; या

(ख) मन्त्री द्वारा यहाँ रहनेपर इस उपनिवेशकी शान्ति, व्यवस्था और सुशासनके लिए माकूल कारणोंसे खतरनाक माना गया हो; या

(ग) किसी कानूनके अधीन इस उपनिवेशसे चले जानेकी आज्ञा दी जानेपर उस आज्ञाका पालन करनेमें असमर्थ रहा हो, उसको मन्त्रीके हाथसे निकाले हुए वारंटपर गिरफ्तार करके इस उपनिवेशसे निकाला जा सकता है और गिरफ्तार होनेके बाद निकाले जानेके समय तक ऐसी हिरासतमें रखा जा सकता है जिसे नियमों द्वारा निश्चित किया जाये। इसमें यह व्यवस्था है कि अनुच्छेद (ख) के अधीन इस उपनिवेशसे ऐसे किसी व्यक्तिको नहीं निकाला जायेगा, जबतक उसके बारेमें राज्यपालकी आज्ञा न हो। इसमें यह व्यवस्था और है कि यदि इस प्रकार गिरफ्तार किये हुए किसी व्यक्तिकी गिरफ्तारीसे दस दिनके अन्दर-अन्दर राज्यपालने उसके निर्वासनकी आज्ञा न दे दी तो उसे हिरासतसे छोड़ दिया जायेगा।

खण्ड ११ : किसी व्यक्तिको, जिसे इस अधिनियमके अन्तर्गत इस उपनिवेशसे निकाले जानेकी आज्ञा दी गई हो और किसी अन्य व्यक्तिको, जिसे इस उपनिवेशमें प्रवेश करने या रहनेमें सहायता करने या उस अधिनियमका उल्लंघन करनेके कारण, खण्ड ७ के अन्तर्गत सजा दी गई हो, वे सब खर्चे देने पड़ेंगे जो सरकारको उसको उपनिवेश या दक्षिण आफ्रिकासे निकालनेमें उठाने पड़े हों, अथवा उपनिवेशके अन्दर

कहीं और हटाने तक नजरबन्द रखनेमें उठाने पड़े हों। विभागका एक अधिकारी इस प्रकारके खर्चोंकी मदों तथा उनका कुल योग बनाकर उसका एक प्रमाणपत्र बनायेगा। वह प्रमाणपत्र जिलाधिकारीके सामने उपस्थित किया जायेगा जो इसको उस व्यक्तिकी उपनिवेशके अन्तर्गत सम्पत्तिसे उसी प्रकार वसूल करेगा जैसे सर्वोच्च न्यायालय द्वारा किये हुए निर्णयको इजरा किया जाता है। जिलाधिकारी ऐसी सम्पत्तिकी कुर्कीकी रकमको खजांचीके पास जमा कर देगा। खजांची सरकारके उपर्युक्त खर्च तथा कुर्कीके खर्चको उसमें से काटकर शेष रकम उस व्यक्तिके पास भेज देगा, जो सम्पत्तिका मालिक था, अथवा वह उस रकमको किसी ऐसे व्यक्तिको दे देगा, जिसे सम्पत्तिके मालिकने उस रकमको लेनेके लिए मुकर्रर किया हो।

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल आफिस रेकर्ड्स: सी० ओ० २९१/१२२

१४१. तार: द० आ० ब्रि० भा० समितिको[1]

[जोहानिसबर्ग
अगस्त २३, १९०७ के बाद]

सेवामें
दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति
[लन्दन]

प्रवासी विधेयक शाही स्वीकृतिके लिए प्रेषित। प्रार्थनापत्र[2] चला गया। विधेयक अधिवासी भारतीयोंके लिए अहितकर। सत्याग्रहियोंको बलात् निर्वासनकी धारा विशेष रूपसे सम्मिलित। प्रार्थना है, अस्वीकार किया जाये या साम्राज्यीय कोषसे मुआवजा दिया जाये।

[ब्रिटिश भारतीय संघ]

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: सी० ओ० २९१/१२२

१. एल० डब्ल्यू० रिचने यह तार अगस्त ३१ को उपनिवेश कार्यालयको भेज दिया था।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

१४२. प्रस्तावित समझौता

ट्रान्सवालके उपनिवेश-सचिव और श्री गांधीके बीच हुए पत्र-व्यवहारको हम अन्यत्र छाप रहे हैं।[1] यह बड़ी दयनीय बात है कि जनरल स्मट्सने श्री गांधीके सुझावको स्वीकार नहीं किया यद्यपि वह समाजके नामसे नहीं किया गया, फिर भी हमारा खयाल है कि यह दोनों दलोंको एक गम्भीर कठिनाईसे बाहर निकल आनेकी साफ राह देता है। जनरल स्मट्स कानूनको लागू करनेकी अपनी योग्यतापर पूरी तरहसे भरोसा रखते हैं और इसलिए श्री गांधीके प्रस्तावको अस्वीकार करते हैं। हम यह कहे बिना नहीं रह सकते कि ऐसे युक्तिसंगत हलको अस्वीकार कर देनेसे प्रकट होता है कि जनरल स्मट्स ट्रान्सवालके भारतीयोंके बारेमें कितनी ओछी राय रखते हैं। तदनुसार हम सोचते हैं कि अब ट्रान्सवालके भारतीयोंका पहलेसे कहीं अधिक कर्तव्य हो गया है कि वे अपने आखिरी दम तक कानूनके आगे न झुकनेके आन्दोलनको जारी रखें। ट्रान्सवालकी सरकारके दृढ़ निश्चयसे उन भारतीयोंकी कोई हानि नहीं हो सकती जो पहले ही से बड़ेसे-बड़े त्यागके लिए तैयार हैं। न तो जेल और न निर्वासनसे उन भारतीयोंके दिलोंमें जरा भी डर पैदा होना चाहिये जो अपनी इज्जतको सबसे बड़ी चीज समझते हैं।

श्री गांधीने अपना मसविदा भेजते हुए एक खास मुद्दा उठाया है, अर्थात् क्या स्थानीय सरकार ट्रान्सवालमें रहनेके हकदार भारतीयोंकी शिनाख्त करानेमें भारतीय समुदायकी इच्छा और भावनाओंको जान लेनेकी कृपा करेगी। जनरल स्मट्स कहते हैं, 'नहीं'। इसका जवाब देना अब भारतीयोंका काम है। अब यह उनकी मर्जीपर है कि वे ट्रान्सवालमें एक सर्वथा अपमानभरा जीवन बितायें अथवा ब्रिटिश साम्राज्यके नागरिक और मानव गिने जानेके लिए एक सर्वोपरि प्रयत्न करें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–८–१९०७

१. देखिए "पत्र: जनरल स्मट्सके निजी सचिवको", पृष्ठ १४८-४९ और १६४-६५।

१४३. खुले दिलकी सहानुभूति

ब्लूमफॉन्टीनके 'फ्रेंड' ने एक सार्वजनिक सेवा की है और ब्रिटिश भारतीयोंकी हार्दिक कृतज्ञता अर्जित की है। क्योंकि जिस ढंगसे हमारे ट्रान्सवालके भाइयोंने अपने आत्मसम्मानको ठेस पहुँचानेवाले कानूनके प्रति अपनी घृणा प्रकट की है, उसका 'फ्रेंड' ने सहृदयतापूर्वक समर्थन किया है। 'फ्रेंड' ने उस विषयपर विचार करनेके लिए एक सम्पादकीय लेखमाला छापकर अपने साहस और जनहितकी भावनाका परिचय दिया है। अन्तमें वह इस परिणामपर पहुँचा है कि एक अपमानजनक कानूनके बारेमें सत्याग्रह द्वारा अपनी नाराजगी जाहिर करके ब्रिटिश भारतीय बिलकुल ठीक कर रहे हैं। हम चाहते हैं कि हमारे ट्रान्सवालके सहयोगी 'फ्रेंड' के अन्यत्र प्रकाशित उद्गारोंपर[1] ध्यान दें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–८–१९०७

१४४. पाठकोंको सूचना

हमारी दृष्टिसे इस समयके 'इंडियन ओपिनियन' के गुजराती विभागकी कीमत नहीं आँकी जा सकती। इस कथनमें अतिशयोक्ति मालूम हो सकती है, फिर भी यह उचित है। ट्रान्सवालके भारतीय इस समय जबरदस्त संघर्ष कर रहे हैं। यह पत्र संघर्षमें पूरी तरह मदद देनेमें रत है। अतः हम हरएक भारतीयका कर्तव्य मानते हैं कि वह संघर्षसे सम्बन्धित प्रत्येक पंक्ति पढ़े। पढ़कर उसका उपयोग करना है। पढ़नेके बाद पत्रको फेंक न दिया जाये। उसे सँभालकर रखनेकी जरूरत है। कुछ लेख और अनुवाद तो हम बार-बार पढ़नेकी सिफारिश करते हैं। इसके अतिरिक्त भारतमें हमारे प्रश्नकी चर्चा घर-घर होनी चाहिए। उसमें हमारे पाठक बहुत मदद कर सकते हैं। सब अपने मित्रोंको 'इंडियन ओपिनियन' की आवश्यक प्रतियाँ भेजकर पढ़नेके लिए कह सकते हैं तथा इस सम्बन्धमें जितनी भी मदद दी जा सकती हो, माँग सकते हैं। इस अंकमें हमीदिया इस्लामिया अंजुमनका मुसलमानोंके नाम पत्र[2] है। हम मानते हैं कि इस अंककी सैकड़ों प्रतियाँ भारत जानी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–८–१९०७

१. इन्हें यहाँ नहीं दिया गया। देखिए "सच्चा मित्र", पृष्ठ १९३ भी।
२. देखिए "भारतीय मुसलमानोंसे अपील", पृष्ठ १७९-८०

१४५. दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति

यह समिति बहुत बड़ा काम कर रही है। फीडडॉर्पवालोंकी निभ गई सो केवल इसीकी मददसे। आज भी इनकी मदद मिलती रहती है। श्री रिचका श्रम अपार है। स्पष्ट ही इस समितिको अपने कामके लिए अधिक धनकी जरूरत है। ट्रान्सवालसे बहुत-सा पैसा गया है। अभी वहाँसे ज्यादा भेजे जानेकी अपेक्षा नहीं रखनी चाहिए। ट्रान्सवालकी लड़ाई सारे दक्षिण आफ्रिकाकी लड़ाई है। अतः हम नेटाल भारतीय कांग्रेससे सिफारिश करते हैं कि वह ज्यादा पैसा भेजे। केपके भाइयोंने इस मामलेमें अपने कर्तव्यका जरा भी पालन नहीं किया। अब यदि वे, या डेलागोआ-बेके भारतीय, थोड़ा चन्दा करके भेजें तो अनुचित नहीं होगा, और यह सिद्ध हो जायेगा कि वे मदद देनेको तैयार हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–८–१९०७

१४६. श्री गांधीकी सूचना

जनरल स्मट्सने श्री गांधीको जो पत्र लिखा है और उसपरसे जो प्रश्नोत्तर[1] हुए हैं उनकी चर्चा 'लीडर' तथा 'डेली मेल' में हो चुकी है। जनरल स्मट्सका पत्र साफ धमकी है। उनके पत्रसे मालूम होता है कि कानूनको अमलमें लाना बड़ा कठिन काम है। दस-बीस व्यक्तियोंको सजा दी जा सकती है; किन्तु हजारों व्यक्तियोंको सजा देनेकी हिम्मत, बहादुर होते हुए भी, जनरल स्मट्स नहीं कर सकेंगे। इसीलिए वे कहते हैं कि कानूनको पूरी तरह अमलमें लायेंगे। यदि यही बात थी तो आजतक क्यों बैठे रहे? प्रवासी कानूनमें क्यों परिवर्तन कर रहे हैं? उनके अधिकारी नये पंजीयनपत्रकी प्रतीक्षा क्यों कर रहे हैं? उनकी धौंस और व्यवहारमें बहुत फर्क पड़ता दिखाई दे रहा है। उन्होंने जो उत्तर दिया है उससे भिन्न उत्तर वे दे ही नहीं सकते। क्योंकि अभी तो, जबतक संग्राम चल रहा है, गालोंपर तमाचे लगा-लगा कर भी अपने मुँहकी ललाई कायम रखनी पड़ती है। भारतीय समाज कसौटीपर खरा उतरे तब देखना होगा कि वे क्या कर सकते हैं।

अखबारोंकी टीकाओंसे भी मालूम होता है कि पहले जिस प्रकार वे गालियाँ देते या मजाक उड़ाते थे, वह सब बन्द हो गया। अब धमकीका खेल शुरू हुआ है। अखबार समझा रहे हैं कि जनरल स्मट्स अपनी हठ नहीं छोड़ेंगे; इसलिए भारतीय समाजको अपने खुदाको छोड़कर जनरल स्मट्सके गुलामीके कानूनकी शरण जाना होगा। 'डेली मेल' तो यह भी धमकी दे रहा है कि ट्रान्सवालमें जंगली काफिर बहुत रहते हैं, यह बात भारतीयोंको याद रखनी चाहिए।[2] इसे हम बुढ़ापेका सठियाना कहते हैं। कानूनको अमलमें लाते-लाते गोरे बूढ़े हो गये हैं यह कहा

१. देखिए "पत्र: जनरल स्मट्सके निजी सचिवको", पृष्ठ १४८-४९ और १६४-६५।
२. देखिए "पत्र: 'रैंड डेली मेल'को", पृष्ठ १८२।

जा सकता है, फिर भी उनकी आशा पूरी नहीं हुई। इसलिए अब बकवास शुरू हुई है। नहीं तो, हमारी लड़ाई और काफिरोंके बीच क्या सम्बन्ध है? क्या उनसे भारतीय समाजपर आक्रमण करवाना है? ऐसा शकुन तो बिस्तरसे लगे हुएके मुँहसे ही निकल सकता है!

लेकिन जनरल स्मट्सके उत्तरसे हमें जो एक बात अच्छी तरह याद रखनी चाहिए सो यह है कि ट्रान्सवालके भारतीय दरअसल दृढ़ रहेंगे, अपने धनका त्याग करेंगे, जेलके दुःख भोगेंगे और निर्वासित होनेमें अपनी प्रतिष्ठा समझेंगे, तभी हमारी जीत होगी। यह सारा बलिदान हम तभी कर सकेंगे जब खुदापर हमारा सच्चा भरोसा होगा। यानी, हिन्दू या मुसलमान प्रत्येक भारतीयके लिए ईमानपर बात आ टिकी है। ईमान-रूपी तलवार हर दुःखको काट सकेगी, और वह ईमान हमें बोलकर नहीं, करके दिखाना है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–८–१९०७

१४७. क्या हम न्याय परिषदमें जा सकते हैं?

सर रेमंड वेस्टने श्री रिचके नाम जो पत्र लिखा है वह पढ़ने योग्य है। श्री वेस्ट बम्बई उच्च न्यायालयके न्यायाधीश थे। वे कानूनके प्रसिद्ध हिमायती हैं। उनकी राय है कि भारतीय समाज [न्याय परिषद् (प्रिवी कौन्सिल) में] प्रश्न उठा सकता है कि चूँकि नया कानून ब्रिटिश विचारधाराके विरुद्ध है इसलिए निःसत्व है। यदि यह किया जा सकता हो तो यह कदम निस्सन्देह उठाने योग्य है। किन्तु हमें खेदपूर्वक कहना होगा कि इसमें कुछ सार नहीं। ट्रान्सवालके बड़े-बड़े वकील इस विचारके विरुद्ध हैं। इसलिए सर रेमंडकी रायके आधारपर हम कोई आशा नहीं बाँध सकते। भारतीयोंकी सच्ची न्याय परिषद उनकी हिम्मत है। उनकी सुनवाई करनेवाला केवल खुदा है। और उस खुदाका भरोसा ही उनका जबरदस्त वकील है। उसकी हिमायत कभी निष्फल नहीं हो सकती। इतना होनेपर भी समाजकी सुविधाके लिए समितिको सूचित किया गया है कि वह विलायतके बड़े वकीलोंकी राय ले। इसमें धनकी जरूरत होगी। अतः हमारे कथनानुसार यदि समितिको सहायता भेजी जायेगी तो परीक्षणात्मक मुकदमा लड़ा जा सकता है या नहीं, इस शकका निराकरण किया जा सकेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–८–१९०७

१४८. क्या नेटालमें खूनी कानून बन सकता है?

हेगर साहबके प्रश्न करनेपर मूअर साहबने जवाब दिया है कि नेटाल सरकार भी नेटालमें ट्रान्सवालके समान ही कानून बनानेके सम्बन्धमें विचार करेगी। खूनी कानूनकी यही विशेषता है। उसकी बदबू केवल ट्रान्सवालमें ही नहीं, सड़ते हुए मुर्देकी बदबूके समान चारों ओर फैल रही है। इस हलचलसे निम्न बातें प्रकट होती हैं:

१. ट्रान्सवालके भारतीयोंपर बड़ी जिम्मेदारी है;

२. यदि ट्रान्सवालके भारतीय पीछे हट गये तो फिर हर जगह ऐसा कानून बन जायेगा;

३. और ट्रान्सवालका सवाल सारे दक्षिण आफ्रिकाका है।

इसलिए ट्रान्सवालके भारतीयोंको हर संकट झेलकर दृढ़ रहना चाहिए और इस प्रश्नको अपना व्यक्तिगत प्रश्न मानकर अन्य भारतीयोंकी पूरी मदद करनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४-८-१९०७

१४९. सच्चा मित्र[1]

हम ब्लूमफॉन्टीनके 'फ्रेंड' नामक अखबारसे एक लेखका अनुवाद दे रहे हैं। हमारी सलाह है कि उसे सब ध्यानपूर्वक पढ़ें। 'फ्रेंड' का अर्थ मित्र होता है और इस अखबारने भारतीय कौमके मित्रका काम किया है। उसने जो लिखा है उससे विशेष अच्छा होना सम्भव नहीं है। उस अखबारका प्रभाव बहुत है और जैसा असर उसके सम्पादकके मनपर पड़ा है वैसा हजारों गोरोंके मनपर पड़ा है। किन्तु अभी वे बोल नहीं रहे हैं। हम जब सच्चा रूप दिखायेंगे तब वे बोलने लगेंगे। 'फ्रेंड' के लेखसे इतना समझना चाहिए कि भारतीय समाज यदि इस समय जरा भी पीछे हटा तो कौमकी बदनामी होगी और तीस करोड़ भारतीयोंकी कीमत तेरह हजार भारतीयोंपर से आँकी जायेगी। 'फ्रेंड' ने हर्जाना देनेकी बात उठाई है। सम्भव है, यह बात आगे भी उठे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४-८-१९०७

१. देखिए "खुले दिलकी सहानुभूति", पृष्ठ १९०।

१५०. हमीदिया इस्लामिया अंजुमनका पत्र

ट्रान्सवालकी हमीदिया इस्लामिया अंजुमनने भारतीय मुसलमानों और अंजुमनोंके नाम एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण पत्र[1] भेजा है। उसकी ओर हम भारतीय अखबारों और नेताओंका ध्यान आकर्षित करते हैं। ट्रान्सवालके भारतीय इतनी गम्भीर लड़ाईमें लगे हैं कि उन्हें भारतके कोने-कोनेसे मदद दी जानी चाहिए। आजतक जितनी मदद मिली है, उतनी काफी नहीं है। हमारे भाई स्वदेशके ही प्रश्नोंमें उलझे हुए हैं; अतः उन्हें दूसरा काम करनेके लिए कम अवकाश रहता है। फिर भी हम आशा करते हैं कि वे हमारे लिए थोड़ा बहुत समय निकालेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–८–१९०७

१५१. एस्टकोर्टकी अपील[2]

एस्टकोर्टके स्थानिक निकायने सम्राट्की न्याय परिषदमें अपील करनेका विचार किया था। उसे सर्वोच्च न्यायालयने ठण्डा पानी डालकर खत्म कर दिया है। सम्राट्की न्याय परिषदमें अपील करनेके लिए जो अनुमति लेनी चाहिए वह सर्वोच्च न्यायालयने नहीं दी, इसलिए स्थानिक निकायका पानी उतर गया है। इसके लिए हम एस्टकोर्टके भारतीयोंको बधाई देते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–८–१९०७

१. देखिए "भारतीय मुसलमानोंसे अपील", पृष्ठ १७९-८०।
२. देखिए "एस्टकोर्टकी अपील", पृष्ठ १५८।

१५२. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

पॉचेफ्स्ट्रूम और क्लार्क्सडॉर्प

पंजीयन कार्यालय इन दोनों स्थानोंसे जैसा गया था वैसा ही लौट आया है। पॉचेफस्ट्रूमके अखबार लिखते हैं कि पंजीयकोंने सारा समय बीड़ी पीनेमें बिताया। एक कैदी तक पंजीकृत नहीं हुआ। पॉचेफस्ट्रूममें स्वयंसेवक काममें लग गये थे। प्रिटोरियासे पीटर्सबर्ग, पीटर्सबर्गसे पॉचेफस्ट्रूम और पॉचेफस्ट्रूमसे आगे क्लार्क्सडॉर्प बढ़ गया है; क्योंकि क्लार्क्स-डॉर्पके भारतीयोंने स्वयंसेवक भी नहीं रखे। बाहरसे भी उन्होंने किसीकी मदद नहीं ली। जो मदद दी गई उन्होंने उसे लेनेसे भी इनकार कर दिया। हर भारतीयने अपने-आप ही पंजीयन कार्यालयका बहिष्कार किया। इस प्रकार क्लार्क्सडॉर्प सबसे आगे बढ़ गया। अब दूसरे गाँव किससे आगे बढ़ेंगे? और यदि बढ़ना चाहेंगे तो किस तरह? इन दोनों जगहोंपर तार[1] पहुँच गये थे। और उन्होंने उनके उत्तर भी दिये हैं। पॉचेफस्ट्रूमके पुराने निवासी श्री ई० एन० पटेल दोनों जगहोंपर पहुँच गये थे।

स्मटसको भेजे गये पत्रपर टीका

श्री गांधीने जनरल स्मट्सके नाम जो पत्र लिखा है, वह प्रकाशित हो गया है और उसपर 'लीडर' और 'स्टार' ने टीका की है। दोनों अखबारोंका कहना है कि जनरल स्मट्सके उत्तरको निर्णायक मानकर श्री गांधीको भारतीय समाजसे यह सिफारिश करनी चाहिए कि वह कानूनकी शरण हो जाये, नहीं तो उसे परेशान होना पड़ेगा। यह सीख तो ठीक ही है। किन्तु ऐसा लिखनेवाले यह भूल जाते हैं कि भारतीय समाज जनरल स्मट्सके भरोसे नहीं बैठा है। उसका संरक्षक तो परमेश्वर है, जनरल स्मट्स नहीं; न ट्रान्सवालके गोरे ही। इन गोरोंकी कानूनके वश करानेकी आतुरतासे मालूम होता है कि भारतीय समाजके विरोधसे ये डर रहे हैं।

जनरल स्मट्सका उत्तर

स्वयं जनरल स्मट्सका उत्तर भी एक ऐसी ही धमकी है, जिससे भारतीयोंको रत्ती-भर भी नहीं डरना चाहिए। उनका काम हमसे किसी भी प्रकार कानून स्वीकार कराना है। इसलिए वे तरह-तरहकी धमकियाँ दे रहे हैं। वे कहते हैं कि वे कानूनको पूरी तरह अमलमें लायेंगे। इसका क्या मतलब? कोई भी यह नहीं सोचता कि कानून पूरी तरह अमलमें नहीं लाया जायेगा। यह तो सभी जानते हैं कि कानूनकी एक भी उपधारा रद नहीं होगी; किन्तु प्रश्न यह है कि जो उसके वश नहीं होंगे उनपर वह किस प्रकार लागू किया जायेगा? उन्हें सजा देकर? यदि यह बात हो तो भारतीय कहते हैं कि उन्हें जेल या निर्वासनका डर नहीं है। डरनेवालोंपर वह अवश्य लागू किया जा सकेगा, किन्तु उन्हें तो

१. देखिए "तार: पॉचेफस्ट्रूमके भारतीयोंको", और "तार: पीटर्सबर्गके भारतीयोंको", पृष्ठ १६२।

मरा हुआ ही समझना चाहिए। हम जानते हैं कि यह उनपर लागू किया जायेगा इसीलिए तो कहते हैं कि भारतीय मेहरबानी करके कानूनके सामने न झुकें। किन्तु इतना तो मैं निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि तेरह हजार भारतीयोंको गिरफ्तार या निर्वासित करना जनरल स्मट्स या किसीसे नहीं हो सकता। यह स्वाभाविक नियम है। हर कानून वहीं अमलमें आ सकता है जहाँ बहुत लोग उसे माननेको तैयार हों। मैं यह कह सकता हूँ कि जहाँ सभी चोर हों वहाँ चोरी-सम्बन्धी कानूनपर अमल नहीं किया जा सकता। उदाहरणके लिए, भारतके कुछ हिस्सोंमें ठग कहलानेवाले लोग ठगीका धंधा करते हैं, उन्हें किसी भी कानूनसे वशमें नहीं किया जा सका है। जब अपराधी लोग इस प्रकार मुक्त रह सकते हैं, तब भारतीय कौम जैसे निर्दोष लोगोंको क्या हो सकता है?

व्यापारियोंकी स्थिति

कुछ भारतीय विचारमें पड़ गये हैं और बहुतसे लोगोंको शक है कि वे आखिर तक टिक सकेंगे या नहीं। यह समय ऐसा है कि जिसके पास जितना धन है उसकी पीड़ा भी उतनी ही अधिक है। प्रश्न यह है कि धनका मोह कैसे छूटे। इसके अतिरिक्त, गोरे व्यापारी [उधार] माल देना बन्द कर रहे हैं। इसे मैं तो एक अच्छा लक्षण मानता हूँ। इतने दिन तक तो गोरे मजाक करते थे और मानते थे कि भारतीय जेल नहीं जायेंगे। अब वे समझने लगे हैं कि हमारा बाना सच्चा है। फिर भी भारतीय व्यापारी स्वयं क्या मानते हैं इसका विचार किया जाना चाहिए। गोरे व्यापारी यदि माल न देंगे तो क्या होगा? यह एक प्रश्न है। इसका सीधा उत्तर यह है कि नये कानूनको मान लेनेपर भी यदि वे माल न दें तो हम क्या करेंगे? उस वक्त तो ऐसा प्रश्न भी नहीं उठ सकता। तब फिर आज यह प्रश्न भी नहीं उठता। और वे माल न दें तथा व्यापार न चले अथवा व्यापारको कम करना पड़े तो इसमें कतई आश्चर्य नहीं। यदि कोई भारतीय यह मानता हो कि समाजके लिए बिना नुकसान उठाये कानून रद हो सकता है या कोई भी लाभ हो सकता है तो वह बड़ी भूल करता है। कष्ट या नुकसान उठानेके लिए तो हम बैठे ही हैं। यदि वह हम आज खुशीसे नहीं उठायेंगे, तो आखिर कानून द्वारा अपमानित होकर नुकसान उठानेके लिए बाध्य होना पड़ेगा। और उसके बाद जो हाल होना है उसका नुकसान भी उठाना ही होगा। ऐसी चिन्ता करनेवाला व्यक्ति बताता है कि उसने अभी शपथका अर्थ नहीं समझा है। जेलके लिए तैयार रहनेवाले लोगोंको मालके न मिलनेकी चिन्ता ही क्यों होगी? वास्तवमें उन्हें आजसे ही माल लेना अपने-आप बन्द कर देना चाहिए, जिससे पीछे कष्ट न हों, कोई रुकावट न रहे, तथा लेनदारोंकी रकम उनके पास पहुँच जाये। धनका त्याग किये बिना इज्जत नहीं मिलेगी। और न यह कष्ट सहे बिना राहत ही मिलेगी। जैसे-जैसे दिन गुजरेंगे हमें तरह-तरहके रंग देखनेको मिलेंगे। कई धमकियाँ मिलेंगी। बहुत नुकसान भी होगा। जैसे खुद मरे बिना स्वर्ग मिलनेवाला नहीं है, वैसे ही धन, जेल और निर्वासनकी जोखिम उठाये बिना नया कानून रद होनेवाला नहीं है।

मनिकका निवेदन

श्री मनिकने श्री स्मट्ससे निवेदन किया है कि भारतीय व्यापारियोंको अलग बस्तीमें खदेड़ने तथा उनका व्यापार घटानेके लिए कानून बनाया जाना चाहिए। श्री स्मट्सने जवाब दिया है कि नये कानूनका परिणाम जाने बिना दूसरे कौनसे कानून बनाये जायें, यह

कहा नहीं जा सकता। किन्तु इस निवेदनका जवाब मैं दे सकता हूँ। मान लें कि सारे भारतीय ट्रान्सवालसे चले गये और साढ़े तीन कलमुँहे रह गये। उस हालतमें कलमुँहोंको तो हलके दर्जेका मानकर जैसे-तैसे रहने दिया जायेगा, किन्तु उन्हें दूसरे लोगोंको लानेकी अनुमति नहीं होगी। इसका मतलब है कि उन्हें कुत्तेकी तरह जीवन बिताने दिया जायेगा। और थोड़े दिनोंमें उनके पैर अपने-आप ही उखड़ जायेंगे। अब मान लें कि बहुतेरे भारतीयोंने पैसेको प्यारा समझकर कानून स्वीकार कर लिया। तब बाजार तो उनके सिरपर खड़ा ही है। उस कानूनका कौन विरोध कर सकता है? यदि किसीने किया तो नक्कार-खानेमें तूतीकी आवाज कौन सुनेगा? किन्तु यदि भारतीय बहुत बड़ी संख्यामें कानूनके विरोधमें जूझें तो वे निस्सन्देह जहाँ चाहेंगे वहाँ इज्जतके साथ व्यापार कर सकेंगे, तथा कानून भी ऐसे बनाये जायेंगे जो सब गोरे-काले व्यापारियोंपर लागू हों। इसके अलावा भारतीय व्यापारी बहुत इज्जतके साथ रहेंगे।

निर्वासन कानून

प्रवास कानून दोनों संसदोंमें पास हो गया है। सम्भव है वह शुक्रवारके 'गज़ट' में प्रकाशित हो। वह अभी लागू नहीं किया जा सकता, क्योंकि हस्ताक्षरके लिए विलायत भेजा जायेगा। उसमें एक उपधारा ऐसी देखनेमें आती है कि जिन्हें नये कानूनके अन्तर्गत ट्रान्सवालसे निर्वासित होनेकी सजा हो उन्हें सरकार जबरदस्ती निर्वासित कर सकती है। यह उपधारा नई है। इसके आधारपर जिस भारतीयको नोटिस मिलेगा उसे सरकार जबरदस्ती निकाल सकती है। यह नई परेशानी है। इस कानूनपर विलायतमें सही होगी या नहीं, कह नहीं सकते। किन्तु यदि हो गई तो निर्वासन कानून सबपर लागू हो सकता है। परन्तु इसका अर्थ विशेष कुछ नहीं है। यदि ट्रान्सवालकी सरकार भारतीयोंको जबरदस्ती जेलमें बन्द कर सकती है तो जबरदस्ती उनका निर्वासन भी कर सकती है। किन्तु मानना यही होगा कि यह धारा केवल नेताओंपर ही लागू की जायेगी। ब्रिटिश भारतीय संघ इस कानूनके खिलाफ एक अर्जी[1] विलायत भेज रहा है और बहुत करके इस पत्रके छपनेके पहले ही वह रवाना कर दी जायेगी।

रस्टनबर्गसे

रस्टनबर्गसे तार आया है कि खुदाकी मेहरबानीसे सारे भारतीय पंजीयन करवानेके खिलाफ दृढ़ हैं।

'स्टार' को पत्र

श्री गांधीने 'स्टार' की टीकाके सम्बन्धमें निम्नानुसार पत्र लिखा है:[2]

'स्टार'

श्री गांधीके इस पत्रपर 'स्टार' ने बहुत ही टीका की है और लिखा है कि अँगुलियोंका निशान लगाना यदि मुख्य आपत्ति नहीं थी तो उसपर आज तक क्यों इतना जोर दिया गया? 'स्टार' का कहना है कि बच्चोंका पंजीयन न करने और पुलिस द्वारा कोने-कोने न पुछवाने या अँगुलियाँ न लगवानेसे बहुत भारतीय घुस आयेंगे, इसलिए श्री गांधीका सुझाव ठीक नहीं माना जा

१. देखिए "आवेदनपत्र: उपनिवेश मन्त्रीको", पृष्ठ १८३-८८।
२. पाठके लिए देखिए "पत्र: 'स्टार' को", पृष्ठ १७८-७९।

सकता। इसपर श्री गांधीने और उत्तर दिया[1] है कि अँगुलियाँ लगाना मुख्य आपत्ति तो नहीं, किन्तु आपत्तिजनक तो है ही। इसके अलावा अँगुलियाँ लगाना अनिवार्य हो ही नहीं सकता। लॉर्ड मिलनरके समयमें भारतीय समाजने स्वेच्छया एक अँगूठा लगाना स्वीकार किया था। भारतीय समाज दस अँगुलियाँ तो स्वेच्छापूर्वक भी नहीं लगायेगा। 'स्टार' ने निवेदनको ठीक तरहसे नहीं देखा है। जबतक गोरे ठीक तरहसे छानवीन नहीं करते, तबतक समझौता हो ही नहीं सकता। किन्तु प्रत्येक गोरा काले भारतीय समाजके विरुद्ध हो तब भी खुदा तो उसके साथ है, और इतना काफी है।

संघकी बैठक

बुधवारको संघकी बैठक हुई थी। उसमें श्री ईसप मियाँ, श्री अब्दुल गनी, श्री नायडू, श्री शहाबुद्दीन, श्री अस्वात, श्री मालिम मुहम्मद, श्री इमाम अब्दुल कादिर, श्री उमरजी साले, श्री गुलाम मुहम्मद , श्री एम० पी० फैन्सी, श्री कड़ोदिया, श्री मूसा इसाकजी, श्री आई० ए० काजी, श्री अमीरुद्दीन, श्री वल्लभ राम, श्री अम्बादास तथा अन्य उपस्थित थे। श्री गांधीने प्रवास विधेयक सम्बन्धी अर्जी पढ़ी तथा उसे और उसके सम्बन्धमें तार[2] भेजनेकी अनुमति माँगी। श्री शहाबुद्दीनके प्रस्ताव और श्री फैन्सीके समर्थनसे अनुमति दी गई। श्री मुहम्मद शहाबुद्दीनके प्रस्ताव और श्री कुवाड़ियाके समर्थनसे श्री ईसप मियाँ स्थायी अध्यक्ष बनाये गये और इमाम अब्दुल कादिरके प्रस्ताव और श्री नायडूके समर्थनसे श्री पोलकको सहायक अवैतनिक मन्त्री नियुक्त किया गया।

श्री फैन्सीके प्रस्ताव और श्री उमरजी सालेके समर्थनसे निर्णय किया गया कि संघका हिसाब हर माह, 'इंडियन ओपिनियन' में प्रकाशित किया जाये।

अन्तिम तार

लोकसभामें ट्रान्सवालको कर्ज दिये जानेके सम्बन्धमें प्रस्ताव किया गया था वह मंजूर हो गया है। किन्तु उसपर टीका करते हुए सर चार्ल्स डिल्क, श्री लिटिलटन, श्री कॉक्स आदि सदस्योंने भारतीयोंको होनेवाले कष्टोंके सम्बन्धमें बहुत कहा। श्री लिटिलटनने, जो पहले सचिव थे, कहा कि कर्ज देनेके पहले बड़ी सरकारका कर्तव्य था कि वह भारतीयोंके हकोंकी रक्षा करती। किन्तु उसमें वह चूक गई है। श्री कॉक्सने लोकसभामें सवाल उठाया है कि बड़ी सरकारको चाहिये कि वह डच सरकारको सलाह दे कि वह ट्रान्सवाल छोड़कर जानेवाले भारतीयोंको ५०,००,००० पौंडके इस ऋणसे हर्जाना दे। इस हलचलसे जान पड़ता है कि भारतीय यहाँ जितना जोर दिखायेंगे विलायतमें उनके पक्षमें उतने ही ज्यादा लोग होंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४-८-१९०७

१. देखिए "पत्र: 'स्टार'को", पृष्ठ १८१।
२. देखिए "तार: द० आ० ब्रि० भा० समितिको", पृष्ठ १८८।

१५३. पत्र : जोहानिसबर्ग नगरपालिकाको

[जोहानिसबर्ग
अगस्त २८, १९०७]

[टाउन क्लार्क
जोहानिसबर्ग
महोदय,]

मेरे संघकी समितिने समाचारपत्रोंमें सामान्य प्रयोजन समितिका यह सुझाव देखा है कि मार्ग यातायात उपनियमोंमें ऐसे संशोधन कर दिये जायें कि, दूसरोंके साथ-साथ, ब्रिटिश भारतीय भी प्रथम श्रेणीकी किरायेकी बग्घियोंका उपयोग न कर सकें। मेरी समिति यह कहनेकी धृष्टता करती है कि ऐसा उपनियम ब्रिटिश भारतीयोंके विरुद्ध द्वेषपूर्ण भेद उत्पन्न करेगा, और उस समाजके लिए अनावश्यक रूपसे अपमानजनक होगा जिसका मेरा संघ प्रतिनिधित्व करता है। इसलिए मुझे भरोसा है कि नगर परिषद सामान्य प्रयोजन समितिकी सिफारिशको स्वीकार न करेगी।

[आपका आदि,
ईसप इस्माइल मियाँ]
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९०७

१५४. प्रवास-प्रार्थनापत्र

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय संघने ट्रान्सवालके प्रवासी-प्रतिबन्धक विधेयकके बारेमें जो २६ तारीखके 'गजट' में इस रोककी धाराके साथ अधिनियमके रूपमें छपा है कि, "जबतक राज्यपाल 'गजट' में यह घोषित न कर देंगे कि महामहिमकी इच्छा उसे अस्वीकार करनेकी नहीं है, तबतक यह अधिनियम अमलमें न आयेगा," लॉर्ड एलगिनको अविलम्ब प्रार्थनापत्र[1] भेज दिया है। जबतक शाही मर्जीका पता न चले, रोककी धारामें कोई बल नहीं है। इसलिए लॉर्ड एलगिनके पास अब उस साम्राज्य सम्बन्धी भूलको सुधारनेका एक मौका है जो, हमारे विचारसे, उन्होंने महामहिमको एशियाई पंजीयन अधिनियम स्वीकार करनेका परामर्श देनेमें की थी। प्रार्थनापत्रमें श्री ईसप इस्माइल मियाँने सम्बद्ध कानूनके उत्पन्न होनेवाले हर मुद्देकी चर्चा की है। तो भी फिलहाल हम अपनी चर्चाको कानूनके उस पहलू तक ही सीमित रखना चाहते हैं, जिसका असर ट्रान्सवालमें बसे भारतीयोंपर पड़ता है।

१. देखिए "आवेदनपत्र : उपनिवेश मन्त्रीको", पृष्ठ १८३-१८८।

हमें याद है कि श्री डंकनने जोर देकर कहा था कि एशियाई पंजीयन अधिनियमको इसलिए जरूरी समझा गया था कि उस समय कोई प्रवासी अध्यादेश लागू नहीं था, और उसको केवल एक अस्थायी कदम ही समझा जाना ना। वह निस्सन्देह एशियाइयोंके प्रवासके तथाकथित ज्वारको रोकनेके लिए एक घवराहटका कानून भी था और, माननीय श्री कर्टिसके शब्दोंमें, यह प्रवास-रूपी ज्वार कमसे-कम २०० व्यक्ति प्रतिमासकी दरसे आ रहा था। श्री डंकन तथा श्री कर्टिसके वक्तव्यकी[1] यह एक अनोखी तारीफ है कि तत्कालीन उपनिवेश-सचिवके प्रास्ताविक भाषणके एक वर्ष बाद भी अबतक पंजीयन नहीं हुआ। और, यह भी कि एशियाई पंजीयन अधिनियम अबतक लगभग लागू ही नहीं हुआ। हाँ, इतना जरूर हुआ है कि पंजीयन अधिकारी उन लाभोंके लिए एशियाई प्रार्थियोंकी तलाशमें उपनिवेशमें गश्त लगाते रहते हैं जो, लॉर्ड सेल्बोर्नके कथनानुसार, पंजीयन-अधिनियम उन्हें प्रदान करता है। और यही वह अधिनियम है जिसे विचाराधीन विधान स्थायी बनाता है। और इस तरह जहाँ यह ट्रान्सवालके गोरे निवासियोंको शान्ति-रक्षा अध्यादेशसे मुक्त करता है, वहीं एशियाइयोंकी गर्दनके फंदेको और भी कस देता है।

इस प्रकार, एशियाई देखते हैं कि गोरी ब्रिटिश प्रजाको अधिक स्वतन्त्रता देनेका अर्थ एशियाई ब्रिटिश प्रजापर अधिकाधिक पाबन्दियाँ लगाना होता है। साम्राज्यके इस नये लाड़ले बच्चेको, दूसरे तथा अधिक पुराने स्वशासन-भोगी उपनिवेशोंके विपरीत, उन भारतीयोंके अधिकारोंका अपहरण करने दिया जा रहा है जो पुरानी डच सरकारको तीन पौंड चुकानेके कारण पहलेसे ही ट्रान्सवालके स्थायी निवासी बन चुके हैं। क्योंकि, जैसा ब्रिटिश भारतीय संघका कहना है, प्रवासी अधिनियमके मातहत केवल उन्हीं एशियाइयोंको स्थायी निवासी होनेका अधिकारी माना जायेगा जो इस एशियाई अधिनियमके मुताबिक पंजीकृत होंगे।

संघ द्वारा उठाया गया यह आखिरी मुद्दा 'सख्तीमें' हमारे बतलाये हुए दूसरे दो मुद्दोंके भी कान काटता है। इसमें इस बातकी व्यवस्था की गई है कि जो ब्रिटिश भारतीय इस नये कानूनके अनुसार पंजीयनका प्रमाणपत्र न लेंगे उनको पकड़कर उपनिवेशसे जबर्दस्ती निकाला जा सकता है। अब, प्रमाणपत्र लेना अन्ततः एक ऐसी औपचारिकता है जिसमें गुलामीकी बहुतसी बातें आ जाती हैं। ऐसा तो नहीं है कि जो लोग पंजीयनका प्रमाणपत्र नहीं लेते वे ट्रान्सवालके निवासी नहीं हैं। वास्तवमें एशियाई अधिनियमके विरुद्ध वीरतापूर्ण मोर्चा लेनेवाले अधिकतर भारतीय इस उपनिवेशके पुराने सम्मानित निवासी हैं। हमारे अध्यक्षकी तरह उनमें से कुछ तो बीस-बीस वर्षसे यहाँ रह रहे हैं। उनकी सभी सांसारिक सम्पत्ति, यहाँ तक कि, उनके परिवार, उनके पूजा-स्थान तथा ऐसी प्रत्येक वस्तु भी, जिसे वे संसारमें प्रिय समझते हैं, इसी उपनिवेशमें हैं। ये ही वे लोग हैं जो अपमानपूर्ण दस्तावेजोंको लेनेसे इनकार करनेके कारण अपने घरोंसे जबर्दस्ती निकाले जानेवाले हैं; और यह निर्वासन निर्वासितोंके खर्चेसे ही किया जायेगा; इससे ट्रान्सवाल सरकारपर उनको भोजन तथा निवास देनेकी भी कोई जिम्मेदारी नहीं आयेगी। श्री मियाँ बखूबी कह सकते हैं कि यह निर्वासन घोर अपराधोंके लिए दिये हुए निर्वासन दण्डसे भी बुरा होगा।

लॉर्ड एलगिन जो हमारे साथ सहानुभूतिकी घोषणा कर चुके हैं और वाइसराय रह चुके हैं, यदि महामहिमको इस प्रकारके कानूनको स्वीकार करनेका परामर्श देते हैं तो उससे

१. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ३९२-९३।

हमको दुःख और आश्चर्य होगा। वे कई बार कह चुके हैं कि उनको एशियाई अधिनियम पसन्द नहीं है। अब ट्रान्सवाल सरकारसे निबटनेका सुनहरा मौका उनके हाथ लगा है। वे चाहें तो एशियाई अधिनियमको मंसूख करा सकते हैं। और पुनः पंजीयन करानेके सिद्धान्तको सुधरे हुए रूपमें प्रवासी अधिनियममें शामिल करा सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१–८–१९०७

१५५. केपके भारतीय[1]

केप उपनिवेशके प्रवासी अधिनियम और व्यापारिक परवाना अधिनियमके अमलके बारेमें केप टाउनके ब्रिटिश भारतीय संघने केपकी संसदके सामने जो तर्कसंगत निवेदनपत्र पेश किया है उसके लिए संघको बधाई दी जानी चाहिए। इस निवेदनपत्रमें जो मुद्दे उठाये गये हैं, उनको उठानेमें कोई जल्दी नहीं की गई है और जैसा कि निवेदनकर्त्ताओंने ठीक ही कहा है, उनकी प्रार्थनाको केपके अनेक प्रमुख राजनीतिज्ञोंने तर्कसंगत और न्यायोचित समझा है। मिसालके तौरपर जिन ब्रिटिश भारतीयोंको इस प्रायद्वीपको छोड़कर बाहर जानेका मौका पड़ता है उन्हें अस्थायी अनुमतिपत्र देकर बाहर जाने देना किसी भी सूरतमें न्यायोचित नहीं कहा जा सकता; क्योंकि उस अनुमतिपत्रकी मियादके भीतर न लौटनेपर उनका आवास-अधिकार छिन जाता है। इस प्रकार तो वे पाबन्दीके साथ छूटे हुए कैदी हो जाते हैं और उनकी व्यक्तिगत स्वतन्त्रतापर बिलकुल अनुचित और बेजा अंकुश लग जाता है। और पुराने भारतीय फेरीवालोंसे बिना किसी कारणके उनके परवाने छीन लेना भी न्यायोचित नहीं कहा जा सकता है। हमें विश्वास है कि ब्रिटिश भारतीयोंने जो निवेदनपत्र भेजा है उसपर केप सरकार गम्भीरतापूर्वक विचार करेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१–८–१९०७

१५६. लेडी स्मिथके व्यापारी[2]

लेडीस्मिथका व्यापार संघ फिरसे उन ब्रिटिश भारतीयोंका सुराग लगा रहा है जिनको लेडीस्मिथ निकायने अन्यायपूर्वक परवाने छीनकर क्लिप रिवरके जिलेमें व्यापार करनेसे वंचित कर दिया है और जिनमें इतनी मजाल है कि वे बिना परवानोंके अपने जीविकोपार्जनके लिए अपना व्यापार जारी रख रहे हैं। जब हम कहते हैं कि लेडीस्मिथका व्यापारसंघ ही इन गरीब भारतीयोंके पीछे पड़ा हुआ है तब उसका इतना ही मतलब होता है कि यूरोपीय व्यापारी, जो अपने प्रतिस्पर्धियोंसे ईर्ष्या करते हैं, उन्हें इस जिलेसे निकाल बाहर करनेकी कोशिश कर रहे हैं। ऐसा लगता है कि सरकारकी तरफसे भी कुछ ऐसा समझौता हो गया है कि वह

468

१. देखिए "केप टाउनके भारतीय", पृष्ठ २०६।

२. "लेडी स्मिथके परवाने", पृष्ठ २०४-५ भी देखिए।

निर्दोष लोगोंपर मुकदमा चलानेकी मंजूरी न देकर लेडीस्मिथ निकायके आचरणपर अपनी नापसन्दगी जाहिर करेगी। लेकिन यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि संघने कार्यवाही करनेके लिए सरकारपर दबाव डाला है। क्योंकि ऐसा मालूम पड़ता है कि महान्यायवादीने, अगर ये लोग बिना परवानाके व्यापार करना जारी रखें तो, उनके खिलाफ कार्यवाही करनेके लिए सरकारी वकीलको अधिकार दे दिया है। नेटालके व्यापारी परवाना अधिनियमका[1] अमल इस तरहका है कि साम्राज्य-सरकारने उससे राहत देनेमें एक तरहसे अपनी असमर्थता स्वीकार कर ली है। भारत सरकार, जो निश्चय ही सशक्तिमान है, अपने इस एकमात्र और कारगर उपायको, कि यदि भारतकी स्वतन्त्र प्रजाको न्यूनतम न्याय भी नहीं मिलता है तो गिरमिटिया भारतीय प्रवासको रोक दिया जाये, इस्तेमाल नहीं करती।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९०७

१५७. दादाभाई जयन्ती

भारतके पितामह दादाभाई नौरोजीकी जयन्ती सितम्बर ४ को आ रही है। उनके इस पृथ्वीपर रहनेके दिनोंका अन्त निकट आता जा रहा है। ज्यों-ज्यों दिन बीत रहे हैं, इन पितामहका तेज बढ़ता जा रहा है। लन्दन उनके लिए अरण्य है। उस अरण्यमें देशके हितार्थ वे फकीरी लेकर रहते हैं। जिन्होंने विलायतमें उनका दफ्तर देखा है वे जानते हैं उनके दफ्तर और मढीमें कुछ भी अन्तर नहीं। उसमें दो व्यक्ति मुश्किलसे बैठ सकते हैं। उसमें बैठकर करोड़ों भारतीयोंके दुःखोंका बोझ अपने सिर लिये हुए हैं। इतनी अधिक आयु हो जानेपर भी उनमें एक नौजवान भारतीयसे अधिक काम करनेकी ताकत है। उनकी दीर्घायुकी कामना करते हुए हम परमेश्वरसे प्रार्थना करते हैं कि वह हमें व हमारे इस पत्रके साथ सम्बन्ध रखनेवाले सब लोगोंको उनके निर्मल हृदयके समान हृदय दे। अपने पाठकोंसे हमारा अनुरोध है कि इन सच्चे पितामहका सच्चा स्मरण इसीमें है कि हम उनके देश-प्रेमका अनुकरण करें। ट्रान्सवालके भारतीयोंको याद रखना चाहिए कि अमर दादाभाईने हमारे लिए जो टेक रखी है वैसी ही टेक हम भी रखें। हम मानते हैं कि उस दिन सभी भारतीय संघ सभा करके बधाईके तार भेजेंगे। हम प्रत्येक जयन्तीपर दादाभाईका चित्र प्रकाशित करना चाहते हैं। इसलिए अगले सप्ताह, अर्थात् जयन्ती बीतनेके बाद, पहली बार हम चित्र छापेंगे। आशा है सभी लोग उसे मढ़वा कर रखेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९०७

१. देखिए खण्ड २, पृष्ठ ३८५-६।

१५८. बहुत सावधान रहनेकी आवश्यकता

इस समय जब कि बहुत लोगोंकी नजर ट्रान्सवालके भारतीयोंकी ओर लगी हुई है, भारतीय समाजकी दुर्बलताकी सूचना मिली है। यह समय समाजके अन्दर छिपी हुई गन्दगीको प्रकट करनेका है, उसे दबानेका नहीं। हम मानते हैं कि दबानेवाला देशद्रोही होगा।

भारतीय समाजमें मुख्यतः सूरती, मेमन, कोंकणी, मुसलमान, पारसी, तथा हिन्दू हैं। हमने जैसा सुना है उसके अनुसार मेमन लोगों तथा कोंकणियोंका बहुत बड़ा हिस्सा कानूनकी इस लड़ाईमें पस्त-हिम्मत हो गया है। कहा जाता है कि वे अब कानून स्वीकार करनेके लिए उद्यत हैं। किन्तु स्वीकार करनेके पहले वे कानूनमें सरकारसे कुछ संशोधन करवाना चाहते हैं। उन संशोधनोंका मसिवदा हमने देखा है। उसको छापनेमें भी हमें शर्म महसूस होती है। उस मसविदेको हम अपने हाथों अपनी गुलामी माँगनेका चिट्ठा मानते हैं। उसमें जो संशोधन माँगे गये हैं, वे संशोधन हैं ही नहीं। माँगकी भाषा इतनी लचर है कि उसका अर्थ यही होता है कि भारतीय समाजके बहुतेरे अग्रणी नये कानूनके खिलाफ थे ही नहीं। अँगुलियाँ लगाना वे स्वीकार करते हैं। तुर्की मुसलमानोंका अपमान हो उसमें उन्हे हर्ज नहीं है। माँग केवल इतनी की गई है कि अच्छे भारतीयोंकी जाँचके लिए खास व्यक्ति नियुक्त किये जायें और वे उनकी अँगुलियाँ खानगी तौरसे लगवायें। पुराने परवानेवाले यदि हस्ताक्षर कर सकें तो उनसे अँगुलियाँ न लगवाई जायें। मुद्दती अनुमतिपत्र जैसे आज दिये जाते हैं वैसे दिये जायें और बच्चोंकी अँगुलियोंकी निशानी १६ वर्षकी उम्र हो जानेके बाद ली जाये।

इन माँगोंमें एक भी माँग ऐसी नहीं है कि जिसके लिए कानूनकी बात तो दूर रही, धाराओंमें भी कहीं संशोधन करना पड़े। ऐसे पत्रोंके जवाब में स्मट्स साहब कह सकते हैं कि "बहुत अच्छा"। अर्थात् जो उस पत्रसे खुश हों वे तुरन्त गुलामीका पट्टा रूपी पंजीयन पत्र ले लें। मसविदेमें यह भी कहा गया है कि कानूनके सामने भारतीय तो मोमके समान हैं। हम मानते हैं कि ईश्वर या खुदाके अस्तित्वपर विश्वास करनेवालेके मुँहसे यह बात निकल ही नहीं सकती। मनुष्य केवल खुदाके सामने ही मोम है।

हमें यह कहते खुशी होती है कि उपर्युक्त पत्र श्री स्मट्सके नाम नहीं लिखा गया। न हम यही कहना चाहते हैं कि उस पत्रको मेमन, कोंकणी या दूसरे किन्हीं भारतीयोंने मंजूर किया है। इसे सार्वजनिक रूपसे प्रकट करनेका मतलब इतना ही है कि यह पौधा उगनेके साथ ही जला दिया गया है। फिर भी यह भरोसा नहीं कि अब और वैसा प्रयत्न नहीं किया जायेगा। डरा हुआ मनुष्य हवाको काटनेको तैयार हो जाता है। टेकड़ीसे लुढ़कनेपर डरके मारे कौन तिनकेकी ओर नहीं झपटता? ट्रान्सवालमें कुछ लोग उसी तरहके तिनके दिखाई दे रहे हैं। ऐसे भारतीयोंको हम सलाह देते हैं कि वे कानूनकी खींचतान करनेके बजाय तुरन्त उसकी शरण हो जायें और पंजीयन करवा लें। उसमें उनका दोष अधिक नहीं माना जायेगा। किन्तु यदि वे ऐसे पत्र लिखवायेंगे जिनसे समाजको बट्टा लगता है, तो माना जायेगा कि उन्होंने श्री हाजी इब्राहीम और खमीसाकी अपेक्षा ज्यादा नुकसान पहुँचाया है, और पहुँचायेंगे भी। श्री हाजी इब्राहीम तथा उनके साथियोंने डरके मारे तथा सह न सकनेके कारण काला मुँह करवाया था। किन्तु जो उपर्युक्त पत्रके समान पत्र लिखवायेंगे वे अपना मुँह काला करवानेके साथ-साथ

समाजको भी कलंकित करेंगे। वे यह सिद्ध कर देंगे कि भारतीय समाजकी लड़ाई कानूनके विरुद्ध नहीं, बल्कि नगण्य संशोधनोंके लिए थी। उपर्युक्त पत्रमें यह भी बताया गया है कि कुछ शरारती लोगोंको छोड़कर शेष भारतीय पंजीयन करवानेको छटपटा रहे हैं। यह कितना हास्यास्पद है।

इसके अलावा भारतीयोंकी ओरसे उपर्युक्त पत्र यदि जनरल स्मट्सके पास भेजा गया तो उससे प्रवासी कानूनके सम्बन्धमें जो अर्जी दी गई है उसे भी धक्का लगेगा, दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिकी लड़ाई बेकार हो जायेगी, और भारतीय कौमको दिन दहाड़े लूट लिया जायेगा। इसलिए हमारी खास तौरसे प्रार्थना है कि जिसे या जिस कौमको पंजीयन करवाना हो वह अथवा वह कौम खुशीसे कराये किन्तु अपने साथ दूसरेको न घसीटे। किन्तु कुछ मेमन, या कोंकणी या थोड़े बहुत हिन्दू या सूरती या पारसी नाक कटाते हैं तो उसके लिए सारे मेमन, या कोंकणी या हिन्दू क्यों नाक कटायेंगे? क्या मेमनोंमें कोई ऐसा शूर नहीं जो हिम्मतसे कह सके कि "और मेमन जायें तो जायें, मैं तो नहीं जाऊँगा?" कोंकणी भी ऐसा ही क्यों नहीं कह सकते? क्या भारतीय बुरे काममें दूसरोंकी होड़ करेंगे? किन्तु भेड़के समान हम अब भी एक-एक करके खाईमें गिरनेको तैयार हों तो निश्चित मानिये कि गुलामीका कानून हमारे सिरपर मढ़ा हुआ ही है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९०७

१५९. लेडीस्मिथके परवाने

लेडीस्मिथके जिन भारतीयोंको परवाने नहीं मिले, उनपर फिर बादल छाये हैं। वे लोग बिना परवानेके व्यापार कर रहे हैं, इसलिए व्यापार संघने उनपर मुकदमा चलानेकी सिफारिश की है और श्री लैविस्टरने उत्तर दिया है कि वे लोग अगर अब भी रोजगार करते रहेंगे तो उनपर मुकदमा चलाया जायेगा। कांग्रेसके नेताओंको इस प्रकारका आश्वासन दिया गया था कि जो लोग बिना परवानेके व्यापार करेंगे उन्हें रोका नहीं जायेगा। यह वचन न्याय-बुद्धिसे दिया गया था। अब गोरे जोर लगा रहे हैं इसलिए न्यायबुद्धि दब गई है और सरकार जोरके सामने झुककर दूकानें बन्द करना चाहती है। भारतीयोंपर कैसी मुसीबतें आनेवाली हैं उसका हूबहू दृश्य इसमें दिखाई दे रहा है। इन बादलोंको हटानेके तीन रास्ते हैं।

(१) शाही न्याय परिषद-(प्रीवी कौंसिल) में अपील की जाये।

(२) अगर वह अपील न की जा सके तो कांग्रेसके मुखिया बड़ी सरकारसे मुलाकात करें। यह उपाय पहले उपायके साथ-साथ किया जा सकता है।

(३) हिम्मतके साथ दूकानें खुली रखी जायें। मुकदमा चलनेपर जुर्माना न देकर माल कुर्क करने दिया जाये।

पहला उपाय तभी किया जा सकता है जब कांग्रेसके पास १,००० पौंड जमा हो जायें। दूसरा उपया तो करना ही चाहिए। उससे हमेशाके लिए समस्या सुलझ जायेगी, सो बात नहीं। तीसरा उपाय सबसे सरल और अच्छा है। किन्तु उसे करना मर्दोंका काम है। वह किसीके सिखाने-पढ़ानेसे नहीं आता। अपनेमें जोश चाहिए। वह हो तो सब कुछ हो सकता है। इस

कानूनमें जेल नहीं है। केवल जुर्माना किया जा सकता है और जुर्माना न देनेपर वह माल कुर्क करके वसूल किया जा सकता है। हमारी विशेष सलाह है कि भारतीय लोग यह मार्ग स्वीकार करें। डॉक्टर रदरफोर्ड जैसे यह करते हैं और हम भी यही कर सकते हैं। किन्तु ऐसे काममें दूसरेकी दी हुई हिम्मत बेकार है। मनके अन्दरसे प्रेरणा होनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९०७

१६०. "हजरत मुहम्मद पैगम्बरका जीवन-वृत्तान्त" क्यों बन्द हुआ?

इस प्रश्नका उत्तर देते हुए हमें खेद होता है। भारतीय समाज और खासकर मुस्लिम भाइयोंकी सेवा करनेके लिए अत्यन्त शुद्ध बुद्धि एवं प्रेमसे हमने इस अनुवादका प्रकाशन शुरू किया था। गोरों द्वारा लिखे गये जीवन-चरित्रोंमें वॉशिंगटन इरविंग द्वारा लिखित यह जीवन-चरित्र बहुत ही अच्छा माना जाता है। उन्होंने कुल मिलाकर मुहम्मद साहबकी खूबियाँ बताई हैं। मुसलमान धर्मकी अच्छी बातें अच्छी तरह पेश की हैं। ऐसा हो या न हो, हम मानते हैं कि गोरे मुसलमान धर्मके बारेमें अथवा उसकी स्थापना करनेवालेके बारेमें क्या लिखते हैं इसे जानना प्रत्येक मुसलमानका कर्तव्य है। इस अनुवादको प्रकाशित करनेमें हमारा उद्देश्य अपने उसी कर्तव्यका निर्वाह करना था। किन्तु पाँचवें प्रकरणमें दिये गये मुहम्मद साहबकी शादीके विवरणसे हमारे कुछ पाठकोंको ठेस लगी, और उन्होंने हमें सूचना दी कि हमें उस वृत्तान्तका प्रकाशन बन्द कर देना चाहिए। हमें यथासम्भव यही सिद्ध कर दिखाना है कि यह अखबार समाजका है। हमें किसी भी प्रकार, बिना जरूरतके किसीको चोट नहीं पहुँचाना है। इस-लिए हमने 'जीवनचरित्र'[1] देना बन्द कर दिया है और उसके लिए हमें खेद है, क्योंकि एक तो उसके अनुवादमें बहुत मेहनतकी गई थी, और दूसरे अब हमारे पाठकोंको इरविंगकी सुन्दर पुस्तकको समझनेका अवसर नहीं मिलेगा। इसके अलावा, ऐसी खबरें भी पहुँच रही हैं कि बहुत लोग इसलिए नाराज हो गये हैं कि हमने जीवन चरित्र देना बन्द कर दिया है। ऐसे लोगोंसे हम इतना ही कह सकते हैं कि यदि उन्हें उसका अनुवाद चाहिए तो हमें लिख भेजें।

१. गांधीजीके सेक्रेटरी महादेव देसाईने अपनी डायरीमें जुलाई २९, १९३२ को लिखा है:

बापूने. . .अपने दक्षिण आफ्रिकाके अनुभव बताये। उन्होंने वॉशिंगटन इरविंगकी पुस्तक **लाइफ़ ऑफ़ द प्रॉफ़ेट** (**पैगम्बरका जीवन-वृत्तान्त**) पढ़ी थी और **इंडियन ओपिनियन**के मुसलमान पाठकोंके लिए उसका सरल अनुवाद भी प्रकाशित करना शुरू किया था। लेकिन मुश्किलसे एकाध अध्याय ही छापा गया था कि मुसलमानोंने इस प्रकाशनका जोरोंसे विरोध करना शुरू कर दिया। इन अध्यायोंमें सिर्फ मूर्तिपूजा, अन्धविश्वास और उन बुरे रीतिरिवाजोंके विषयमें लिखा गया था, जो पैगम्बरके जन्मसे पूर्व अरबमें प्रचलित थे। परन्तु मुसलमान इसको भी सहन नहीं कर सके। बापूने यह समझानेका प्रयत्न किया कि ये अध्याय तो उन भारी बुराइयोंकी प्रस्तावना मात्रके हैं, जिनसे लड़ने और जिन्हें दूर करनेके लिए पैगम्बरने जन्म लिया था। पर किसीने न सुनी। मुसलमानोंका कहना था "हमें पैगम्बरका ऐसा कोई जीवन-वृत्तान्त नहीं चाहिए।" बादके जो अध्याय लिखे जा चुके थे और कंपोज़ भी हो चुके थे, उनका प्रकाशन रोक देना पड़ा। (**महादेव देसाईकी डायरी** (अंग्रेजी संस्करण), नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद १९५३, देखिए खण्ड १ पृष्ठ २५९)। "पैगम्बर मुहम्मद और उनके खलीफा", पृष्ठ ५४-५५ भी देखिए।

यदि बहुत पाठकोंकी इच्छा हुई तो जब हमारे छापाखानेको सुविधा होगी तब हम स्वतन्त्र पुस्तक प्रकाशित करके उन प्रेमियोंकी आशा पूर्ण करनेका प्रयत्न करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९०७

१६१. केप टाउनके भारतीय

ब्रिटिश भारतीय लीगकी अर्जी हम गत सप्ताह दे चुके हैं। उसमें बहुतसी महत्वपूर्ण माँगोंका समावेश हो जाता है। हम लीगको बधाई देते हैं। हमें आशा है कि लीग इस कामके पीछे यथासम्भव शक्ति लगाकर परिणाम अच्छा लायेगी। केपके भारतीयोंको अधिकार प्राप्त करने और उनको सँभालनेके जितने अवसर हैं उतने औरोंके पास नहीं हैं। हमें यह भी आशा है कि मेफीकिंग तथा ईस्ट लन्दनके *भारतीय लीग* और संघसे मिलजुलकर काम करेंगे और सब मिलकर एक बड़ी निधि इकट्ठा कर लेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९०७

१६२. बहादुरी किसे कहा जाये?

समाचारपत्रोंमें खबर है कि मूर लोगोंने, जो मुसलमान हैं, कासाब्लेंकामें बहुत ही बहादुरी दिखाई है।

> अपने लड़ाईके नारे लगाते हुए मूर भालेवाले फ्रेंच गोली और तोपवालोंपर छलांगें भरकर चढ़ बैठे। उनपर छर्रों, गोलियों और बमोंके टुकड़ोंकी वर्षा हो रही थी, किन्तु उन्होंने परवाह नहीं की। बहुत लोग घायल होकर गिर गये; फिर भी जितने बचे वे आगे बढ़ते गये और तोपोंके मुँह तक पहुँच गये। उसके बाद लौटे।

पाठक पूछेंगे कि तोपके मुँहसे वापस कैसे लौटा जा सकता था? बहादुरीकी यही खूबी है।

> उन्होंने इतना जोश दिखाया कि फ्रेंच तोपचियोंको उन बहादुर लोगोंपर तोप चलानेकी हिम्मत नहीं हुई। उन्होंने उनका स्वागत किया और 'हुर्रे' का नारा लगाकर शाबाशी देनेके लिए तालियाँ बजाईं। बादमें बहादुर सिपाही सलाम करके वापस लौटे।

ऐसे बहादुरोंका अनुकरण सारी दुनिया कर सकती है। उनके गीत सब गा सकते हैं। किन्तु हमारे मुसलमान पाठकोंको इससे खास तौरसे सबक लेना चाहिए। यदि इन मूर लोगोंकी, जो जंगली माने जाते हैं, बहादुरीका सौवाँ हिस्सा भी हम ट्रान्सवालके भारतीयोंमें होगा तो हम निश्चय जीतेंगे। इसमें मरना नहीं है, न मारना ही है। धनका त्याग करना है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९०७

१६३. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

नाइलस्ट्रूम तथा रस्टनबर्ग

इन दोनों जगहोंसे पंजीयन कार्यालय जैसा गया वैसा ही लौटा है। नाइलस्ट्रूमवालोंने तो एक दिन दूकानें भी बन्द रखीं। एक भी व्यक्तिने पंजीयन नहीं करवाया। दोनों स्थानोंको ब्रिटिश भारतीय संघ और हमीदिया इस्लामिया अंजुमनने बधाईके तार भेजे थे। यह सब बहुत ही शुभ मालूम हो रहा है। किन्तु फिर भी इससे हमें फूलना नहीं है। पंजीयन कार्यालयका बहिष्कार करना आसान हो गया है। लोगोंको चाहे जहाँ पंजीयन करवानेका अवसर दिया जा रहा है; इसलिए बहिष्कारमें विशेष जोखिम उठानेकी बात नहीं रही। किन्तु अन्तिम मुकाम और अन्तिम तारीखके आनेपर दौड़ मचती है या नहीं यह देखना है। आजसे ही चर्चा चल रही है कि तब लोग हिम्मत रखेंगे या नहीं, और जो लोग हिम्मत रखेंगे वे जेलका समय आनेपर भी दृढ़ रहेंगे या नहीं।

रेलवेकी तकलीफ

श्री अब्दुल गनी तथा श्री गुलाम मुहम्मदको प्रिटोरिया जानेवाली शामकी ४-४० की गाड़ीमें जोहानिसबर्गसे जाने नहीं दिया गया था। इस सम्बन्धमें संघने जो कार्रवाई की थी वह समाप्त हो गई। मुख्य प्रबन्धकका कहना है कि उन्हें खेद है किन्तु गार्डके डिब्बेमें भी उनके लिए जगह नहीं थी इसलिए उन्हें जाने नहीं दिया गया। जनरल स्मट्सका कहना है कि ये सारी अड़चनें भारतीयोंके भलेके लिए हैं। यह लड़ाई अब आगे नहीं चल सकती; क्योंकि भारतीय कौम इस समय कसौटीपर चढ़ी हुई है। यदि कसनेपर वह सोना साबित हुई तो रेलवे आदिकी तकलीफें अपने-आप समाप्त हो जायेंगी। और यदि वह राँगा निकली, तो फिर रेलके टिकट मिले तब क्या और न मिले तब क्या?

अलीकी विदाई

श्री हाजी वजीर अली शनिवारको परिवार सहित केपकी ओर विदा हुए हैं। उन्हें पहुँचानेके लिए श्री अब्दुल गनी, श्री शहाबुद्दीन हसन, श्री अमीरुद्दीन, श्री गुलाम मुहम्मद, श्री मुहम्मद शहाबुद्दीन, श्री नैपमन, श्री पोलक, श्री गांधी आदि उपस्थित थे। श्री अली तथा श्रीमती अली दोनोंकी आँखोंमें पानी आ गया था। श्री अलीके विदाईके शब्द स्मरण रखने योग्य हैं। उन्होंने कहा — "मुझसे भूल हुई हो या न हुई हो, उसे दर-गुजर कर दें। मनुष्य मात्र भूल करता आया है। किन्तु जितना मैं करता हूँ उतना यदि दूसरे भारतीय भाई करें तो पर्याप्त माना जायेगा।" ये शब्द दरअसल याद रखने लायक हैं। हम श्री अलीकी गलतीको भूल जायें। उन्होंने कानूनको न मानकर ट्रान्सवाल छोड़ दिया, यह शाबाशी देने योग्य है। यदि इतना करनेके लिए भी बहुत भारतीय खड़े हो जायेंगे तो अन्तमें हमारी जीत होगी।

दिवालियेपनके दुर्गेकी सजा

इस्माइल ईसा नामक एक दिवालिया कर्जदारपर फरेबका इल्जाम था। उसका मुकदमा श्री डी'विलियर्सकी अदालतमें प्रिटोरियामें चला था। उसपर इल्जाम था कि दिवाला निकलनेवाला है इस बातको जानते हुए भी उसने अर्नेस्ट एवर्टकी पेढ़ीसे तम्बाकू खरीदी थी। इसपर उसे तीन माहकी सजा हुई है। यह मुकदमा भारतीयोंके लिए लज्जाजनक है। हममें इतनी टेक रहनी चाहिए कि हमारे यहाँ एक भी दिवालिया न हो। किन्तु इसमें तो दिवालियापनके साथ ही जालसाजी भी दिखाई दी। ऐसे कामोंसे भारतीयोंको बिलकुल दूर रहना चाहिए।

रस्टनबर्गका पत्र

रस्टनबर्गके समाजने जो विजय प्राप्तकी, उसके बारेमें संघके नाम एक पत्र आया है। उसमें लिखा है कि कैप्टन चैमने भारतीयोंको समझाने गये थे। किन्तु सबने दृढ़तापूर्वक यही जवाब दिया कि पंजीयन नहीं करवाना है। श्री चैमने भी गये थे, किन्तु उन्हें भी यही जवाब मिला। वहाँ श्री बापू देसाई, श्री रहीम भाई, श्री वखारिया, श्री मढ़ी और श्री एम० ई० काजी स्वयंसेवक थे। दूकानें आधे दिन बन्द रखी गई थीं। श्री डी'सोजा नामके पुर्तगीज भारतीयके पास श्री कोड़ी गये थे। किन्तु पुर्तगीज भाईने पंजीयन करवानेसे साफ इनकार कर दिया।

फोक्सरस्ट तथा वॉकरस्ट्रूमके पत्र

फोक्सरस्ट तथा वॉकरस्ट्रूमसे पत्र आये हैं। उनमें वहाँके नेताओंने लिखा है कि एक भी भारतीय अनुमतिपत्र नहीं लेगा। सभीमें बहुत जोश है।

विशेष अपमान

जोहानिसबर्ग नगरपालिकामें अब यह हलचल हो रही है कि भारतीय, चीनी या दूसरे काले लोगोंको पहले दर्जेकी घोड़ा-गाड़ीमें न बैठने दिया जाये। संघने इस सूचनाके विरोधमें पत्र[1] लिखा है। किन्तु इस समय ऐसा होनेकी कम सम्भावना है। नगाड़ा केवल पंजीयन कानूनका बज रहा है। उसमेंसे अन्तमें जो आवाज निकलेगी उसीपर सब दारोमदार है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९०७

१. देखिए "पत्र: जोहानिसबर्ग नगरपालिकाको", पृष्ठ १९९।

१६४. पत्र : जोहानिसबर्ग नगरपालिकाको

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर १, १९०७ के पूर्व][1]

[टाउन क्लार्क
जोहानिसबर्ग
महोदय,]

पहले दर्जेकी किरायेकी घोड़ा-गाड़ियोंसे सम्बन्धित यातायात उपनियमोंमें प्रस्तावित संशोधनके बारेमें अपने इसी मासकी २८ तारीखके पत्रके[2] सिलसिलेमें मुझे मालूम हुआ है कि परिषद विशिष्ट व्यवसायोंके लोगोंको, भले ही वे रंगदार व्यक्ति हों, पहले दर्जेकी घोड़ा-गाड़ियोंके उपयोग-सम्बन्धी अयोग्यतासे मुक्त रखना चाहती है।

मेरा संघ सम्मानपूर्वक निवेदन करता है कि इस प्रकारकी छूट सराही जानेके बजाय जलेपर नमक ही छिड़केगी, क्योंकि यदि किसी व्यक्तिके वस्त्रों और सामान्य व्यवहारको छोड़ दें तो यह समझना कठिन है कि गाड़ीवान विशिष्ट व्यवसायों और दूसरे लोगोंमें कैसे अन्तर करेगा; और मेरे संघको यह निश्चित प्रतीत होता है कि कोई आत्मसम्मानी व्यक्ति ऐसे अधिकारका लाभ न उठायेगा जिसका उपयोग उसके उतने ही सम्मानित देशवासी नहीं कर सकते। इसलिए मेरा संघ यह आशा करता है कि नगर-परिषद कृपाकरके मेरे पत्रोंमें उल्लिखित संशोधनके सम्बन्धमें आगे कार्रवाई न करेगी।

आपका, आदि,
ईसप इस्माइल मियाँ
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ७-९-१९०७

१. 'इसी मासकी २८ तारीखके' हवालेसे प्रकट होता है कि यह पत्र अगस्तमें लिखा गया था।
२. देखिए "पत्र: जोहानिसबर्ग नगरपालिकाको", पृष्ठ १९९।

१६५. तार:[1] दादाभाई नौरोजीको

[डर्बन
सितम्बर ४, १९०७]

नेटाल भारतीय कांग्रेसकी भारतके राष्ट्र-पितामहको शुभ कामनाएँ। यह दिन बार बार आये। ईश्वर भारतीय प्रवीरको दीर्घायु करें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–९–१९०७

१६६. भाषण: डर्बनमें[2]

[डर्बन
सितम्बर ४, १९०७]

. . . गांधीजीने सुझाया कि सारे दक्षिण आफ्रिका और ट्रान्सवालसे बाहरके भारतीय चन्दा जमा करें और ऐसी किसी भी आकस्मिक आवश्यकताके लिए, जो ट्रान्सवालमें उठ खड़ी हो, कोष तैयार करें तो यह बहुत बड़ी सहायता होगी।

. . . वक्ताने भारतीय समाजके स्वेच्छया पंजीयन करानेके प्रस्तावका और जनरल स्मट्सको भेजे अपने पत्रका भी अर्थ समझाया।[3]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–९–१९०७

१. यह दादाभाई नौरोजीके ८३ वें जन्मदिनपर भेजा गया था। देखिए "भाषण: कांग्रेसकी सभामें", पृष्ठ २११–१३।

२. गांधीजीकी डर्बन यात्राके अवसरपर नेटाल भारतीय कांग्रेसकी एक विशेष बैठक बुलाई गई। अध्यक्ष श्री दाउद मुहम्मदकी विनतीपर वे ट्रान्सवाल-संघर्षकी तत्कालीन स्थितिके बारेमें बोले। उक्त बैठककी रिपोर्टके ये कुछ अंश हैं।

३. विस्तृत विवरणके लिए गुजरातीसे अनूदित अगला शीर्षक देखिए।

१६७. भाषण: कांग्रेसकी सभामें[1]

डर्बन
सितम्बर ४, १९०७

हमने जो लड़ाई शुरू की है वह बहुत ही भारी है, इसलिए उसका परिणाम भी वैसा ही होगा। यदि जीत गये तो भारतीयोंकी स्थिति ट्रान्सवालमें ही क्या, नेटाल, केप, और भारतमें भी बहुत-कुछ सुधर सकेगी। और यदि हमने मुँह फेरा तो उसका परिणाम भी उतना ही खराब होगा। नेटालमें श्री हैगर जैसा व्यक्ति संसदमें ट्रान्सवालके पंजीयन कानून जैसा कानून बनानेकी बात उठाये, केपमें फेरीवाले तथा दूकानदारोंको परवानोंकी तकलीफ हो, डेलागोआ-बेमें नये-नये कानून व प्रतिबन्ध लगाये जायें, रोडेशियामें भी भारतीयोंके लिए विशेष कानून बनाये जायें, और जर्मन [पूर्व] आफ्रिकामें भी भारतीयोंकी प्रतिष्ठा गिरानेका विचार हो — यह सब, यदि हम अपना पानी बतानेको तैयार हों, तो रुक सकता है। ट्रान्सवालमें जो करना उचित है, वह हो रहा है। लन्दनकी समिति भी तेजीसे काम कर रही है। नेटालने भी कुछ मदद दी है। ३१ जुलाईको प्रिटोरियामें जो तार आये और उसके बाद हर प्रसंगपर दूसरे गाँवोंमें मण्डलों और व्यापारियोंको अलग-अलग तार भेजे गये, उनका प्रभाव बहुत अच्छा हुआ है। उसके लिए मैं और ट्रान्सवालके भारतीय आपका आभार मानते हैं। मुझे मालूम है कि यहाँसे समितिने १०० पौंड विलायत भेजे हैं। यह ठीक किया है। लेकिन नेटालको इसके बाद भी अभी बहुत करना है। यहाँसे अभी बहुत-सा चन्दा इकट्ठा किया जा सकता है। यहाँ मैं यह नहीं कहता कि इसी तरह दूसरे गाँवोंसे धन एकत्र करके ट्रान्सवाल भेज दें, बल्कि मेरा कहना है कि उसे एकत्र करके जमा रखें, जिससे जरूरतके समय उसका उपयोग किया जा सके। ट्रान्सवालके लोग भी चन्दा एकत्र करके अपना हिस्सा देते हैं। ब्रिटिश भारतीय संघ इस लड़ाईमें लगभग १५०० पौंड खर्च कर चुका है, और अब भी बहुत खर्च करना है। उसके पास आज केवल १०० पौंडके करीब ही हैं। ऐसी गरीब स्थितिमें लोग मुझसे बार-बार पूछा करते हैं कि संघ जेल जानेवालोंके बाल-बच्चोंका भरण-पोषण किस प्रकार कर सकेगा? इस सबका मेरे पास एक ही उत्तर है, और वह है कि हम सब खुदापर भरोसा रखनेवाले हैं; फिर यह सवाल क्यों उठायेंगे कि अपने पत्नी-बच्चोंका क्या होगा। इतनेपर भी हमें अपने कर्तव्यका पालन करना चाहिए। घर-घर और गाँव-गाँव जाकर चन्दा इकट्ठा करना चाहिए। लोगोंको स्थितिसे परिचित कराना चाहिए। इससे वे खुशी-खुशी चन्दा देंगे, और उन्हें इसकी जानकारी भी हो जायेगी कि नये कानूनसे हमारी कितनी अधम स्थिति होनेवाली है। मतलब यह कि हमें कुछ भी उठा नहीं रखना है। तभी हम खुदापर पूरा भरोसा रख सकते हैं। हमें जितना भी करना है वह करना चाहिए और उसीके साथ हर प्रसंगपर खुदाकी इबादत करके अन्तः-करणसे माँगना चाहिए कि "हे खुदा! हे ईश्वर! हमारी न्यायकी अर्जीकी यदि यहाँ कहीं सुनवाई नहीं होती तो हमें तेरा तो पूरा भरोसा है। तेरे दरबारमें किसी भी काममें जरा

१. यह 'और स्पष्टीकरण' शीर्षकसे छापा गया था।

भी अन्याय सहन नहीं होगा।" पिछले रविवारको हमीदिया अंजुमन [की एक बैठक] में मौलवी मुहम्मद मुख्त्यार साहबने भी यही कहा था कि हमें तो अपना शिष्टमण्डल अब खुदाके दरबारमें ही भेजना है। पिछले रविवारको जर्मिस्टनमें जन्माष्टमीके उत्सवमें यही विचार सारे हिन्दुओंने व्यक्त किया था। इस तरहकी प्रार्थना सब कर सकते हैं।

एक प्रश्नके उत्तरमें श्री गांधीने बताया:

लेडीस्मिथके सम्बन्धमें हमें अभी जो मौका मिला है उसके लिए 'ओपिनियन' के पिछले अंकमें तीन मार्ग सुझाये गये हैं[1]। उनमेंसे एक अपनाया जाना चाहिए। जिस मुकदमेकी अपील हम एक दफा विलायत ले गये थे, उसमें और इसमें अन्तर है। इस मामलेमें हम निकायके समक्ष फरियाद कर सकते हैं और यदि वहाँ सुनवाई न हो तो सम्राट्की न्याय परिषदमें अपील कर सकते हैं। लेकिन उसके लिए धनकी पूरी आवश्यकता है। हिम्मत रखकर दूकानें खोल दी जायें इसे मैं ज्यादा अच्छा समझता हूँ। लेकिन लड़ाई शुरू करनेके बाद उसे आखिर तक निभाना चाहिए। दूकानदार जुर्माना न दें और अपने मालका बार-बार नीलाम होने दें। जिन व्यापारियोंको इस वर्ष परवाने मिल गये हैं उन्हें सरकारसे अर्जी करनी चाहिए कि हमारे भाइयोंपर इस तरह अन्याय होता है तो हम भी अगले वर्ष बिना परवानेके दूकान खुली रखेंगे। यदि इस तरह हिम्मत और दृढ़ताके साथ हम सम्पत्तिका महान बलिदान करेंगे तो निश्चित ही जीतेंगे और तभी जो पैसे कमाये हैं और जो कमायेंगे उसकी गिनती होगी, नहीं तो कुत्तेकी तरह जीयेंगे।

बन्दरगाहपर प्रवास कार्यालयमें गवाहके अँगूठेके निशान लिये जाते हैं। यह कानूनके विरुद्ध है। प्रवास अधिकारी अँगूठेके निशान ले सकता है, यह कानूनमें है ही नहीं। इसलिए इस विषयमें यदि धीरज और दृढ़तासे लड़ाई की गई तो यह प्रथा मिट जायेगी। यह प्रथा अभी शुरू हो रही है। इसके अंकुरको फूटते ही जला देनेकी जरूरत है।

ट्रान्सवालमें कुछ लोग समझौता करके पंजीकृत होना चाहते हैं, इस सम्बन्धमें पूछे जानेपर श्री गांधीने बताया:

प्रिटोरियामें कुछ मेमन सरकारसे समझौता करके पंजीकृत होना चाहते हैं। इस समझौतेमें जरा भी लाभ नहीं है, बल्कि नुकसान है। हमारी लड़ाईके सच्चे स्वरूपको जिन्होंने समझ लिया है उन्हें ऐसे समझौतेसे संतोष नहीं होगा। संघने इस समझौतेके सम्बन्धमें जो पत्र भेजा है वही ठीक है। जिन्हें नाममात्रके समझौतेसे सन्तोष होता हो वे समझौता करनेके बजाय अभी ही पंजीयनकी अर्जी दें तो उससे समाजकी लड़ाई लूली नहीं होगी।

नगरपालिका मताधिकारके कानूनको लॉर्ड एलगिनने नामंजूर कर दिया है। यह खबर उसी दिनके अखबारमें प्रकाशित हुई थी। इसको समझाते हुए श्री गांधीने कहा:

इस जीतका यश लन्दनकी समितिको है। यह कानून यहाँसे बहुत ही पहले सम्राट्की स्वीकृतिके हेतु विलायत पहुँच गया था। वहाँ अबतक विचारार्थ पड़ा रहा। इसलिए कभी उसके रद होनेकी सम्भावना की जा सकती थी। लेकिन समितिने परिश्रमपूर्वक जो लड़ाई की, उसे न करके यदि वह चुप बैठी रहती तो जो परिणाम हम आज देखते हैं वह नहीं होता। आशा है, अब हम सब मताधिकारका लाभ भोगेंगे।

१. देखिए "लेडीस्मिथके परवाने", पृष्ठ २०४-५।

एस्टकोर्टका निकाय श्री हाफिजीवाले मामलेमें सर्वोच्च न्यायालयके निर्णयके खिलाफ सम्राट्की न्याय परिषदमें अपील करनेके लिए अनुमति माँगना चाहता है, इसका खुलासा करते हुए श्री गांधीने कहा :

निकाय अपील करनेकी अनुमति चाहता है। वह नहीं दी जा सकती। क्योंकि, उसमें खर्च ज्यादा होनेकी सम्भावना है और यह नहीं दीखता कि परिणाम कुछ होगा। फिर भी सम्राट्की न्याय परिषदमें अपील करनेकी अनुमति यदि कोई माँगता है तो हम रुकावट नहीं डालेंगे।

इतने स्पष्टीकरणके बाद श्री गांधीने बताया कि आज भारतके पितामह दादाभाई नौरोजीकी जयन्ती है। उसके सम्बन्धमें एक तार[1] सवेरे भेज दिया गया है। इस प्रसंगपर टोंगाटके भारतीयोंने तार द्वारा सूचित किया कि हम दादाभाई नौरोजीकी दीर्घायुकी कामना करते हैं।

इसके बाद सब उठकर खड़े हुए और उन्होंने दादाभाईकी दीर्घायुके लिए कामना की तथा उनकी खुशहालीके लिए तीन नारे लगाये। रातके दस बजे सभा समाप्त हुई।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, ७–९–१९०७

१६८. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर ७, १९०७ के पूर्व]

[उपनिवेश-सचिव
प्रिटोरिया
महोदय,]

मेरे संघको विश्वस्त रूपसे पता चला है कि सरकार एशियाई पंजीयन अधिनियमके अन्तर्गत विलम्बित प्रार्थनापत्र लेनेसे पूर्व प्रार्थियोंसे इस आशयके हलफनामे ले रही है कि उन्होंने अभीतक संघके कुछ सदस्योंके अनुचित दबावके कारण ये प्रार्थनापत्र नहीं दिये।

यदि मेरे संघको प्राप्त सूचना सत्य है, तो मैं आदरपूर्वक निवेदन करता हूँ कि जहाँतक मेरी जानकारी है, संघके किसी सदस्यने कभी कोई ऐसा दबाव नहीं डाला है; और मेरा संघ नम्रतापूर्वक प्रार्थना करता है कि यदि किसी व्यक्तिने ऐसा आरोप लगाया है, तो जिसपर आरोप लगाया गया है, उसे इस सम्बन्धमें उचित जानकारी देनेकी कृपा की जाये।

[आपका, आदि,
ईसप इस्माइल मियाँ
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ]

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ७–९–१९०७

१. देखिए "तार : दादाभाई नौरोजीको", पृष्ठ २१० ।

१६९. सविनय अवज्ञाका धर्म[1]

ऐसा लगता है कि संसदके दोनों सदनोंने जो यह विधेयक पास कर दिया है कि मृत पत्नीकी बहनसे विवाह करना वैध है, उससे संसदीय कानून द्वारा स्थापित गिरजों (एस्टैब्लिश्ड चर्च) के पादरी एक प्रकारके सत्याग्रहियोंमें परिणत हो जायेंगे। कैंटरबरीके सर्वोपरि पादरी (आर्क बिशप) ने आज एक संदेश भेजा है जिसमें पादरियोंसे अनुरोध किया है कि यद्यपि इस प्रकारके सम्बन्ध देशके कानून द्वारा जायज करार दिये गये हैं, वे मृत पत्नीकी बहनसे विवाह न करायें।

"डेली प्रेस"

इस विवादमें पड़नेकी हमारी इच्छा नहीं है कि मृत पत्नीकी बहनसे शादी करना सही दिशामें सुधार है या नहीं। हमने उपर्युक्त समुद्री तार यह बतानेके लिए उद्धृत किया है कि सत्याग्रह खास परिस्थितियोंमें अपनी शिकायतें दूर करानेका एक सर्वमान्य उपाय है और कानूनपर चलनेवाले और शान्ति-परायण लोग अपनी अन्तरात्माका हनन किये बिना सिर्फ यही रास्ता अपना सकते हैं। वास्तवमें लगता तो यह है कि यदि उनमें कोई अन्तरात्मा है और वह किसी खास कानूनके खिलाफ बगावत करती है तो यह तरीका उन्हें अपनाना ही चाहिए। जवाबमें कहा जा सकता है कि ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयों द्वारा किये गये और कैंटरबरीके आर्क बिशप द्वारा सुझाये गये सत्याग्रहमें कोई समानता नहीं है। हमारा यहाँ मतभेद है और हम दावा करते हैं कि अगर कैंटरबरीके आर्क बिशपके लिए मृत पत्नीकी बहनके कष्ट-निवारणवाले कानूनकी अवहेलना करना वैध है तो ब्रिटिश भारतीयोंके लिए तो यह और भी अधिक वैध है कि वे एशियाई पंजीयन अधिनियमको माननेसे इनकार करें। अगर ऐसे पादरियोंके लिए, जो शादी करानेसे इनकार करके कानूनको न मानें, इस कानूनमें कोई सजा नहीं है तो यह उनका दुहरा कर्तव्य है कि वे कानूनको मानें। लेकिन आर्क बिशप तो जान-बूझकर विपरीत सलाह देते हैं; क्योंकि वे एक ऊँचे कानूनकी ओर बढ़े हैं और वह है अन्तरात्माका कानून। सही या गलत, पर कृपामूर्ति आर्क बिशपका विश्वास है कि इस प्रकारकी शादियोंके लिए इंजीलमें कोई विधान नहीं है और संसदने ऐसा कानून बनाकर ईश्वरीय कानूनको भंग किया है। इस बातको बर्दाश्त करना पादरियोंके लिए अधर्म होगा। दूसरे शब्दोंमें, आर्क बिशपने थोरोकी इस बातको स्वीकार कर लिया है कि हमें प्रजा होनेसे पहले मनुष्य होना चाहिए और हमारी अन्तरात्माकी ऐसी कोई आज्ञा नहीं है कि हम किसी भी कानूनको, उसके पीछे चाहे जो ताकत या बहुमत हो, अन्धे होकर मान लें।

१. इस विषयपर गुजरातीमें यह और आगेके लेख लिखनेमें गांधीजीने अमेरिकी दार्शनिक, प्रकृतिवादी तथा ग्रंथकार हेनरी डेविड थोरो (१८१७–६२) के निबन्ध **सविनय अवज्ञाका धर्म (ऑन द ड्यूटी ऑफ सिविल डिस-ओबिडिएन्स)** की सहायता ली थी। उक्त निबन्ध सर्वप्रथम १८४९ में **'नागरिक शासनका प्रतिरोध', (रेजिस्टैन्स टु सिविल गवर्नमेंट)** शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी भी यही स्थिति है। वे कानूनपरायण हैं और अबतक उन्हें जो प्रमाणपत्र मिला हुआ है उसमें, इस एशियाई कानूनके मातहत पंजीयन न करानेसे कोई कमी नहीं आयेगी; क्योंकि इसे उनकी अन्तरात्मा उनके पौरुषके लिए अपमानजनक और उनके धर्मके हकमें घृणित समझकर अस्वीकार करती है। यह सम्भव है कि सत्याग्रहके सिद्धान्तकी अति की जाये, लेकिन यह बात कानून माननेके सिद्धान्तपर भी उतनी ही लागू होती है। हम शब्दोंमें इस विभाजन-रेखाको उतने सही तौरपर नहीं दे सकते जितना कि थोरोने अमरीकी सरकारके बारेमें बोलते हुए कहा था :

> अगर कोई मुझसे कहे कि यह [अमरीकी] सरकार बुरी है, क्योंकि यह अपने बन्दरगाहोंमें आनेवाले कुछ विदेशी वस्तुओंपर कर वसूल करती है तो, सम्भव है, मैं इस बारेमें कोई बखेड़ा न करूँ, क्योंकि मैं उन वस्तुओंके बगैर काम चला सकता हूँ। सभी यन्त्रोंमें घर्षण[1] होता है [वैसे ही सब शासन-यन्त्रोंमें भी होता है] और शायद इससे बुराईको कम करनेमें काफी सहायता मिलती है। बहरहाल, इसी बातको लेकर हलचल करना एक बहुत बुरी बात है। लेकिन, जब घर्षण अपने [शासन-] यन्त्रपर हावी हो जाये और जुल्म और लूटका बोलबाला हो तब तो मैं यही कहूँगा कि हमें ऐसे [शासन-] यंत्रकी अब जरूरत ही नहीं है।

एशियाई पंजीयन अधिनियम ब्रिटिश भारतीयोंके लिए सिर्फ ऐसा कानून ही नहीं है जिसमें थोड़ी-सी बुराई हो या, थोरोके शब्दोंमें, यह एक ऐसा यन्त्र है जिसमें घर्षण है; लेकिन यह तो बुराईको ही वैध बनाना है, या घर्षणका साधन बनाना है। इस तरह बुराईका विरोध करना एक ऐसा पवित्र कर्तव्य है, जिसकी ओरसे कोई भी मनुष्य निरपेक्ष भावसे अपना मुँह नहीं मोड़ सकता है। और कैंटरबरीके आर्क बिशपकी तरह ब्रिटिश भारतीयोंके लिए भी इस बातका फैसला उनकी अन्तरात्माको ही करना चाहिए, और उन्होंने फैसला कर भी लिया है, कि वे एशियाई कानूनको मानें या न मानें, चाहे उसके लिए जो भी कीमत चुकानी पड़े।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–९–१९०७

१. स्वयं गांधीजीने इसका अनुवाद 'जंग' किया है। देखिए "कानूनका विरोध — एक कर्तव्य [२]", पृष्ठ २३१, अनुच्छेद २।

१७०. 'इंडियन ओपिनियन' का परिशिष्टांक

हमने गतांकमें सूचित किया था कि हम इस अंकमें माननीय दादाभाई नौराजीका चित्र उनके जन्मदिवसके उपलक्ष्यमें देंगे। उसके अनुसार पाठक इस अंकमें उनका चित्र देखेंगे। यह चित्र गत वर्ष, जब भारतके पितामह स्वदेश गये थे, लिया गया था और 'इंडिया' में छापा गया था। हमने यहाँ उसकी नकल ली है। हमारी सलाह है कि सब इसे मढ़वाकर रखें। किन्तु हम इसकी सच्ची मढ़वाई तो तब कहेंगे जब यह हमारे हृदयोंमें अंकित हो जाये। कागजके टुकड़ेको सजाकर रखने और उसके पीछे जो अर्थ छिपा है, उसको तनिक भी स्मरण न रखनेका नाम ही मूर्तिपूजा या बुतपरस्ती माना जा सकता है। इस चित्रको अपने कमरेमें टांगनेका उद्देश्य मात्र यही है कि उसको देखकर हमें अपने कर्तव्यका नित्य नया ज्ञान होता रहे। इस समय दक्षिण आफ्रिकामें और वैसे ही भारतमें ऐसी स्थिति है कि दादाभाई जैसे सैकड़ों वीर निकल आयें तो भी पर्याप्त न होंगे। जबतक ऐसे लोग नहीं निकलते तबतक राजनीतिक और सांसारिक जीवनके अन्य क्षेत्रोंमें हमारा उद्धार न होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-९-१९०७

१७१. सुस्वागतम्

नेटालके नये गवर्नर सर मैथ्यु नेथन आ गये है। उनकी उम्र पैंतालीस वर्षकी है। वे अविवाहित हैं। वे यहूदी हैं और अपनी जातिके पहले व्यक्ति हैं जिन्हें दक्षिण आफ्रिकामें गवर्नर नियुक्त किया गया है। कहा जाता है कि वे बड़े प्रेमी, परिश्रमी और अनुभवी हैं। हाँगकाँगमें सभी कौमोंका चित्त उन्होंने चुरा लिया था। इस समय नेटालकी हालत बड़ी खराब है। ऐसी परिस्थितिमें यद्यपि स्वराज्य-प्राप्त उपनिवेशमें वे बहुत हस्तक्षेप नहीं कर सकते, फिर भी अपनी एक सज्जनोचित सलाहसे और व्यक्तिगत आचरणसे बहुत सहायता कर सकते हैं। उनके सम्बन्धमें जो आशाएँ रखी गई हैं, भगवान करे, वे सफल हों। उनके साथ उनकी बहन कुमारी नेथन भी हैं। वे गवर्नरके सामाजिक जीवनसे सम्बन्धित कार्य सँभालती हैं और समारोहोंके समय पत्नीका अभाव खटकने नहीं देतीं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-९-१९०७

१७२. अनाक्रामक प्रतिरोधके लाभ

एक स्मरणीय उदाहरण

आजकल आयर्लैंडवासी अपने हक प्राप्त करनेके लिए बहुत बेचैन हो रहे हैं। वहाँके कुछ नेता मानते हैं कि जैसे भारतीयोंमें चमड़ीके रंगका दोष है वैसे ही आयर्लैंडकी जनतामें भूमिका दोष है। इसलिए भारतीय प्रजा भारतमें और भारतके बाहर दुःख उठाती है और अंग्रेजोंसे हलके दर्जेकी गिनी जाती है। आयर्लैंडवासियोंकी अपने देशमें तो कोई गिनती नहीं है, क्योंकि अंग्रेज शासक उनपर जुल्म करते हैं; लेकिन जैसे ही वे अपना देश छोड़कर बाहर जाते हैं, अंग्रेजोंके समान ही अधिकार भोगने लगते हैं। लोकसभामें आयर्लैंडके ८६ सदस्य हैं। फिर भी अंग्रेज लोग अपने स्वार्थमें अन्धे होकर इतना जोर दिखाते हैं कि आयरिश प्रतिनिधियोंको कामयाबी नहीं मिलती। इसलिए आयर्लैंडके कुछ नेता सुनवाईका दूसरा रास्ता अख्तियार करना चाहते हैं। उसका नाम 'सिन-फेन'[1] है। इसका यदि गुजरातीमें हूबहू अर्थ किया जाये तो उसे 'हमारा स्वदेशी आन्दोलन' कहा जा सकता है। "सिन-फेन" दलका जोर दिनोंदिन बढ़ रहा है। उसने अपने आन्दोलनमें शान्तिपूर्ण प्रतिरोध या अनाक्रामक प्रतिरोधको मुख्य हथियार बनाया था। आजतक वे लोग मार-काटकी प्रवृत्तिको प्रोत्साहन देते थे। आयर्लैंडकी जनता किरायेदार है और मालिक अंग्रेज यानी परदेशी हैं। इसलिए किरायेदार प्रजा परदेशी मालिकको मारने-पीटनेकी तरकीब करती थी। किन्तु अब यह निर्णय किया गया है कि लोगोंको ऐसी तालीम दी जाये जिससे धीरे-धीरे ब्रिटिश लोकसभासे आयरिश सदस्य निकाल लिये जायें, आयर्लैंडकी अदालतोंमें आयरिश लोगोंके मुकदमे न जायें और असुविधाएँ होनेपर भी ब्रिटिश मालका उपयोग न किया जाये। इन्हीं उपायोंके साथ स्वदेशीका आन्दोलन चलाया जाये, जिससे बिना युद्धके विवश होकर अंग्रेज या तो आयर्लैंडको स्वायत्त शासन दे दें या फिर आयर्लैंड छोड़कर चले जायें और आयरिश प्रजा स्वतन्त्र राज्य करने लगे।

इस आन्दोलनकी बुनियाद यूरोपके दक्षिण आस्ट्रिया-हंगरीमें पड़ी थी। आस्ट्रिया और हंगरी दो अलग-अलग देश थे। लेकिन हंगरी आस्ट्रियाके अधिकारमें था, जिससे उसे सदा ही आस्ट्रियाका शिकार बनना पड़ता था। इसलिए डिक नामक एक हंगेरियनने आस्ट्रियाको तंग करनेके लिए लोगोंमें यह विचार फैलाया कि आस्ट्रियाको कर न दिये जायें, आस्ट्रियाके अधिकारियोंके यहाँ नौकरी न की जाये और आस्ट्रियाका नाम तक भुला दिया जाये। यद्यपि हंगेरियन बहुत ही निर्बल थे फिर भी इस बलके कारण अन्तमें आस्ट्रियाको उनके साथ न्याय करना पड़ा और अब हंगरी आस्ट्रियाके अधिकारमें नहीं माना जाता। वह अब आस्ट्रियाके मुकाबलेका राज्य है।

इन उदाहरणोंसे ट्रान्सवालवासियोंको बहुत सबक लेना चाहिए। इससे स्पष्ट होता है कि इतिहासमें जो बातें पहले की जा चुकी हैं, वही भारतीयोंके सम्बन्धमें ट्रान्सवालमें की जानी

१. आयरिश भाषाके इस शब्दका अर्थ है 'हम ही'; यह नाम १९०५ में प्रारम्भ हुए उस आन्दोलनको दिया गया था, जो बादमें एक सार्वजनिक गणतन्त्रीय दलके रूपमें विकसित हुआ और जिसके प्रयासोंसे आयरिश फ्री स्टेटकी स्थापना हुई।

चाहिए। मतलब यह कि हजारों लोगोंको कोई कैद नहीं कर सकता, न निकाल सकता है। लेकिन कैद भोगने या देशके बाहर निकाले जानेके लिए प्रत्येक भारतीयको तैयार रहना चाहिए। भारतीय जेल भोगने और देशके बाहर जानेको तैयार हैं, यह साबित करनेके लिए उनमें से कुछको जेल भोगनी पड़ेगी और देशके बाहर भी जाना पड़ेगा। जिसके हिस्से देश-निकाला अथवा जेल आयेगी, विजय उसी भारतीयकी हुई, जिन्दगी उसीने जी, ऐसा माना जायेगा। उसका नाम अमर होगा और उसने अपने देशके प्रति शत-प्रतिशत कर्तव्य निर्वाह किया, यह माना जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–९–१९०७

१७३. प्रधानमन्त्रीके विचार

सर हेनरी कैम्बेल बैनरमेनने श्री रिचको उत्तर भेजा है कि वे दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके शिष्टमण्डलसे नहीं मिलेंगे। उनके दिये हुए उत्तरका सारांश रायटरने तारसे भेजा है। इस तारके अनुसार प्रधानमन्त्रीने सूचित किया है कि वे ट्रान्सवाल सरकारको लिख चुके हैं कि नया कानून खराब है। किन्तु चूँकि अब ट्रान्सवाल स्वतन्त्र है इसलिए वे उस अधिनियमको लागू करनेके सम्बन्धमें हस्तक्षेप नहीं कर सकते और तत्काल ट्रान्सवालपर अधिक दबाव भी नहीं डाल सकते। इस उत्तरके लिए, जान पड़ता है, सर हेनरीने लगभग बीस दिन लिये हैं। इसका अर्थ हम यह लगाते हैं कि ट्रान्सवालसे बड़ी सरकारके पास कोई सूचना गई है कि भारतीय समाज आखिरमें बिना जबरदस्तीके पंजीयन करवा लेगा। हम मानते हैं कि इसी तरह लिखनेमें जनरल स्मट्सको इस बातसे बल मिला है कि कुछ लोगोंने पंजीयन करा लिया है और दूसरे करानेको तैयार हैं। यदि हमारा अनुभव सही हो तो सर हेनरीके उत्तरसे निराश होनेका कोई कारण नहीं रहता। सर हेनरीके हस्तक्षेपका समय तब आयेगा जब हमारी सच्ची लड़ाई शुरू होगी, जब भारतीय जेलमें जाने अथवा निर्वासित होनेपर भी दृढ़ रहेंगे और कानूनके सामने नहीं झुकेंगे। सर हेनरी अगर ऐसे समयमें भी हस्तक्षेप नहीं करते तो हम समझते हैं कि ब्रिटिश राज्यका सूर्य अस्त हो गया है। क्योंकि निर्दोष मनुष्यों-पर अत्याचार हो और बड़ी सरकार उन्हें न बचाये तो साधारण बुद्धि कहती है कि ईश्वर उसके हाथसे सत्ता छीन लेगा। जो रक्षा न करे उसे राजा कैसे कहा जाये?

किन्तु सर हेनरी हस्तक्षेप करें या न करें, भारतीयोंकी लड़ाईका सम्बन्ध इससे ज्यादा नहीं है। इस बारकी लड़ाई आत्मबलकी लड़ाई है। जिस कानूनको हम इस समय हेय कर रहे हैं उसे बड़ी सरकारकी निर्बलता देखकर स्वीकार नहीं कर लेंगे। यदि असली समयपर बड़ी सरकार हाथपर-हाथ धरे हमारी होली होती देखती रहती है तो उस हालतमें उपनिवेशमें भारतीय अपने बलपर ही रह सकते हैं, और यदि कैद आदिकी उपेक्षा करेंगे तो वे उपनिवेशसे तबाह होकर बुरी मौत मरेंगे; क्योंकि कुत्तेकी तरह जीनेको हम मौतकी अपेक्षा हेय समझते हैं।

सर हेनरीके पत्रपर विलायतके सुप्रसिद्ध 'पाल माल गज़ट'ने आलोचना की है कि सर हेनरीने भारतीयोंके अधिकार डुबानेमें कायरता और कमीनापन दिखाया है और इस कायरताका परिणाम सभी सरकारोंको भोगना पड़ेगा। इस प्रकारका तार जोहानिसबर्गके 'संडे टाइम्स'में छपा है। इससे माना जा सकता है कि विलायतमें जो लड़ाई चल रही है उसका अन्त अभी आया नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–९–१९०७

१७४. नेटाल नगरपालिका मताधिकार अधिनियम

इस बातको लेकर कि नेटालमें भारतीयोंको नगरपालिकाका मताधिकार मिलेगा या नहीं, बहुत दिनोंसे बहस-मुबाहसा हो रहा है। अन्तिम परिणाम क्या होगा, इसका अभीतक निर्णय नहीं हो सका; पर समाचारपत्रोंमें जो खबर छपी है, उससे मालूम होता है कि लॉर्ड एलगिनने उक्त अधिनियम अस्वीकृत कर दिया है। कारण यह दिया गया है कि परवानोंकी बाबत नेटालकी सरकार साम्राज्य-सरकारको सन्तुष्ट नहीं कर सकी। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह उत्तम निर्णय दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके अस्तित्व और उसके द्वारा चलाये गये जबरदस्त संघर्षका परिणाम है। हमारे पाठकोंको याद होगा कि कई बार श्री रिचने उक्त समितिकी ओरसे लॉर्ड एलगिनके नाम इस विधेयकको लेकर पत्र लिखे हैं। इस जीतमें फूल जाने जैसी बात नहीं है। हम स्वयं नगरपालिकाओंके अधिकारकी प्राप्तिको महत्त्व नहीं देते। यदि हममें उस अधिकारको काममें लानेका ज्ञान या शक्ति न हो, तो बहुधा वह एक बोझ ही हो जाता है। कानूनकी दृष्टिसे गोरों और गेहुँए लोगोंको समान हक होनेपर भी उन दोनोंमें जो लोग अधिक उत्साही, शिक्षित, चतुर और परोपकारी बुद्धि रखनेवाले हैं, वही आगे बढ़ सकते हैं, ऐसा हम आज अमेरिकामें देख सकते हैं, और उसी तरह केप उपनिवेशमें भी। केपमें भारतीय, वतनी और गोरे, तीनोंको एक जैसा मताधिकार है, फिर भी भारतीय समाज दिन-पर-दिन पिछड़ता जा रहा है। मतरूपी बन्दूकपर जंग लग गई है और गोरे व्यापारिक परवानोंके विषयमें जैसा चाहें, वैसा कानून बनाते रहते हैं। इसका पहला तात्पर्य हम यह समझते हैं कि भारतीय गरीब हों, चाहे अमीर, उनके मनमें मनुष्यत्वकी तीव्र भावना पैदा होनी चाहिए। अपने समाजमें हकोंको अक्षुण्ण रखनेके लिए उनमें लड़ने अथवा अन्य रीतिसे कष्ट सहन करनेकी हिम्मत और शक्ति आना जरूरी है। इन गुणोंके हमारे बीच उत्पन्न होनेका समय आ गया है अथवा हमें उसकी प्रतीक्षा अभी वर्षों तक करनी पड़ेगी, यह बात ट्रान्सवालके भारतीयोंके कामसे प्रकट हो जायेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–९–१९०७

१७५. डॉक्टर नंडीकी पुस्तिका

डॉक्टर नंडीने[1] नये कानूनके बारेमें एक पुस्तिका लिखी है। उसका मूल्य एक शिलिंग रखा है। उसमें लॉर्ड सेल्बोर्न, श्री कर्टिस, श्री चैमने, श्री कोडी इत्यादिकी बड़ी निन्दा की गई है, और उसी प्रकार श्री गांधीके विषयमें भी लिखा गया है। उस सारी आलोचनाका सारांश यहाँ देना जरूरी नहीं जान पड़ता। उन्होंने इस पुस्तिकामें यह सुझाव दिया है कि नया कानून रद्द करके एक आयोगके द्वारा भारतीय समाजके अधिकारोंकी जाँच करानेके बाद नया पंजीयन कराया जाना चाहिए। इस सुझावमें और स्वेच्छया पंजीयनके प्रस्तावमें कोई अन्तर नहीं है। इस हद तक डॉक्टर नंडीकी पुस्तिका हमारे लिए सहायक हो सकती है। किन्तु इस पुस्तिकाका इतना ही अर्थ है, या कानूनको अमलमें रखते हुए सिर्फ पंजीयनपत्रोंको बदलनेकी माँग की गई है, यह ठीक-ठीक स्पष्ट नहीं किया गया। किन्तु इस पुस्तिकाका कोई महत्त्व हमें नहीं दिखाई देता, क्योंकि हमें उसमें कोई नई बात दिखाई नहीं पड़ती। इसके सिवा श्री चैमने, तथा श्री कोडीपर जो हमला किया गया है, उससे उन्हें कोई हानि पहुँचेगी ऐसा भी नहीं जान पड़ता। इस पुस्तिकामें डॉक्टर नंडीने स्वीकार किया है कि जेल जानेका प्रस्ताव ही भारतीय समाजके लिए लाभदायक है। डॉक्टर नंडीने 'रैंड डेली मेल'के आधारपर शिक्षित भारतीयोंको अँगुलियोंके निशान लेनेकी शर्तसे मुक्त करनेकी सूचना निकलनेकी बात भी की है। किन्तु ऐसी सूचना तो कभी नहीं दी गई; और यदि आगे दी भी जाये तो उससे कानून सम्बन्धी संघर्षका अन्त होनेकी सम्भावना नहीं है। इसके अतिरिक्त अन्य कुछ [सुझाव[2]] भी देखनेमें आते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–९–१९०७

१७६. कानूनका विरोध — एक कर्तव्य[3] [१]

अमेरिकामें बहुत वर्ष पहले हेनरी डेविड थोरो नामक एक महापुरुष हो गये हैं। उनके लेख लाखों मनुष्य पढ़ते व मनन करते हैं तथा कुछ उनका अनुसरण करते हैं। थोरो जो कहते उसपर आचरण भी करते थे, इसलिए उनके लेखोंको बहुत महत्त्व दिया जाता है। उन्होंने स्वयं अमेरिकाके विरोधमें अर्थात् अपने देशके विरोधमें कर्तव्य समझकर बहुत-कुछ लिखा है। अमेरिकाके लोग बहुतसे लोगोंको गुलाम बनाकर रखते थे, इसे वे बड़ा पाप मानते थे। परन्तु इतना लिखकर ही वे सन्तोष नहीं कर लेते थे, बल्कि अमरीकी नागरिककी हैसियतसे इस रोजगारको रोकनेके लिए जो भी उपाय अख्तियार करना उन्हें योग्य दिखाई देता उसे वे

१. डॉक्टर एडवर्ड नंडी, देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४६०-६१।

२. **इंडियन ओपिनियन**की जो प्रति उपलब्ध है उसमें गांधीजी द्वारा प्रयुक्त शब्द ठीक पढ़ा नहीं जाता।

३. इसमें तथा १४–९–१९०७ (पृष्ठ २३१-३३) के दूसरे लेखमें गांधीजीने गुजराती पाठकोंके लिए हेनरी डेविड थोरोके विचारोंका सरल रूपान्तर प्रस्तुत किया था।

करते थे। उनमें से एक उपाय यह था कि जिस राज्यमें गुलामीका व्यापार चालू हो उस राज्यको कर न दिया जाये। जब उन्होंने अपना कर देना बन्द किया, उन्हें जेलमें भेज दिया गया। जेलमें उनके मनमें जो विचार आये वे बहुत दृढ़ और स्वतन्त्र थे तथा पुस्तकके रूपमें प्रकाशित हुए हैं। उस पुस्तकके अंग्रेजी नामका भावार्थ हमने इस लेखके शीर्षकके रूपमें दिया है। इतिहासकार कहते हैं कि अमेरिकामें गुलामी बन्द होनेका मुख्य कारण था थोरोका जेल जाना और जेलसे निकलनेके बाद उपर्युक्त लेख-संग्रह प्रकाशित करना। थोरोका अपने आचरण द्वारा पेश किया हुआ उदाहरण और उनके लेख दोनों ट्रान्सवालके भारतीयोंपर इस समय बिलकुल यथार्थरूपमें लागू हो रहे हैं। इसलिए हम उनका सारांश नीचे दे रहे हैं:

मैं स्वीकार करता हूँ कि राज्यमें लोगोंपर जितना कम शासन होगा उतना ही वह राज्य अच्छा है। अर्थात् राज्य-शासन एक प्रकारका रोग है, और उस रोगसे प्रजा जितनी मुक्त रह सके उतना ही वह राज्य-शासन प्रशंसनीय है।

बहुतेरे लोगोंका कहना है कि अमेरिकामें सेना न हो अथवा कम हो तो अच्छा रहे। यह बात ठीक है। किन्तु ऐसी बातें कहनेवालोंका खयाल गलत है। उनका कथन यह है कि राज्य-शासन लाभदायक है। उसकी सेना ही नुकसान पहुँचानेवाली है। ये मूर्ख लोग यह नहीं समझते कि सेना राज्य-शासनका शरीर है और उसके बिना उसका काम घड़ी-भर भी नहीं निभ सकता। किन्तु हम स्वयं चूँकि राज्य-शासनके मदमें अन्धे हैं, इसलिए इस बातको नहीं देख सकते। सचमुच देखा जाये तो सेना एवं राज्य-शासन दोनोंको हमने यानी प्रजाने ही बनाये रखा है।

इस तरह हम देखते हैं कि हम अपने-आपसे ठगे जा रहे हैं। अमेरिकाका संविधान अमेरिकी जनताको स्वतन्त्र रखता अथवा स्वतन्त्रताकी तालीम देता है, ऐसा कुछ भी नहीं। जिस राज्यको हम देख रहे हैं वह कुछ-कुछ अमेरिकी जनताके गुण और दोषोंका परिणाम है। अर्थात् यद्यपि हम सुसंस्कृत और होशियार हैं फिर भी राज्य-शासनके कारण हमारे विकासमें न्यूनता है।

इतना होनेपर भी मैं राज्यका उन्मूलन करना नहीं चाहता। परन्तु तत्काल तो अच्छी राज्य-व्यवस्था चाहता हूँ और ऐसी अपेक्षा रखना प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है। जिस देशमें सभी बातें बहुमतसे की जाती हों वहाँ न्याय ही होता है यह मानना निरा भ्रम है। और इस भूलको न देख पानेके कारण बहुतेरे अन्याय होते रहते हैं। अधिक मनुष्य जो काम करते हैं वह सही ही होता है, यह मान्यता एक बेकारका वहम है। क्या ऐसा राज्य नहीं हो सकता जहाँ बहुमतकी रायका पालन होनेके बजाय सत्यका ही पालन हो? क्या मनुष्यको अपनी रू अथवा आत्मा हमेशाके लिए शासकोंके सुपुर्द कर देनी चाहिए? मैं तो यह कहता हूँ कि पहले हम मनुष्य हैं, और बादमें प्रजा। मुझे कानूनका आदर करनेके गुणका विकास करनेकी कुछ भी आवश्यकता नहीं दीखती। सच्चेका आदर करनेकी आवश्यकता सदैव है। मुझसे केवल एक ही कर्तव्य अपनाया जा सकता है, और वह है कि जो सच्चा हो वही मैं करूँ। कानूनके द्वारा मनुष्यको अधिक न्यायी बना हुआ मैंने कभी नहीं देखा। किन्तु मैंने यह तो देखा है — और अब भी देखता हूँ — कि सामान्य न्याय-बुद्धिवाले मनुष्य अपने भोलेपनके कारण अन्यायके प्रसारके दूत बन जाते हैं। कानूनको बेहद सम्मान देनेका परिणाम हम सब लोग देखते हैं कि हम बन्दरों-जैसे सैनिक बन जाते हैं और बिना कुछ पूछताछ किये यन्त्रके

समान, हमारा अधिकारी जैसा कहता है, वैसा करते रहते हैं। बहुत-से लोग इस कामको अपना पेशा बना लेते हैं। और फिर अमुक लड़ाई बुरी है, यह निश्चित रूपसे समझते हुए भी वे लोग उसमें कूद पड़ते हैं। इन्हें क्या हम मनुष्य समझेंगे या कसाईके हाथका कुल्हाड़ा? ऐसे लोग लकड़ीके टुकड़े अथवा ईंटके समान बन जाते हैं। तब उन्हें आदर किस प्रकार दिया जा सकता है? उनका मूल्य कुत्ते-बिल्लीसे अधिक कैसे समझा जाये? फिर कुछ लोग कानूनके समर्थक बनते हैं, राजदूत बनते हैं, वकील बनते हैं। उन्हें अपनी बुद्धिके द्वारा राज्यकी रक्षा करनेका घमण्ड रहता है। परन्तु मैं देखता हूँ कि वे बिना सोच-विचार किये अनजानमें शैतानकी भी सेवा करते हैं। जो अपनी न्याय-बुद्धिको कायम रखकर राज्यकी बागडोर अपने हाथमें रखते हैं, वे वास्तवमें हमेशा राज्यका विरोध करते हुए मालूम होते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–९–१९०७

१७७. डर्बनमें अँगुलियोंकी छाप देनेका आतंक

कुछ दिनोंसे चर्चा चल रही है कि डर्बनके रास्ते जो भारतीय अपने देश जाना चाहते हैं उन्हें अधिवास प्रमाणपत्र देनेके पहले प्रवासी-अधिकारी उनके गवाहोंसे अँगूठे लगवाता है। कुछका यह भी कहना है कि इस सम्बन्धमें काँग्रेसको झगड़ा करना चाहिए। ऐसा कानून अभी बना तो नहीं है, फिर भी, हम मानते हैं, इस तरहसे उसकी शुरुआत हो रही है। इस सम्बन्धमें काँग्रेस जो-कुछ भी मदद कर सकती है, उससे बहुत ज्यादा लोगोंको खुद करना चाहिए। जब भी अँगूठे माँगे जाते हैं, लोग यदि अपनी गरज निकालनेके लिए दे देते हैं, तो काँग्रेस उसका इलाज नहीं कर सकती। अधिवास प्रमाणपत्रके लिए आवश्यक प्रमाणके सम्बन्धमें निर्णय करनेका काम प्रवासी-अधिकारीको दिया गया है। वह बिना अँगुलियोंकी छाप लिये प्रमाणपत्र देनेसे इनकार भी कर सकता है। और यदि कोई आजिजीके साथ माँगे तो वह उसकी गरजका लाभ उठाकर उससे अँगूठे लगवा सकता है। यहाँ हम यह नहीं कहना चाहते कि उसका यह काम उचित या न्यायपूर्ण है, न हम यह कहना चाहते हैं कि अमुक परिस्थितिमें बाकायदा नहीं लड़ा जा सकता; बल्कि हमें यही कहना है कि इस तरहकी लड़ाईमें यदि हम जीत भी गये तब भी सम्भव है हार ही होगी। जबतक भारतीय झूठी शपथ लेते रहेंगे और गलत तरीकेसे अधिवास प्रमाणपत्र लेनेकी इच्छा रखेंगे तबतक इस तरहके कष्ट हुआ ही करेंगे। लेकिन इसपर ध्यान देनेकी आवश्यकता इस समय हमें नहीं दिखाई देती। हम तो निश्चित रूपसे मानते हैं कि यदि ट्रान्सवालकी लड़ाईमें हमारी जीत होगी यानी भारतीय समाज अपनी शपथका निर्वाह करेगा और लाख कष्ट उठाकर भी खूनी कानूनकी शरण नहीं जायेगा, तो हमपर जुल्म करनेका जो पौधा ट्रान्सवालमें रोपा गया है, वह फूटते ही जल जायेगा। इसके बाद हम नहीं मानते कि कोई दूसरा उपनिवेश इस तरहके कानून बना सकेगा। बड़ी सरकारकी हालत साँप-छछूंदरकी-सी हो गई है। और यदि ट्रान्सवालमें हम अन्ततक जूझते रहे तो एलगिन साहब सम्राट्को ऐसे कानूनपर सही करनेकी सलाह देना भूल जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–९–१९०७

१७८. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

अनुमतिपत्र कार्यालयरूपी महामारी अमुक गाँव गई और वहाँसे बगैर किसीको छूत लगाये मिट गई; भारतीय कैदियोंको भी उसकी छूत नहीं लगी। महामारीको भगानेवाले वैद्य (स्वयंसेवक) उपस्थित थे। जहाँ सभी स्वस्थ थे वहाँ वैद्योंकी जरूरत ही न पड़ी।

यह रिपोर्ट अब सामान्य हो गई है। इसलिए मैं स्टैंडर्टन, हाइडेलबर्ग तथा फोक्सरस्टको इतनी जल्दी मुबारकबाद नहीं देता। अब हम इस बीमारीके आदी हो गये हैं। इसकी दवा भी जानने लगे हैं। डर्बनसे सबको एक ही दवा मिलती रहती है। और जहाँ दवासे या बिना दवाके सभी स्वस्थ हों वहाँ मुबारकबाद किसे दिया जाये? जहाँ सभी एक जैसा काम करते हों वहाँ प्रशंसा किसकी की जाये? इसलिए मैं तो अब खुदाकी ही प्रशंसा करूँगा कि उसने आजतक इन सब गाँववालोंको अच्छी बुद्धि दी है और सब एकदिली और हिम्मतसे अपने कर्तव्यपर डटे हुए हैं। लेकिन मुझे बार-बार कहना चाहिए कि यद्यपि ऊपर बताया हुआ काम जरूरी है, फिर भी उससे ज्यादा कीमती काम अभी करना बाकी है। जो यह मानते हों कि हम बिना मुसीबत उठाये, बिना जेल गये, बिना देश-निकाला भोगे केवल बहिष्कारके बलपर जीत जायेंगे तो यह बड़ी भूल है। "दुःख भोगे सुख होय" इस बातको हमें याद रखना है। दुःख भोगे बिना सुखकी कीमत भी नहीं हो सकती। जिसने ठण्डका अनुभव न किया हो, उसे धूपकी कीमत कैसे मालूम होगी? यदि सभी कंकर हीरे होते तो हीरोंको कौन छूता?

हमीदिया अंजुमन

यह अंजुमन अपना काम बड़ी हिम्मतसे किये जा रही है। मैं देखता हूँ कि हम जिस युद्धमें लगे हैं, वह धर्मयुद्ध है। ईमानकी बात आकर खड़ी हुई है। मसजिदमें इबादत की जा रही है कि "हे खुदा, हम यदि सच्चे हों तो हमारी मदद करना।" लोगोंके सामने अब एक ही प्रश्न पेश किया जाता है। कानून चाहिए या ईमान? मौलवी साहब अहमद मुख्त्यारने पिछले रविवारको इसी आशयका एक जोशीला भाषण दिया था। उन्होंने 'कुरान शरीफ'की आयतों द्वारा यह सिद्ध कर दिया था कि मुसलमानोंका एक यही कर्तव्य है कि अब वे केवल खुदासे ही अर्जी करें। सच्चा शिष्टमण्डल वहीं ले जाना है। वह महान न्यायाधीश किसीका लिहाज नहीं करता, किसीकी शक्तिके सामने नहीं झुकता। उसपर चमड़ीके रंगका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। वह तो केवल दिलका रंग देखता है। जिसने उसे अपने पक्षमें रखा है, उसकी कभी हार नहीं होती। मेरी सिफारिश है कि मौलवी साहबके इन शब्दोंको सभी भारतीय भाई अपने हृदयमें अंकित कर रखें।

जर्मिस्टनकी सभा

सनातन वेद धर्म सभाने जन्माष्टमीके उत्सवके सिलसिलेमें सभा की थी। वहाँ भी यही आवाज सुनाई पड़ती थी। हिन्दू बड़ी संख्यामें आये थे। श्री गांधी, श्री पोलक,

श्री मैकिंटायर भी उपस्थित थे। सभी हिन्दुओंको महाराज रामसुन्दर पण्डितजीने समझाया था कि आस्तिक हिन्दू तो एशियाई कानूनको कभी स्वीकार नहीं कर सकता। इस सभाको खत्रियों, बाबू तालेवन्तसिंह और खंडेरियाकी ओरसे भेंटें दी गई थीं।

कुछ डरपोक भारतीय

कुछ डरपोक भारतीयोंकी ओरसे प्रिटोरियाके एक वकीलकी मारफत जनरल स्मट्सको एक पत्र[1] लिखा गया है। मालूम हुआ है कि यदि सरकार थोड़ा-सा भी आश्वासन दे दे तो वे लोग फिसलनेको तैयार हैं। मेरा कहना है कि ऐसे पत्रोंसे हमारी लड़ाई कमजोर होती है। किन्तु मैं यह नहीं मानता कि इससे अन्तमें नुकसान होगा। यदि भारतीय बड़ी संख्यामें अपनी टेकपर डटे रहे तो आखिर हमें विजय मिलनी ही चाहिए। मैं यह भी कहता हूँ कि इस तरहके डरपोक पत्रोंके कारण हमें ज्यादा हानि उठानी पड़ेगी। इसके अलावा, हमने जो तुच्छ माँग की है उससे प्रकट होता है कि हमें सच्ची लड़ाईका भान नहीं है। हमारी लड़ाई भारतीय समाजकी नाक बनाये रखनेके लिए है, हमारे ईमानकी रक्षाके लिए है। यदि हम उसे रोटी कहें तो यह डरपोक पत्र उस रोटीके बदले रेत लेकर सन्तुष्ट होनेकी बात करता है। पुलिस सार्वजनिक तौरसे अनुमतिपत्र न देखे, या दस अँगुलियोंकी छापकी जगह सही करवाये तो इससे यह नहीं माना जायेगा कि हम जीत गये या हमारी प्रतिष्ठा रह गई। वह घृणित कानून तो रह ही जायेगा। इसका अर्थ केवल यही हुआ कि लोहेकी बेड़ीकी जगह किसी हलकी धातुकी बेड़ी पहनाई जायेगी। हमारी लड़ाई तो बेड़ी तोड़कर चूर-चूर कर देनेके लिए है।

मेरी अर्जी

अब उपर्युक्त पत्र तो गया। लेकिन उस पत्रको भेजनेवाले भाइयों और दूसरे भारतीयोंसे मेरी प्रार्थना है कि यदि आपको धीरज न हो, आपसे अपना पैसा न छूटता हो तो आपको मेहरबानी करके बिना अर्जी कानूनकी शरण चले जाना चाहिए। इससे आपके द्वारा समाजका कम नुकसान होगा और आप स्वयं कम डरपोक कहलायेंगे। यदि सभी भारतीयोंकी बुद्धि पलट जाये और सबके-सब डर जायें तब भी मैं तो यही सलाह देनेवाला हूँ।

पत्रका असर कैसे दूर हो?

उपर्युक्त पत्रसे होनेवाला नुकसान कम या दूर कैसे हो, इसका उपाय खोजें। इस पत्रमें कहा गया है कि ब्रिटिश भारतीय संघ जो लड़ाई लड़ रहा है उसमें सभी भारतीय शामिल नहीं हैं। दरअसल यह बात है भी ठीक। इससे अब यह दिखाना संघका कर्तव्य हो गया कि संघके कितने लोग एकमत हैं। समय आनेपर 'पीतल है या सोना' यह अपने-आप साबित हो जायेगा। लेकिन सच्चे मनुष्यको अपनी सच्चाई ढांकनी नहीं पड़ती। इस विचारसे हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें श्री गांधीने सुझाया कि हम कानूनके पूरी तरह खिलाफ हैं, वह हमें मंजूर नहीं है, ऐसी एक छोटी-सी अर्जी हर भाषामें तैयार करवाई जाये और उसपर सब भारतीयोंके हस्ताक्षर करवाये जायें। ऐसा करनेसे निःसन्देह लड़ाईको बहुत बल मिलेगा।

१. सर्वश्री स्टेगमान एस्टेलेन और रॉस द्वारा लिखा गया पत्र; देखिए "मीनकाय प्रार्थनापत्र", पृष्ठ २३७-४०।

इस विचारको मौलवी साहब, श्री उमरजी साले वगैरह सज्जनोंने स्वीकार किया। लेकिन एम० एस० कुवाड़ियाका मत विरुद्ध होनेसे इसे अगले रविवार तक मुल्तवी रखा है। मैं आशा करता हूँ कि अगले रविवारको यह सर्वानुमतिसे पास हो जायेगा। इसी खयालसे आप सबको नीचे लिखे अनुसार सूचना देनेकी अनुमति माँगता हूँ। यदि प्रस्ताव मंजूर होगा तो :

१. अर्जी हर गाँवमें भेजी जायेगी।
२. हस्ताक्षर दो कागजोंपर लिये जायें और हस्ताक्षरकर्ताका नाम, धंधा और उसका पता दिया जाये।
३. हस्ताक्षर लेनेवाले भाईका नाम अर्जीके कोनेमें लिखा हो। यह हस्ताक्षर लेनेवालेकी गवाही होगी।
४. अर्जीको ठीक तरहसे पढ़ाये बिना किसीसे हस्ताक्षर न लिये जायें।
५. अर्जीको साफ रखा जाये और जैसे-जैसे मूल और प्रतिलिपि दोनोंपर हस्ताक्षर होते जायें वे कागज संघको भेजे जायें।
६. इस अर्जीपर हस्ताक्षर करवानेका काम १० दिनमें समाप्त होना चाहिए।
७. हस्ताक्षर करवानेके लिए स्वयंसेवक तैयार रखे जायें, जिससे समय बरबाद न हो।
८. इस अर्जीपर हस्ताक्षर करनेवालेका मन दृढ़ हो और वह अन्ततक टिकना स्वीकार करे तब वह हस्ताक्षर करे।
९. यदि कुछ ही हस्ताक्षर होंगे तो यह अर्जी सरकारको भेजी ही नहीं जायेगी।
१०. इस सूचनाको देखते ही हर गाँववाले अपने गाँवकी भारतीय आबादीकी संख्या तार या पत्रके द्वारा संघको सूचित कर देंगे तो बहुत अच्छा होगा और समयकी बचत होगी।

यह अर्जी यदि सरकारको न भी भेजी जाये तो भी हस्ताक्षर लेनेसे हमें यह पता तो चल ही जायेगा कि लोगोंमें सचाई और हिम्मत कितनी है। यदि ज्यादातर लोगोंमें सचाई नहीं होगी तो हम हर्गिज नहीं जीतेंगे। इसके साथ मैं यह भी स्वीकार करता हूँ कि एक दफा अर्जीकी बात उठाई जानेके बाद यदि हम उसे न भेजें तो उससे हमारी उतनी ही कमजोरी जाहिर होगी। लेकिन जो खुदापर भरोसा रखते हैं वे अपनी कमजोरी जाहिर होनेसे डरनेके बजाय खुश होते हैं। खरे और खोटे रुपयोंके ढेरमें से खोटे रुपयोंको निकाल डालनेमें बुद्धिमानी है। उतना बोझ कम उठाना होगा। ये सब बिलकुल सीधी बातें हैं। इसलिए तुरन्त ही समझमें आ जानी चाहिए।

हमारे कुकृत्य

हमीदियाकी पिछली सभा देखकर मुझे यह विचार आता है कि हमारी नामर्दीके साथ हमारे कुकृत्य भी प्रकट हो जायेंगे। यह तो हो ही नहीं सकता कि कानूनके बारेमें एक तरफ तो हम खुदापर यकीन रखें और दूसरी तरफ लुच्चे और धोखेबाज रहें। हमारी लड़ाई इतनी शुद्ध है। प्रिटोरियामें एक हिन्दू है। उसके सम्बन्धमें कहा जाता है कि उसने शराबकी दूकानमें एक भारतीयको इतनी बुरी तरह मारा कि वह बेसुध हो गया। मारनेवाले-पर अबतक मुकदमा नहीं चला है। इसका नतीजा क्या होगा, मैं नहीं जानता। लेकिन उसने मारा है, यह बात सब जानते हैं। जोहानिसबर्गमें कुछ भारतीयोंपर एक गरीब

भारतीयको लूटनेका आरोप है। भारतीय लुटा, इसमें तो कोई शक नहीं। जिनपर इल्जाम लगाया गया है, उनका निश्चित कहना है कि वे निर्दोष हैं। एक और भारतीय पकड़ा गया है। उसपर नकली सिक्के बनानेका आरोप है। इन घटनाओंसे यह सिद्ध होता है कि हममें से कुछ लोगोंमें चरित्रकी कमी है। ईसप मियाँने समितिमें भाषण देते हुए कहा कि इस तरहकी बातें होनी ही नहीं चाहिए। और दीवानी दावे तथा झगड़े हों तो उन्हें भी वकील या सरकारका खजाना भरे बिना अपने घरमें निबटा लेना चाहिए। मैं मानता हूँ कि इस बातपर बहुत ही सावधानीसे अमल किया जाना चाहिए। इस लड़ाईके परिणामस्वरूप यदि हम हिन्दू-मुसलमानका भेद भूल जायेंगे, आन्तरिक झगड़े खत्म कर देंगे, और यदि हुए भी तो उन्हें घर-ही-घरमें निबटा लेंगे और दूसरे कुकर्म भी छोड़ देंगे, तो तेरह हजार भारतीयोंकी सारे संसारमें तारीफ होगी और उनके नाम खुदाकी बहीमें सदाके लिए दर्ज हो जायेंगे। एक भारतीय सिर्फ बदला लेनेके लिए ही दूसरे भारतीयपर दोषारोपण करता है, यह मामूली बात नहीं मानी जा सकती। एक आदमी दूसरेको पीटता है, यह कोई छोटी क्रूरता नहीं है। कोई भी भारतीय शराब पीता है, यह कम बेइज्जतीकी बात नहीं। जरासे प्रयाससे इन बुरी आदतोंको मिटाया जा सकता है। नये कानूनका खात्मा करनेके लिए इस गन्दगीको दूर करना भी मैं जरूरी मानता हूँ।

पहले दर्जेकी बग्घी

जोहानिसबर्ग नगरपालिका पहले दर्जेकी बग्घीमें भारतीयोंको न बैठने देनेके लिए नियम बना रही है। उसके विरोधमें ईसप मियाँने सख्त पत्र[1] लिखा है। उस नियममें अब और यह सुधार (या बिगाड़) किया जानेवाला है कि जो भारतीय वकील या डॉक्टर हो वह उस बग्घीमें बैठ सकता है। क्या इसका मतलब यह हुआ कि भारतीय वकीलको गलेमें पटिया लगाकर पहले दर्जेकी गाड़ीमें बैठने जाना चाहिए? यदि वह ऐसा न करे तो गाड़ीवान उसे किस तरहसे पहचान सकेगा? वकील भले फटेहाल हो, फिर भी वह पहले दर्जेकी बग्घीमें बैठ सकता है, लेकिन अच्छी पोशाकवाला व्यक्ति, यदि वह वकील या डॉक्टर नहीं है तो, नहीं बैठ सकता। इस बेहूदे संशोधनके विरोधमें श्री ईसप मियाँने दूसरा पत्र[2] लिखकर कहा है कि इस तरहके सुधार करना जलेपर नमक छिड़कनेके समान है। ऐसे संशोधन भारतीय नहीं चाहते। नये पंजीयन लेनेवाले इस कूड़ा प्रस्तावसे चौंक जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-९-१९०७

१. देखिए "पत्र : जोहानिसबर्ग नगरपालिकाको", पृष्ठ १९९।
२. देखिए "पत्र : जोहानिसबर्ग नगरपालिकाको", पृष्ठ २०९।

१७९. पत्र :[1] एशियाई पंजीयकको

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर ११, १९०७]

[सेवामें
एशियाई पंजीयक]

महोदय,

सर्वश्री मुहम्मद इब्राहीम, बूसा कारा, करावली और ईसा इस्माइलको पिछले महीनेकी २७ तारीखको शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत उपनिवेशसे चले जानेका १४ दिनका नोटिस मिला था। तदनुसार मेरे मुवक्किलोंने इस मासकी २ तारीखको डेलागोआ-बेके तीसरे दर्जेके टिकट खरीद लिए और इस प्रकार नोटिसोंकी शर्तें पूरी करनेकी कार्रवाई की। किन्तु वे कोमाटीपूर्टमें हिरासतमें ले लिये गये और पुर्तगाली प्रदेशमें घुसनेसे रोक दिये गये। ट्रान्सवालकी सीमापर जो सार्जेंट था उसने डेलागोआ-बेमें उनका प्रवेश करानेका प्रयत्न किया; उसका कोई फल नहीं निकला। इसके बाद मेरे मुवक्किल कोमाटीपूर्टमें, जैसा वे कहते हैं, पाँच दिन तक जेलमें रखे गये। उसके बाद सार्जेंट उनके लिए डर्बनके टिकट लाया। उनके डर्बन होकर गुजरनेके लिए नौरोहण-पासोंके प्रार्थनापत्र देनेपर उन्हें हुक्म हुआ कि वे ११ पौंड जमा करें और अपना टिकट जोहानिसबर्गमें खरीदें। मेरे मुवक्किल मुझे सूचित करते हैं कि वे बहुत गरीब हैं; इसलिए वे न यह रुपया जमा कर सकते हैं और न जोहानिसबर्गमें अपने टिकट खरीद सकते हैं। उनके रेल्वे टिकिट मेरे पास हैं। यदि आप मुझे कृपा करके यह बता देंगे कि मेरे मुवक्किलोंको अब क्या करना है तो मैं कृतज्ञ हूँगा। वे देशसे जानेके लिए बिलकुल तैयार हैं, बशर्ते कि उनके लिए व्यवस्था की जा सके। मैं नम्रतापूर्वक यह भी जानना चाहता हूँ कि मेरे मुवक्किलोंको कोमाटीपूर्ट जेलमें क्यों रखा गया।[2]

[आपका, आदि,
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल आफिस रेकर्ड्स : सी० ओ० २१९/१२१

---

१. यह १४-९-१९०७ के **इंडियन ओपिनियन**में छपा था। इसकी एक प्रतिलिपि श्री रिचने ७ अक्टूबरको भारत उपमन्त्रीको भेजी थी।

२. पंजीयकने इसका उत्तर दिया था कि "चूँकि इन लोगोंको कोई ऐसी जगह नहीं मालूम थी जहाँ वे रह सकें", इसलिए उनको पुलिसकी कोठरीके उपयोगकी अनुमति दी गई थी, और पुलिसका यह कार्य बिल्कुल भारतीयोंके हितमें था। आवश्यक व्यवस्था होनेपर ये लोग बादमें डर्बनको रवाना हो गये; देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ २७०।

१८०. न घरके न घाटके

हम अन्यत्र एक पत्र[1] छाप रहे हैं जो एशियाइयोंके पंजीयकको उन कतिपय भारतीयोंके बारेमें लिखा गया है, जो ट्रान्सवाल खाली कर देनेकी सूचना मिलनेपर और डेलागोआ-बेमें प्रवेश करते हुए, बाहर निकाल दिये गये हैं। उन लोगोंको ट्रान्सवालमें रहते हुए कमसे-कम एक महीनेके कारावासकी सजा होनेका खतरा है। उनका कहना है कि वे इतने गरीब हैं कि नेटाल जानेके जहाजी-पासोंके लिए रकमें जमा नहीं करा सकते। अब वे क्या करें? इसपर अपनी राय देनेसे पूर्व हम सरकारी जवाबके इन्तजारमें हैं। इसी बीच, जो तथ्य सामने आये हैं उनसे पता चलता है कि एशियाई पंजीयन अधिनियमका भारतीयोंके लिए क्या मतलब है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-९-१९०७

१८१. क्या दशा होगी?

यदि इतनी मेहनत करनेके बाद भारतीय कर्णधार तूफानी लहरोंको देखकर जेलकी लड़ाई रूपी नौका छोड़ देंगे तो क्या दशा होगी, इसका उदाहरण श्री रिचकी ओरसे प्राप्त पत्रसे सब समझ सकेंगे। फिर भी यह किस तरह, इसपर विचार कर लें।

दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिका हमपर विश्वास जम गया है। इसलिए वह समिति अब खुलेआम सहानुभूति बताने लगी है। समितिके नामसे श्री रिचने प्रधानमन्त्रीको पत्र[2] लिखा है। उसमें हम जो-कुछ माँग रहे हैं, उसका हू-ब-हू चित्र खींचा है। यह लड़ाई मामूली फेरफारके लिए नहीं लड़ी जा रही है। लोहेकी बेड़ीपर जरा-सा मुलम्मा चढ़ानेके लिए हम पानीके समान पैसा नहीं बहा रहे हैं। श्री रिचने साफ कहा है कि कानून रद किया जाना चाहिए। इसके अलावा और भी जो माँगें की हैं उन्हें पाठक ध्यानपूर्वक देख लें। अब किनारेपर पहुँची हुई नौकाको यदि भारतीय कर्णधार छोड़ देंगे तो उन्हें कितनी हाय लगेगी! वे भारतीयोंके नामके — भारतीयोंकी लाजके रखवाले हैं। उन्होंने आगसे बाजी लगाई है। उसमें यदि थोड़ा-बहुत चटका लगता है तो डरना नहीं चाहिए। डरेगा सो मरेगा।

'सटरडे रिव्यू' के सम्पादकने जो-कुछ कहा है उसपर विचार करें। यह बहुत ही प्रभावशाली और पुराना अखबार है। वह यद्यपि अनुदार दलका है, फिर भी जोरके साथ लिखता है कि भारतीय समाजने कानूनके वश न होने और जेल जानेका जो प्रस्ताव पास किया है, वह ठीक है। अंग्रेजी राज्य उन्हें छोड़ दे तो यह बड़ी बदनामीकी बात होगी। यहाँतक पहुँच जानेके बाद क्या अब भारतीय नेता यह दिखायेंगे कि उनकी लड़ाई ऊपर

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. देखिए परिशिष्ट ५।

ही ऊपर थी? क्या अपने पैसेके लोभमें अंधे होकर वे हजारोंके पेटमें भाले भोंकेंगे और सारी प्रजाको जनानी और नकटी साबित करेंगे?

'नेशन' बहुत स्वतन्त्र अखबार माना जाता है। उसका उदार दलपर पूरा प्रभाव है। उसके नाम एक परिचित लिखावटवाले अंग्रेजने लिखा है कि भारतमें जितनी हाय-तोबा और नाराजी ट्रान्सवालके भारतीयोंपर होनेवाले जुल्मोंके कारण हो रही है उतनी और किसी बातसे नहीं हुई। इससे सिद्ध होता है कि इस लड़ाईमें यदि भारतीय कायर बनेंगे तो वे भारतको नुकसान पहुँचायेंगे। ट्रान्सवालके भारतीयोंने जो निश्चय किया है और जिसके बारेमें इतना प्रचार हुआ है, वैसा पहले कभी भारतमें भी नहीं हुआ। अतः भारतीय नेताओंके लिए बहुत जरूरी है कि वे अपनी जिम्मेदारी समझें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-९-१९०७

१८२. "कानूनके सामने मोम"

प्रिटोरिया आदि नगरोंके "अग्रणी भारतीयों" की ओरसे जो अर्जी[1] भेजी गई है उसे हम बहुत शर्म और अफसोसके साथ इस अंकमें प्रकाशित कर रहे हैं। इस कदमको हम बहुत कमजोर मानते हैं, और इसका मुख्य दोष श्री हाजी कासिमको देते हैं। उनका नाम प्रत्येक भारतीय मण्डलमें आता रहता है इसलिए उसे प्रकाशित करनेमें हमें झिझक नहीं है, बल्कि प्रकाशित करना हम एक कर्तव्य समझते हैं। यद्यपि हम श्री हाजी कासिमको दोष दे रहे हैं फिर भी हम समझते हैं कि उनकी जैसी स्थितिके दूसरे भारतीय इस प्रकार कदापि न करते, सो नहीं कहा जा सकता। इसलिए उनकी बदनामीको हम सभीकी बदनामी समझते हैं।

अर्जीकी भाषा दीनताभरी और गुलामोंको फबनेवाली है। हम "कानूनके सामने मोम" हैं इस प्रकारके शब्दोंका उपयोग करनेमें, हम समझते हैं, हमने खुदाके प्रति अपराध किया है। हमारी बागडोर थामनेवाला वह एक ही है, तब उसीको शोभा देनेवाली भाषा हम अत्याचारी शासकोंके लिए कैसे बरत सकते हैं?

जो माँगें की गई हैं वे बेसिर-पैरकी हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि वास्तविक लड़ाईको हमने समझा ही नहीं है। ऐसा ही लेख हम पहले भी दे चुके हैं।[2]

अब हम श्री हाजी कासिम तथा उनके साथियोंसे इतना ही पूछते हैं कि क्या उनकी समझमें इतनी-सी बात नहीं आती कि उनकी तुच्छ अर्जीके कारण भारतीयोंकी प्रतिष्ठा घटती है और उनकी टेकको धक्का पहुँचता है? यदि यह बात ठीक हो तो ऐसा काम करनेके बाद बचे हुए पैसेको वे किस कामका मानेंगे? इसलिए अब भी यदि समय हो तो हमारी उनसे विनती है कि समाजकी भलाईके लिए वे अपना बलिदान दें। क्या जैसे सरकार भारतीयोंकी अर्जी नहीं सुनती श्री हाजी कासिमकी सरकार भी नहीं सुनेगी?

१. यहाँ नहीं दी गई है।
२. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ २२३-२६।

यदि ऐसा ही हो तो, श्री हाजी कासिमकी प्रजासे, यानी उनके शब्दोंपर चलनेवाले भारतीयोंसे, हमारा कहना है कि इस समय दूसरोंकी ओर न देखकर अपनी ही हिम्मत और खुदापर नजर रखनी है। हरएकको किसी भी भारतीयका पक्ष न लेकर खुदाका पक्ष लेना है। उसीके हाथमें अपनी लाज और आबरू रखकर जमकर काम करना है। हमें आशा है कि प्रत्येक भारतीय स्वतन्त्र रूपसे विचार करेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-९-१९०७

१८३. रिचका प्रयास

श्री रिचने हद कर दी है। उनका परिश्रम अगाध है। उन्होंने 'टाइम्स' के नाम एक पत्र लिखा था जो तारसे प्राप्त हुआ है। उसका अनुवाद[1] अन्यत्र दिया गया है। वह पढ़ने योग्य है।

एक ओरसे कोई-कोई भारतीय लड़ाई छोड़कर ढीले पड़ने लगे हैं। दूसरी ओरसे श्री रिच और समिति हमारे लिए पूरी ताकतसे प्रयत्नरत हैं। श्री रिचके पत्रपर टीका करते हुए 'लन्दन टाइम्स' ने ट्रान्सवाल सरकारको जो कोड़े लगाये हैं उनका प्रभाव होना ही चाहिए। विलायतमें जब इतने सुन्दर ढंगसे लड़ाई की जा रही है तब ट्रान्सवालके भारतीयोंको तो हिल-मिलकर साहसके साथ खुदापर भरोसा रखकर अपने निर्णयको निबाहना ही है। यह स्पष्ट हिसाब है। हमारी प्रार्थना है कि इस बातको कोई भारतीय न भूले।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-९-१९०७

१८४. भारतीयोंकी परेशानी

चार भारतीयोंको ट्रान्सवाल छोड़नेका आदेश दिया गया था। डेलागोआ-बे जाते हुए उनको ट्रान्सवालकी सीमासे आगे नहीं बढ़ने दिया गया और जेलमें रखकर उन्हें बड़ा कष्ट पहुँचाया गया। इसके बारेमें श्री गांधीने पंजीयकको पत्र[2] भेजा है। वह हमने अन्यत्र दिया है। ये लोग ट्रान्सवालसे बाहर जानेके लिए राजी हैं, फिर भी जा नहीं सकते। यदि ट्रान्सवालमें रहते हैं तो एक महीनेकी जेलकी सजाके पात्र बनते हैं। इस हालतमें वे क्या करें? भारतीयोंको ढीला समझकर सरकार उन्हें परेशान करना चाहती है, इसके सिवा इसका और क्या अर्थ हो सकता है? एशियाई पंजीयन कानूनको लागू करके सरकार क्या करना चाहती है यह इस मामलेसे साफ हो जाता है। क्या भारतीय लोग अब भी नरम रहकर यह सब सहन करते रहेंगे?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-९-१९०७

१. यहाँ नहीं दिया गया।

२. देखिए "पत्र: एशियाई पंजीयकको", पृष्ठ २२७।

१८५. कानूनका विरोध — एक कर्तव्य [२]

इस शीर्षकसे थोरोके लेखका कुछ भाग[1] हम दे चुके हैं। शेष निम्न प्रकार है:

समझदार व्यक्ति मर्दकी तरह ही काम करेगा। दूसरेके हाथका खिलौना नहीं बनेगा। अमेरिकाके इस शासनको टिकाये रखनेका जो मनुष्य प्रयत्न करता है उसे नामर्द समझा जाये। जो राज्य गुलामोंपर शासन करता है उसे मैं अपना राज्य नहीं मान सकता। जब बहुत अत्याचार हो तब अत्याचारी राज्यका मुकाबला करना मनुष्य जातिका अधिकार है। कुछ लोगोंका कहना है कि अमेरिकाका वर्तमान शासन उतना अत्याचारी नहीं है। अर्थात् स्वयं उनपर आक्रमण नहीं हो रहा है। और यदि दूसरोंपर हो रहा है, तो ऐसा कहनेवालोंको इस बातकी परवाह नहीं है।

जिस प्रकार प्रत्येक यंत्रमें थोड़ा-बहुत जंग[2] लगा रहता है उसी प्रकार प्रत्येक शासनमें जंग रहता है। उस जंगको दूर करनेके लिए विरोध करनेकी आवश्यकता भले कभी न पड़े, परन्तु जब जंग ही यंत्र बन जाये, जब जुल्म ही कानूनका रूप ले ले तब वह राज्य मर्दोंको बर्दाश्त नहीं हो सकता।

प्राण देना पड़े तब भी न्याय एवं सत्यका पालन करना चाहिए। मैंने यदि डूबते हुए व्यक्तिसे तूंबा छीन लिया हो, तो मुझे अपनी जान देनी पड़े तब भी वह तूंबा उसे वापस देना चाहिए। उसी प्रकार यदि अमेरिकाका राज्य डूबता हो तब भी गुलामोंको मुक्त किया जाना चाहिए।

हम कहा करते हैं कि किसी काममें सुधार करनेके लिए लोग हमेशा तैयार नहीं होते। परन्तु सुधार करनेमें हमेशा समय लगता है; क्योंकि सुधारक लोग, जो ज्यादा नहीं होते, एकदम बहादुर नहीं बन जाते। इस बातकी चिन्ता नहीं कि आपके जैसे सभी मनुष्य भले नहीं बन सकते। किन्तु समाजमें कुछको तो बिलकुल स्वच्छ होना चाहिए। जिस प्रकार खमीरकी एक बूंद सारी रोटीको खमीर चढ़ा देती है, उसी प्रकार वे अपनी सात्विकता समाजपर चढ़ा देते हैं। ऐसे तो हजारों हैं जो विचारसे गुलामीके विरुद्ध हैं परन्तु व्यवहार बिलकुल उलटा करते हैं। वे सब वॉशिंग्टनके वंशज कहलाते हैं; परन्तु जेबमें हाथ डाले हुए मौज उड़ाते रहते हैं। अधिक किया तो अर्जियाँ और भाषण दे दिया करते हैं।

संसारमें सत्यके पीर — माननेवाले — तो हजारमें नौ सौ निन्यान्वे व्यक्ति होते हैं, आचरण करनेवाला एक ही होता है। किन्तु सत्यको माननेवालेसे सत्यका आचरण करने-वालेका, भले वह एक हो तो भी, मूल्य अधिक होता है। खजानेकी रक्षा करनेवाले बहुतेरे खड़े हों तो भी वे उसमें से एक पाई भी नहीं दे सकते, जबकि मालिक एक ही हो तो वह सारा खजाना लुटा सकता है।

मनुष्य सत्यके पक्षमें मत दे तो वह सत्यका आचरण करनेके बराबर नहीं है। जब बहुत-से लोग गुलामी रद करनेके लिए मत दें तब यह समझिये कि गुलामी रद करना

१. देखिए "कानूनका विरोध — एक कर्तव्य [१]", पृष्ठ २२०-२२।

२. गांधीजीने 'फ्रिक्शन' (घर्षण) के लिए इस शब्दका प्रयोग किया है। देखिये उद्धरण, "सक्रिय अवज्ञाका धर्म", पृष्ठ २१५।

शेष रहा ही नहीं। उससे यह समझना चाहिए कि रद करनेवाले सच्चे व्यक्ति उसकी नींव पहले ही डाल चुके थे।

मैं यह नहीं कहता कि प्रत्येक मनुष्यको जहाँ कहीं भी झूठ दीख पड़े, उसे दूर करना ही चाहिए। किन्तु इतना मैं निश्चित रूपसे कहता हूँ कि उसे स्वयं तो असत्यमें हाथ बँटाना ही न चाहिए। निश्चय कर लेनेके बाद जबतक मनुष्य-मात्र उसके अनुसार आचरण नहीं करता, तबतक उसमें क्या मजा आयेगा?

यदि कोई मेरा माल चुराकर ले जाता है, तो मैं यह कहकर नहीं बैठा रहता कि यह चोरी हुई सो ठीक नहीं हुआ, बल्कि चुराये गये मालको वापस प्राप्त करने और दुबारा चोरी न हो इसके लिए प्रयत्न करता हूँ। जो मनुष्य अपने कथनके अनुसार आचरण करता है वह और ही प्रकारका बनता है। वह न देशकी परवाह करता है, न सगे-सम्बन्धीकी परवाह करता है, न मित्रोंकी, बल्कि सत्यकी सेवा करते हुए उपर्युक्त सभी लोगोंकी सेवा करता है।

हम स्वीकार करते हैं कि कानून अत्याचारपूर्ण है। क्या हम उसका विरोध करेंगे? साधारणतया लोग कहते हैं कि जब बहुमत उन कानूनोंको नापसन्द करेगा तब वे रद होंगे। उनका कहना है कि यदि वे विरोध करें तो कानूनसे होनेवाली बुराईकी अपेक्षा विरोधसे उत्पन्न बुराई अधिक बुरी होगी। किन्तु वैसा हो तो वह दोष विरोध करनेवालेका नहीं है, अधिकारीका है।

मैं बेखटके कह सकता हूँ कि मैसाच्युसेट्समें गुलामीके विरुद्ध, भले वह एक ही मनुष्य हो, उसे गुलामीको बनाये रखनेमें कर देकर अथवा और किसी भी तरहसे मदद नहीं करनी चाहिए। दूसरे उसकी राय नहीं अपनाते तबतक उसे खराब काम नहीं करते रहना चाहिए। क्योंकि वह अकेला नहीं है। खुदा सदा उसके साथ है। यदि मैं दूसरोंकी अपेक्षा सच्चा हूँ तो मैं उन सभीकी तुलनामें बढ़कर हूँ। मुझे हर वर्ष एक बार इस राज्यका अनुभव होता है। मेरे पास कर लेनेवाला आता है। उस समय मुझे कर देनेसे इनकार कर ही देना चाहिए।

मैं जानता हूँ कि इस मैसाच्युसेट्समें एक ही सच्चा वीर गुलामीके विरोधके निमित्त कर न देकर जेल जाये तो उसी दिनसे गुलामीकी बेड़ी टूटने लग जायेगी। जो चीज सही तरीकेसे की जाये उसे ही वास्तविक रूपमें सफल माना जायेगा। किन्तु हम तो लम्बी-लम्बी बातें करके मान लेते हैं कि बातें करना ही हमारा काम है। गुलामी समाप्त करनेके आन्दोलनका समर्थन करनेवाले बहुतसे समाचारपत्र हैं, परन्तु उनमें मर्द एक भी नहीं है।

जिस राज्यमें लोगोंको गलत आधारपर जेलमें रखा जाता है उस राज्यमें न्यायी और भले लोगोंका घर जेल है। इसलिए मैसाच्युसेटमें भले मनुष्योंको आज जेलमें होना चाहिए। जिस राज्यमें गुलामीकी प्रथा हो वहाँ मनुष्य जेलमें ही स्वतन्त्र है। वहीं उनकी प्रतिष्ठा है। जो लोग यह मानते हैं कि भले मनुष्य यदि जेल चले जायेंगे तो पीछे अन्यायके विरोधमें आन्दोलन करनेके लिए कोई नहीं रहेगा, उन्हें पता नहीं है कि आन्दोलन किस प्रकार चलता है, न उन्हें इस बातका ही भान है कि सत्य असत्यसे कितना जोरदार होता है। जेल भोगनेवाले तथा अन्यायके जुल्मका अनुभव करनेवाले जेलमें रहकर जितना काम कर सकेंगे उतना जेलसे बाहर रहकर नहीं कर सकते। विरुद्ध राय रखनेवाले थोड़ेसे लोग जबतक दूसरी तरफके बहुमत समाजके साथ घुले-मिले रहेंगे तबतक उन्हें विरुद्ध विचारके नहीं कहा जा सकता। उन्हें तो अपनी सारी शक्ति विरुद्ध गति पैदा करनेमें लगानी चाहिए।

मैं अपने पड़ोसियोंसे बातचीत करता हूँ तो उनके कथनसे पता चलता है कि उन्हें भय है, यदि वे विरोध करें तो उनका सब-कुछ चला जायेगा और उनके पत्नी-बच्चे दर-दरकी ठोकरें खायेंगे। यदि मुझे स्वयं अपने लिए या अपने परिवारके लिए राज्यपर निर्भर रहना पड़े तो मैं निराश हो जाऊँगा।

मुझे लगता है कि अत्याचारी राज्यके सामने झुकना लज्जाजनक है। उसका विरोध करना आसान और अच्छा है। आज छः वर्षसे मैंने कर नहीं दिया। इस कारण एक बार एक रातके लिए मुझे जेलमें रखा गया था। मैंने जब इस कैदखानेकी दीवारों और लोहेके दरवाजोंको ध्यानसे देखा तब मुझे राज्यकी मूर्खताका अनुमान हुआ। क्योंकि मुझे कैद करनेवालोंकी तो यही धारणा होगी कि मैं केवल हड्डी और मांसका बना हुआ हूँ। वे मूर्ख यह नहीं जानते कि मैं दीवारोंसे घिरा हुआ होनेपर भी औरोंकी अपेक्षा मुक्त हूँ। मुझे नहीं लगा कि मैं कैदमें हूँ। मुझे तो यही लगा कि जो बाहर हैं उन्हींकी स्थिति कैदीकी है। वे मुझ तक नहीं पहुँच सके इसलिए उन्होंने मेरे शरीरको सजा दी। ऐसा करनेसे मैं अधिक मुक्त हो गया और राज्य-शासनके प्रति मेरे विचार और भी भयंकर बन गये। मैंने देखा कि छोटे बालक जब किसी मनुष्यका कुछ नहीं बिगाड़ सकते तब उसके कुत्तेको सताते हैं। उसी प्रकार राज्य मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता इसलिए मेरे शरीरको तकलीफ देता है।

मैंने यह भी देखा कि शरीरको तकलीफ देनेमें भी राज्य डरता था। इसलिए राज्यके प्रति मेरे मनमें जो कुछ सम्मान था वह चला गया।[1]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–९–१९०७

१८६. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

अभागे भारतीय

भारतीय जहाँ भी हों वहीं उनकी दुर्दशा है। अभी अमेरिकासे आवाज आई है कि वॉशिंग्टनमें काम करनेवाले मजदूर भारतीयोंकी नामर्द गोरोंने पिटाई की है। उनमें से चार भारतीय जख्मी हुए हैं और शेषमें भगदड़ मची हुई है। मारनेवाले इन गोरोंको मैं नामर्द मानता हूँ। क्योंकि, उनमें से हजारों लोग निरपराध मजदूरोंपर चढ़ दौड़े, यह कोई बहादुरीका काम नहीं माना जायेगा। जो अपनेसे कमजोरपर जुल्म करता है वह नामर्द है। हमारी कहावत है कि कुम्हार नाराज होता है तो गधेके कान उमेठता है। ये नामर्द गोरे भी वैसे ही हैं। ये लोग चूंकि उन गोरोंका कुछ नहीं कर सकते जो इन भारतीयोंको नौकर रखते हैं, इसलिए नौकरोंपर अत्याचार करते हैं। बहादुर तो उसे ही कहेंगे जो अपनेसे ज्यादा बलवानका मुकाबला करता है।

वाशिंग्टनके महापौरने भारतीय मजदूरोंसे कहलवाया है कि वे उनकी रक्षा करेंगे, वे अब खुशीसे अपनी नौकरियोंपर वापस चले जायें। उन्होंने इन मजदूरोंकी रक्षाके लिए विशेष

१. इसके बाद यह सम्पादकीय टिप्पणी दी गई थी: 'चालू तथा गतांकमें आया हुआ यह लेख पुस्तिकाके रूपमें आगामी सप्ताहमें प्रकाशित होगा। मूल्य ६ पेनी, डाकखर्च सहित ७ पेनी'।

पुलिस तैनात की है। इससे महापौर महोदयकी प्रतिष्ठा बढ़ती है। यह भी खबर मिली है कि इंग्लैंडका वैदेशिक विभाग भी उनकी सार-सँभाल करता है।

इस हमलेका अर्थ इतना ही होता है कि भारतीय स्वयं बहादुर होंगे तभी विदेशोंमें निभा सकेंगे। गोरे तो हमेशा लातें मारते ही रहेंगे और उनसे बड़ी या दूसरी कोई सरकार उन्हें बचानेवाली नहीं है। जो भीरु होकर बैठ जायेंगे, उनकी खुदा भी सहायता नहीं करता। हम यदि शेर-चीतोंके बीच बसे तो दो ही बातें हो सकती हैं। सच्ची हिम्मत तो यह कहलायेगी कि उनसे डरा न जाये। शेर-चीतोंको भी भगवानने पैदा किया है। उनकी ओरसे निर्भय वही रह सकते हैं जो सच्चे बहादुर हैं; या फिर जो सच्चे भक्त हैं। सच्चे भक्त अपनी भक्ति द्वारा लम्बे समयमें यह सिद्धि प्राप्त कर सकते हैं। दूसरे वर्गकी हिम्मत है — शेर-चीतोंके सामने हथियार लेकर खड़े होना। उसमें भी शरीरकी जोखिम तो उठानी पड़ती ही है। गोरोंके बीच बसनेवालोंकी स्थिति ऐसी ही है, और आगे भी ऐसी ही रहेगी। जिन लोगोंको इसका भय हो, उन्हें अपने पेटके लिए परदेश नहीं जाना चाहिए। इसका मतलब यह हुआ कि हमें साधारणतः दूसरे वर्गकी हिम्मतकी जरूरत है। श्रीमती एनी बेसेंटकी[1] नीतिके अनुसार छोटे-बड़े सभी भारतीयोंको कुश्ती आदि व्यायाम सीखकर शरीरसे स्वस्थ बनना चाहिए। यह तभी हो सकता है जब हमारे मनमें स्वाभिमानकी भावना जागे और हम भी मर्द हैं, इसका भान हो।

पोलकका पत्र

'स्टार' समाचारपत्रमें एक अंग्रेजी लिखनेवाले भाईने लिखा है कि भारतीय व्यापारी कुल मिलाकर और दूसरोंकी तुलनामें विश्वसनीय हैं। इसलिए उन्हें गोरे व्यापारी रकम दिया करते हैं। लेकिन इस पत्र-लेखकने यह भी कहा है कि चूँकि भारतीय व्यापारियोंके पैसोंका उपयोग ट्रान्सवालमें नहीं होता, इसलिए उन्हें निकालकर बाहर कर देना चाहिए। इसके उत्तरमें श्री पोलकने एक लम्बा पत्र लिखा है। उसमें उन्होंने बताया है कि भारतीयोंको भूमि सम्बन्धी और दूसरे अधिकार नहीं हैं इसलिए उनके पैसेका ज्यादा उपयोग इस देशमें नहीं होता। उन्होंने इसका उदाहरण दिया है कि पॉचिफस्ट्रूमके अग्निकाण्डके समय जो चन्दा एकत्रित किया गया था उसमें मदद देनेके लिए भारतीयोंने क्या कहा था। समूचे भारतीय प्रश्नकी उन्होंने अच्छे ढँगसे चर्चा भी की है।

पंजीयन कार्यालय

पंजीयन कार्यालयकी यात्रा होती ही रहती है। दूसरे गाँवोंको अब बधाई देनेकी भी आवश्यकता नहीं रही। सर्वत्र एक ही हलचल चल रही है। सभी लोग अनुमतिपत्र कार्यालयका बहिष्कार कर रहे हैं। यह कदम सही रहा है। इसमें अब ज्यादा हिम्मत करनेकी जरूरत नहीं। जो अन्तिम कसौटीपर खरे उतरेंगे वे बधाईके पात्र होंगे।

अफवाहें

आये दिन तरह-तरहकी अफवाहें उड़ा करती हैं। कोई कहता है मेमनोंने पंजीयनपत्र ले लिये हैं; कोई कहता है कोंकणी कायर हो गये हैं; फिर कोई कहता है कि प्रिटोरियामें

१. एनी बेसेंट, (१८४७-१९३३) सुप्रसिद्ध थियॉसॉफिस्ट, १९१७ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी अध्यक्ष; 'रिलीजस प्रॉब्लेम इन इंडिया' (भारतकी धार्मिक समस्या) तथा अन्य पुस्तकोंकी लेखिका।

पहुँचाते और उसका अकारण अपमान नहीं करते। एशियाई पंजीयन अधिनियमके बारेमें ब्रिटिश भारतीयोंको मेरे संघने बेशक यह सलाह दी है कि वे उसके आगे न झुकें; क्योंकि, मेरी नम्र रायमें, उनका प्रथम कर्तव्य यह है कि वे उस उच्चतर धर्मके आगे सिर झुकायें जो मानव-जातिको आत्मसम्मान और सच्चाई तथा गम्भीरतासे की हुई घोषणाओंका आदर करनेका आदेश देता है। पंजीयन अधिनियमको स्वीकार करनेसे, मेरी रायमें, भारतीयोंकी सारी मर्दानगी छिन जाती है और वे नास्तिक बनते हैं; और इस बुनियादी सवालकी ओर आपका ध्यान दिलानेके विचारसे ही १४ तारीखका पत्र आपकी सेवामें भेजा गया था। किसी जिम्मेदार ब्रिटिश भारतीयके लिए अँगुलियोंके निशान देनेसे बचनेके लिए समाजको जीवन-मरणके संघर्षमें उतर पड़ने और समस्त सांसारिक सम्पत्तिका त्याग कर देनेकी सलाह देना लड़कपन होगा।

मेरे संघको उस धमकीका पूरा पता है, जिसका आपने अपने भाषणमें, जो इस पत्र-व्यवहारका विषय है, इस्तेमाल करना उचित समझा है और जिसे आपने अपने इस पत्रमें भी दुहराया है। लेकिन मैं यह कहनेके लिए क्षमा चाहता हूँ कि उस धमकीका उन लोगोंपर कोई असर नहीं होगा जिन्होंने अपने-आपसे यह सत्य कभी नहीं छिपाया कि सरकार कानून पालन करानेकी शक्ति ही नहीं रखती बल्कि कह भी चुकी है कि वह पालन करायेगी। कानूनका इस तरह अमल कराना उसके लिए श्रेयस्कर होगा अथवा मेरे देशवासी यदि दृढ़ रहें तो अकारण कष्ट सहन करनेके कारण यह सारा श्रेय उन्हींको मिलेगा, यह ऐसा प्रश्न है जिसे भावी सन्ततिके निर्णयके लिए बखूबी छोड़ा जा सकता है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी
अवैतनिक मन्त्री
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–९–१९०७

१८८. तार : गो० कृ० गोखलेको

[जोहानिसबर्ग,
सितम्बर २१, १९०७ के पूर्व]

[सेवामें
गो० कृ० गोखले[1]
कलकत्ता]

तारके[2] लिए ब्रिटिश भारतीय संघका धन्यवाद। बहुत प्रोत्साहन मिला। प्रतिष्ठा, धर्म और गम्भीरतापूर्वक ली गई शपथको रखनेके लिए अन्ततक लड़ेंगे। जितनी सहानुभूति मिल सके सब चाहिए। सब दलोंकी सर्वसम्मत स्वीकृति और सहायता माँगते हैं। संघर्ष अबाध प्रवेशका नहीं; बल्कि जो यहाँ रहने और आनेके अधिकारी हैं उनके आत्मसम्मानका है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-९-१९०७

१८९. भीमकाय प्रार्थनापत्र[3]

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर २१, १९०७ के पूर्व]

सेवामें
माननीय उपनिवेश सचिव
प्रिटोरिया

महोदय,

हम नीचे हस्ताक्षर-कर्ता ट्रान्सवालवासी भारतीय उस पत्रसे अपना पूर्ण मतभेद प्रकट करते हैं जो आपको प्रिटोरिया, पीटर्सबर्ग, स्टैंडर्टन और मिडलबर्गके कुछ प्रमुख भारतीयोंकी ओरसे स्टैगमैन एसेलेन और रूजकी पेढ़ीने ३० अगस्त १९०७ को एशियाई कानून संशोधक विधेयक संख्या २ सन् १९०७ के सम्बन्धमें भेजा है।

१. महान भारतीय राजनीतिज्ञ माननीय गोपाल कृष्ण गोखले (१८६६-१९१५)। देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४१७-१८।

२. देखिए "भारतसे कुमुक", पृष्ठ २४३-४४।

३. हस्ताक्षरोंके लिए यह प्रार्थनापत्र हिन्दी, गुजराती, तमिल तथा अंग्रेजीमें प्रसारित किया गया था, ऐसा प्रतीत होता है। यह वस्तुतः १ नवम्बरको ४,५५२ भारतीयोंके हस्ताक्षर करवानेके बाद दिया गया था, देखिए "पत्र: उपनिवेश-सचिवको", पृष्ठ ३२०-२१।

हम सादर निवेदन करते हैं कि जो विषम स्थिति उत्पन्न हो गई है उसका प्रतिकार केवल इस अधिनियमको पूरी तरह रद करनेसे ही हो सकता है, उससे कम किसी कार्रवाईसे नहीं। हमारी विनीत सम्मतिमें अधिनियम हमारे आत्मसम्मानको गिराने तथा हमारे धर्मोंपर प्रहार करनेवाला है और इसको खतरनाक मुजरिमोंके सम्बन्धमें ही लागू करनेका खयाल किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त हमने जो गम्भीर शपथ ली है उसके कारण हमारे लिए, साम्राज्यके सच्चे नागरिकों और ईश्वरसे भय करनेवाले लोगोंके रूपमें, अधिनियमके विधानके सम्मुख न झुकना आवश्यक हो गया है, भले ही हमें इसके परिणाम कुछ भी क्यों न भुगतने पड़ें; और जो, हम समझते हैं, जेल, निर्वासन, और हमारी जायदादकी बरबादी या जप्ती या इनमें से कोई भी हो सकते हैं।

हमने यह ऊपरकी बात इसलिए नहीं कही है कि हम बड़े पैमानेपर ब्रिटिश भारतीयोंके गुप्त प्रवेशके आरोपोंकी जाँच कराना नहीं चाहते, या उन कागजातको पास रखनेसे इनकार करते हैं जिनसे सरकारकी सम्मतिमें हमारी काफी शिनाख्त हो सकती है।

इसलिए हम सादर प्रार्थना करते हैं कि सरकार कृपा करके ट्रान्सवालके भारतीयोंको मनुष्योंके रूपमें और इस स्वतन्त्र एवं स्वशासित उपनिवेशके योग्य नागरिकोंके रूपमें मान्यता दे।

आपके आज्ञाकारी सेवक,

उक्त प्रार्थनापत्रपर हस्ताक्षर प्राप्त करनेके सम्बन्धमें निर्देश :

१. सब हस्ताक्षर स्याहीसे किये जायें।
२. प्रत्येक कागजपर ५० व्यक्तियोंके हस्ताक्षरोंकी जगह है। इसलिए प्रत्येक कागजपर ५० से अधिक व्यक्तियोंके हस्ताक्षर न लिये जायें।
३. हस्ताक्षर दो प्रतियोंपर लिये जायें।
४. पतेके खानेमें गलीकी और जहाँ सम्भव हो बाड़ेकी क्रम-संख्या दें। जिस शहरमें हस्ताक्षर कराये जायें उसका नाम केवल एक बार दिया जा सकता है।
५. कागजको मैला न होने देनेकी बहुत सावधानी रखी जाये।
६. हस्ताक्षर यथासम्भव ऐसे किये जायें कि वे स्पष्ट पढ़े जा सकें। जो नाम अंग्रेजीमें न हों, उनको हस्ताक्षर करानेवाला व्यक्ति नीचे अंग्रेजीमें लिख दे। जहाँ हस्ताक्षरकर्ता केवल गुणाका चिह्न लगाये वहाँ हस्ताक्षर करानेवाला व्यक्ति उस गुणाके चिह्नकी साक्षी दे।
७. हस्ताक्षरकर्ताओंको प्रार्थनापत्र पढ़ाये बिना, या यदि वह कोई भाषा न पढ़ सकता हो तो उसको पढ़कर सुनाये बिना, हस्ताक्षर कदापि न कराये जायें।
८. हस्ताक्षर करानेवाला व्यक्ति कागजके नीचे अपने हस्ताक्षरोंके लिए गिनी हुई रेखापर हस्ताक्षर करे।
९. दोनों प्रतियाँ यथासम्भव शीघ्र मन्त्री, ब्रिटिश भारतीय संघ बॉक्स ६५२२, जोहानिसबर्गको भेज दी जायें।

१०. सब हस्ताक्षर अधिकसे-अधिक ३० सितम्बर तक भेज दिये जायें।

११. लोगोंपर कोई दवाव न डाला जाये और जो विलकुल अन्ततक अधिनियमको न माननेके निश्चयका पालन करनेके लिए तैयार न हो, उसको हस्ताक्षर करनेकी आवश्यकता नहीं है।

१२. कागजोंकी घड़ी वनाई न जाये, वल्कि वे पुलिन्दा वनाकर रखे जायें और पुलिन्देके रूपमें ही भजे भी जायें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–९–१९०७

१९०. भीमकाय प्रार्थनापत्र

ट्रान्सवालके भारतीय सरकारको एक भीमकाय प्रार्थनापत्र देनेका आयोजन करनेके लिए वधाईके पात्र हैं। पिछले सप्ताह दुर्भाग्यसे हमें जो पत्र[1] उद्धृत करना पड़ा था, उसका यह पूरा जवाव है। प्रार्थियोंने हमेशाके लिए मुख्य मुद्देको, जहाँतक सम्भव हो सका है, संक्षेपमें लिपिवद्ध कर दिया है। उन्होंने स्पष्ट किन्तु आदरपूर्ण भाषामें स्थानीय सरकारको आगाह कर दिया है कि सिवा एशियाई पंजीयन कानूनको वापस लेनेके किसी और तरह इस मुसीवतसे पार पा जाना सम्भव नहीं है। इसके साथ ही वे यह भी कहते हैं कि कानूनको वापस लेनेकी दरखास्तका यह मतलव नहीं है कि वे एशियाइयोंके चोरीसे भर आनेके इल्जामकी जाँचसे डरते हैं। और न वे उन अनुमतिपत्रोंको, जो इस समय उनके पास हैं, वदलनेसे इनकार ही करते हैं। इसलिए वुनियादी मुद्दा यह है कि भारतीय लोग साम्राज्यके आत्माभिमानी नागरिक स्वीकार किये जायें या नहीं। हमारे सहयोगी 'स्टार'ने अभी उस दिन भारतीयोंको ताना दिया था कि उन्होंने अपने इंग्लैंडके मित्रोंको आन्दोलनके सही मुद्देसे गुमराह कर दिया है; और उसने वताया था कि व्रिटिश भारतीय सिर्फ अँगुलियोंके निशान देनेके खिलाफ लड़ रहे हैं। जव 'स्टार'ने यह लिखा था, लगभग तभी श्री रिचने, जो दक्षिण आफ्रिका व्रिटिश भारतीय समितिके अथक परिश्रम करनेवाले मन्त्री हैं, इस वारेमें 'लंकाशायर डेली पोस्ट' को एक पत्र लिखा था। उसमें से निम्नलिखित अंश हम यहाँ दे रहे हैं:

> **वेशक यह सच है कि एशियाई पंजीयन कानून यह चाहता है कि व्रिटिश भारतीय और अन्य एशियाई शिनाख्तके लिए पंजीयन करायें। और इस कानूनको लागू करनेकी शर्तोंमें दसों अँगुलियोंके निशानोंका देना भी शामिल है, जो एक ऐसी एहतियात है जिसका सम्वन्ध पूर्ण रूपसे अपराधियोंसे है। लेकिन इस कानूनकी वजहसे ट्रान्सवालके हमारे भारतीय साथियोंको जिस अपमानका वोझ उठाना पड़ता है उसे पूरी तरहसे समझनेके लिए यह जान लेना जरूरी है कि यह खास अपमान एक संयोगमात्र है और अगर हम उस वड़े सिद्धान्तसे इसकी तुलना करें जिसके अनुसार साम्राज्यकी सभ्य प्रजा होनेके नाते ट्रान्सवालके व्रिटिश भारतीय समाजको सभ्य व्यवहार पानेका अधिकार है, तो यह इतनी महत्त्वकी नहीं प्रतीत होगी। और इस कारण भारतीय उन मौलिक**

१. यह संकेत सर्वश्री स्टेगमान, एसेलेन और रूज द्वारा लिखे गये पत्रकी ओर है। देखिए पिछला शीर्षक।

अधिकारोंमें दस्तंदाजी और उनके छिननेकी आशंका होनेपर अपने शासकोंसे उनकी रक्षाकी आशा रखते हैं।

भारतीयोंका दावा इससे अधिक स्पष्ट भाषामें पेश नहीं किया जा सकता।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-९-१९०७

१९१. वीनेन परवानेकी अपील

ऐसा कभी-कभी ही होता है कि व्यापारिक परवाना अधिकारियों और परवाना निकायके निर्णयोंसे हम सहमत हो सकें, लेकिन हमें स्वीकार करना पड़ेगा कि श्री भायातका मामला[1] कठिन था तब भी परवाना अधिकारी और निकायका निर्णय सिद्धान्त रूपमें निर्दोष था। परवाना अधिकारी श्री इन्ग्रामने अपने निर्णयके पक्षमें पूरी और स्पष्ट दलीलें दी थीं और हमें भी उनके इस कथनपर विश्वास है कि अगर प्रजातिकी दृष्टिसे स्थिति इससे उलटी होती तो भी उनका निर्णय यही होता। उपनिवेशमें जिस पूर्वग्रहका बोलबाला है उसको देखते हुए हमारे देशवासियोंको यह बात पक्की तरह समझ लेनी चाहिए कि दक्षिण आफ्रिकामें नहीं तो कमसे-कम नेटालमें उनके लिए अबाध व्यापारकी सहूलियतें मिलना असम्भव है। हमारी रायमें कमसे-कम जिस सुविधाका आश्वासन दिया जा सकता है, और जिसपर किसी भी कीमतपर जोर देना चाहिए, वह यह है कि मौजूदा परवानोंकी पवित्र वस्तुकी भाँति हिफाजत की जाये; लेकिन नई अर्जियोंके बारेमें, जैसी कि हमारी समझमें श्री भायातकी अर्जी थी, यही कह सकते हैं कि स्थानीय लोकमत, परवानोंके वितरण और मांग तथा उसकी पूर्तिकी मात्रासे परवाना अधिकारीको बहुत-कुछ मार्गदर्शन मिलना चाहिए। इसमें शक नहीं कि कानूनकी सहायताके बिना भी किसी जातिके लिए यह छूट है कि वह किसी भी वर्ग या कितने ही व्यापारियों या दूसरोंका, जिन्हें वह नहीं चाहती, बहिष्कार कर दे। लेकिन जब द्वेषकी आगको भड़कानेके लिए कानूनकी मदद ली जाती है, तब बहिष्कार असहनीय हो जाता है और उस बुराईको दूर करनेके लिए और मजबूत हाथोंकी जरूरत होती है। साथ ही, श्री भायातके जैसे मामले बिना सहानुभूति उत्पन्न किये नहीं रह सकते। यहाँ एक ऐसा व्यक्ति सामने आता है, जिसका सब वर्गोंके लोग आदर करते हैं, जो एक लम्बे अर्सेसे योग्य व्यापारी रहा है, जिसने ब्रिटिश सरकारकी, उसी प्रदेशमें जिसमें वह व्यापारी-परवाना चाहते हैं, काफी मदद की है और ऐसी कोई नैतिक या आर्थिक बात नहीं है, जिसकी बिनापर उनकी अर्जी नामंजूर कर दी जाये। लेकिन जहाँ विरोधी स्वार्थ उठ खड़े होंगे और जहाँ निजी स्वार्थको सामने रखकर कोई खास नीति अपनाई जायेगी, वहाँ ऐसे कठिन मामले हमेशा होते रहेंगे। इसलिए इसके शिकार होनेवाले लोगोंके लिए यही दूरदर्शिता है कि वे वस्तुस्थितिको पहचानें और अपनी ताकतको इस तरह साधें कि अपने मौजूदा अधिकार और आत्मसम्मानके अपहरणका मुकाबला कर सकें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-९-१९०७

१. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ३००-१, ३२८-९ और ३८८-९।

१९२. ट्रान्सवालकी लड़ाई

इस वार हमने श्री रिच द्वारा भेजे गये पत्रोंका अनुवाद दिया है। उसपर प्रत्येक पाठकको पूरा ध्यान देना चाहिए। विलायतके नये कानूनके सम्बन्धमें वहुत वड़ी लड़ाई चल रही है। इस लड़ाईकी जड़में केवल भारतीयोंका साहस है। विलायतके मुख्य व्यक्तियोंको कुछ-कुछ भरोसा होने लगा है कि भारतीय जो-कुछ कह रहे हैं उसे करेंगे भी। ऋण-विधेयक (लोन विल) के समय भारतीय सवालोंको लेकर जैसी चर्चा हुई वैसी चर्चा हमने कभी नहीं देखी। यदि हम कहें कि दोनों पक्षोंके अधिकारोंके सम्बन्धमें इतने जोशसे वोलनेका पिछले पचास वर्षोंमें यह पहला उदाहरण है, तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। श्री लिटिलटन अनुदार दलके नेता हैं। वे कभी उपनिवेश मन्त्री थे। उन्होंने वहुत ही जोशसे हमारे हकोंका समर्थन किया था। सर चार्ल्स डिल्क सुविख्यात उदारदलीय सदस्य हैं। एक वार उनके प्रधान मन्त्री वननेकी सम्भावना थी। उन्होंने स्पष्ट कहा कि वड़ी सरकारको वीचमें आना ही चाहिए। इसके अतिरिक्त श्री वोनरला, श्री कॉक्स, श्री ओ० ग्रेडी आदि सदस्योंने जो भाषण दिये वे सव हमें प्रोत्साहित करनेवाले हैं।

समाचारपत्रोंको देखा जाये तो 'लन्दन टाइम्स', 'यॉर्कशायर पोस्ट', 'आब्जर्वर', और 'पाल माल गज़ट' आदि समाचारपत्रोंने हमारे पक्षमें सख्त लेख लिखे हैं। सर चार्ल्स ब्रूसने तो हद कर दी है। उन्होंने वड़ी सरकारको जवरदस्त तमाचा लगाया है।

भारतीय समाजने पंजीयन कार्यालयका वहिष्कार किया है। उतने ही से यदि यह सव हुआ है तो जव भारतीय ज़ुल्मी तरीकेसे जेल ले जाये जायेंगे तव क्या विलायत-भरमें शोर न मच जायेगा? फिर, सर हेनरीके उत्तरपर विचार करें तो भी स्पष्ट है कि उन्होंने वीचमें पड़नेसे इनकार नहीं किया है, वल्कि इतना कहा है कि फिलहाल वैसा समय नहीं आया है। इसका अर्थ यही होगा कि भारतीय समाज यदि आखिरतक जोर कायम रखकर जेल या निर्वासनका कष्ट सहन करेगा, तो वड़ी सरकार चुप नहीं वैठेगी। इन लक्षणोंसे भी, जिन्हें सरसरी तौरसे देखनेवाला व्यक्ति भी देख सकता है, यदि हम न समझें और हिम्मत न रखें तो हमारी जितनी वेइज्जती की जाये उतनी कम है। इसीके साथ हमें यह भी याद रखना चाहिए कि यदि हम इस लड़ाईको अव छोड़ देंगे तो जो शक्ति हमारे पक्षमें लगाई जा रही है वही शक्ति हमारे विरोधमें लगाई जायेगी। हमें इसमें खुदाका हाथ दिखाई दे रहा है। खुदा सदैव मनुष्य अथवा अन्य साधनोंके द्वारा ही मदद करता है। अत: भारतीयो, जागते रहो।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–९–१९०७

१९३. नेटालका परवाना कानून

वीनेनमें श्री भायातने परवाना निकायके सम्मुख परवानेके लिए अपील[1] की थी। खेद है कि उसमें वे हार गये। श्री भायातका मुकदमा बड़ा मजबूत था। वे वसीलेवाले व्यापारी हैं। लड़ाईमें उन्होंने सरकारको सहायता दी थी। उनके पास दौलत है। ऐसे व्यक्तिको, यह हो ही नहीं सकता कि किसी भी कानूनके अन्तर्गत, परवाना न मिले।

फिर भी हमें स्वीकार करना चाहिए कि परवाना निकायका निर्णय वर्तमान परिस्थितिको देखते हुए अन्यायी नहीं माना जा सकता। हम लोगोंको इतना याद रखना जरूरी है कि नेटाल अथवा दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय समाज बिलकुल स्वतंत्रतासे व्यापार नहीं कर सकता। परवाना-अधिकारी आसपासके लोगोंकी मनोदशाको और व्यापारियोंकी संख्याको देखकर भारतीय व्यापारीको परवाना दे अथवा न दे, वर्तमान स्थितिमें इसका विरोध करना निरर्थक है। समझदार मनुष्यका काम यह है कि परिस्थितिपर विचार करके कदम उठाये, और अपने आसपास जो घटनाएँ घटें उनका खयाल रखे। भारतीय समाजपर बहुतेरी आफतें टूट रही हैं। उनमें से किसको अधिक महत्त्व दिया जाये यह पहले ही निश्चित कर लेनेकी बात है। हमारे लिए इस समय मुख्य आवश्यकता प्रतिष्ठा की है। वह मिलेगी, तो और सब आसानीसे मिल जायेगा। प्रतिष्ठाकी रक्षा करते हुए जिन अधिकारोंका इस समय हम उपभोग कर रहे हैं उन्हें हमें बनाये रखना चाहिए। इसलिए इस समय जो परवाने वापस लिए गये हैं उनपर डटे रहें, और अन्य हानि सहन करके एवं जेलमें जाकर भी मौजूदा परवानोंको कायम रखें। यदि भारतीय समाज इतना प्रयास करेगा, तो हमें भरोसा है कि नये परवानोंका मार्ग अपने-आप निकल आयेगा। जबतक हमें कायर समझा जाता है, हमारी निश्चित राय है कि हमारे अन्य प्रयत्नोंका परिणाम कुछ भी नहीं होगा। इसका मतलब यह नहीं कि नये परवाने मिलेंगे ही नहीं। जहां परवाना अधिकारी दयालु होंगे, अथवा जहां गोरे खिलाफ न होंगे वहां निःसन्देह नये परवाने मिलते रहेंगे। इसका अर्थ यह है कि मित्रता या प्रीति वहां नहीं हो सकती जहां एक पक्ष दूसरेको नीचा समझता है। इसलिए पहला प्रयत्न यह करना होगा कि अपनी प्रतिष्ठाको बनाये रखकर हम मर्द बनें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–९–१९०७

१. देखिए "वीनेन परवानेकी अपील", पृष्ठ २८० ।

१९४. भारतीय सार्वजनिक पुस्तकालय

श्री शेलतने कुछ दिनों तक बड़े मनोयोगके साथ पुस्तकालयकी देखरेख की और अब दूसरी जगह जानेके कारण इस्तीफा दिया है। उनकी जगहकी पूर्ति श्री तार मुहम्मद सुमारने की है, और श्री जूसब उस्मानने उनकी सहायता करना स्वीकार किया है। हम इन दोनोंको बधाई देते हैं। समाजसे बिना कुछ लिए सामाजिक काम करनेवाले बहुतसे लोग सामने आने चाहिए। यह हमारी कमजोरीका लक्षण है कि हमें यह खयाल बना रहता है कि अमुक व्यक्तिके चले जानेके बाद काम किस तरहसे चलाया जा सकेगा। श्रम करने और नियमित रहनेकी दृष्टिसे श्री दीवानकी जगह भरना बहुत कठिन बात है, फिर भी हम आशा करते हैं कि श्री तार मुहम्मद तथा श्री जूसब उस्मानने जो काम लिया है, उसे वे पूरे मनोयोगके साथ करेंगे।

पुस्तकालय शिक्षणका एक प्रतीक है। यह सिद्ध करना जरूरी नहीं है कि उससे बहुत लाभ होता है; इसलिए इस पुस्तकालयको चलाते रहना हरएक भारतीयका कर्तव्य है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-९-१९०७

१९५. भारतसे कुमुक

माननीय प्रोफेसर गोखलेका समुद्री तार

माननीय प्रोफेसर गोखलेका नीचे लिखा समुद्री तार जोहानिसबर्ग ब्रिटिश भारतीय संघके नाम आया, सो हमें प्रकाशनार्थ प्राप्त हुआ है:

> **आपकी लड़ाई मैं सतत देखता रहता हूँ। चिन्तातुर होकर मन उधर ही लगा रहता है। अत्यन्त सहानुभूति है। लड़ाईकी तारीफ करता हूँ। दृढ़ मनसे खुदाकी मर्जीपर भरोसा रखना।**

माननीय प्रोफेसर गोखलेको हर भारतीय देशभक्त जानता है। वे भारतके केन्द्रीय विधान-मण्डलके सदस्य हैं। उनके तारसे प्रत्येक भारतीयको लाख गुना और जोश आना चाहिए। प्रोफेसर गोखलेने तार भेजा है, इसका अर्थ यह हुआ कि अब सारे भारतमें रंग जमेगा और भारत पूर्ण रूपसे मदद करेगा।

तारका उत्तर

तार मिलते ही ब्रिटिश भारतीय संघकी बैठक बुलाई गई। उसमें श्री ईसप मियाँ, श्री कुवाड़िया, श्री अहमद मूसाजी, श्री फैन्सी, श्री उमरजी साले, इमाम अब्दुल कादिर,

श्री मुहम्मद आदमजी, श्री अली उमर, श्री अहमद हलीम, श्री कासिम मूसा, श्री अलीभाई आकुजी, श्री शाह, श्री मूसाजी अहमद, श्री दाऊद इस्माइल, श्री अहमद ईसे, श्री इस्माइल सुलेमान, श्री डाह्या रामा, श्री कामा और श्री मोमणियात उपस्थित थे। प्रोफेसर गोखलेको निम्न तार[1] भेजनेका प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे स्वीकार किया गया :

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–९–१९०७

१९६. अँगूठा निशानीका कानून

इसमें और ट्रान्सवालके कायदेमें हाथी और घोड़े जैसा अन्तर है।[2]

सम्पादक
इंडियन ओपिनियन

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–९–१९०७

१. यहाँ "तार : गो० कृ० गोखलेको" का अनुवाद दिया गया है, देखिए पृष्ठ २३७।

२. गांधीजीने यह वाक्य गुजराती सान्ध्य दैनिक समाचारपत्र सांझ वर्तमानसे निम्नलिखित उद्धरण प्रस्तुत करते हुए लिखा था :

बम्बईमें अंगूठा निशानी

'बम्बई गजट' के 'पाठकोंके विचार' स्तम्भमें एक शिकायत की गई थी और वह हमने अपने पत्रमें उद्धृत की थी। शिकायत यह थी कि उच्च न्यायालयके पंजीयन विभागको लक्ष्यमें रखकर एक कानून लागू किया गया है जिसके अनुसार सब गैर-यूरोपीयोंको अंगूठेकी निशानी देना आवश्यक होगा। ऐसा प्रतीत होता है कि यह शिकायत निराधार है। यह कानूनकी उस प्रतिसे प्रकट हो जाता है जिसे सरकारने व्यवस्थापिका परिषद्में श्री ओ० वी० दीक्षितके प्रश्न करनेपर अवलोकनार्थ मेजपर रखा है। इस कानूनके अन्तर्गत, यदि कोई व्यक्ति किसी किस्मके दस्तावेजको इस विभागमें पंजीयित कराना चाहता है तो उसे उन दस्तावेजपर अपने दायें अंगूठेकी निशानी लगानी होगी और अंगूठा निशानीकी सरकारी पंजिकामें भी निशानी देनी होगी। इस सम्बन्धमें निम्न नियम बनाये गये हैं :

(१) दस्तावेजको पंजीयित करानेवाला व्यक्ति शिक्षित और पंजीयकका परिचित व्यक्ति हो तो उसकी अंगूठा निशानी नहीं ली जायेगी।

(२) जो दस्तावेजका पंजीयन कराये वह कोई यूरोपीय महिला हो या कोई ऐसा सज्जन या सम्मानित व्यक्ति हो जिसकी शिनाख्तके बारेमें कोई शक न हो सके तो अंगूठा निशानीकी आवश्यकता न होगी।

(३) जिन व्यक्तियोंके दायें हाथके अंगूठेका आकार किसी कारण सही न हो अथवा उनके बायें हाथके अंगूठेका या वह सुन्दर न हो तो किसी अंगुलीकी ही निशानी देनी होगी।

(४) यह निशानी पंजीयकके सामने ली जायेगी।

१९७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

नया कानून

क्रूगर्सडॉर्प और जीरस्टने दूसरे शहरोंके समान ही कर दिखाया है। मैं कहना चाहता था कि उन्होंने भी वैसी ही बहादुरी बताई है। लेकिन यदि बहादुरी शब्दका प्रयोग हम बहिष्कारके लिए करेंगे तो जब सच्चे बहिष्कारका समय आयेगा तब कौन-सा शब्द काममें लायेंगे? हम सब जानते हैं कि यदि कोई व्यक्ति एक गाँवमें गुलामीका टीका नहीं लगवाता तो दूसरे किसी गाँवमें लगवा सकता है। काला टीका किसीको भी प्यारा नहीं लग सकता। इसलिए सब राह देखते बैठ सकते हैं कि देखें, जोहानिसबर्ग क्या करता है। इस तरहकी प्रतीक्षामें यदि अधिकांश लोग बैठे होंगे तो हमारे पापका घड़ा अवश्य फूट जायेगा और उसके नीचे भारतीय कुचल जायेंगे। जोहानिसबर्ग चाहे कुछ भी करे, लेकिन जो आजतक हिम्मत रखकर बैठे हैं, वे आखिरतक बैठे रहेंगे, तभी ठीक होगा। इसलिए क्रूगर्सडॉर्प और जीरस्ट यद्यपि अपनी दृढ़ताके लिए धन्यवादके पात्र हैं, फिर भी उनकी और सबकी सच्ची कसौटी अब होनेवाली है।

बाकी कौन रहा?

बॉक्सबर्गमें कार्यालय १७, १८, १९ और २० को रहेगा। जर्मिस्टनमें २४, २५, २६ और २७ को तथा बेनोनीमें १७, १८, १९ और २० को। इन जगहोंपर सरकारकी कृपा मालूम होती है। क्योंकि, हर जगह भारतीयोंको गुलामीका पट्टा लेनेके लिए चार दिन मिलेंगे। लेकिन इन स्थानोंके भारतीय सचेत हैं। इसलिए ऐसा नहीं मालूम होता कि उनमें से कोई, अन्यायी पट्टे लेने जायेगा। बॉक्सबर्ग और जर्मिस्टनमें सभाएँ भी की जा चुकी हैं और सभीने हाथ काला करनेका विरोध किया है। इसलिए अधिकारियोंकी "छुट्टीमें" अब भी खलल पड़ना सम्भव नहीं दीखता।

क्या हवा बदली है?

आजतक हर जगह श्री चैमने, श्री जेम्स कोडी, श्री रिचर्ड कोडी तथा श्री स्वीट हवा खाने गये थे। अब चौकड़ी बदली है। ब्लूमहॉफ, बुलमरनस्टाड, लिखतनबर्ग, पीट रिटिफ, अरमीलो, कैरोलीना, और बेथलमें ये लोग नहीं जायेंगे। वहाँके लिए दूसरे साहब नियुक्त हुए हैं। हर जगह १७, १८ व १९ तारीखको नये अधिकारी हाजिर रहेंगे। ब्लूमहॉफमें श्री हल, बुलमरनस्टाडमें श्री हॉग, लिखतनबर्गमें श्री ज्यूटा, पीट रिटिफमें श्री लेवी, अरमीलोमें श्री केरसवील, कैरोलिनामें श्री जॉन, और बेथलमें श्री वैंगले नियुक्त किये गये हैं। यह क्यों किया गया, इस सम्बन्धमें मैं अनुमान नहीं लगाना चाहता। स्पष्ट कारण तो यह मालूम होता है कि वहाँ भारतीयोंकी संख्या ज्यादा नहीं है। दूसरे, ये जगहें अलग-अलग हैं और यदि उपर्युक्त चौकड़ीको सब जगह घुमाया जाये तो जोहानिसबर्गपर अक्तूबर महीनेमें धावा नहीं किया जा सकता।

जोहानिसबर्ग पकड़में आया

जोहानिसबर्गपर १ अक्तूबरको चढ़ाई होगी। यहाँ त्रिमूर्तिको नियुक्त किया गया है। दो तो कोडी हैं और तीसरे स्वीट साहब। इसलिए जो जोहानिसबर्ग आजतक शेखी मारता आया है, उसकी परीक्षाका समय नजदीक आ गया है। श्री गांधीने प्रिटोरियामें शेखी मारी थी कि कार्यालय पहले जोहानिसबर्गमें आया होता तो ठीक होता।[1] श्री ईसप मियाँ और श्री कुवाड़ियाने भी ऐसा ही कहा था। इसके अलावा श्री ईसप मियाँने तो श्री रूसको एक जोरदार पत्र भी लिखा है कि "नेताओं" की ओरसे श्री रूसने जो बेहूदा पत्र लिखा है उससे संघका और खासकर जोहानिसबर्गका कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। जोहानिसबर्ग संघका केन्द्रीय स्थान है। वहाँके भारतीयोंने कानूनके विरोधमें बहुत-कुछ कहा है। वहीं एम्पायर और गेटी नाटकघरोंमें दो सभाएँ हुई हैं।[2] इतना सब होनेके बाद भी क्या जोहानिसबर्ग हार जायेगा? लेकिन अभी तो बड़ी देर है। एक पूरा महीना सामने है। प्रिटोरियामें अन्तिम दिनोंमें ही लोग फिसले थे। इसलिए जोहानिसबर्गमें अक्तूबरके तीन सप्ताह तो आसानीसे निकल जाना सम्भव है। लेकिन यदि अन्तिम सप्ताह भी ऐसा ही निकल जाये और एक भी भारतीय पंजीयन कार्यालयका नाम न ले तो? इसका जवाब देना जरा मुश्किल है। भैंस अभी तो जंगलमें ही है तब इधर सौदेकी बात कैसी? लेकिन मैं इतना अनुमान तो कर सकता हूँ कि यदि जोहानिसबर्ग पूर्ण बहिष्कार कर सका तो सरकारको कुछ तो विश्वास हो ही जायेगा कि हम आखिरी दम तक लड़ाई चालू रखना चाहते हैं। हमें यह अच्छी तरहसे समझ लेना चाहिए कि यह लड़ाई हमारी सचाई साबित करनेके लिए है। आज सरकार या किसीको भी यह विश्वास नहीं है कि हम सच्ची हिम्मतसे लड़ रहे हैं। और जबतक हमारे बीच श्री शेख अहमद इशाक जैसे दोनों ओर ढोल बजानेवाले मौजूद हैं, तबतक विश्वास कैसे हो सकता है?

पीटर्सबर्गके 'बहादुर'

श्री शेख मुहम्मद इशाककी बात करते समय ही मुझे दूसरी खबर मिली है। वह भी मैं पाठकोंके सामने रखता हूँ। पीटर्सबर्गसे जिन चार 'बहादुर' भारतीयोंने गुलामीका पट्टा ले लिया है उसके नाम हैं. . . .।[3] वहींसे ८६ भारतीयोंके हस्ताक्षरोंके साथ जो अर्जी भेजी गई थी, मालूम हुआ है, उसपर भी इन चारों महाशयोंने हस्ताक्षर किये थे। जबतक यह होता रहे तबतक सरकार किस भारतीयका विश्वास कर सकती है? हम अर्जीमें जो-कुछ लिखते हैं उसे सच्चा कैसे माना जा सकता है? यह भी सुननेमें आया है कि इन महाशयोंसे कुछ हलफनामे भी लिये गये हैं। इस तरहकी गप्पें तो बहुतसी हैं। कोई कहता है कि उन्होंने यह लिखवाया है कि उन्हें श्री गांधीने रोका था, इसलिए उन्होंने गुलामीकी अर्जी नहीं भेजी। कोई कहता है कि उन्होंने अपने समाजकी शर्मके मारे अर्जी नहीं दी। यदि यह सच है तो इन हलफनामे देने-वालोंको सोचना चाहिए कि क्या उस डर और शर्मको वे अब नहीं महसूस करते? इस सबके बावजूद डरपोक विरोधी दलमें भी जा घुसें तो उससे कुछ नहीं बिगड़ेगा। यह लड़ाई ऐसी है कि इसके द्वारा डरपोक बहादुरसे अलग दिखने लगेंगे। इसके अलावा यह भी मालूम हो

१. देखिए "भाषण: प्रिटोरियामें", पृष्ठ १३९-४१।
२. देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ४११-२३।
३. यहाँ मूलमें चार नाम हैं।

जायेगा कि हमें वास्तवमें कौनसा रोग है? आजतक जिस तापमापक यंत्रसे गर्मी नापी जाती थी उससे गर्मीका ठीक पता नहीं चलता था। जेलरूपी तापमापक लगनेसे सबके तापमानका पता चल जायेगा।

इन सब नामोंको देते और टीका करते हुए मुझे बहुत दुःख होता है। क्योंकि मेरे भाइयोंकी शर्म मेरी शर्म है। मेरे भाई यदि चोरी करते हैं तो उसका कलंक मुझे लगेगा ही। हमारे ही भाइयोंकी गलतीसे हमें सारे दक्षिण आफ्रिकामें कष्ट भोगना पड़ रहा है। कुछ भारतीय गन्दे रहते हैं, उससे सबको दुःख उठाना पड़ता है। कुछ कंजूस हैं, तो उसका दोष भी सबपर आता है। कुछ चोरीसे प्रवेश करते हैं, इसलिए नया कानून बना है, और उसका परिणाम हम सबको भोगना पड़ रहा है। यह अवसर इतना गम्भीर है कि इस समय अपने दोषोंको छिपानेमें पाप है। हममें जो सड़ाँध हो वह जब ऊपर आ जायेगी तभी हम ठिकाने लगेंगे। हमारी चाशनी पक रही है। उसमें गन्दगी ऊपर आनी ही चाहिए। यदि गन्दगीको हम दबा देंगे तो उबल जानेके बाद सारी चाशनी बिगड़ जायेगी। इसलिए मेरे नाम प्रकाशित करनेसे यदि किसीको गुस्सा आये तो मैं उसके लिए माफी माँगता हूँ। मुझे अपना यह कर्तव्य तो निभाना ही पड़ेगा।

पीटर्सबर्गके चार साहब गुलामीके पट्टे लेनेको टूट पड़े तो मेफेकिंगके श्री कासिम हाजी तारको लगा कि वे रह गये। अब वे भी पिघल गये हैं। तब फिर डर्बनके लजारस (तमिल) और जोज़फ (तमिल)की तो बात ही क्या? ये दोनों तमिल भाई भी पंजीयनका कलंक लगवा चुके हैं।

पंजीयन कार्यालयकी बेचैनी

भारतीय लोग गुलामीका थोड़ा-बहुत दाग लगवा लेते हैं, इसलिए पंजीयन कार्यालय बेचैन हो रहा है। बारबर्टनमें एक भारतीयके पास एक भूतपूर्व अधिकारीका दिया हुआ झूठा अनुमतिपत्र था। उससे वह पकड़ा गया। वह छः महीनेकी जेल काट रहा है। बारबर्टनसे कोरा न जाना पड़े इसलिए उस जेलवासीसे अर्जी ली गई है। हम पूछ सकते हैं कि ऐसे व्यक्तिसे अर्जी लेनेके पीछे क्या हेतु होगा? जिसके पास अनुमतिपत्र नहीं है, जिसे रखनेका हक नहीं है, क्या ऐसे व्यक्तिकी अर्जी लेकर उसका पंजीयन किया जायेगा? या फिर 'ब्लूमफॉटीनके मित्र' ['द फ्रेंड ऑफ ब्लूमफॉटीन'] के कहे अनुसार सरकार जेलवासी भारतीयोंको ट्रान्सवालमें रखकर, हकदार और पुराने निवासियोंको निकाल देना चाहती है? देखना है कि ट्रान्सवालकी सरकार हकदारके हकोंको कैसे डुबाती है।

अँगुलियोंकी निशानीका नया कानून

इस बारके 'गज़ट'में इस आशयका कानून प्रकाशित किया गया है कि जिस व्यक्तिको जेलमें रखा गया हो, वह यदि गवाही दे या दीवानी मामलेके सिलसिलेमें सजा न भोग रहा हो तो, अधिकारी अपनी मर्जीके मुताबिक उसका फोटो, उसकी अँगुलियोंकी निशानी, और उसका नाम वगैरह ले सकते हैं। इस सम्बन्धमें यहाँके न्यायालयमें इस तरहका एक मुकदमा चल चुका है और उसीपर से यह कानून बनाया गया है। इससे भारतीयोंका विशेष सम्बन्ध नहीं है। लेकिन इससे मालूम होता है कि ऐसा कानून फौजदारी अपराधोंपर लागू किया जा सकता है।

क्या स्त्रियोंके अँगूठे लिये जा सकते हैं?

फोक्सरस्टसे श्री मूसा इब्राहीम मंसूर लिखते हैं कि एक भारतीय स्त्रीसे पुलिसने अनुमतिपत्र माँगा। वह उसने दिखा दिया। फिर उससे अँगूठेकी निशानी माँगी गई। वह भी उसने अपने सेठके हुक्मसे दे दी। उस स्त्रीने अनुमतिपत्र कहाँसे दिया, यह समझमें नहीं आया। स्त्रियोंकी अँगूठा-निशानी लेनेका पुलिसको बिलकुल अधिकार न था। पूनियाके मामलेमें[1] निर्णय हो चुका है कि स्त्रियोंको अनुमतिपत्रकी जरूरत नहीं है। इस सम्बन्धमें दूसरी कार्रवाई करनेकी आवश्यकता मैं नहीं समझता। लेकिन जहाँ इस प्रकार होता हो वहाँ चेतावनी देना ठीक है।

नुकसान कैसे सहन हो?

मुझसे कहा गया है कि नये कानूनकी लड़ाईमें जो नुकसान होगा वह किस प्रकार सहन किया जाये, इस सवालका मैं जवाब दूँ। पहले तो जिसे हम नुकसान मानते हैं वह नुकसान नहीं, बल्कि फायदा है। हम सौ रुपयेकी गाड़ी लेते हैं तो उसे नुकसान नहीं मानते, बल्कि यह कहते हैं कि हमें अपने पैसेके बदलेमें यह चीज मिली है। उसी प्रकार हमें अपने पैसे देकर अपने हक खरीदने हैं। जिसे यह विश्वास हो कि ये हक मिलेंगे ही, वह पैसे देनेमें हिचकेगा नहीं। क्योंकि उसे अपने पैसेका बदला मिलनेका भरोसा है। यह ठीक है कि किसी-किसीको यह भरोसा नहीं होगा कि उसे हक मिलेंगे ही। किन्तु फिलहाल तो ऐसे व्यक्ति भी पैसे छोड़ेंगे ही, और सो भी हकोंकी आशामें ही। हम व्यापारमें सदा ही ऐसी जोखिम उठाते हैं। सट्टेमें हार जाते हैं, तो उससे व्यापार बन्द नहीं कर देते। इस कुंजीको याद रखकर यदि हम लड़ाईमें शामिल होंगे तो नुकसानकी बात नहीं करेंगे। महत्त्वकी बात यह है कि हककी लड़ाई समाजके लिए है, लेकिन संकुचित मनके कारण हम यह नहीं समझ पा रहे हैं कि समाजका फायदा हमारा फायदा है। इसके अलावा और भी विचार करें तो देखेंगे कि जेमिसनके हमलेके[2] समय भारतीय अपने पैसे खो बैठे थे; और वैसा ही लड़ाईके[3] समय हुआ था। किन्तु वह लाचारीके कारण हुआ था, इसलिए किसीने विचार नहीं किया। तब क्या अब पैसेकी जोखिमके कारण समाजके भलेकी लड़ाई हम छोड़ दें?

अखबार पढ़कर क्या करें?

इस सवालका जवाब देनेके लिए भी मुझसे कहा गया है। मेरी रायमें तो 'ओपिनियन' इस समय इतना महत्त्वपूर्ण है कि हरएकको उसकी फाइल रखनी चाहिए। लेकिन जिन्हें फाइल रखनेका शौक न हो, या जिन्हें आलस्य आता हो, ऐसे लोगोंको अखबार पढ़कर तुरन्त ही अपने सगे-सम्बन्धियोंको भेज देना चाहिए। यह आवश्यक है। क्योंकि भारतमें हमारी वास्तविक स्थिति जाहिर करनेका यही सरल और सस्ता उपाय है।

हलफनामा कैसा होता है?

जो बहादुर 'पियानो बजाने' [अँगुलियोंकी छाप देने] के लिए पंजीयन कार्यालयमें प्रिटोरिया जाते हैं उनसे हलफनामे लिये जाते हैं। उन हलफनामोंका सारांश मेरे हाथ

१. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४६३-६४ और खण्ड ६, पृष्ठ १२६।
२. दिसम्बर १८९५ में; देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४१८।
३. १८९९–१९०२ का बोअर-युद्ध, देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३७३।

लगा है। उसमें निम्नलिखित शब्द होते हैं: "श्री गांधीके सिखानेसे, और एशियाइयोंने पंजीयनपत्र नहीं लिये इससे, मैं जुलाई महीनेमें नये पंजीयनपत्र लेने नहीं आया। क्योंकि मुझे डर लगता था। अब मैं निवेदन करता हूँ कि मुझे पंजीयित कीजिए।" इस प्रकारके कागजपर सही करनेकी किसी भारतीयकी कैसे हिम्मत हुई, समझमें नहीं आता। इससे पंजीयन-कार्यालयको क्या फायदा होता है, सो भी मालूम नहीं होता। चाहे जो हो, लेकिन क्या अब वह डर मिट गया है? श्री गांधीकी सीख तो आज भी वैसी ही है, और उनका कहना है कि आखिरी दम तक वैसी ही रहेगी। भारतीय समाजका विचार भी अभी अटल है। लेकिन जिसे गुलामीका पट्टा लेना है उससे दलील किस प्रकार की जाये?

भीमकाय प्रार्थनापत्र

भीमकाय प्रार्थनापत्रकी[1] नकल और सूचना इसके साथ भेज रहा हूँ। इसके अनुसार अर्जी तेजीसे तैयार होनी चाहिए, जिससे ऊपर बताये हुए हलफनामे आदि खतम हो जायें। जिसे सही करनेके लिए अर्जी न मिले वह मन्त्रीसे लिखकर मँगवाले। यहाँ मुझे जो एक उदाहरण याद आ रहा है, वह देता हूँ। सन् १८९४ में जब मताधिकार विधेयक नेटालमें लागू किया गया था तब १०,००० भारतीयोंके हस्ताक्षरयुक्त एक अर्जी लॉर्ड रिपनको भेजी गई थी[2] और तब वह विधेयक रद किया गया था। इस बातको याद रखें। दूसरी बात यह कि तब अर्जीपर हस्ताक्षर लेनेके लिए सब बड़े-बड़े लोग निकल पड़े थे, और पन्द्रह दिनमें सारे हस्ताक्षर हो गये थे। किन्तु जब यह मालूम हुआ कि उसकी दो प्रतियाँ चाहिए तो बीस स्वयंसेवकोंने बैठकर रातोंरात नकल तैयार की थी। नेटालकी लड़ाई उस लड़ाईके सामने कुछ नहीं है। इस अर्जीमें हस्ताक्षर करवानेके लिए निश्चय ही बहुत समर्थ व्यक्तियों और स्वयंसेवकोंकी जरूरत है। अर्जीपर हस्ताक्षर लेकर ३० के पहले उसे पहुँच जाना चाहिए। मुझे तभी लाभ दिखाई देता है। आशा है कि कमसे-कम १०,००० भारतीयोंके हस्ताक्षर हो जायेंगे।

माननीय प्रोफेसर गोखलेके तारके सम्बन्धमें संघकी बैठक हुई थी। उसमें यह प्रस्ताव भी हुआ था कि अर्जी सब जगह भेजी जाये। श्री कुवाड़िया, श्री कामा, श्री फैन्सी, इमाम अब्दुल कादिर और श्री शाहने अध्यक्ष महोदयके बाद भाषण दिये थे।

एक *प्रसिद्ध अंग्रेज बहनका पत्र*

नीति सुधारक मण्डलकी एक प्रसिद्ध बहन[3] विलायतसे लिखती हैं:

> २७ जुलाईका 'इंडियन ओपिनियन' मैंने अभी पढ़ा। अब तो मुझसे आपको सहानुभूतिका पत्र लिखे बिना नहीं रहा जा सकता। जब-जब मैंने अखबार पढ़ा है, मेरा मन भर आया है। मैं आपकी लड़ाईको जबरदस्त और पवित्र मानती हूँ। और जिस ढंगसे आप लिखते, बोलते और चलते हैं उससे मुझे पूरी हमदर्दी है। जिस हिम्मतसे आप लोग वहाँ आन्दोलन कर रहे हैं उसके लिए मैं आपको बधाई देती हूँ।

१. देखिए "भीमकाय प्रार्थनापत्र", पृष्ठ २३९-४०।
२. देखिए खण्ड १, पृष्ठ ११७-२८।
३. फ्लॉरेंस विंटरबॉटम।

छूटे हुए स्वयंसेवक

श्री मुहम्मद इस्माइल कानमिया लिखते हैं कि हमीदिया अंजुमनमें उन्होंने अपना नाम दिया था, लेकिन फिर भी वह 'इंडियन ओपिनियन' में प्रकाशित नहीं हुआ। इससे वे दुःखी हैं। वह नाम क्यों प्रकाशित नहीं हुआ, इसका कारण तो सम्पादक और रिपोर्ट भेजनेवाले भाई जानें। कामकी भीड़में जब सब व्यस्त हों, और ऐसा कोई नाम छूट जाये तो उसे दरगुजर करना चाहिए। लेकिन श्री मुहम्मद इस्माइलको उनके उत्साहके लिए शाबाशी देनी चाहिए। मुझे आशा है कि ऐसा ही जोश दूसरे भी रखेंगे। जोशकी कीमत काम करते समय होगी, इस बातको सभी भारतीय याद रखें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–९–१९०७

१९८. पत्र : प्रधानमन्त्रीके सचिवको

जोहानिसबर्ग
सितम्बर २१, १९०७

निजी सचिव
परममाननीय प्रधानमन्त्री
प्रिटोरिया

महोदय,

मेरे संघकी समितिकी यह इच्छा है कि मैं प्रधानमन्त्रीका ध्यान समाचारपत्रोंमें प्रकाशित निम्नलिखित समाचारकी ओर आकर्षित करूँ —

> **उन्होंने खेद प्रकट किया कि एशियाई अँगुलियोंका निशान देने जैसी तुच्छ बातका बहाना करके पंजीयनका विरोध कर रहे हैं। यह गोरे लोगोंके लिए लागू किया गया था और मैं नहीं समझता कि इस नियमसे किसी को भी कष्ट होगा।**

अगर यह रिपोर्ट ठीक है तो मैं परममाननीय महानुभावका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करनेकी धृष्टता करता हूँ कि पंजीयन अधिनियमके विरोधका मुख्य कारण अँगुलियोंके निशान कभी नहीं रहे हैं। यद्यपि इस अधिनियमके बारेमें बहुतसे एतराजोंमें यह भी निःसन्देह एक गम्भीर बात है; फिर भी मेरा संघ इस बातको खुले दिलसे मंजूर करता है कि अपने-आपमें अकेली यही बात उस बड़े भारी असन्तोषका उचित कारण कदापि नहीं हो सकती, जिसे इस अधिनियमने जन्म दिया है। जिन कारणोंसे आपत्तियाँ की जाती हैं, उन्हें मैं नीचे उद्धृत कर रहा हूँ :

१. यह महामहिमके प्रतिनिधियोंकी पिछली घोषणाओंके स्पष्ट रूपसे विरुद्ध है।
२. यह ब्रिटिश एशियाइयों तथा अन्य एशियाइयोंके बीच कोई भेद स्वीकार नहीं करता।

३. यह ब्रिटिश भारतीयोंका दर्जा दक्षिण आफ्रिकाकी वतनी और रंगदार जातियोंसे भी नीचा कर देता है।
४. यह ट्रान्सवालके भारतीयोंकी स्थिति, जैसी १८८५ के कानून ३ के अन्तर्गत बोअर शासन कालमें थी, उससे भी बुरी कर देता है।
५. यह परवानों तथा जासूसीकी एक ऐसी प्रणाली चलाता है, जिसका अस्तित्व और किसी भी ब्रिटिश इलाकेमें नहीं है।
६. जिन जातियोंपर इसे लागू किया गया है, उनको यह अपराधी अथवा सन्दिग्ध करार दे देता है।
७. भारतीयोंके तथाकथित अनधिकार प्रवाससे इनकार किया जाता है।
८. यदि ऐसे इनकारको स्वीकार नहीं किया जाता तो इस दमनकारी तथा अनावश्यक विधानको अमलमें लानेसे पहले ब्रिटिशों द्वारा इसकी अदालती और खुली जाँच होनी चाहिए।
९. अन्य प्रकारसे भी यह विधान ब्रिटिश परम्पराके विरुद्ध है और निर्दोष ब्रिटिश प्रजाजनोंकी स्वतन्त्रतापर अनावश्यक पाबन्दी लगाता है और ट्रान्सवालके भारतीयोंको अनिवार्य रूपसे देश छोड़कर चले जानेका निमन्त्रण देता है।

इस तरह यह ध्यान देनेकी बात है कि इस कानूनको जब पिछले वर्ष पहले-पहल पेश किया गया था तब उसपर मुख्य आपत्तियोंमें अँगुलियोंके निशानोंका जिक्र तक नहीं था। मेरी नम्र रायमें इस अधिनियममें शुरूसे आखिरतक अपराधीपनकी बू आती है और इसके सामने सिर झुका देनेसे ट्रान्सवालके भारतीयोंका जीवन असहनीय बन जायेगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
ईसप इस्माइल मियाँ
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–९–१९०७

१९९. पत्र : जे० ए० नेसरको

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर १४, १९०७]

[श्री जे० ए० नेसर, संसद-सदस्य
पो० ऑ० बॉक्स २२
क्लार्क्सडॉर्प]

प्रिय महोदय,

खबर है कि आपने एशियाई अधिनियमके बारेमें नीचे लिखे विचार प्रकट किये हैं :

एशियाइयोंके बारेमें यह कानून बहुत जरूरी है। अँगुलियोंके निशान लेनेके बारेमें भारतीयोंके एतराजोंको मैं समझ नहीं सकता; क्योंकि उसमें कुछ भी पतनकारी नहीं है। इसका मैं एक ही कारण समझ सकता हूँ कि भारतीय अपनी बिरादरीके उन लोगोंको बचाना चाहते हैं, जो गैरकानूनी ढंगसे ट्रान्सवालमें आये हैं और अब भी आ रहे हैं।

मेरे संघको खेद है कि आपने एशियाई अधिनियमपर भारतीय समाजके एतराजोंको समझनेका कष्ट नहीं किया। मैं अपने संघकी ओरसे जनरल बोथाको भेजे हुए पत्रको[1] ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ और यह भी कहना चाहता हूँ कि मेरे संघकी रायमें यह अधिनियम केवल सारी पुरुषोचित भावनाओंको ही चोट नहीं पहुँचाता, बल्कि भारतके महान धर्मोंका अपमान भी करता है।

मेरे संघको इस बातपर आश्चर्य है कि आप उस समाजपर, जिसकी नुमाइन्दगी मेरा संघ करता है, यह दोष लगाना उचित समझते हैं कि वह उपनिवेशमें अवैध रीतिसे आनेवाले लोगोंको बचानेकी इच्छा रखता है। मुझे विश्वास है कि आप यह नहीं सोचते होंगे कि ब्रिटिश भारतीय समाज अपराधियोंकी रक्षाके लिए वह सब-कुछ बलिदान करनेको तैयार है, जो उसे प्यारा है। इसके अलावा, ब्रिटिश भारतीयोंके स्वेच्छया पंजीयन सिद्धान्तको मान लेनेसे ही जाहिर होता है कि भारतीय समाजके लिए अपराधियोंको बचाना सम्भव नहीं है।

[आपका, आदि,
ईसप इस्माइल मियाँ
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–९–१९०७

१. देखिए पिछला शीर्षक।

भरे तार भेज रहे हैं। यदि अन्तिम समयमें हम अपनी वाजी विगाड़ देंगे तो हमें सारे भारतकी लानत सहनी पड़ेगी। इस सभामें यह भी जाहिर किया गया कि ट्रान्सवालमें रहनेवाली तुर्कीकी मुसलमान प्रजाने अर्जी देनेका इरादा किया है। श्री नवावखाँने[1] स्वयंसेवकोंके सम्वन्धमें भाषण दिया। क्लार्क्सडॉर्पसे श्री पटेल आये थे। उन्होंने कहा कि क्लार्क्सडॉर्पसे हस्ताक्षर आ जायेंगे, इसमें सन्देह नहीं है। श्री अस्वातने कहा, रोजेका महीना अनुमतिपत्रके महीनेमें ही आ रहा है। इसलिए यह न हो कि मुसलमान एक ओर तो रोजा रखें और दूसरी ओर हाथ-मुँह काले करके ईमान गँवायें। इस वातका ध्यान रखना है।

सरकारकी चिन्ता

सरकार वहुत चिन्ता दिखा रही है कि भारतीय लोग पंजीयित हो जायें। इस वातसे हमें डरना भी चाहिए और हिम्मत भी लेनी चाहिए। डरने जैसी वात यह है कि सरकार जिस वातके लिए इतनी चिन्ता दिखा रही है वह हमें नहीं करनी है। हिम्मत इसलिए कि सरकारकी चिन्ता उसका भय भी व्यक्त करती है। सरकार चाहे कितने ही कठोर दिलकी हो, फिर भी यह नहीं हो सकता कि सारे भारतीयोंको देश-निकाला दे दे या उनके परवाने छीन ले। सरकारने वेलफास्टके मजिस्ट्रेटको जो पत्र भेजा है, उसकी प्रतिलिपि श्री सालूजीने भेजी है। उससे मालूम होता है कि मजिस्ट्रेट हर भारतीयको सूचना देगा कि जो लोग पंजीयित न हुए हों वे जोहानिसवर्ग जाकर अक्तूवर महीनेमें गुलामीका चिट्ठा लेकर आ सकते हैं। इससे ज्यादा भीरुता और किसे कहा जाये?

वोथा साहवकी गलतफहमी

वोथा साहवका कहना है कि अँगुलियोंकी छाप देनेके लिए भारतीय समाज इतना लड़ रहा है, यह तो ठीक नहीं। इससे भी यही मालूम होता है कि यदि भारतीय दृढ़ रहें तो सरकार क्या करेगी, वह स्वयं नहीं जानती। लेकिन फिर भी इस गलतफहमीको दूर करनेके लिए श्री ईसप मियाँने संघकी ओरसे नीचे लिखा पत्र[2] भेजा है:

वावू सुरेन्द्रनाथका तार

वावू सुरेन्द्रनाथ वनर्जीका कलकत्तेसे यह तार आया है:

> **"वंगालको आपके कष्टों और लड़ाईके प्रति सहानुभूति है और वह आपकी विजय चाहता है।"**

इस तारसे वहुत ही हर्ष हो रहा है। वावू सुरेन्द्रनाथ वनर्जीको वंगाली विद्यार्थी पूजते हैं। आज २५ वर्षसे वे भारतीयोंके लिए लड़ाई लड़ रहे हैं। वे भारतीय प्रशासन सेवाके लगभग पहले भारतीय सदस्य हैं। वे रिपन कॉलेजके आचार्य और 'वंगाली' नामक प्रसिद्ध पत्रके मालिक हैं। कलकत्तेके ब्रिटिश भारतीय संघके वे कई वर्षोंसे मन्त्री हैं। पूना और अहमदावादमें जव कांग्रेस अधिवेशन हुआ था तव वे अध्यक्ष थे। भारतमें उनके जैसे भाषण देनेवाले कुछ ही लोग होंगे। उनकी आवाज इतनी वुलन्द है कि दस हजार आदमियोंकी

१. मूलमें नवावदाख है।

२. यहाँ मूलमें "पत्र: प्रधानमन्त्रीके सचिवको", का अनुवाद है, देखिए पृष्ठ २५०-५१।

सभामें भी वह सब ओर पहुँच जाती है। स्वदेशी आन्दोलनमें[1] उन्होंने बड़ा काम किया है। भारतसे ऐसे तार आने लगे हैं, इसे शुभ चिह्न मानना होगा।

गद्दारोंका संघ

इन भाई साहबोंकी संख्यामें कुछ-न-कुछ वृद्धि होती जा रही है। सर्वश्री[2] . . . पवित्र हो चुके हैं। मुझे लगता है इन लोगोंको जनाना लिबास पहिन लेना चाहिए।

श्री स्टॉकेन्स्ट्रूम

हाइडेलबर्गमें भाषण देते हुए श्री स्टॉकेन्स्ट्रूमने कहा है कि भारतीय यदि पंजीयित नहीं होते हैं तो उन्हें परवाने नहीं दिये जायेंगे। कलई खुल चुकी है। पहले जेल थी। जेल मिटकर देश-निकाला हुआ। अब परवानेकी बात चल रही है। भारतीय जब परवानेका डर छोड़ देंगे तब बोथा साहब क्या करेंगे?

श्री नेसर

क्लार्क्सडॉर्पमें श्री नेसरने श्री स्टॉकेन्स्ट्रूमकी तरह भाषण दिया है। वे अँगुलीकी निशानीकी लड़ाईका खण्डन करते हुए कहते हैं कि भारतीय कौम गैर-कानूनी तौरसे आये हुए लोगोंको बचानेके लिए लड़ रही है। उन्होंने यह भी कहा है कि भारतीय कौम लड़ाई ही करती रहेगी, तो सरकार उनके व्यापारी-परवाने बन्द कर देगी। धमकी तो सुन ली। लेकिन भौंकनेवाला कुत्ता काटता नहीं। इस कहावतके अनुसार, जैसे-जैसे धमकियाँ दी जा रही हैं वैसे-वैसे भारतीय समाज निर्भय होता जा रहा है। लेकिन श्री नेसर जैसे व्यक्तिकी नादानी विचार करने योग्य है। अभीतक इसी बातका प्रचार चल रहा है कि हम अँगुलियोंकी निशानीके लिए ही लड़ रहे हैं। इसलिए श्री ईसप मियाँने नीचे लिखे अनुसार जवाब[3] भेजा है।

विलियम वॉन हल्स्टेन

सर विलियम वॉन हल्स्टेनने एक भाषणमें कहा था कि भारतीय सिर्फ अँगुलियोंकी निशानीके विरोधमें आन्दोलन कर रहे हैं। इसपर ब्रिटिश भारतीय संघके मन्त्रीने इस ओर उनका ध्यान खींचते हुए इस प्रकार लिखा है:[4]

भारतीयोंकी लड़ाई सिर्फ अँगुलियोंकी निशानीके खिलाफ नहीं, बल्कि समूचे कानूनके खिलाफ है। इस कानूनको अनिवार्य रूपमें स्वीकार करनेमें भारतीय अपनी गुलामी मानता है; और अपनी उस गुलामीसे छूटनेके लिए — न कि सिर्फ अँगुलियोंकी निशानीसे बचनेके लिए — वह अपना सर्वस्व होम देनेको तैयार है। सरकारने धमकियाँ देना शुरू किया है, इस बातको भी हम जानते हैं। ऐसे कानूनको अमलमें लानेसे सरकारका नाम होगा, या दुःख भोगकर भी कानूनका विरोध करके दुनियामें भारतीयोंका नाम होगा यह तो अभी देखना है।

१. विदेशी मालके (खासतौरसे कपड़ेके) बहिष्कारका आन्दोलन।
२. यहाँ मूलमें पांच नाम दिये गये हैं।
३. देखिए "पत्र: जे० ए० नेसरको", पृष्ठ २५२।
४. देखिए "पत्र: डब्ल्यू० वी० हल्स्टेनको", पृष्ठ २३५-३६।

भूल सुधार

पीटर्सवर्गके वहादुरोंकी मैंने टीका की है। उसके वारेमें पीटर्सवर्गके एक प्रतिष्ठित सज्जन लिखते हैं कि जिन साहवोंके नाम मैंने दिये हैं उनके हस्ताक्षर पीटर्सवर्गकी प्रसिद्ध अर्जीमें नहीं थे, क्योंकि उस वक्त वे वाहर गये हुए थे। अतः मुझे अपनी गलतीके लिए खेद है। इसके साथ यह भी कह दूँ कि जिन साहवोंने अपने हाथ काले किये हैं, उनका अपराध यद्यपि अक्षम्य है, फिर भी वह जितना वड़ा दीखता था उतना नहीं है। उपर्युक्त पत्रका मैं यह अर्थ करनेकी अनुमति लेता हूँ कि जिन्होंने अर्जीपर हस्ताक्षर कर दिये हैं वे तो इस गुलामीके पट्टेको छुएँगे तक नहीं।

जर्मिस्टनमें युद्ध

जर्मिस्टनमें पंजीयन कार्यालयने काम शुरू किया है। इससे वहाँके भारतीयोंमें वड़ा जोश है। आज (वुधवार) तक उन्होंने काम-धंधा छोड़ रखा है और सव स्वयंसेवकका काम कर रहे हैं। जर्मिस्टनके एक भी व्यक्तिने अर्जी नहीं दी। होटलके हजूरियोंने भी इनकार कर दिया है। केवल प्रिटोरियाका कासिम नामक एक मद्रासी धरनेदारोंकी वातको न मानते हुए पंजीयित हुआ है। पाँच मेमन आये थे। लेकिन उन्होंने धरनेदारोंकी वात मानकर पिआनो वजाने [अर्थात् पंजीयन करवाने] का अपना विचार छोड़ दिया। जर्मिस्टनमें स्वयं सेवकोंको आवश्यकतासे अधिक उत्साह वतलानेके कारण शान्त करना पड़ा था। अव वहाँ सिर्फ उतने ही लोग काम करते हैं जितने जरूरी हैं और सो भी नम्रता और धीरजके साथ।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-९-१९०७

२०१. तार:[1] सुरेन्द्रनाथ वनर्जीको

[जोहानिसवर्ग,
सितम्वर २५, १९०७ के वाद]

भारतीयोंका धन्यवाद। कर्तव्य पूरा करेंगे।

[ब्रिभास]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-९-१९०७

१. यह सुरेन्द्रनाथ वनर्जीके तारके उत्तरमें दिया गया था, देखिए पृष्ठ २५३-५४।

२०२. भारतसे सहायता

ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके प्रति उनके जीवन-मरण संघर्षमें सहानुभूति दिखानेमें माननीय सुरेन्द्रनाथ बनर्जीने माननीय प्रोफेसर गोखलेका तत्काल अनुकरण किया है। भारतकी जनताके इन विश्वासपात्र प्रतिनिधियोंके समुद्री तार पाना कोई छोटी बात नहीं है। दोनोंने भारतके लिए अपना जीवनोत्सर्ग कर दिया है और दोनोंका भारतमें अनुपम प्रभाव है। इसलिए, यह सोचना उचित ही है कि ट्रान्सवालके भारतीयोंका सवाल भारतीय राजनीतिमें जल्दी ही अत्यन्त प्रमुख स्थान प्राप्त कर लेगा। उस दिन लॉर्ड ऐम्टहिलने ठीक ही कहा था कि भारतीयोंकी भावनाको जितना गहरा आघात दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंके कष्टोंने पहुँचाया है, उतना किसी और चीजने नहीं पहुँचाया। भारतसे जो प्रोत्साहन मिला है उसकी हमें आवश्यकता है। इस सवालपर भारतमें कोई दलबन्दी नहीं है, कोई मतभेद नहीं है। हिन्दू-मुसलमान, पारसी और ईसाई — सब समानरूपसे ट्रान्सवालके भारतीयोंकी अत्यन्त दुःखपूर्ण और अपमानजनक परिस्थितिका अनुभव करते हैं। आंग्ल-भारतीयोंकी राय भी उतनी ही ठोस है जितनी कि भारतीयोंकी। इस व्यवहारके खिलाफ किसीने इतनी सख्तीसे नहीं कहा जितना कि कलकत्तेके 'इंग्लिशमैन' और बम्बईके 'टाइम्स ऑफ इंडिया' ने कहा है। इसलिए आवश्यकता इस बातकी है कि भारतकी तमाम संस्थाओं और लोकमतके मुख्य पत्रोंकी शक्ति केन्द्रित करके लॉर्ड मिंटोपर पूरा जोर डाला जाये; तब भारतीय सवाल न्यायोचित और मानवोचित सिद्धान्तोंके अनुसार हल हुए बिना नहीं रह सकता।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–९–१९०७

२०३. धरनेदारोंका कर्तव्य

जोहानिसबर्गके भारतीयोंको जल्दी ही अपना जीवट दिखाना होगा। इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि एशियाई कानूनके प्रति अन्तिम कदम क्या उठाया जाये। इसका निर्णय बहुत-कुछ इस बातसे होगा कि पंजीयन-दफ्तर द्वारा जोहानिसबर्गके एशियाइयोंको पंजीयित करनेके प्रयत्नका क्या परिणाम निकलता है। ट्रान्सवालकी एशियाई आबादीका प्रायः आधा भाग जोहानिसबर्गमें है। सभी विभिन्न एशियाई जातियोंके लोग भी बड़ी संख्यामें जोहानिसबर्गमें हैं और अगर वे एशियाई कानूनके विरोधमें दृढ़ रहें तो इससे स्थानीय सरकारको गम्भीरतासे सोचनेके लिए जरूर कुछ मसाला मिल जायेगा। चाहे जितनी धमकियाँ क्यों न दी जायें, पर आजकल जब कि रुपयेकी इतनी तंगी है, जेलकी इमारतें बनाना कोई हँसी-खेल नहीं है। हजारों निर्दोष लोगोंको निर्वासित करना भी व्यावहारिक राजनीति नहीं होगी; क्योंकि इससे बोथा और स्मट्स जैसे जनरलोंकी अन्तरात्मा भी प्रभावित होगी। इस प्रकार, अब हमें एशियाई परवानोंके रद करनेकी धमकियोंका सामना करना पड़ रहा है। लेकिन अगर यह बात सम्भव

हो तो सरकार अपने आपको मूर्ख साबित करेगी; क्योंकि इस प्रकार इससे एशियाइयोंकी बहुत बड़ी संख्या अछूती रह जायेगी। इसलिए जोहानिसबर्गके एशियाई जो भी कदम उठायेंगे उसीसे इस प्रश्नका बहुत-कुछ निर्णय होगा। अतः जोहानिसबर्गके प्रमुख भारतीयों और दूसरे प्रमुख एशियाइयोंके कंधोंपर जो जिम्मेवारी है, वह बड़ी गम्भीर और महान् है।

इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता कि अबतक भारतीय धरना देनेवालों या सेवाव्रतियोंके प्रयत्नसे ही पंजीयन-दफ्तरका बहिष्कार इतना सफल रहा है। उन्होंने अपना काम शान्ति, दृढ़ता और शिष्टताके साथ किया है। जोहानिसबर्गमें बहुतसे गड़बड़ी पैदा करनेवाले तत्त्व हैं। जिन्होंने सेवा-कार्य करनेका बीड़ा उठाया है, उनमें कुछ लोग आगके गोले हैं। फिर, जोहानिसबर्गमें सभी वर्गोंके लोग रहते हैं। इसलिए हम भारतीय स्वयंसेवकोंको आगाह करते हैं कि वे किसी तरह जल्दबाजी या क्रोध न दिखायें। शारीरिक हिंसासे पूरा-पूरा बचा जाये और इसी तरह सख्त भाषा भी इस्तेमाल न की जाये। जो लोग एशियाई अधिनियमके जुएको टालनेके लिए चिन्तित हैं, उन्हें इस बातकी भी फिक्र करनी चाहिए कि वे नासमझी-भरी धौंस और धमकियोंके रूपमें कहीं उससे भारी जुआ न लाद लें। अगर भारतीयोंको इस बातका विश्वास है कि यह कानून उनको गिराता है और उनके पौरुषका हरण करता है तो उन्हें सिर्फ यही करना चाहिए कि वे इस दृष्टिकोणको उन दूसरोंके सामने रखें जो इसे नहीं जानते। ऐसा करते ही उनका कर्तव्य समाप्त हो जाता है। फिर वे इसे पंजीयन करवानेवाले भावी आवेदनकर्तापर छोड़ दें कि वह इसमें से क्या चुनाव करता है। अगर वह इस कानूनकी गुलाम बनानेवाली शर्तोंको माननेके लिए रजामन्द होता है तो यह उसीकी हानि है, न कि समाजकी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-९-१९०७

२०४. जनरल बोथा और एशियाई कानून

यह देखकर बेचैनी होती है कि ट्रान्सवालके प्रधानमन्त्री, जिन्हें अपनी स्मरणीय लन्दन-यात्रामें सेसिल होटलमें मिलनेवाले भारतीय शिष्टमण्डलसे मीठी और नम्रतापूर्ण बातें कहनेमें कोई संकोच नहीं हुआ था, अभीतक यह नहीं जानते कि एशियाइयोंके संघर्षका वास्तविक आधार क्या है। उनका खयाल है, और वह ठीक ही है, कि ट्रान्सवालके एशियाइयोंने सिर्फ अँगुलियोंके निशानोंके बारेमें जो भारी आन्दोलन चला रखा है, उसका कोई उचित कारण नहीं हो सकता। किन्तु जनरल बोथाका यह विश्वास, कि आन्दोलनका आधार सिर्फ अँगुलियोंके निशानोंपर होनवाली आपत्ति ही है, बताता है कि वे भारतीयोंकी स्थितिके सम्बन्धमें कितने अज्ञानमें हैं। जब सन् १९०६ में यह कानून पहली बार विचारके लिए पेश किया गया तब इसके विरुद्ध ब्रिटिश भारतीय संघने कुछ आपत्तियाँ[1] लेखबद्धकी थीं। उनमें से कुछ तत्परतासे जनरल बोथाको भेज दी गई हैं। हमारे बहादुर जनरलने यह देखनेका कष्ट भी नहीं उठाया कि यदि ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी आपत्तियाँ अँगुलियोंके

१. देखिए "पत्र: प्रधानमन्त्री सचिवको", पृष्ठ २५०-५१।

निशान देने तक ही सीमित होतीं तो क्या वे विश्वव्यापी सहानुभूति प्राप्त कर सकते थे। ट्रान्सवालके राजनयिकोंको उन बहुत ही गम्भीर मुद्दोंकी उपेक्षा करनेमें सुविधा हो सकती है, जो भारतीय समाजने अपनी धार्मिक भावनाओं, अपने दर्जे और अपमानजनक वर्गीय विधानके सम्बन्धमें उठाये हैं। किन्तु ऐसी चिर-अभ्यस्त उपेक्षासे अन्तमें एशियाइयोंका गहरा क्षोभ बढ़ेगा एवं उनका विरोध और भी कड़ा होगा। अब उनका साहस निराशासे उत्पन्न साहस है। वे अपने सर्वस्वके अपहरणके अभ्यस्त हो गये हैं। इसलिए, ट्रान्सवालकी सरकारके लिए बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता इसीमें होगी कि वह कमसे-कम भारतीयोंकी आपत्तियोंपर उनके गुण-दोषोंकी दृष्टिसे तो विचार करे और उनकी ओरसे अपनी आँखें बन्द न करे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-९-१९०७

२०५. भारतीय फेरीवालोंके खिलाफ लड़ाई

नेटालकी विधानसभामें फेरीवालोंके परवानोंकी फीस बढ़ानेके प्रस्तावपर जो बहस हुई, वह बड़ी ज्ञानवर्धक है। नेटालके फेरीवालोंपर लगनेवाली इस भारी फीसकी किसीने परवाह नहीं की, क्योंकि फेरी करके रोजी कमानेका काम अधिकांशतः एशियाइयोंके हाथमें है और, जैसा कि न्याय मन्त्रीने कहा, "इस देशमें फेरी लगानेका धंधा श्वेत जातिके लोगोंके योग्य नहीं है।" रंगदार जातियोंके लोगोंसे ताल्लुक रखनेवाले सवालोंपर इसी तरीकेसे बहस करते हुए एशियाइयोंके परम विरोधी श्री हैगरने प्रस्ताव रखा है कि "सार्वजनिक हितमें यह बात अवाञ्छनीय है कि नेटाल गवर्नमेंट रेल प्रणालीमें जिन पदोंपर साधारणतः गोरे लोग काम करते हैं, उनपर एशियाइयोंको नियुक्त किया जाये।" सच पूछा जाये तो इस महान् विधान-सभा सदस्यको "सार्वजनिक हित"के बजाय "श्वेत जातिके हित" कहना था। यह भी बता दिया जाये कि यह प्रस्ताव रेलवे और बन्दरगाह मन्त्री द्वारा स्वीकार कर लिया गया और उन्होंने कहा कि अगर मैं "कुलियों"को, जिस नामसे वे रेलगाड़ियोंका मार्ग बदलनेवाले भारतीय कर्मचारियोंको पुकारते हैं, लात मारकर निकाल बाहर नहीं करता तो इसका कारण यह है कि मुझे सदनके सदस्योंसे छँटनीके बारेमें आदेश प्राप्त है। इस प्रकार इन दोनों अवस्थाओंमें इतना भी नहीं किया गया कि भारतीय फेरीवालों और भारतीय रेलवे कर्मचारियोंके यदि कोई दावे थे तो उनकी जाँच कर ली जाती। जहाँतक उपनिवेशोंका ताल्लुक है, "ब्रिटिश प्रजा होनेका" सिद्धान्त थोथा साबित हो चुका है। उपनिवेशी इस पुराने ब्रिटिश झण्डेके सम्बन्धमें मिलनेवाले सारे लाभ तो उठाना चाहते हैं, लेकिन उस झण्डेको अपनानेसे जो असुविधाएँ और जिम्मेदारियाँ आती हैं उनसे कोई सरोकार नहीं रखना चाहते।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-९-१९०७

२०६. हमारा परिशिष्ट

इस बार हम प्रिटोरियाके बहादुर स्वयंसेवकोंकी तस्वीरें दे रहे हैं। कुछ सज्जनोंके विचारकी कद्र करके हमने आजतक यह परिशिष्ट नहीं निकाला था। लेकिन हम मानते हैं कि इससे हमने प्रिटोरियाके स्वयंसेवकोंके साथ अन्याय किया है। हमारी निश्चित राय है कि यदि ये स्वयंसेवक बाहर न निकलते और यदि इन्होंने धीरज, मिठास तथा हिम्मतका आदर्श न खड़ा किया होता तो यह लड़ाई यहाँतक नहीं पहुँच सकती थी।

अब जोहानिसबर्गकी बारी आई है। इस समय इस परिशिष्टको प्रकाशित करना हमने अपना कर्तव्य समझा है। जोहानिसबर्ग यदि इन युवकोंका अनुकरण करेगा, शान्ति और नम्रतासे काम लेगा, तो हम समझ लेंगे कि हमारी लड़ाईका अन्त निकट आ गया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–९–१९०७

२०७. स्वयंसेवकोंका कर्तव्य

ट्रान्सवालकी लड़ाईमें हमने देखा है कि स्वयंसेवकों-(वॉलंटियर्स) ने चाहे हम उन्हें स्वयं-सेवक, धरनेदार (पिकेट), सेवाव्रती (मिशनरी) या चौकीदार, किसी नामसे पुकारें — बहुत बढ़िया काम किया। उनकी सहायताके बिना कुछ भी हो नहीं सकता था। इस लड़ाईका श्रेय सचमुच प्रिटोरियाके धरनेदारोंको देना चाहिए। उन्होंने धीरज, मधुरता और हिम्मतका जो उदाहरण पेश किया, उसका अनुकरण प्रत्येक स्थानपर होता आ रहा है।

अब जोहानिसबर्ग शेष रहा है। इस शहरमें हर तरहके भारतीय रहते हैं। कोई ऐसे भी होंगे जिन्हें लाज-शरम न हो। ऐसे लोग पंजीयनपत्र लेने जायें तो उसमें आश्चर्य नहीं माना जा सकता। फिर, यह भी हो सकता है कि कोई दूसरे शहरोंसे हाथ-मुँह काले करवाने आ जायें। इन सबको धरनेदार कैसे सँभालेंगे? यदि कोई भारतीय अपने हाथ काले करनेके लिए जायेगा तो साधारणतया हमारे मनमें उसके प्रति तिरस्कार पैदा होगा। परन्तु तिरस्कारके बदले उसपर दया करना हमें अधिक शोभा देगा।

चौकीदारका काम पहरा देनेका है, हमला करनेका नहीं। यदि जोहानिसबर्गमें पंजीयन करवानेके लिए जानेवालोंपर हमला किया गया तो हम निःसंकोच कहते हैं कि किनारे लगी हुई नैया डूब जायेगी। हमारी सारी लड़ाई कष्ट सहन करनेकी है, किसीको कष्ट देनेकी नहीं, फिर चाहे वह भारतीय हो या गोरा हो। यह बात प्रत्येक चौकीदारको बहुत सावधानीसे याद रखनी चाहिए। गलती करनेवालोंको समझाना, उनसे विनती करना, उनकी आजिजी करना हमारा काम है। इसपर भी उन्हें यदि दासता ग्रहण करनी हो तो उन्हें छूट दे देनी चाहिए। क्योंकि यदि हम उन्हें कानूनके अत्याचारसे बचाकर अपने अत्याचारसे दबायें तो उसमें हमें कुछ भी लाभ नहीं दिखाई देता। हम अपने लिए जितनी स्वतन्त्रता चाहते हैं उतनी ही दूसरोंको भी दें, यह हमारा कर्तव्य है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–९–१९०७

२०८. क्या भारत जाग गया?[1]

माननीय प्रोफेसर गोखले तथा माननीय बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जीके समुद्री तारोंसे हमें जबरदस्त प्रोत्साहन मिला है। ये दोनों महानुभाव केवल सहानुभूतिके तार भेजकर बैठे रहें, सो बात नहीं। इनके तारोंसे मालूम होता है कि भारतसे हमें अब पर्याप्त सहायता मिलेगी। इसका बहुत गहरा अर्थ हो सकता है। ट्रान्सवालका प्रश्न छोटा नहीं रहेगा। उसकी चर्चा सारी दुनियामें होगी। भारतसे अर्जियाँ भेजी जायेंगी, और वहाँ सभाएँ होंगी। मेरी यह मान्यता निराधार नहीं है। यदि ऐसा होता है तो बड़ी सरकार बैठी नहीं रह सकती। लॉर्ड ऐम्टहिल महोदय कह चुके हैं कि ट्रान्सवालके सवालसे भारतको जितनी ठेस लगी है उतनी अन्य किसी बातसे नहीं लगी। हर जगह शोर मचा है। तब भारतको नाराज करनेका इतना जबरदस्त कारण [साम्राज्य] सरकार कैसे रहने दे सकती है?

इतनी सहायता मिलनेका कारण एक ही है। वह है, भारतीयोंकी हिम्मत। आजतक हमने एक होकर जोर दिखाया है। उसका बड़ा प्रभाव पड़ा है। हमें बहुत ही प्रतिष्ठा मिली है। उसकी रक्षा करना अब ट्रान्सवालके भारतीयोंके हाथ है। और ट्रान्सवालके भारतीयोंकी दृष्टि अब जोहानिसबर्गपर है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–९–१९०७

२०९. "बीच रुई जरि जाय"

कहावत है कि "लड़ें लोह-पाहन दोऊ, बीच रुई जरि जाय"। नेटालमें गोरोंके दो पक्ष खींचा-तानी करते हैं, जिसका परिणाम भारतीय मजदूरोंको भोगना पड़ रहा है। हैगर साहब और उनके जैसा विचार रखनेवाले गोरोंका कहना है कि रेलवे लाइन पार करनेकी चौकियों-परसे भारतीय कुलियोंको हटाकर गोरोंको रखना चाहिए। यह नहीं माना जा सकता कि हैगर साहब यह हलचल किसी विशेष परोपकार-बुद्धिसे कर रहे हैं। उनका विचार तो जैसे-तैसे आगे बढ़ना है। नेटालकी सरकार जानती है कि भारतीय मजदूरोंको चालू रोजीसे वंचित करके ऊँची तनख्वाहवाले गोरोंको रखना ठीक न होगा। लेकिन, वह अपनी इस प्रामाणिकताको प्रकट करनेमें झेंपती है, इसलिए कहती है कि जहाँ भी भारतीय मजदूरोंको अलग किया जा सकेगा, वहाँ किया जायेगा। यह मनसूबा यदि कार्यान्वित किया गया तो इसके परिणामकी दोमें से किसी भी पक्षको परवाह नहीं है। इसको वे लोग "सुधार" कहते हैं। यदि सच्ची शिक्षा और सुधार इसीका नाम हो तो हम चाहते हैं कि भारतीय इस बलासे छूट जायें, यही अच्छा है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–९–१९०७

१. देखिए "भारतसे सहायता", पृष्ठ २५७।

२१०. मिस्रमें स्वराज्यका आन्दोलन

'रैंड डेली मेल' के एक पत्रसे मालूम होता है कि मिस्रमें स्वराज्यके आन्दोलनने एकदम बड़ा रूप ले लिया है। कहा जाता है कि यह मुस्तफा कामेलपाशाके[1] कामका प्रभाव है। मिस्र संसदके उमराव सदस्योंमें से लगभग ११६ सदस्योंने स्वराज्यके लिए प्रस्ताव किया है। उनका कहना है कि वे अंग्रजोंकी मदद लेनेसे इनकार नहीं करते। लेकिन राज्यकी लगाम वे अपने ही हाथोंमें रखना चाहते हैं। वे चाहते हैं कि लोक-शिक्षण विभाग पूरी तरहसे जनताके ही हाथोंमें होना चाहिए। मुस्तफा कामेलपाशा कहते हैं कि यदि अंग्रेज सरकार इतना अधिकार दोस्तीसे और प्रेमपूर्वक न दे तो मिस्रकी जनता लड़कर ले लेगी, लेकिन अब मिस्र पराधीन नहीं रहेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–९–१९०७

२११. पत्र : जे० ए० नेसरको

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर २८, १९०७

श्री जे० ए० नेसर, संसद-सदस्य
पो० ऑ० बॉक्स २२
क्लार्क्सडॉर्प

महोदय,

आपका इस मासकी २७ तारीखका पत्र प्राप्त हुआ। आपके इस अत्यन्त शिष्ट, स्पष्ट और पूर्ण पत्रके लिए मैं आपको अपने संघकी ओरसे धन्यवाद देता हूँ। भारतीय प्रश्नके ठीक तरहसे हल होनेमें सबसे बड़ी बाधा निःसन्देह यह रही है कि लोक-सेवक उसके प्रति अत्यन्त उदासीन रहे और, इसलिए, उन्हें उसकी जानकारी नहीं है।

आपने मेरे देशवासियोंके प्रति, जिनके हित इस देशमें निहित हैं, जो हमदर्दी जाहिर की है, उसके लिए मैं हृदयसे आभारी हूँ; और चूंकि यह लड़ाई पूरी तरह उन्हीं हितोंकी रक्षाके लिए है, इसलिए मुझे आपके रुखमें एक ऐसी बात दिखाई देती है, जिसपर हम सहमत हो सकते हैं।

मेरा संघ न केवल भारतीयोंके सामूहिक आव्रजनपर की जानेवाली आपकी आपत्तिके साथ सहानुभूति रखता है, वरन् इस प्रकारके आव्रजनके विरुद्ध साधारण विद्वेषको ध्यानमें

१. (१८७४–१९०८); इन्होंने दिसम्बर, १९०७ में मिस्रमें राष्ट्रीय दलकी स्थापना की थी।

रखते हुए उसने उसकी वैधताको स्वीकार किया है और इस उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए सरकारके साथ सदा ही सहयोगकी तत्परता दिखाई है।

अब एशियाई अधिनियमपर उसके गुणावगुणकी दृष्टिसे विचार करनेके लिए मार्ग साफ है। मैं आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करनेका साहस करता हूँ कि जब सितम्बर १९०६ में अध्यादेशके मसविदेपर — उस समय यह अधिनयम इसी रूपमें था — एतराज किये गये थे, तब उनमें अँगुलियोंके निशानोंका जिक्र तक नहीं था, यद्यपि उस समय यह पता चला था कि सरकार अँगुलियोंके निशानोंपर जोर देना चाहती है। इसलिए यदि अँगुलियोंके निशानोंके बदलेमें हस्ताक्षर रख दिये जाते तो मेरे संघका रुख किसी प्रकार भी नहीं बदलता। सारे अधिनियममें व्याप्त अनिवार्यताका डंक ही भारतीय समाजको चोट पहुँचाता है और उसपर इतना भारी बोझा बना हुआ है। अँगुलियोंके निशानोंसे किसीकी भी धार्मिक भावनाको चोट नहीं पहुँचती, किन्तु अधिनियममें जो तुर्की-ईसाइयों और तुर्की-यहूदियोंके लिए छूट दी गई है वह बेशक धार्मिक भावनाओंको उग्रतम चोट पहुँचानेवाली है।

यह अधिनियम अपनी विभिन्न शर्तोंके भंग होनेपर कठोर दण्डोंसे भरा पड़ा है; किन्तु विरोध सजा या उसकी सख्तीका नहीं किया जाता, बल्कि उसके अन्दर छिपी हुई इस धारणाका किया जाता है कि भारतीयोंका वर्गका-वर्ग अपने गलत नाम बतानेकी जालसाजी करनेमें तथा धोखाधड़ीसे अनुमतिपत्रोंकी अदलाबदली करने और देशके अन्दर अनधिकृत प्रवासियोंको लानेमें समर्थ है। और मैं समझता हूँ, कि यह विरोध ठीक ही है। जब कभी किसी देशमें किसी विशेष अपराधके लिए असाधारण सजाओंका विधान किया जाता है, तब, जैसा कि आप जानते हैं, यह मान लिया जाता है कि उस देशमें इस अपराधका अस्तित्व सर्व-साधारण रूपमें है। इस बातको भली भाँति जानते हुए कि ब्रिटिश-भारतीय, वर्गके रूपमें, ऊपर बताये हुए अपराध नहीं करते, वे उस धारणाके, जिसे यह अधिनियम मौन रूपसे तथा विधि-निर्माता खुलेआम उनका अपराध बतला रहे हैं, परिहारके लिए दिलेरीसे संघर्ष कर रहे हैं। इसके अलावा, यह बात ध्यानमें रखनेकी है कि यह कानून एक घृणित ढंगका वर्ग-कानून है। यह भारतीयोंको मलायी लोगोंकी, जिनके साथ उनके नजदीकी रिश्ते हैं, केपके रंगदार लोगोंकी, जिनके निकट सम्पर्कमें वे आते हैं, और काफिर जातियोंकी भी, जिनको वे बहुत बड़ी संख्यामें नौकर रखते हैं, निगाहमें गिराता है। जब कि इन तीनोंको उपनिवेशके अन्य निवासियोंके साथ उनकी व्यक्तिगत आजादीपर ऐसी पाबन्दियोंसे छूट दी गई है, एशियाइयोंको ही विशेष रूपसे पाबन्दियोंके लिए छाँट लिया गया है।

आपके अन्तिम एतराजका स्वभावतः साफ जवाब यह है कि भय एशियाइयोंकी प्रति-योगितासे है, रंगदार जातियोंकी प्रतियोगितासे नहीं। इस तथ्यको जानते हुए ही मेरे संघने यह प्रस्ताव किया था कि अनिवार्य विधानके बदलेमें स्वेच्छया शिनाख्त या पंजीयनका विधान किया जाये। इस प्रकारके स्वेच्छया पंजीयनसे शेष समाजसे अलग कर दिये जानेपर भी भारतीयोंका अपमान नहीं होगा, यूरोपीयोंके एतराजोंका पूरा समाधान हो जायेगा, और निहित अधिकारोंकी रक्षा होगी। आप यह सोचते हुए मालूम होते हैं कि स्वेच्छया पंजीयनसे बेईमान भारतीय साफ बच जायेंगे। उनके अस्तित्वसे मैं इनकार नहीं करता। किन्तु मेरा निवेदन है कि आपका यह खयाल गलत है। प्रस्तावके अन्तर्गत सरकारसे यह कह दिया गया है कि स्वेच्छया पंजीयनके अनुसार दोनों पक्षोंकी सहमतिसे एक छोटा-सा विधेयक पास करके

इस कानूनको उन लोगोंपर लागू किया जा सकता है जो अपने-आप पंजीयन न करायें। निःसन्देह, एक निश्चित समयपर सभी भारतीयों या एशियाइयोंकी एक साथ जाँच की जा सकती है, और जिनके पास पहचानके नये प्रमाणपत्र न मिलें उनको शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अधीन उपनिवेशसे निकाला जा सकता है; या शान्ति-रक्षा अध्यादेशके बदलेमें एक आम प्रवासी कानून पास करके उसके अधीन उन्हें निकाला जा सकता है।

मैं आपका समय अधिक न लेते हुए केवल यह कहकर अपने वक्तव्यको समाप्त करूँगा कि जहाँ मेरे देशवासियोंने ईमानदारीसे यूरोपीयों द्वारा उठाये हुए माकूल एतराजोंकी जाँच करके उनको पूरा करनेका प्रयत्न किया है, वहाँ यूरोपीय सामूहिक रूपमें उसका उसी रूपमें उत्तर देनेमें पूर्णतया असफल रहे हैं और भारतीय स्थितिकी जाँच करनेकी परवाह किये विना अपनी विद्वेषपूर्ण विरोधी नीतिपर अड़े रहे हैं। चूँकि आप अपने पेशेके कारण ब्रिटिश भारतीयोंसे अत्यधिक सम्बन्धित रहे हैं, इसलिए मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप अपने-आपको हमारी स्थितिमें रखें और सारी वातोंपर हमारे दृष्टिकोणसे विचार करें और देखें कि क्या थोड़े धैर्य तथा कुछ सहयोगसे एक माकूल समझौता होना सम्भव नहीं है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
ईसप इस्माइल मियाँ
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
***इंडियन ओपिनियन*, ५-१०-१९०७**

२१२. पत्र:[1] 'रैंड डेली मेल'को

[जर्मिस्टन]
सितम्बर, २८, [१९०७]

सेवामें
सम्पादक
['रैंड डेली मेल'
जोहानिसवर्ग]

महोदय,

आपके संवाददाताने जनताको सूचित किया है कि जर्मिस्टनमें भारतीय धरनेदारोंके डराने-धमकानेसे ही वहाँके वहुतसे भारतीयोंने अपना पंजीयन नहीं कराया। मैं प्रधान धरने-दारकी हैसियतसे कहना चाहता हूँ कि आपको दी गई सूचना विलकुल गलत है। मैं आपको सूचित कर दूँ कि वास्तवमें दो दिन तक जर्मिस्टनकी तमाम भारतीय आवादी धरना देती रही थी, क्योंकि उन सभी लोगोंने काम वन्द कर दिया था। इस कानूनके विरुद्ध उनका उत्साह और इसके प्रति उनका विरोध ऐसा ही जोरदार था। जब नियुक्त धरनेदारोंने अन्य भारतीयोंको समझाया तभी उन्होंने अपना काम फिर आरम्भ किया।

१. इसका मसविदा अनुमानतः गांधीजीने तैयार किया था।

किन्तु यह बिलकुल सच है कि दूसरे स्थानोंसे कुछ भारतीय जर्मिस्टनमें पंजीयन करानेके लिए आये थे और उन्होंने जर्मिस्टनके धरनेदारोंका मैत्रीपूर्ण विरोध और तर्क सुना और वे अपने-आपको और अपने समाजको झुकाये बिना लौट गये। किन्तु जहाँ ऐसा उचित तर्क कारगर नहीं हुआ, वहाँ कड़ी हिदायतें दे दी गई थीं कि जो लोग कानून द्वारा लादी गई दासताको स्वीकार करना चाहें, उनको स्वयं साथ जाकर पहुँचा दिया जाये; और ऐसा बॉक्सबर्गसे आये हुए एक भारतीय जोसफ बहादुरके मामलेमें किया भी गया।

हमारी लड़ाईमें हमें डराने-धमकानेकी आवश्यकता नहीं होती। जो लोग अधिनियमको और उसके सब परिणामोंको समझते हैं वे अपने-आप इस दासताको स्वीकार करनेसे हाथ खींच लेते हैं; इसमें अपवाद तभी होता है जब वे अपने स्वार्थके कारण अपनी आत्म-सम्मानकी भावनाको भुला देते हैं। मैं आपके असंख्य पाठकोंकी जानकारीके लिए बता दूँ कि अस्पताली नौकरों और मजदूरों तक ने नौकरीसे बरखास्त कर दिये जानेकी धमकियोंके बावजूद अपना पंजीयन करानेसे इनकार कर दिया; और उनके मालिकोंपर उनकी इस सम्मान-जनक इनकारीका ऐसा स्पष्ट प्रभाव पड़ा कि उन्होंने उन धमकियोंको वापस ले लिया।

आपका, आदि,
रामसुन्दर पण्डित
प्रधान : जर्मिस्टन धरनेदार

[अंग्रेजीसे]
रैंड डेली मेल, ३–१०–१९०७

२१३. भाषण : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें

जोहानिसबर्ग
[सितम्बर २९, १९०७]

मैं आज अंजुमनकी बैठकमें आया हूँ, किन्तु मुझे कुछ खास नहीं कहना है। श्री बेगका पत्र आया है; अगर जरूरत हो तो वे धरनेदारके रूपमें मदद देनेके लिए तैयार हैं। जर्मिस्टनके भारतीय भाइयोंने जो बहादुरी दिखाई थी, उससे जोहानिसबर्गके भारतीयोंको सबक लेना चाहिए। श्री रामसुन्दर पण्डित उस विषयमें बतायेंगे। यहाँके धरनेदारोंको अपना कर्तव्य अच्छी तरह करना चाहिए, जैसे बने वैसे लोगोंको समझाना चाहिए। किसीके साथ जोर-जबरदस्ती नहीं होनी चाहिए। यदि बाहरके कोई आयें तो उनके साथ धीरजसे काम लिया जाये।

प्रिटोरियाकी अर्जीके बारेमें मुझे अभी इतनी ही खबर मिली है कि सरकार अनुमति-पत्रोंकी जाँचके लिए निरीक्षक रखेगी। श्री कोडीने ट्रान्सवालसे निकाल देनेकी धमकी दी है; पर श्री पण्डित बड़े जोरमें हैं। सरकार यदि इन्हींको गिरफ्तार करे तो अच्छा। जोहानिसबर्गमें हस्ताक्षरोंका काम तेजीसे हो, यह जरूरी है।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, ५–१०–१९०७

२१४. प्रार्थनापत्र :[1] तुर्कीके महा वाणिज्य-दूतको

[जोहानिसबर्ग
अक्तूबर ५, १९०७ के पूर्व]

महोदय,

हम निम्न हस्ताक्षरकर्त्ता, जोहानिसबर्गवासी और तुर्कीके महामहिम सुल्तानके वफादार मुसलमान प्रजाजन, इसके द्वारा आपका ध्यान एशियाई पंजीयन-अधिनियमकी ओर आकर्षित करते हैं। इस अधिनियमके अन्तर्गत तुर्क साम्राज्यकी मुसलमान प्रजाको पंजीयन कराना पड़ता है। हमारी विनीत सम्मतिमें, यह अधिनियम अपमानजनक है और इससे तुर्कीके मुसलमानोंका विशेष रूपसे तिरस्कार होता है, क्योंकि इससे तुर्क साम्राज्यके मुस्लिम और गैर-मुस्लिम प्रजाजनोंमें भेदभाव किया जाता है, जिससे मुस्लिम प्रजाजनोंकी हानि होती है। इसलिए हम विश्वास करते हैं कि आप कृपा करके स्थानीय सरकारसे आवश्यक निवेदन करेंगे और इस प्रार्थनापत्रकी प्रतिलिपि महामहिम सम्राट्के सम्मुख प्रस्तुत करनेके लिए भेजेंगे।

आपके आज्ञाकारी सेवक,
सैयद मुस्तफा अहमद जैल
[और तुर्कीके १९ अन्य मुसलमान]

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ५–१०–१९०७

२१५. जॉर्ज गॉडफ्रे

श्री सुमान गॉडफ्रे और श्रीमती गॉडफ्रे अपने तृतीय पुत्रके इंग्लैंडसे उदार सांस्कारिक शिक्षा प्राप्त करके लौटनेपर और भी बधाईके पात्र हैं। अपने दो पुत्रोंको बैरिस्टर और एकको डॉक्टर बनाकर किन्हीं भी माता-पिताको गर्व होगा; फिर उनके दूसरे बच्चे भी अभी स्कूलोंमें पढ़ रहे हैं। श्री जॉर्ज गॉडफ्रे[2] अपनी शिक्षा निर्विघ्न समाप्त करके सकुशल लौट आये हैं और उन्हें अपने मित्रों तथा देशवासियोंका स्वागत-सत्कार प्राप्त हुआ है, अतः वे बखूबी अपने-आपको कृतकार्य मान सकते हैं। परन्तु शिक्षा-सम्बन्धी योग्यताओंका महत्त्व बढ़ा-चढ़ाकर बतानेको हमारा जी नहीं चाहता। जनताके लिए यह जानना ज्यादा महत्त्वपूर्ण है कि ऐसा भव्य लाभ अपनी शान-शौकत बढ़ाने और धन-संचयके काम आयेगा या राष्ट्रकी सेवामें अर्पण होगा। और इस उपर्युक्त प्रश्नके उत्तरकी अपेक्षा हम श्री गॉडफ्रेके वादोंसे नहीं, उनके जीवनक्रमसे करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ५–१०–१९०७

१. सम्भवतः इसका मसविदा गांधीजीने बनाया था। देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ २७०।
२. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ६।

२१६. गरीब किन्तु बहादुर भारतीय

कुछ गरीब भारतीय अपनी नौकरी छोड़कर भिखारी बन जानेको तैयार हैं, किन्तु वे खूनी कानूनके सामने न झुकेंगे। यह बात हम अपनी जर्मिस्टनकी रिपोर्टमें दे चुके हैं। जिन भाइयोंने हिम्मतसे कानूनको ठुकराया है वे गरीब हैं, यह देखकर हम खुशीसे उछल तो नहीं पड़ते, फिर भी हम उन्हें नर-वीर मानते हैं; और यदि कानूनके मामलेमें हम जीते तो उसका यश बहुत-कुछ ऐसे गरीबोंको ही मिलेगा। व्यापारियोंमें जो लोग ढीले पड़ गये हैं उन्हें हम याद दिलाते हैं कि उनके व्यापारके प्रति [गोरोंकी] ईर्ष्याके कारण ही सारे भारतीय समाजको दु:ख उठाना पड़ रहा है। यह कानून मुख्यतः उन्हीं लोगोंके लिए शर्मनाक है। अतः उनके लिए लाजिमी है कि वे अपनी आबरूके लिए नहीं, तो देशके लिए ही अपनी टेक रखें।

परवानेके बिना व्यापारीका काम कैसे चलेगा, यह सवाल बहुत उठता है। लेकिन नौकरीसे अलग किये हुए भारतीयोंका क्या हाल होगा, यह सवाल ज्यादा भयंकर है। नौकरोंको बचाना हम ज्यादा महत्त्वपूर्ण मानते हैं। फिर भी हमारा कहना है कि कानूनके सामने घुटने टेकनेके बजाय नौकरी छोड़कर भूख सहन करना नौकरोंके लिए अधिक अच्छा है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५–१०–१९०७

२१७. भारतीय मतदाता

"मतदाता" (वोटर) नामसे लिखनेवाले एक भारतीयका पत्र हम इस अंकमें छाप रहे हैं। "मतदाता" ने जो सवाल उठाया है वह ऊपर-ऊपर देखनेमें ठीक लगता है। यदि लेडीस्मिथ या डर्बनमें भारतीय मतदाता होते तो नगरपालिकाके सदस्य परवाने छीन नहीं लेते, यह दलील एक ही शर्तपर ठीक है कि मताधिकारका उपयोग करनेमें भारतीय लोग गोरोंके मुकाबलेके हों। हमारा कहना है कि भारतीय ऐसा मुकाबला नहीं कर सकते, क्योंकि उनमें स्वतन्त्रताका जोश नहीं है। केपमें बहुतेरे मतदाता हैं, लेकिन उन्होंने अपने अधिकारका उपयोग नहीं किया। हमारे पाठकोंको याद होगा कि बम्बई जैसे शहरमें भी चुनाव-दलोंने अपना स्वाँग रचा था, फिर नेटालकी तो बात ही क्या? हमें विश्वास है कि जबतक भारतीय समाजमें पश्चिमकी सच्ची शिक्षाका प्रवेश नहीं होता, तबतक हममें वह जोश नहीं आयेगा और तबतक मत-रूपी हथियार बेकार है। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि मताधिकार खो दिया जाये। मताधिकारसे वंचित करनेकी कार्रवाईके खिलाफ हमने सख्त लड़ाई लड़ी है और आगे भी लड़ेंगे। लेकिन हम यह भी जानते हैं कि हम मताधिकारका उपयोग करने जायें तो वह खो जायेगा। किन्तु यदि रह जाये तो हम अवसर आनेपर उसका उपयोग कर सकते हैं। यह तलवार अभी तो म्यानमें ही शोभा देने लायक है। लेकिन लेडीस्मिथके परवानोंका

पहला और सरल उपाय यह है कि बिना परवानेके व्यापार किया जाये। लोगोंमें जबतक इतना जोश नहीं आ जाता तबतक हम मताधिकारकी बात बेकार समझते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५–१०–१९०७

२१८. केपमें संघ

केपका संघ श्री नूरुद्दीनकी अध्यक्षतामें जोर पकड़ता दीखता है। उसकी बैठककी कार्यवाही[1] हमने दी है। वह पढ़ने लायक है। जिस जोशसे यह संघ चल रहा है, उसी जोशसे यदि सार्वजनिक काम हो, तो खूबी मालूम होगी। नेताओंको यह याद रखना चाहिए कि यह समय अधिकार भोगनेका नहीं, लोक-सेवा करनेका है। तभी हमारे आसपास जो आग सुलग रही है, वह ठंडी होगी।

केपमें दो मण्डल एक ही जगह हैं, सभा (लीग) और संघ (असोसिएशन)। हम देखते हैं कि इन दोनों मण्डलोंके बीच गलत होड़ चल रही है। हमारी सलाह है कि दोनों मिलकर काम करें।

संघको हम याद दिलाना चाहते हैं कि उसके सदस्योंने लन्दन समितिके प्रति अपने कर्तव्यका पालन नहीं किया। केपकी ओरसे ५० पौंड आनेकी सम्भावना थी। परन्तु वह रकम आजतक नहीं मिली। समिति बहुत ही अच्छा काम कर रही है। और कामके हिसाबसे खर्च भी होगा ही। उस खर्चमें मदद देना दक्षिण आफ्रिकाके सभी भारतीयोंका कर्तव्य है। हम आशा करते हैं कि संघ यह काम उठा लेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५–१०–१९०७

२१९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

जनरल बोथाकी वर्षगाँठ

जनरल बोथाका जन्म-दिन शुक्रवारको था, इसलिए संघ और हमीदिया इस्लामिया अंजुमनने बधाईके तार भेजे थे। गोरोंकी ओरसे उन्हें एक बड़ी भेंट अर्पित की गई थी। इन तारोंका भेजा जाना भारतीय प्रजाके विवेकका सूचक है। हमारे तारोंसे यह सिद्ध होता है कि वे हमारे साथ न्याय करें या न करें, हम अपना विवेक नहीं खोते।

हमीदिया अंजुमनकी बैठक

नियमानुसार इस अंजुमनकी बैठक रविवारको हुई थी। सभा-भवन खचाखच भर गया था। यदि कानूनकी लड़ाई सफल हुई तो उसका श्रेय अधिकतर अंजुमनको ही प्राप्त होगा। मैंने यहाँ "यदि" शब्दका उपयोग किया है, उससे किसीको डरना नहीं चाहिए। "यदि"का

१. यह यहाँ नहीं दी गई।

उपयोग मैंने इसलिए किया है कि इतनी बड़ी लड़ाईमें भारतीय प्रजा अन्ततक अपनी एकताको कायम रखकर कानूनका विरोध करती रहेगी, इसमें सामान्यतः शंका बनी रहती है। क्योंकि इस जमानेमें हमारे लिए यह नया कदम है। हमारे मनमें इस वहमने गहरी जड़ें जमा रखी हैं कि कानूनकी मुखालफत नहीं की जा सकती। यदि यह वहम निकल जाये तो उसे कम उत्कर्ष नहीं कहा जायेगा। यदि हम अन्ततक कानूनको माननेसे इनकार करते रहे तो यही माना जायेगा कि हम छोटे-छोटे थोरो बन गये हैं। थोरो कौन हैं, इसे 'ओपिनियन' के पाठक अब जानते ही होंगे।

अब हम फिर सभाका विषय लें। सभामें इमाम अब्दुल कादिर सभापतिके आसनपर विराजमान थे। मौलवी साहब मुहम्मद मुख्त्यारने प्रभावशाली भाषण दिया और जोशीले शेर पढ़कर सुनाये, जो सभी भारतीयोंपर लागू होते हैं। उनके बाद श्री रामसुन्दर पण्डितने भाषण दिया। उसमें उन्होंने जमिस्टनकी लड़ाईका बयान किया और बताया कि उनके अनुमतिपत्रकी अवधि ३० तारीखको समाप्त हो रही है, फिर भी लोगोंकी माँगपर उन्होंने यहाँ रहना स्वीकार किया है। सरकार उनके अनुमतिपत्रकी अवधि नहीं बढ़ायेगी, तब भी यहीं रहकर वे जेल भोगेंगे। अपने कर्तव्यका पालन करनेमें चूकेंगे नहीं। उन्होंने यह भी कहा कि जमिस्टनके स्वयंसेवक जोहानिसबर्गमें मदद देनेको तैयार हैं। श्री गांधीने बताया कि धरनेदारोंकी मददके सम्बन्धमें प्रिटोरियासे श्री बेगका पत्र आया है। श्री उमरजी सालेने जोर देकर कहा कि मुसीबत आनेपर भी वे नये कानूनके सामने आत्मसमर्पण नहीं करेंगे। नये कानूनके सम्बन्धमें 'गुजराती'[1] पत्रमें एक लेख छपा था। श्री इब्राहीम कुवाड़ियाने वह पढ़कर सुनाया। श्री वल्लभ भाईने कहा कि कुर्मियों (कुनबियों) में से एक भी हिन्दू पीछे नहीं रहेगा। अर्जीपर करीब-करीब सभी हिन्दुओंने हस्ताक्षर कर दिये हैं। श्री नवाब खाँने भी भाषण दिया। सभापति महोदयने श्री बेग और श्री रामसुन्दर पण्डितके तत्परता दिखाने और श्री पण्डितके जोशके लिए आभार माना। नेताओंको अर्जीपर हस्ताक्षर पूरे करवानेकी प्रेरणा देकर बैठक समाप्त हुई।

चीनियोंकी सभा

चीनी संघकी सभा भी इसी रविवारको हुई थी। उनका सभा-भवन भी खचाखच भर गया था। श्री क्विन सभापति थे। श्री गांधीने कानूनके बारेमें सारी बातें समझाईं और कहा कि चीनी लोग डटकर कानूनका विरोध करें।

नये कानूनके आधारपर मुकदमा

ईलू मुथु नामक एक मद्रासीने नये कानूनके अन्तर्गत गुलामीका पट्टा लेनेके लिए अर्जी दी है। उसकी अर्जी ठीक न होनेके कारण पंजीयकने कानूनके अनुसार प्रिटोरिया न्यायालयमें नोटिस लगवाया है कि उसे नया पंजीयनपत्र न दिया जाये और वह न्यायालयमें आकर जवाब दे। कच्ची मिट्टीके घड़ोंको याद रखना चाहिए कि नये पंजीयनपत्र लेनेवालोंका यही हाल होगा।

"भारतीयोंका बहिष्कार करो"

प्रिटोरियामें महिला-मण्डली इस तरहकी आवाज उठा रही है। इन महिलाओंने प्रस्ताव किया है कि भारतीय फेरीवाले और भारतीय व्यापारियोंसे किसी तरहका व्यवहार न रखनेके

१. बम्बईसे प्रकाशित एक साप्ताहिक।

सम्बन्धमें गोरी महिलाएँ आन्दोलन करें और गोरोंसे ही माल लें। वास्तवमें हमें नये कानूनकी अपेक्षा ऐसी हलचलसे डरना चाहिए। यदि गोरे लोग भारतीयोंसे सम्बन्ध तोड़ लें तो बिना कानूनके हमें यहाँसे जाना पड़ेगा। इस परिस्थितिको रोकनेका एक उपाय यही है कि भारतीय समाज परिश्रमी बने और प्रामाणिकता बनाये रखे। साथ ही मेरा तो यह भी खयाल है कि इस समय हम जो हिम्मत दिखा रहे हैं उससे खुश होनेवाली महिलाएँ निःसन्देह व्यापार चालू रखेंगी। किन्तु यदि हमने नामर्दी दिखाई तो वे भी तिरस्कारपूर्वक हमें छोड़ देंगी। मेरी इस बातका यदि फेरीवालोंको अनुभव हुआ हो तो वे समर्थन कर सकेंगे।

कोमाटीपूर्टसे लौटे हुए भारतीय

इन चार भारतीयोंके बारेमें श्री चैमनेको जो पत्र लिखा गया था[1] उसके उत्तरमें वे लिखते हैं :

> मुहम्मद इब्राहीम, मूसा कारा, कारा वली और ईसा इस्माइल, इन चारोंने पुर्तगीज देशसे होकर [ट्रान्सवालमें] प्रवेश किया, इसलिए इन्हें रोक दिया गया था। जहाजके टिकट नहीं थे, इसलिए इन्हें डेलागोआ-बे नहीं जाने दिया गया। इनके पास रहनेकी जगह न होनेके कारण जाँचके समयके लिए पुलिसने एक कोठरी दी थी जो केवल गुजर-भरके लिए थी। इन लोगोंको ट्रान्सवालमें आनेका हक नहीं है। इसलिए अब इन्हें चले जाना चाहिए, नहीं तो मुकदमा चलाया जायेगा।

इन चार "बहादुरोंने" डर्बनके टिकट ले लिये हैं। इसलिए अब ये चैमने साहबको विशेष तकलीफ नहीं देंगे, न अब विशेष टीकाका कारण ही रहा है।

तुर्कीकी प्रजा

जोहानिसबर्गमें रहनेवाले तुर्कीके कुछ मुसलमानोंने मौलवी साहब अहमदकी मददसे तुर्कीके वाणिज्य-दूतको एक अर्जी भेजी है। उसमें बीस व्यक्तियोंके हस्ताक्षर हैं। उसका अनुवाद निम्नानुसार है :[2]

इस अर्जीपर तुर्कीके बीस मुसलमानोंने हस्ताक्षर किये हैं।

नेसरका पत्र

श्री ईसप मियाँने श्री नेसरको पत्र लिखा था। उसका उत्तर नीचे लिखे अनुसार आया है[3] :

> आपने जो रिपोर्ट दी है वह सही है। और उस वक्तके प्रत्येक शब्दपर मैं दृढ़ हूँ। जो एशियाई यहाँ नियमानुसार बसे हुए हैं उनसे मुझे बहुत हमदर्दी है। उनके लिए मैं पहले न्यायालयमें लड़ चुका हूँ और भविष्यमें प्रत्येक योग्य प्रसंगपर लड़नेको तैयार हूँ। लेकिन एशियाइयोंके प्रवेशको मैं और अधिक जारी रखनेमें असमर्थ हूँ। इस प्रवेशको रोकनेमें हर तरहकी मदद देनेका मैंने निश्चय किया है। आत्मरक्षाके

१. देखिए "पत्र: एशियाई पंजीयकको", पृष्ठ २२७।
२. पाठके लिए देखिए "प्रार्थनापत्र: तुर्कीके महा वाणिज्य-दूतको", पृष्ठ २६६।
३. मूल पत्र ५-१०-१९०७के **इंडियन ओपिनियन**के अंग्रेजी विभागमें प्रकाशित किया गया था।

लिए उतना जरूरी है। अँगुलियोंकी निशानीके सम्बन्धमें क्या आपत्ति हो सकती है, यह समझमें नहीं आता। उसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं मालूम होती। अँगुलियोंकी निशानीसे किसीकी धार्मिक भावनाको किस तरह चोट पहुँच सकती है? आप स्वेच्छया पंजीयनके बारेमें बहुत कह रहे हैं। लेकिन उसमें और अनिवार्य पंजीयनमें क्या अन्तर है, कृपया लिखें। स्वेच्छया पंजीयनमें बेकार समय जायेगा। भले लोग तो पंजीयन करवा लेंगे, लेकिन बदमाश तब भी बच जायेंगे। जैसे मैं यह नहीं कह सकता कि गोरे या उनके समाजका हरएक व्यक्ति ईमानदार है, वैसे ही आप भी यह नहीं कह सकते कि आपके भी सभी लोग ईमानदार हैं।

ईसप मियाँका उत्तर

इसपर श्री ईसप मियाँने निम्नलिखित उत्तर दिया है[1]:

आपके विवेकपूर्ण और खुले दिलसे लिखे गये पत्रके लिए हमारा संघ कृतज्ञ है। भारतीय प्रश्नका निराकरण करनेमें मुख्य कठिनाई यह है कि गोरे नेता भारतीय प्रश्नकी वास्तविकतासे परिचित नहीं हैं।

इस उपनिवेशमें रहनेवाले भारतीयोंके प्रति आपकी सहानुभूतिके लिए मैं कृतज्ञ हूँ। उन लोगोंके लिए ही यह लड़ाई है, इसलिए आपकी और हमारी लड़ाई मिलती-जुलती है।

भारतीय बड़ी संख्यामें प्रवेश करें, इसपर आपने आपत्ति प्रकट की है, जिससे संघको सहानुभूति है। गोरे आव्रजनके विरुद्ध हैं, इसलिए इस आपत्तिके सम्बन्धमें हमें कुछ कहना नहीं है। और इस विषयमें संघ हमेशा सरकारको मदद देनेको तैयार है।

अब हम एशियाई कानूनके गुण-दोषोंका विवेचन करें। सितम्बर १९०६ को जब एशियाई कानून बनाया गया था तब अँगुलियोंकी निशानीकी बात नहीं थी। अँगुलियोंकी निशानीकी जगह यदि हस्ताक्षरकी बात की जाती तो भी संघ कानूनका विरोध करता। हमें जो चीज चुभती है, और जिससे वेदना होती है वह यह है कि कानून हमें पंजीकृत होनेके लिए मजबूर करता है। अँगुलियोंकी निशानी देनेसे हमारी धार्मिक भावनापर चोट नहीं पहुँचती। किन्तु यह कानून तुर्कीके यहूदियों और ईसाइयोंपर लागू नहीं होता, इस धार्मिक भेदभावसे हमारी भावनाको चोट जरूर लगती है।

कानूनमें विधिवत् शर्तें बनाई गई हैं। उनके भंग होनेपर हर बातके लिए सख्त सजा रखी गई है। ऐसी सजाओंसे कानून भरा हुआ है। लेकिन हम जो विरोध करते हैं, वह इसलिए कि आप भारतीय प्रजाके साथ ऐसा व्यवहार करते हैं, मानो वह बदमाश समाज हो, ठग हो, उसने अनुमतिपत्रोंकी अदला-बदलीका धंधा ही उठा रखा हो और गैरकानूनी तरीकेसे लोगोंका प्रवेश कराता हो। भारतीय समाजका विरोध इससे है, और वह बिलकुल वास्तविक है। सामान्यतः, सख्त सजाएँ रखनेका अर्थ ही यह होता है कि ऐसे अधम अपराध होते हैं। भारतीय समाज ऐसे अपराध करनेका धंधा नहीं करता, और इसलिए बदमाशोंमें शरीक किये जानेपर वह उसके विरुद्ध लड़ता है। दूसरी बात यह भी याद रखनी चाहिए कि यह अधम कानून सिर्फ

१. मूल अंग्रेजी पत्रके हिन्दी अनुवादके लिए देखिए "पत्र: जे० ए० नेसरको", पृष्ठ २६२-६४।

भारतीयोंके लिए ही बनाया गया है। मलायी लोगोंके साथ बहुत-से भारतीयोंका सम्बन्ध है, रंगदार लोगोंके साथ उनका स्नेहभाव है, काफिरोंको वे अपने यहाँ नौकर रखते हैं। एशियाई कानून उपर्युक्त सभी लोगोंकी नजरमें भारतीयोंको नीचे गिराता है। उपनिवेशमें दूसरे लोगों तथा मलायी, रंगदार और काफिरोंपर कोई प्रतिबन्ध नहीं है, सिर्फ भारतीयोंको उनकी बदनामी करनेके लिए अलग किया गया है।

अन्तिम आपत्तिका उत्तर एशियाई प्रतिस्पर्धाका डर है। यह स्पष्ट है। इस बातको मेरा संघ स्वीकार करता है और इसलिए कहता है कि हम स्वेच्छया पंजीकृत होंगे, या अपनी अँगूठा निशानी या शिनाख्त देंगे। इससे हमारी प्रतिष्ठा बनी रहेगी, गोरोंका काम हो जायेगा और यहाँके निवासियोंको संरक्षण मिल जायेगा। आपकी यह मान्यता मालूम होती है कि स्वेच्छया पंजीयनसे झूठे प्रवेशकर्त्ताओंपर अंकुश नहीं लगता। ऐसे लोगोंके अस्तित्वको स्वीकार करनेसे मेरा संघ इनकार नहीं करता। लेकिन आप जो मानते हैं कि ऐसे लोग बच जायेंगे, यह भूल है। क्योंकि जो स्वेच्छया पंजीकृत नहीं होते उनपर आप नया कानून लागू कर सकते हैं। इसके अलावा एक निश्चित अवधिके बाद सबके प्रमाणपत्र एक साथ भी देखे जा सकते हैं। उस वक्त जिसके पास नया पंजीयनपत्र न हो, उसे प्रवासी अधिनियमके अन्तर्गत उपनिवेशके बाहर निकाला जा सकता है।

अन्तमें मैं इतना कहता हूँ कि उचित शिकायतोंके सम्बन्धमें मेरे देशभाइयोंने गोरोंकी इच्छाके अनुसार चलनेका प्रयत्न किया है, जबकि गोरोंने भारतीयोंका असन्तोष दूर करनेके लिए कुछ नहीं किया। उन्होंने आँखें मूँदकर भारतीयोंका विरोध करना ही अपना कर्तव्य समझा है। भारतीय क्या चाहते हैं, उन्होंने इसे जानने तक की परवाह नहीं की। आप अपने धंधेके कारण भारतीयोंके सम्पर्कमें काफी आये हैं तो क्या आप जरा इस मामलेमें पड़ेंगे? हमारी दृष्टिसे सम्पूर्ण प्रश्नको देखेंगे? इस प्रकार छानबीन करके देखिए कि जरा धैर्य और परस्पर सहायतासे समझौता किया जा सकता है या नहीं।

झूठे गवाहोंको सूचना

जोहानिसबर्गमें श्री बेंडरबर्गके पास पाँच भारतीयोंपर एक लूटका मुकदमा चला था। उसमें फरियादी तथा कुछ दूसरे भारतीयोंने जो गवाही दी वह मजिस्ट्रेटको झूठी मालूम हुई। इसपर उसने गवाहोंको फटकारा और अभियुक्तोंको बिना जाँच किये छोड़ दिया। उसने खुली अदालतमें, जहाँ बहुत-से भारतीय थे, सबसे कहा कि आजकल भारतीयोंमें झूठे मुकदमे बहुत होते हैं। यदि ऐसे मुकदमे फिर लाये गये तो झूठी गवाहीके लिए मुकदमा चलाया जायेगा। इस बातको प्रकाशित करते हुए मुझे दुःख होता है। लेकिन इसकी ओर सबका ध्यान आकर्षित करना जरूरी समझता हूँ। इस तरहके मुकदमोंसे भारतीयोंकी इज्जत जाती है, और हम दूसरोंकी नजरमें गिरते हैं। मेरा खयाल है कि गवाह तो खिलाड़ियोंके हाथके मोहरे थे, सच्चे गुनहगार खिलाड़ी हैं। उनसे मुझे कहना है कि थोड़े-से पैसोंके लालचमें गरीबोंको बरबाद करना और अपने साथ अपने समाजको भी कलंकित करना शोभा नहीं देता। झूठे मुकदमे बनाकर कमाई करनेके बजाय कमाईके और भी दूसरे तरीके हो सकते हैं।

अनुमतिपत्र खो जानेपर क्या किया जाये?

एक भाईने यह प्रश्न पूछा है। इसका उपाय आसान है। और वह है, विना अनुमतिपत्रके घूमें-फिरें। जेलका डर रहा नहीं, इसलिए यदि मजिस्ट्रेटके पास खड़ा किया जाये तो वेधड़क जायें। जाँच होनेपर उन्हें छोड़ दिया जायेगा। अन्तिम नोटिस निकल जानेके बाद वर्तमान अनुमतिपत्र खोयेके समान हो जायेगा; क्योंकि पुराना अनुमतिपत्र दिखानेसे कोई किसीको छोड़नेवाला नहीं है। इसलिए नये कानूनका विरोध करनेवाले अनुमतिपत्र खो जानेका डर क्यों रखें?

नई बला

स्वर्ण-कानून (गोल्ड लॉ) के अन्तर्गत व्यापारका परवाना नहीं दिया जा सकता, इस तरहका एक मुकदमा चल रहा है। मेरा खयाल है, सरकार ऐसा मुकदमा चलाकर सरासर गलती कर रही है। यह मामला उच्च न्यायालयमें ले जाया जायेगा, इसलिए इसके बारेमें विशेष कहना अनावश्यक है। सरकार स्वर्ण-कानून लागू करना चाहती है। इसका मतलब यह हुआ कि इस नये कानूनके सामने घुटने टेकनेवालोंके लिए चैन नहीं है। लेकिन यदि यह खूनी कानून गया तो मेरे विचारमें स्वर्ण-कानून अपने-आप मर जायेगा।

स्मट्सका उत्तर

प्रिटोरियाके कुछ लोगोंने गुलामीकी अर्जी दी थी और श्री स्मट्सने उसका उत्तर[1] भी ऐसा ही दिया है जो गुलामोंको फबे। उन्होंने कहा है कि जो एशियाई कानूनके अनुसार चलेंगे उनकी बेड़ीकी जाँच काफिरोंकी जगह गोरे करेंगे। शेष बातें स्वीकार नहीं की जा सकतीं। सम्भव हुआ तो अगले सप्ताहमें उस उत्तरका पूरा अनुवाद दूँगा। वह जानने योग्य है। आशा है, उसके साथ जोहानिसबर्गके आन्दोलनकी और भी महत्त्वपूर्ण बातें दूँगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५–१०–१९०७

२२०. पत्र : मगनलाल गांधीको

[जोहानिसबर्ग]
अक्तूबर ६, १९०७

चि० मगनलाल,

मैंने श्री बद्रीके[2] कागजपत्र अब खोज लिये हैं। उन्होंने श्री लोगनसे जो जायदाद खरीदी थी उसका पंजीयन हो चुका था और हस्तान्तरणका दस्तावेज मेरे पास है। क्या वे यही चाहते थे? पता लगाकर मुझे लिखो।

तुम्हारा शुभचिन्तक,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ४७६७) से।

१. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ २८४।
२. गांधीजीके एक मुवक्किल। देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ४५०।

२२१. पत्र : उपनिवेश सचिवको

जोहानिसबर्ग
अक्टूबर ७, १९०७

माननीय उपनिवेश-सचिव
प्रिटोरिया

महोदय,

मेरे संघकी समितिने मुझे निर्देश दिया है कि मैं आपके उस भाषणके बारेमें आपको अत्यन्त विनयपूर्वक कुछ शब्द लिखूँ जो आपने अपने निर्वाचकोंके सामने दिया था और जिसमें आपने एशियाई कानून संशोधन अधिनियमका उल्लेख किया था। यदि पत्रोंमें छपा हुआ विवरण ठीक है तो मेरी नम्र रायमें उसमें तथ्योंके सम्बन्धमें कई गलत-बयानियाँ हैं।

मेरे संघको इस बातसे बहुत दुःख पहुँचा है कि आप एक ऐसे उत्तरदायित्वपूर्ण पदपर आसीन होकर भी मन्दीके कारणके बारेमें जन-साधारणमें प्रचलित भ्रान्तिका ही प्रचार करें। व्यापार करनेवाले इस बातको जोर देकर कह चुके हैं कि इस भारी मन्दीका कारण कुछ और है। कुछ भी हो, उसका प्रभाव भारतीयोंपर उतना ही पड़ा है जितना यूरोपीयोंपर।

मेरा संघ इस वक्तव्यका पूर्णतया खण्डन करता है कि इस समय उपनिवेशमें १५,००० भारतीय हैं। मेरे संघको अंकोंका जो विश्लेषण प्राप्त हुआ है, वह शीघ्र ही आपको भेज दिया जायेगा। उससे आपको पता चलेगा कि इस समय ट्रान्सवालमें ७,००० से अधिक भारतीय नहीं हैं।

आपने यह कहनेकी कृपा की है कि पुराने कानूनके अन्तर्गत जो प्रमाणपत्र जारी किये गये थे उनकी दूसरी जाली प्रतियाँ तैयार करके उनको बेचा गया है और बम्बई, जोहानिसबर्ग और डर्बनमें ऐसे स्थान मौजूद हैं जहाँ ऐसे जाली प्रमाणपत्र अमुक रकम देकर खरीदे जा सकते हैं। मेरा संघ आपके इस वक्तव्यका पूरी तरह खण्डन करता है और विनयपूर्वक निवेदन करता है कि इस मामलेकी सार्वजनिक जाँच की जाये। किन्तु मेरे संघको इस बातका पता है कि पंजीयन कार्यालयका एक मुंशी जाली अनुमतिपत्रोंका व्यवसाय करता था और उसने निःसन्देह कुछ भारतीयोंको, जिनको न तो अपनी राष्ट्रीयताका और न अपने सम्मानका ध्यान था, अपना साधन बनाया। परन्तु वह बात, आपने जनताके सामने जो-कुछ रखा है उससे, बिलकुल अलग है।

आपने यह भी कहनेकी कृपा की है कि भारतीयोंने अँगुलियोंके निशानोंके कारण इस अधिनियमका विरोध किया है। मेरा संघ सरकारसे कई बार निवेदन कर चुका है कि भारतीयोंके विरोधका मौलिक कारण अँगुलियोंका निशान नहीं, बल्कि अनिवार्यताका सिद्धान्त तथा कानूनका वह सम्पूर्ण उद्देश्य है जो भारतीयोंको अपराधी करार देता है। इस कानूनके खिलाफ जब पहले-पहल एतराज पेश किये गये थे तब अँगुलियोंके निशानोंका जिक्र तक नहीं किया गया था। साथ ही मैं यह भी बताना चाहता हूँ कि जो भारतीय ट्रान्सवाल आये हैं उनसे भारतमें

कभी भी न तो अँगुलियोंके और न ही अँगूठोंके निशान लगवाये गये थे। भारतमें निश्चय ही कुछ मामलोंमें अँगूठोंके निशान लिये जाते हैं, किन्तु उनका सम्बन्ध अपराधोंसे नहीं होता। अँगुलियोंके निशान केवल अपराधियोंसे अथवा उनसे ही लिये जाते हैं, जिनका अपराधोंसे कोई सम्बन्ध होता है। अँगूठेका निशान जहाँ लिया जाता है वहाँ वह नियम केवल निरक्षरोंपर ही लागू होता है।

मेरे संघको सरकारकी इस इच्छाका हमेशा ही पता रहा है कि वह इस कानूनको पूरी तरह और कठोरतासे अमलमें लाना चाहती है। किन्तु मुझे एक बार फिर यह कहनेकी अनुमति दी जाये कि इस कानूनके सामने झुकने तथा सोच-विचार कर की गई अपनी शपथको तोड़नेसे हमारे समाजका जो पतन होगा, उसके मुकाबले कानूनका कठोरसे कठोर प्रशासन भी कुछ नहीं है। मेरा संघ यह अनुभव करता है कि यद्यपि आपने यह घोषणा कर दी है कि आपने इस प्रश्नके भारतीय दृष्टिकोणका विशेष रूपसे अध्ययन किया है, फिर भी विरोधकी मूल भावना और साथ ही मेरे संघ द्वारा उठाये हुए अत्यन्त महत्वपूर्ण मुद्दोंपर आपने बिलकुल ही ध्यान नहीं दिया।

अन्तमें मैं इस बातको फिर दोहरा देना चाहता हूँ कि भारतीयोंके अत्यधिक संख्यामें आव्रजन तथा व्यापारमें अनियन्त्रित प्रतियोगिताके विरुद्ध आपके एतराजकी मेरे संघने सदा ही कद्र की है। और समाजकी नेकनीयती प्रकट करनेकी दृष्टिसे उसने विनम्रतापूर्वक ऐसे प्रस्ताव पेश किये हैं, जिनसे दोनों एतराज दूर हो जायें। किन्तु, भारतीयोंके लिए यह असम्भव है कि वे इस कानूनको स्वीकार कर अपना रहा-सहा सम्मान भी खो बैठें, क्योंकि यह कानून सही वस्तु-स्थितिसे अनभिज्ञताके कारण बनाया गया है, कार्यरूपमें एक हद तक दमनकारी है और मेरा संघ जिस समाजका प्रतिनिधित्व करता है उसकी धार्मिक भावनाओंको चोट पहुँचाता है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
ईसप इस्माइल मियाँ
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–१०–१९०७

२२२. पत्र: 'रैंड डेली मेल' को

जोहानिसबर्ग
अक्तूबर ९, [१९०७]

सेवामें
सम्पादक
['रैंड डेली मेल'
जोहानिसबर्ग]

महोदय,

आपने श्री सुलेमान मंगा[1] तथा पूनिया[2] नामक एक भारतीय महिलाके, जिनके साथ घोर दुर्व्यवहार किया गया था, मामलोंको उत्साहपूर्वक उठा लेनेकी कृपा की थी। मैं आपका ध्यान एक तीसरे मामलेकी ओर आकर्षित करता हूँ, जो मेरे देखनेमें आया है। इस मामलेमें जो अकारण अपमान किया गया है, वह पहले दोनों मामलोंसे अधिक नहीं, तो कम भी नहीं है।

श्री एन्थनी पीटर्स जन्मतः भारतीय ईसाई और नेटालके एक पुराने सरकारी नौकर हैं। इस समय वे पीटरमैरित्सबर्गके मुख्य न्यायाधीशकी अदालतमें दुभाषियेका काम कर रहे हैं। रविवारकी बात है, वे शनिवारको पीटरमैरित्सबर्गसे चलनेवाली जोहानिसबर्ग मेलसे जोहानिसबर्ग जा रहे थे। उनके पास रियायती टिकट और रेलवेकी ओरसे मिला हुआ एक प्रमाणपत्र था, जिसमें उनके सरकारी पदका विवरण था। फोक्सरस्टमें जाँच करनेवाले पुलिस-अधिकारीने उनसे कड़ी जिरह की। श्री पीटर्सने अपना अनुमतिपत्र दिखलाया, जो उन्हें भारतीयोंके स्वेच्छया अँगूठा-निशान देनेसे पहले दिया गया था। इससे अधिकारीको सन्तोष नहीं हुआ। अतः श्री पीटर्सने वह रियायती टिकट दिखलाया, जिसका मैंने उल्लेख किया है; अपने हस्ताक्षर देनेका प्रस्ताव किया; किन्तु कोई फायदा नहीं हुआ। और अधिकारीने उनका यह कहकर अपमान किया कि शायद आप और किसीका रियायती टिकट लेकर आये हैं। इसपर श्री पीटर्सने अपनी छड़ी तक दिखलाई, जिसपर उनके नामके प्रथम अक्षर अंकित थे। फिर, उन्होंने अपनी कमीज भी दिखलाई, जिसपर उनका पूरा नाम था। किन्तु यह भी सन्तोषजनक नहीं समझा गया। तब उन्होंने तीन दिन बाद लौटनेकी जमानतके लिए रुपया जमा करनेका प्रस्ताव किया; किन्तु अधिकारीने एक काफिर पुलिसको आज्ञा दी कि वह श्री पीटर्सको अक्षरशः डिब्बेसे बाहर घसीट ले। जब श्री पीटर्सको सार्जेंट मैन्सफील्डके सामने पेश किया गया तो उसने उस भयंकर गलतीको अनुभव करते हुए माफी माँगी और उनको छोड़ दिया। लेकिन इतनेसे ही भला सन्तोष कैसे होता? इस अपमानके अलावा उन्हें फोक्सरस्टमें, जहाँ वे किसीको जानते नहीं थे, लम्बी तथा थका देनेवाली प्रतीक्षा करनी पड़ी और साथ ही उनकी तीन दिनकी छोटी-सी छुट्टीका भी बड़ा-सा हिस्सा बेकार गया। श्री पीटर्स आज रातको नौकरीपर लौटेंगे। इस घटनाके बारेमें मुझे टिप्पणी करनेकी आवश्यकता नहीं है। मुझे केवल यही कहना है कि इस देशमें

१. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ २८८-८९ और २९४।
२. वही, पृष्ठ ४६३-६४।

यात्रा करनेमें भी अनेक सम्मानित भारतीयोंको जो-कुछ सहन करना पड़ता है, यह उसका एक नमूना है। यहाँ साधारण कानून बनानेका प्रश्न नहीं है, एशियाइयोंका बड़ी संख्यामें आनेका भी प्रश्न नहीं है; बल्कि मनुष्य और मनुष्यके बीचमें साधारण शिष्टता तथा न्यायका प्रश्न है। अथवा, 'ग्लासगो हेरल्ड' में उस दिन लिखनेवाली श्रीमती बॉगलके शब्दोंमें, क्या रंगदार चमड़ी होना ट्रान्सवालमें श्वेत लोगोंके विरुद्ध जुर्म है?

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
रैंड डेली मेल, १०-१०-१९०७

२२३. केपके भारतीय

केपके सर्वोच्च न्यायालयमें प्रवासी कानूनसे उत्पन्न एक महत्त्वपूर्ण परीक्षणात्मक मुकदमेकी सुनवाई हुई थी, जिसका विवरण[1] 'केप टाइम्स' ने प्रकाशित किया था। कुछ विलम्ब हो जानेपर भी हम उसे इस अंकमें अन्यत्र उद्धृत कर रहे हैं। केपकी संसदमें जब प्रवासी अधिनियम पास किया जा रहा था उस समय वहाँके प्रमुख भारतीयोंने जो सुस्ती दिखाई उसपर हम पहले भी खेद प्रकट कर चुके हैं। हमें विश्वास है कि फरियाद की जाती तो इस प्रकारके कानूनमें निश्चय ही काफी संशोधन कर दिया जाता। यद्यपि मुकदमेके तथ्योंको उक्त विवरणमें पूरी तरहसे दिया गया है, तथापि हम दुबारा उनको यहाँ दे रहे हैं। केपमें बसा हुआ एक भारतीय, जिसकी वहाँ कुछ जमीन-जायदाद थी, और जो १८९७ से वहाँ सामान्य विक्रेताका रोजगार करता था, भारत जाना चाहता था, और भारतसे लौटते समय होनेवाली असुविधासे बचनेके इरादेसे एक निश्चित अवधि तक उस उपनिवेशसे अनुपस्थित रहनेका अनुमतिपत्र चाहता था। प्रवासी अधिकारीने ऐसा अनुमतिपत्र देनेसे इनकार कर दिया और ऐसा अनुमतिपत्र देना चाहा जिसकी अवधिका निश्चय वह स्वयं करता। यहाँ प्रश्न यह नहीं है कि प्रवासी-अधिकारीका निर्णय उचित था या नहीं; क्योंकि एक ओरसे अधिकार पानेका तथा दूसरी ओरसे उसे न देनेका प्रयत्न किया जा रहा था। प्रवासी-अधिकारीका कहना था कि एक एशियाईको उपनिवेशसे अनुपस्थित रहनेका अनुमतिपत्र देना एक रियायत है। किन्तु एशियाईका कहना था कि यह उसका अधिकार है। अब सर्वोच्च न्यायालयने यह निर्णय दिया है कि कानूनके अनुसार एशियाइयोंको अनुपस्थितिका अनुमतिपत्र पानेका निहित अधिकार नहीं है। सारांश यह कि यह मामला निरा स्वाँग है; क्योंकि इससे एशियाइयोंको दासताकी अवस्थामें पहुँचा दिया गया है, जिसके लिए वहाँके प्रमुख भारतीयोंके अलावा और किसीको दोष नहीं दिया जा सकता। इसके अलावा, दलीलोंमें उठाया गया सबसे दिलचस्प मुद्दा अनिश्चित ही छोड़ दिया गया है। प्रवासी अधिनियमकी पहली धारा १९०२ के प्रवासी अधिनियमके द्वारा दिये गये अधिकारोंकी रक्षा करती हुई

१. विवरण यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

मालूम होती है, जिसे उक्त अधिनियमने मंसूख कर दिया है। इसमें कहा गया है कि :

> **इस मंसूखीका इस अधिनियमके लागू होनेके समय पूरे किये गये अथवा शुरू किये गये कामों, किन्हीं अधिकारों, सुविधाओं या प्राप्त संरक्षणों, किन्हीं सजाओं या देनदारियोंकी जिम्मेदारी, किन्हीं वर्तमान निर्योग्यताओं, किसी किये हुए अपराध अथवा की हुई कार्यवाहीपर कोई प्रभाव न पड़ेगा।**

इधर, १९०२ का अधिनियम ४७ दक्षिण आफ्रिकामें आकर वसनेवाले दूसरे लोगोंके साथ एशियाइयोंके अधिकारोंकी भी रक्षा करता था। इससे ऐसा लगता है कि १९०२ से पहले केपमें, या दक्षिण आफ्रिकामें भी, वस जानेवाले भारतीयोंके अधिकारोंपर १९०६ के अधिनियमका कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता। न्यायमूर्ति मैसडॉर्पने साफ कहा कि उस भारतीयके सम्बन्धमें ही यह मुद्दा उठाया जा सकता है और उसका फैसला किया जा सकता है जो १९०२ से पूर्व केपका निवासी रहा हो और अनुपस्थितिका अनुमतिपत्र लिये विना केपसे वाहर जाकर फिर वहाँ वापस आये। यह वहुत ही सहज है और हमारा विश्वास है कि केपमें रहनेवाले भारतीय अपने इस अधिकारकी परीक्षा करा लेनेमें समय न खोयेंगे। अनुपस्थितिका अनुमतिपत्र जारी करनेकी प्रथा अत्यधिक दमनकारी है; और वह निःसन्देह उस स्वतन्त्रतामें हस्तक्षेप करती है, जिसका हर आजाद आदमीको अधिकार है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–१०–१९०७

२२४. 'इंडियन ओपिनियन' के बारेमें

हमारे पाठकोंने देखा होगा कि हम गुजरातीमें पहले चार पृष्ठ देते थे, फिर आठ हुए, उसके वाद वारहपर पहुँचे, और कुछ सप्ताहसे तेरह, चौदह और पन्द्रह पृष्ठ चल रहे हैं। अव हमने हमेशा सोलह पृष्ठ देनेका इरादा किया है। सम्भव है, कभी किसी असुविधाके कारण इतने न दिये जा सकें। इस तरह कलेवर वढ़ानेसे खर्च वढ़ता जाता है। फिर भी हम विचार वदलनेवाले नहीं हैं; क्योंकि हमारा हेतु सेवा करके अपनी रोटी कमाना है। मुख्य उद्देश्य है सेवा करना। कमाई उसके वाद है। 'इंडियन ओपिनियन' जवसे शुरू हुआ है[१] तवसे आजतक इससे मालदार वननेका लक्ष्य न तो किसीका रहा, और न आगे रहेगा। इसलिए आमदनी जितनी ज्यादा हो उतना ही पाठकोंको फायदा पहुँचे, इसकी हम व्यवस्था करना चाहते हैं। इस पत्रमें काम करनेवालोंकी आमदनी एक सीमा तक पहुँचनेके वाद जो-कुछ भी रकम वच रहेगी, और ऐसी वचतका समय आयेगा तो, वह सव रकम सार्वजनिक कार्यमें खर्च की जायेगी।

हमारी निश्चित मान्यता है कि 'इंडियन ओपिनियन' की विक्रीमें जितनी वृद्धि होगी, उतनी ही हमारी शिक्षा और स्वाभिमानमें वृद्धि होगी। फिलहाल 'इंडियन ओपिनियन' के ग्राहक सिर्फ ग्यारह सौ हैं, यद्यपि उसके पाठकोंकी संख्या वहुत ज्यादा है। यदि सभी पाठक

१. जून, १९०३; देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३३६-३७।

अपनी-अपनी प्रति लें तो 'ओपिनियन' आज जितनी सेवा कर रहा है उससे तिगुनी ज्यादा सेवा कर सकता है। हम जिस तरह पृष्ठसंख्या बढ़ाते हैं उसीके अनुपातमें प्रोत्साहन भी चाहते हैं, यह ज्यादा तो नहीं माना जायगा। जो इस पत्रकी कीमत पूरी तरहसे जानते हैं, वे यदि एक-एक ग्राहक बना दें तो भी हमें प्रोत्साहन मिलेगा और पृष्ठ बढ़ानेसे जो खर्च बढ़ता है, उसमें मदद मिलेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–१०–१९०७

२२५. दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति

इस समितिको अब एक वर्ष पूरा हो रहा है।[1] इसे दूसरे वर्ष चालू रखा जाये या नहीं, यह दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंपर निर्भर है। श्री रिचने यह सवाल उठाया है। उनके पत्रकी ओर हम प्रत्येक भारतीयका ध्यान खींचते हैं।

समितिने काम बहुत किया है और उसका परिणाम बहुत ही अच्छा हुआ है, इस बातको प्रत्येक भारतीय समझ सकता है। अभी हमारी नाव बीच समुद्रमें है। इस बीच समितिको तोड़ना हम नावको डुबानेके समान मानते हैं।

समितिके कामसे केवल ट्रान्सवालको ही नहीं, समूचे दक्षिण आफ्रिकाको लाभ है। फ्रीडडॉर्पके कानूनका लाभ केवल जोहानिसबर्ग ही भोगेगा सो बात नहीं। उस कानूनमें जो परिवर्तन हुआ और जन-मतपर जो असर पड़ा है उसका लाभ सबके लिए समझना चाहिए। नये कानूनकी लड़ाईकी सफलतामें समस्त भारतीयोंका लाभ समाया हुआ है। समितिने बस इतना ही नहीं किया है। नेटालका नगरपालिका-कानून रद-सा है। उसका श्रेय समिति ही ले सकती है। परवानेके सम्बन्धमें समिति अभी लड़ रही है। डेलागोआ-बेके बारेमें, हमारा विचार है, समितिकी लिखा-पढ़ीका असर हुआ है। और यदि केपके भारतीयोंकी नींद खुल जाये तो उनके कानूनके लिए भी समिति लड़ सकती है।

समितिमें कई प्रसिद्ध लोग हैं। लेकिन यदि उसका काम करनेवाले श्री रिच न हों तो वह चल ही नहीं सकती। सर मंचरजी भावनगरी बहुत परिश्रम करते हैं। परन्तु यह काम उनके बहुत-से कामोंमें एक है। श्री रिचका तो सारा समय समितिके काममें ही जाता है। इसलिए उनके बिना समितिको चलाना मुश्किल होगा। उनका दक्षिण आफ्रिका लौट आनेका समय आ गया है, फिर भी जान पड़ता है कि वे वहाँ रुकनेमें खुश हैं।

अब खर्चके सम्बन्धमें विचार करें। समितिकी स्थापनाके समय हमने कमसे-कम ३०० पौंड खर्चका अनुमान लगाया था। लेकिन काम इतना बढ़ गया कि समितिको जो ५०० पौंड भेजे गये वे भी कम पड़े। इतने खर्चमें भी काम इसलिए चल गया कि श्री रिचने नाममात्रको वेतन लिया है। वे तो वह भी न लेते, लेकिन उनके लिए और कोई चारा नहीं था। अब हमें उनका पूरा खर्च उठाना चाहिए। यानी उनके हिसाबसे एक वर्षका खर्च १,००० पौंड होगा। यदि समिति पूरी ताकतसे एक वर्ष काम करे तो ५०० पौंड उसके लिए मानना चाहिए

१. यह नवम्बर, १९०६ में स्थापित की गई थी; देखिए खण्ड ६, पृष्ठ २४३-४४।

और ५०० पौंड श्री रिचको देनेके लिए। इस तरह हिसाब लगानेसे १,००० पौंड होते हैं। फुटकर खर्चमें कटौती की जा सकती है, किन्तु श्री रिचके खर्चमें नहीं; क्योंकि उतना खर्च तो विलायतमें सहज ही हो जाता है।

यह प्रश्न हर भारतीयके लिए विचार करने योग्य और हर संघके लिए हाथमें लेने योग्य है। *समितिका खर्च दक्षिण आफ्रिकाके प्रत्येक हिस्सेसे पूरा किया जाना चाहिए।*

यदि केप, रोडेशिया, डेलागोआ-बे, नेटाल और ट्रान्सवाल मिलकर इतना खर्च उठा लें तो अधिक नहीं होगा। इतना खर्च किया जानेपर भी सामान्यतः ऐसी समिति, और ऐसा काम मिल नहीं सकता। श्री रिच समितिके कामको वेतन-भोगी नौकरकी तरह नहीं, बल्कि अपना काम समझकर करते हैं; इसलिए उपर्युक्त रकमसे काम चल सकता है।

इस सम्बन्धमें पाठकोंके जो भी विचार संक्षेपमें आयेंगे, उन्हें प्रकाशित किया जायेगा। यदि कोई इस सम्बन्धमें पैसे भेजना चाहें तो हम स्वीकार करेंगे। भेजनेवालोंको आखिरमें संघकी रसीद मिलेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-१०-१९०७

२२६. स्मट्सका भाषण

श्री स्मट्सने प्रिटोरियामें जो भाषण दिया उसका पूरा अनुवाद हमने अपनी जोहानिसबर्गकी चिट्ठीमें दिया है। वह बहुत ही पढ़ने व विचार करने योग्य है। श्री स्मट्स बड़े गर्वसे बोले हैं। किन्तु ईश्वर किसीका गर्व टिकने नहीं देता। वही हाल श्री स्मट्सके गर्वका होना सम्भव है।

उन्होंने जितना गर्व किया है उतना ही उनका अज्ञान है। श्री ईसप मियाँने उन्हें समुचित उत्तर दे दिया है, यह देखकर हम उन्हें बधाई देते हैं।

श्री स्मट्स ऐसे बोलते हैं, मानो ब्रिटिश सरकारकी उनके मनमें कोई बिसात नहीं। उनके इन शब्दोंका, सम्भव है, उदारदलीय पक्ष भी विरोध करेगा — यद्यपि हमें इसकी कुछ भी परवाह नहीं कि वह पक्ष उनका विरोध करता है या नहीं करता।

श्री स्मट्सके अज्ञानके उदाहरण लें। उनका कहना है कि हम लोग अँगुलियोंकी छापके सम्बन्धमें ही लड़ाई लड़ रहे हैं। *यह बात बिलकुल बेहूदा है। यह ठीक है कि अँगुलियोंकी छापकी बात भी एक प्रश्न है, लेकिन हमारी लड़ाई उसीपर आधारित नहीं है। लड़ाईका मुख्य कारण यह है कि यह कानून हमें अपराधी और झूठा मानकर हमारे व्यक्तित्वपर हमला करता है, हमें गोरे तथा अन्य काले लोगोंके सामने गिराता है और निर्माल्य समझकर हमें कुचल देना चाहता है।* इन सब बातोंको नजरअंदाज कर, केवल अँगुलियोंकी छापकी बातपर जोर देकर, श्री स्मट्स हमारा मजाक उड़ाते हैं और गोरोंको हँसाते हैं। इस असत्य तथा अन्य आरोपोंका श्री ईसप मियाँ तीखे शब्दोंमें श्री स्मट्सको जवाब दे चुके हैं। उन्होंने हमपर यह आरोप लगाया है कि बम्बई, जोहानिसबर्ग तथा डर्बनमें झूठे अनुमतिपत्र बेचनेके लिए भारतीय कार्यालय चल रहे हैं। यह छोटी-मोटी बात नहीं है।

परन्तु हमारे लिए श्री स्मट्सकी इस सरासर झूठकी अपेक्षा उनके विचार अधिक समझ लेने योग्य हैं। श्री स्मट्सके कथनसे हम समझ सकते हैं कि यह सारा आक्रमण व्यापारियोंपर है। भारतीय व्यापारी उनकी आँखोंमें खटकते हैं। उन्होंने स्पष्ट कहा है कि वे व्यापारियोंको वस्तीमें ही भेजेंगे। चाहे जितनी मुसीबतें भोगनी पड़ें, वे ट्रान्सवाल केवल गोरोंके लिए ही रखना चाहते हैं। इस समयकी व्यापारिक मन्दीका दोष भारतीय व्यापारियोंपर थोप रहे हैं, और जवतक भारतीय व्यापारियोंकी जड़ें नहीं उखाड़ देंगे तवतक वे चैन नहीं लेंगे। वे समझते हैं कि यदि हम लोग इस कानूनको मान लें तो फिर उन्हें जो-कुछ करना हो वह कर सकेंगे। जवरदस्त टक्कर लेकर और शपथें खाकर यदि हम सो जायें तो फिर लात मारना आसान है। इससे खासकर व्यापारियोंको समझ लेना चाहिए कि यदि व्यापारी पंजीयन करवायेंगे तो उनका दोहरा नुकसान होगा। उनकी प्रतिष्ठा जायेगी, उन्हें भारतीय धिक्कारेंगे और हाथ-मुँह घिसनेके बाद भी उन्हें वस्तीमें जाकर वरवाद होना पड़ेगा। यदि वे दृढ़ रहकर लड़ेंगे तो उनकी प्रतिष्ठा वनी रहेगी; और प्रतिष्ठा ही सच्चा धन है। इतना ही नहीं, दृढ़ रहनेसे लड़ाई जीतनेकी पूरी सम्भावना है। अर्थात् उनका व्यापार वच जायेगा। बचनेका एक ही रास्ता है और वह है कानूनके खिलाफ जूझना। अन्यथा हम आजसे ही मरे हुए हैं।

फिर, श्री स्मट्सके शब्दोंको हम धमकीके रूपमें ही लेते हैं। जो करता है वह बकता नहीं। काटनेवाला कुत्ता भौंकता नहीं। फन उठानेवाला साँप डसता नहीं, केवल फुफकारता है। श्री स्मट्स एक ओर तो कहते हैं कि दिसम्बर महीनेमें प्रत्येक भारतीयको निर्वासित करेंगे; दूसरी ओर कहते हैं कि जनवरीमें परवाने छीनकर दूकानें वन्द कर देंगे। इसमें सच क्या है? यदि दिसम्वरमें सवको निकाल वाहर करेंगे तो फिर दुकानें किसकी वन्द करेंगे? ऐसे शब्द तो क्रोधका मारा पागल मनुष्य ही वोलेगा। फिर, निर्वासित करनेकी सत्ता तो उनके हाथमें आई नहीं है, पहले ही निर्वासित करनेकी धौंस दे रहे हैं। इसे हम वच्चोंका खेल समझते हैं। आखिर निर्वासित करें और जेलमें वन्द कर दें, इसका डर उसे क्यों लगेगा जिसने अपनी प्रतिष्ठाको श्रेयस्कर माना है? और अन्तमें भारतीय समाजको खुदापर भरोसा है, इसलिए वह हजार स्मट्सोंसे भी नहीं डरेगा।

श्री स्मट्स एक ही वातकी रट लगाये जा रहे हैं, किन्तु दूसरी ओर, हम देख रहे हैं कि, इंग्लैंडमें हमारा समर्थन वढ़ता जा रहा है। मंगलवारके तारोंसे ज्ञात होता है कि काले मनुष्योंकी संरक्षक समिति और नैतिक समिति-संघने मिलकर प्रस्ताव किया है कि एशियाई कानून वुरा है और इस सम्वन्धमें भारतीय सरकार, उपनिवेश मन्त्रालय तथा ट्रान्सवालकी सरकारको नरमीसे काम लेना है। ये सव समितियाँ और सारे संसारके समाचारपत्र हमारे पक्षमें हैं। इसके सामने श्री स्मट्स चाहे जितना जोर करें और चाहे जितना घमण्ड करें, उनसे क्या होना है? जिसका खुदा रक्षक है उसका भक्षण किस इन्सानके वूतेका है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–१०–१९०७

२२७. वाईबर्गका भाषण

श्री वाईबर्गने ब्लूमफॉन्टीनमें जो भाषण दिया है उसका सारांश[1] हमने अन्यत्र दिया है। श्री वाईबर्गने कहा है कि गोरोंको यदि उन्नति करनी है तो काले लोगोंको बिलकुल अलग देशमें रखा जाये, जिससे गोरोंका कालोंसे जरा भी संसर्ग न हो। यह कहना आवश्यक नहीं है कि काले लोगोंको अलग निकाल देनेमें एशियाइयोंका अलग किया जाना भी शामिल है। श्री वाईबर्गके शब्दोंमें ऐसा अर्थ समाया हुआ है। भारतीय लोग गोरोंसे अधिक सभ्य ही नहीं हैं, उनसे बहुत ही प्राचीन सभ्यताका दावा करते हैं। श्री वाईबर्गको स्वार्थवश इस बातका खयाल तक नहीं। इसलिए स्पष्ट रूपसे कहा जाये तो इसका अर्थ यह होता है कि यदि श्री वाई-बर्गका वश हो तो कल सवेरे वे भारतीयोंको अकेले रहनेके लिए रवाना कर देंगे। वे या उनके अन्य साथी इस कामको कर सकेंगे या नहीं, यह बहुत-कुछ इसपर निर्भर है कि भारतीय इस समय कितना बल दिखाते हैं। यदि वर्तमान लड़ाईमें भारतीय पीछे हट गये तो गोरे उन्हें बेदम समझकर अलग रहनेके लिए निकाल देंगे; इसकी भनक अभीसे सुनाई पड़ रही है। तब क्या भारतीय इस स्थितिको समझकर सतर्क नहीं रहेंगे? एक ओर श्री स्मट्सने कहा है कि कानूनके सामने नहीं झुकोगे तो यह करेंगे और वह करेंगे; दूसरी ओर श्री वाईबर्गने चेतावनी दी है, यद्यपि घुमा-फिराकर, कि यदि हम कानूनके सामने झुक गये (अर्थात् निर्माल्य हैं, इसका निश्चय होने दिया) तो हमें अलग रहनेके लिए निकाल देनेमें कुछ भी देर नहीं लगेगी। श्री स्मट्सकी धमकीसे यदि कोई डर गया हो तो उसके लिए श्री वाईबर्गके शब्द कम ध्यान देने योग्य नहीं हैं। उपाय केवल एक ही है; और वह है कि भारतीय इस लड़ाईमें अटल रहकर अपना पानी दिखा दें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-१०-१९०७

२२८. केपके भारतीय

केपका प्रवासी-कानून ज्यों-ज्यों हम पढ़ते हैं त्यों-त्यों उसके लिए हम केपके भारतीय नेताओंको दोषका पात्र समझते हैं। फ्राईबर्गके श्री धारशीकी ओरसे जो मुकदमा चलाया गया था उसे हम बहुत महत्त्वपूर्ण मानते हैं। उसका आवश्यक विवरण हमने अंग्रेजीमें दिया है और उसपर टिप्पणी भी लिखी है।[2] यहाँ उसकी उतनी ही हकीकत दे रहे हैं जितनी समझमें आ सके।

श्री धारशी १८९७ से केपमें व्यापार करते हैं। उन्होंने भारत जानेके लिए अठारह महीनेकी अवधि वाला अनुमतिपत्र माँगा। अधिकारीने वह अनुमतिपत्र देनेसे इनकार कर दिया और एक वर्षकी अवधिका अनुमतिपत्र देनेकी रजामन्दी दिखाई। श्री धारशीने अधिकारके आधारपर अनुमतिपत्रकी माँग की। अधिकारीने कहा कि उन्हें अधिकार कुछ भी नहीं है। अनुमतिपत्र देना या न देना अधिकारीपर निर्भर है। इसपर श्री धारशीने अदालतमें मुकदमा दायर किया।

१. यहाँ नहीं दिया गया।

२. देखिए "केपके भारतीय", पृष्ठ २७७-७८।

सर्वोच्च न्यायालयने श्री धारशीकी अर्जी नामंजूर कर दी और निर्णय दिया कि भारतीय लोग अनुमतिपत्र देनेके लिए अधिकारीको बाध्य नहीं कर सकते।

इस फैसलेका अर्थ यह हुआ कि केप छोड़कर यदि कोई भारतीय बिना स्वीकृतिके जाता है तो लौटकर नहीं आ सकता। अनुमतिपत्र देनेकी सत्ता अधिकारीके हाथमें रहनेके कारण भारतीय सदाके लिए केपमें पराधीन हो गये। इस समय अनुमतिपत्र सभीको दिया जाता है, इसमें कोई विशेष बात नहीं है। परन्तु अनुमतिपत्र लेना पड़ता है, यही जुल्मकी बात है। ऐसा कानून कहीं नहीं है। नेटालमें एक बार प्रमाणपत्र मिलता है, वह हमेशाके लिए पर्याप्त होता है। ट्रान्सवालमें भी जो प्रमाणपत्र देना चाहते हैं वह एक बारका है। केपसे जब कोई भारतीय जाना चाहे तब उसे अनुमतिपत्र लेना चाहिए। यदि वह न ले और उसे अंग्रेजी न आती हो तो वह वापस नहीं आ सकता। इस कानूनको हम अत्यन्त अत्याचारपूर्ण मानते हैं। इसके अलावा, इस अनुमतिपत्रके लिए एक पौंड शुल्क और लगता है। इसमें और गुलामीमें अधिक अन्तर नहीं है। केपसे अनुमतिके बिना क्यों नहीं जाया जा सकता?

अब भी उपाय है। एक तो यह कि केपके नेता जबरदस्त आन्दोलन करके कानूनमें परिवर्तन करायें। दूसरा यह कि केपके चुनावोंके समय वे अपनी ताकत बतायें। इस कानूनमें और एक डंक है, यह भी स्मरण रखनेकी बात है। प्रत्येक भारतीयके लिए अपना फोटो देना अनिवार्य है। कुछ लोगोंसे फोटो नहीं लिये जाते। इससे उन्हें फूलना नहीं है। वसीलेवाले व्यक्ति यदि छूट जाते हैं तो उससे भारतीय समाजको क्या लाभ? उससे हमारी प्रतिष्ठाकी रक्षा नहीं होती।

जो तीसरा मार्ग है उसपर भी विचार कर लें। उपर्युक्त मुकदमेकी दलीलके समय एक प्रश्न यह उठा था कि १९०२ से पहले केपमें बसे हुए भारतीयोंपर १९०६ का कानून लागू नहीं होना चाहिए। यह प्रश्न मुकदमेमें नहीं उठा था, इसलिए न्यायालयने इसके सम्बन्धमें निर्णय नहीं दिया और कह दिया कि जब ऐसा मुकदमा आयेगा तब न्यायालय देख लेगा। १९०२ के कानूनके अनुसार दक्षिण आफ्रिकामें बसनेवाले प्रत्येक भारतीयको केपमें न जानेका अधिकार था। इससे यह समझा जाता है कि १९०२ के पहलेसे बसे हुए भारतीयपर १९०६ का कानून लागू नहीं होना चाहिए। यदि यह दलील ठीक है तो ऐसे भारतीयके लिए अनुमति-पत्रकी आवश्यकता नहीं रहती। इस प्रकारका मुकदमा न्यायालयमें लानेके लिए १९०२ के पूर्वसे बसनेवाले भारतीयको केपसे बाहर जाकर वापस आनेका प्रयत्न करना चाहिए। यदि प्रवासी-अधिकारी उसपर रोक लगाये, तो उपर्युक्त प्रश्न सर्वोच्च न्यायालयमें उठाया जा सकता है। यह प्रश्न उठाने योग्य है, इसमें कोई सन्देह नहीं। इस प्रकार केपके भारतीय तीन मार्ग अपना सकते हैं और हमें आशा है कि वे तीनों मार्ग अपनायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-१०-१९०७

२२९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

स्मट्सने टुच्चे पत्रका उत्तर दिया

मैं कह चुका हूँ कि श्री स्मट्सने उस पत्रका उत्तर दे दिया है, जो श्री रूजने कुछ भारतीय नेताओंकी ओरसे लिखा था। अब उस उत्तरका अनुवाद दे रहा हूँ:[1]

> नये कानूनके अन्तर्गत बनाये गये नियमोंके सम्बन्धमें आपका ३० अगस्तका पत्र मुझे मिला। ट्रान्सवालमें रहनेवाले एशियाई लोग कानूनके सामने झुक जायेंगे तो उन भारतीयोंके अनुमतिपत्र जाँचनेके लिए, जिनपर कोई सन्देह नहीं है तथा जिन्होंने कोई अपराध नहीं किया, खास तौरसे चुने हुए कुछ गोरे अधिकारी नियुक्त किये जायेंगे।
>
> परवाना देनेवाले कारकुनको इसकी जाँच करनेका अधिकार नहीं दिया जा सकता कि अर्जदारोंके अनुमतिपत्र सच्चे हैं या झूठे। परवाना-अधिकारीके समक्ष पंजीयन-पत्र पेश करना होगा और केवल दाहिने हाथके अँगूठेकी निशानी देनी होगी। वह निशानी पंजीयकके पास भेजी जायेगी। यदि वह पहलेकी निशानीसे मिल गई, तो फिर विशेष जाँच नहीं की जायेगी।
>
> गुमाश्तोंको मियादी अनुमतिपत्रोंके द्वारा बुलानेके बारेमें अपने विचार पहले व्यक्त कर चुका हूँ। उनमें परिवर्तन नहीं किया जा सकता।
>
> माता-पिताओंसे उनके बच्चे अलग कर देनेका इरादा नहीं है। और सोलह वर्षसे कम उम्रके बालकोंको बाहर भेजनेका हुक्म नहीं दिया जा सकता। लेकिन पिता या अभिभावकको कानूनके अनुसार बालकका हुलिया, अँगुलियोंकी निशानी आदिका नियम पालना होगा।
>
> चीनी राजदूत आदिके अँगुलियोंके निशान नहीं लेनेका नियम है। उनके सिवा इस नियमसे किसीको मुक्त नहीं किया जा सकता।

'जैसी बोनी वैसी कटनी'

इस कहावतके अनुसार जिन साहबोंने श्री स्मट्सको पत्र लिखवाया था उन्हें उपयुक्त ही उत्तर मिला है। यह उत्तर बताता है कि श्री स्मट्सने एक भी बात नहीं मानी; गोरे अनुमतिपत्र निरीक्षक भी तभी मिलेंगे जब सभी भारतीय पंजीकृत होना स्वीकार करेंगे, कुछ खास लोगोंके पंजीकृत हो जानेसे काम नहीं चलेगा। यदि मैं अपने हाथ काले करता हूँ तो मुझे तो कहना चाहिए कि मेरा पंजीयनपत्र काला देखे या गोरा, उसमें कुछ भी फर्क नहीं पड़ता। काला आदमी देखे तो शायद कुछ विवेक भी बरत सकता है, लेकिन किसी गोरे अधिकारीने गुलामोंके प्रति विवेक बरता हो और उसका कोई उदाहरण हो तो कृपया पाठक मेरे पास भेजें, जिससे इस पत्रमें उन गोरे साहबका नाम जितना भी अमर किया जा सकेगा, करूँगा।

१. मूल अंग्रेजी जवाब ५-१०-१९०७के इंडियन ओपिनियनमें प्रकाशित हुआ था।

शेष माँगोंके लिए श्री स्मट्स साहवने साफ इनकार कर दिया है, और वह भी गुलामी लेनेवालेको फवे वैसी भाषामें। कुछ माँगें वेकार हैं, यह भी उन्होंने कह दिया है। जैसे, वालकोंके सम्बन्धमें। स्मट्स साहव चाहें तो भी नये कानूनमें परिवर्तन किये विना १६ वर्षसे कम उम्रवाले वालकपर हाथ नहीं उठा सकते। वालक यदि अँगुलियोंकी भी निशानी न दे तो उसे सजा नहीं दी जा सकती। लेकिन जो पिता अपने लड़केको गुलामीका ककहरा वचपनमें न सिखाये उसके लिए सजा है। गुलामोंके वालक स्वतन्त्र मिजाजके हों, यह सरकारको कैसे वरदाश्त हो सकता है? अंग्रेजोंके वालक आठ वर्षकी उम्रसे कवायद सीखते और वन्दूकें उठाते हैं। लेकिन हम तो गुलाम ठहरे। इसलिए हमारे वालकोंको गुलामीकी तालीम ही दी जा सकती है। जैसा वाप वैसा वेटा, यह तो चला ही आ रहा है, और चलेगा भी। अव इस जवावके वारेमें और अधिक क्या कहूँ? सिर्फ इतना ही कहना काफी है कि इस काले पत्रसे कहीं प्रिटोरियाके भाइयोंमें जान आ जाये तो वे अव भी अपने धनका मोह छोड़कर कुछ जोशके साथ श्री स्मट्सको अनुरूप उत्तर देंगे तथा अपनी गलती सुधार कर, भारतीय प्रजा जो आन्दोलन कर रही है, उसमें पूरी ताकतसे शामिल होंगे। वास्तवमें श्री स्मट्सका पत्र प्रत्येक भारतीयमें जोश भरनेवाला है। उसे पढ़नेके वाद प्रत्येक भारतीयको लगना चाहिए कि "यदि श्री स्मट्सको अपने पत्रमें लिखी शर्तोंपर ही ट्रान्सवालमें रहने देना हो, तो मुझे ट्रान्सवाल नहीं चाहिए। अन्न-जल देनेवाला खुदा महान है। वह सूखा टुकड़ा कहीं भी देगा।" यह जोश आ जाये तो कैसा रंग जमता है, यह देखनेवाले देखेंगे। नर-रत्न थोरोके समान उनके लिए जेल महल ही वन जायेगी और जेलमें पड़े हुए भारतीयोंकी पुकार श्री स्मट्सको दहला देगी।

हाजी कासिमका स्पष्टीकरण

श्री रूज़के पत्रका उत्तरदायित्व श्री हाजी कासिमके ऊपर डाला गया है। इसलिए उन्होंने उसे अपने साथ अन्याय माना है और निम्नलिखित स्पष्टीकरण दिया है, जिसे मैं समाजके समक्ष रख रहा हूँ। श्री हाजी कासिम लिखते हैं:

> जो अर्जी उपनिवेश-सचिवको दी गई वह कुछ लोगोंने मिलकर दी थी। अर्जीकी भाषा नम्र रखनेका कारण यह नहीं था कि मैंने वैसा करनेको कहा था, वल्कि वकीलकी वैसी सलाह थी और हमें भी सरकारसे नम्रतापूर्ण अर्जी करना ठीक मालूम हुआ था। इसके अलावा नम्रतापूर्ण अर्जी करनेसे सरकार हमारी माँगकी पूर्ति करेगी, यह सोचकर ही हम सव भाई उसमें शामिल हुए थे, और सवने अपनी सम्मति दी थी। वह अर्जी खासकर मैंने ही भिजवाई हो, सो वात नहीं। 'इंडियन ओपिनियन' में मुझपर व्यर्थ ही दोष मढ़ा जाता है। वह सरासर गलत है। पंजीकृत होना या न होना, यह सवकी अपनी इच्छापर निर्भर है। किसीने आपको गलत लिखा होगा। उसके आधारपर अखवारमें गलत तरीकेसे मेरा नाम प्रकाशित करना ठीक नहीं। मैंने स्वयं पहले ही व्रिटिश भारतीय संघके नेताओंसे जाहिरा कहा है कि जहाँतक खुदा हिम्मत देगा वहाँ तक सव भाइयोंके साथ चलता रहूँगा और यदि हिम्मत टूट गई, तो भी भाइयोंकी सलाह और मददसे ही जो कुछ करना उचित होगा, करूँगा।
>
> यदि मुझपर यह आरोप लगाया जाता कि अर्जी देनेमें जो लोग शामिल थे मैंने उनका साथ दिया तो वह विलकुल अलग वात है। वास्तवमें मैं नरम प्रकृतिका आदमी हूँ, और मानता हूँ कि सरकारसे समझौता करके चलनेवाला पक्ष अक्लमन्द है। यह

मानकर ही मैं इस अर्जीमें शामिल हुआ। क्योंकि औरोंकी तरह मैं भी मानता हूँ कि कानून रद नहीं हो सकता। इसलिए बेहतर रास्ता यही था कि सरकारसे समझौता करके उसमें परिवर्तन कराये जायें; और इस तरह समझौतेसे काम चलाया जाये। ब्रिटिश भारतीय संघका आन्दोलन सच्चा है। उससे मेरी पूरी सहानुभूति है। और मैं चाहता हूँ कि खुदा संघकी पूरी मदद करे।

स्मट्स साहबका भाषण

स्मट्स साहबने अपने मतदाताओंके समक्ष भाषण[1] दिया है। उसमें उन्होंने नये कानूनपर भी टीका की है। उसका अनुवाद नीचे देता हूँ :

> एक दूसरा एशियाई प्रश्न भी है, और वह है ट्रान्सवालमें रहनेवाले भारतीय और चीनियोंके बारेमें। दक्षिण आफ्रिकाकी स्थायी आबादीको तोड़नेवाले ये लोग हैं। पुराने राज्यमें यदि भारतीय १८८५ के कानूनके अनुसार पंजीकृत होकर निर्धारित रकम न देते तो रह नहीं सकते थे। सभी भारतीयोंका उस कानूनके अन्तर्गत पंजीयन किया जाता था। उन्होंने व्यापारमें प्रतिस्पर्धा की, इसलिए डच संसदने निर्णय किया था कि उन्हें 'बाजार' में ही व्यापार करनेकी अनुमति दी जाये। लेकिन ब्रिटिश सरकार बीचमें आई और उसने कहा कि ये लोग ब्रिटिश प्रजा हैं और लन्दन-समझौतेके अनुसार सारी ब्रिटिश प्रजाके साथ समान व्यवहार करना चाहिए। इसलिए 'बाजार'का कानून अमलमें नहीं आ सका। इसका नतीजा यह हुआ कि भारतीय व्यापारी सब जगह फैल गये। वे बिना परवानेके व्यापार करने लगे और, इसलिए, गोरे व्यापारियोंसे उनकी स्थिति अच्छी हो गई। इतनी खराब हालत थी, फिर भी ब्रिटिश सरकारकी लिखा-पढ़ीके कारण लड़ाईके पूर्व तक चलती रही। उसका नतीजा आप प्रिन्सले स्ट्रीट, पीटर्सबर्ग, पॉचेफ्स्ट्रूम और दूसरी जगहोंमें देख सकते हैं। इन जगहोंका व्यापार भारतीयोंके हाथमें है। लोग पूछा करते हैं कि देशमें भुखमरी क्यों आई? व्यापार क्यों बैठ गया है?
>
> इसका एक कारण भारतीय व्यापार है। जैसा नेटालमें हो रहा है वैसा ही भारतीय प्रजा यहाँ भी करना चाहती है। वह सब व्यापार ले लेना चाहती है। उसका इलाज हमने किया है। उसके लिए हमने पंजीयन कानून पास किया है। उस कानूनको पास करते समय किसी सदस्यने उसका विरोध नहीं किया। मैं जानता हूँ कि इस कानूनके मार्गमें अड़चनें आयेंगी, इसलिए यह क्या है, इसके बारेमें कहना चाहता हूँ। यहाँ भारतीय अधिक संख्यामें हैं, इसलिए हमने कानूनको सख्त बनाया है। ट्रान्सवालमें १५,००० भारतीय और १२,०० चीनी व्यापारी हैं। पहलेके कानूनके आधारपर दिये गये प्रमाणपत्रोंकी जाली प्रतियाँ निकाली जाती हैं और बिकती हैं। बम्बई, जोहानिसबर्ग और डर्बनमें ऐसे स्थान हैं जहाँसे ऐसे जाली प्रमाणपत्र अमुक कीमत देनेपर प्राप्त किये जा सकते हैं। और भारतीय-भारतीयके बीचका अन्तर जाना नहीं जा सकता, इसलिए अँगुलियोंकी निशानी लेकर पंजीयन करनेका निर्णय किया गया है। भारतीय प्रजा इसे

१. भाषणकी मूल अंग्रेजी रिपोर्ट १२-१०-१९०७ के **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित हुई थी। देखिए "स्मट्सका भाषण", पृष्ठ २८०-८१ भी।

अपमानजनक मानती है। (हँसी)। भारतीयोंका शिष्टमण्डल ब्रिटिश सरकारके पास गया था। लेकिन फिर भी वड़ी सरकारने इस कानूनको मंजूर कर दिया है। भारतीयोंकी दलीलको मैंने स्वयं देखा है। उसमें क्या है? उन्हीं लोगोंको भारत छोड़नेके पहले अँगुलियोंकी निशानी देनी पड़ती है। पेंशनयाफ्ता सिपाही या अधिकारी अँगुलियोंकी निशानी देनेके वाद ही पेंशन प्राप्त कर सकते हैं। भारतीय शिष्टमण्डलके इंग्लैंड जानेपर ये सारी वातें प्रकट हुईं। भारतीय सोचते हैं कि वे सरकारको बेवकूफ वना देंगे, लेकिन कुछ ही समयमें उनका भ्रम दूर हो जायेगा।

भारतीयोंको पंजीकृत होनेके लिए समय दिया गया है। सरकारको मालूम हुआ है कि पंजीयन कार्यालयके पास धरना दिया जाता है। इसका नतीजा यह हुआ है कि वहुत कम लोग पंजीकृत होते हैं। किन्तु यह कह देना उचित होगा कि हर चीजकी सीमा होती है। कानून सख्तीसे अमलमें लाया जायेगा और जो भारतीय अवधिके अंदर पंजीकृत नहीं होंगे उन्हें निर्वासित किया जायेगा। नया नोटिस निकाला जा चुका है कि जिनके पास पंजीयनपत्र नहीं हैं, उन्हें दिसम्बरके वाद परवाने नहीं दिये जायेंगे और सारी दूकानें वन्द होंगी। (तालियाँ)। भारतीय मानते हैं कि आखिर सरकार ढीली पड़ जायेगी। लेकिन मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि सरकार विलकुल ढीली नहीं पड़ना चाहती। मैं भारतीयोंको चेतावनी देता हूँ कि हम कानूनको वरावर अमलमें लायेंगे। मुझे आशा है कि अखवारवाले स्पष्ट कर देंगे कि दिसम्बर ३१ के वाद हमेशाके लिए दरवाजे वन्द हो जायेंगे। मेरा भारतीयोंसे कोई झगड़ा नहीं। हम उनपर जुल्म करना नहीं चाहते हैं। हम तो आनेवाले भारतीयोंको रोकना चाहते हैं और इस मुल्कको गोरोंका मुल्क वनाना चाहते हैं। चाहे जो भी कठिनाइयाँ आयें, इसके लिए हम कृतनिश्चय हैं और इससे हमारी सरकार पीछे नहीं हटेगी। (खूब तालियाँ।)

ईसप मियाँका उत्तर

श्री ईसप मियाँने इस भाषणका जवाव दिया है। उसका अनुवाद नीचे दिया जाता है[1]:

संघकी बैठक

पिछले रविवारको हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी अनुमतिसे अंजुमनके सभा-भवनमें संघकी वैठक हुई थी। श्री ईसप मियाँ सभापति थे। सभा-भवन खचाखच भर गया था। चीनी संघके प्रमुख श्री क्विन और दूसरे चीनी भी उपस्थित थे। श्री ईसप मियाँके भाषणके वाद श्री गांधीने धरनेदारोंके सम्बन्धमें कहा कि उन्हें विलकुल नम्रता वरतनी चाहिए। धरनेदार कभी एक जगह घेरा वनाकर न खड़े रहें। वे सिपाहीके समान हैं। और सिपाहीका काम यह है कि जो हुक्म दिया जाये उसके अनुसार वर्ताव करे, नियमोंका निर्वाह करे और अपनी जगहसे कहीं न जाये। सिपाहीको अपनेसे वड़ेके अनुशासनमें भी रहना चाहिए। जिन धरने-दारोंके नाम श्री गांधीके पास होंगे, वे यदि अपने कर्तव्यका पालन करते हुए गिरफ्तार किये गये तो उनका वचाव श्री गांधी करेंगे। लेकिन यदि उन्हें जुर्माना हो तो जुर्माना न देकर उन्हें जेल जाना है। वुरा वर्ताव करनेवाले अथवा मारपीट करनेवाले स्वयंसेवकोंका वचाव

१. पाठके लिए देखिए "पत्र: उपनिवेश-सचिवको", पृष्ठ २७४-७५।

बिलकुल नहीं किया जायेगा। इसके बाद श्री गांधीने दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिको बनाये रखनेके सम्बन्धमें समझाया और श्री रिचके पत्रकी बातें कहीं। बादमें इमाम अब्दुल कादिर, श्री टी० नायडू, श्री अब्दुल रहमान (पॉचेफस्ट्रूमवाले), श्री नवाबखाँ, श्री कुवाड़िया, श्री अली मुहम्मद, श्री जोजेफ, श्री उमरजी साले आदिके भाषण हुए। उन्होंने कहा कि समिति तो कायम ही रहनी चाहिए। श्री जोजेफने प्रश्न किया कि जो नौकरीसे अलग कर दिये जायेंगे उनका क्या होगा। इसके उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि जेल जाने तक जो तकलीफें होंगी वे तो सबको उठानी हैं। नौकरीवालेको यदि इज्जतकी परवाह होगी तो वह नौकरीकी परवाह नहीं करेगा। नौकरी एक जगहसे दूसरी जगह मिल सकती है, लेकिन गई हुई इज्जत नहीं मिल सकती। देशके सामने नौकरीकी क्या कीमत? परवानेके नोटिसके सम्बन्धमें पूछे गये श्री कुवाड़ियाके प्रश्नके उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि परवाना न मिले तो जेल जाना ही ठीक है। लेकिन परवानेके बिना व्यापार करनेमें कोई हर्ज नहीं। फिर भी यदि भारतीय प्रजा डर जाये तो परीक्षात्मक मुकदमा दायर किया जा सकता है। उसमें धनकी जरूरत होगी।

धरनेदारोंकी बैठक

उपर्युक्त बैठकके पहले धरनेदारोंकी एक अलग बैठक हुई थी। उसमें बड़ी हिम्मतसे काम किया गया। हर स्टेशन और वॉन ब्रैंडिस चौककी जाँच करनेके लिए आदमी नियुक्त किये गये थे। हरएकके लिए फीता बनवाया गया है जिससे धरनेदारोंको तुरन्त पहचाना जा सकता है। धरनेदारोंके नामोंमें थोड़ा परिवर्तन हुआ है। लेकिन अभी मैं नाम नहीं देना चाहता। क्योंकि बादमें और भी परिवर्तन हो सकता है। महीना पूरा होनेपर जितने लोगोंने काम किया होगा, उतने नाम दे दूँगा। पिछली बार जो नाम दिये गये हैं, उनमें दो नामों से एक ही व्यक्तिका बोध होता है। उन्हें नरोत्तम अमथाभाई पटेल वाँझवाला और नाराणजी करसनजी देसाई छीनावाला समझा जाये।

क्रूगर्सडॉर्पके भारतीयोंको सूचना

मैं देखता हूँ कि, क्रूगर्सडॉर्पके भारतीय अब भी 'रैंड डेली मेल'के संवाददातासे काम लेते रहते हैं। उन्होंने अँगुलियोंकी निशानीपर बहुत जोर दे रखा है। लेकिन हमें समझना चाहिए कि वह कानून हमें अस्वीकार इसलिए है कि वह हमपर ही लागू होता है, और हमें अपराधी साबित करता है। ऐसे भारतीयोंको 'इंडियन ओपिनियन'के पिछले अंक देखकर सारी बातें जान लेनी चाहिए।

फेरीवालोंका मुकदमा

बॉक्सबर्गमें फेरीवालोंपर मुकदमा चल रहा है। उसमें मजिस्ट्रेटको इस विषयपर निर्णय देना है कि यदि कोई फेरीवाला किसीके निजी मकानके सामने २० मिनटसे ज्यादा रुके तो वह अपराध है या नहीं। मजिस्ट्रेटका रुख एक फेरीवालेकी ओर था, इसलिए उसने उसे छोड़ दिया है। नये कानूनके सम्बन्धमें भी ऐसा ही होना सम्भव है।

धरनेदार गिरफ्तार

श्री भाणा छीनिया नामक एक धरनेदारको पुलिसने यह आरोप लगाकर पकड़ लिया था कि वह पैदल पटरीपर खड़े होकर आने-जानेवाले लोगोंके मार्गमें रुकावट डालता था। वह

मुकदमा श्री क्रॉसके सामने चला। श्री गांधीने निःशुल्क पैरवी की और मजिस्ट्रेटने उसे निर्दोष ठहराकर छोड़ दिया। तैयारी इतनी थी कि यदि उसपर जुर्माना किया जाता तो वह जुर्माना न देकर जेल जाता। इससे कोई यह न समझ ले कि चाहे जिस पैदल पटरीपर खड़ा रहा जा सकता है। श्री भाणाके छूटनेका कारण यह था कि उनके खड़े रहनेसे दूसरे राहगीरोंको रुकावट नहीं होती थी। सरल तरीका यह है कि यदि पुलिस किसी जगह खड़े रहनेको मना करे तो दूसरी जगह जाकर खड़े हो जायें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–१०–१९०७

२३०. द० आ० ब्रि० भा० समितिको पत्र[1]

[जोहानिसबर्ग
अक्तूबर १४, १९०७के पूर्व]

आप जाब्तेसे सूचित कर सकते हैं कि सर हेनरी कैम्बेल बैनरमैनके नाम जो पत्र भेजा गया है वह यहाँके भारतीय समाजके विचारोंको ठीक व्यक्त करता है और यदि जो अनुमति माँगी जा रही है वह प्रदान की गई तो भारतीय निश्चय ही महसूस करेंगे कि वे साम्राज्यके अंग समझे जा रहे हैं। आज तो वे निःसन्देह अनुभव करते हैं कि वे सौतेली सन्तानें हैं।

[मो० क० गांधी]

[श्री एल० डब्ल्यू० रिच
२८, क्वीन ऐन्स चेम्बर्स
ब्राडवे, वेस्ट मिन्स्टर
लन्दन, एस० डब्ल्यू०]

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: सी० ओ० २९१/१२२

१. एशियाई पंजीयन अधिनियमके सम्बन्धमें दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके मन्त्री एल० डब्ल्यू० रिचने १४ अगस्तको ब्रिटिश प्रधानमन्त्री सर हेनरी केम्बेल बैनरमैनके नाम एक पत्र भेजा था (देखिए परिशिष्ट ५)। सरकारी उत्तरमें, दूसरे विषयोंके साथ-साथ कहा गया था: "प्रधानमन्त्रीको ज्ञात नहीं है कि स्वयं ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंने जो रुख अपनाया है वह इन प्रस्तावों द्वारा सही-सही व्यक्त होता है या नहीं।" जाहिर है कि यह गांधीजीको सूचित किया गया था। रिचने प्रधानमन्त्रीके नाम अपने १४ अक्तूबरके पत्रमें उपर्युक्तको, "ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघके अवैतनिक मन्त्रीसे प्राप्त एक पत्र" के रूपमें उद्धृत किया था। मूल उपलब्ध नहीं है।

२३१. पत्र : मगनलाल गांधीको

[जोहानिसबर्ग]
अक्तूबर १४, १९०७

चि० मगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। श्री बद्रीसे कहना कि मैंने उन फीसोंको बहुत सावधानीसे दर्ज किया है। वे अनुपस्थित थे, इसलिए उनके लिए लिखे गये बहुत-से पत्रोंका मैंने कुछ नहीं लिया। फिर भी उनसे कहना कि वे मेरी लगाई हुई फीसोंकी कोई भी रकम काट सकते हैं। मैं उनका निर्णय स्वीकार कर लूँगा। जहाँतक उनके कागजोंका सम्बन्ध है, मैं इस मामलेमें विचार कर रहा हूँ। मेरे बिलके विषयमें तुम उनसे बहुत स्पष्ट बात कर सकते हो। मनमाने ढंगसे फीस लेकर मैं कभी उनके साथ विश्वासघात कर सकता हूँ, ऐसा वे सोचें तो मुझे उनके लिए अफसोस होगा। मैं चाहूँगा कि वे हर मदको देख जायें और जो उनको अनुचित लगे उसके आगे काटेका निशान लगा दें।

बँटवारेका जो हिसाब श्रीमती डोमनने भेजा है वह मुझे मिल गया है।

तुम्हारा शुभचिन्तक,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ४७६९) से।

२३२. पत्र : पुलिस कमिश्नरको[1]

[जोहानिसबर्ग]
१५ अक्तूबर, १९०७

पुलिस कमिश्नर
जोहानिसबर्ग

महोदय,

संयोगसे उस समय मैं अदालतमें मौजूद था, जब श्री अलेक्जेंडरने अपने दो भारतीय मुवक्किलोंकी ओरसे कहा था कि वे वॉन ब्रैंडिस स्क्वेयरके धरनेदारोंसे डरते हैं और इसी कारण उन्होंने पंजीयन प्रमाणपत्रके लिए प्रार्थनापत्र नहीं दिये। मैंने इस बयानका तब भी खण्डन किया था और अब भी करता हूँ। निःसन्देह पंजीयन-कार्यालयमें जानेवालोंपर कुछ भारतीय नजर रखते हैं। ऐसा वे उनको यह समझानेके खयालसे करते हैं कि एशियाई कानून संशोधन अधिनियमको मान लेनेपर उनकी स्थिति कैसी हो जायगी। साथ ही वे अपना प्रभाव डालकर उनको कार्यालयमें जानेसे रोकते भी हैं। किन्तु इस प्रकार समझानेपर भी यदि कोई कार्यालयमें जाना चाहता है, तो उसको बिलकुल तंग नहीं किया जाता। श्री अलेक्जेंडर जब मजिस्ट्रेटके सामने बयान दे रहे थे तब ऐसा एक मामला हुआ था। एक

1. यह पत्र १६-१०-१९०७ के स्टारमें प्रकाशित हुआ था।

नौजवान भारतीय अपना पंजीयन कराना चाहता था। वह अपनी मालकिनके साथ था और उसे किसीने नहीं रोका। कुछ समय पहले एक और भारतीय भी वॉन ब्रैंडिस स्क्वेयरके पंजीयन कार्यालयमें इसी तरह गया था। मैं आपके सामने यह तथ्य इसलिए पेश कर रहा हूँ कि श्री अलेक्जैंडरने यह सुझाव दिया था कि उनके मुवक्किलोंको पुलिस-सुरक्षा दी जाये। और वास्तवमें मुझे बतलाया गया कि उनको पुलिस-सुरक्षा मिल भी गई थी।

अपने संघकी ओरसे मैं यह आश्वासन देनेकी धृष्टता करता हूँ कि ब्रिटिश भारतीय संघ किसी डराने-धमकानेकी बातका समर्थन नहीं करेगा और मेरा संघ इस बातका पूरा खयाल रखेगा कि पंजीयन-कार्यालयमें जानेके इच्छुक किसी भी आदमीको संघसे सम्बन्धित कोई भी व्यक्ति तंग न करे। जहाँतक मुझे पता है, मुझे इस बातका यकीन है कि श्री अलेक्जैंडरको उनके मुवक्किलोंने गलत खबर दी; क्योंकि उन्हें किसी प्रकारकी शारीरिक हानिकी अपेक्षा भारतीय जनमतका अधिक भय था।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी
अवैतनिक मंत्री,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, १९–१०–१९०७

२३३. पत्र : 'स्टार' को[1]

जोहानिसबर्ग
अक्तूबर १८, १९०७

सेवामें
सम्पादक
'स्टार'
[जोहानिसबर्ग]

महोदय,

भारतीय धरनेदार पूर्णतया निर्दोष हैं, फिर भी बिना लेशमात्र प्रमाणके उनपर यह दोष लगाया जा रहा है कि वे उन लोगोंको डराते-धमकाते हैं जो पंजीयन प्रमाणपत्र लेना चाहते हैं। इसलिए कृपा होगी, यदि आप मुझे इस आरोपके थोथेपन और साथ ही उस जवाबी धमकीकी ओर भी, जो एक वास्तविकता है, जनताका ध्यान आकर्षित करनेकी सुविधा दें।

कल एक ऐसा मामला हुआ जिसमें धरनेदारोंने पोटर्सबर्गसे आये तीन भारतीयोंके साथ रक्षक दल भेजनेकी रजामन्दी जाहिर की, किन्तु वह अस्वीकृत कर दी गई। बात दरअसल यह

१. यह २६–१०–१९०७ के **इंडियन ओपिनियन**में भी उद्धृत किया गया था।

है कि आतंककी कहानियाँ गढ़कर और पुलिस-सुरक्षाकी माँग करके धरनेदारोंकी बदनामी करनेकी कोशिश की जा रही है। लेकिन, हमारे अपने "राष्ट्रीय चर" भी हैं और, निःसन्देह, वे अपनी संख्यामें वृद्धि करना चाहते हैं। धमकीका आरोप इसी उद्देश्यसे अपनाया गया एक तरीका है। यदि इस आरोपमें कोई सचाई है तो किसीपर मुकदमा क्यों नहीं चलाया गया है? इसे सावित करना तो सबसे आसान बात होनी चाहिए, क्योंकि ऐसा माना जाता है कि धमकियाँ वॉन ब्रैंडिस स्क्वेयरमें, आते-जाते सैकड़ों लोगोंकी उपस्थितिमें, दिन-दहाड़े दी जाती हैं।

जहाँतक जवाबी धमकीकी बात है, अनेक भारतीयोंका विश्वास है कि जिन भारतीयोंके पास अनुमतिपत्र हैं — चाहे वे कप्तान हैमिल्टन फाउलके दिये हुए हों या श्री चैमनेके — वे पंजीयन अधिनियमके आगे न झुकनेके कारण अर्ध-सरकारी दबावसे बर्खास्त किये जा रहे हैं। ऐसा दबाव हो या न हो, मेरे सामने जर्मिस्टनके मुख्य मेटकी एक चिट्ठी पड़ी है, जिसमें इस सूचनाकी पुष्टि की गई है कि नौ भारतीय इसलिए बर्खास्त कर दिये गये कि उन्होंने नये अधिनियमके अधीन पंजीयन करानेके लिए प्रार्थनापत्र नहीं दिये। यह देखते हुए कि जनरल स्मट्स इस बातमें खुद ही अगुआ बने हुए हैं, इस घटनासे कोई आश्चर्य नहीं होता। उन्होंने सभी तरहकी सजाओंकी धमकी दी है — और जिन्हें देश-निकालेकी धमकी दी गई है उन्हींको परवाने छीन लेनेकी भी धमकी दी गई है। समझमें नहीं आता कि दोनों सजाएँ एक साथ कैसे दी जा सकती हैं। प्रवास अधिनियमके बिना जबर्दस्ती देश-निकाला मुमकिन नहीं है, और प्रवासी अधिनियमपर अभी शाही मंजूरी मिलनी बाकी है। भारतीय न्यायपूर्ण युद्धसे नहीं डरते, और जहाँतक मैं समझ पाया हूँ, वे अन्यायपूर्ण युद्धके लिए भी तैयार हैं, यद्यपि वह सर्वथासे अ-ब्रिटिश होगा। भारतीयोंको गुलामीके चिट्ठे लेनेपर मजबूर करनेके लिए यूरोपीय मालिकोंकी सहायता क्यों ली जानी चाहिए? अबतक अनेक मालिकोंने इस प्रकारके दबावका विरोध किया है और भारतीयोंको अपनी नौकरीसे निकालनेसे साफ इनकार कर दिया है। यह दोनोंके लिए श्रेयकी बात है — मालिकोंके लिए इसलिए कि वे अनैतिक रूपसे चोट करनेकी प्रक्रियामें भाग नहीं लेना चाहते, और भारतीयोंके लिए इसलिए कि वे इतने उपयोगी तथा स्वामिभक्त सेवक हैं कि उनको बर्खास्त नहीं किया जा सकता।

मुझे अभी पता लगा है कि जिन चार भारतीयोंकी ओरसे कहा गया था कि उनको धमकी दी गई है और जिनके बारेमें यह मान लिया गया था कि उनके पास अनुमतिपत्र नहीं हैं, उन्हें आज छोड़ दिया गया और खुली अदालतमें यह भरोसा दिलाया गया कि उन्हें पंजीयन प्रमाणपत्र मिल जायेंगे। गुलामोंको तो उनके पट्टे मिलने ही चाहिए। मेरे विचारमें जिनके पास पुराने डच पास हैं — और कहा जाता है, इन लोगोंके पास हैं — उनके साथ भी वैसा ही बरताव किया जाना चाहिए, जैसा शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत अनुमतिपत्र लेनेवालोंके साथ किया जाता है। लेकिन सभी जानते हैं कि श्री जॉर्डनको ऐसे सभी आदमियोंको उपनिवेश खाली करके चले जानेका आदेश देनेके कष्टप्रद कर्तव्यका पालन करना पड़ा था। ऐसे एक आदमीको उसी दिन आदेश मिला जिस दिन उपर्युक्त चार आदमियोंने यह कहा था कि वे नये पंजीयन प्रमाणपत्रोंके लिए दर्खास्त देंगे। इस प्रकार जनरल स्मट्स वास्तवमें अवैध निवासियोंमें से वैध निवासियोंकी तलाश कर रहे हैं। ये अवैध निवासी पंजीयन अधि-नियमके अनुसार वाञ्छित लोग बन जायेंगे, क्योंकि वे उसके अन्तर्गत प्रमाणपत्रोंके लिए

प्रार्थनापत्र दे देंगे और दूसरे लोग सांसारिक समृद्धिसे अपनी मनुष्यताका मूल्य अधिक लगानेके कारण अवैध निवासी बना दिये जायेंगे।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

स्टार, १९-१०-१९०७

२३४. रिचकी सेवाएँ

दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके एक सदस्य श्री रिचके बारेमें इस प्रकार लिखते हैं:

> इस योग्य, सक्षम तथा स्वार्थत्यागी पुरुषके भगीरथ कार्य और लगनके लिए भारतीय समाज जितनी कृतज्ञता और प्रशंसाभाव प्रकट करे, थोड़ा ही होगा।

दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय न केवल ऊपर प्रयुक्त प्रत्येक विशेषणका समर्थन करते हैं, बल्कि वे यह भी अनुभव करते हैं कि उनकी सेवाएँ जितनी मूल्यवान आज हैं उतनी और कभी नहीं हो सकतीं। ट्रान्सवालके भारतीय एक ऐसे संघर्षमें लगे हुए हैं, जैसा इस पीढ़ीमें फिर कभी नहीं होगा। इसलिए यह अति आवश्यक है कि लॉर्ड ऐम्टहिल ट्रान्सवालमें भारतीयोंके कष्टोंको दूर करनेके जो प्रयत्न कर रहे हैं उनमें उन्हें सतत जागरूक तथा अथक परिश्रमी श्री रिचकी सहायता मिलती रहे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-१०-१९०७

२३५. जनरल बोथाका अनुकरण

यद्यपि ट्रान्सवालमें भारतीय समाज बहुत जोर दिखा रहा है, फिर भी भीतर ही भीतर यह डर बना हुआ है कि अन्त कैसा होगा। इतना तो स्पष्ट है कि इस तरहका डर रखनेवालेको सत्य, और खुदा या ईश्वरपर कम भरोसा है। इस कारण या और किसी कारणसे हम डर रखनेवालेके सामने ट्रान्सवालके वर्तमान राज्यकर्ताओंका उदाहरण पेश करते हैं। पाठकोंको याद होगा कि ट्रान्सवालके गोरोंको जब स्वराज्य मिला उसके पहले ही श्री लिटिलटनने लॉर्ड मिलनरकी सलाहसे आधा स्वराज्य दे दिया। उसमें जनरल बोथा, जनरल स्मट्स वगैरह काम कर सकते थे। लेकिन उतने अधिकारोंको अपर्याप्त मानकर जनरल बोथाने लॉर्ड मिलनरको लिखा था कि "हमारा विचार आपके राज्य-शासनमें हिस्सा लेनेका बिलकुल नहीं है। हमें जो संविधान दिया गया है उसे हम सन्तोपजनक नहीं मानते।" लॉर्ड मिलनर इसपर चिढ़ गये। वांडरर-सभाभवनमें भारी सभा हुई। उसमें लॉर्ड मिलनरने भाषण दिया और

जनरल बोथाको धमकी दी कि यदि बोअर लोग राज्य-संचालनमें भाग नहीं लेंगे तो उनके बिना ही राज्य चलाया जायेगा। जनरल बोथा ऐसी धमकीसे डरे नहीं। अब नतीजा यह हुआ कि बोअर लोगोंको पूर्ण स्वराज्य मिल गया है। यह उदाहरण महान बहिष्कारका है। बोथाने बहिष्कार किया और विजय प्राप्त की।

इस उदाहरणमें हमें इतना याद रखना चाहिए कि बोअर अधिक अधिकार माँग रहे थे। अधिक अधिकार नहीं मिले, इसलिए वे बहिष्कारपर आमादा हुए। हम ज्यादा अधिकार नहीं माँगते, बल्कि हमपर गुलामीका जो जुआ रखा जा रहा है उसका विरोध कर रहे हैं। उसमें हमारे लिए डरनेकी क्या बात है? बोथाका बहिष्कार सफल हुआ, क्योंकि उनमें पूरी हिम्मत थी, और लॉर्ड मिलनरको विश्वास हो गया था कि वे राज्य-संचालनमें भाग न लेनेकी निरी धमकी नहीं दे रहे हैं, बल्कि बात सत्य है। हमारी लड़ाईका अबतक जनरल स्मट्सपर यह प्रभाव नहीं पड़ा कि भारतीयोंका जोर पूरा और सच्चा है। हम आशा करते हैं कि जनरल बोथाका उदाहरण लेकर भारतीय जनता अन्ततक उत्साह कायम रखेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–१०–१९०७

२३६. पीटर्सके मुकदमेसे लेने योग्य सीख

श्री पीटर्सको फोक्सरस्टमें मुसीबत क्यों उठानी पड़ी? यह प्रश्न प्रत्येक भारतीयके मनमें उठना चाहिए। यदि कोई गोरा अच्छे कपड़े पहनकर प्रथम या द्वितीय श्रेणीमें यात्रा कर रहा हो तो अनुमान यह किया जायेगा कि वह प्रतिष्ठित व्यक्ति होगा, फिर वास्तवमें भले वह जबरदस्त अपराधी ही क्यों न हो। काली चमड़ीवाला व्यक्ति भले प्रतिष्ठित हो, उसके बारेमें अनुमान यह किया जायेगा कि वह ठग ही होगा। श्री पीटर्सके सम्बन्धमें ऐसा ही हुआ है। जाँच-अधिकारीने मान लिया कि श्री पीटर्सके पास झूठा अनुमतिपत्र होना चाहिए। उसमें अधिकारीका अधिक दोष नहीं है। दोष सरकारका है। भारतीयोंको झूठे समझकर उसने खूनी कानून पास किया है। जाँच-अधिकारीने उसका अनुसरण किया। इस प्रकार आज भारतीयोंका सम्मान नहीं है। किन्तु यदि भारतीय समाज खूनी कानूनके सामने झुक जाये तो फिर प्रतिष्ठा तो एक ओर रही, यदि गोरे बिना ठोकरके भारतीयसे बात न करें तो उसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं। ऐसे ठोस कारणोंको लेकर भारतीय समाज कानूनका विरोध कर रहा है, उसकी लड़ाई किसी धारा या अँगुलियोंकी निशानीके खिलाफ नहीं है। जहाँपर कानूनकी जड़ ही खराब है, वहाँ उसकी शाखाओंका विरोध करनेसे क्या होगा? जड़पर कुल्हाड़ी मारनेकी आवश्यकता है, और वह कुल्हाड़ी है भारतीयोंकी हिम्मत तथा उनकी मर्दानगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–१०–१९०७

२३७. रिचकी सेवाएँ

श्री रिचने भारतीय समाजकी सेवामें हद कर दी। समितिके एक सदस्य लिखते हैं:

> मैं लंदन समितिका उल्लेख करता हूँ तब आप उसे श्री रिचका उल्लेख समझें। इस समझदार, परोपकारी और आत्मत्यागी व्यक्तिका भारतीय समाज कभी पूरा अहसान नहीं मान सकेगा। मैं मानता हूँ कि यदि आप समितिको बनाये रखेंगे और श्री रिचको फिलहाल लंदनमें रहने देंगे तो आपको बहुत ही मदद मिलेगी। मैं समझता हूँ कि खासकर समितिकी उपस्थितिके कारण ही ट्रान्सवाल सरकारके पैर ढीले हो गये हैं। यदि समितिको अधिक खर्च करनेकी अनुमति हो तो वह बहुत ही काम कर सकती है।

इन शब्दोंमें हमें कोई अतिशयोक्ति नहीं मालूम होती। हमें यह देखना है कि ऐसी मूल्यवान सेवाको हम धनकी कमीके कारण छोड़ न दें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-१०-१९०७

२३८. ट्रान्सवालमें दूकान बन्द करनेके समयका कानून

नेटालके समान ट्रान्सवालमें दूकानें बन्द करनेके सम्बन्धमें कानून बनेगा यह सब जानते थे। वह कानून अब प्रकाशित हुआ है और उसके आवश्यक अंशोंका अनुवाद हम अन्यत्र दे रहे हैं। हम ट्रान्सवालके भारतीय व्यापारियों और फेरीवालोंसे सिफारिश करते हैं कि वे उन धाराओंको पूरी सावधानीसे पढ़ें। उनसे भारतीय-व्यापारको थोड़ा-बहुत नुकसान होगा। परन्तु वह बरदाश्त कर लेने जैसा है। प्रत्येक व्यापारी और फेरीवालेसे हमारा अनुरोध है कि वह इन कानूनोंका पूरा-पूरा आदर करे। ऐसी बातोंमें यदि भारतीय कानून भंग करते हैं तो वे लोगोंकी नजरोंपर चढ़ जाते हैं, और हमारे दुश्मनोंको हमारे विरुद्ध हथियार मिल जाते हैं। जहाँ सभीको एक जैसे समयपर बन्द करनेका आदेश हो वहाँ किसीके लिए भी अपनी दूकान अधिक समय तक खुली रखनेकी गुंजाइश नहीं रहती।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-१०-१९०७

२३९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

हमीदिया अंजुमनकी सभा

इस अंजुमनका जोर बढ़ता जा रहा है। लोगोंका उत्साह भी बढ़ता जा रहा है, और हिन्दू-मुसलमान सभीकी एक स्वरसे माँग है कि कानूनको मिटाया जाये। रविवारको इमाम अब्दुल कादिर सभापति थे। मौलवी साहब और दरवेश साहबने बहुत विस्तारसे भाषण दिये। श्री कुवाड़िया, श्री उमरजी साले वगैरह भी बोले। श्री एच० ए० कुवाड़िया तथा दूसरे सज्जनोंने विषय छेड़ा कि श्री एस० हेलूने हाथ-मुँह काले करके पंजीयनके लिए अर्जी दी, इसलिए उनका बहिष्कार किया जाये। इसे सारी सभाने स्वीकार किया। इसपर अंजुमनने सलाह दी है कि श्री हेलूसे सारा व्यवहार बन्द किया जाये, उनके नौकर नोटिस देकर नौकरी छोड़ दें और दूसरे भारतीय उनसे किसी प्रकारका लेन-देन न करें। इसके बाद क्लार्क्सडॉर्प अंजुमनके एक सदस्य श्री दावजी पटेलने, जो देश जा रहे थे, अपना सारा बकाया चन्दा चुकाया और उनके देशमें रहनेकी अवधिमें भी उनकी सदस्यता कायम रहे, इसलिए १० शिलिंग और जमा कर दिये। इसके बाद अंजुमनकी ओरसे उन्हें चाँदीका एक पदक भेंट किया गया। कुछ लोगोंने उनकी तारीफमें भाषण दिये। श्री दावजी पटेल स्वदेशके लिए रवाना हो चुके हैं।

दूसरे दिन सोमवारको श्री हेलू श्री गांधीके दफ्तरमें पंजीयन अर्जीके सम्बन्धमें स्वयं खेद प्रकट करनेके लिए आये। धरनेदारोंको तुरन्त इसकी खबर मिल गई और उन्होंने श्री गांधीके नाम निम्नलिखित सूचना भेजी: "यदि श्री हेलू भविष्यमें आपके दफ्तरमें आये तो, निश्चित समझिए, आपका भी बहिष्कार किया जायेगा।"

इसके उत्तरमें श्री गांधीने अपना कर्तव्य बजानेके लिए धरनेदारोंका उपकार माना है और उन्हें शाबासी दी है। मैं चाहता हूँ कि ऐसा उत्साह सभी भारतीय सदा रखें। श्री हेलू यदि नियमानुसार माफी माँगें और पश्चात्ताप करें तो माफ करना चाहिए या नहीं, इसका इस उत्साहसे कोई सम्बन्ध नहीं है। की हुई प्रतिज्ञाका पालन करना और आये हुए कर्तव्यका निर्वाह करना समझने और अमल करनेकी बात है। जबतक श्री हेलूको माफ नहीं किया गया, तबतक उपर्युक्त कार्य करना धरनेदारोंका कर्तव्य था।

रामसुन्दर पण्डितका मुकदमा

श्री रामसुन्दर पण्डितके पास उनकी हिम्मतके लिए हर जगहसे बधाईके तार आ रहे हैं। उनमें हिम्मत है और जर्मिस्टनके सारे भारतीय उन्हें हिम्मत दिला रहे हैं। उन्हें अभीतक पकड़ा नहीं गया है। और जैसे श्री अब्दुल कादिर कोकाटीको नहीं पकड़ा जा सका वैसे ही यदि श्री पण्डितको भी न पकड़ा जा सके तो कोई आश्चर्य नहीं। इस सम्बन्धमें शुक्रवार तक जो भी होगा उसका तार भेजूँगा।

पीटर्सका मुकदमा

श्री ऐंथनी पीटर्सपर जो अत्याचार हुआ उसकी चर्चा अब भी चल रही है। जिस सिपाहीने उनपर अत्याचार किया वह अब बदल गया है और कहता है, उसने उनके

प्रिटोरियामें भारतीय सत्याग्रही

इब्राहीम नूर गोविन्द प्राग गुलाब रुद्र देसाई मूसा सुलेमान हुसेन विया वल
ए० एफ० सी० वेग वावू गंगाराम गुलाम मुहम्मद अब्दुल रशीद अहमद एम० काछलिया जी
कासिम सीदू खुशाल छीता

THE PASSIVE RESISTERS.

Scene on Von Brandis Square.

Mr. Gandhi's Explanation.

Ma 25/10/07

25/10/07

TO THE EDITOR OF "THE STAR."

Sir,—I regret that I have to trespass upon your courtesy again with reference to the Asiatic Registration Act. Your report of to-day's happenings on Von Brandis Square bears evident traces of inspiration.

I pass by the description of Indian pickets as "pickets of coolies" as merely an ignorant description of inoffensive and honourable men.

I still maintain that neither the pickets nor any other Indians have exceeded the limits of moral suasion in preventing registration. The Indian referred to by your reporter was in the witness-box to-day, and certainly said that there was no molestation. He was taken hold of by the arm, and, when he said that he wanted to go to the registration office, he was allowed to go. That was his own evidence, corroborated by his co-registrant and the accused. I do not know whether this can by any stretch of imagination be described as "roughly collared outside the office." The men—there were two Indians—who were met by the accused Indian, who, by the way, was not a picket, did not know what the law was. All they knew was that they got a letter from their master to go to some office in Johannesburg to sign. Why should any exception be taken to people at least informing such men of the trap into which they were about to fall? The opinion of the registration officer that Dr. Mathey's client must have been intimidated because he did not appear to register may, perhaps, be counterbalanced by another and more probable opinion—that the client has listened to the remonstrances of his friends, and not been intimidated. I am free to admit that there are many Indians who, but for the pickets, would allow themselves to be registered. The real thing they fear is not intimidation but Indian public opinion. These are men who know the law to be bad, but who cannot rise superior to their worldly ambition, and they would undoubtedly register if there were no pickets. To mention the priest case in connection with the matter betrays either very great ignorance or equally great prejudice on the part of your reporter, because that case was entirely a religious quarrel, and the priest who was assaulted, in giving his evidence, himself expressed exceeding regret that he had ever filed his affidavit. I do not wish to defend the Dervish who committed the assault, but I fancy that all communities have such men and all are proud of them. They do not live for a nationality but for a principle.—I am, etc.,

M. K. GANDHI.

Johannesburg, October 24.

"स्टार" को पत्र

(देखिए पृष्ठ ३०२-०३)

साथ कुछ नहीं किया था। अब श्री पीटर्सका हलफनामा मँगवाया गया है। मुकदमा और चलेगा।

ईलू मुथुका मुकदमा

ईलू मुथुका मुकदमा बहुत ही जानने योग्य है। उसके सम्बन्धमें श्री व्यास द्वारा लिखा हुआ एक प्रभावशाली पत्र मैं नीचे दे रहा हूँ :

> मजिस्ट्रेटकी ओरसे ईलू मुथुको दो दिनमें चले जानेका आदेश मिला है। उसे १८९७ में यहाँ बुलाया गया था। लड़ाईके पहले वह जोहानिसबर्गमें कुककी खेतीपर काम करता था। एक माह उसने रॉबिन्सन खानमें काम किया था। कुछ दिन हुए उसे बुलुवायोके पागलखानेमें रख दिया गया था; परन्तु डॉक्टरने हवा-पानी बदलनेके लिए यहाँके अस्पतालमें भेज दिया। पंजीयकके आदेशसे पागलखानेका सिपाही उसे पंजीयकके कार्यालयमें ले गया। वहाँ उससे उसका सारा हाल पूछा गया, जो उसने ऊपरके अनुसार बताया। अन्तमें पंजीयक महोदयने उसे देश छोड़नेका नोटिस दिया, जिसका परिणाम उपर्युक्त हुआ है। ईलू मुथुका दिमाग अभी फिरा हुआ ही है। उसके पास तीन लुंगियोंके अलावा कुछ नहीं है। भाड़ापत्तीके लिए पंजीयकने अँगूठा दिखा दिया है। मजिस्ट्रेटका कहना है कि यह हमारा काम नहीं है। पागलखानेसे भी रुखसतनामा दे दिया गया है।

यह मुकदमा बहुत ही त्रासदायक है। ईलू मुथु भिखारी है। यहाँका पुराना रहनेवाला है। यदि वह पंजीयनके लिए अर्जी न देता, तो उसे कोई नहीं बुलाता। उससे जबरदस्ती अर्जी दिलवाई गई और अब उसे नोटिस मिला है कि वह देश छोड़कर चला जाये। कहाँ जाये? पैसे कहाँसे लाये? किस कारणसे जाये? जिस कानूनके द्वारा ऐसा जुल्म हो उसके सामने यदि कोई भारतीय घुटने टेकेगा तो उससे भारतीय प्रजा भी पूछेगी और खुदा भी पूछेगा। बिना अनुमतिपत्रवाले यदि पंजीयनके लिए अर्जी देंगे तो उनका भी ईलू मुथु जैसा ही हाल होगा और वैसा किया जाना उचित भी है। उनकी सुरक्षा अँगुलियाँ घिसनेमें नहीं, बल्कि ट्रान्सवाल छोड़नेमें है। और यदि उनका मामला मजबूत हो तो जेल जानेमें है। अब जेल भले और सच्चे लोगोंके लिए है।

चीनियोंकी एकता

यहाँके बड़े व्यापारी हार्विन और पेटर्सन चीनियोंसे बहुत व्यापार करते हैं। वे हर महीने लगभग ५,००० पौंडका माल उधार देते हैं। चीनियोंको उन्होंने नोटिस दिया कि यदि वे नये पंजीयनपत्र न लेंगे तो उन्हें माल उधार देना बन्द कर दिया जायेगा। इसपर चीनियोंने डरनेके बजाय ज्यादा हिम्मत की। उन्होंने कहा "हमारे बिल दीजिए। हम आपके पैसे चुका देना चाहते हैं। आपके मालकी हमें जरूरत नहीं। हम आपके साथ कारोबार बन्द करेंगे।"

यह सुनकर हार्विन साहब शान्त हो गये। उन्होंने चीनियोंसे माफी माँगी और स्वीकार किया कि भविष्यमें पंजीयनपत्र या हिसाबके सम्बन्धमें कोई बात नहीं की जायेगी। हमारे व्यापारियोंको कुछ गोरे व्यापारी धमकाते हैं तो वे डर जाते हैं; और जैसे उनके गुलाम हों, पंजीयनपत्र लेनेको तैयार हो जाते हैं। उस समय यह भूल जाते हैं कि उन्होंने कानूनके आगे घुटने न टेकनेकी शपथ ली है।

धरनेदारोंका काम

धरनेदार बहुत परिश्रम कर रहे हैं। और इसमें शक नहीं कि उनके प्रयत्नोंसे बहुतेरे कमजोर भारतीय रुक जाते हैं। पार्क, फोर्ड्सबर्ग, ब्रामफॉटीन, डार्नफॉटीन और जेपी स्टेशनपर धरनेदार बैठते हैं। वैसे ही, अनुमतिपत्र कार्यालयके आसपास भी। इस व्यवस्थाके कारण रुडीपूर्टसे आनेवाले तीन भारतीय मजदूर हाथ आये थे। उन्हें उनके वरिष्ठ अधिकारीने जबरदस्ती पंजीयन करवानेके लिए भेजा था। धरनेदारोंसे भेंट होनेपर उन्हें समझाया गया, इसपर वे यह कहकर वापस चले गये कि नौकरी छोड़ देंगे मगर नये पंजीयनपत्र नहीं लेंगे।

इमाम कमाली लोगोंको गुमराह करते हैं और बीचमें पड़ते हैं, इससे लोगोंमें बहुत क्षोभ और खेद पैदा हो गया है। इमाम कमाली भारतीय नहीं, मलायी हैं; इसलिए सबको यही लगता है कि उन्हें भारतीय मामलेमें दखल नहीं देना चाहिए।

भीमकाय प्रार्थनापत्र[1]

यह प्रार्थनापत्र अभीतक सरकारके पास नहीं गया है। एक-दो जगहसे फार्म सही होकर नहीं आये हैं, इसलिए रुका हुआ है। इसमें लगभग सभी प्रमुख भारतीयोंके हस्ताक्षर हो चुके हैं। श्री अब्दुल गनी, श्री हाजी हबीब, श्री ईसप मियाँ, श्री दादाभाई, श्री कुवाड़िया वगैरह सज्जनोंके हस्ताक्षर हैं। विशेष समाचार अगले सप्ताह देनेकी आशा करता हूँ।

मोहलत मिलेगी या नहीं?

यदि दिसम्बरमें लोगोंपर प्रहार हो और उन्हें मजिस्ट्रेटके समक्ष खड़ा किया जाये तो मोहलत मिलेगी या नहीं? यह प्रश्न पूछा गया है। नये पंजीयनपत्र न लेनेके कारण यदि किसीको मजिस्ट्रेटके सामने पेश किया जाये, तो वह जानेके लिए मोहलत माँग सकता है। कितनी मोहलत दी जाये, यह मजिस्ट्रेटके हाथमें है। यानी वह एक घंटेसे एक वर्ष तक की या इससे भी ज्यादा मोहलत दे सकता है। लम्बी मोहलत देगा ही यह मैं नहीं कहता, परन्तु इसमें शक नहीं कि उसे लम्बी मोहलत देनेका अधिकार प्राप्त है। फिर भी मैं जानता हूँ कि इस तरह मोहलत माँगनेमें हीनता है। और मैं किसीको इसकी सलाह नहीं दे सकता। जो जेलसे डरकर अपना कारोबार समेटना चाहें वे कुछ मोहलत माँग सकते हैं; और मैं नहीं समझता कि थोड़ी-बहुत मोहलत देनेसे भी मजिस्ट्रेट इनकार करेगा। ये सब बातें हरएक मुकदमेपर, मजिस्ट्रेटपर और समयपर निर्भर हैं।

ईसप मियाँका शोक

श्री ईसप मियाँकी पत्नीका प्रसूतिकी बीमारीसे शुक्रवारकी रातको देहान्त हो गया। उससे बड़ा शोक फैल गया है। श्री ईसप मियाँका इरादा अपनी पत्नीको लेकर हज करने जानेका था। किन्तु उन्हें खूनी कानूनकी लड़ाईके कारण रुक जाना पड़ा। इसी बीच यह खेदजनक घटना हो गई। इससे उन्हें बहुत दुःख हुआ है। खुदा श्री ईसप मियाँको हिम्मत बख्शे, यह मेरी प्रार्थना है।

बेगका पत्र

श्री बेग अखबारोंमें जोरसे लिखा करते हैं। प्रिटोरिया न्यूजमें उन्होंने श्री स्मट्सके भाषणके उत्तरमें लम्बा पत्र लिखा और श्री स्मट्सको उनकी बातोंका अनौचित्य दिखा दिया

१. देखिए "भीमकाय प्रार्थनापत्र", पृष्ठ २३९।

है। श्री ब्रिटलवैंकने भी उसी अखवारमें लम्बा पत्र लिखा है। उसमें ट्रान्सवालकी सरकारको फटकारा है। श्री वेगका एक पत्र 'लीडर' में भी प्रकाशित हुआ है।

'संडे टाइम्स'

अनाक्रामक प्रतिरोधके वादसे यह अखवार हर सप्ताह कोई-न-कोई चित्र छापा करता है। इस वार जो चित्र छपा है उसमें विना काम मुफ्तकी तनख्वाह लेनेवाले पंजीयन अधिकारियोंके दफ्तरका दृश्य है। उसके परिचयमें सम्पादकने लिखा है: सरकारको चाहिए कि वह "कुलियों" को जरूर वाहर निकाल दे।

हाजी हबीब

श्री हाजी हवीव डर्वनसे प्रिटोरिया आ गये हैं।

सारा नवम्बर क्यों कोरा रखा गया?

वहुत-से लोगोंने मुझसे पूछा है कि क्या सरकारको इतनी भूख लगी है कि वह सारा नवम्बर खा जायेगी? जब भारतीयोंपर मुकदमा ही चलाना है तो क्यों पहली नवम्वरसे शुरू नहीं करती? जान पड़ता है कि ये प्रश्न करनेवाले भाई 'इंडियन ओपिनियन' ठीक तरहसे नहीं पढ़ते। नहीं तो, जहाँ मैंने नोटिसके वारेमें समझाया है वहीं यह वात भी आ गई है। अव मैं पाठकोंको सलाह देता हूँ कि वे 'इंडियन ओपिनियन' वहुत ध्यानसे पढ़ा करें। उसे पढ़नेमें वहुत दिन नहीं लगते। और मुझे विश्वास है कि उसमें जानने योग्य कुछ-न-कुछ तो उन्हें मिलेगा ही। इतना कह देनेके वाद अव मैं प्रश्नका उत्तर देता हूँ। जो नोटिस निकाले गये हैं उनके अनुसार जिन लोगोंके पास पहली दिसम्वरसे नये पंजीयनपत्र नहीं होंगे, उनपर मुकदमा चलाया जायेगा। सारा अक्तूवर महीना पंजीयनपत्रोंकी अर्जी लेनेमें वीतेगा। अर्जी प्राप्त होते ही पंजीयक महोदय उसका फैसला नहीं कर देते। अर्जी प्राप्त होनेके वाद जाँच करनेका उन्हें अधिकार है। जाँच करनेके लिए उन्हें कुछ समय चाहिए ही। सरकारने अर्जियोंकी जाँच करनेके लिए चैमने साहवको नवम्वर महीना दिया है। इस वीच जिसने गुलामीकी अर्जी दी होगी, उसे गुलामीका पुरस्कार मिलेगा या नहीं, इसका फैसला होगा। अर्थात् दिसम्वर महीनेमें सवके पास पंजीयनपत्र हो, यह व्यवस्था हो गई। कोई पूछ सकता है कि भारतीय समाजने जव वहिष्कार किया है तव एक महीना और क्यों दिया गया? इसका उत्तर यह है कि सरकार वहिष्कारकी ओर ध्यान नहीं दे सकती। कहीं ३१ अक्तूवरको आसमान फट पड़े और पंजीयन-कार्यालयमें अर्जियोंकी वर्षा हो जाये, तो उन अर्जियोंका फैसला करनेके लिए पंजीयकको समय तो मिलना ही चाहिए। इसीलिए दुर्भाग्यसे नवम्वरकी खाई पड़ी है।

धरनेदारोंकी आफत

मंगलवारको वकील श्री अलेक्ज़ैंडर और श्री डी'विलियर्सके पास दो-दो कोंकणी मुवक्किल थे। उनपर विना अनुमतिपत्रके रहनेका आरोप था। दोनों वकीलोंने श्री जॉर्डनसे कहा कि इन कोकणियोंको धरनेदार डराते हैं, इसलिए ये पंजीयन-कार्यालयमें नहीं जा सके। ये जानेको तैयार हैं। श्री अलेक्ज़ैंडरने कहा कि अदालतको धरनेदारोंको हटाना चाहिए। इसपर श्री गांधीने, जो वहाँ मौजूद थे, कहा कि धरनेदार विलकुल धमकी नहीं देते और यदि कोंकणियोंका पंजीयन-कार्यालयमें जानेका विचार हो तो मैं स्वयं उन्हें ले जाऊँगा। यह वात

सम्भव है कि पुलिस अब आयुक्त (कमिश्नर) के पास जायेगी। इससे संघके मन्त्रीकी ओरसे पुलिस आयुक्तको निम्नानुसार पत्र लिखा गया है।[१]

इस किस्सेसे धरनेदारोंको ध्यान रखना है कि वे बहुत शान्तिसे काम करें। धरनेदारोंका काम लोगोंको समझानेके सिवा और कुछ नहीं है और जब उनके साथ पुलिस हो तब तो किसीको बीचमें बिलकुल ही नहीं पड़ना चाहिए। जो लोग गुलाम बनना ही चाहें, उन्हें किसीके रोकनेकी जरूरत नहीं है। ऐसे भी भारतीय मौजूद हैं जो कहते हैं कि धरनेदार धमकाते हैं। इससे मैं लज्जित हूँ और मानता हूँ कि हमारा कितना दुर्भाग्य है। हर भारतीयको समझा दिया गया है कि यदि उसे हाथ घिसना ही हो तो धरनेदार स्वयं उसे ले जायेंगे। इस चिट्ठीके छपनेके बाद अक्तूबरके और भी बारह दिन बचेंगे। इतने दिनोंमें बहुत रंग देखनेको मिलेगा। जोहानिसबर्गके प्रत्येक भारतीय व धरनेदारको मर्दानगी, और साथ ही धीरज, नम्रता और मिठास दिखाना है। सामान्य लोगोंका काम है कि वे पंजीयन-कार्यालयका बहिष्कार करें। नेताओंका काम है कि वे समझ व हिम्मत दें, और अपने पैसोंका त्याग करें। और धरनेदारोंका काम है कि वे धीरजसे अपना फर्ज अदा करें। उनके दबावकी जरूरत नहीं है, उनकी हाजिरीकी जरूरत है। हर स्टेशन और हर जगह, जहाँसे भारतीयोंका आना सम्भव हो, धरनेदार होने चाहिए। यदि धरनेदारको सरकार गिरफ्तार करे तो डरना नहीं है। यदि कोई धरना देते हुए पकड़ा जाये तो उसे याद रखना चाहिए कि जमानत नहीं देना है। और यदि सजा दी जाये तो जुर्माना न देकर जेल जाना है।

नौकरी छोड़ी लेकिन हाथ नहीं घिसे

श्री मुरगन, श्री अरमुगम, श्री हेरी, श्री व्यंकटापन, श्री मुथु, मिट्टीके बरतनोंके कारखानेमें काम करते थे। उन्हें हुक्म दिया गया कि उन्हें पंजीयन न करवाना हो तो नौकरी छोड़ दें। उन्होंने नौकरी छोड़ दी, किन्तु हाथ नहीं घिसे। ऐसा उत्साह हर भारतीयमें होना चाहिए। इन लोगोंको मैं हीरा समझता हूँ।

नामर्द पर्दानशीन हो गये

चार नामर्द कहींसे आये थे। वे पर्देवाली गाड़ीमें बैठकर पंजीयन-कार्यालयमें घुस गये और वहाँ उन्होंने अपने हाथ घिसाये। बुधवारको इस तरह चार आदमियोंने जोहानिसबर्ग कार्यालयमें अपनी इज्जत बेचकर स्वयं गुलामीका रुक्का लेनेके लिए अर्जी दी।

चेतो! चेतो! चेतो!

पंजीयन-कार्यालय चाहे जिस तरहसे भारतीयोंको पंजीकृत करना चाहता है। मुझे आशा है कि इसका अर्थ प्रत्येक भारतीय समझ जायेगा। श्री स्मट्स जानते हैं कि यदि भारतीय मजबूत रहे तो किसीको बलात् जेल भेजकर पंजीकृत नहीं किया जा सकता। परवानेकी तकलीफ भी हजारों भारतीयोंको नहीं दे सकते और इसलिए आखिर उन्हें कानून रद करना ही होगा। इस बातको ठीक समझकर हर भारतीयको चेतना चाहिए और हिम्मतसे काम लेना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-१०-१९०७

१. देखिए "पत्र: पुलिस कमिश्नरको", पृष्ठ २९०-९१।

२४०. पत्र : 'स्टार' को[1]

जोहानिसबर्ग
अक्तूबर २४, १९०७

सेवामें
सम्पादक
'स्टार'
[जोहानिसबर्ग]

महोदय,

मुझे खेद है कि एशियाई पंजीयन अधिनियमके बारेमें आपके सौजन्यका लाभ पुन: उठा रहा हूँ। आपने वॉन ब्रैंडिस स्क्वेयरकी आजकी घटनाओंकी जो रिपोर्ट दी है उसमें इसके साफ चिह्न दिखाई देते हैं कि वह किसीके उकसानेसे लिखी गई है।

इस बातको तो मैं नजरअन्दाज किये देता हूँ कि भारतीय धरनेदारोंको "कुलियोंके धरनेदार" कहा गया है, क्योंकि यह निर्दोष और प्रतिष्ठित व्यक्तियोंका ज्ञानशून्य चित्रण है।

मेरा अब भी यह खयाल है कि पंजीयनको रोकनेके लिए न तो धरनेदार और न ही कोई अन्य भारतीय नैतिक रूपसे समझाने-बुझानेकी सीमासे आगे बढ़े हैं। जिस भारतीयका आपके संवाददाताने उल्लेख किया है वह आज अदालतमें गवाही दे रहा था, और उसने निश्चय ही यह कहा है कि उसे किसी प्रकार परेशान नहीं किया गया। उसकी बाँह पकड़ ली गई थी और जब उसने कहा कि वह पंजीयन-कार्यालयमें जाना चाहता है तो उसे जाने दिया गया। यह उसका अपना ही साक्ष्य था और उसकी पुष्टि उसके पंजीयन करानेवाले साथी तथा अभियुक्तने भी की। मैं नहीं जानता कि इसे किसी प्रकार कल्पनाकी खींचातानसे भी "दफ्तरके बाहर बुरी तरह गरदनियाँ देना" कहा जा सकता है। मैं प्रसंगवश कह दूँ कि जिस भारतीय अभियुक्तने उन लोगोंको — वे दो भारतीय थे — रोका था, वह कोई धरनेदार नहीं था, और उन दोनोंको भी पता नहीं था कि कानून क्या है। वे बस इतना ही जानते थे कि उनके मालिकने एक पत्र देकर कहा कि वे जोहानिसबर्गके अमुक कार्यालयमें जाकर हस्ताक्षर कर आयें। यदि कोई ऐसे आदमियोंको कमसे-कम इतना बता दे कि वे किस जालमें फँसने जा रहे हैं तो इसपर किसी प्रकारकी आपत्ति क्यों होनी चाहिए? डॉक्टर मेथेका आदमी पंजीयन नहीं कराने पहुँचा, और पंजीयन अधिकारी मान बैठे कि उसे अवश्य ही डराया-धमकाया गया होगा। लेकिन उनकी इस धारणा जैसी ही वजनी और और अधिक सम्भावित तो यह बात भी हो सकती है कि उसने अपने मित्रोंके उलाहनेपर ध्यान दिया, और उसे डराया नहीं गया। मैं इस बातको खुले दिलसे मंजूर करता हूँ कि यदि धरना नहीं दिया जाता तो बहुत-से भारतीय पंजीयन करा लेते। वास्तवमें वे जिस बातसे डरते हैं वह धौंस-धमकी नहीं है, बल्कि भारतीय जनमत है। वे ऐसे आदमी हैं जो जानते

१. यह २-११-१९०७ के **इंडियन ओपिनियन**में उद्धृत किया गया था।

हैं कि कानून बुरा है, फिर भी अपनी सांसारिक अभिलाषाओंसे ऊपर नहीं उठ सकते, और यदि धरनेदार न होते तो वे पंजीयन जरूर करा लेते। इस सम्बन्धमें मुल्लाके मामलेका उल्लेख या तो आपके संवाददाताका घोर अज्ञान या वैसा ही भारी पूर्वग्रह प्रकट करता है; क्योंकि यह मामला पूरी तरहसे धार्मिक झगड़ेका था और जिस मुल्लापर हमला किया गया था उसने अपनी गवाहीमें अपने हलफिया बयान देनेपर भारी खेद प्रकट किया था। मैं हमला करनेवाले फकीरकी ओरसे कोई सफाई देना नहीं चाहता। किन्तु मैं समझता हूँ कि सभी समुदायोंमें ऐसे आदमी होते हैं, और सम्बन्धित समुदायके लोग उनपर गर्व करते हैं। वे किसी राष्ट्रीयताके लिए नहीं, बल्कि एक सिद्धान्तके लिए जीते हैं।

आपका, आदि,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

स्टार, २५-१०-१९०७

२४१. पत्र : 'ट्रान्सवाल लीडर' को

[जोहानिसबर्ग
अक्तूबर २६, १९०७ के पूर्व]

[सम्पादक
'ट्रान्सवाल लीडर'
जोहानिसबर्ग]

महोदय,

एशियाई अनाक्रामक प्रतिरोधियोंकी कथित धमकियोंके सम्बन्धमें आपने जो संयत अग्रलेख लिखा है उसके लिए मेरा संघ आपका आभारी है। भारतीय आन्दोलनमें किसी भी प्रकारकी हिंसाके प्रयोगके विरुद्ध आपने जो-कुछ कहा है उसके प्रत्येक शब्दका समर्थन करनेमें हमें कोई संकोच नहीं हो सकता। एशियाई अधिनियमके बारेमें हमारा लक्ष्य हमेशा यह रहा है कि स्वयं कष्ट भोगकर, न कि दूसरोंको दुःख पहुँचाकर न्याय प्राप्त करें।

आपके स्तम्भोंमें जो अनुच्छेद प्रकाशित हुआ है वह स्पष्ट ही किसीकी प्रेरणासे लिखा गया है। आतंक-राज्यका अस्तित्व अस्वीकार करनेमें मुझे कोई संकोच नहीं है। यह बात दूसरी है, अगर अधिनियमके विरुद्ध ट्रान्सवालवासी समस्त भारतीय जनतामें व्याप्त अत्यन्त प्रबल भावनाने उन भारतीयोंके बीच आतंक फैला रखा हो जो अपने-आपको समाजसे अलग कर इस अधिनियमके अनुसार प्रमाणपत्र लेना चाहते हैं, और सो भी इसलिए नहीं कि उनको यह प्रणाली पसन्द है, बल्कि इसलिए कि वे पैसेको प्रतिष्ठासे बढ़कर मानते हैं। मैं इस बातको स्वीकार करता हूँ कि अनेक एशियाई अपना पंजीयन करानेकी पूरी इच्छासे ही अपने कामकी जगहोंसे निकले थे, लेकिन बादमें उन्होंने उन चौकस धरनेदारोंके समझाने-बुझानेपर ऐसा न करनेका फैसला किया। धरनेदारोंने पंजीयन करानेवालोंके सामने कानूनका सही रूप खोलकर रख देनेकी

कारगर दलीलसे काम लिया और उनके मस्तिष्कसे उन सूक्ष्म प्रलोभनोंको निकाल दिया जो पंजीयनके पुरस्कारस्वरूप उनके सामने प्रस्तुत किये गये थे। सरकार पंजीयन करानेके लिए समाजको वहकानेके जो घोर प्रयत्न कर रही है उनके वारेमें जनताको कोई जानकारी नहीं हो सकती। धरनेदारोंने कभी भी धमकियोंसे काम नहीं लिया और समाजके जिम्मेदार लोग उन धरनेदारोंकी गतिविधियोंपर वरावर नजर रखते हैं।

दुर्भाग्यवश, एक मुल्लापर आक्रमण किया जानेकी सूचना सच है, किन्तु उसपर कई भारतीयोंने मिलकर हमला नहीं किया था। वास्तविक घटना इस प्रकार है: उक्त मुल्ला भारतीय नहीं, वल्कि एक मलायी है। हमारे वीच एक फकीर है, जो पैगम्वरका पक्का भक्त है। वह अपना पूरा वक्त तीनों मस्जिदोंमें से किसी-न-किसीमें गुजारता है और जव-कभी वह ठीक समझता है, एक खानमें पत्थर तोड़नेका काम करके, अपनी रोटी कमाता है। वह किसीकी नहीं सुनता और शायद दक्षिण आफ्रिकामें सवसे ज्यादा आजाद तवीयतका आदमी है। उसे और उसकी सादी जिन्दगीको देखनेवाला हर आदमी उसकी इज्जत करता है। जव उसने यह सुना कि इस मलायी मुल्लाने भारतीयोंको, विशेषकर भारतीय मुसलमानोंको, अपनी शपथकी पवित्रता भंग करके कानूनके आगे झुकनेको प्रोत्साहित किया है तव वह गुस्सेसे भर गया। वह इरादतन मलायी मस्जिदमें जा पहुँचा, उक्त मुल्लासे मिला और उसके साथ वहस-मुवाहसा करने लगा। उसने कुरानकी एक आयतका उदाहरण देते हुए मुल्लाको यह समझाया कि कमसे-कम उसे तो भारतीय मामलोंमें दखल देने और लोगोंको कुरानकी तालीमसे मुकर जानेके लिए फुसलानेसे दूर ही रहना चाहिए, खास तौरपर इसलिए कि वह भारतीय नहीं है। फिर तू-तू मैं-मैं की नौवत आ गई, जिसका परिणाम हुआ यह दुर्भाग्यपूर्ण आक्रमण। आप इस वातको स्वीकार करेंगे कि इस मामलेकी जिम्मेदारी भारतीयोंपर डालना नितान्त अनुचित है। हममें से अनेकने उस फकीरको समझानेकी कोशिश और उससे संयम वरतनेके लिए अनुनय-विनय की है, किन्तु वह अपने व अपने खुदाके वीच किसीकी दस्तन्दाजी मुनासिव नहीं मानता। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि उसके लिए घर और जेल वरावर हैं। और दलील दी जानेपर उसने कहा कि वह अदालतके सामने जाकर अपने कार्यका औचित्य सिद्ध करनेके लिए विलकुल तैयार है।

जहाँतक कुत्तेको जहर देनेका मामला है, वह इल्जाम शरारत भरा है। मैंने वड़ी सावधानीसे जाँच की है, लेकिन मुझे जहर देने और कुत्तेके मालिकके पंजीयनके वीच कोई सम्वन्ध नहीं मिल सका। पिछले दिनों भारतीयोंके अनेक कुत्तोंको जहर दिया गया है। आम तौरपर ऐसा खयाल है कि काम चोरोंका है, जो इन कुत्तोंके भौंकनेके कारण पकड़े जानेसे वचना चाहते थे। अगर भारतीय-गद्दारोंके साथ होनेवाली हरएक दुर्घटनाको भारतीय अनाक्रामक प्रतिरोधियोंके मत्थे मढ़ा जायेगा तो यह वड़ी भयंकर वात होगी। महोदय, आप विश्वास कीजिए, अल्पसंख्यकोंको वहुसंख्यक भारतीयोंकी इच्छाके सामने झुकानेके लिए किसी आपत्तिजनक तरीकेको अपनानेकी हमारी कोई इच्छा नहीं है। हम, जो अपने आचार-व्यवहारमें स्वतन्त्र रहना चाहते हैं और इसीलिए एशियाई अधिनियमको माननेसे इनकार करते हैं, उन दूसरे आदमियोंपर पावन्दी लगा भी कैसे सकते हैं जो हमारे जैसा नहीं सोचते? हम, जो अपने लिए स्वतन्त्रता तथा आत्मसम्मानका दावा करते हैं, अगर दूसरोंको उतनी ही स्वतन्त्रता देनेसे इनकार करते हैं तो अपने आदर्शोंके प्रति झूठे सावित होंगे।

और जहाँतक आपके संवाददाता द्वारा उल्लिखित सागर-तटपर बसे नगरके हिन्दू पुजारी की बात है, जर्मिस्टनमें निश्चय ही दंगा नहीं हुआ है। यह बिलकुल सच है कि उक्त पुजारीने उपनिवेशके अन्य हर पुजारीकी तरह ही, चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान, एक ऐसे प्रश्नमें दिलचस्पी ली है जो पूरे भारतीय समुदायके कल्याणसे सम्बन्धित है। अपने धर्मसे प्रेम करनेवाले किसी भी भारतीयका आचरण इससे भिन्न नहीं होगा। क्या ऐसे मामलेमें, जिसमें ईश्वर और कुबेरमें से एकको चुनना हो, एक पुजारी अपने श्रोताओंसे यह अनुरोध नहीं कर सकता कि वह कुबेरकी ओर देखनेकी अपेक्षा ईश्वरकी ओर देखे?

[आपका, आदि,
ईसप इस्माइल मियाँ
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-१०-१९०७

२४२. स्वर्गीय श्री अलेक्जैंडर

डर्बनके भूतपूर्व मुख्य पुलिस अधिकारीकी[1] मृत्युके समाचारसे वहाँके पूरे समाजको दुःखद आघात पहुँचा है। जरसीके लिए रवाना होते समय श्री अलेक्जैंडरका स्वास्थ्य बिलकुल ठीक था और यह आशा की जाती थी कि वे अभी अनेक वर्षोंतक जीवित रहकर सु-अर्जित विश्रामका उपभोग करेंगे। इस बातको याद कर अत्यधिक कष्ट होता है कि डर्बन नगरके सर्वोच्च पुलिस अधिकारीको जो थैली भेंट की गई थी वह ठीक ऐसे समयपर मिली थी कि उससे वे घर जा सके। वे डर्बनकी सर्वसमाजी आबादीके इतने प्यारे हो गये थे कि उसको बहुत समय तक याद आते रहेंगे। हम उनकी विधवाकी इस क्षतिमें हार्दिक सहानुभूति प्रकट करते हैं। दरअसल तो यह समाजकी भी क्षति है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-१०-१९०७

१. देखिए खण्ड ६, पृष्ठ २८८ और ४३० ।

२४३. अनाक्रामक प्रतिरोधियोंके लिए[1]

राजकीय आवश्यकताका सिद्धान्त, ईश्वरीय नियमका उल्लंघन करनेके लिए केवल उन्हीं लोगोंको बाँध सकता है जो सांसारिक लाभोंकी प्राप्तिके लिए अमान्यको भी मान्य करनेकी कोशिश करते हैं। किन्तु एक ईसाई, जो ईसा मसीहकी शिक्षाके अनुसार आचरण करनेसे मोक्ष पानेमें सच्चा विश्वास रखता है, उस सिद्धान्तको कोई महत्त्व नहीं दे सकता। —टॉल्स्टॉय

डेविड थोरो एक महान लेखक, दार्शनिक, कवि और साथ ही अत्यन्त व्यावहारिक पुरुष भी था। अर्थात् वह ऐसी कोई शिक्षा नहीं देता था जिसपर वह स्वयं आचरण करनेके लिए तैयार न हो। वह अमरीकाके महानतम और सबसे सदाचारी व्यक्तियोंमें से एक था। दासता उन्मूलन आन्दोलनके समय उसने "सविनय अवज्ञाके कर्तव्य" के बारेमें अपना प्रसिद्ध निबन्ध लिखा था। अपने सिद्धान्तों तथा पीड़ित मानवताके लिए वह जेल भी गया। इसलिए उसका निबन्ध कष्ट-सहन द्वारा पवित्र हो चुका है। इसके अलावा वह हमेशाके लिए रचा गया है। उसकी पैनी दलीलोंका जवाब नहीं दिया जा सकता। जिन एशियाई अनाक्रामक प्रतिरोधियोंके मूक कष्टकी कहानी अब समस्त सभ्य संसारके कानों तक पहुँच चुकी है उनके लिए अक्तूबरका महीना कष्टकर प्रलोभनोंसे पूर्ण था — इसी महीनेके अन्तिम सप्ताहमें हम थोरोके निबन्धसे कुछ उद्धरण नीचे दे रहे हैं। मूल निबन्ध एक जेबी पुस्तकके तीस पृष्ठोंसे कुछ अधिक है। इस पुस्तकको श्री ऑर्थर सी० फिफील्ड, ४४ फ्लीट स्ट्रीट, लन्दन, ने अपने 'सादा जीवन' नामक सुन्दर पुस्तकमालामें प्रकाशित किया है। इसका मूल्य तीन पेंस है।

उद्धरण

मैं इस आदर्श-वाक्यको हृदयसे स्वीकार करता हूँ कि वही सरकार सबसे अच्छी होती है जो कमसे-कम शासन करती है; और मैं चाहता हूँ कि इसपर जल्दी और ढंगसे अमल किया जाये। अमलमें उसका अन्तिम रूप यह हो जाता है और इसपर भी मेरा विश्वास है: "वही सरकार सबसे अच्छी है, जो बिलकुल शासन नहीं करती;" और जब मनुष्य इसके लिए तैयार हों तो वे ऐसी ही सरकार बनायेंगे। सरकार अधिकसे-अधिक एक कार्य-साधक संस्था है, किन्तु प्रायः बहुतेरी सरकारें और कभी-कभी सभी सरकारें कार्य-साधक नहीं होतीं।

आखिरकार, जब सत्ता एक बार जनताके हाथों चली जाती है तब बहुसंख्यकोंको जो शासन करने दिया जाता है, और वह भी लम्बे अर्से तक के लिए, सो इसलिए नहीं कि उनके सही रास्ते जानेकी अधिकसे-अधिक सम्भावना रहती है और न ही इसलिए कि वह अल्पसंख्यकोंको सर्वाधिक उचित जान पड़ता है, बल्कि इसलिए कि

१. अनाक्रामक प्रतिरोधके सिद्धान्तमें गांधीजीकी जो दिलचस्पी थी, वह बादमें **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित एक घोषणाके रूपमें व्यक्त हुई। घोषणामें उक्त विषयसे सम्बन्धित निबन्ध माँगे गये थे। देखिए परिशिष्ट ६।

वे अधिक बलवान होते हैं। लेकिन जो सरकार हर बातमें बहुसंख्यकोंकी ही सुनती हो वह न्यायपर आधारित नहीं हो सकती, उस सीमा तक भी नहीं जिस सीमा तक लोग वैसा समझते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–१०–१९०७

२४४. राष्ट्र-पितामह

हमारे पाठकोंको यह जानकर दुःख होगा कि श्री दादाभाई नौरोजी, अचानक बीमार पड़ जानेके कारण, उस शानदार बिदाई भोजमें उपस्थित न हो सके जो उनके सम्मानमें दिया गया था। अभी मुझे 'इंडिया' पत्र प्राप्त हुआ है, जिसमें उस समारोहका पूरा विवरण छपा है। उससे ज्ञात होता है कि समारोहमें सभी राजनीतिक विचारोंके लोगोंने भाग लिया था। किसी समुद्री-तारके न आनेसे जान पड़ता है कि राष्ट्र-पितामहकी तबीयत अब अच्छी हो गई है और उनके संयमी, तपस्वी तथा निग्रही जीवनने, जिसका सर मंचरजीने इतनी वाग्मितासे वर्णन किया, उनका अच्छा साथ दिया है। हमें आशा है कि जिस देशको वे इतना अधिक प्यार करते हैं उसके लिए वे दीर्घकाल तक जीवित रहेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–१०–१९०७

२४५. मेमन लोगोंकी विपरीत बुद्धि

हममें एक कहावत है, विनाश-कालमें बुद्धि विपरीत हो जाती है। यही हाल ट्रान्सवालके मेमन लोगोंका हो गया है। उनमें गुलामीका पट्टा न लेनेवाले बहुत कम लोग बचे होंगे। जो बचे हैं उन्हें हम सिंहके समान मानते हैं। जिन्होंने दुर्मति बरती है उन्हें चोट पहुँचानेके लिए हम यह लेख नहीं लिख रहे, बल्कि इसलिए लिख रहे हैं कि उनके बुरे कामसे दूसरे भारतीय अच्छा सबक लें।

मेमन लोगोंने पंजीयनपत्र ले लिये हैं, इससे दूसरी कौमोंको डरना नहीं चाहिए। उनकी बेहिम्मती निराली है। कोई यह न समझ ले कि चूँकि मेमन लोगोंने खूनी कानूनके सिक्के ले लिये, इसलिए वे ट्रान्सवालमें सुखसे व्यापार करेंगे और ज्यादा कमायेंगे, तथा दूसरे भारतीयोंको भागना पड़ेगा। वास्तवमें जहाँ थोड़े-से मेमन गुलाम बन गये हैं, वहाँ सैकड़ों भारतीय मुक्त हैं। इस बातको समझकर हमें खुमारी चढ़नी चाहिए। जो यह आशा रखते हों कि गुलामीका पट्टा लेनेके बाद मेमन सुखसे व्यापार कर सकेंगे उन्हें हम नासमझ मानते हैं। और यदि दूसरे भारतीयोंको ट्रान्सवाल छोड़ना पड़ा तो मेमन लोगोंको तो सबसे पहले यह मौका भी देख ही पायेंगे। उनकी स्थितिकी कल्पना करके हमें कँपकँपी छूटती है।

लेकिन हम मानते हैं कि यदि दूसरे भारतीयोंका अच्छा-खासा भाग दृढ़ रहकर जेल जानेको तैयार रहा तो किसीको ट्रान्सवाल नहीं छोड़ना पड़ेगा। सभी हकदार भारतीय शान्तिपूर्वक ट्रान्सवालमें रह सकेंगे और नया कानून रद हो जायेगा। जो लोग मानते हैं कि वह रद नहीं होगा उन्हें, हम समझते हैं, खुदाकी सचाई और उसके अति पवित्र न्यायपर भरोसा नहीं है। इसलिए हम शेष भारतीयोंसे प्रार्थना करते हैं कि "आप भारतकी नाक रखें; सारी तकलीफें उठायें, किन्तु कानूनके सामने न झुकें।" 'कुरान शरीफ' के अन्तिम सूरेमें जो कहा गया है उसके अंग्रेजी अनुवादका गुजराती भाषान्तर हम नीचे दे रहे हैं:

> कहो कि मैं उस खुदाकी शरण जाता हूँ जो सारे आलमका बादशाह है। वह मुझे शैतानके, दुष्टोंके तथा मनुष्योंके पंजेसे बचायेगा।

ये शब्द हर भारतीयको अंकित कर लेने चाहिए। अभी कायरोंके पंजेसे बचनेका समय है। उपर्युक्त आयत हिन्दू हो या मुसलमान, पारसी हो या ईसाई, सबपर लागू होती है। सत्य तो एक ही है और खुदा भी सबका एक ही है। "आकार पानेपर नाम-रूप भिन्न हैं, सोना तो अन्तमें सोना ही है।"[1]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-१०-१९०७

२४६. ट्रान्सवालके भारतीयोंका कर्तव्य

इस शीर्षकसे हम कई बार लिख चुके हैं तथा और भी कई बार लिखना पड़ेगा। हमने श्री रिचका पत्र और संलग्न पत्रोंका अनुवाद करके दिया है। हम ट्रान्सवालके प्रत्येक भारतीयसे उसे पढ़नेका अनुरोध करते हैं। समितिका हर सदस्य उनके साथ है। हमीदिया इस्लामिया अंजुमनका पत्र भी श्री मॉर्ले तक पहुँच गया है। उस पत्रकी चर्चा विलायतमें हो रही है। सर जॉर्ज बर्डवुड भारतके बहुत ही समझदार, पुराने और जाने-माने सेवक हैं। उनका बहुत समय भारतीय परिषदकी नौकरीमें बीता है। उन्होंने लिखा है कि भारतीयोंकी लड़ाई उचित है। इसमें से कुछ भारतीयोंको कमजोर देखकर श्री रिच सोच-विचारमें पड़ जाते हैं। मतलब यह कि समिति चाहती है कि हमें लड़ाई अन्ततक लड़नी चाहिए। अपनी लड़ाईका इस तरह प्रचार करनेके बाद जो भारतीय अपने स्वार्थ या पैसेके लोभके कारण डरकर कानूनकी शरण चला जाये उसे हम अपना और अपने देशका दुश्मन मानते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-१०-१९०७

१. सुप्रसिद्ध गुजराती कवि नरसिंह मेहताके एक भजनसे। इन्हींकी एक रचना, "वैष्णव जन तो..." बादमें गांधीजीकी प्रिय प्रार्थना हुई। इस भजनमें सच्चे ईश्वर-भक्तके लक्षणोंका वर्णन है।

२४७. लेडीस्मिथके भारतीय व्यापारी

लेडीस्मिथ तालुकेमें बारह भारतीय दूकानें बन्द हो गई हैं। इस खबरको हम बहुत ही बुरा मानते हैं। इन व्यापारियोंने परवानेके लिए फिर अर्जी दी थी। किन्तु उन्हें परवाने नहीं मिले, उलटे सूचना मिली कि यदि दूकानें बन्द न होंगी तो मुकदमे चलाये जायेंगे। इस सूचनासे डरकर व्यापारियोंने दूकानें बन्द कर दी हैं। हमारी तो खास तौरसे सलाह है कि अब भी वे अपनी दूकानें हिम्मतसे खुली रखें और व्यापार करें। बिना परवानेके व्यापार करनेपर यदि सरकार मुकदमा चलाये तो चलाने दिया जाये। मुकदमा चलनेपर यदि जुर्माना हो तो वह न दिया जाये। इसपर माल नीलाम होगा। हमारी राय है कि इस तरह माल नीलाम होने दिया जाये। इसमें हिम्मतकी जरूरत है। लेकिन यदि मर्द हिम्मत न दिखायेंगे तो कौन दिखायेगा? कोई कहेगा कि माल नीलाम होगा तो लोग बर्बाद हो जायेंगे। तो क्या दूकान बन्द होनेसे लोग बर्बाद नहीं होंगे? सरकार एक वक्त माल नीलाम करेगी, क्या हमेशा करेगी? सरकार एक व्यापारी-पर मुकदमा चलायेगी, क्या सबपर चलायेगी? और यदि ऐसा करेगी तो क्या बड़ी सरकार हस्तक्षेप न करेगी? बड़ी सरकार द्वारा हस्तक्षेप किये बिना काम न होगा। यदि उसे हस्तक्षेप करना ही नहीं है, तो उसका भी अनुभव हो जाना चाहिए। यदि भारतीय प्रजा एकताके साथ लड़ाई लड़ेगी तो हमें विश्वास है कि नेटालका व्यापारी कानून रद होकर रहेगा। डर्बनके नेताओंसे हमारी सिफारिश है कि वे लेडीस्मिथके व्यापारियोंसे मिलकर एकताके साथ लड़ाई लड़नेका निश्चय करें। यह आवश्यक है। हमारा दृढ़ मत है कि इसमें हिम्मतकी जितनी जरूरत है, उतनी पैसेकी नहीं। इस तरहकी लड़ाई लड़नेकी हिम्मत रखनेवालोंको इतना याद रखना चाहिए कि (१) लड़ाई पुराने भण्डारोंके सम्बन्धमें लड़ी जा सकती है; (२) दूकानें साफ होनी चाहिए; (३) दूकानदारोंपर कलंक न होना चाहिए। ऐसे दुकानदार हिलमिलकर लड़ेंगे तो सिवा जीतके और कोई परिणाम हो ही नहीं सकता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-१०-१९०७

२४८. भारतके राष्ट्र-पितामह

पूज्य दादाभाई नौरोजी इस समय विलायतमें हैं। अपनी अति वृद्धावस्था तथा बीमारीके कारण उन्होंने अपनी उत्तरावस्था देशमें वितानी चाही। इसलिए उनके सम्मानमें लन्दनमें बहुत बड़ा सम्मेलन किया गया था। दुर्भाग्यसे उसी दिन उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया। वे सम्मेलनमें नहीं जा पाये और उनका स्वदेश लौटना भी रह गया। यह समाचार विलायतसे पिछली डाकसे आया है। इस प्रसंगको अब लगभग एक महीना होने जा रहा है। आजतक कोई तार नहीं आया है। इससे माना जा सकता है कि भारतके पितामह अभी सकुशल हैं और उनका स्वास्थ्य भी अच्छा होगा। आगामी डाकसे विशेष समाचार प्राप्त होने चाहिए। इस बीच हम सबको ईश्वरसे यह प्रार्थना करनी है कि वह पितामहको दीर्घायु करे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–१०–१९०७

२४९. स्वर्गीय अधीक्षक अलेक्ज़ैंडर

सुपरिटेंडेंट अलेक्ज़ैंडरका इंग्लैंडमें देहावसान हो गया, यह तार समाचारपत्रोंमें छपा है। यह समाचार हमारे लिए बड़ा खेदजनक है और हम मानते हैं कि इससे प्रत्येक भारतीयको खेद होगा। सुपरिटेंडेंट अलेक्ज़ैंडरने भारतीयोंके प्रति कृपालु दृष्टि रखी थी। इस अवसरपर स्मरण किया जा सकता है कि भारतीय समाजकी ओरसे उन्हें जो थैली मिली थी, वह इंग्लैंड जानेमें उन्हें बड़ी काम आई थी। श्री अलेक्ज़ैंडर अपने पीछे अपनी पत्नी छोड़ गये हैं। हमारी उनसे सहानुभूति है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–१०–१९०७

२५०. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

हमीदिया अंजुमनकी सभा

हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी बैठक नियमानुसार गत रविवारको हुई थी। सभा-भवन खचाखच भर गया था और लोगोंमें बहुत ही जोश था। इमाम अब्दुल कादिर सभापति थे। श्री रामसुन्दर पण्डितने जोशीला भाषण दिया और रेलवे-सेवामें लगे भारतीयोंके साथकी भेंटका बयान किया। मौलवी साहब अहमद मुख्त्यारने 'कुरान शरीफ' की आयत सुनाकर बताया कि खुदाकी कसम खानेके बाद मुसलमान कानूनके सामने झुक ही नहीं सकते। उन्होंने कहा कि श्री हेलूके नौकर यदि उन्हें प्रोत्साहन दें तो उनका भी बहिष्कार किया जाना चाहिए। समाजके आदमीको समाजके अन्दर गन्दगी फैलाने नहीं दी जा सकती।

श्री गांधीने प्रिटोरियासे आया हुआ हाजी हबीबका पत्र और क्लार्क्सडॉर्पके पत्र पढ़कर सुनाये और कहा कि किसीको बहिष्कारकी बात नहीं करनी चाहिए। लेकिन यदि बात निकले ही तो फिर उसके अनुसार काम करना चाहिए।

श्री अली भाई आकूजीने कहा कि यदि सभी गद्दारोंका बहिष्कार किया जाना तय हो, तो वे स्वयं श्री हेलूके कानमिया लोगोंको खींच लेनेकी तजवीज करेंगे। श्री एम० एस० कुवाड़ियाने कहा कि श्री हाजी हबीबने लिखा है कि जोहानिसबर्गके नेताओंमें से कोई एक चोरीसे पंजीकृत हो गया है। किन्तु मुझे विश्वास है कि ऐसी कोई बात नहीं है। उन्होंने सभी गद्दारोंका बहिष्कार करनेकी बात पसन्द की। उन्हें ५० पौंडका लाभ होनेकी सम्भावना थी। फिर भी जब एन० बूचरने यह सूचना भेजी कि पंजीकृत हो जाओ तो आटा भेजूंगा, तब उन्होंने आटा लेनेसे साफ इनकार करके नुकसान उठाना मंजूर किया।

श्री उमरजी साले ने बहिष्कारका समर्थन किया। श्री इब्राहीम कुवाड़ियाने 'अल इस्लाम' का 'अनुमतिपत्रका पियानो' (परमिट-पियानो) लेख और कविता पढ़कर सुनाई। मौलवी साहबने फिरसे उठकर निवेदन किया कि हमीदिया इस्लामिया अंजुमनको राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्षके पास इस कानून सम्बन्धी लड़ाईके बारेमें लिखना चाहिए। यूरोपकी ओर जानेवाले यूनियन कासलके जहाजोंके लिए पहले, दूसरे और तीसरे दर्जेके टिकट नहीं मिलते, इस सम्बन्धमें समाजकी ओरसे कुछ किया जाना चाहिए। बहिष्कारका रास्ता सरल है।

श्री इब्राहीम कुवाड़ियाने कांग्रेसको पत्र लिखनेके सम्बन्धमें मौलवी साहबके निवेदनका समर्थन किया। बादमें कुछ और सज्जनोंने भाषण दिये, और अन्तमें अध्यक्ष महोदयको आभारके बाद सभा समाप्त हुई।

मद्रासियोंकी सभा

मार्केट स्ट्रीटमें मद्रासियोंकी सभा हुई थी। लगभग सौ व्यक्ति इकट्ठे हुए थे। श्री गांधीने उन्हें सारी स्थिति समझाई और सबने कानूनके विरोधमें लगातार युद्ध चलानेका निश्चय किया।

'ट्रान्सवाल लीडर' में लेख

पिछले शनिवारके 'ट्रान्सवाल लीडर' में संवाद है कि जान पड़ता है, भारतीय समाजका जोर घट रहा है; क्योंकि कुछ भारतीयोंने एक इमामको इस कारण पीटा कि वह एक भारतीयको अनुमतिपत्र कार्यालयमें ले गया था, उस भारतीयके कुत्तेको जहर दे दिया जिसने अनुमतिपत्र लिया, और जर्मिस्टनके हिन्दू पुरोहितने जर्मिस्टनमें उपद्रव खड़ा कर दिया। इसपर टीका करते हुए 'लीडर' कहता है कि यद्यपि मारपीट वगैरहमें भारतीय नेता शामिल नहीं होंगे, फिर भी भारतीय समाजके कोई भी व्यक्ति मार-पीट वगैरहके काम करेंगे तो उनकी ओर किसीकी सहानुभूति नहीं रहेगी और उनका नुकसान होगा।

ईसप मियाँका पत्र

इसके जवाबमें श्री ईसप मियाँने निम्न पत्र[1] लिखा है:

महोदय,

अनाक्रामक प्रतिरोधी डराने-धमकानेका काम करते हैं, इस तथाकथित बातपर आपने जो नम्रतापूर्ण टीका की है उसके लिए मेरा संघ आभारी है।

किन्तु आपके पत्रमें प्रकाशित विवरण द्वेषभरा मालूम होता है। इस बातसे इनकार करनेमें मुझे जरा भी संकोच नहीं है कि लोगोंको डरा-धमकाकर उनमें आतंक पैदा किया गया है। पंजीयनको अच्छा न समझनेपर भी पैसेके लोभमें फँसकर कुछ लोग पंजीकृत होना चाहते होंगे। किन्तु उससे उन्हें सारे समाजसे बहिष्कृत होना पड़ेगा; और इसलिए कानूनके खिलाफ सारे समाजमें जो तिरस्कार फैला हुआ है उसे यदि बहिष्कृत होनेवाले लोग आतंक मानकर डरते हों तो उससे मैं इनकार नहीं करता। यह सही है कि कुछ पंजीकृत होने जा रहे थे और बादमें नहीं हुए। इसका कारण यह है कि धरनेदारोंने मिलकर जब उन्हें कानूनकी गुलामीका अर्थ समझाया और लालचकी बुराई स्पष्ट कर दी तभी उन्होंने पंजीकृत न होनेका निश्चय कर लिया था। भारतीय समाजको पंजीयनके लिए फुसलानेमें सरकार कितना अथक परिश्रम कर रही है, इसे लोग नहीं जानते। धरनेदारोंने कभी भी धमकीका उपयोग नहीं किया। भारतीय समाजके जिम्मेदार लोग उनकी गतिविधिपर निगरानी रखते हैं।

दुर्भाग्यसे यह सच है कि एक इमामपर हमला हुआ, किन्तु भारतीयोंकी टुकड़ीने हमला नहीं किया था। हकीकत इस प्रकार है:

उक्त इमाम भारतीय नहीं, बल्कि मलायी है। हम लोगोंमें एक दरवेश साहब हैं। धर्मके मामलेमें वे बहुत ही कट्टर हैं। वे अपना सब समय मसजिदमें बिताते हैं। और रोटीके लिए, जब इच्छा होती है, खानोंपर पत्थर तोड़नेका काम करते हैं। वे किसीकी बात नहीं सुनते और सारे दक्षिण आफ्रिकामें शायद सबसे स्वतन्त्र मिजाजके हैं। जिन्होंने उन्हें और उनकी सादगीको देखा है वे उनका आदर करते हैं। उन्हें जब मालूम हुआ कि सदर मलायी इमाम भारतीय मुसलमानोंको अपनी पवित्र शपथ तोड़नेको बहका रहा है, उनका खून खौल उठा। वे जानबूझकर मलायी मसजिदमें गये और इमामसे

१. मूल अंग्रेजी पत्रके अनुवादके लिए देखिए "पत्र: 'ट्रान्सवाल लीडर'को", पृष्ठ ३०२-०४।

मिलकर उन्होंने उससे वादविवाद किया। उन्होंने इमामको विश्वास दिलानेके लिए कुरानकी एक आयत सुनाई और कहा : "आप तो इमाम हैं, इसके अलावा आप भारतीय नहीं, मलायी हैं; आपको भारतीय मामलेमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। और इमाम होकर कुरानकी आयतोंको तोड़नेके लिए लोगोंको नहीं बहकाना चाहिए।" समझाते-समझाते दोनों गरम हो गये, बोलचाल शुरू हुई और उससे मारपीट हो गई। इस प्रकार यह घटना घटी। इसमें भारतीयोंपर खतरनाक होनेका आरोप लगाना बहुत ही अनुचित होगा। हममें से बहुतेरोंने दरवेश साहबको समझाया तथा शान्त होनेके लिए उनसे मिन्नतें कीं। लेकिन उनका कहना है कि खुदा और मेरे बीच किसीको नहीं आना चाहिए। कहनेकी जरूरत नहीं कि उनके लिए घर और जेलखाना दोनों एक-जैसे हैं। उन्हें समझाया गया तो उन्होंने कहा है कि मैं अदालतमें जाकर अपनी बात समझानेको तैयार हूँ।

कुत्तेको जहर देनेका आरोप लगाना निर्दयतापूर्ण है। मैंने इस बातकी बहुत ही बारीकीसे जाँच की है। लेकिन कुत्तेको जहर देने और उसके मालिकके पंजीकृत होनेमें कोई सम्बन्ध नहीं है। लोग मानते हैं कि कुत्तेके भौंकनेके कारण पकड़े जानेसे बचनेके लिए किसी चोरने वैसा किया होगा। किसी भारतीय गद्दारका नुकसान हो और उसका दोष आप अनाक्रामक प्रतिरोधीके सिर थोपें तब तो बड़ी भयंकर बात होगी। नहीं महोदय, बहुसंख्यक भारतीयोंकी इच्छाका पालन करनेके लिए अल्पसंख्यकोंको लाचार करनेके अनुचित उपाय काममें लानेका हमारा जरा भी इरादा नहीं है। जैसे हम स्वतन्त्र रहनेके लिए कानूनके वश नहीं होते, उसी तरह दूसरोंके अपनी इच्छाके अनुसार चलनेकी स्वतन्त्रता भोगनेमें हम आड़े आना नहीं चाहते।

जर्मिस्टनके हिन्दू धर्मगुरुके सम्बन्धमें आपके संवाददाताने जैसा लिखा है वैसी कोई घटना नहीं घटी। हाँ, यह बात बिलकुल ठीक है कि उक्त धर्मगुरु कानूनके मामलेमें उत्साहपूर्वक भाग लेते हैं। और ऐसा तो इस उपनिवेशके सभी हिन्दू व मुसलमान धर्मगुरु करते हैं, क्योंकि यह सवाल समस्त भारतीय समाजपर लागू होता है। यदि भारतीयोंको अपना धर्म प्यारा हो तो उनसे लड़ाईमें उत्साह दिखाये बिना रहा ही नहीं जा सकता। जहाँ यह विकल्प खड़ा हो कि इन्सान रहें या हैवान बनें, वहाँ अपनी इन्सानियतको कायम रखनेकी सलाह क्या धर्मगुरु नहीं दे सकता?

इस किस्सेपर टीका

यह किस्सा बहुत ही विचार करने योग्य है। इमाम कमाली तथा श्री हेलूने पंजीयन अधि-कारीसे बहुत बढ़ा-चढ़ाकर झूठी बातें कही हैं, इसमें कोई शक नहीं। ईसप मियाँने सिद्ध कर दिया है कि बहुत-से भारतीयोंके मारपीट करनेकी बात बिलकुल झूठी है। फसादकी जिम्मेदारी भारतीय कौमपर डालना बिलकुल गलत है। श्री हेलूके कुत्तेको किसी भी भारतीयने जहर दिया होगा यह बिलकुल असम्भव है। लेकिन इन उदाहरणोंसे इतनी बात बिलकुल समझ ली जानी चाहिए कि हमारी लड़ाईमें मारपीटके लिए कोई स्थान नहीं है। मारपीट करके हमें विजय प्राप्त करना नहीं है। और जो सत्यपर भरोसा रखकर लड़ते हैं उन्हें मारपीट आदिकी आवश्यकता होती ही नहीं। मैं तो किसी भी दिन नहीं मानूँगा कि सत्यकी हार हो सकती है। भारतीयोंका मामला बिलकुल सच्चा है, इसलिए हमें निर्भय होकर लड़ना

चाहिए। जो खूनी कानूनके सामने घुटने टेकेंगे उनके नये पंजीयनपत्र उनके लिए ही कच्चे पारेकी तरह फूट निकलेंगे और फिर वे हाथ मलते रह जायेंगे।

धरनेदारोंके बारेमें पुलिस आयुक्तका पत्र

पाठकोंको याद होगा कि धरनेदार बिलकुल बल-प्रयोग नहीं करते, ऐसा एक पत्र लिखा गया था। पुलिस आयुक्तने उसका जवाब निम्नानुसार दिया है:[1]

> इस विषयमें कि आपके संघने वॉन ब्रैंडिस स्क्वेयरमें अपने धरनेदार तैनात कर रखे हैं, आपका पत्र मिला। आप विश्वास दिलाते हैं कि पंजीयन कराने जाने-वालोंको कोई व्यक्ति परेशान नहीं करेगा। इससे मुझे खुशी हुई है। मैं आशा करता हूँ कि उसके अनुसार आपकी कोशिश जारी रहेगी।

इस पत्रसे इतना स्पष्ट हो जाता है कि धरनेदार नियुक्त करनेमें दोष नहीं है। यदि वे हाथ चलायें या धमकी दें तो उसमें दोष है।

जनवरीमें परवाने बन्द?

यह सूचना 'गजट' में आ गई है कि जो पंजीयन नहीं करवायेंगे उन्हें जनवरीमें परवाने नहीं दिये जायेंगे। फिर भी हर शहरमें मुख्य-मुख्य भारतीयोंको लिखित सूचना दी जा रही है कि यदि वे ३१ अक्तूबरके पहले नये पंजीयनके लिए अर्जी नहीं दे देंगे, तो फिर नहीं दे सकेंगे और जनवरीमें परवाने भी नहीं मिलेंगे। इस तरहकी सूचना देकर रसीद भी ली जाती है। इसका क्या मतलब है? स्पष्ट है कि सरकार स्वयं डर गई है कि यदि भारतीय समाज कानूनके सामने नहीं झुकता तो फिर उसका कुछ भी बिगाड़ा नहीं जा सकता। इसलिए अब गड़बड़ी शुरू की गई है और सरकार धमकी देकर या फुसलाकर गुलामीका पट्टा दिलवाना चाहती है। इस तरहके चिह्न दिखाई दे रहे हैं, फिर भी ऐसे भारतीय मौजूद हैं जो अब भी नहीं चेतते और पैसेके मोहमें फँसकर पतंगोंके समान खूनी कानूनरूपी चिरागपर कूद पड़ते हैं, और जल मरते हैं। मैं आशा करता हूँ कि दूसरे भारतीय इन चिह्नोंसे सचेत होकर अन्ततक मजबूत रहेंगे।

जर्मन पूर्व आफ्रिका लाइन[2]

मौलवी साहबने हमीदिया सभामें कहा था कि इस कम्पनीके यूरोपकी ओर जानेवाले जहाजोंके लिए भारतीयोंको छत (डेक) के सिवा दूसरे स्थानोंके टिकट नहीं मिलते। यह मामूली बात नहीं है। इस विषयमें कुछ समयसे विवाद चला आ रहा है। मौलवी साहबके कथनानुसार इसमें मुख्य तकलीफ हाजियोंको हो सकती है। उपाय बहुत ही सीधा है। एक तो यह कि लाइनमें भिन्न-भिन्न जगहोंपर जो भारतीय एजेंट हैं वे ठीक प्रबन्ध करें; दूसरा उपाय सीधे बहिष्कारका है। इस लाइनको भारतीय यात्रियोंसे बहुत ही आमदनी होती है। यदि भारतीय यात्रियोंके साथ जानवरके समान व्यवहार होता रहा तो वह आमदनी बन्द हो सकती है। उसके लिए भारतीयोंमें भारी पैमानेपर प्रयास किया जाना चाहिए। ब्रिटिश इंडियन स्टीम नेविगेशन कम्पनी तथा दूसरी कम्पनियोंके साथ व्यवस्था की जा सकती है, तथा पहले मुगल लाइनके जो जहाज आते थे वे फिरसे शुरू किये जा सकते हैं। ऐसे कई उपाय हैं।

१. मूल अंग्रेजी पत्र २६-१०-१९०७ के **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित हुआ था।
२. देखिए "जर्मन पूर्व-आफ्रिका लाइन", ४२४-२५ भी।

'स्टार' को पत्र

भारतीय धरनेदारोंपर जो धमकीका इल्जाम लगाया गया है वह तो बिलकुल झूठ है। लेकिन यह सच है कि कुछ गोरे लोग अधिकारियोंकी सिखावनसे भारतीयोंको परेशान करते हैं और गुलामीका पट्टा लेनेके लिए धमकियाँ देते हैं। इसपर श्री गांधीने 'स्टार' को निम्न पत्र[1] लिखा है :

महोदय, जो पंजीकृत होना चाहते हैं उन्हें डरानेका आरोप सर्वथा निर्दोष धरनेदारोंपर बिना किसी सबूतके लगाया जाता है। इस आरोपके खोखलेपनकी ओर तथा पंजीकृत न होनेवालोंको जो सचमुच डराया-धमकाया जा रहा है उसकी ओर मैं लोगोंका ध्यान खींचना चाहता हूँ।

कलकी बात है। उसमें पीटर्सबर्गसे आये हुए तीन भारतीयोंको धरनेदारोंने स्वयं पंजीयन कार्यालयमें ले जानेको कहा था। किन्तु वह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया गया। फिर भी धरनेदारोंको बदनाम करनेके लिए यह ढोंग रचा जा रहा है कि डर लगता है। इस आधारपर पुलिसका संरक्षण प्राप्त करनेके प्रयत्न भी किये जा रहे हैं। यदि इस आरोपमें कुछ भी सचाई है तो फिर अभीतक किसीपर मुकदमा क्यों नहीं चलाया गया? यदि वह सच ही है तो उसे सिद्ध करना सबसे आसान काम है। क्योंकि यदि डराने-धमकानेका काम होता होगा तो वह तो ट्रैफिक स्क्वेयरमें सरेआम सैकड़ों राहगीरोंके सामने होता होगा।

अब मैं इस विषयकी बात करूँगा कि जो लोग पंजीयन नहीं करवाना चाहते उन्हें धमकी दी जाती है। बहुतेरे भारतीयोंको लगता है कि जिनके पास कैप्टन फाउल अथवा श्री चैमनेके द्वारा दिये गये अनुमतिपत्र हैं उन्हें, नये पंजीयनपत्र न लेनेके कारण, आड़े-टेढ़े तरीकोंसे अधिकारीवर्गका दबाव पड़नेके कारण नौकरीसे अलग कर दिया जाता है। जर्मिस्टनमें भारतीयोंको नये कानूनके मुताबिक पंजीकृत न होनेके कारण नौकरीसे अलग कर दिया गया है। यह बात सच है — इस आशयका एक पत्र जर्मिस्टनके मुख्य धरनेदारके पाससे मुझे मिला है। दबावकी बात सच है या झूठ, यह उपर्युक्त पत्रसे मालूम हो सकता है। इससे हमें बहुत आश्चर्य नहीं होता; क्योंकि स्वयं जनरल स्मट्सने इस प्रकारकी धमकियाँ देनेमें पहल की है। उन्होंने हर प्रकारकी सजाकी धमकियाँ दी हैं। वे निर्वासित करने और परवाना छीनने — दोनों प्रकारकी सजाएँ एक साथ देनेको कह चुके हैं। ये दोनों सजाएँ एक ही व्यक्तिको एक साथ कैसे दी जा सकती हैं, यह मेरी समझमें तो नहीं आता। प्रवासी कानूनके बिना निर्वासित करना सम्भव नहीं है; और उस कानूनको मंजूरी तो अभी मिलनी ही बाकी है। भारतीय शुद्ध लड़ाईसे नहीं डरते, और जैसा मैं कह रहा हूँ, यदि सरकार अनुचित लड़ाई लड़ना चाहेगी तो उसमें जूझनेको भी वे तैयार हैं। लेकिन सरकारका ऐसा करना तो अंग्रेजोंके लिए अशोभनीय है। गुलामीके प्रमाणपत्रोंके लिए भारतीयोंपर जोर-जबर्दस्ती करनेमें गोरे मालिकोंकी मदद क्यों ली जानी चाहिए? कुछ मालिकोंने ऐसे दबावका विरोध किया है और अपने भारतीय नौकरोंको बर्खास्त करनेसे साफ इनकार कर दिया है। उनके लिए वे मेरे आदरके पात्र हैं — मो० क०

१. मूल अंग्रेजी पत्रके अनुवादके लिए देखिए "पत्र : 'स्टार'को" पृष्ठ २९२-९३।

इसलिए कि वे दगाबाजीमें शामिल नहीं होना चाहते, और भारतीय नौकर इसलिए कि वे इतने लायक और नमकहलाल हैं कि उनके मालिक उन्हें छोड़ नहीं सकते।

मुझे अभी ही मालूम हुआ है कि जिन चार भारतीयोंकी ओरसे यह कहा गया था कि उन्हें धमकी दी गई है और जिनके पास अनुमतिपत्र बिलकुल थे ही नहीं, वे आज छूट गये हैं; और उन्हें भरी अदालतमें विश्वास दिलाया गया है कि उन्हें पंजीयन प्रमाणपत्र मिलेंगे। इसमें कोई शक नहीं कि गुलामोंको नये पंजीयन प्रमाणपत्र रूपी पट्टे मिलने ही चाहिए। मेरी रायमें जिन लोगोंके पास पुराने डच-पास हों (जैसा कि कहा गया है, चार व्यक्तियोंके पास हैं) उन्हें शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अनुसार दिये हुए अनुमतिपत्रवालोंके समान मानना चाहिए। लेकिन यह सब जानते हैं कि उन लोगोंको तो श्री जॉर्डनने उपनिवेश छोड़कर जानेके लिए नोटिस दिया था। जिस दिन उपर्युक्त चार व्यक्तियोंने नये पंजीयनपत्र लेनेके लिए अर्जी देनेको कहा उसी दिन उन जैसे पासवाले एक भारतीयको नोटिस मिला था। इसलिए जान पड़ता है कि जनरल स्मट्स इस खोजमें लगे हैं कि कौन कायदेके मुताबिक रह रहा है और कौन बेकायदे।

चिंदेसे सहायता

चिंदेके भारतीयोंने सहानुभूतिके तार ही नहीं, साथमें पैसे भी भेजे हैं। चिंदेसे श्री इब्राहीम हाजी सुलेमान संघके नाम निम्नानुसार लिखते हैं:[1]

> वहाँकी मुसीबतोंमें हमारी पूरी सहानुभूति व्यक्त करनेवाला २२ अगस्तका हमारा तार आपको मिला होगा। हमें आशा है कि हमारे भाई अन्ततक उत्साह कायम रखेंगे।
>
> २१ तारीखको हमारी सभा हुई थी। उसका विवरण न देकर मैं इतना ही सूचित करता हूँ कि उस सभामें बहुत-से भारतीय उपस्थित हुए थे और उत्साह बहुत था।
>
> हमने उसी समय चन्दा भी वसूल किया और कुल मिलाकर ३३ पौंड १५ शिलिंग ९ पेंस जमा हुए। यह रकम यद्यपि हम बहुत कम मानते हैं, फिर भी आपको भेज रहे हैं। स्वीकार करें।
>
> चन्दा देनेवालोंके नाम इसके साथ भेज रहा हूँ। बहुत-से लोगोंकी सलाह है कि इस सूचीको 'इंडियन ओपिनियन' में प्रकाशित किया जाये। यह सूचना इसलिए नहीं दी गई कि वे अपना नाम अखबारमें देखना चाहते हैं, बल्कि इस आशासे दी गई है कि इसे देखकर दूसरे लोग भी मदद करेंगे।

यह माँग ऐसी नहीं कि जिसे साफ नामंजूर कर दिया जाये। इसलिए वह सूची खुशी-खुशी प्रकाशनके लिए भेज रहा हूँ। चन्दा देनेवालोंके नाम इस प्रकार हैं:[2]

चिंदेके संघको आभारका पत्र भेज दिया गया है।

१. मूल अंग्रेजी पत्र २६-१०-१९०७ के **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित किया गया था।
२. इसके बाद मूलमें ४६ नामोंकी सूची दी गई थी, जो यहाँ नहीं दी जा रही है।

एक कुत्तेकी बहादुरी

यहाँके धरनेदारोंने एक प्रसिद्ध चित्रकारका बनाया चित्र खरीदा है। वह बहुत ही प्रभावोत्पादक और हर भारतीयको जोश दिलानेवाला है। उसमें एक कुत्ते और दो बालिकाओंका दृश्य है। बालिकाओंने जूते उतार दिये हैं और उनमेंसे एक कुत्तेको रस्सी बाँध कर खींचती है और दूसरी उसे धक्का देती है। लेकिन वह बहादुर अपनी जगहसे टससे-मस नहीं होता। इसका नाम है अनाक्रामक प्रतिरोध [पैसिव रेजिस्टेन्स]। चित्रकारने भी इस चित्रको अनाक्रामक प्रतिरोधी कहा है। वह कुत्ता इतना बलवान चित्रित किया गया है कि यदि काटना चाहे तो काट सकता है। लड़कियाँ हठीली तो हैं किन्तु बच्चियाँ हैं। लेकिन कुत्ता सिर्फ अपनी जगह नहीं छोड़ना चाहता। वह कहता है "मैं तुम्हारा गुलाम कदापि नहीं बन सकता। तुम मुझे रस्सीसे खींचो या धक्के मारो, पर मैं नहीं हटूँगा। स्वेच्छासे तुम्हारे साथ चलूँ तो बात अलग है। तुम्हारी जबर्दस्ती नहीं चलेगी। न मैं ही तुमपर कोई बल-प्रयोग करूँगा।" भारतीयोंकी लड़ाई इसी प्रकारकी है। हमें किसीपर बल-प्रयोग नहीं करना है। लेकिन हमने जो प्रतिज्ञा की है उसे भी नहीं छोड़ना है।

गद्दारोंकी सूची

आजतकके गद्दारोंकी — उन्हें काले पैरवाले, कलमुँहे, गियानो बजानेवाले, कुछ भी कहिए — जो सूची मेरे हाथमें आई है, वह यहाँ दे रहा हूँ:[1]

इस सूचीको प्रकाशित करते हुए मुझे शर्म आती है। लेकिन कर्तव्य समझकर, शर्मको दबाकर, प्रकाशित कर रहा हूँ। इनमें से श्री हासिम मुहम्मद पीटर्सबर्गमें मुख्य धरनेदार थे। उन्होंने कलंक लगवाया, यह कम खेदकी बात नहीं है। इनमें पहल करनेवाले श्री अबू ऐसनजी माने जाते हैं। लेकिन वे श्री खमीसाकी शतरंजकी बाजीमें एक प्यादे थे। उन्हें क्या दोष दिया जाये? ये महाशय इतने शरमाते थे कि इन्होंने पहले नम्बरका पंजीयन लेनेमें आनाकानी की। इसलिए पंजीयन अधिकारीने इन्हें १२७ वाँ नम्बर दिया। इतनी बेहूदगी होते हुए भी भारतीय डरता है, यही हमारी अधमताका चिह्न है। इस सूचीसे मालूम होता है कि पंजीयन करवानेवालोंमें मुख्यतः मेमन लोग हैं। कुछ कोंकणी हैं और शेषमें एक गुजराती हिन्दू और दो-तीन मद्रासी हैं। इसमें श्री हेलू और दूसरे चार-पाँच कोंकणी आदिके, जो जोहानिसबर्गमें अर्जी दे चुके हैं, नाम नहीं हैं। अब ज्यादा दिन नहीं हैं। बाजे-गाजेके साथ बगल गंडेमें पहुँच जायेगी। उपर्युक्त सूची बड़ी मुश्किलसे मिली है। प्रिटोरियाके व्यापार संघको यह मेहरबानीके तौरपर दी गई थी। लेकिन जहाँ बात एक कानसे दूसरे कानपर जाती है कि हवामें उड़ने लगती है, वहाँ यदि संघको लिखित सूची मिले और वहाँसे दूसरेके पास चली जाये तो इसमें आश्चर्य कौन-सा? और यदि दूसरेको मिली है तो फिर बेचारे 'इंडियन ओपिनियन' का क्या दोष? इसपर यदि कोई यह माने कि ये नाम मुझे व्यापार-संघसे मिले हैं तो यह उसकी भूल होगी। कहाँसे मिले, इसे जाननेकी इच्छावालोंको फिलहाल तो भूखा मरना पड़ेगा।

क्लार्क्सडॉर्पका अखबार

यह अखबार कानूनके बारेमें जो आलोचना करता है उसे देखकर हँसी आती है। उसने [illegible] कि श्री गांधी जैसे [illegible] आन्दोलन [illegible] है? यह तो [illegible] दूसरी

1. [illegible] ७४ नामोंकी सूची दी गई थी, जो यहाँ नहीं दी जा रही है।

जगह जा बैठेगा। लेकिन जिनके धन-दौलत है उन्हें तो गुलाम बन ही जाना चाहिए। क्योंकि सरकार तो कह ही चुकी है कि भारतीयोंको निर्वासित कर दिया जायेगा, और उन्हें परवाने भी नहीं दिये जायेंगे। क्लार्क्सडॉर्पके अखबारके सम्पादकने यह सीख आप्त-जनकी तरह दी है। सम्पादक महोदय यह भूल जाते हैं कि लोग सम्पत्ति गुलाम बननेके लिए नहीं, बल्कि आजाद रहनेके लिए रखते हैं। कटार म्यानमें रखी हुई तो शोभा बढ़ाती है, किन्तु यदि छातीमें खोंस ली जाये तो मौत हो जाती है, उसी प्रकार सम्पत्ति इज्जतदार आदमीको ही शोभा देती है। गुलामके लिए तो वह छातीमें खोंसी हुई कटार है। जिन्होंने सम्पत्ति कमाई है उन्हें उसे बर्बाद करनेका हक है। और भारतीय समाज उन्हीं हकोंको बरत रहा है। यह सयानेपनकी शिक्षा देनेवाले गोरे अपने देश और सम्मानके लिए कई बार स्वयं अपनी सम्पत्ति गँवा चुके हैं। और उन्होंने उतनी ही आसानीसे फिर कमा भी ली है। अब यदि अपने सम्मान और धर्मके लिए भारतीय समाज अपनी सम्पत्तिको लात मारता है तो उसमें आश्चर्य कौन-सा?

बहुत ही महत्वपूर्ण मुकदमा

मैं लिख चुका हूँ कि श्री दुर्लभ वीराका परवाना सम्बन्धी मुकदमा रूडीपूर्टमें चला था। उसमें मजिस्ट्रेटने यद्यपि श्री दुर्लभ वीराके प्रति सहानुभूति व्यक्त की, फिर भी फैसला उसके विरुद्ध दिया। मुकदमा दो व्यक्तियोंपर था। एक उनपर और दूसरे उनके नौकरपर। श्री दुर्लभ वीराके पास परवाना नहीं था। नौकरने माल बेचा था, इसलिए मुकदमा उसपर भी था। मजिस्ट्रेटने फैसला दिया कि यद्यपि श्री दुर्लभ वीराको परवाना पानेका हक है, फिर भी चूँकि आदाताने परवाना नहीं दिया, इसलिए उन्हें दूकान खोलनेका हक नहीं है। नौकरने चूँकि माल बेचा था, इसलिए वह व्यापार हुआ; और इसलिए उसे भी गुनहगार ठहराया गया। नौकरको सजा नहीं दी गई। श्री दुर्लभ वीराको एक शिलिंग जुर्माना किया गया।

सर्वोच्च न्यायालयमें जो अपील की गई थी उसमें ये कारण बताये गये थे:

(१) नौकरने माल बेचा, यह गुनाह नहीं है। कानून सिर्फ मालिकको ही गुनहगार ठहरा सकता है।

(२) श्री दुर्लभ वीराने परवानेके लिए अर्जी दी थी, किन्तु उनका हक होते हुए भी चूँकि आदाताने परवाना नहीं दिया इसलिए उसमें श्री दुर्लभ वीराका दोष नहीं माना जा सकता। अतः, उनको दण्ड न दिया जाना चाहिए।

अदालतने अपीलका निर्णय यह किया कि बिना परवानेके व्यापार करनेवाले मालिकको कानून सजा देता है। वह नौकरको सजा नहीं दे सकता। इसलिए नौकर निर्दोष है। उसका कुछ नहीं हो सकता।

श्री दुर्लभ वीराको [न्यायालयके अनुसार] परवाना लिये बिना दूकान खुली रखनेका हक नहीं था। उन्हें आदाताको फिरसे अर्जी देनी चाहिए। उसके बाद यदि न्यायालयको मालूम होगा कि आदाता जान-बूझकर परवाना नहीं दे रहा है, तो न्यायालय उसे खर्च दिलवायेगा और अर्जदारकी नुकसानीकी पूर्ति भी करवायेगा।

यह फैसला बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। इसमें से कई रास्ते निकल सकते हैं। यह ट्रान्सवालकी लड़ाईमें लोगोंको बहुत हिम्मत देनेवाला है। बहुतेरे भारतीयोंको डर है कि जनवरीमें परवाना नहीं मिला तो दूकानें बन्द कर देनी चाहिए। किन्तु अब वह डर नहीं

रहा। सजा सिर्फ दूकानके मालिकको ही हो सकती है। कानूनमें दूकान वन्द करनेका अधिकार नहीं है। और दूकानमें नौकर काम कर सकते हैं। इसलिए दूकान वन्द करनेका प्रश्न नहीं रहता। सिर्फ दूकानके मालिकको जेलकी असुविधा (मेरे हिसाबसे सुविधा) भोगनी होगी। मैं इस फैसलेको वहुत कीमती मानता हूँ।

आदातासे हर्जाना और खर्च मिल सकता है, यह वात भी वहुत प्रोत्साहन देनेवाली है।

इस मुकदमेका फैसला मालूम हो जानेपर भी यदि कोई भारतीय व्यापारी डिगता है तो मानना होगा कि हम इस खूनी कानूनके योग्य ही हैं।

शाहजी साहबको दण्ड

इमाम कमालीने शाहजी साहवके खिलाफ मार-पीट करनेकी फरियाद की थी। उस मुकदमेकी सुनवाई वुधवारको अदालतमें हुई थी। इमाम कमालीने उसमें वयान देते हुए कहा कि उन्होंने हलफनामा दिया, इसका उन्हें पछतावा है। कानूनके सम्वन्धमें दोनोंके वीच धर्म-विवाद हुआ था और शाहजी साहवने डंडा मारा था। परन्तु अव वे नहीं चाहते कि इसपर कोई सजा दी जाये। शाहजी साहवने भी उपर्युक्त मार-पीटकी वातको स्वीकार किया। अदालत ठसाठस भरी हुई थी। मजिस्ट्रेटने ५ पौंड जुर्माने या सात दिन जेलकी सजा दी। शाहजी साहवने जुर्माना देनेसे साफ इनकार कर दिया, लेकिन श्री गुलाम कड़ोदियाने जवर्दस्ती वह दे दिया।

ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिकी बैठक

संघ और भारतीय-विरोधी कानून निधिकी वैठक वुधवारको वारह वजे हुई थी। श्री ईसप मियाँ अध्यक्ष थे। श्री गांधीने कहा कि अव समाजको श्री दुर्लभ वीराका मुकदमा हाथमें लेना चाहिए। दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिको कायम रखनेकी व्यवस्था की जानी चाहिए और चूँकि समाजकी स्थिति डाँवाडोल है इसलिए वेहतर होगा कि भारतीय-विरोधी कानून निधिकी रकम उनके हाथमें रखनेका निर्णय किया जाये। श्री उमरजी, श्री नायडू, श्री आमद मूसाजी और श्री फैन्सी उस सम्वन्धमें वोले और उसके वाद सर्वानुमतिसे निम्न प्रस्ताव पास किये गये :

(१) दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिको एक वर्ष चलाया जाये और नेटालसे पहले छः महीनेके लिए सहायता माँगी जाये।

(२) श्री दुर्लभ वीराका मुकदमा संघ आगे वढ़ाये तथा उसपर २० पौंड तक खर्च किया जाये।

(३) भारतीय-विरोधी कानून निधिका हिसाव उठाकर वह रकम श्री गांधीके सुपुर्द की जाये।

और गद्दार

. . . [१]ने पंजीयनके लिए प्रार्थनापत्र दिये हैं। मुझे यह सूचना देते हुए खेद है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–१०–१९०७

१. मूलमें यहाँ चार नाम दिये गये हैं।

२५१. पत्र : सर विलियम वेडरबर्नको

[जोहानिसबर्ग
अक्तूबर ३१, १९०७ के पूर्व]

सेवामें
सर विलियम वेडरबर्न
अध्यक्ष
ब्रिटिश समिति, भारतीय राष्ट्रीय महासभा
लन्दन

[महोदय,]

अनिवार्य पंजीयन अधिनियमके सम्बन्धमें जो नाजुक स्थिति यहाँ उत्पन्न हो गई है उसकी ओर मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। पंजीयनके लिए अन्तिम तिथि आगामी ३० नवम्बर है। उसके पश्चात्, विशेष मामलोंको छोड़कर, कानूनके अन्तर्गत दिये जानेवाले पंजीयन-प्रमाणपत्रोंके लिए भेजी गई अर्जियोंको सरकार स्वीकार नहीं करेगी। मेमन समाजको छोड़कर, भारतीय सामान्यतः पंजीयन कार्यालयमें नहीं गये हैं, और १३,००० अनुमतिपत्र-स्वामियोंमें से केवल २५० ने ही कानूनकी अधीनता स्वीकार करनेके सम्बन्धमें प्रार्थनापत्र भेजे हैं। इससे भावनाकी तीव्रता प्रकट होती है। राहत पानेका हमारे पास यह तरीका है कि कानूनको भंग करनेके सब परिणामोंको सहन किया जाये। सम्भव है, कुछको, जो बहुत बड़े व्यापारी हैं, अपना सर्वस्व बलिदान करना पड़े। उनमें से बहुतेरे तो इस दुःखका अभी ही अनुभव कर रहे हैं, क्योंकि यूरोपीय थोक विक्रेताओंने भारतीय व्यापारियोंको, यदि वे पंजीयन प्रमाणपत्र पेश न कर सकें, उधार माल देना बन्द कर दिया है। गरीब भारतीय अपनी नौकरियोंसे हाथ धो बैठे हैं, और तब भी कानूनके प्रति वही विरोध और वही दृढ़ता बनी हुई है।

मेरे संघकी रायमें यह प्रश्न साम्राज्यीय महत्त्वकी दृष्टिसे प्रथम श्रेणीका तथा भारतके लिए राष्ट्रीय महत्त्वका है। अतएव मेरा संघ आशा करता है कि यह मामला कांग्रेसके आगामी अधिवेशनमें उत्साहके साथ उठाया जायेगा और भारतकी सर्वसाधारण जनता भी इस प्रश्नपर यथोचित ध्यान देगी। और इस उद्देश्यसे मेरा संघ सम्मानपूर्वक आपकी सक्रिय सहानुभूति और प्रोत्साहनके लिए अनुरोध करता है। मेरे संघको लगता है कि प्रत्येक भारतीय, आपके कांग्रेसी पदसे अलग, आपको भारतका एक सबसे बड़ा शुभचिन्तक मानता है। मैं आशा करता हूँ कि हमारे इस वर्तमान संघर्षमें भी आप भारतमें भारतीय विचारका वैसा मार्गदर्शन करेंगे जो वांछनीय प्रतीत हो।

[आपका
ईसप इस्माइल मियाँ
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–११–१९०७

२५२. पत्र : उपनिवेश-सचिवको[1]

जोहानिसबर्ग
नवम्बर १, १९०७

सेवामें
उपनिवेश-सचिव
प्रिटोरिया

महोदय,

मैं आपकी सेवामें डाक-पार्सलसे एशियाई पंजीयन कानूनके विषयमें ट्रान्सवाल-भरके ब्रिटिश भारतीयोंका प्रार्थनापत्र भेज रहा हूँ। साथमें अनुयाचकोंको दी गई हिदायतोंकी[2] एक प्रति भी है।

कुछ भारतीयोंने उक्त कानूनके अन्तर्गत बनाये गये विनियमोंमें संशोधनकी माँग करते हुए सरकारको एक पत्र लिखा था। जब उपनिवेशमें फार्म बाँटे गये उस समय तक उस पत्रका कोई उत्तर नहीं आया था और न ही उसे वापस लिया गया था। लेकिन तबसे यद्यपि सर्वश्री स्टैगमान, एसेलेन व रूजके मुवक्किलोंको कोई संतोषजनक उत्तर नहीं मिला है और फलतः उन्होंने अपना पत्र वापस भी ले लिया है, तथापि मेरे संघकी समिति चाहती है कि मैं उक्त प्रार्थनापत्र प्रेषित करूँ, क्योंकि उसमें उसपर हस्ताक्षर करनेवाले लोगोंकी भावनाएँ सन्निहित हैं। मेरे संघकी नम्र सम्मतिमें, प्रार्थनापत्र उसके द्वारा अपनाये गये रुखका औचित्य पूरा-पूरा सिद्ध कर देता है, और उससे यह प्रकट होता है कि वह उपनिवेशमें रहनेवाले भारतीयोंके भारी बहुमतका प्रतिनिधित्व करता है। प्रार्थनापत्र कुछ दिनोंसे तैयार पड़ा था, लेकिन संघने इसे पेश करना रोक रखा, क्योंकि वह पंजीयन-कार्यालयके जोहानिसबर्गमें खुले रहनेकी अवधिमें समाजकी गतिविधियोंकी परख करना चाहता था।

प्रार्थनापत्रपर ४,५२२ हस्ताक्षर हैं, और वे हस्ताक्षरकर्ता ट्रान्सवालके २९ नगरों, गाँवों और जिलोंमें से हैं। केन्द्रोंके अनुसार विश्लेषण इस प्रकार है: जोहानिसबर्ग, २,०८५; न्यूक्लेयर, १०८; रूडीपूर्ट, १३६; क्रूगर्सडॉर्प, १७९; जर्मिस्टन, ३००; बॉक्सबर्ग, १२९; बिनोनी, ९१; मॉडरफॉंटीन, ५१; प्रिटोरिया, ५७७; पीटर्सबर्ग और स्पेलोनकेन, ९०; वेरीनिगिंग, ७३; हाइडेलबर्ग, ६६; बैलफर, १४; स्टैंडर्टन, १२३; फोक्सरस्ट, ३६; वाक्स्ट्रूम, १२; पीट रिटीफ, ३; बेथाल, १८; मिडलबर्ग, २९; बेलफास्ट, मेकाडोडॉर्प और वाटरवाल, २१; बार्बर्टन, ६८; पॉचेफस्ट्रूम, ११४; वेन्टर्सडॉर्प, १२; क्लार्क्सडॉर्प, ४१; क्रिश्चियाना, २४; लिखतनबर्ग, ७; जीरस्ट, ५९; रस्टनबर्ग, ५४; अर्मीलो, २।

ट्रान्सवालमें भारतके हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और पारसी हैं; तथा मुसलमान तीन हिस्सोंमें बँटे हुए हैं: सूरती, कोंकणी तथा मेमन। उसी प्रकार हिन्दू भी गुजराती, मद्रासी

१. नवम्बर २, १९०७ के इंडियन ओपिनियनमें इस पत्रका सारांश प्रकाशित किया गया था।
२. देखिए "भीमकाय प्रार्थनापत्र", पृष्ठ २३७-३८।

और उत्तरके, जिन्हें साधारणतया कलकतिया कहते हैं, रूपमें विभक्त हैं। सिखों और पठानोंका अलग वर्गीकरण न करना पड़े, इस विचारसे यदि हिन्दू हैं तो उन्हें उत्तरी लोगोंमें और मुसलमान हैं तो सूरती लोगोंमें शामिल कर लिया गया है। ईसाइयोंका अलगसे वर्गीकरण नहीं किया गया, क्योंकि एक तो लगभग वे सबके-सब मद्रासी हैं और, दूसरे, वे कुल मिलाकर २०० से अधिक नहीं हैं। अतः, धर्म और प्रान्तके हिसाबसे वर्गीकरण इस प्रकार किया गया है: सूरती, १,४७६; कोंकणी, १४१; मेमन, १४०; गुजराती हिन्दू, १,६००; मद्रासी, ९९१; उत्तरी, १५७; पारसी, १७।

मैं यह भी कह दूँ कि मेमनोंको छोड़कर शायद ही कोई हस्ताक्षर देनेसे रहे हों, किन्तु हस्ताक्षरोंकी अनुयाचनाके लिए हमें जितना समय मिला था उसमें ट्रान्सवालके कोने-अँतरोंके हिस्सों — जैसे फारम आदिमें बसे हुए हर भारतीय तक पहुँच पाना मेरे संघके बूतेसे बाहरकी बात थी। अनुयाचकोंने — जिनमें सब जिम्मेदार और प्रातिनिधिक व्यक्ति हैं — खबर दी है कि समाजको जो संघर्ष करना पड़ रहा है उसके कारण भारतीय एक बड़ी तादादमें ट्रान्सवाल छोड़कर जा चुके हैं। सभी मानते हैं कि शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत ब्रिटिश भारतीयोंको १३,००० अनुमतिपत्र दिये गये हैं, और जब गत वर्ष सितम्बर मासमें दुर्भाग्यसे यह संघर्ष शुरू हुआ तब लगभग इतने ही भारतीय ट्रान्सवालमें रहते थे। आज मेरे संघको प्राप्त जानकारीके अनुसार ट्रान्सवालमें ८००० से अधिक ब्रिटिश भारतीय नहीं हैं; बल्कि यह संख्या, सम्भवतः, ८,००० की अपेक्षा ७,००० के अधिक करीब है। मेरे संघको यह ज्ञात है कि थोक व्यापारियोंके दबाव डालने या ऐसे ही दूसरे कारणोंसे कुछ मेमनों और अन्य लोगोंने, जिनकी संख्या ३० से अधिक नहीं है, दस्तखत वापस ले लिये हैं और कानूनके अन्तर्गत पंजीयनकी दरख्वास्त की है। इसके अतिरिक्त मेरे संघ द्वारा प्राप्त जानकारीके अनुसार जिस अवधि तक — अर्थात् १ जुलाईसे ३१ अक्तूबर तक — पंजीयन चलता रहा, उसमें सारे ट्रान्सवालमें ३५० से ज्यादा भारतीयोंने पंजीयनके लिए दरख्वास्त नहीं की है, और इन प्रार्थियोंमें से ९५ प्रतिशत मेमन हैं।

अन्तमें मेरा संघ सरकारका ध्यान एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके विरुद्ध उस समाजकी तीव्र भावनाकी ओर आकर्षित करता है जिसका कि मेरा संघ प्रतिनिधि है। समाजको इसके प्रति जो रुख अख्तियार करना पड़ा है उसमें उसका इरादा सरकार अथवा देशके कानूनको अमान्य करनेका नहीं रहा है। बल्कि बात यह है कि इस कानून द्वारा समाजपर जो ज्यादती की गई है उसकी अनुभूति तथा कानूनके समस्त निहित अर्थोंने भारतीयोंको वे मुसीबतें झेलनेके लिए तैयार हो जानेपर मजबूर कर दिया है, जो अनाक्रामक प्रतिरोधके लिए, जिस रूपमें ब्रिटिश भारतीयोंने उसे समझा है, उन्हें झेलनी पड़ेंगी।

[आपका, आदि,
ईसप मियाँ
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ]

[अंग्रेजीसे]

ट्रान्सवाल लीडर, २-११-१९०७

२५३. पत्र : 'ट्रान्सवाल लीडर' को

[जोहानिसबर्ग]
नवम्बर १, [१९०७]

[सम्पादक
'ट्रान्सवाल लीडर'
जोहानिसबर्ग]

महोदय,

अपने आजके अंकके अग्रलेखमें आपने ब्रिटिश भारतीय संघपर एशियाई पंजीयन अधिनियमके बारेमें यह वक्तव्य देनेका आरोप लगाया है कि जिन चार सौ व्यक्तियोंने अपना पंजीयन करवाया है, उन्हें ट्रान्सवालमें रहनेका कोई अधिकार नहीं है। संघके किसी पदाधिकारी द्वारा ऐसा वक्तव्य दिया जानेका मुझे कोई पता नहीं है। मैं जानता हूँ कि हमारे कुछ धरनेदारोंने कतिपय ऐसे वक्तव्य दिये थे, लेकिन यह केवल दुःसाहस था। मुख्य धरनेदार श्री नायडूने तत्काल इसका सुधार कर दिया था। लेकिन भूल-सुधारका प्रकाशन आपकी रिपोर्टमें नहीं किया गया। संघने जो अधिकृत वक्तव्य दिया था, वह यह है कि कमसे-कम ऐसे चार व्यक्तियोंने, जिन्हें कानूनकी सरकारी व्याख्याके अनुसार इस देशमें रहनेका अधिकार नहीं है, पंजीयन-प्रमाणपत्रके लिए अर्जियाँ दी हैं और, कदाचित्, उन्हें प्रमाणपत्र मिल भी गये हैं; संघ तो इन लोगोंको भी प्रमाणपत्रोंके अधिकारी नहीं समझता।

यदि सरकार अर्जियाँ लेनेके लिए दफ्तर खुला रखती है तो मुझे विनयपूर्वक इस बातसे इनकार करना होगा कि यह कोई भलमनसाहत-भरी रियायत है, क्योंकि यह अधिकांश भारतीयोंकी रायमें सरकार द्वारा अपनी कमजोरीको मंजूर करना होगा। ब्रिटिश भारतीय संघने अत्यन्त नम्रतापूर्वक तथा उच्चतर प्रेरणाके वशीभूत होकर सरकारको चुनौती दी है कि वह जितना बुरा कर सके, कर ले। हमें पंजीयनकी चिकोटियोंकी जरूरत नहीं है और यदि धरनेदारोंकी सतर्कताने भारतीयोंको उस चीजसे दूर रखा है जो उनकी नजरोंमें एक संकटका मूल है, तो यह सतर्कता प्रिटोरियामें भी बरती जायेगी।

आप पूछते हैं कि उस दशामें भारतीय विरोधसे क्या लाभ हो सकता है, जब कि जनरल स्मट्स धौंस-धमकी दे रहे हैं और साम्राज्य-सरकार हस्तक्षेप करनेसे इनकार कर रही है। जहाँतक मुझे पता है, भारतीयोंको अन्तिम उपायके रूपमें न डाउनिंग स्ट्रीटके हस्तक्षेपमें विश्वास है और न ही जनरल स्मट्स द्वारा मानवताके सिद्धान्तके स्वीकार किये जानेमें। यद्यपि भारतीय समाज आज जो प्रयास कर रहा है, वह यदि सफल हो गया तो, निःसन्देह, भारतीयोंको उपनिवेशमें एक प्रतिष्ठा प्राप्त होनेकी आशा है, तथापि उन्हें यह भी अच्छी तरह मालूम है कि इस युद्धमें उनका सर्वस्व नष्ट हो जा सकता है। किन्तु अगर ऐसा हो जाये, जिसका मुझे यकीन नहीं है, तो कमसे-कम उन्हें आत्म-लाभ तो अवश्य ही होगा। और यदि उस लाभको तराजूके एक पलड़ेमें रखकर, दूसरे पलड़ेमें उस सम्पूर्ण लाभको रखा जाये

जो जनरल स्मट्स तथा उनका अधिनियम भारतीय समाजको दे सकता है, तो मुझे अपने देशवासियोंसे यह कहनेमें कोई हिचक नहीं होगी कि वे किसी भी कीमतपर दूसरे लाभको लेनेसे इनकार कर दें। और तब आप देखेंगे कि कानून द्वारा मिलनेवाली सारी सुविधाओंको तो हम प्राप्त करेंगे, लेकिन प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक या उससे भी सख्त कोई और कानून हमारे समाजको इस सीधे और तंग रास्तेसे नहीं हटा सकेगा। यदि उसने हटा दिया, और मैं यह नहीं कहता कि वह ऐसा नहीं करेगा, तो प्रत्येक भारतीय जानता है कि दोनों ओर खाई है।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

ट्रान्सवाल लीडर, २–११–१९०७

२५४. पत्र : सर विलियम वेडरबर्नको

[जोहानिसबर्ग
नवम्बर २, १९०७के पूर्व]

सेवामें
सर विलियम वेडरबर्न
अध्यक्ष,
ब्रिटिश-समिति, भारतीय राष्ट्रीय महासभा
लन्दन

[महोदय,]

एशियाई पंजीयन अधिनियमके सम्बन्धमें मेरा संघ बड़ी सरगर्मीसे काम कर रहा है। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि दक्षिण आफ्रिकामें हमारे अपने बीच कोई जातिगत भेदभाव नहीं है। विभिन्न प्रान्तोंके हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई — सब मिलजुलकर सबके हितके लिए काम करते हैं। कुछ बातोंमें एशियाई पंजीयन अधिनियम भारतीय मुसलमानोंको विशेष रूपसे प्रभावित करता है। हमने सभी दलों और वर्गोंसे अपील की है; अतः मेरा संघ आपको इंग्लैंडमें भारतीय राष्ट्रीय महासभाका प्रतिनिधि मानकर आपसे भी अपील करता है तथा विश्वास करता है कि ट्रान्सवाल पंजीयन अधिनियमको, सामान्य दक्षिण आफ्रिकी प्रश्नसे पृथक्, कांग्रेसके समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत प्रश्नोंमें प्रमुखता प्रदान की जायेगी। जैसा कि आपको विदित है, ट्रान्सवालकी विशेष कठिनाइयोंका सामना करनेके लिए हमने जो मार्ग अपनाया है उसे शायद साहसिक ही कहा जा सकता है। दक्षिण आफ्रिकामें दूसरे कानूनोंको बर्दाश्त किया जा सकता है और अबतक उनको बर्दाश्त किया भी गया है, परन्तु ट्रान्सवाल कानून तो असह्य है। दक्षिण आफ्रिकाके दूसरे कानूनोंके अन्तर्गत भारतीयोंने उनके आगे झुकनेके बजाय उनका विरोध करके अपना सर्वस्व गँवा देनेकी प्रेरणाका अनुभव नहीं किया,

लेकिन ट्रान्सवाल कानूनके अन्तर्गत यह कदम नितान्त आवश्यक समझा गया है, और हो भी गया है। दक्षिण आफ्रिकाके दूसरे कानून हमें सामान्य रूपसे धनोपार्जनके साधनोंसे वंचित करते हैं; ट्रान्सवाल पंजीयन अधिनियम हमें पुंसत्वहीन बनाता है और हमें लगभग गुलामोंकी स्थितिमें पहुँचा देता है। और चूँकि यह प्रश्न मुसलमानोंको खास तौरसे प्रभावित करता है, इसलिए यदि राष्ट्रीय कांग्रेस ट्रान्सवालके मामलेको विशेष महत्त्व दे तो यह उसके लिए, शायद, शोभनीय ही होगा। कदाचित् दिसम्बर मासके अन्ततक बहुत-से भारतीय एक सिद्धान्तके लिए कारावासका दण्ड भी पा चुकेंगे, और इस प्रकार महासभाका अधिवेशन प्रारम्भ होने तक बहुत ही नाजुक हालत पैदा हो जायेगी।

[आपका, आदि,
इमाम अब्दुल कादिर सालम बावजीर
कार्यवाहक अध्यक्ष
हमीदिया इस्लामिया अंजुमन]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २-११-१९०७

२५५. जनरल स्मट्सकी बहादुरी (?)

बहुतेरे भारतीय औरतों-जैसे डर गये हैं कि जनरल स्मट्स तो ऐसे हैं कि जो कहा है वह करेंगे ही। गत सप्ताह हम यह सूचित कर चुके हैं कि उन्होंने दूकानें बन्द करनेके सम्बन्धमें कानून बनाया और लगे हाथ वापस ले लिया। वह कानून एक सप्ताह-भर 'गज़ट'में रहा था; इसी बीच बहुतेरे गोरे दूकानदारोंने उसका विरोध किया और जनरल स्मट्स ठंडे पड़ गये। उन्होंने प्रकाशित करनेके दस दिनके अन्दर ही उस कानूनको खींच लिया। इसी प्रकार उन्होंने बीयर विधेयक (बीयर बिल) तथा काफिरों-सम्बन्धी कानून वापस लिये थे। दूकान सम्बन्धी कानून उन्होंने ट्रान्सवालके गोरोंके भयसे वापस लिया था, और दूसरे दो कानून इसलिए वापस लिये थे कि इंग्लैंडमें उनका घोर विरोध हुआ था।

भारतीय भाइयोंको ये तीन उदाहरण अच्छी तरह याद रखने चाहिए। उसका तात्पर्य यह है कि बहादुरसे तो जनरल स्मट्स डरते हैं। किन्तु जिस प्रकार कोई डरपोक पति अपनी पत्नीपर पूरी बहादुरी दिखाता है, उसी प्रकार जनरल स्मट्स भी उन्हीं लोगोंपर बहादुरी बताते हैं जो उनसे डरते हैं, अर्थात् जो स्त्री-जैसे हैं। उन्हें गोरे व्यापारियोंसे डरना पड़ता है, क्योंकि उनकी सत्ता गोरोंपर अवलम्बित है। वे भारतीयोंसे क्यों डरने लगे? भारतीयोंका रूप तो स्त्रियोंके समान दिनमें दस बार बदलता है। वही भारतीय धरना देनेवाला बनता है और वही गुलामीका पट्टा लेता है; वही कानूनका विरोध करनेके लिए अध्यक्ष-पद ग्रहण करता है और वही हलफनामा देकर गुलामीकी साड़ी पहनता है; वही एक कलमसे हस्ताक्षर करता है कि खुदाकी कसम मैं कानून स्वीकार नहीं करूँगा, और दूसरी कलमसे कहता है कि मुझे गुलामी तो चाहिए ही। अब बताइए, जनरल स्मट्स क्यों डरेंगे? एक गुंजाइश अब भी है सही। वह है, जो भारतीय अभीतक फिसले नहीं हैं वे अन्ततक, बरबाद

होनेपर भी, जनरल स्मट्ससे जूझते रहें। फिर देखेंगे कि वीयर विधेयक-जैसी दशा खूनी कानूनकी होती है या नहीं। जंगके विना रंग जगतमें कहीं भी नहीं जमा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–११–१९०७

२५६. सच्ची मित्रता

निःसन्देह ब्लूमफॉंटीनके 'मित्र (फ्रेंड)' की हमारे प्रति सच्ची मित्रता है। 'फ्रेंड' के सम्पादकने अपने २४ तारीखके अंकमें एशियाई कानूनपर कड़ी टीका[1] की है। उसमें वताया है कि जो भारतीय विरोध करते हैं उन्हें धन्यवाद दिया जाना चाहिए। कुछ भारतीय डरके मारे पंजीयन करवा लें तो उससे कुछ भी नहीं वनता। किन्तु जो विरोध करते हैं अथवा देश छोड़कर चले जाते हैं वे सिद्ध करते हैं कि कानून वुरा है।

'फ्रेंड'के सम्पादकने ट्रान्सवाल सरकारको सलाह दी है कि उसे सोच-समझकर कदम उठाना चाहिए। यदि एशियाइयोंको निकाल वाहर करना हो तो उसके लिए लाजमी है कि वह उन्हें हर्जाना दे। हम अपने पाठकोंसे सारा लेख[2] पढ़नेका अनुरोध करते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–११–१९०७

२५७. ब्लूमफॉंटीनका 'मित्र': फिर भारतीयोंकी सहायतापर

"कानून नासमझी-भरा और अन्यायपूर्ण है"

ब्लूमफॉंटीन 'फ्रेंड'के २४ तारीखके अंकमें ट्रान्सवाल भारतीयोंके समर्थनमें एक अग्रलेख निम्न प्रकार है:

> प्रिटोरियासे खवर मिली है कि सरकारको लग रहा है, भारतीयोंका अनाक्रामक प्रतिरोध अपने-आप ही टूटने लगा है। इस मान्यताका कारण यह वताया गया कि प्रिटोरियामें लगभग ४८ भारतीय पंजीकृत हो चुके हैं, जिनमें कुछ तो समाजके वहुत ही माने हुए लोग हैं। परन्तु जोहानिसवर्गमें, जो कि भारतीयोंका प्रधान केन्द्र है, केवल १६ व्यक्तियोंने पंजीयन करवाया है, जिनमें एक व्यक्ति स्थानीय है और अन्य वाहरके गाँवोंके हैं। हमारा खयाल है कि इन आँकड़ोंकी अपेक्षा नीचेकी वातमें अधिक अर्थ समाया हुआ है। मालूम हुआ है, कल सवेरे डर्वनसे लगभग १०० भारतीय, जो ट्रान्सवालके ही होने चाहिए, भारतके लिए रवाना होनेवाले हैं।

१. ऐसा लगता है कि यह लेख प्रकाशित होनेसे कमसे-कम दो दिन पहले, अक्तूबरमें, लिखा गया था।
२. देखिए अगला शीर्षक।

भारतीयोंमें भी थोड़े-बहुत नामर्द

यदि जुल्मपर-जुल्म करके परेशान किया जाये तो फिर भारतीयोंमें भी थोड़े-बहुत नामर्द निकल ही आयेंगे। ऐसा तो गोरे हों या काले, सबमें होता है। जिस कानूनको स्वयं ही अपमानजनक और अत्याचारपूर्ण मानते हैं उसके सामने डरके मारे यदि ४० या ५० भारतीय झुक जाते हैं तो इससे हमें कुछ भी नहीं लगता। हमें जो बात खास तौरसे ध्यानमें लेने योग्य लगती है, सो यह है कि डर जानेवालोंकी अपेक्षा आत्मसम्मानके हेतु देश छोड़कर जानेवालोंकी संख्या बहुत अधिक है। ट्रान्सवाल सरकारने जो धंधा अख्तियार किया है उसमें नैतिकता नहीं है। ऐसे कारोबारको मूर्खतापूर्ण कहना चाहिए। जिन ब्रिटिश भारतीयोंने कानूनका विरोध किया है उनको ट्रान्सवालमें बसनेका पूरा वैधानिक अधिकार है, जिसमें कोई सन्देह नहीं। यह हक उन्हें इसलिए प्राप्त हुआ है कि वे लम्बे समयसे यहाँ रहते आ रहे हैं। सरकारने निश्चय किया है कि यदि वे अब आगे और भी उस अधिकारका उपभोग करना चाहते हों तो उन्हें इस कानूनके सामने झुकना होगा — एक ऐसे कानूनके सामने जो उन्हें आवारे और लफंगेका खिताब देता है। हमें तो नहीं लगता कि सरकारको ऐसा करनेका जरा भी अधिकार है। सब जानते हैं कि ट्रान्सवालमें अँगुलियोंकी छाप लेकर पंजीयन करनेकी व्यवस्था केवल कैदियों और चीनी गिरमिटियोंपर ही लागू होती है। किसीको शायद यह लगे कि भारतीय भी हलके दर्जेके लोग हैं, इसलिए उनपर भी यह पंजीयन लागू किया जा सकता है। मान लें कि वे हलके दर्जेके हैं, तो क्या अपना ऊँचा दर्जा दिखानेके लिए उनपर जुल्म किया जाये?

भारतीय निम्न कोटिके हैं?

परन्तु कौन कहता है कि भारतीय हलके दर्जेके हैं? हमारी भारतीय सेनामें ऐसी टुकड़ियाँ हैं जो गोरी सेनाकी चुनिंदासे-चुनिंदा टुकड़ीके समकक्ष मानी जाती हैं। हमारे विश्वविद्यालयोंके श्रेष्ठ-श्रेष्ठ पारितोषिकोंको भारतीय विद्यार्थी बार-बार जीतते हैं। तत्त्वज्ञान और ऐसी ही अन्य विद्याओंमें एशियाइयोंके सामने यूरोपीय केवल बच्चोंके समान हैं। यदि व्यापार-वाणिज्यकी योग्यताके आधारपर परीक्षा करें तो कुल मिलाकर स्पर्धामें एशियाईको गोरा कभी हरा नहीं सकता। ट्रान्सवालमें जिस ढंगसे भारतीयोंको रखा जा रहा है उससे हम निःसन्देह कह सकते हैं कि उसका यथार्थ कारण व्यापारिक प्रतिस्पर्धा है। हाँ, युद्ध-विद्यामें निःसन्देह गोरे लोग एशियाइयोंसे बढ़कर हैं।

यह विशेषता कितने दिन निभेगी?

परन्तु यह विशेषता कितने दिन निभेगी, इस विषयमें गोरे राजनीतिज्ञ बड़े चिन्तित हैं। सम्भव है कि एशियाके असंख्य लोग अपनी शताब्दियोंकी निद्रासे कुछ ही वर्षोंमें जाग जायेंगे और पश्चिमके लोगोंको पछाड़ देंगे। पहले भी एक नहीं, कई बार वे पश्चिमको पछाड़ चुके हैं। वे जगे नहीं, यह अलग बात है। किन्तु उन्हें जगानेके लिए

ट्रान्सवाल सरकार तो अपनी ओरसे जितना बन पाया, कर चुकी है। ट्रान्सवाल सरकारके जुल्मोंके कारण जिन भारतीयोंको भारत वापस लौटना पड़ेगा उन सबके मनमें ऐसा घाव हो जायेगा जो कभी भर नहीं सकता। और तब यदि ऐसा प्रत्येक मनुष्य आन्दोलनकारी बन जाये और गोरोंके राज्यके विरुद्ध लोगोंको उभाड़े तो उसमें कहना ही क्या है? यह हम जानते हैं कि ट्रान्सवाल बड़ी सरकारकी चिन्ताओंमें वृद्धि करना नहीं चाहता था, फिर भी कोई इनकार न कर सकेगा कि ट्रान्सवालने अपना एशियाई प्रश्न ऐसे ढंगसे निपटाना शुरू किया है कि उससे बड़ी सरकारकी एशियाई प्रश्न-विषयक मुसीबतमें वृद्धि हुए बिना रह ही नहीं सकती।

नासमझी-भरा और अन्यायपूर्ण कानून

अतः, हम पंजीयन कानूनको नासमझी-भरा और अन्यायपूर्ण मानते हैं। हम यह नहीं मानते कि भारतीय सरकारके दबावमें आकर बड़ी सरकार ट्रान्सवाल सरकारपर जोर डालेगी और एशियाई कानूनमें संशोधन करनेके लिए कहेगी, अथवा, (जैसा कि कुछ लोगोंको डर है), शायद यह कहेगी कि हमारे देशमें भारतीयोंको आने दिया जाये। इंग्लैंड उपनिवेशोंके बर्तावको बहुत ही सहन करता है; उसके निजी लाभको आँच आ रही हो तो भी वह उपनिवेशोंको उनकी इच्छाके अनुसार चलने देता है। और न वह अपने व्ययसे और अपनी नौसेना द्वारा उपनिवेशोंका संरक्षण करनेका उत्तरदायित्व अपने सिरसे उतार फेंकता है। ट्रान्सवाल यह सब स्वीकार करता है। जनरल बोथाकी सरकार यद्यपि बड़ी सरकारके प्रति मैत्रीभाव रखती है, फिर भी एशियाइयोंके प्रति उन्होंने जो नीति अपना रखी है उसके कारण उनके इंग्लैंडके मित्र उलझनमें पड़ गये हैं। तो क्या कोई अच्छा मार्ग नहीं है?

अच्छा मार्ग

इतना कहनेके बाद अब हम उचित मार्ग सुझाते हैं। पहला यह है कि ऐसा कानून बनाया जा सकता है, जिसके द्वारा नये आनेवालोंको आनेसे सर्वथा रोक दिया जा सके। दूसरा यह है कि ऐसे नियम बनाये जा सकते हैं जिन्हें उन सारे एशियाइयोंको पालना होगा जो ट्रान्सवालमें रहना चाहते हों। यदि कोई एशियाई ऐसे कानूनका पालन करनेकी अपेक्षा ट्रान्सवाल छोड़ना पसन्द करे, और यह सिद्ध कर दे कि छोड़नेसे उसे हानि होती है तो उसे पूरा हर्जाना दिया जाना चाहिए। मान लें कि इस तरह ट्रान्सवालके सभी भारतीय जाना चाहें तो भी उनके हक खरीदनेमें हमें जो खर्च आयेगा वह किसी भारतीय बलवेके खर्चसे कम ही होगा। फिर इस सवालके उचित निराकरणमें मदद देनेके लिए इस प्रकारके खर्चमें बड़ी सरकार भी योग तो देगी ही। भारतीयोंकी परेशानियाँ भी बोअर युद्धका एक कारण हैं, इस कथनके लिए स्वयं बड़ी सरकार जिम्मेदार है। फिर, यदि दक्षिण आफ्रिकाको एक करना है तो सभीको एशियाई प्रश्न तो उठा ही लेना होगा। इससे नेटालका विशेष सम्बन्ध है, क्योंकि उसका काम भारतीय मजदूरोंके बिना चल नहीं सकता। जैसा कि हम पहले बता चुके हैं, नेटालके लिए मार्ग यह है कि वह भारतीयोंके लिए एक अलग ही हिस्सा निश्चित कर दे। उस हिस्सेमें भारतीयोंको गोरोंके बराबर ही अधिकार होंगे। तब उन्हें उससे

वाहर रहनेकी स्वतन्त्रता नहीं दी जा सकती। हमारा देश अपने ही लिए रखनेका हमें पूर्ण अधिकार है। परदेशी लोगोंको इस देशपर पूरी तरह छा जानेसे रोकनेकी हमें पूरी सत्ता है। किन्तु इन विदेशियोंको अपमानित करने अथवा हानि पहुँचानेका हमें कुछ भी अधिकार नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–११–१९०७

२५८. लन्दनमें मुसलमानोंकी बैठक

अखवारोंमें खवर है कि लन्दनमें नये कानूनका विरोध करनेके लिए मुसलमानोंकी एक सभा होनेवाली है। यह खवर मामूली नहीं है। लन्दनमें रहनेवाले मुसलमान सभी कौमों और सभी देशोंके हैं। उनमें गोरे भी हैं। उनकी सभाका असर पड़े विना नहीं रहेगा। इससे मुसलमान भाइयोंको ज्यादा जागृत रहकर तथा ज्यादा हिम्मतसे ट्रान्सवालकी लड़ाईमें भाग लेना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–११–१९०७

२५९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

अन्तिम सप्ताह

अव अक्तूवरके अन्तिम दिन हैं। इस चिट्ठीके छपनेतक यहाँसे "प्लेग कार्यालय" उठ चुकेगा। इसे लिखनेतक तो भारतीयोंका जोर कायम है। तमाम मेमन लोगों और थोड़ेसे कोकणियोंके सिवा दूसरे सव लोग पूरे जोरमें हैं। मैंने "तमाम मेमन लोग" कहा है; किन्तु ऐसी आशा वँधती है कि पीटर्सवर्गके पाँच-सात और पीट रिटीफमें जो दो-तीन मेमन हैं, वे मेमनोंकी कुछ नाक रखेंगे। वाकी तो जहाँ एक दो थे वे भी दौड़-धूप करके, झूठा-सच्चा हलफ़नामा देकर, गुलामीका चोगा पहनकर, अपने मन शाहज़ादा वनकर कौमकी, इज्जतकी या शपथकी परवाह न करके ठिकाने लग गये हैं। हम लोगोंमें कहावत है कि 'आसमान फटे तो पैवन्द कैसे लगाया जाये?' वैसे ही जव पीटर्सवर्गके मुखिया खुद गुलाम वनें और दूसरोंको गुलाम वननेकी सीख दें, तव मेमनोंमें किसे क्या कहा जाये?

श्री हाजी कासिमने एक और नया ही रास्ता निकाला। उन्हें लगा कि "डरसे नहीं लिया" ऐसी हलफ उठाना तो महापाप होगा; इसलिए उन्होंने जनरल स्मट्सको लिखा कि हमें आशा थी कि आप कुछ परिवर्तन करेंगे, किन्तु वह परिवर्तन नहीं हुआ; इसलिए अव पंजीयन कराना चाहते हैं, तो मंजूरी मिलनी चाहिए। जनरल स्मट्सको भी काफी गुलाम तो मिले नहीं हैं और न गुलामोंके विना काम ही चलेगा। इसलिए उन्होंने मेहरवानीके रूपमें

हुक्म दिया है कि श्री हाजी कासिम और उनके साथी भले ही हलफके विना ही पंजीकरण करा लें। इसलिए अव मेमनोंका प्रकरण समाप्त हुआ। अव दूसरे भारतीयोंके वारेमें देखना वाकी है।

हमीदिया इस्लामिया अंजुमन

अंजुमनकी वैठक नियमानुसार हुई थी। मौलवी साहव अहमद मुख्त्यारने ऐसा भापण दिया कि कुछ लोगोंकी आँखोंसे आँसू वहने लगे। उन्होंने 'कुरान शरीफ' में से कई मिसालें देकर वताया कि इस कानूनके सामने झुकनेवाला अपने ईमानसे हाथ धो वैठेगा। श्री गांधीने पुलिस कमिश्नरके साथ अपनी भेंटका हाल संक्षेपमें सुनाया और सरकारको इत्मीनान करानेके लिए सलाह दी कि एक दिन धरना न दिया जाये। मौलवी साहवने फिर खड़े होकर यह सलाह दी कि एक व्यक्तिको खास तौरसे भारतमें जागृति फैलानेके लिए जाना चाहिए। श्री कुवाड़ियाने वताया कि पुलिसने श्री सालूजीकी मलायी पत्नी और उनके दो वर्पके वच्चेका अँगूठा लगवाया है; और श्री वर्जेसने डरवनमें कुछ हिन्दुओंके अनुमतिपत्र फाड़ डाले हैं। श्री उमरजीने कहा कि नवम्वरमें नेताओंको गाँव-गाँव घूमकर लोगोंको सारी असलियत वतानी चाहिए।

एशियाई भोजनगृह

नगरपालिकाने भारतीय भोजनगृहों और हव्शी भोजनालयोंके सम्वन्धमें नियम वनाये हैं। इन नियमोंमें एक यह है कि भोजनगृहके मालिककी अनुपस्थितिमें मैनेजर गोरा ही होना चाहिए। इसपर व्रिटिश भारतीय संघने आपत्ति की है और सरकारको निम्नानुसार पत्र लिखा है:

> मेरे संघने नगरपालिकाके उपनियमोंमें एक धारा यह देखी है कि एशियाई भोजनगृहोंके मालिक भोजनगृहोंमें सहायक मैनेजरोंकी जगह केवल गोरोंको ही रखें। इसके अलावा एशियाई भोजनगृहोंके मालिकोंको नोटिस द्वारा यह खवर दी गई है कि "नगरपालिकाको, सम्भव है, सहायक मैनेजरोंके नामोंकी जरूरत होगी। इसलिए प्रत्येक भोजनगृहका मालिक अपने सहायकका नाम तुरन्त भेजे।" इस सूचनासे प्रकट होता है कि नगरपालिका गोरे अथवा दूसरे किसी सहायककी नियुक्तिके लिए मालिकोंको वाध्य करना चाहती है।
>
> एशियाई भोजनगृहोंकी संख्या वहुत थोड़ी है। हिन्दुओं और मुसलमानोंको अपने भोजनकी वस्तुओंके साथ गोरे सहायकका किसी भी प्रकारका सम्वन्ध होनेमें धार्मिक आपत्ति है। इसके अलावा इन भोजनगृहोंमें रोजाना दससे ज्यादा ग्राहक शायद ही जाते हों। इनके मालिकोंके लिए गोरे सहायकका खर्च उठाना सम्भव नहीं है।
>
> मेरे संघकी नम्र सम्मतिमें जो थोड़ेसे एशियाई भोजनगृहवाले हैं, उनपर इससे वड़ी मुसीवत आ जायेगी। इसलिए मेरा संघ आशा करता है कि सरकार इस प्रकारके नियमोंको मंजूर न करेगी।

इस कानूनके पास हो जानेका भय है। इसका अर्थ यह हुआ कि हिन्दुओं और मुसलमानोंको परोसनेवाला, और उनके लिए भोजन सामग्री आदि लानेवाला गोरा होना चाहिए। इस सवसे अत्याचारकी सीमा प्रकट होती है। मुझे तो एक यही वात सूझ सकती है कि यदि हम भारतीय इस नये कानूनके विरोधमें हार खा गये तो फिर हमारा धर्म, प्रतिष्ठा आदि सभी चले जायेंगे।

कुछ अफवाहें

एक ऐसी बात उड़ी है कि श्री गांधीने जोहानिसबर्गके बहुत-से प्रमुखोंको गुप्त रूपसे पंजीकृत करा दिया है और खुद भी हो गये हैं। पाठक खुद समझ लें कि इसको कितना महत्त्व दिया जा सकता है। अफवाह तो यह भी है कि इस बातको उत्तेजन जनरल स्मट्सने दिया है। यदि ऐसी बात हो तो यही कहना होगा कि जनरल स्मट्स डरके मारे नाहक हाथ-पाँव पटक रहे हैं।

दूसरी गप्प यह उड़ी है कि जनरल स्मट्स दिसम्बरमें अ-पंजीकृत लोगोंको निश्चित रूपसे गाड़ीमें बिठा देंगे। उन्होंने नेटालके मन्त्रीके साथ यह व्यवस्था कर ली है कि गाड़ी बन्दरगाहपर पहुँचाई जायेगी और वहांसे उन्हें बालाबाला स्टीमरमें भरकर भारत पहुँचा दिया जायेगा। यह बात बेबुनियाद है, क्योंकि झूठ है। जबरदस्ती देशनिकाला देनेका कानून अभी पास नहीं हुआ है। श्री लेनर्ड राय दे चुके हैं कि ऐसा एक भी कानून ट्रान्सवालमें नहीं है जिसकी रूसे पंजीयन न करानेवाले भारतीयको जबरदस्ती निर्वासित किया जा सके। इसके अलावा यह भी सोचना चाहिए कि यदि ऐसी सत्ता खूनी कानूनमें होती तो सरकार प्रवासी-विधेयकमें वह धारा विशेष तौरसे न रखती। इतनी बात निश्चय है कि सरकारको जबरदस्ती निर्वासित करनेका अधिकार नहीं है। फिर, जिन्हें नेटालमें रहनेका हक है उन्हें जहाजमें जबरदस्ती कौन बिठा सकता है?

तीसरी गप्प यह है कि जोहानिसबर्गके बहुतसे भारतीयोंने पंजीयन करवा लिया है। इसपर अरमीलो, क्लार्क्सडॉर्प और पॉचेफस्ट्रूमसे अगुवा लोग पता लगानेके लिए यहाँ आ गये हैं। यहाँ स्थितिको देखकर उन्हें हिम्मत बँधी है। श्री हेलू, श्री मुहम्मद शहाबुद्दीन, श्री अब्दुल गफूर और दूसरे दो या तीन व्यक्तियोंके सिवा जोहानिसबर्गके किसी भी व्यक्तिने पंजीयन नहीं कराया। और अन्य शहरोंके सिर्फ पन्द्रह लोग आकर यह कालिख लगवा गये हैं। इस सारी स्थितिसे उपर्युक्त नेता खुश हुए हैं और कानूनका विरोध करनेका उनमें फिरसे पूरा उत्साह भर आया है।

प्रिटोरिया कमजोर

यह जो डर था कि प्रिटोरिया सबसे कमजोर है वह अब सच्चा साबित हो चुका है। अधिकतर वहींके लोक पंजीकृत हुए हैं। मेमन तो सभी पंजीकृत हो चुके। इससे दूसरी जातियोंमें भी खलबली मची है और यही विचार हो रहा है कि दूसरे क्या करें। किन्तु इसमें विचार किसलिए किया जा रहा है, यह समझमें नहीं आता। कानून बुरा है और उसका विरोध करनेकी हमने शपथ ली है; इतना प्रत्येक व्यक्तिके लिए काफी होना चाहिए।

खेदजनक घटना

शाहजी साहबने इमाम कमालीके ऊपर हाथ डाला, यह खबर तो अभी ताजी ही है। इस बीच उनका हाथ श्री मुहम्मद शहाबुद्दीनके ऊपर पड़ चुका है। सोमवारको लगभग दस बजे श्री मुहम्मद शहाबुद्दीन मार्केट स्क्वेयरमें थे। इतनेमें शाहजी साहबने आकर उनको पंजीयन करानपर उलाहना दिया और पीटा। उनकी उँगलीमें खासा जख्म आया। वहाँ जो यहूदी मौजूद थे, उन्होंने बीच-बचाव कर दिया, अन्यथा ज्यादा चोट लगती। इससे हाहाकार मच रहा है। सभीको इससे खेद होता है। श्री ईसप मियाँ और श्री गांधी श्री मुहम्मद

शहाबुद्दीनके पास सहानुभूति प्रकट करनेके लिए गए थे। श्री मुहम्मद शहाबुद्दीनने शाहजी साहबके विरुद्ध कोई कार्रवाई न करनेका निश्चय किया है। फिर भी जब पुलिस कमिश्नरको इस बातकी खबर मिली तो उन्होंने उसके सम्बन्धमें पूछताछ की है। उन्होंने श्री शहाबुद्दीनका बयान मँगवाया है। श्री शहाबुद्दीनने उसपर हस्ताक्षर करनेसे इनकार कर दिया है। नेतागण शाहजी साहबको समझा रहे हैं। इस घटनासे सभीको दुःख हुआ है।

मैं अनेक बार इस चिट्ठीमें लिख चुका हूँ कि यदि इस लड़ाईके दौरान कौममें मार-पीट हुई तो हमारा जीतना कठिन है। यह लड़ाई मारपीटकी नहीं है। जो "पियानो बजाता"[1] है उसका बचाव नहीं किया जा सकता। ऐसे लोग देशद्रोही हैं इसमें शक नहीं। किन्तु उनको नम्रतासे और तर्कसे समझाना है। परन्तु यदि वे न मानें तो उनको मारनेसे हमारा काम नहीं चलेगा। उसमें भारी नुकसान है। शाहजी साहबको कोई कुछ कह नहीं सकता। उनकी बात ही न्यारी है। किन्तु सभी भारतीयोंको सोचना चाहिए कि यह काम प्रत्येक भारतीयकी हिम्मतसे पूरा हो सकता है। मारपीटसे कदापि नहीं। जिनको कानूनसे बेइज्जती नहीं मालूम होती वे यदि अपना पंजीयन भी करा लेंगे तो उससे क्या होना-जाना है? मैं तो मानता हूँ कि जबतक समाजका बड़ा हिस्सा दृढ़ रहेगा तबतक कुछ नहीं होगा।

कुछ प्रश्न

सवाल उठाया गया है कि मालिककी गैरहाजिरीमें मैनेजरको परवाना मिल सकता है या नहीं। इस सवालका जवाब सर्वोच्च न्यायालयसे राम मकनके मुकदमेमें मिल चुका है। सो यह है कि परवाना मिल सकता है। यह सवाल भी उठा है कि यहाँके निवासी भारतीयोंको नये कानूनके अनुसार मुख्त्यारनामेपर अँगूठा लगाना चाहिए या नहीं। यह तो स्पष्ट है कि उसपर तो लगाना चाहिए। ये सारे सवाल उनके लिए हैं जिनको कानून स्वीकार करना हो। जिन्हें कानूनके सामने न झुकना हो वे तो बिना परवानेके व्यापार करते हुए लड़ेंगे और अन्तमें कानूनको रद करायेंगे।

गद्दारोंकी संख्यामें वृद्धि

मैं पिछली बार जो सूची[2] भेज चुका हूँ उसमें अब जो वृद्धि हुई है, वह दुःखके साथ यहाँ दे रहा हूँ:

[प्रिटोरियासे २७; पीटर्सबर्गसे २१; पॉचेफस्ट्रूमसे १२; मिडेलबर्गसे ४; जोहानिसबर्गसे ५; और लुई ट्रिचार्ट, ज़ीरस्ट, मेफिकिंग और क्रिश्चियाना — प्रत्येकसे १।][3]

भारतीय कांग्रेसकी लन्दन समितिको पत्र

सर विलियम वेडरबर्न कांग्रेसकी ब्रिटिश समितिके प्रमुख हैं। श्री ईसप मियाँ तथा इमाम अब्दुल कादिरने उन्हें पत्र[4] लिखे हैं कि आगामी कांग्रेसमें इस कानूनके सम्बन्धमें बात जरूर उठाई जाये।

१. अँगुलियोंकी छाप देनेपर व्यंग्यात्मक शब्द-प्रयोग।
२. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ३१६।
३. यहाँ गांधीजीने विभिन्न स्थानोंके गद्दारोंके नाम दिये थे जिन्हें इस रूपमें संक्षिप्त कर दिया गया है।
४. देखिए "पत्र: सर विलियम वेडरबर्नको", पृष्ठ ३१९ और ३२३-२४।

बहादुर मुलतानी व्यापारी

"स्टार"में निम्नलिखित विज्ञापन प्रकाशित हुआ है :

"अनाक्रामक प्रतिरोधी पंजीयन नहीं करायेंगे। माल्टी फीता, 'टेनेरीफ' माल, जापानी और भारतीय रेशम आदि-आदि नीलाम करना है।"

यह विज्ञापन एक बहादुर मुलतानी व्यापारीने प्रकाशित कराया है। वह पंजीयनकी अपेक्षा जेल जाना ज्यादा अच्छा मानता है। यह कदम व्यवसायसे निवृत्त होकर सरकार जो भी करे उसको बर्दाश्त करनेकी तैयारीके तौरपर है।

अधिकारियोंकी व्यर्थ दौड़-धूप

अधिकारीगण अर्जियाँ लेनेके लिए इतनी बेकार दौड़-धूपकर रहे हैं कि उनका व्यवहार हास्यास्पद हो जाता है। इसका एक उदाहरण पिछले सप्ताह गिरफ्तार किये गये दो चीनी धरनेदारोंके मामलेसे मिलता है। अदालतमें यह बयान दिया गया था कि पुलिसके एक सिपाहीने, (जो पंजीयन अधिकारीके हाथका हथियार बन गया था), दो जुदा-जुदा वक्तोंपर एक चीनी धरनेदारको गाली दी थी और उसके ऊपर हाथ आजमानेका प्रयत्न भी किया था। न्यायाधीशने अभियुक्तोंको निरपराध मानकर छोड़ दिया। इस मुकदमेके दौरानमें प्रकट हुए गोरोंका व्यवहार और चीनियोंकी चतुरताको देखकर बहुतसे गोरोंका हृदय अनाक्रामक प्रतिरोधियोंकी ओर आकर्षित हुए बिना नहीं रहा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–११–१९०७

२६०. पत्र : भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसको

जोहानिसबर्ग
नवम्बर ४, १९०७

[श्री रासबिहारी घोष[1]
निर्वाचित अध्यक्ष,
भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस
श्रीमन्,]

मैं आपका तथा कांग्रेसका ध्यान ट्रान्सवालमें एशियाई पंजीयन अधिनियमको लेकर भारतीयोंकी जो नाजुक स्थिति हो गई है उसकी ओर आकर्षित करता हूँ। ब्रिटिश भारतीयोंको सूचना दी गई है कि उस घृणित कानूनके अन्तर्गत पंजीयन-सम्बन्धी प्रार्थनापत्र लेनेकी अन्तिम तारीख ३० नवम्बर है। उसके बाद खास मामलोंके अलावा सरकार पंजीयनका कोई प्रार्थना-पत्र नहीं लेगी। सम्भवतः आपको यह पहले ही पता चल गया होगा कि समाजके कुछ थोड़े-से आदमियोंके अलावा समूची भारतीय जनताने इस कानूनके अन्तर्गत पंजीयन करानेसे इनकार कर दिया है। मेरे संघका दावा है कि १३,००० अनुमतिपत्र-धारियोंमें से पंजीयन करानेके

१. सन् १९०७के सूरत कांग्रेसके २३ वें अधिवेशनके अध्यक्ष।

लिए अबतक ३५० से अधिक भारतीयोंने अर्जियाँ नहीं दीं। इससे आप अनुमान लगा सकते हैं कि इस मामलेमें भावना कितनी तीव्र है।

आपको पता लग गया होगा कि हमपर जो अन्याय हुआ है उसको दूर करानेके लिए हमने अनाक्रामक प्रतिरोधका रास्ता अपनाया है। हमने कानून तोड़नेके सभी नतीजोंको सहन करनेका निश्चय किया है। हममें से अनेक लोग अभी ही बड़े-बड़े नुकसान उठा चुके हैं; और आगे भी बहुत-से लोगोंको सर्वस्व गँवाना पड़ेगा। यहाँतक कि कई यूरोपीय थोक व्यापारियोंने भारतीय व्यापारियोंको, जबतक वे नये कानूनके अनुसार पंजीयन प्रमाणपत्र नहीं दिखलाते, उधार देना बन्द कर दिया है। नौकर या मजदूरके रूपमें काम करनेवाले अनेक भारतीयोंने पंजीयन करानेके बजाय अपने मालिकों द्वारा नौकरीसे निकाल दिया जाना मंजूर कर लिया है।

जैसा कि आप भली भाँति जानते हैं, ट्रान्सवालके भारतीय समाजमें मुसलमान, हिन्दू, ईसाई और पारसी; मद्रासी, गुजराती, सिख, पठान, हिन्दी-भाषी और कलकत्तेके लोग — सभी शामिल हैं। इस अन्यायपूर्ण कानूनका विरोध करनेमें सब कन्धेसे-कन्धा मिलाकर खड़े हैं; क्योंकि इससे हर भारतीयकी धन-दौलत छिन जानेका भय है और जिस आत्म-सम्मानको उसने पिछले दमनकारी कानूनसे बड़ी कठिनाईसे बचाया है उसके पुनः नष्ट हो जानेका खतरा है।

मेरा संघ इस समय कांग्रेसकी सेवामें इस आशासे निवेदन कर रहा है कि ट्रान्सवाल पंजीयन अधिनियमको कांग्रेसके विचारणीय विषयोंमें प्रमुखता प्राप्त हो सके और वह, सामान्य दक्षिण आफ्रिकी प्रश्नसे पृथक, उसके कार्यक्रमोंका मुख्य विषय बन सके। आज ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी भयानक स्थितिके सिवाय दक्षिण आफ्रिका सम्बन्धी और कोई प्रश्न नहीं है। जो-कुछ आज हमारे ऊपर बीत रहा है वही कल दक्षिण आफ्रिका-भरमें हमारे भाइयोंपर बीतेगा। बल्कि, हमारे विचारमें, हमारा प्रश्न साम्राज्यके लिए सबसे अधिक महत्त्वका और भारतके लिए राष्ट्रीय महत्त्वका है; क्योंकि दक्षिण आफ्रिकाके उपनिवेश हमारे विरुद्ध जो-कुछ करनेमें यहाँ कामयाब हो जायेंगे, साम्राज्यके दूसरे उपनिवेश उसीको अन्यत्र बसे हुए हमारे भाइयोंके विरुद्ध आजमायेंगे। यह कहा जा सकता है कि ट्रान्सवालमें विशेष कठिनाईका सामना करनेके लिए हम लोग वीरोचित मार्ग अपना रहे हैं; किन्तु हम अपने-आपको इस देशमें अपनी मातृ-भूमिका प्रतिनिधि मानते हैं, और देशभक्त भारतीयोंके रूपमें हमारे लिए अपनी जाति तथा राष्ट्रके सम्मानके अपमानको पी सकना असम्भव है। दक्षिण आफ्रिकामें इन बातोंको लेकर हमपर किसी और कानूनने इतनी भीषणतासे प्रहार नहीं किया, लेकिन ट्रान्सवाल एशियाई पंजीयन अधिनियम तो असह्य है। दक्षिण आफ्रिकाके अन्य सभी कानून आम तौरपर हमें धन-प्राप्तिके साधनोंसे वंचित करते हैं। ट्रान्सवाल पंजीयन अधिनियम तो हमें अपने पौरुषसे ही वंचित कर देता है और हमें गुलामीके दर्जेपर पहुँचा देता है। दिसम्बरके अन्ततक सम्भवतः अनेक भारतीय एक सिद्धान्तके लिए जेलके कष्ट सह चुके होंगे और पहली जनवरीको उन भारतीयोंको व्यापारिक परवाने देनेसे इनकार कर दिया जायेगा जिन्होंने नये कानूनके अनुसार अपना पंजीयन करानेसे इनकार कर दिया है। इस प्रकार कांग्रेसका अधिवेशन आरम्भ होनेतक परिस्थिति अत्यन्त नाजुक हो जायेगी। हमारी मान्यता है कि हमारे अनाक्रामक प्रतिरोध आन्दोलनको सभी धार्मिक व्यक्तियों, सभी सच्चे देशभक्तों और सभी ईमानदार और

विवेकशील व्यक्तियोंका समर्थन मिलना चाहिए। इस आन्दोलनमें ऐसी शक्ति निहित है कि हमारे प्रतिरोध न करने और खुशीसे कष्ट-सहनके कारण ही हमारे विरोधियोंको हमारा आदर करना पड़ेगा। इस विरोधके बारेमें हमारा संकल्प इसलिए और भी दृढ़ है कि हमारे खयालसे इस उपनिवेशमें छोटे पैमानेपर हमारा यह प्रयोग सफल हो या असफल, किन्तु प्रत्येक अत्याचार-पीड़ित जनता, प्रत्येक अत्याचार-पीड़ित व्यक्ति इसका अनुकरण कर सकेगा; क्योंकि अन्यायको दूर करानेके लिए इससे अधिक विश्वस्त और सम्मानपूर्ण अस्त्र आजतक नहीं अपनाया गया।

[ईसप इस्माइल मियाँ
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९–११–१९०७

२६१. पत्र: अखबारोंको[1]

[जोहानिसबर्ग
नवम्बर ६, १९०७]

[महोदय,]

आपने अपने पत्रके आजके अंकमें एक वक्तव्य प्रकाशित किया है। आशयतः, वह वक्तव्य एशियाई अधिनियम संशोधन कानूनके प्रशासनके सम्बन्धमें आपके प्रिटोरिया-स्थित संवाद-दाताको दिया गया सरकारके वर्तमान रुखका अधिकृत स्पष्टीकरण है। लेकिन मेरे संघको यह देखकर खेद हुआ है कि उस वक्तव्यमें इतनी अधिक गलतफहमियाँ तथा गलतबयानियाँ हैं कि लगता है, शायद आपका संवाददाता उस स्पष्टीकरणकी तफसीलोंको, जो उपनिवेश-सचिवके दफ्तरसे जारी किया गया था, समझ ही नहीं सका। अपने संघकी ओरसे मैं उसमें दिये हुए कुछ तथ्योंका परीक्षण करनेके लिए आपकी आज्ञा चाहता हूँ।

पहली बात उसमें यह कही गई है कि भारतीय समाजकी ओरसे उपनिवेश-सचिवको ऐसे प्रार्थनापत्र दिये गये हैं जिनका उद्देश्य कानूनके प्रशासन-सम्बन्धी विनियमोंमें कुछ सुधार कराना है। मेरा संघ इस बातका पूर्णतः खण्डन करता है। तथ्य ये हैं: ३० अगस्तको सर्वश्री स्टैगमान, एसेलेन व रूजने विनियमोंमें कुछ संशोधन करानेकी दृष्टिसे "प्रिटोरिया, स्टैंडर्टन, पीटर्सबर्ग और मिडेलबर्गके कुछ प्रमुख भारतीयों" की ओरसे माननीय उपनिवेश-सचिवको एक प्रार्थनापत्र दिया था। सर्वश्री स्टैगमान, एसेलेन व रूज़के मुवक्किल यह दिखलाना चाहते थे कि वे बहुत-से प्रतिनिधि भारतीयोंकी ओरसे बात कर रहे हैं। मेरे संघने इन तथ्योंका पता चलते ही प्रिटोरियाके इन सॉलिसिटरोंको एक पत्र लिखकर इस बातका खण्डन किया कि उन

१. यह **ट्रान्सवाल लीडर** तथा **स्टार**को लिखा गया था।

लोगोंको भारतीय समाजकी तरफसे और, इसलिए, मेरे संघकी ओरसे बोलनेका अधिकार है। ऊपर मैंने जिस पत्रका हवाला दिया है उसकी भाषा यह सिद्ध करनेके लिए काफी है कि सरकारको जो प्रार्थनापत्र भेजे गये वे कुछ व्यक्तियोंने अपनी निजी हैसियतसे भेजे थे, और अबतक उनमें से अधिकतर व्यक्तियोंका पंजीयन हो चुका है। इन प्रार्थनापत्रोंके उत्तरमें माननीय उपनिवेश-सचिवने प्रार्थियोंको सूचित किया था कि वे उनकी प्रार्थना स्वीकार करनेमें असमर्थ हैं; परन्तु उन्होंने विनियमोंमें कुछ छोटे-छोटे संशोधन कर दिये थे जिनका लगभग कोई मूल्य नहीं था। प्रिटोरियाके सॉलिसिटरोंने जिन लोगोंकी ओरसे यह काम किया था वे इस उत्तरसे इतने असन्तुष्ट हो गये थे कि उन्होंने सर्वश्री स्टैगमान, एसेलेन व रूज़की मारफत इस आशयका उत्तर भेजा कि वे अपने ३० अगस्तके पत्रमें की गई प्रार्थनाको वापस लेना चाहते हैं, और माननीय उपनिवेश-सचिवने जो सुविधाएँ देनेकी कृपा की हो उन्हें वे चाहें तो वापस ले लें। इस प्रकार यह साफ है कि भारतीय समाजने विनियमोंके मामलेमें माननीय उपनिवेश-सचिवके पास कोई प्रार्थनापत्र नहीं भेजा; और जो प्रार्थनापत्र भेजे गये वे कुछ विशेष व्यक्तियों द्वारा भेजे गये, तथा उन्हें भी उन्होंने पिछले महीनेकी १२ तारीखके पत्र द्वारा वापस ले लिया है।

अपने संघकी ओरसे मैं यह भी कहना चाहता हूँ कि यह आरोप बिलकुल गलत है कि भारतीय समाजने अब वह रुख अपनाया है कि जिसको अपनानेका, आन्दोलनकी प्रारम्भिक स्थितिमें, उसे साहस नहीं था। अगर उपनिवेश-सचिवके विभागको इस बातका पता नहीं है कि इस कानूनका अनाक्रामक प्रतिरोध सितम्बर १९०६ से ही किया जा रहा है तो समझना चाहिए कि उसे कुछ भी मालूम नहीं है। अनाक्रामक प्रतिरोधकी शपथ जोहानिसबर्गकी सार्वजनिक सभामें उसी माह ली गई थी और एशियाइयोंका पंजीयक खुद वहाँ मौजूद था। अधिनियमके मातहत बनाये गये विनियमोंके सवालमें किसी तरह भी पड़नेसे मेरे संघने बराबर इनकार किया है। मेरे संघने स्वयं इस अधिनियमकी वैधताको आरम्भसे ही नहीं माना है, इसलिए यदि वह इसके छोटे-मोटे ब्यौरेमें जाता तो यह उसकी शानके बहुत खिलाफ होता। मेरे संघने जब इन नियमोंके अस्तित्वकी ही उपेक्षा की है तो यह किसी तरह नहीं कहा जा सकता कि उसने उन कथित संशोधनोंका खण्डन किया होगा जो माननीय उपनिवेश-सचिवने समाजकी तथाकथित प्रार्थनापर ब्रिटिश भारतीयोंके हकमें किये थे। यह मान बैठना बिलकुल गलत है कि मेरे संघ और भारतीय समाजने अनाक्रामक प्रतिरोधका जो आन्दोलन छेड़ा है वह पंजीयनकी घोषणा होनेपर पिछले जुलाई मासमें शुरू किया गया। हमने तो पिछले साल आन्दोलन छेड़नेके समयसे ही इस अधिनियमको पूरी तरह रद करनेकी माँग कर रखी है।

मेरे संघने माननीय उपनिवेश-सचिवको अभी हालमें जो प्रार्थनापत्र भेजा है उसके बारेमें एक गौण प्रश्न उठाया गया है। इस प्रार्थनापत्रमें और बातोंके साथ-साथ यह भी लिखा गया था कि इसपर हस्ताक्षर करनेवाले अपनेको उस पत्रसे पूर्णतया असम्बद्ध घोषित करते हैं जो सर्वश्री स्टैगमान, एसेलेन व रूज़ने अपने मुवक्किलोंकी ओरसे माननीय उपनिवेश-सचिवको दिया था। इस प्रार्थनापत्रपर हस्ताक्षर करनेवालोंने विनयपूर्वक यह भी कहा था कि जो कठिन परिस्थितियाँ पैदा कर दी गई हैं वे इस अधिनियमको बिलकुल रद कर देनेसे ही दूर हो सकती हैं। इसमें कोई नई बात नहीं थी। आपके संवाददाताको सरकारी सूचना देनेवालेका

मंशा यह जाहिर करना था कि माननीय उपनिवेश-सचिवने पिछले सितम्बरके अपने पत्र द्वारा विनियमोंमें जो मामूली सुधार सूचित किये थे उनके कारण भारतीय समाजने एक कथित रियायतका फायदा उठाया और इस अर्जीको इसलिए घुमाया कि जो कार्य निःसन्देह कृपाका समझा जाना चाहिए था उससे और फायदा उठाया जाये। तथ्य तो यह है कि जैसे ही मेरे संघको इस वातका पता चला कि सर्वश्री स्टैगमान, एसेलेन व रूज़का ३० अगस्तका पत्र उपनिवेश-सचिवको भेजा गया है, मेरे संघने पाँच विभिन्न भाषाओंमें प्रार्थनापत्रके फार्म जारी किये और उनको सारे उपनिवेशमें भेज दिया। यह सितम्वरके आरम्भकी वात है। सितम्वरके अन्ततक जव माननीय उपनिवेश-सचिवका उत्तर प्रिटोरियाके सोलिसिटरोंके पास आया, वे सभी फार्म ठीक तरहसे भरकर मेरे संघको लौटाये जा चुके थे। लेकिन चूँकि पंजीयनका काम अन्तमें जोहानिसवर्गमें होना था और इस कामके लिए आखिरी महिना अक्तूवर था, मेरे संघने यह तय किया कि अक्तूवरके अन्ततक दरख्वास्तको रोक लिया जाये, जिससे सरकारके सामने एशियाई कानून संशोधन नियमके विरोधमें भारतीय समाजकी एकताका प्रत्यक्ष प्रमाण उपस्थित किया जा सके; और यह काम सर्वश्री स्टैगमान, एसेलेन व रूज़के मुवक्किलोंका पत्र १२ अक्तूवरको वापस ले लिया जानेके वावजूद किया गया।

अव मैं पंजीयनकी अवधिको नवम्वरके अन्ततक वढ़ानेके सवालकी संक्षेपमें चर्चा करूँगा। मेरा संघ इस वातको ज़ोर देकर कहता है कि यह फैसला अन्तिम क्षणमें किया गया था और मेरे संघके इस कथनका समर्थन वे वक्तव्य करते हैं जो मन्त्रि-परिषदके कमसे-कम तीन मन्त्रियों द्वारा किये गये थे। यदि इसकी और पुष्टिकी जरूरत हो तो वह उस परिपत्रसे हो जायेगी जो १६ अक्तूवरको उपनिवेश-सचिवके दफ्तरसे उपनिवेश-भरके आवासी मजिस्ट्रेटोंके पास भेजा गया था और जिसपर एशियाई-पंजीयकके हस्ताक्षर थे। उसमें कहा गया था कि आवासी मजिस्ट्रेट एशियाइयोंको सूचना दे दें कि "निश्चय किया गया है, पंजीयनके लिए प्रार्थना-पत्र देनेकी अवधि, जो ३१ अक्तूवरको समाप्त होती है, आगे नहीं वढ़ाई जा सकती", और विभिन्न जिलोंमें रहनेवाले सभी एशियाइयोंको इस वातकी सूचना दे दी जाये कि वे पंजीयनके लिए प्रार्थनापत्र ३१ अक्तूवरको या उससे पहले जोहानिसवर्ग-स्थित वॉन ब्रैंडिश स्क्वेयरके पुराने डच गिरजाघरमें दें। ये सूचनाएँ वहुत स्पष्ट थीं। और यह साफ जाहिर है कि माननीय उपनिवेश-सचिवने जव यह देखा कि सम्पूर्ण ट्रान्सवालसे २५ से अधिक प्रार्थनापत्र जोहानिसवर्गमें नहीं आये हैं तव उन्होंने, अन्तिम क्षणमें, प्रार्थनापत्र देनेकी अवधिको एक मास और वढ़ानेका निश्चय किया। इस तरह यह वात ध्यान देनेकी है कि पिछली ४ तारीखके 'गज़ट' में प्रकाशित हुई क्रम-संख्या १९०७ की सरकारी विज्ञप्तिमें उस अवधिको वढ़ानेकी कोई व्यवस्था नहीं थी, जिसमें पहलेसे पंजीयन न करानेवाले एशियाई नये कानूनके अनुसार पंजीयनके लिए प्रार्थनापत्र दे सकते थे।

आखिरमें मेरा संघ एक और वातकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता है। प्रत्येक नगरके निवासी एशियाइयोंके उसी नगरमें अर्जी देनेकी अवधि निश्चित करनेके वजाय यह विज्ञप्ति निकाल दी गई कि जिन नगरोंका दौरा पंजीयन-अधिकारी कर चुके हैं उन नगरोंके एशियाइयोंने यदि पहले अर्जियाँ न दी हों तो वे नव-विज्ञापित नगरमें अर्जियाँ दे सकते हैं। और चूँकि जोहानिसवर्ग वह अन्तिम विज्ञापित स्थान था, जहाँ ट्रान्सवाल-भरके एशियाई अपना पंजीयन करा सकते थे, तथा अन्य किसी स्थानपर नहीं, इसलिए मेरा संघ पंजीयक-

कार्यालयके अफसरोंपर यह आरोप लगाता है कि उन्होंने कुछ ऐसे कायरोंसे गुप्त रूपसे प्रिटोरियामें प्रार्थनापत्र लिये, जिन्होंने जाली तरीकेसे झूठे हलफनामे पेश किये और झूठे बयान दिये कि कुछ व्यक्तियोंके, जिनके नाम नहीं बताये गये, डराने-धमकानेसे वे पहले प्रार्थनापत्र नहीं दे सके थे। मेरा संघ एक बार फिर यह बतला देना चाहता है कि भारतीय लोग इस युद्धमें निश्छल रूपसे लड़ रहे हैं, अतएव उनको धोखे या असत्यका आश्रय लेनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। भारतीयोंके विरुद्ध यह कहा गया है कि वे, दूसरे सभी प्राच्य लोगोंके समान, दुरंगी चाल चलते हैं, जिसके लिए "प्राच्य" शब्दका प्रयोग किया गया है। आपके संवाददाताके तारमें तथ्योंको जिस विचित्र ढंगसे तोड़ा-मरोड़ा गया है उसका चित्रण करना बहुत कठिन है।

[आपका, आदि,
ईसप इस्माइल मियाँ
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-११-१९०७

२६२. श्री लैबिस्टर

श्री लैबिस्टरके दुःखद अवसानसे नेटाल और भी दरिद्र हो गया है। श्री लैबिस्टरके रूपमें नेटालके वकील संघका एक चतुर तथा प्रसन्नचित्त सदस्य, सरकारका एक विश्वस्त सेवक और भारतीयोंका एक सच्चा मित्र उठ गया। न्यायाधीशोंने उन्हें जो श्रद्धांजलि अर्पित की उसके वे योग्य पात्र थे। जब वे नगर-परिषद्‌के सदस्य थे, तब विक्रेता परवाना अधिनियमके सम्बन्धमें उन्होंने जो वीरतापूर्ण रुख अपनाया था[1] उसके लिए भारतीय सदा उन्हें कृतज्ञतापूर्वक याद करते रहेंगे। यहाँ यह भी कहा जा सकता है कि यद्यपि जनताको इस बातका पता नहीं, किन्तु वे श्री लैबिस्टर ही थे जिन्होंने भारतीयोंके प्रवेशको नियमित करनेके बारेमें अपनी नीतिपर दृढ़ रहते हुए भी अपनी व्यवहार-कुशलतासे अनेक भारतीय व्यापारियोंको बरबादीसे बचाया था; क्योंकि उन्होंने उन भारतीयोंपर मुकदमा चलानेसे इनकार कर दिया था जिनके परवाने, उनके पुराने व्यापारी होते हुए भी, व्यापारिक ईर्ष्याके कारण छीन लिये गये थे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-११-१९०७

१. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३३ और ४७४।

२६३. ईद मुबारक

हम कामना करते हैं कि हमारे मुसलमान पाठकोंको ईद मुबारक हो! मनुष्य बहुत बातोंकी कामना करता है, किन्तु सारी कामनाएँ पूरी नहीं हो सकतीं। इसी प्रकार यद्यपि हम चाहते हैं कि हमारे मुसलमान भाइयोंको ईद मुबारक हो, फिर भी जितना हमें ज्ञान है उसके अनुसार खुदाई नियम तो यह है कि जिसने रमजान शरीफका उच्च तरीकेसे पालन किया हो उसीको ईदका फल मिल सकता है। हमने तो यह पढ़ा और देखा है कि केवल रोजा रखनेसे यह नहीं माना जा सकता कि रमजान शरीफका पालन हो गया। रोजा तो मन तथा शरीर दोनोंसे रखा जाना चाहिए। यानी अन्य महीनोंमें नहीं तो कमसे-कम रमजानके महीनेमें पूरी तरहसे नीतिके नियमोंका निर्वाह करना चाहिए, सत्यका पालन करना चाहिए और क्रोधमात्रका त्याग करना चाहिए। जिसने इतना किया होगा उसके लिए हमारी कामना विशेष रूपसे सफल हो सकेगी, ऐसी हमारी धारणा है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९–११–१९०७

२६४. नया वर्ष शुभ हो

जैसे हमने अपने मुसलमान भाइयोंको ईदकी मुबारकबादी दी है, वैसे ही हम अपने हिन्दू पाठकोंके लिए कामना करते हैं कि उन्हें नया वर्ष फले। नया वर्ष शुरू होनेके बाद यह हमारा पहला अंक है। हम देखते हैं कि ट्रान्सवालमें और, सच कहा जाये तो, सारे दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय प्रजा कष्ट भोग रही है। उन कष्टोंके परिणामस्वरूप लोगोंमें जैसे स्वदेशाभिमानका उत्साह बढ़ा है, वैसे ही उनकी दृष्टि देशकी ओर ज्यादा गई है; और धर्मकी ओर भी कुछ झुकाव हुआ है।

हिन्दू हिन्दूधर्मकी ओर अधिक आकर्षित दिखाई देते हैं, मुसलमान इस्लामकी ओर, और दूसरे भारतीय अपने-अपने धर्मोंकी ओर। यही ठीक भी है। हमारा दृढ़ मत है कि यदि भारतका कल्याण होना होगा तो इसी मार्गसे होगा। हर धर्मवाले यदि अपने-अपने धर्मका सच्चा रहस्य समझ जायें, तो आपसमें द्वेष कर ही नहीं सकते। जलालुद्दीन रूमीके कहे अनुसार, या जैसा श्रीकृष्णने अर्जुनसे कहा है उसके अनुसार, नदियाँ बहुत हैं और अलग-अलग दिखाई देती हैं, फिर भी सबका मिलाप समुद्रमें होता है। उसी प्रकार धर्म भले ही बहुत हों, फिर भी सबका सच्चा उद्देश्य एक ही है; खुदा या ईश्वरका दर्शन कराना। अतः उद्देश्यकी दृष्टिसे धर्मोंमें भेद नहीं है। हम लिखते हुए ऊपर कह गये हैं कि भारतीयोंको नया वर्ष फलीभूत हो। किन्तु जैसे ईद कुछ शर्तोंका निर्वाह करनेपर ही मुबारक हो सकती है — यह साफ मालूम होता है, उसी प्रकार नया वर्ष भी अमुक शर्तोंपर ही फल सकता है। इतना कहनेके बाद इस सम्बन्धमें विवेचन करनेकी आवश्यकता नहीं रहती कि वे शर्तें कौन-सी हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९–११–१९०७

२६५. समझदारके लिए इशारा

हममें एक कहावत है कि समझदारके लिए इशारा काफी है। चारों ओर जो लक्षण दिखाई दे रहे हैं उनसे यही प्रकट होता कि यदि भारतीय समाज आखिरतक लड़ता रहा तो जीतेगा। जीता हुआ तो आज ही है। किन्तु प्रतिष्ठापूर्वक ट्रान्सवालमें रह सकेगा। 'फ्रैंड' का लेख हम देख चुके हैं।[1] अवधि नवम्बर तक बढ़ा दी गई है, यह हम देखते हैं। इससे सरकारकी कमजोरी प्रकट होती है। जो गोरे पहले भारतीय प्रश्नकी बात शायद ही कभी करते थे वे अब उसीकी बात करते रहते हैं। 'लीडर' जैसा अखबार सरकारको चेतावनी दे रहा है कि वह धीरज रखे, ब्रिटिश नीतिको याद करे, अपनी जिम्मेदारी समझे और भारतीयोंके साथ न्याय करे।

जैसे एक ओरसे ये सब शकुन दिखाई दे रहे हैं, वैसे ही दूसरी ओरसे सच्ची कसौटीका समय नजदीक आता जा रहा है। बोलनेमें हम हमेशा होशियार कहलाये हैं। आरम्भ-शूर भी कहलाये हैं। अब अन्तिम समयमें हम ठिकानेपर रहेंगे या नहीं, यह देखना है। यदि आखिरी ताकत नहीं लगायेंगे तो आजतकके किये-करायेपर पानी फिर जायेगा। जो लड़ाई भारतीयोंके बिना माँगे हाथ आ गई है, वैसी फिर आनेवाली नहीं है। लक्ष्मी जब तिलक लगाने आई है तब यदि भारतीय मुँह छिपायेंगे तो फिर कभी ऐसा मौका हाथ नहीं आयेगा। लड़ाई जोखिम है भी और नहीं भी। जो पैसेसे चिपटे हुए हैं, उन्हें सहज ही जोखिम मालूम होगी। किन्तु जो सिर्फ देशके सेवक हैं, जो टेकवाले हैं, उनके लिए तो जोखिम रत्ती-भर भी नहीं है। कानून उनके लिए है ही नहीं। कानूनके खिलाफ जूझनेपर भी यदि वह रह जाये तो इसमें उनकी हार नहीं होगी। वे परीक्षामें सौ टका खरे उतरेंगे और जहाँ जायेंगे वहीं उनका मूल्य ऊँचा होगा। इतना जोश रखे बिना जीत हो ही नहीं सकती। जो सिरपर कफन बाँध कर जाते हैं वे ही जीत कर आते हैं। इस लड़ाईमें सच्चा सहारा खुदा — ईश्वर — का है। उसके सामने कोई शर्त नहीं रखी जा सकती। शर्त रखनेके बाद भरोसा नहीं रखा जा सकता। इस विचारको ठीक मानकर भारतीय समाज अन्ततक एक टेकवाला बना रहे, यही हमारी ईश्वरसे प्रार्थना है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-११-१९०७

१. देखिए "ब्लूमफॉंटीनका मित्र: फिर भारतीयोंकी सहायतापर", पृष्ठ ३२५-२८।

२६६. बढ़ाई गई अवधि

ट्रान्सवाल सरकारने 'पियानो बजाने' की अवधि बढ़ा दी है, सो क्यों? इस प्रश्नका उत्तर सरकारी नोटिसमें ही है: "सरकारके सामने यह बात पहुँची है कि डर या अन्य कारणोंसे भारतीय पंजीयनके लिए अर्जी नहीं दे सके।" इसलिए अवधि बढ़ाई गई है। सरकारके पास इस प्रकारकी अर्जी भेजनेवाले भारतीयको क्या कहा जाये? क्या उसे भारतीय कहा जा सकता है? उसे मनुष्य कहा जा सकता है? अर्जी भेजनेवाला जानता है कि ऐसा करके उसने एक बहुत बड़े झूठका काम किया है। कोई भी व्यक्ति डर नहीं दिखाता और यदि डर दिखाया ही हो तो क्या वह अब बन्द है? धरनेदार अपना काम करते ही रहेंगे। समझानेवाले समझाते ही रहेंगे। फिर यदि अक्तूबरमें डरके कारण नहीं जाया जा सका तो नवम्बरमें कैसे जाया जायेगा? यदि मियाद माँगनी ही थी तो सीधे रास्ते माँगी जा सकती थी। मियाद न मिल सकती तो भी जिन्हें मुँह काला करना होता वे तो कर ही सकते थे। फिर भी इस सम्बन्धमें कुछ भी कहना बेकार है। एक गलतीके पीछे हमेशा कई गलतियाँ हुआ करती हैं। सरोवरका बाँध टूट जाये तो दरार बढ़ती ही जाती है। पंजीयनपत्र लेना गुनाह है, इसे लेनेवाला समझता है। इसलिए वह दूसरे अपराध करनेसे शरमाता नहीं, न डरता ही है। इतनी अधम स्थिति खूनी कानूनके सामने झुकनेवालेकी हो जाती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९–११–१९०७

२६७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

हमीदिया इस्लामिया अंजुमन

हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी बैठक नियमानुसार रविवारको हुई थी। बहुत लोग उपस्थित थे। इमाम अब्दुल कादिर अध्यक्ष थे। श्री मुहम्मदखाँने श्री हाजी हबीबका पत्र पढ़कर सुनाया। वह पत्र प्रिटोरियाकी अंजुमनकी ओरसे आया था, और उसमें इस अंजुमनको इसके कामके सम्बन्धमें और धरनेदारोंको उनकी बहादुरीके सम्बन्धमें बधाई दी गई थी। बादमें श्री गांधी, श्री उमरजी साले तथा श्री एम० एस० कुवाड़ियाने कुछ बातें समझाईं और यह विचार पेश किया कि प्रत्येक व्यक्ति अपने सगे-सम्बन्धियोंको लिखे कि नवम्बर महीनेमें कोई भी प्रिटोरिया न जाये; और यदि किसी कामसे जाना ही पड़े तो भी पंजीयन कार्यालयमें तो जाये ही नहीं। इस बातको सबने स्वीकार किया।

चीनियोंकी सभा

चीनियोंकी अपनी सभा हर रविवारको होती है। इस बार चीनी वाणिज्य दूत उपस्थित थे। श्री गांधीको विशेष तौर से बुलाया गया था। उन्होंने नवम्बरकी बात सुनाई और सभाने प्रिटोरियाको चीनी स्वयंसेवक भेजनेकी व्यवस्था की।

नवम्बरमें "महामारी"

सबको डर था महामारी-स्वरूप पंजीयन कार्यालय शायद नवम्बरमें खुलेगा। हमने पिछले सप्ताहके 'इंडियन ओपिनियन' में देख लिया कि यह सत्य निकला। इस तरह कार्यालय खोलकर सरकारने साफ अपनी कमजोरी बताई है। यदि जनरल स्मट्समें भारतीयोंको देश-निकाला देनेकी हिम्मत होती तो वे नवम्बरमें अर्जी देनेकी मोहलत कभी न देते। कहाँ गया अक्तूबरका वह नोटिस, जिसमें लिखा गया था कि इस महीनेकी ३१ तारीखके बाद किसीका पंजीयन नहीं किया जायेगा? कहाँ गये गाँव-गाँवको लिखे वे पत्र, जिनमें सूचित किया गया था कि सबके लिए अक्तूबरमें अर्जी देनेका अन्तिम मौका है? हमें बताया — समझाया — जाता है कि जनरल स्मट्स अपना हठ कभी नहीं छोड़ते। किन्तु ['इंडियन ओपिनियन' के] सम्पादक महोदयने हमें बताया है कि स्मट्स साहब तीन बार दबावके कारण अपना हठ छोड़ चुके हैं। अब फिर यह चौथी बार अक्तूबरका नोटिस छूटा है। कोई यह प्रश्न पूछ सकता है कि इस बार उन्हें किस बातका डर था? इसका उत्तर सीधा है। उनपर बड़ी सरकारकी ओरसे निजी तौरपर यह दबाव होगा कि वे किसी भारतीयपर हाथ नहीं डाल सकते। यह अनुमान ठीक न हो तो शायद यह ठीक होगा कि श्री स्मट्सको अपनी इज्जत जानेका डर लग रहा है। चींटीको कुचलनेमें हाथीको बहुत विचार करना पड़ता है। स्मट्स साहब अपने मनसे हाथी हैं, और हम चींटी हैं। इसलिए चींटीको कुचलनेमें शरम आती है।

कमजोरीका दूसरा उदाहरण

पिछले सप्ताह मैं बता चुका हूँ कि अफवाह ऐसी है कि श्री गांधीपर सबसे पहले वार किया जायेगा, और सबको निर्वासित करनेकी तैयारी की जा रही है। अब मेरे हाथमें इस प्रकारका पत्र आया है।

काछलिया और रूज़के बीच हुई बातें

श्री काछलिया कहते हैं:

> श्री रूज़के साथ मेरी बातचीत हुई थी। उन्होंने कहा था कि यहाँकी सरकारकी योजनाके अनुसार नेटाल सरकारने स्वीकृति दी है कि जब ट्रान्सवाल सरकार लोगोंको निर्वासित करेगी उस समय गाड़ीको बालाबाला बन्दरगाहपर ले जाकर उन्हें सीधे जहाजपर चढ़ा दिया जायेगा। फिर उन्होंने विशेष जोर देकर कहा कि श्री गांधीको तो निर्वासित करना सरकार तय कर चुकी है।

यदि श्री गांधीको सबसे पहले निर्वासित किया जाये, तो उनके समान भाग्यवान और कौन होगा? और यदि वैसा हो तो भारतीय समाजमें घबड़ाहट पैदा होनेके बजाय हिम्मत ही पैदा होगी। किन्तु इस प्रकार देश-निकाला देनेकी सत्ता अभी तो ट्रान्सवालको प्राप्त नहीं है, और उसे मिलनेमें देर लगेगी। श्री रूज़की कही बात सरकारकी फूँ-फाँ है, यह साफ नजर आता है।

कैदी और गुलामीकी चिट्ठी लेनेवालेमें क्या अन्तर है?

ऐसी खबर मिली है कि अठारह अँगुलीवाले कागज पंजीयकके दफ्तरमें नहीं रहते। वे सब पुलिसके सुपुर्द कर दिये जाते हैं। जिस पुस्तकमें अपराधियोंका नाम दर्ज रहता है, उसीमें इन

'बहादुर' भारतीयोंका नाम भी दर्ज रहेगा। यानी हर प्रकारसे कानूनके सामने झुकनेवाला अपराधी सिद्ध हो जाता है। अन्तर केवल इतना ही है कि चोर तो चोरी करके अपराधी ठहरता है और गुलामीका चिट्ठा लेनेवाला भारतीय केवल अपनी नामर्दीके कारण गुनहगार माना जाता है। इन दोनोंमें अधिक खराब कौन है, इसका निर्णय पाठक स्वयं करें। अठारह अँगुलियोंकी याद करते हुए बचपनकी एक कविता याद आ जाती है: "ऊँटके टेढ़े-मेढ़े शरीरमें अठारह बल होते हैं; बताओ उसे ढका जाये तो वह ढका कैसे रहे?"[1] ऐसा ही कुछ हाल अठारह अँगुलियाँ लगानेवाले भारतीयका भी मानें।

पूछताछ बिना

देशमें जब वर्षा बहुत होती है तब हरी सब्जी सस्ती हो जाती है। उसी प्रकार इस समय पंजीयन कार्यालयकी वर्षा हो रही है, इसलिए पंजीयन-पत्रोंका भाव सस्ता हो गया है। कहा जाता है कि लड़कोंको बिना पूछे ही पंजीयक महोदय पंजीकृत कर लेते हैं। इसमें मैं कोई दोष नहीं देख रहा हूँ। गुलाम बननेमें कहीं भी कठिनाई नहीं होती। परन्तु यह सब तो शिकारको पकड़नेके लिए लार टपक रही है, ऐसा समझकर इससे दूर रहना चाहिए। इस टीकाकी आवश्यकता नहीं है। किन्तु मैं कभी-कभी सुनता हूँ कि "फलां व्यक्ति पंजीयन कराकर काम निकाल आया।" यह खयाल उसीको होता है जो कानून और हमारी लड़ाईको नहीं समझता। बाकायदा पंजीकृत होनेमें लाभ हो तो हमारी लड़ाई गलत है और पंजीयन करवाना कर्तव्य हो गया है, ऐसा कहा जायेगा। किन्तु पंजीयन करवानेमें नुकसान है, पाप है, प्रतिज्ञासे भ्रष्ट होना है, इसलिए हम पंजीकृत नहीं होते। फिर, पंजीयनपत्र लेनेमें "काम निकाल लिया", यह कैसे कहा जा सकता है? हमारी लड़ाई मर्द बनने और मर्द बने रहनेकी है। फिर यदि कोई औरत बन जाये तो उसे हम "काम निकालना" क्यों समझें? हमें अपने मनमें इतना लिख रखना चाहिए कि जो पंजीकृत नहीं हुए वे आजाद हैं और आजाद रहेंगे। और ट्रान्सवालमें सम्मानपूर्वक रहा जा सकेगा तभी रहेंगे। तब जिन्होंने पंजीयन करवाया है उन्होंने तो अखण्ड गुलामी स्वीकार की है।

'ट्रान्सवाल लीडर' द्वारा सहायता

जिस प्रकार ब्लूमफॉंटीनका 'फ्रेंड' मदद कर रहा है, उसी प्रकार ट्रान्सवालके अखबार भी आखिर मदद करने लगेंगे, ऐसे लक्षण दिखाई दे रहे हैं। बहुत-से गोरे तो सहानुभूति दिखाने लगे हैं। अखबार हमारी मदद करें या न करें, 'लीडर' ने अपने सोमवारके अंकमें जो लेख लिखा है वह हमें हिम्मत बँधाने लायक है। उसका सारांश नीचे देता हूँ:

कैसे?

> कुछ भारतीयोंकी माँगके कारण सरकारने पंजीयनकी अर्जीके लिए एक महीनेकी अवधि और बढ़ाई है। महीना बीत जानेपर सरकार क्या करेगी, यह नहीं बताया गया। अवधि बढ़ानेका प्रस्ताव बहुत ही देरसे किया गया होगा, क्योंकि नोटिस दिया जानेके एक दिन पहले ही श्री सॉलोमनने घोषित किया था कि अवधि नहीं बढ़ाई जायेगी। क्या आखिरी घड़ी तक इस निर्णयका पता नहीं चला था? भारतीयोंकी अवधि बढ़ाने-

१. अढारे वक्र्यां ऊँटना अंग वांका; कहो, ढांकिये तो रहे केम ढांक्या?

सम्बन्धी सारी अर्जियाँ शुक्रवारके दिन ही भेजी गई थीं। सरकारकी इस मेहरबानीके लिए किन्हीं प्रमुख एशियाइयोंने एहसान माना हो तो उनके नाम प्रकाशित किये जायें। इससे दूसरोंपर भी उसका असर पड़ेगा। हमारा खयाल है कि ऐसा आभार किसीने नहीं माना और प्रमुख तो विरोधपर दृढ़ ही हैं। उनका यह भी कहना है कि सरकारको देश-निकाला देनेका अधिकार है ही नहीं। वे अपने समर्थनमें श्री लेनर्डकी राय पेश करते हैं।

इसके अतिरिक्त, श्री रेमंड वेस्ट जैसे योग्य व्यक्ति भी मानते हैं कि कानून ब्रिटिश नीतिके विपरीत है। सरकार यदि प्रवासी अधिनियमपर भरोसा रखती हो तो क्या वह मानती है कि भारतीय समाज उस कानूनको सम्राट्की न्याय परिषद तक नहीं ले जायेगा? फिर, यदि सरकारको निर्वासित करनेकी सत्ता मिल जाये तो उस सत्ताके बलपर उसे भारतीयोंको भारतमें भेज देना चाहिए। ऐसा होगा तो क्या भारत सरकार उसमें हस्तक्षेप नहीं करेगी? मोटे तौरसे देखें तो मालूम होता है कि श्री हॉस्केनके सिवा सभी गोरे भारतीयोंके विरुद्ध हैं। किन्तु गहराईसे देखनेपर मालूम होता है कि एशियाइयोंको निकाल भगानेका सरल रास्ता गोरे ग्रहण नहीं करते। यदि वे भारतीयोंसे व्यवहार बन्द कर दें, तो भारतीय कैसे रह सकते हैं? भारतीय नौकर पंजीयनपत्र लें या न लें, इसपर उनके गोरे मालिक कोई आपत्ति नहीं करते। कोई यह नहीं कह सकता कि भारतीयोंका विरोध सामान्य गोरे करते हैं। अतः वास्तविक स्थिति प्रेक्षकको एकदम मालूम नहीं हो सकती। यह सवाल बड़ा उलझन-भरा जान पड़ता है। इसलिए यदि इसपर फिरसे विचार करना आवश्यक हो तो सभी बड़े लोगोंको निष्पक्ष तरीकेसे विचार करना चाहिए। जनरल स्मट्स और श्री गांधीको एक बहुत ही कठिन प्रश्नका हल खोजना है। मुसाफिरीकी सुविधाओंके बारेमें पूर्व और पश्चिमके सम्बन्धोंमें बहुत ही परिवर्तन हुआ है। एशियाई जो पहले यात्राएँ नहीं करते थे अब निकलने लगे हैं। वे मितव्ययी और विनयी हैं। वे इतनी सादगीसे रहते हैं कि उतनी सादगी यूरोपीयोंसे नहीं निभ सकती। हम उनके देशमें जाते हैं। किन्तु उनके हजारोंकी जगह हमारे जानेवाले लोग अँगुलियोंपर गिने जा सकते हैं। और जब उनका वश चलता है, वे उन्हें जानेसे रोकते हैं। किन्तु एशियाई स्वयं स्वीकार करते हैं कि ट्रान्सवालमें भारतीयोंको बे-रोकटोक नहीं आने देना चाहिए। यहाँके गोरे स्वीकार करते हैं कि जो भारतीय यहाँ आ गये हैं और हकदार हैं, उनके साथ न्याय होना चाहिए। अतः यह प्रश्न रहता है कि दूसरोंको आनेसे किस प्रकार रोका जाये। एशियाइयोंका कहना है कि सरकारने जो तरीका निकाला है वह अनुचित और हलके दर्जेका है। क्या सरकारने सभी तरीके आजमा कर देख लिये हैं? हस्ताक्षरोंसे, फोटोसे, या ऐसे ही तरीकोंसे काम नहीं चलेगा? भारतीय तौर-तरीके समझनेवालोंके साथ सरकारने मशविरा किया है? यदि सरकारको मदद चाहिए तो बहुत लोग मदद करेंगे। यदि उठाये हुए कदम वापस लेने पड़ें तो हमें आशा है कि सरकार प्रतिष्ठाका खयाल करके आगा-पीछा नहीं करेगी। यूरोपीय और अधिक एशियाइयोंको आनेसे रोकना चाहते हैं; किन्तु साथ ही यह भी चाहते हैं कि ट्रान्सवाल ब्रिटिश राज्यका अंग है, इसे न भूला जाये। सरकारको हमारी परम्परासे चली आ रही न्यायीकी न्याय-बुद्धिको कायम रखना चाहिए। यदि सरकार

अन्याय करेगी और वह भी निरपराध और निर्बलोंके साथ, तो उसकी राजनीतिको बट्टा लगेगा और सरकार हार जायेगी।

इस सुन्दर लेखमें केवल एक ही भूल यह है कि 'लीडर' का लेखक मानता है, लड़ाई केवल अँगुलियोंकी निशानी लेने-देनेके सम्बन्धमें ही है। इस भूलसे कुछ नहीं बिगड़ता। 'लीडर' जैसा अखबार सरकारको पीछे हटने और न्याय करनेकी सलाह देता है, इससे प्रकट होता है कि हवाका रुख बदलनेपर आ गया है। प्रश्न केवल यह है कि भारतीयोंको अब जो जोर दिखाना है, वह दिखायेंगे या बैठे रहेंगे?

नाइयोंको चेतावनी

जोहानिसबर्ग नगरपालिकाने नाइयोंके लिए नियम बनानेका प्रस्ताव किया है। और चूँकि नियमोंका पास हो जाना सम्भव है, इसलिए उनका सारांश नीचे देता हूँ:

१. नाई अपनी दूकानें बिलकुल साफ रखें। उनकी बनावट ऐसी होनी चाहिए कि उनमें हवा आ-जा सके।

२. बाल काटनेके यन्त्र, कैंची, उस्तरे, कंघे और ब्रश हमेशा साफ रखे जाने चाहिए।

३. हजामत करते समय नाईको झग्गा पहनना चाहिए। वह झग्गा गले तक पहुँचना चाहिए। नाईको अपने हाथ अच्छी तरह साफ रखने चाहिए।

४. स्वयं नाईको या उसके नौकरको कोई चर्म रोग या संक्रामक रोग हो तो वह हजामत न बनाये।

५. जनवरीकी पहली तारीखके बाद नाईकी हर दूकान पंजीकृत होनी चाहिए। परिषद यह पंजीयन मुफ्त करेगी।

६. सफाई निरीक्षक या डॉक्टरको किसी भी नाईकी दूकानमें प्रवेश करनेका हक है।

इन नियमोंकी एक प्रति प्रत्येक नाईकी दूकानमें लगाई जाये। परिषदने निम्न बातोंकी सिफारिश की है:

१. हर मेजपर काँच, संगमरमर, स्लेट या जस्तेका पतरा बिछा होना चाहिए।

२. हर ग्राहकके लिए साफ रूमाल काममें लाया जाये और सिर टिकानेकी जगह हर बार साफ रूमाल अथवा साफ कागज रखा जाये।

३. हजामत बनानेके लिए दो ब्रश रखे जायें। उन्हें कृमिनाशक पानीमें रखा जाये और पानीमें रखे हुए ब्रशका उपयोग किया जाये।

४. साबुनका पानी, पाउडर या साबुनकी लम्बी टिकियाका उपयोग करना चाहिए।

५. उस्तरेको साफ कागजपर घिसा जाये और उस्तरा तथा दूसरे औजारोंको काममें लानेके बाद चार-पाँच मिनट तक जन्तुनाशक पानी में रखा जाये। दो छोटे चम्मच-भर सीलिव[1] या केरोल[2] एक क्वार्ट पानीमें मिलाकर जन्तुनाशक पानी तैयार किया जाये। या इतने ही पानीमें इजॉलके तीन चम्मच डाले जायें।

१-२. ये कृमि-नाशक दवाओंके व्यापारिक नाम मालूम होते हैं।

६. हजामत बनानेके बाद फिटकरीकी गुल्लीका उपयोग न किया जाये, बल्कि फुहारी या साफ रुईको गीला करके उपयोगमें लाया जाये।

७. स्पंजका बिल्कुल उपयोग न किया जाये, बल्कि उसकी जगह रुई आदिका उपयोग किया जाये।

८. पाउडर लगानेके फूलकी जगह रुईका उपयोग किया जाये।

९. ब्रशके बाल सफेद होने चाहिए और उसे दिनमें एक बार पानी, साबुन और सोडेसे धोया जाना चाहिए।

१०. बाल बारीक काटते समय गलेपर गिरते हैं। उन बालोंको हज्जाम मुँहसे फूंक कर न उड़ाये, बल्कि झाड़ दे।

११. कटे हुए बाल झाड़कर एक कोनेमें लगानेके बजाय किसी ढक्कनवाले बर्तनमें रखे जायें।

उपर्युक्त नियम तथा सूचनाएँ सभी नाइयोंको ध्यानमें रखनी चाहिए। उन नियमोंके अनुसार जो व्यक्ति काम नहीं करेगा, उसको दण्ड होगा, इतना ही नहीं; बल्कि हमें यह भी स्वीकार करना चाहिए कि इतनी सफाई रखना प्रत्येक नाईका कर्तव्य है। देशमें नाइयोंकी लापरवाही अथवा गंदगीसे परस्पर छूत लगनेके कारण दाद, खुजली आदि बीमारियाँ होती हैं। जो नाई उपर्युक्त नियमोंके अनुसार चलेंगे उनका फायदा होगा और माना जायेगा कि उन्होंने सच्ची एवं आवश्यक तालीम ले ली है। इसमें खर्चकी नहीं, इच्छाकी जरूरत है।

सरकारी स्पष्टीकरण

नवम्बरका नोटिस आगे क्यों बढ़ाया गया, इसके बारेमें सरकारने स्पष्टीकरण किया है। वह स्पष्टीकरण ही सरकारको दोषी साबित करता है। सरकारको यदि डर नहीं था तो नवम्बर तक अवधि बढ़ानेकी क्या जरूरत थी? सरकारने कारण बताया है कि नवम्बरमें बिल्कुल काम ही न था, इसलिए एशियाइयोंपर मेहरबानी की। यह बात तथ्यानुरूप नहीं है। क्योंकि नवम्बरमें गिरफ्तारियाँ नहीं करनी हैं, यह सरकारको मालूम था। फिर यदि ऐसा ही था तो घर-घर सिपाही क्यों भेजे गये? यह भी देखना है कि सरकारने अब भारतीयोंकी अर्जीकी बात छोड़ दी है। इस विचित्र स्पष्टीकरणका उद्देश्य 'लीडर' के लेखका जवाब देना है। 'लीडर' ने, जिन-जिन 'मुखियों' ने अर्जी दी है, उनके नाम माँगे हैं, किन्तु ऐसे नाम तो हैं ही नहीं। इसलिए सरकार दे कहाँसे? अन्तमें सरकार स्पष्टीकरणमें कहती है कि दिसम्बरसे तो कानून अमलमें आयेगा ही। यह चेतावनी कितनी बार दी जायेगी? बहुत बार 'भेड़िया आया' का शोर मचाया जानेके कारण जैसे गड़रिये निर्भय हो गये थे, वैसे ही भारतीयोंका समाज भी निर्भर हो गया है। यहाँतक कि जब दरअसल भेड़िया आया था तब किसी गड़रियेने नहीं माना कि भेड़िया आया है। किन्तु सच्चा कानून रूपी भेड़िया आयेगा तब भी भारतीय डरें, इसके लिए कोई कारण नहीं मालूम होता। क्योंकि जेल या देश-निकाला रूपी भेड़ियेको तो भारतीय-समाज फाड़कर खा गया है। इसलिए सरकारका भेड़िया भले आता रहे।

गोरे नरम होने लगे हैं

'रैंड डेली मेल' में समाचार है कि श्री गांधी और दूसरे भारतीयोंने प्रिटोरियाकी सार्वजनिक सभामें साफ कहा है कि भारतीय समाज अँगुलियाँ लगाना कभी स्वीकार नहीं करेगा।

इस बातसे ट्रान्सवालके भारतीयोंमें अधिक उत्साह पैदा होगा। क्योंकि अब सरकार तथा गोरे सोचमें पड़ गये हैं कि किस प्रकार यह उलझन-भरी समस्या हल हो; और इसलिए हम क्या चाहते हैं, इसे समझनेका प्रयत्न करते हैं। अँगुलियाँ लगानेकी ओर यद्यपि हमने बहुत ही तिरस्कार दिखाया है और अँगुलियाँ लगानेकी शर्तके कारण हमारी लड़ाईको बल मिला है, फिर भी सबसे बातचीत करते समय हमें इतना अवश्य कहना चाहिए कि यह लड़ाई इस बातकी नहीं है कि अँगुलियाँ ली जायें या न ली जायें, बल्कि भारतीयोंकी प्रतिष्ठाकी है। सरकार हमें पछाड़ना चाहती है और हम पछाड़े जाना नहीं चाहते। सरकारने हमें गुलाम बनानेके लिए कानून बनाया है और उस कानूनको मरने तक हम स्वीकार नहीं करेंगे, यह लड़ाई इस प्रकारकी है।

पीटर्सबर्गकी ओरसे पश्चात्ताप

पीटर्सबर्गसे श्री गनी इस्माइल और श्री हासिम मुहम्मद काला लिखते हैं कि नये पंजीयन-पत्रके लिए जोहानिसबर्गमें अर्जी देनेके बाद दोनोंको पश्चात्ताप हो रहा है। उस पश्चात्तापकी सीमा नहीं रहती। कानूनके लागू हो जानेपर उनकी क्या हालत होगी, इसे सोचकर उनका दिल फटने लगता है। ये शब्द उन दोनों भारतीयोंके हैं। उन्होंने विशेष यह लिखा है कि उन्हें केवल पहुँच मिली है, गुलामीकी चिट्ठी नहीं मिली। अर्जी वापस लेनेका यदि कोई उपाय हो तो वे जानना चाहते हैं। यदि अर्जी वापस लेनी हो तो मैं कह सकता हूँ कि वह बात अत्यन्त सरल है। जिस प्रकार श्री चेनटांग (पंजीकृत चीनी) ने पंजीयनपत्र फेंक दिया था, उसी प्रकार उन्हें भी अपनी अर्जी वापस ले लेनी चाहिए। यदि खूनी पंजीयनपत्र न लेना हो, तो मार्ग बहुत ही सरल है। पंजीयनपत्र लेनेके लिए प्रिटोरियाकी यात्रा फिर करनी होगी और पंजीयनपत्रोंपर अँगूठेकी निशानी देनी होगी। इन दोनों बातोंके लिए वे साफ इनकार कर सकते हैं। इस तरह वे मुक्त रह सकेंगे। पंजीयनपत्र लेने जानेके लिए वे बँधे हुए नहीं हैं और यदि न जायें तो सहज ही बिना गुलामीके चिट्ठेके रह सकेंगे। मुझे आशा है कि यह पश्चात्ताप वास्तविक है, केवल ऊपरी भावावेश नहीं है। और यदि वह वास्तविक ही होगा तो इससे दूसरे भारतीयोंको भी बल मिलेगा। इन दोनोंको मेरी सलाह है कि वे श्री शेख मुहम्मद इशाकका[1] उदाहरण याद रखें।

कायरका प्रेम शत्रुता है

मुझे खबर मिली है कि श्री इस्माइल हाजी आमद कोड़थाने मेफिकिंगसे जुलाईमें मेमन लोगोंके नाम तार भेजकर हिम्मत दिलाई थी कि वे दृढ़ रहें और अपना मुँह काला न करें। यही भाई प्रिटोरियामें पधारकर और गुलामीका पट्टा लेकर इस पत्रमें "अमर" हो गये हैं। ऐसे बड़े-खाँ प्रोत्साहनके लिए तार देते रहें तो ऐसे तारोंसे किसे और कैसे जोश आ सकता है? यह उदाहरण बाहरके सभी भारतीयोंके लिए नोट करने योग्य है। श्री अली खमीसा गुलाम बननेके पहले बहुत बार जो बातें किया करते थे, वे याद रखने योग्य हैं। जब प्रिटोरियाके बाहरका कोई व्यक्ति हिम्मत रखनेके लिए कहता तो वे कहते थे कि जो इस संघर्षमें शामिल नहीं है, वह मिट्टी है [इसलिए उसे उपदेश नहीं देना चाहिए]। और

१. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ २४८।

डर्बनसे तार भेजनेवाले भाइयोंको यह बात याद रखनी है, और याद रखना है कि कहीं "मिट्टी" की धूल न बन जाये।[1]

ईसप मियाँका सख्त जवाब

श्री ईसप मियाँने जनरल स्मट्सके स्पष्टीकरणके सम्बन्धमें 'लीडर' और 'स्टार' को सख्त पत्र लिखा है। उसका अनुवाद अगले सप्ताह दूंगा। उसमें सिद्ध कर दिया गया है कि सरकारके झूठकी तो सीमा ही नहीं रही।

ठीक हुआ है

जोहानिसबर्गमें जिन लोगोंने गुलामीके पट्टेके लिए अर्जी दी थी उनमें से एक कोंकणी और एक मद्रासीको देश छोड़नेकी सूचना मिल चुकी है।

दयालजीको कैदकी सजा और उसकी अपील

दयाल्जी प्रागजी देसाईपर गोविन्दको मारनेके सम्बन्धमें मुकदमा चला था। प्रिटोरिया अदालतने उसका फैसला दे दिया है। उसमें उन्हें ४ महीनेकी सख्त सजा मिली है। उसके खिलाफ उन्होंने अपील दायर की है।

गद्दार

पिछले शनिवार तक पंजीयन करानेवालोंकी सूची प्रिटोरियासे [३०], पीटर्सबर्गसे [१६], लुई ट्रिचर्डटसे [३], मिडेलबर्गसे [३], पॉचेफस्ट्रूमसे [४], स्टैंडर्टनसे [५] और जोहानिसबर्गसे [१]।

एक दयनीय मामला

मिरांडा नामक पोर्तुगीज भारतीयको बगैर अनुमतिपत्रका समझकर १० अक्तूबरके पहले ट्रान्सवाल छोड़नेका हुक्म मिला था। उस मीयादके बीत जानेके कारण पिछले शनिवारको फिर उसे अदालतमें खड़ा किया गया। अभियुक्तने बताया कि उसके पास ट्रान्सवालसे बाहर जानेके लिए पैसे नहीं हैं, तो कैसे जाये? न्यायाधीशने अभियुक्तको दोषी ठहराकर एक महीनेकी सख्त कैदकी सजा दी। और कैद पूरी होनेके बाद सात दिनमें देश छोड़नेका आदेश दिया; और यदि वह न छोड़े तो छः महीनेकी दूसरी कैदकी सजा सुनाई। यह मुकदमा वास्तवमें दयाजनक है। अब उस व्यक्तिको सरकारके सिर चढ़कर बार-बार जेल भोगनी चाहिए। तभी सरकारकी अक्ल ठिकाने आयेगी। कहना आवश्यक नहीं कि यदि यह लड़ाई अन्ततक लड़कर सरकारको थका न दिया जायेगा तो ऐसे दुःख ट्रान्सवालके भारतीयोंके भाग्यमें हमेशाके लिए जड़ दिये जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९–११–१९०७

१. मूल गुजरातीमें "माटी" शब्द आया है जिसका अर्थ बहादुर भी होता है। उस दृष्टिसे इन दो वाक्योंका अर्थ यह भी हो सकता है: "जो संघर्षसे दूर हैं वे अपनेको बहादुर ही समझते हैं। डर्बनसे तार भेजने वाले भाइयोंको यह बात याद रखनी है, और याद रखना है कि अवसर आनेपर कहीं उनकी बहादुरीका दिवाला न निकल जाये।

२६८. पत्र : 'ट्रान्सवाल लीडर' को

जोहानिसबर्गके 'लीडर' में श्री गांधीका एक पत्र प्रकाशित हुआ है, वह इस प्रकार है[1] :

महोदय,

आपने अपने आजके अंकमें लिखा है कि जो ४०० के करीब भारतीय पंजीकृत हुए हैं उन सबको ट्रान्सवालमें रहनेका कुछ अधिकार नहीं है, ऐसा ब्रिटिश भारतीय संघने कहा है। परन्तु मुझे कहना चाहिए कि संघके किसी पदाधिकारीने ऐसा कहा हो — यह मेरी जानकारीमें नहीं है। मुझे इतना मालूम है कि हमारे धरनेदारोंमें से किसीने ऐसा कुछ कहा था; परन्तु वह केवल शेखी मारनेके लिए था। यह बात कही गई तभी धरनेदारोंके मुखिया श्री पी० नायडूने उसे ठीक कर दिया था। परन्तु वह समाचार आपके अखबारमें नहीं छपा। संघके पदाधिकारीकी ओरसे जो बात कही गई है सो यह है कि, सरकारने कानूनका जो अर्थ किया है उसके अनुसार जिन्हें यहाँ रहनेका कुछ भी अधिकार नहीं है, ऐसे कमसे-कम चार व्यक्तियोंने पंजीयनके लिए अर्जी दी है, और सम्भवतः उनको पंजीयनपत्र प्राप्त भी हो गये हैं। संघ यह नहीं मानता कि इन लोगोंको पंजीयनपत्रका अधिकार नहीं है।

अर्जियाँ लेनेके लिए सरकार अब भी कार्यालय चालू रखना चाहती हो तो वह कोई मेहरबानी कर रही है, इसे माननेसे मैं आदरपूर्वक इनकार करता हूँ। क्योंकि इससे तो अधिकांश भारतीय केवल यही समझेंगे कि इसमें सरकारकी निर्बलता ही प्रदर्शित होती है। भारतीयोंने बहुत ही शालीनतासे खुदाके नामपर ली हुई शपथकी खातिर बता दिया है कि सरकारसे जो भी बने, कर ले; किन्तु पंजीयनकी परेशानी हमें नहीं चाहिए। कहा गया है कि धरनेदारोंके कारण भारतीय 'प्लेग'-कार्यालयमें नहीं जा पाये हैं और इसी कारण अवधि बढ़ाई गई है। परन्तु धरनेदार तो अब भी प्रिटोरियामें निगरानी रखेंगे ही।

आप यह कह रहे हैं कि जनरल स्मट्सने धमकियाँ दी हैं और बड़ी सरकारने हस्तक्षेप करनेसे फिलहाल इनकार कर दिया है; इसलिए भारतीयोंके विरोध करनेसे क्या लाभ है। परन्तु भारतीयोंकी लड़ाई बड़ी सरकारके हस्तक्षेप अथवा जनरल स्मट्सकी दयापर निर्भर नहीं है। इसमें संदेह नहीं कि भारतीय समाजने जो लड़ाई छेड़ रखी है वह सफल हुई तो अनुमान है कि उपनिवेशोंमें उनकी प्रतिष्ठा बढ़ जायेगी। किन्तु वे यह भी जानते हैं कि लड़ाईमें उन्हें सर्वस्व खोना पड़ सकता है। मैं मानता हूँ कि ऐसा होगा तो नहीं, किन्तु हुआ भी तो भारतीय अग्निमें तपे हुए सोनेकी तरह निखर उठेंगे। यह एक लाभ ही है। मैं निःसंकोच कहता हूँ कि श्री स्मट्स और उनका कानून दोनों मिलकर भारतीय समाजको जो कुछ देंगे उसकी तुलनामें भारतीय समाजके लिए उपर्युक्त लाभ बेहतर है। उस समय आपको भी पता चल जायेगा कि प्रवासी कानूनसे उसे स्वीकृति प्राप्त हुई तो, अथवा अन्य चाहे जैसे, जुल्मी कानूनोंसे डर कर भारतीय समाज अपने ग्रहण किये हुए मार्गसे पीछे हटनेवाला नहीं है। यदि वह पीछे हट गया — और वह नहीं हटेगा, यह कहनेका जिम्मा मैं लेना नहीं चाहता — तो हर भारतीयको पता चल जायेगा कि ऐसा करना तो कड़ाहीसे निकलकर भट्टीमें गिरनेके समान है।

१. मूल अंग्रेजी पत्रके अनुवादके लिए देखिए "पत्र : 'ट्रान्सवाल लीडर' को", पृष्ठ ३२२-२३ ।

नवम्बर १ के 'लीडर' के लेखका तात्पर्य निम्न प्रकार था :

अक्तूबर पूरा हो गया फिर भी ८,००० में से केवल ४०० के लगभग पंजीकृत हुए हैं। और ये ४०० भी, ब्रिटिश भारतीय संघने बताया है, ऐसे हैं जिन्हें ट्रान्सवालमें रहनेका अधिकार नहीं है। ट्रान्सवालमें १,१०० चीनी हैं। उनमें से केवल दोने ही पंजीयन करवाया है और ये दो भी वर्णसंकर हैं। इतने लोगोंने पंजीयन नहीं करवाया फिर भी सरकार दृढ़ है। धरनेदारोंके द्वारा डराये-धमकाये जानेके कारण पंजीकृत होनेमें मुसीबतें थीं यह देखते हुए सरकारने अवधि बढ़ा दी है। यह समझ और दयाका काम है। सही ढंगसे या फिर गलत ढंगसे भी जब कानून सरकारी पुस्तकमें चढ़ चुका है तब हमें यही अधिक उचित मालूम होता है कि भारतीयोंको उसके सामने झुक जाना चाहिए। प्रधानमंत्रीने संसदमें हस्तक्षेप न करनेके सम्बन्धमें जो उत्तर दिया है और जनरल स्मट्सने जो कहा है वह जान लेनेके बाद भी भारतीय यदि और भी विरोध जारी रखते हैं तो उसमें क्या लाभ?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-११-१९०७

२६९. पत्र : जनरल स्मट्सको

जो भीमकाय प्रार्थनापत्र हस्ताक्षरयुक्त फार्मोके साथ उपनिवेश सचिवके नाम भेजा गया है और उसके साथ ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष श्री ईसप मियाँने जो पत्र भेजा है, उन दोनोंका सारांश पिछले सप्ताहकी खबरोंमें छप चुका है। अब हम वह पूरा पत्र[1] नीचे दे रहे हैं :

महोदय,

एशियाई कानूनके सम्बन्धमें ट्रान्सवालके भारतीयोंका एक भीमकाय प्रार्थनापत्र पोस्ट-पार्सल द्वारा आपके पास भेज रहा हूँ। हस्ताक्षर करनेवालोंको जो सूचनाएँ दी गई थीं उनकी प्रतियाँ भी साथ भेजता हूँ। ये फार्म हस्ताक्षरके लिए जब ट्रान्सवाल भेजे गये तब कुछ भारतीयोंकी ओरसे कानूनकी धाराओंमें परिवर्तन करनेके लिए सरकारको प्रार्थनापत्र दिया गया था। सरकारने उसका उत्तर नहीं दिया। और तबतक वह प्रार्थनापत्र भी वापस नहीं लिया गया था। बादमें श्री स्टैगमान, एसेलेन और रूजके मुवक्किलोंको सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिला, इसलिए उन्होंने वह पत्र तो वापस ले लिया है; फिर भी मेरे संघकी समितिने मुझे प्रार्थनापत्र आपको भेज देनेका निर्देश किया है। क्योंकि, इससे आपको उसपर हस्ताक्षर करनेवालोंकी भावनाका पता लगेगा। मेरे संघकी नम्र रायमें संघने कानूनके खिलाफ जो रुख अपनाया है, उसके [औचित्यका] यह आवेदनपत्र एक जबरदस्त सबूत है; और इससे उपनिवेशके अधिकांश भारतीयोंके विचारोंका पता चल जाता है। यह आवेदनपत्र कुछ समय पहले तैयार हो गया था,

१. मूल अंग्रेजी पत्रके अनुवादके लिए देखिए "पत्र : उपनिवेश-सचिवको", पृष्ठ ३२०-२१।

किन्तु जोहानिसबर्गमें दफ्तर खुलनेपर समाजका रुख कैसा रहता है, यह देखनेके लिए आजतक इसे भेजना स्थगित रखा गया था।

इसपर कुल ४,५२२ हस्ताक्षर हुए हैं। वे इस प्रकार कुल २९ स्थानोंसे लिये गये हैं: जोहानिसबर्ग, २,०८५; न्यू क्लेअर, १०८; रुडीपूर्ट, १३६; क्रूगर्सडॉर्प, १७९; जर्मिस्टन, ३००; बॉक्सबर्ग, १२९; बेनोनी, ९१; मॉडरफॉंटीन, ५१; प्रिटोरिया, ५७७; पीटर्सबर्ग तथा स्पेलोनकेन ८०; वेरिनिगिंग, ७३; हाइडेलबर्ग, ६६; बालफर, १४; स्टैंडर्टन, १२३; फोक्सरस्ट, ३६; वाकर्स्ट्रूम १२, पीट रिटीफ, ३; बेथल, १८; मिडेलबर्ग, २९; बेलफास्ट, मेकाडोडॉर्प तथा वाटरवॉल, २१, बारबर्टन, ६८; पॉचेफ्स्ट्रूम, ११४; विंटरडॉर्प, १२; क्लार्क्सडॉर्प, ४१; क्रिस्चियाना, २४; लिखतनबर्ग, ७; जीरस्ट और मेरीको, ५९; रस्टेनबर्ग, ५४; तथा अरमेलो, २।

वर्गके अनुसार हस्ताक्षर निम्नानुसार हैं: सूरती, १,४७६; कोंकणी १४१; मेमन १४०; गुजराती हिन्दू, १,६००; मद्रासी, ९९१; कलकतियाके नामसे परिचित (उत्तर भारतीय), १५७; पारसी, १७। सिक्ख और पठानोंमेंसे हिन्दुओंके हस्ताक्षर गुजराती हिन्दुओंके साथ गिने गये हैं तथा मुसलमानोंके हस्ताक्षर सूरतियोंके साथ गिने गये हैं। ऊपर ईसाइयोंका अलग वर्ग नहीं बताया गया। वे लगभग २०० हैं और मद्रासियोंके साथ गिने गये हैं।

मेमन लोगोंको छोड़कर शायद ही कोई कौम ऐसी बची हो, जिसने हस्ताक्षर न किये हों। एक तो समय बहुत कम था और दूसरे, भारतीय सारे ट्रान्सवालके फार्मोंमें — कुछ एकमें, कुछ दूसरे फार्ममें — फैले हुए हैं; इसलिए संघके कार्यकर्ता हस्ताक्षरके लिए बहुत लोगोंके पास पहुँच ही नहीं सके। हस्ताक्षर करानेवाले सभी इज्जतदार व्यक्ति थे। उन्होंने बताया है कि बहुत जगहोंसे लोग यह देश छोड़कर भारतको रवाना हो गये हैं। सितम्बर १९०६ को लड़ाई शुरू हुई तब १३,००० भारतीय अनुमतिपत्र थे। संघको मालूम हुआ है कि गुलाम बननेके बजाय देश छोड़ना ठीक समझनेके कारण इस समय ७–८ हजार बच रहे होंगे। बहुत करके तो ७,००० से बहुत ज्यादा न होंगे। मेमन लोगोंके अलावा जितने भी लोगोंने पंजीयन करवाया है, उनमें बहुतेरोंपर गोरे मालिकोंने दबाव डाला था। संघको खबर मिली है कि १ जुलाईसे ३१ अक्तूबर तक ३५० से अधिक लोगोंने अर्जियाँ नहीं दीं और उन अर्जी देनेवालोंमें ९५ प्रतिशत मेमन हैं।

एशियाई कानूनके खिलाफ भारतीयोंमें कितनी कटुता पैदा हुई है, उसकी ओर, आखिरमें, मेरा संघ आपका ध्यान आकर्षित करता है। भारतीय समाजने जो रुख ग्रहण किया है, वह सरकारको परेशान करनेके लिए नहीं, बल्कि उसे जो कष्ट हुआ है उसके सबूतके रूपमें है। कानूनसे भारतीयोंको इतनी तीव्र चोट लगी है कि वे उसके सामने झुकनेके बजाय अनाक्रामक प्रतिरोध करके कष्ट सहनेको तैयार हो गये हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९–११–१९०७

२७०. रामसुन्दर पण्डितका मुकदमा[1]

[जर्मिस्टन
नवम्बर ११, १९०७]

श्री गांधीने कहा कि यद्यपि वे मोहलतकी अर्जीका विरोध नहीं करना चाहते, तथापि अदालतको सूचित करते हैं कि जहाँतक श्री पण्डितका सम्बन्ध है, औचित्य-समर्थनके लिए अदालतके सामने तथ्य पेश करनेके अलावा और कोई सफाई पेश नहीं करनी है। श्री पण्डित स्वीकार करेंगे कि वे बिना अनुमतिपत्रके उपनिवेशमें हैं। मेरे मुवक्किल इस बातके लिए अत्यन्त उत्सुक हैं कि यह मामला जल्द समाप्त कर दिया जाये। कुछ भी हो, वे चार दिनसे हवालातमें बन्द हैं और यद्यपि बीसियों भारतीयोंने उनकी जमानत लेनेकी तत्परता दिखाई है, श्री पण्डित जमानतपर छूटनेसे इनकार करते हैं। इसलिए श्री गांधीने सुझाया कि यदि इस मामलेमें मोहलत देना स्वीकार किया जाये तो भी पण्डितजी स्वयं अपने वचनपर छोड़ दिये जायें। इसे अदालतने स्वीकार कर लिया।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-११-१९०७

२७१. भेंट: 'ट्रान्सवाल लीडर' को[2]

[जर्मिस्टन
नवम्बर ११, १९०७]

श्री गांधीने मुझे बताया कि यह[3] भारतीयोंके — मुख्यतः मुसलमानोंके — धर्मके विरुद्ध है; क्योंकि इससे अधिनियमके अन्तर्गत आनेवाले प्रत्येक एशियाईकी निजी स्वतन्त्रता छिन जाती है, जिसके परिणामस्वरूप वह खुदाका बंदा होनेके बजाय अधिनियमके अन्तर्गत नियुक्त अधिकारीका बंदा हो जाता है; और जो व्यक्ति ईश्वरमें विश्वास करता है, वह ऐसे

१. रामसुन्दर पण्डित अपने अस्थायी अनुमतिपत्रकी अवधि पूरी होनेपर "ट्रान्सवालमें गैरकानूनी ढंगसे दाखिल होने और रहनेके लिए" ८ नवम्बरको गिरफ्तार किये गये थे। एशियाई मुहकमेको सुझाया गया था कि उनकी गिरफ्तारीका भारतीयोंपर अच्छा प्रभाव पड़ेगा। एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके अन्तर्गत चलाया जानेवाला यह पहला मुकदमा था और यह सहायक अधिवासी मजिस्ट्रेटकी अदालतमें दायर किया गया था। सरकारी वकीलने जब एशियाई पंजीयकको अदालतमें बुलानेके खयालसे मोहलत माँगी तब गांधीजीने यह दलील पेश की। देखिए **दक्षिण आफ्रिकामें सत्याग्रहका इतिहास**, अध्याय, १८ भी।

१२-११-१९०७के **ट्रान्सवाल लीडरकी** एक रिपोर्टके अनुसार, गांधीजीने कहा कि रामसुन्दर पण्डित "अपने आपको सभी प्रकारसे निर्दोष समझते हैं तथा यह मुकदमा लड़नेको तैयार हैं और इसलिए जब भी बुलाये जायेंगे, अदालतके सामने जाब्तेसे उपस्थित होंगे।"

२. **ट्रान्सवाल लीडरके** एक संवाददाताने रामसुन्दर पण्डितके मामलेकी पहली सुनवाईकी समाप्तिपर उनकी रिहाईके बाद गांधीजीसे भेंट की थी।

३. पंजीयन।

अधिनियमको माननेका खयाल सपनेमें भी नहीं कर सकता, जिससे वह वास्तवमें दासतामें बँध जाता हो।

अब चूँकि सब भारतीय पंजीयन अधिनियम अपने धर्मके विरुद्ध होनेके कारण उसे स्वीकार न करनेके लिए एक गम्भीर शपथके द्वारा बँधे हैं, इसलिए यहाँ धर्म अधिक प्रमुख रूपसे सामने आता है। और इसलिए यदि कोई भारतीय किसी ऐसे भौतिक लाभके लिए, जो उसे मिल सके, अधिनियमको स्वीकार करता है तो वह अपनी अन्तरात्माका हनन करता है। फलतः उक्त पुरोहितने इस बातमें सक्रिय दिलचस्पी लेनी शुरू कर दी है कि लोग पंजीयन न करायें और वे लौकिक सम्पदाको देखनेके बजाय पारलौकिक सम्पदाको देखें। यही कारण है कि जब जर्मिस्टनमें एशियाई पंजीयन कार्यालय खुला था तब उन्होंने मुख्य धरनेदारके रूपमें कार्य किया, जो विशुद्ध रूपसे समझाने-बुझानेसे सम्बन्ध रखता था।

[अंग्रेजीसे]

ट्रान्सवाल लीडर, १२-११-१९०७

२७२. रामसुन्दर पण्डितका मुकदमा[१]

[जर्मिस्टन
नवम्बर १४, १९०७]

श्री गांधी द्वारा जिरह करनेपर गवाहने[२] कहा कि समझौता यह था कि अभियुक्त तारीख २८ अगस्त १९०६ तक रहेगा। तबसे उसके अनुमतिपत्रकी अवधि कई बार बढ़ाई जा चुकी है, क्योंकि मुझे यह विश्वास दिलाया गया, और मैंने विश्वास किया भी, कि अभियुक्तको उपनिवेशमें जिस कार्यके सम्बन्धमें रहनेकी अनुमति दी गई है, वह यहाँ उसीको करेगा।

[गांधीजी :] क्या आपके पास इसमें सन्देह करनेका कोई कारण है कि अभियुक्त धर्म-पुरोहित है और वही रहा है?

[गवाह :] यहाँ धर्म-पुरोहित बहुत-से हैं और धर्म-पुरोहित धर्मका प्रचार करते हैं। कोई पुरोहित ईसाई हो, या मुसलमान, या हिन्दू या किसी दूसरे धर्मका, जबतक वह अपने सिद्धान्तका प्रचार करता रहता है तबतक, मेरे विचारमें, वह वाञ्छनीय है; किन्तु जब वह अन्य सिद्धान्तोंका — मैं नहीं कहूँगा, राजद्रोहका — प्रचार करता है और अपने लोगोंको हिंसाके लिए भड़कानेके तरीके अख्तियार करता है, तब वह उससे भिन्न व्यक्ति हो जाता है, जैसा मैंने उसको उपनिवेशमें जानेकी अनुमति देते समय समझा था।

उन्होंने क्या प्रचार किया?

क्या आपके पास इसका कोई प्रमाण है कि उन्होंने अपने धार्मिक सिद्धान्तोंके अलावा किसी दूसरी बातका प्रचार किया?

१. देखिए "रामसुन्दर पण्डितका मुकदमा", पृष्ठ ३५१।
२. एशियाई पंजीयक, मॉंटफोर्ड चैमने।

मेरा विश्वास है कि उसने ऐसा प्रचार किया है; और इस विश्वासके आधारपर मैंने उसका अनुमतिपत्र नया करनेसे इनकार कर दिया है।

क्या आप कहते हैं, आपका विश्वास है कि उन्होंने पुरोहितके कर्तव्यसे भिन्न कार्य किया है?

मैंने यह नहीं कहा।

आपने अभी कहा है कि आपके पास ऐसा माननेके कारण हैं कि वे धार्मिक सिद्धान्तोंसे भिन्न सिद्धान्तोंका प्रचार कर रहे हैं। क्या आपके पास यह विश्वास करनेके पर्याप्त कारण हैं?

मुझे गोरों और रंगदार, दोनोंसे शिकायतें मिली हैं।

क्या आपने उनको इन शिकायतोंके सम्बन्धमें कभी चेतावनी दी है?

निश्चय ही नहीं दी।

आपको शिकायतें कब मिलीं?

मुझे ठीक तारीखें याद नहीं आ रहीं, किन्तु ये एशियाइयोंके पंजीयनके सम्बन्धमें थीं।

क्या आप इन शिकायतोंको पेश कर सकते हैं?

में पेश तो हर्गिज नहीं करूँगा।

तब, श्री चैमने, आप इन शिकायतोंको पेश करनेसे निश्चित रूपसे इनकार करते हैं?

मैं आपको उन व्यक्तियोंके, जिन्होंने शिकायतें की हैं, नाम बतानेसे निश्चित रूपसे इनकार करता हूँ।

श्री गांधीके अनुरोधपर गवाहने पिछले २८ सितम्बरकी वह दरख्वास्त पेश की जो उसको जमिस्टनके भारतीयोंसे प्राप्त हुई थी और जिसमें उससे अभियुक्तके अनुमतिपत्रकी अवधि, जो समाप्त होनेवाली थी, बढ़ानेकी प्रार्थना की गई थी और कहा गया था कि अभियुक्त मात्र मन्दिरसे सम्बन्धित काममें लगा रहता है और अपने धार्मिक कर्तव्योंका पालन करता है।

क्या आपने इस दरख्वास्तको अनुमतिपत्रकी अवधि बढ़ानेके लिए पर्याप्त प्रेरणादायक नहीं समझा?

नहीं, मुझे जो सूचनाएँ दी गई थीं उनको देखते हुए मैंने इसको पर्याप्त नहीं समझा।

आप मानते हैं कि अभियुक्तने जमिस्टनका हिन्दू मन्दिर खरीदा है?

मैं इस सम्बन्धमें कुछ नहीं जानता। वह यहाँ कुछ सप्ताहका अनुमतिपत्र लेकर आया था, और हमने उस अनुमतिपत्रकी अवधि एक वर्षसे अधिक समयके लिए बढ़ा दी, और मैं नहीं जानता कि उसने क्या किया।

और यदि यह नया अधिनियम न बना होता तो आप, कदाचित, उसकी अवधि निरन्तर बढ़ाते जाते?

बहुत सम्भव है, बढ़ाता जाता।

जब आप "राजद्रोह" की बात कहते हैं, आपका तात्पर्य क्या होता है?

मैंने विशेष रूपसे कहा है कि मैं राजद्रोहकी बात नहीं कहता।

तब उन्होंने अपने धार्मिक कर्तव्योंके अलावा कुछ किया, यह कहनेसे आपका अभिप्राय क्या है? क्या आपका अभिप्राय यह है कि उन्होंने लोगोंसे पंजीयन-अधिनियमको न माननेके लिए कहा?

मैं कल्पनापर आधारित प्रश्नोंका उत्तर नहीं दे सकता।

आप जानते हैं कि उन्होंने एशियाई अधिनियमको माननेके विरुद्ध प्रचार किया है। क्या यह उसका एक पहलू है?

इसका उत्तर है "हाँ"; किन्तु मेरी यह हाँ बिना शर्त नहीं है।

क्या मुल्लाओंके अनुमतिपत्रकी अवधि भी बढ़ाई गई है?

हाँ, और ईसाई तथा दूसरे पुरोहितोंके अनुमतिपत्रोंकी भी।

आपका आशय एशियाइयोंसे है?

जब मैं ईसाइयोंकी बात करता हूँ तो, श्री गांधी, आपको समझना चाहिए कि मेरा तात्पर्य होता है असीरियाइयोंसे।

न्यायाधीशने कहा कि प्रश्न यह नहीं है कि श्री गांधी क्या समझते हैं, बल्कि यह है कि अदालत क्या समझती है।

श्री चैमनेके तरीके

गवाहने बताया कि जब कोई पुरोहित धर्म-प्रचारके उद्देश्यसे ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेके अनुमतिपत्रके लिए प्रार्थनापत्र देता है, वे (श्री चैमने) उसके मार्गमें कोई कठिनाई उत्पन्न नहीं करते; किन्तु असीरियाई और मुसलमान इतनी बड़ी संख्यामें आते हैं कि उनसे इनको अनुमतिपत्र देना सीमित करनेका अनुरोध किया गया है। सरकारको ऐसे पुरोहितोंको अस्थायी अनुमतिपत्र देनेमें कोई आपत्ति नहीं है, बशर्ते कि अनुमतिपत्र जिन शर्तोंपर दिये गये हों उन्हें वे पूरा करें।

क्या आपको उनके सम्बन्धमें जर्मिस्टनी भारतीयोंसे कोई शिकायत मिली है?

मैं समझता हूँ, "जर्मिस्टनी भारतीय" से आपका मतलब जर्मिस्टनवासी भारतीयोंसे है?

हाँ।

तब मुझे उनसे ही शिकायत मिली है।

क्या आपने शिकायतकी जाँच की है?

बेशक।

क्या आपने कभी इन शिकायतोंके सम्बन्धमें अभियुक्तका उत्तर भी सुना है?

नहीं, निश्चय ही नहीं।

तो आपने उनका बयान सुने विना ही उन्हें दोषी ठहरा दिया ?

मुझे उनका पत्र मिला है। यह बात न भूलें!

तब उसे पेश कीजिए।

मैं पेश कर चुका हूँ।

किन्तु वह पत्र शिकायतोंका उत्तर तो नहीं है?

मैंने यह नहीं कहा कि वह उनका उत्तर है।

तब तो वही बात हुई जो मैंने कही; आपने सुनवाई किये विना ही उन्हें दोषी ठहरा दिया।

मैंने उनको कुछ शर्तोंके साथ ट्रान्सवालमें आनेकी अनुमति दी थी। इन शर्तोंको उन्होंने नहीं निभाया।

क्या आपने कभी उनको इसकी सूचना दी ?

अब देता हूँ।

उनको फाँसी देनेके बाद ?

नहीं; फाँसी देनेके बाद नहीं। मैं इस आक्षेपको पसन्द नहीं करता।

तब गवाहने गत ९ अक्तूबरका एक पत्र पढ़ा जो उन्होंने अभियुक्तको तत्काल उपनिवेशसे चले जानेकी सूचना देते हुए लिखा था।

श्री गांधी : इससे मेरे प्रश्नका उत्तर बिलकुल नहीं मिलता।

मेरा उत्तर यही है।

इसके बाद अभियोग-पक्षकी कार्रवाई समाप्त हो गई . . . ।

बचाव

. . . सरकारी वकील : अभियुक्तका धरनेदारोंसे कोई सम्बन्ध नहीं रहा ?

श्री गांधी : मैं मानता हूँ कि वे मुख्य धरनेदार थे . . . ।

. . . तब श्री गांधीने अदालतको सम्बोधित किया। उन्होंने स्वीकार किया कि कानून जैसा है उसके अनुसार सजा अवश्यम्भावी है; किन्तु उन्होंने अनुरोध किया कि यह मामला ऐसा है जिसमें अदालतका मत व्यक्त करना आवश्यक है। उन्होंने "ताज बनाम भाभा" के मुकदमेकी नजीर दी, जिसमें सर्वोच्च न्यायालयने शान्ति-रक्षा अध्यादेशके प्रशासनके तरीकेके विरुद्ध तीव्र मत व्यक्त किया था। उन्होंने कहा, मेरे मुवक्किलपर मुकदमा इसलिए नहीं चलाया गया कि उनके पास अनुमतिपत्र नहीं हैं; बल्कि, जैसा बिलकुल स्पष्ट है, इसलिए चलाया गया कि एशियाई अधिनियमके सम्बन्धमें उनके विचार तीव्र हैं और उनको वे अपने देशवासियोंके सम्मुख रखनेमें झिझकते नहीं हैं। यदि यह अपराध हो तो भारतीयोंकी बहुसंख्या अभियुक्तके समान ही अपराधी है। उचित या अनुचित, रामसुन्दर पण्डितका विश्वास यह है कि इस अधिनियमके सम्बन्धमें सच्ची बातोंको अपने देशवासियोंके सम्मुख रखना धर्म-प्रचारकके रूपमें उनके कर्तव्योंका अंग है। धार्मिक आपत्ति अँगुलियोंके निशान देने और पत्नीका नाम

वतानेसे वहुत आगे जाती है। पण्डितजीने प्रचार किया है, क्योंकि प्रत्येक आत्मसम्मानी भारतीयकी भाँति उनकी सम्मतिमें भी इस अधिनियमको माननेसे भारतीयोंके समस्त पुरुषोचित गुण चले जाते हैं। मेरा खयाल है कि पण्डितजीने जो-कुछ किया है उसको देखते हुए वे निन्दाके वजाय स्तुतिके पात्र हैं। उन्होंने न्यायाधीशसे अभियुक्तके इस वक्तव्यपर विश्वास करनेका निवेदन किया कि जो शिकायतें कभी प्रकाशमें नहीं आईं और जिनके सम्बन्धमें अभियुक्तको मुकदमेके दिन तक कोई जानकारी नहीं थी, उनमें कोई सत्य नहीं है। अभियुक्त पंजीयकके आदेशका उल्लंघन करनेके परिणामोंसे परिचित हैं, किन्तु उनके अपने ही शब्दोंमें, उनको एक उच्चतर कर्तव्यका आह्वान मिला है और उसी आह्वानपर वे इस न्यायालयके सम्मुख कैदकी या उससे भी बड़ी सजा भुगतनेके लिए उपस्थित हुए हैं।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–११–१९०७

२७३. प्रस्ताव : सार्वजनिक सभामें[2]

[जर्मिस्टन
नवम्बर १४, १९०७]

एशियाई पंजीयन अधिनियमके अन्तर्गत एकमात्र हिन्दू पुरोहित रामसुन्दर पण्डितको सजा सुनाई जानेके वाद जर्मिस्टनमें ब्रिटिश भारतीयोंकी महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक सभा हुई। महामहिम सम्राट्से दमनके विरुद्ध, जिससे निर्दोष भारतीय पीड़ित हैं, संरक्षण-प्राप्तिके लिए आवेदनका प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। पण्डितजीने सिद्धान्तके वलिदानके वजाय जेल जाना स्वीकार किया है। हजारों इसके लिए तैयार हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–११–१९०७

१. रामसुन्दर पण्डितको एक महीनेकी कैदकी सजा दी गई।

२. रामसुन्दर पण्डितका मुकदमा खतम हो जानेपर गांधीजीने एक सार्वजनिक सभामें भाषण दिया; देखिए पृष्ठ ३६६-६७। प्रस्ताव एक तारके रूपमें लिखा गया था जो स्पष्टतया दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके माध्यमसे भेजा जानेवाला था और अनुमानतः गांधीजीने ही इसे तैयार किया था। यह भी तय किया गया था कि पण्डितजीके परिवारके प्रति वधाईके तार भेजे जायें और दूसरे दिन दूकानें तथा सब कारवार स्थगित रखे जायें।

२७४. पत्र : गो० कृ० गोखलेको

जोहानिसबर्ग
नवम्बर १४, १९०७

प्रिय प्रोफेसर गोखले,

इस पत्रका उद्देश्य श्री अमीरुद्दीन मुहम्मद हुसैन फजन्दारका[1] आपसे परिचय कराना है। ये, चार अन्य भारतीयोंके साथ, आगामी राष्ट्रीय कांग्रेसमें ट्रान्सवालके भारतीयोंका प्रतिनिधित्व करनेके लिए नियुक्त हुए हैं। श्री फजन्दार ट्रान्सवालके सुप्रसिद्ध व्यापारी हैं और यहाँ लम्बे अरसेसे रह रहे हैं। मुझे विश्वास है कि आप इन्हें कांग्रेसके सामने हमारा मामला रखनेके लिय प्रत्येक सुविधा प्राप्त करानेकी कृपा करेंगे और अपनी सलाह तथा मार्गदर्शनका लाभ उठाने देंगे।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१०८)से।

२७५. धरनेदारोंके विरुद्ध मुकदमा

[प्रिटोरिया
नवम्बर १५, १९०७]

गौरीशंकर व्यास, शरफुद्दीन, गोविन्द प्राग और फ्रैंक लछमनपर इसी १५ तारीखको यह आरोप लगाया गया था कि उन्होंने मारपीट करने या जुर्मके लिए भड़कानेका अपराध किया, क्योंकि १३ नवम्बर १९०७ को (या उसके आसपास) उसी जिलेके प्रिटोरिया नगरमें (या उसके आसपास) प्रत्येक और सब अभियुक्तोंने या उनमेंसे किसी-न-किसी ने अन्यायपूर्ण और अवैध रूपसे लछमन नामके एक भारतीयको, जो वहीं रहता है, पीटा; उन्होंने उसको वहीं घेर लिया और उसको अपनी (या किसी अन्यकी) इच्छाके अनुसार भारतीय पंजीयन कार्यालयमें जानेसे रोका। उसी वक्त और उसी जगह प्रत्येक और सभी कथित अभियुक्तोंने या उनमेंसे किसी-न-किसीने अन्यायपूर्वक और गैरकानूनी रूपसे उसको पंजीयनका प्रार्थनापत्र, जिसे पेश करना सन् १९०७ के अधिनियम २ के[2] खण्ड १, २ और ८ के अन्तर्गत आवश्यक है, न देनेके लिए यह धमकी देकर भड़काया कि यदि उसने पंजीयन कराया तो उसको पीटा जायेगा तथा उसका मुँह काला कर दिया जायेगा। अभियुक्तोंने अपनेको निर्दोष बताया और और श्री गांधीने उनका बचाव किया। सरकारकी ओरसे श्री ग्राहमने पैरवी की। अदालत भारतीयोंसे खचाखच भरी थी और कई तो प्रवेश पा भी नहीं सके।

१. मूलमें 'वजिन्दार' शब्द आया है।
२. मूलमें "अधिनियम २०/१९०७" है।

वादीने कहा कि अभियुक्तोंने उससे पंजीयन कार्यालयके बाहर बातकी थी और उसको सलाह दी थी कि हमारे लोग अनुमतिपत्र नहीं ले रहे हैं इसलिए तुम भी उन लोगोंसे सलाह कर लो जो तुमसे अधिक बुद्धिमान हैं। अभियुक्तोंने मुझसे मारपीट कभी नहीं की।

श्री ग्राहमने कहा कि गवाह [लछमन] को विरोधी गवाह माना जाये; किन्तु श्री गांधीने आपत्ति की। वह आपत्ति लिख ली गई और गवाहने कहा कि उसको रिपोर्ट लिखनेके दफ्तरमें ले जाया गया और श्री कोडीने उससे पूछा कि क्या अभियुक्तोंने उसके साथ मारपीट की है। उसने कहा, "नहीं"। श्री कोडीने कहा कि उन्होंने अभियुक्तोंको गिरफ्तार कर लिया है और गवाहने जब यह पूछा कि उनको क्यों गिरफ्तार किया गया है, तो उसको बताया गया कि यह उसकी इच्छा थी। गवाहने कहा कि ऐसी बात नहीं है। उसने कहा: "ये मेरे देशवासी हैं और गिरफ्तार नहीं किये जाने चाहिए। मैं पासके लिए आया था और जब मुझे पास मिल जायेगा, तब मैं चला जाऊँगा। उन्होंने मेरे साथ मारपीट नहीं की है।"

श्री गांधी: यह प्रिटोरिया पास लेने आया, क्योंकि इससे एक गोरेने कहा था कि यदि यह पास न लेगा तो इसको निकाल दिया जायेगा। उस गोरेने इसके कागजात ले लिये थे और श्री कोडीको भेज दिये थे। यह विटवैंकका धोबी है। यह अपने मनमें सरकारसे भयभीत है और इसीलिए यहाँ आया था। इसको पंजीयन-कार्यालयमें दो गोरे ले गये थे, जो इसे स्टेशनपर मिले थे।

श्री गांधीके जिरह करनेपर एक गवाहने[1] कहा कि उसको सुपरिंटेंडेंट वेट्सने लछमनसे स्टेशनपर मिलने और उसको पंजीयन कार्यालयमें लाने एवं यदि उसको (लछमनको) तंग किया जाये तो उसकी खबर देनेकी हिदायत की थी। वह हिन्दुस्तानी अच्छी तरह जानता है। उसने कोई मारपीट होते नहीं देखा।

श्री ग्राहमने अपनी ओरसे मामला खत्म कर दिया और श्री गांधीने अभियुक्तोंको तुरन्त बरी करनेकी माँग की। श्री ग्राहमने कहा था कि वे मारपीटके आरोपकी पुष्टि नहीं कर सकते और उनको भड़कानेके आरोपपर निर्भर रहना होगा। श्री गांधीने कहा कि मेरे सामने अब कोई मामला सफाईके लिए नहीं है।

श्री मेलर[2] (मुसकराते हुए): श्री ग्राहम, क्या आप इस आरोपको पुष्ट करेंगे?

श्री ग्राहम: वस्तुतः मैं इस आरोपपर जोर नहीं देता। मेरे खयालमें मामला काफी मजबूत नहीं है।

श्री मेलर: उनसे कह दें कि वे बरी कर दिये गये[3]।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-११-१९०७

१. आल्फ्रेड एंडर्सन, केन्द्रीय जेलका सन्तरी। उसने गवाहीमें कहा था कि वह जेलके गवर्नरके निर्देशसे रेलवे स्टेशनपर गया था और वादीसे मिला था। वादीने उसे बताया कि वह पंजीयन करानेके लिए आया है, किन्तु अभियुक्तोंने उसको पीटनेकी धमकी दी है।

२. सहायक आवासी मजिस्ट्रेट।

३. इसके पश्चात् धरनेदारोंको मालाएँ पहनाई गई और वे जुलूसमें श्री व्यासके घर ले जाये गये, जहाँ श्री ए० एम० काछलिया, मुख्य धरनेदार श्री एम० एल० देसाई, गांधीजी और अन्य लोगोंने धरनेदारोंके वीरतापूर्ण कार्यकी प्रशंसा करते हुए भाषण दिये।

२७६. पत्र : 'इंडियन ओपिनियन' को[1]

जोहानिसबर्ग
नवम्बर १५, १९०७

सेवामें
सम्पादक
'इंडियन ओपिनियन'

महोदय,

क्या आप मुझे रामसुन्दर पण्डितके[2] मुकदमेके सिलसिलेमें सामने आये कुछ बहुत ही महत्त्वपूर्ण तथ्योंको जनताके ध्यानमें लानेकी इजाजत देनेकी कृपा करेंगे?

एशियाई पंजीयकने स्वीकार किया कि यह उसके कार्यालयका नियम है कि पुरोहितोंको अस्थायी अनुमतिपत्र ही दिये जायें, लेकिन साथ ही यह मूक समझौता भी है कि जबतक वे अपनेको पुरोहिताई तक ही सीमित रखते हैं तबतक अनुमतिपत्रोंकी अवधि, पंजीयकके शब्दोंमें, "जीवनके अन्ततक बढ़ाई जा सकती है।" आगे उसने यह बताया कि हिन्दू पुरोहितने पुरोहिताईके अतिरिक्त कुछ और काम भी शुरू कर दिया, इसलिए पंजीयकके विचारमें वह अवधि बढ़वानेके अधिकारका पात्र नहीं रह गया। बड़ी मुश्किलसे मैं समझ पाया कि इस "कुछ और" में पुरोहित द्वारा एशियाई अधिनियमके विरुद्ध प्रचार भी शामिल था। उसकी अन्य "कुचालों" का भी एक धुंधला-सा हवाला दिया गया, लेकिन पंजीयकने शिकायतोंके स्वरूप तथा शिकायत करनेवालोंके नाम बतानेसे साफ इनकार कर दिया। उसने यह स्वीकार किया कि पुरोहितको अपने निन्दकोंका मुकाबला करने या उनकी शिकायतोंका जवाब देनेका मौका कभी नहीं दिया गया। दूसरे शब्दोंमें, उसकी बात सुने बिना ही उसे सजा दे दी गई। युद्ध-कालके अलावा ऐसे किसी मनमाने, अनुचित तथा अन्यायपूर्ण कार्यका उदाहरण मुझे नहीं मिलता। इस कानूनके अन्तर्गत एक ऐसे व्यक्तिको, जो — जैसा कि उसने गवाहीके कठघरेमें खड़े होकर स्वीकार किया — उक्त कानूनके विषयमें कुछ नहीं जानता और फलतः गवाहीको तोल सकनेमें सर्वथा असमर्थ है तथा जिसे राजद्रोह और वैयक्तिक स्वतन्त्रतापर चोट करनेवाले कानून-विशेषके सादर तथा वीरतापूर्ण विरोधमें कोई फर्क नहीं दिखाई देता, स्वतन्त्र तथा निरीह ब्रिटिश प्रजाजनोंपर असीम सत्ता प्राप्त है। वह किन शर्तोंपर धर्म प्रचारकोंको इस देशमें रहने देगा, यह उसकी मर्जीपर निर्भर है; और अगर कहीं वह उनसे नाराज हो गया तो उसे अधिकार है कि वह लगभग तत्काल मन्दिरोंको बन्द कर सम्बन्धित समुदायोंको धार्मिक समाधानसे वंचित कर दे।

और फिर भी एशियाइयोंसे प्रायः पूछा जाता है कि वे एक इतने सीधे-सादे कानूनका, जिसका एकमात्र उद्देश्य उपनिवेशमें रहनेवालोंकी पहचान करना है, विरोध क्यों करते हैं।

श्री लिअंग क्विनने जनताका ध्यान एक शोकजनक घटनाकी ओर आकर्षित किया है। बृहस्पतिवारको जर्मिस्टनमें जो-कुछ हुआ वह इतना भारी काण्ड था कि मजिस्ट्रेटको कहना

१. इस पत्रका गुजराती अनुवाद २३-११-१९०७ के **इंडियन ओपिनियन**में छपा था।
२. देखिए पृष्ठ ३५२-५६।

पड़ा कि वह अभियुक्तसे सहानुभूति प्रकट किये विना नहीं रह सकता। किन्तु, न्यायालय लाचार था और एक निरीह व्यक्तिको अफसरके पूर्वग्रह, अज्ञान, अयोग्यता तथा उद्धतताकी वेदीपर — ऐसे दुर्गुणोंकी वेदीपर जो निश्चय ही घोर रूपसे अ-ब्रिटिश हैं — बलिदान कर दिया गया।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २३-११-१९०७

२७७. कैक्सटन हॉलकी सभा

श्री अमीरअली तथा ब्रिटेनवासी मुसलमान ट्रान्सवालके भारतीय समाजके पक्षके समर्थनके लिए उसके धन्यवादके पात्र हैं। हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी ओरसे भारतीय मुसलमानोंको एक सर्वसामान्य पत्र[1] भेजनेका विचार सुन्दर था। समुद्री तारोंसे पता चलता है कि कार्यवाही उत्साहपूर्ण थी और सभामें अनेक प्रमुख यूरोपीयोंने भाग लिया था। विचित्र संयोग है कि सभा ९ नवम्बरको, जो सम्राट्का जन्म-दिवस है, हुई। अगर श्री अमीरअली और उनके श्रोताओंको यह मालूम होता कि जिस समय वे ट्रान्सवालके पददलित भारतीयोंके पक्षमें न्याय और मानवताकी माँग कर रहे थे, उस समय ट्रान्सवाल सरकार एक भारतीय पुरोहितको अपने अत्याचारका शिकार बना चुकी थी, तो न जाने उनकी भावना क्या होती? हमको रायटरसे पता चला है कि एशियाई अधिनियमकी भर्त्सनाके भाषणोंके बीच-बीचमें "शर्म-शर्म" और "अशोभनीय" की आवाज गूंज उठती थी। इस महत्त्वपूर्ण सभाकी अवहेलना करनेका एक तरीका यह है कि इसे स्थानीय स्थितिसे अनभिज्ञ लोगोंकी राय कहकर टाल दिया जाये। एक दूसरा तरीका यह है कि इसे उस असंतोषका प्रतीक मान लिया जाये जो हजार-हजार भारतीयोंके हृदयमें व्याप्त है। यदि इसे दूसरे दृष्टिकोणसे देखा जाये तो इस सभामें पास किये हुए प्रस्तावपर ट्रान्सवाल सरकारको हार्दिक और सहानुभूतिपूर्ण ढंगसे गौर करना चाहिए। किन्तु हम यह महसूस करते हैं कि जबतक साम्राज्यीय सरकार कोई प्रभावकारी कार्रवाई नहीं करती, ट्रान्सवालके अधिकारी भारतीयोंकी कही हुई हर बात अनसुनी कर देंगे, चाहे वे भारतीय कितने भी प्रभावशाली तथा जानकार हों। कुछ भी हो, इस सभाने एक काम तो अवश्य ही किया है कि संसार-भरके मुसलमान अब यह महसूस करने लगे हैं कि उनको महज अपने सहधर्मियोंके प्रति ही सहानुभूति नहीं होनी चाहिए और न महज उनके लिए ही काम करना चाहिए, बल्कि उनको अपना कार्यक्षेत्र हिन्दुओं तक भी बढ़ाना चाहिए। यह एक अच्छा लक्षण है और इससे पता चलता है कि हम उस समयकी ओर बहुत शीघ्रतासे अग्रसर हो रहे हैं जब जाति तथा धर्मका विचार किये विना मनुष्य मनुष्यके लिए काम करेगा।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, १६-११-१९०७

१. देखिए "भारतीय मुसलमानोंसे अपील", पृष्ठ १७९-८०।

२७८. लाजपतरायकी रिहाई

ट्रान्सवालके भारतीयोंके लेने लायक सीख

लाला लाजपतराय तथा उनके सेनापति अजीतसिंह छूट गये हैं। देश-निकाला तो भोगा, किन्तु पंजावके जमीन-सम्वन्धी कानूनको रद करवा दिया है। यह जीत अनाक्रामक प्रतिरोधकी सफलताका जवरदस्त सवूत है। यह ताजा उदाहरण सामने होते हुए भी क्या ट्रान्सवालके भारतीयोंमें किसीके डगमगाते रहनेके लिए कारण रहेगा? हम आशा करते हैं कि कदापि नहीं रहेगा। उलटे, जिन्होंने अर्जी दी है वे भी यदि लाजपतकी जीतका अर्थ समझ सकेंगे, तो अर्जी वापस लेनेका अवसर, यानी नये पंजीयनपत्र लेने न जानेका अवसर, होनेपर उसे चूकेंगे नहीं। क्योंकि यह तो सव स्वीकार करते हैं कि एशियाई कानून खराव है। पंजीकृत होनेवाले केवल स्वार्थसे अन्धे होकर तथा जेलसे डरकर इस गुलामीके चक्रमें फँसे हैं। लाजपतकी विजय वताती है कि डरनेवाले औरतें हैं और हारे हुए हैं, जवकि लड़नेवाले मर्द और जीते हुए हैं। आजकल जो लक्षण दिखाई पड़ते हैं उनसे भी यह प्रकट होता है कि लड़नेवाले जीते हुए हैं। शर्त केवल यह है कि लड़ना हो तो, जेल और देश-निकाला भोग कर भी अन्ततक लड़ें; और लाजपतका उदाहरण भी यही वताता है। इसलिए ट्रान्सवालके भारतीय "हिन्दके लाला" के देश-निकालेसे आवश्यक सवक लेंगे और उसके अनुसार आचरण करनेके लिए छाती तानकर तैयार रहेंगे तो हम विना किसी संकोचके कहते हैं कि उन्हें विजय अवश्य मिलेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-११-१९०७

२७९. सम्राट्की सालगिरह

हम मानते हैं कि महाराज एडवर्डको उनकी सालगिरहपर भारतीयोंकी ओरसे मुवारकवादीका तार भेजा गया सो ठीक हुआ। हम सच्ची प्रजा हैं। विवेक हमारी हड्डियोंमें रमता है। यदि तार न जाता तो माना जाता कि हम विवेकको भूल गये हैं। उसमें हमने गलत खुशामद नहीं की। हमने फायदेके लालचसे तार नहीं भेजा; वल्कि इसलिए भेजा है कि सम्राट्की मंगल-कामना करना हम अपना कर्तव्य समझते हैं।

फिर भी ऐसा तार क्यों भेजा जाये? हमें सालगिरहके दिन तीन भेंटें प्राप्त हुईं। रामसुन्दर पण्डित व्यर्थ पकड़े गये। इसमें धर्मकी हानि हुई। वे हिन्दू हैं, फिर भी धक्का पूरे समाजको लगा है। हजके लिए जानेको पारपत्र (पासपोर्ट) नहीं मिलते। जोहानिसवर्ग आदिमें परवाने नहीं मिलते। मतलव यह कि जव सभी खुशी मना रहे हैं तव भारतीयोंके लिए शोक मनाने जैसा रहा। तव भी क्या हम सालगिरहका तार भेजें?

कांग्रेसके भूतपूर्व तीन अध्यक्षोंके मनमें यह विचार उठा, और वह ठीक ही उठा। उन्होंने कहा कि यदि तार भेजना ही हो तो हमें उपर्युक्त दुःख भी साथमें रोना चाहिए।

उन्होंने जो इस तरह आपत्ति की है, उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। हमारी भावनाओंको कितनी ठेस पहुँची है, यह उसका चिह्न है। इतना होनेपर भी यह गुस्सेकी निशानी है। हमें जो दुःख है, उसमें महाराजका दोष नहीं है। इलाज हमारे हाथमें है। दुःख आया है तो इलाज भी होगा। वह इलाज ट्रान्सवालके भारतीयोंके हाथ है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६–११–१९०७

२८०. लन्दनमें मुसलमानोंकी सभा

अखबारोंमें तार छपा है कि यह सभा ९ नवम्बरको लन्दनमें हुई। यह कोई मामूली समाचार नहीं है। न्यायमूर्ति अमीरअली सभाके अध्यक्ष थे। कई गोरे उपस्थित थे। नये कानूनसे और कोई लाभ न हो तो न सही, हिन्दू-मुसलमानके बीच मेल तो अवश्य बढ़ेगा, ऐसे लक्षण दिखाई दे रहे हैं। सभामें यह साफ कहा गया है कि हिन्दुओंके लिए भी मुसलमान हक माँगेंगे। जो मुसलमान इकट्ठे हुए थे, वे केवल भारतके ही नहीं थे। भारतके मुसलमान हिन्दुओंके लिए अधिकार माँगें, तो यह उनका कर्तव्य ही है; क्योंकि दोनों भारतकी सन्तान हैं। किन्तु विलायतमें रहनेवाले दूसरे देशोंके मुसलमान भी उसमें शामिल हुए, यह बहुत ही खुशीकी बात है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६–११–१९०७

२८१. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका चन्दा

हर वर्ष हम कांग्रेसका चन्दा इकट्ठा करते हैं। वैसा ही इस वर्ष भी होगा। अब हमारी ओरसे प्रतिनिधि जानेवाले हैं, इसलिए आशा है कि कांग्रेस-निधिके लिए बहुत-से भारतीय हमें चन्दा भेजेंगे। हम उसकी प्राप्ति स्वीकार करेंगे। लगभग २५ पौंड तो जोहानिसबर्गमें जमा हो गये हैं। चन्दा देनेवालोंके नाम अगले सप्ताह प्रकाशित करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६–११–१९०७

२८२. बचे हुए मेमन

प्रिटोरियामें ४०, पीटसबर्गमें २७, पॉचेफस्ट्रूममें २०, पीट रिटीफमें ३, इस प्रकार लगभग १०० मेमन बच गये हैं। इन्हें हम वीर समझते हैं। उनसे हमारी यह छोटी-सी प्रार्थना है कि अब हिम्मत न हारें और मेमन लोगोंकी तथा भारतीय समाजकी नाक रखें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-११-१९०७

२८३. पण्डितजीका जीवन-चरित्र

इतना शोर मचानेवाले भारतीयका इतिहास जाननेके लिए सभी भारतीय उत्सुक होंगे। इस अंकमें हम उनका चित्र दे रहे हैं। रामसुन्दर पण्डितकी आयु तीस वर्षकी है। उनके पिताजीका नाम कालिकाप्रसाद है। वे पुरोहिताई करते थे। पण्डितजीका जन्म बनारसमें हुआ था। बनारस संस्कृत पाठशालामें उन्होंने हिन्दी और संस्कृतका अध्ययन किया था। इधर नौ वर्षोंसे वे दक्षिण आफ्रिकामें पुरोहिताईका काम कर रहे हैं। उन्होंने नेटालमें विवाह किया है और उनकी सन्तानोंमें ढाई वर्षका एक लड़का और एक वर्षकी एक लड़की है। उनके बाल-बच्चे ग्रेटाउनमें रहते हैं। सन् १९०५में पण्डितजी ट्रान्सवाल आये। उनके परिश्रमसे जर्मिस्टनमें मन्दिर बना और सनातन धर्म सभाकी स्थापना हुई। एशियाई कानूनके सम्बन्धमें उनके कामको सब भारतीय जानते हैं। अन्तमें हम इतना ही चाहते हैं कि पण्डितजी दीर्घायु हों और निरन्तर समाज-सेवा करते रहें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-११-१९०७

२८४. भारतके लालाजीने क्या किया?

हम मानते हैं कि लाला लाजपतरायने तो देश-निकाला भोगकर सैर की है, क्योंकि उनकी मनोकामना फली है। उन्होंने पंजाबके भूमि-कानूनके विरुद्ध युद्ध मचाया; न कि अपनी सुख-सुविधाके लिए। वह कानून रद हो गया है। फिर लालाजी चाहे मांडलेमें बसें या लाहौरमें, इसकी उनको क्या परवाह हो सकती है? गम्भीरतापूर्वक बोलना बहुतेरोंको आता है। परन्तु उन सबकी बातोंपर लोग ध्यान नहीं देते। लेकिन जो कहा हुआ कर दिखाता है — बोले हुए वचनोंका पालन करता है — उसके वचन पागलके समान हों तो भी सब सुनते हैं। इसी कारण लाला लाजपतरायके भाषणका सारांश हम नीचे दे रहे हैं। इसमें नई बातें नहीं हैं। फिर भी चूँकि वे एक निर्वासित सेवकके विचार हैं इसलिए जानने योग्य हैं।

> भाइयो, सरकारका कहना है कि यह (पंजाबकी) जमीन उसने दी है, इसलिए इसपर हमें उसका अधिकार मानना चाहिए। सवाल यह है कि सरकारको जमीन मिली

कहाँसे? यह जमीन और ऊपरका आकाश दोनों तो शुरूसे ही हैं। इसके स्वामी पहले हिन्दू थे। बादमें मुसलमान आकर बस गये। हम हिन्दू और मुसलमान उन दोनोंके उत्तराधिकारी हैं। तब सरकार हमें बताये कि वह इस जमीनको कैसे छीन सकती है। यह जमीन खुदाकी है। उसने हमें दी है। उसपर [शासन करनेवाला] बादशाह भले हो, परन्तु वह किसी बादशाहके नौकरकी नहीं है। ऊँची तनख्वाह लेनेवाले अधिकारी हमारे राजा नहीं, बल्कि नौकर हैं। वे हमारा नमक खाते हैं।

हम सोते हुए सिंहके समान हैं। नींदमें देखकर कोई हमारी पूँछ खींचता है, कोई हमपर थूकता है, किन्तु यदि हम अपना रुतबा जानते हों तो हमें कोई नहीं सता सकता। हमारे दुश्मन हिन्दू-मुसलमानके बीच वैर करवाना चाहते हैं; सिक्ख और हिन्दुओंके बीच दरार डालना चाहते हैं। उनका बड़ेसे-बड़ा हथियार है हमारे बीच फिसाद बनाये रखना। प्रत्येक वस्तुमें अपना-अपना गुण रहता है। पानी बुझाता है। आग जलाती है। इसी प्रकार विदेशी शासकोंका गुण हममें फूट डालकर हमपर अपनी सत्ता कायम रखना है। हमारा गुण यह होना चाहिए कि हम उनके इस हेतुको असफल कर दें। हमारा कर्तव्य यह है कि हममें यदि कोई देशद्रोही हो तो उसको समाजसे निकाल दिया जाये। हमें वाइसरायके पास जाना चाहिए। इंग्लैंड जाना भी ठीक होगा। और यदि हम सच्चे हृदयसे मान लें कि अधिकारकी लड़ाईमें हमारे लिए मरना और जीना दोनों एक समान हैं, तो अधिकारी लोग तुरन्त कह देंगे, "हाँ, यह भूमि तो आपकी ही है।"

इस दर्दका दूसरा कोई इलाज है ही नहीं। हम संगठित बनें और रहें, यही है। यदि सरकार किसीकी जमीन छीनकर जमीनका नया कानून स्वीकार करनेवाले व्यक्तिको देना चाहे, और कानूनको स्वीकार करके जमीन लेनेवाला वह व्यक्ति हममें से ही कोई हो, तो उसे हम समाजका दुश्मन तथा दगाबाज समझें। सरकार यदि किसीकी जमीन छीनती है, तो दूसरोंके लिए यह शपथ लेना जरूरी है कि वे उस जमीनको नहीं लेंगे। हम मर्द बनें, औरत नहीं। *यदि आप अपनी शपथपर डटे रहेंगे तो आपको अर्जियाँ नहीं देनी पड़ेंगी। जब आप अपने शास्त्रों अथवा कुरान-शरीफकी शपथ लेंगे और आपसमें एक-दूसरेके प्रति वफादार रहेंगे तब इस दुनियामें ऐसा कोई नहीं जो आपका अपमान कर सके।*

भारतकी भूमि हिन्दूके लिए स्वर्ग है, मुसलमानके लिए बहिश्त है। हम करोड़ों मन अनाज पैदा करते हैं। फिर भी भारतकी सात करोड़ सन्तान हमेशा भूखी रहती है।

इस रोगका सर्वोत्तम उपाय यह है कि हम अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षा करें। हजारों मनुष्य प्लेगसे सदा मरते हैं, किन्तु सच्ची मौत वह मरता है जो औरोंके लिए अपनी जान देता है, फिर भले वह जेलमें दे या बाहर दे।

लालाजीने मांडलेसे जो पत्र लिखा है वह हम आगामी सप्ताहमें प्रकाशित करेंगे। वह जानने योग्य है। अपने पाठकोंसे हमारा अनुरोध है कि वे उपर्युक्त लेखको बार-बार पढ़ें तथा अपनी दक्षिण आफ्रिकाकी स्थितिपर इसे लागू करें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-११-१९०७

२८५. रामसुन्दर पण्डितका मुकदमा

जर्मिस्टनमें विराट सभा

हम पिछले सप्ताहके तारमें बता चुके हैं कि रामसुन्दर पण्डित शुक्रवार ८ तारीखको बिना अनुमतिपत्रके ट्रान्सवालमें रहनेके कारण गिरफ्तार कर लिये गये हैं। वे शुक्रवारको सवेरे स्वयं जर्मिस्टनमें अदालतके सामने खड़े थे। उस समय खुफिया पुलिसके आदमीने उनका नाम पूछा और अनुमतिपत्र माँगा। उन्होंने कहा, मेरे पास अनुमतिपत्र नहीं है। इसपर खुफियाने उन्हें उसी वक्त पकड़ लिया। श्री पोलकको मालूम हुआ तो वे तुरन्त जर्मिस्टन गये। श्री पण्डितसे जेलमें मिले। पूछनेपर श्री पण्डितने उत्तर दिया कि *मुझे जमानतपर बिलकुल नहीं छूटना है। मैं जेलमें ही रहूँगा।*

जेलमें जेलरने भी जमानतपर छूटनेके लिए उनपर बहुत दबाव डाला। किन्तु उन्होंने साफ इनकार कर दिया और कहा कि मैं अपनी कौमके लिए तथा अपने धर्मके लिए जेलमें ही रहूँगा।

जेलमें हालत

जेलमें हालत बहुत अच्छी थी। रहने, नहाने-धोने आदिकी सारी व्यवस्था उनके लिए कर दी गई थी। पण्डितजीके कथनानुसार, जब वे जेल गये थे तब उन्हें बुखार आता था। अब बिलकुल नहीं है। खाने-पीनेकी व्यवस्था समाजकी ओरसे की गई थी और दूध तथा मेवा बराबर पहुँचाया जाता था। इन चीजोंके अलावा और कुछ खाने से उन्होंने इनकार कर दिया।

तारोंकी वर्षा

जेलमें उनके पास बधाईके और हिम्मत बँधानेके बहुत-से तार आये। नेटाल भारतीय कांग्रेस, डर्बन इस्लामिया अंजुमन, डर्बन मेमन समिति, हिन्दू धर्म सभा (डर्बन), पारसी समिति (डर्बन), व्यास (प्रिटोरिया), सूरत हिन्दू संघ (डर्बन) के पाससे तार मिले। सभी तारोंमें पण्डितजीको धर्म और भारतीय समाजकी लड़ाईके लिए जेल जानेपर मुबारकबादी दी गई।

सोमवारको मुकदमा

मजिस्ट्रेटके सामने सोमवारको मुकदमेकी सुनवाई होगी, इस आशासे बहुत-सी जगहोंसे नेता लोग आये थे। जोहानिसबर्गसे मौलवी साहब अहमद मुख्त्यार, श्री ईसप मियाँ, इमाम अब्दुल कादिर, श्री उमरजी सालेजी, श्री एम० एस० कुवाड़िया, श्री जूसब इब्राहीम, श्री अहमद मूसाजी, श्री थम्बी नायडू, श्री पोलक, श्री मुहम्मद खाँ, श्री गुलाबभाई, श्री भट, श्री नारायणजी, श्री नवाबखाँ, श्री अलीभाई आकुजी वगैरह आये थे। प्रिटोरियासे श्री काछलिया, श्री पिल्ले, श्री व्यास, श्री मणिभाई आदि थे। क्रूगर्सडॉर्पसे श्री बाजा, वेरीनिजिंगसे अस्वात वगैरह थे। पुकार होनेके पहले लगभग १५० भारतीय अदालतके दरवाजेपर हाजिर हो गये थे। बहुत-से लोगोंके हाथोंमें फूलोंके हार वगैरह थे। साढ़े दस बजे श्री गांधीने खबर दी कि मुकदमा

स्थगित हो जायेगा, किन्तु सम्भव है, श्री रामसुन्दर पण्डित बिना जमानतके छूट जायेंगे। इसलिए लोग सड़कपर आतुरतापूर्वक पण्डितजीका स्वागत करनेके लिए खड़े थे।

ठीक ग्यारह बजे पण्डितजीको अदालतमें लाया गया। उनके आते ही अदालत भारतीयोंसे भर गई। सरकारी वकीलने मोहलत माँगी, जिससे प्रिटोरियासे श्री चैमने आ सकें। श्री गांधीने कहा :

"मेरे मुवक्किल चार दिनसे जेलमें हैं। वे जमानतपर नहीं छूटना चाहते। वे उपनिवेश छोड़कर जानेवाले नहीं हैं, बल्कि कानूनके अन्तर्गत सजा भोगेंगे। इसलिए मुकदमा आज ही चल सकता है। प्रिटोरियासे गवाहोंकी आवश्यकता नहीं है। इतनेपर भी यदि मुकदमेको स्थगित करना हो तो मुझे कोई आपत्ति नहीं। किन्तु मेरे मुवक्किलको बगैर जमानतके उनकी ही जिम्मेदारीपर छोड़ दिये जानेकी आज्ञा दे दी जाये।"

सरकारी वकीलने कहा कि बगैर जमानतके छोड़नेके बारेमें मैं अपनी सम्मति नहीं दे सकता, क्योंकि मुझे मामलेका ज्ञान नहीं है। श्री गांधीने कहा कि श्री पण्डित भागनेवाले नहीं हैं। भागें, यही तो सरकार चाहती है। फिर, ऐसे आदमीके लिए जमानत क्या हो सकती है, जो समाजके लिए ट्रान्सवालमें रहनेका अधिकार जताता हो और इसलिए सरकारके निकालनेपर भी निकलनेवाला न हो?

मजिस्ट्रेटने यह दलील स्वीकार की और पण्डितजीको उनकी जिम्मेदारीपर छोड़ दिया।

"हुर्रे" की आवाज

पण्डितजीके बाहर निकलते ही हुर्रेकी आवाजके साथ सैकड़ों लोगोंने उनका स्वागत किया। फूलोंकी वर्षा की गई और सबने हाथ मिलाये। बादमें बस्तीमें सभा करनेका निश्चय किया गया, इसलिए सब सनातन धर्म सभाके भवनकी ओर चल दिये।

सभा

सभामें श्री लाल बहादुरसिंह द्वारा प्रस्ताव किया जानेपर श्री मौलवी साहब अहमद मुख्त्यार सभापतिके आसनपर विराजमान हुए। मेहमानोंको सभा भवनके अन्दर बैठाकर जर्मिस्टनके लोग बाहर खड़े रहे। मौलवी साहबने भाषण देते हुए कहा कि पण्डितजी बधाईके योग्य हैं। उन्होंने सारे भारतीय समाजकी सेवा की है। जेल सच्चा महल है, यह उन्होंने सिद्ध कर दिया है। समय आनेपर मैं स्वयं भी जेल जानेको तैयार हूँ। मौलवियों और धर्मगुरुओंका कर्तव्य है कि ऐसे दुःखके समय वे लोग आगे बढ़ें।

श्री इमाम अब्दुल कादिरने कहा कि रामसुन्दर पण्डितके उदाहरणसे सबको बहुत हिम्मत बाँधनी चाहिए।

श्री ईसप मियाँने कहा कि सरकारसे किसीको जरा भी डरना नहीं चाहिए।

श्री गांधीने कहा कि अभी तो लड़ाईकी शुरुआत है। इसमें सबसे बड़ी जीत यह है कि हिन्दू-मुसलमान एक होकर सारे समाजके कामके लिए लड़ रहे हैं।

श्री अहमद मूसाजीने पण्डितजीकी तारीफ करते हुए कहा कि वे भी जान रहते पंजीयन नहीं करवायेंगे।

श्री मणिभाईने प्रिटोरिया हिन्दू धर्म सभाकी ओरसे आभार माना।

श्री थम्बी नायडूने कहा, पण्डितजी जेल जायेंगे तभी खरा रंग जमेगा। उनके समान सबको करना है।

श्री कुवाड़ियाने कहा, हमें कोई डर नहीं है। सरकार पण्डितजीको कुछ करेगी, यह नहीं दिखाई देता।

श्री मुहम्मद खाँने कहा, मैं स्वयं स्वयंसेवक हूँ, इसलिए जिन्होंने स्वयंसेवकका काम किया है उनपर मुझे गर्व है।

श्री उमरजीने निम्न लिखित गुजराती दोहा कहा:

"हे माँ, तू तीन प्रकारके लोगोंको ही जन्म देना — दाताको, भक्तको या शूरको। नहीं तो, तू वन्ध्या ही रहना। व्यर्थ ही अपना तेज क्यों खोती है?"[1]

इस सूक्तिके अनुसार, पण्डितजीकी माँने शूर पण्डितजीको जन्म दिया है।

श्री अस्वातने कहा श्री पण्डितके उदाहरणसे सबको समझना चाहिए कि पंजीयन कार्यालय एक जालके समान है। उसमें किसीको फँसना नहीं चाहिए।

श्री काछलियाने पण्डितजीका आभार माना और कहा कि प्रिटोरियामें जितने लोग बचे हैं, वे कभी पंजीकृत नहीं होंगे।

श्री अलीभाईने कहा कि अगर प्रिटोरियामें कानमिया स्वयंसेवक तैयार नहीं होंगे तो वे स्वयं वहाँ खास तौरसे जायेंगे।

श्री व्यासने बताया कि पण्डितजीकी हिम्मत खरी उतरी है। उन्होंने प्रिटोरियामें रहना स्वीकार किया था।

श्री लाल बहादुर सिंहने सब सज्जनोंका आभार माना। श्री पोलकने कामना व्यक्त की कि अब पण्डितजीके बाद मौलवी साहबकी बारी आये।

इसके बाद मौलवी साहबने थोड़ी देर और भाषण देकर सभा समाप्त की।

अन्तमें सबको केले, सन्तरेका नाश्ता और चाय लेमोनेड वगैरह दिया गया।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६–११–१९०७

२८६. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

बहादुर दर्जी और गोरा व्यापारी

यहाँके दर्जियोंकी मुसीबतका विवरण इस पत्रमें कुछ तो छप चुका है। किन्तु यह किस्सा इतना महत्त्वपूर्ण है कि मैं और भी अधिक विवरण दे रहा हूँ। श्री टी० आलब्रेटने दर्जियोंको निम्नानुसार पत्र लिखा है:

> उपनिवेश-सचिवके पिछले भाषणसे मालूम होता है कि ट्रान्सवाल सरकारने भारतीयोंके लिए अभी-अभी जो कानून बनाया है उसके सामने यदि भारतीय नहीं झुकेंगे तो ट्रान्सवालकी सरकार परवाना नहीं देगी, कानूनके अनुसार उन्हें गिरफ्तार करेगी और जेल भेजेगी। और आप लोगोंने कानूनके सामने न झुकनेकी प्रतिज्ञा की है, इसलिए मौजूदा प्रसंगसे बचनेके लिए हमें आपकी मददकी आवश्यकता है। अतः हमें खेदपूर्वक कहना चाहिए कि आपको हमारी दूकानसे जिस मालकी भी जरूरत पड़े वह आप नकद कीमत देकर लें तथा चालू खातेकी रकम दिसम्बरके पहले चुका दें।

१. "जननी जणजे त्रणज जन, दाता, भक्त कां शूर। नहिं तर रहेजे वांझणी, रखे गुमावे नूर।"

इससे यह न समझें कि इसमें हमारा उद्देश्य कुछ और है। ईश्वर करे कि आपकी अव्यवस्थित स्थितिका परिणाम विजयपूर्ण निकले और समाधान हो जाये। उस हालतमें, हम चाहते हैं, हमारा जैसा व्यवहार चल रहा था वही फिरसे शुरू हो जाये।

आपने हमें व्यापार तथा लेनेदेनमें जो सन्तोष दिया है उसके लिए हम आभारी हैं।

यह पत्र विनयपूर्ण है। इसमें अपमानका भाव नहीं है। फिर भी इसका अर्थ यही है कि यदि दर्जी पंजीयन न करवायें तो उन्हें माल उधार नहीं मिलेगा। इससे दर्जी चिढ़ गये हैं। वे डरपोक होते तो डरके मारे पंजीयन करवानेका विचार करते; किन्तु बहादुर हैं, इसलिए उन्होंने आलब्रेटके मालके सारे नमूने उसके यहाँ फेंक दिये और २१ व्यक्तियोंके हस्ताक्षरसे निम्नानुसार पत्र लिखा:

निवेदन है कि आपका गुजरातीमें लिखा हुआ नोटिस हमें मिला। हम अत्यन्त खेदपूर्वक सूचित करते हैं कि आज, अर्थात् तारीख ७ नवम्बर १९०७, से हममें से कोई आपसे किसी भी प्रकारका लेनदेन नहीं करना चाहता। हम आपसे एक पेनीका भी माल नहीं खरीदेंगे। कारण यह है कि हमने पंजीयन न करवानेकी शपथ ली है। हम उसे, कितनी ही हानि क्यों न हो, कभी तोड़ना नहीं चाहते। आपका जो भी पैसा निकलता है, वह हम सुविधा होते ही चुका देंगे।

इससे आलब्रेट घबड़ाये। बहिष्कार मजबूतीसे जमा। उनकी दूकानपर यह देखनेके लिए एक धरनेदार बैठाया गया कि यदि उनकी दूकानसे कोई आदमी कपड़ा लेकर सीनेके लिए दे तो वे वह काम लेनेसे भी इनकार कर दें। इसपर श्री आलब्रेटने बहुत अनुनय-विनय की और निम्नानुसार माफी माँगी:

हमने अंग्रेजी तथा गुजरातीमें अपने ग्राहकोंके नाम जो नोटिस भेजा था उसका उन्होंने यह अर्थ किया है कि हमने उन्हें पंजीयन करानेको और, यदि पंजीकृत न हों तो, केवल नकद व्यवहार करनेको कहा है। इस प्रकारका अर्थ करके वे चिढ़ गये हैं और हमारा बहिष्कार कर रहे हैं।

हमें शायद यह कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि उनकी भावनाको चोट पहुँचानेका हमारा स्वप्नमें भी इरादा नहीं था। हम समझ सकते हैं कि कानूनके सामने झुकनेके लिए उनपर जरा भी दबाव डाला जाये तो उन्हें गुस्सा आ जायेगा। ब्रिटिश राज्यमें सबको अपनी मर्जीके अनुसार चलनेका अधिकार है। इसलिए हम अपना पत्र और अपनी माँग बिना शर्त वापस लेते हैं, और आशा करते हैं कि भारतीय समाजकी जीत होगी और उसे न्याय प्राप्त होगा। हमारी भावना सच्ची है, यह दिखानेके लिए, और हम अपने ग्राहकोंको चाहते हैं, यह साबित करनेके लिए हम लड़ाईमें सहायतार्थ २५ पौंडका चेक भेज रहे हैं।

हमें आशा है कि बहिष्कार बन्द हो जायेगा। किन्तु वह तो केवल दर्जियोंकी मर्जीपर निर्भर है। बहिष्कारके समाप्त होनेपर हम पहलेके समान व्यापार करके खुश होंगे और उन्हें खुश करनेका प्रयत्न करेंगे। किन्तु हमारे पत्रका इस बातसे सम्बन्ध नहीं है। हमने जो भूल की है उसे सुधारनेके लिए, और हमारा इरादा किसीको चोट पहुँचानेका नहीं था इसलिए यह पत्र लिखा है। हमारा जो पावना है वह, हमें आशा है, समयानुसार चुकाया जायेगा।

मेरी जानकारीमें ऐसा क्षमा-याचना पत्र कभी गोरोंकी ओरसे नहीं लिखा गया। मैं मानता हूँ कि यह विवेकपूर्ण और सन्तोषजनक है। यह उदाहरण दर्जियोंको मान प्रदान करनेवाला है, और सबके शिक्षा लेने योग्य है। गोरोंसे हम नहीं डरेंगे तो वे माल देना बन्द कर देंगे, सो बात नहीं। बन्द कैसे कर सकते हैं? क्या उन्हें पैसे नहीं चाहिए? मैंने यह भी सुना है कि इस पेढ़ीने पिछले पाँच वर्षोंमें भारतीयोंके साथ ६०,००० पौंडका व्यापार किया है, और उसमें से आजतक केवल २३ पौंड ही खोये हैं। भारतीयोंमें प्रामाणिकता होगी तो माल घर बैठे मिलेगा।

मूसा इस्माइल मियाँ

श्री मूसा इस्माइल मियाँ हज करने गये हैं। मैं उन्हें बधाई देता हूँ। उनके बड़े भाई श्री ईसप मियाँ समाजकी सेवा करनेका धर्म-कार्य कर रहे हैं। इसलिए कहा जा सकता है कि दोनों भाई इहलोक और परलोककी साधना कर रहे हैं। वे सदा धर्मनिष्ठ रहें और कौमकी सेवा करते रहें। *लाखों कमानेसे यह कमाई अधिक बड़ी है।*

और दगा?

सुना है कि श्री खमीसाकी दूकानमें गुप्त तरीकेसे पंजीयन पत्र दिये जाते हैं। ऐसे पंजीयनपत्र नौ दिये जा चुके हैं। अर्जी नहीं ली जाती, परन्तु जिसने अर्जी दी हो उसे पंजीयनपत्र दिया जाता है।

कानूने जान ली

एक चीनीने पंजीयनपत्र लेनेके बाद शर्मके मारे आत्महत्या कर ली है। इससे त्रास फैल गया है। चीनी संघके प्रमुख श्री क्विनने अखबारोंमें निम्नानुसार पत्र लिखा है:

> एक चीनी द्वारा आत्महत्या की जानेकी खबर अखबारमें छपी है। उसे पढ़नेके पहले मेरे एक आदमीने मुझे एक पत्र दिया, जो चीनी भाषामें लिखा हुआ था तथा उसपर मरनेवालेके हस्ताक्षर थे। पत्रका अनुवाद इस प्रकार है:
>
> > चाऊ क्वाईकी ओरसे चीनी संघके अध्यक्षको, १० नवम्बर १९०७:
> >
> > मैं इस दुनियाको छोड़नेवाला हूँ। इसलिए मैंने आत्महत्या क्यों की, यह लोगोंकी जानकारीके लिए प्रकट कर देना चाहिए। जबसे मैं दक्षिण आफ्रिका आया, घरेलू नौकरका काम कर रहा हूँ। मैं हमेशा अपने सेठके घर रहता हूँ। मेरी बोली दूसरे चीनियोंकी बोलीसे बिलकुल भिन्न है। और मेरे देशबन्धुओंके साथ मेरा बहुत ही कम व्यवहार है। मेरे सेठने पंजीयन करा लेनेकी सलाह दी थी। पहले मैंने पंजीयन करानेसे इनकार किया। तब मेरे सेठने मुझे नौकरीसे बरखास्त करनेकी धमकी दी। नौकरी छूटनेका डर लगा, इसलिए मुझे लाचारीसे पंजीयन कराना पड़ा। किन्तु तबतक मुझे पंजीयन करानेसे होनेवाली बर्बादीकी जानकारी नहीं थी। बादमें मेरे एक दोस्तने आकर मुझे सारी बातें समझाईं और कानूनका चीनी अनुवाद मुझे पढ़ाया। तब मुझे मालूम हुआ कि मेरी तो गुलामों-जैसी हालत हो जायेगी। गुलामी भोगना मेरे और मेरे देशबन्धुओंके लिए कलंकरूप है। ये सारी बातें पंजीयन करानेके पहले मुझे मालूम नहीं थीं। किन्तु अब पछतावा करूँ तो बेकार है। मैं अपने देशभाइयोंको कौन-सा मुँह दिखाऊँ? मुझे आशा है कि मेरी भूलसे मेरे दूसरे देशभाई चेतेंगे।

इसके बाद श्री क्विन इसपर निम्नानुसार टीका करते हैं:

इस पत्रको पढ़नेके बाद मुझे कितनी पीड़ा हुई होगी, उसकी आप कल्पना कर सकेंगे। तुरन्त ही मैंने अखबार पढ़ा, तो मालूम हुआ था कि चाऊ क्वाईने जैसा कहा था वैसा कर डाला। उसकी लाशके लिए मेरे संघने तुरन्त ही अर्जी दी और अभी मैं उसकी दफन-क्रिया करमें आ रहा हूँ। उस क्रियाके समय लगभग ७० चीनी सदस्य उपस्थित थे।

मेरे समाजके इस आदमीको धमकी दी गई थी, इस आरोपको मैं बिलकुल गलत कहता हूँ और उसे बिलकुल महत्त्व नहीं देता। इस खेदजनक घटनाका अर्थ क्या हुआ? उसे खुले आम कहनेमें मुझे जरा भी संकोच नहीं है। ऐसे अवसरपर मेरा खून गरम हुए बिना नहीं रहता। इसलिए मैं सोच-समझकर यह आरोप लगाता हूँ कि ट्रान्सवाल सरकारने निरपराध मनुष्यका खून करनेके समान काम किया है; और इसका कारण केवल यही है कि वह एशियाई था। एशियाई कानून पास हुआ तबसे हम बड़ी उलझनमें पड़ गये थे। और अब तो एशियाई कानूनने एक आदमीकी जान ले ली है। जिस कानूनसे इतनी दुःखदायी घटना हो सकती है, क्या उसे ट्रान्सवालके गोरे न्यायपूर्वक चला सकेंगे? अथवा, क्या ट्रान्सवालके लोग अब भी कहेंगे कि एशियाई कानून कामका है, ट्रान्सवालके गोरोंकी रक्षाके लिए आवश्यक है, और यदि एशियाई ऐसा मान लेते हैं कि एशियाई कानूनसे उनका अपमान होता है तो इससे हमारा क्या बिगड़ा? या, अब लोग ऐसा नहीं कहेंगे? पश्चिमके लोगोंको हम सभ्य मानते हैं; अतः वे ऐसा समझेंगे यह हम कैसे मान सकते हैं?

शाहजी साहब

शाहजी साहबका मुकदमा बुधवारको अदालतमें आया था। सैकड़ों भारतीय उपस्थित थे। श्री मुहम्मद शहाबुद्दीनने मुकदमा वापस लेनेका बहुत प्रयत्न किया, किन्तु वैसा हो नहीं सका। उन्होंने बयान देते हुए कहा कि उनका विचार फरियाद करनेका नहीं है। धर्मका खण्डन करनेके कारण शाहजी साहबने मारा, किन्तु वह उस मारको अपने बापकी मारके समान समझता है। अदालतने शाहजी साहबको चेतावनी देकर छोड़ दिया।

व्यास और दूसरे धरनेदार पकड़े गये

श्री गौरीशंकर व्यास, श्री लछमन तथा श्री शरफुद्दीन धरना देते हुए पकड़े गये हैं। उन सबको बिना जमानतके छोड़ दिया गया है। उन्होंने जमानत देकर छूटनेसे इनकार किया। मुकदमा १५ तारीखको होगा। प्रिटोरियामें शोरगुल मचा हुआ है। सब जोशमें हैं। उनके लिए बधाईके तार गये हैं।

गोरोंमें खलबली

गोरोंमें अब खलबली मची हुई है। कुछ गोरे सरकारके पास शिष्टमण्डल ले जाना चाहते हैं। विशेष खबर बादमें देनेकी आशा है।

कांग्रेसके लिए प्रतिनिधि

श्री ईसप मियाँकी अध्यक्षतामें बुधवारको ब्रिटिश भारतीय संघकी बैठक हुई थी। बहुत-से सदस्य उपस्थित थे। श्री फैन्सी, श्री कुवाड़िया, श्री काछलिया, श्री अहमद मूसाजी, श्री गोल्वी

साहब अहमद मुख्त्यार, इमाम अब्दुल कादिर और श्री गांधी आदिने भाषण दिये। बादमें श्री उमर हाजी आमद झवेरी, अमीरुद्दीन मुहम्मद हुसेन फजंदार, श्री हाजी इब्राहीम अहमद दीनदार, श्री अहमद सालेजी कुवाड़िया, श्री सुलेमान मुदजी कासिम तथा श्री पीरन मुहम्मदको सूरत कांग्रेसके लिए प्रतिनिधि नियुक्त किया गया। उसी समय कांग्रेसके चन्देकी वसूली शुरू की गई। श्री अमीरुद्दीनने भाषण देते हुए खूब प्रयत्न करनेको कहा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-११-१९०७

२८७. डर्बनमें दीवाली-महोत्सव

ग्रे स्ट्रीटमें श्री अब्दुल लतीफके मकानमें दीवालीका त्यौहार मनानेके लिए हिन्दुओंका एक सम्मेलन हुआ। मकान अच्छी तरह रोशनीसे सजाया गया था और वादक इत्यादि भी बुलाये गये थे। मुहूर्तके अनुसार सरस्वती-पूजन होनेके बाद केशवलाल महाराजने दीवाली-महात्म्य पढ़कर सुनाया। श्री अम्बालालजीने आशीर्वचनके श्लोक सुनाये। उसके बाद सम्मेलनकी समितिका एक शिष्टमण्डल श्री गांधीको लेनेके लिए स्टेशन गया। लगभग साढ़े सात बजे श्री गांधी आये। उनके साथ सेठ अब्दुल करीम, रुस्तमजी सेठ, सेठ दाउद उस्मान इत्यादि भी पधारे थे। श्री अम्बारामने देश-सेवापर प्रभावशाली भाषण दिया। श्री गांधीने ट्रान्सवालके भारतीयोंकी स्थिति बताते हुए कहा कि आज तो ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी होली है, और जब वे संघर्षमें जीतेंगे, तभी उनकी वास्तविक दीवाली कहलायेगी। श्री गांधीने ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी स्थितिका विस्तारसे चित्रण किया और उससे सभी श्रोताओंमें गम्भीर भावना जाग्रत हुई। बादमें सेठ अब्दुल करीम, श्री पारसी रुस्तमजी आदिने भी भाषण दिये। उसके बाद ट्रान्सवालकी मददके लिए थाली घुमाई गई, जिसमें पाँच पौंडसे ऊपर रकम आई। तदुपरान्त प्रसाद इत्यादि बाँटा गया और फिर संगीतके बाद सभा विसर्जित हुई।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-११-१९०७

२८८. भाषण: हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें

[जोहानिसबर्ग
नवम्बर १७, १९०७]

इसके बाद श्री गांधीने डर्बनसे प्राप्त श्री हाजी हबीबका उत्साह देनेवाला पत्र पढ़ा। बादमें उन्होंने जेलके बारेमें, अखबार बेचनेवालोंकी हड़तालके बारेमें तथा प्रिटोरियाके धरनेदारोंके मुकदमेवाले लछमनके सम्बन्धमें हकीकत बताई। आगे उन्होंने कहा कि श्री हॉस्केन, जो प्रिटोरियाकी सभामें हमें समझानेके लिए आये थे, आज सरकारको समझानेकी तजवीज कर रहे हैं। नेटालके सेठ पीरन मुहम्मद इस जहाजसे भारत नहीं जा सके। श्री रिच विलायतमें बहुत श्रम कर रहे हैं, उन्हें व्यक्तिगत खर्चके लिए अनुमति देनी चाहिए। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके लिए श्री फैन्सी चन्दा इकट्ठा कर रहे हैं, प्रत्येक सज्जनको चाहिए कि उन्हें यथा-शक्ति चन्दा दें। पण्डितजीके मुकदमेके बारेमें श्री स्मट्स फिरसे जाँच कर रहे हैं, इससे स्पष्ट होता है कि सरकार कितनी डर गई है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-११-१९०७

२८९. पत्र: भारतके वाइसरायको

डर्बन
नवम्बर १८, १९०७

सेवामें
परमश्रेष्ठ वाइसराय महोदय, [भारत

श्रीमान् लॉर्ड महोदय,]

हम आपकी अनुमतिसे इसके साथ उन प्रस्तावों और तारकी प्रतियाँ भेज रहे हैं, जो रामसुन्दर पण्डित नामक एक हिन्दू पुरोहितके प्रति सहानुभूति प्रकट करते हुए कांग्रेस-भवन, पाइन स्ट्रीट, डर्बनमें आयोजित आमसभामें सर्वसम्मतिसे पास और स्वीकृत किये गये हैं। रामसुन्दर पण्डितको ट्रान्सवालके जर्मिस्टन नगरमें नये एशियाई अध्यादेशके अन्तर्गत एक मासकी सादी कैदकी सजा दी गई है।

इस अभियोगका न्याय-विरोधी रूप लॉर्ड महोदयके सम्मुख प्रत्यक्ष है और लॉर्ड महोदयकी व्यक्तिगत सहानुभूतिका विश्वास रखते हुए हम सादर निवेदन करते हैं कि भारत सरकार

दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंको, जो तिरस्कृत और अपमानित किये जा रहे हैं, अपना संरक्षण और समर्थन दे। हमें विश्वास है कि हमारे निवेदनपर ध्यान दिया जायेगा।

आपके, आदि,
दादा उस्मान
एम० आंगलिया
संयुक्त अवैतनिक मन्त्री,
नेटाल भारतीय कांग्रेस[1]

[संलग्न पत्र]

गुरुवार, १४ नवम्बर, १९०७ के सायं नेटाल भारतीय कांग्रेसके तत्त्वावधानमें आयोजित भारतीयोंकी सार्वजनिक-सभामें निम्न प्रस्ताव स्वीकृत किये गये।

नीचेके तारकी प्रति भी पास और स्वीकृत की गई। सभामें तय किया गया कि इसकी प्रतियाँ महामहिम सम्राट्के उपनिवेश-मंत्री और ट्रान्सवालके माननीय उपनिवेश-सचिवको भेजी जायें।

प्रस्ताव सं० १ — वफादार ब्रिटिश भारतीयोंके प्रति ट्रान्सवालका विधान-मण्डल जो अन्याय और कठोरता बरत रहा है उसको सुनकर नेटालकी भारतीय आबादीके प्रतिनिधि भारतीयोंकी इस सभाको गहरा दुःख हुआ है।

प्रस्ताव सं० २ — यह संघ निश्चय करता है कि रामसुन्दर पण्डित और उनके परिवारको सहानुभूतिके पत्र तथा तार भेजे जायें और अपने समाजकी आध्यात्मिक आवश्यकताओंकी पूर्तिके निमित्त अपने लिए पुरोहितके अधिकार प्राप्त करनेके उद्देश्यसे उन्होंने जो रुख अख्तियार किया है उसपर उनको बधाई दी जाये। आगे यह निश्चय किया जाता है कि नेटाल-भरमें एक दिन कारोबार बन्द रखा जायें और इसको कार्यरूप देनेके लिए शनिवार, १६ तारीखको सब भारतीय दूकानें और व्यावसायिक स्थान बन्द रखे जायें, ताकि ट्रान्सवालमें भारतीयोंके ऊपर जो निर्योग्यताएँ लगी हैं वे अधिक व्यावहारिक रूपमें दर्ज हो सकें। यह सभा हिन्दू समाजके साथ, उसके एक आध्यात्मिक नेता और मार्गदर्शकसे वंचित कर दिये जानेपर, हार्दिक सहानुभूति प्रकट करती है और यह सोचकर दुःख अनुभव करती है कि कोई सरकार हिन्दुओंको धार्मिक मार्ग-दर्शकसे वंचित करके उनके धार्मिक कृत्यों और संस्कारोंके उचित सम्पादनमें परोक्ष रूपसे हस्तक्षेप करनेका अविवेक दिखाये। इन प्रस्तावोंकी प्रतियाँ उपनिवेश-मन्त्री, ट्रान्सवाल-सरकार तथा ब्रिटेन और भारतके समाचारपत्रोंको भेजी जायें।

तार : नेटालके भारतीय रामसुन्दर पण्डितकी गिरफ्तारी और सजाका सादर विरोध करते हैं। यह एक ब्रिटिश उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंकी निजी स्वतन्त्रता और उनके धर्ममें अनुचित हस्तक्षेप है। ब्रिटिश सरकारसे साम्राज्य-हितके लिए हस्तक्षेपकी प्रार्थना है।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया ऑफिस रेकर्ड्स : जे० ऐंड पी०, ५९८/०८

१. मूलमें हस्ताक्षर संलग्न पत्रके नीचे दिये गये हैं।

२९०. ट्रान्सवालके भारतीयोंको सूचना

जोहानिसबर्ग
बॉक्स ६५२२
नवम्बर १९, १९०७

संघके आँकड़ोंसे[1] सभी भारतीयोंने देखा होगा कि संघके पास इस समय बहुत कम पैसा है और संघर्ष जबरदस्त है। यद्यपि बहुत-सा काम बिना दामके हो जाता है, फिर भी कुछ तो खर्च होना ही है, और होता है। तार दिये जाते हैं, सैकड़ों पत्र लिखे जाते हैं, बहुत-सा टंकनका काम होता है, कुछ छपाई होती है और अखबारोंमें खर्च होता है। ये सारे खर्च छोटे हैं, फिर भी विचार करें तो कुल मिलाकर काफी खर्च हो जाता है।

बहुत-से शहरोंमें थोड़ा-बहुत चन्दा हुआ है, किन्तु वह रकम संघको नहीं भेजी गई। जिनके पास रकम इकट्ठी हुई हो, उन्हें तथा दूसरे भारतीयोंको भी चाहिए कि जैसे बने वैसे, जल्दी ही रकम संघको भेज दें। यह हमारी प्रार्थना है। हरएकको बदस्तूर पहुँच भेजी जायेगी। हम आशा करते हैं कि इस विषयमें कोई ढील नहीं होगी। यदि पैसा व्यक्तिशः भी भेजा गया, तो स्वीकार किया जायेगा। इतना ही।

ईसप मियाँ, अध्यक्ष
कुवाड़िया, खजांची
मो० क० गांधी, मन्त्री

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, २३-११-१९०७

२९१. पत्र: मणिलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
नवम्बर २१, १९०७

प्रिय मणिलाल,

मेरा खयाल है, मैंने तुम्हें पहले कभी अंग्रेजीमें नहीं लिखा। आज मुझे लाचारीसे गुजरातीके बजाय अंग्रेजीमें लिखना पड़ता है। मैं आज 'रामायण' और संशोधित[2] 'गीता' भेज रहा हूँ। 'रामायण' की जिल्द ठीकसे बँधवा लो। ध्यान रखो कि वह फिर खराब न हो। किताबों और दूसरी चीजोंको[3], जो तुम्हारे पास हों, तुम्हें सावधानीसे काममें लाना सीखना चाहिए। अगली बार वहाँ जानेपर तुम्हारी परीक्षा लेकर संतोष प्राप्त करनेकी आशा रखता हूँ। तुम्हें जेलवाले भजन[4] जबानी याद होने चाहिए। मगनलालको चाहिए कि वे एक भजन-

१. देखिए परिशिष्ट ७।
२. छन्दबद्ध ?
३. मूल अंग्रेजीमें जो शब्द आया है उसका अर्थ होगा "आसान चीज" या "आसान बात"
४. यह गुजरातीमें "जेलना कान्यो" शीर्षकसे छपा था।

मण्डली तैयार करें। ऐसे काममें यदा-कदा थोड़ा समय लगा देनेमें कोई दिक्कत नहीं होनी चाहिए। तुम उन्हें यह सुझाव दे सकते हो। यह पत्र उन्हें पढ़कर सुना दो। 'रामायण' का क्या उपयोग करनेका विचार है, सो लिखना। उसका अर्थ कौन बतायेगा, या तुम्हारा विचार[1] छन्दोंको बिना समझे पढ़नेका है?

तुम्हारा शुभचिन्तक,
मोहनदास

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ८२) से सौजन्य : सुशीलाबहन गांधी।

२९२. पत्र : गो० कृ० गोखलेको

जोहानिसबर्ग
नवम्बर २२, १९०७

प्रिय प्रोफेसर गोखले,

मैंने आपके नाम श्री अमीरुद्दीन फजंदारके हाथ एक पत्र[2] भेजा है। श्री फजंदार ट्रान्सवालके एक प्रतिनिधिके रूपमें सूरत कांग्रेसमें भाग लेंगे। क्या मैं आपका ध्यान इस बातकी ओर आकर्षित कर सकता हूँ कि हम यहाँ जिस संघर्षसे होकर गुजर रहे हैं, उसके परिणामस्वरूप हमने यह अनुभव किया है कि हम भारतीय पहले हैं और हिन्दू, मुसलमान, तमिल, पारसी आदि पीछे। आप यह भी देखेंगे कि हमारे सब प्रतिनिधि मुसलमान हैं। मुझे स्वयं इस बातसे प्रसन्नता है। और यह भी हो सकता है कि वहाँ कांग्रेसमें भाग लेनेवाले ऐसे बहुत-से मुसलमान हो जायेंगे जिनके सम्बन्ध दक्षिण आफ्रिकासे रहे हैं। क्या मैं आपसे यह अनुरोध कर सकता हूँ कि आप उनके सम्बन्धमें दिलचस्पी लें और उनको पूरा आराम दें? हो सकता है, हिन्दू-मुस्लिम एकता इस कांग्रेसकी एक विशेषताके रूपमें सामने आये। संघर्षके शेष समाचार आप समाचारपत्रोंसे जानते ही हैं।

आपका हृदयसे
मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१०९) से।

१. मूल अंग्रेजीमें यहाँ जो शब्द आये हैं उनका अर्थ होगा "तुम्हारा उद्देश्य"।
२. देखिए "पत्र: गो० कृ० गोखलेको", पृष्ठ ३५७।

२९३. पत्र : 'ट्रान्सवाल लीडर' को

[जोहानिसबर्ग
नवम्बर २३, १९०७ के पूर्व]

[सम्पादक
'ट्रान्सवाल लीडर'
जोहानिसबर्ग

महोदय,]

मुझे अपने साथी पुरोहित रामसुन्दर पण्डितके मुकदमेमें उपस्थित होनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। एक खयाल मेरे दिमागमें जोरसे आया कि ट्रान्सवालके कानूनोंमें जरूर ही कोई बुनियादी खराबी है। जैसा कि अब हर कोई जानता है, मैंने इमाम कमालीकी उस कार्रवाईसे, जिसे मैंने कुरानकी हिदायतके खिलाफ समझा, गुस्सा होकर उसको पीटा था। मुझे इसपर ५ पौंड जुर्मानेकी या कैदकी सजा दी गई। एक बेरहम दोस्तने, जो अपनी शराफतकी वजहसे अपनेको मेरा शागिर्द बताता है, जुर्माना दे दिया और मैं जेलसे बच गया। मैंने फिर मुहम्मद शहाबुद्दीनको पीटा, जिसने अपने बयानमें मंजूर किया कि उसने अपनी कुरानकी कसम तोड़ी है और यह कहा कि उसको पीटनेमें मेरा खयाल वैसा ही था जैसा बापका बेटेके लिए होता है। इसलिए मुझे मेहरबान अदालतने यह चेतावनी देकर छोड़ दिया कि मुझे किसी भी वक्त सजाके लिए बुलाया जा सकता है।

रामसुन्दर पण्डितने, जहाँतक मैं जानता हूँ, और मैं उनके बारेमें कुछ जानता हूँ, कभी किसीको नहीं पीटा; फिर भी उनको एक महीनेकी कैदकी सजा दे दी गई, क्योंकि उनके पास — एक ब्रिटिश प्रजाके पास — कागजका वह टुकड़ा न था जिसमें उनको एक ब्रिटिश उपनिवेशमें अपने देशभाइयोंकी धार्मिक आवश्यकताएँ पूरी करनेका अधिकार दिया गया होता।

मैंने हमेशा जैसा समझा है उसके मुताबिक यदि कोई आदमी जेलके लायक था तो वह मैं था, और फिर भी किसीके लिए यह सम्भव हो सका कि वह मेरे लिए उस चीजको खरीद ले जो उसकी नजरोंमें मेरी आजादी थी, जब कि रामसुन्दर पण्डितको लाजिमी तौरपर एक महीनेके लिए उन लोगोंके संसर्गसे, जिनसे उन्हें हर रोज मिलनेकी आदत थी, लगभग बिलकुल अलग कर दिया गया और उनके धार्मिक कामसे उनका सम्बन्ध तोड़ दिया गया। इस खयालसे मैं बिलकुल काँप उठता हूँ। मैं महसूस करता हूँ कि मैं जेलमें हूँ और रामसुन्दर पण्डित आजाद हैं। खुदा उनको चैन और हिम्मत दे।

[आपका, आदि,
मुहम्मद शाह]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-११-१९०७

२९४. पण्डितजीकी देश-सेवा

यही माना जायेगा कि रामसुन्दर पण्डितने जेल जाकर जो सेवा की है वैसी सेवा जेलके बाहर रहनेवाले भारतीयोंने, फिर वे कितने ही बड़े क्यों न हों, नहीं की। पण्डितजीने हमारी स्वतन्त्रताका दरवाजा खोल दिया है। उस रास्तेसे हम सब प्रवेश कर सकते हैं। कांग्रेसके अध्यक्षका कहना है कि पण्डितजीने जेल जाकर उसे पवित्र कर दिया है। यह बिलकुल ठीक है। जितने निरपराध लोग जेलमें जाते हैं उसे उतना ही पवित्र करते हैं।

पण्डितजी और उनके कुटुम्बको हम भाग्यशाली समझते हैं। उनका नाम आज सारे दक्षिण आफ्रिकामें गाया जा रहा है और भारतमें भी गाया जायेगा। यह सच्ची सेवाकी तासीर है। पण्डितजीने निडर होकर अपने जीवनका सुख देश-सेवापर न्योछावर किया है। इसे हम सच्ची सेवा मानते हैं।

अब समाज क्या करेगा? इस प्रश्नका उत्तर एक ही है। पण्डितजीको जेल भेजनेके बाद जो भी व्यक्ति खूनी कानूनके सामने झुकेगा उसे हम मनुष्य नहीं कह सकते। हमने जो युद्ध छेड़ा है वह खेल नहीं है। यह कोई दाल-भातका कौर नहीं है। जो विजय प्राप्त करनी है वह मामूली नहीं है। विजयके हिसाबसे हमें कष्ट भी उठाना होगा। सरकारको जबतक विश्वास नहीं हो जाता कि हम दृढ़ हैं, बाहरी दिखावा नहीं कर रहे हैं, तबतक और उतने लोगोंको जेल भोगना पड़ेगा।

निर्वासित करनेकी जो बात सरकार कर रही थी वह झूठ है, यह इस मामलेसे प्रकट हो गया है। डरे हुए भारतीयोंको यह बात अच्छी तरह ध्यानमें रखनी चाहिए।

पण्डितजीके मामलेमें सबसे बड़ा लाभ हमें यह दिखाई देता है कि हिन्दू-मुसलमान दोनों कौमोंके बीच दृढ़ एकता हो गई है। हर व्यक्ति समझ गया है कि यह काम हम सारे भारतीयोंके लिए है। इस लड़ाईका और इस मामलेका यदि इतना ही फायदा माना जाये तो हम उसे काफी समझते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–११–१९०७

२९५. धरनेदारोंका मुकदमा

प्रिटोरियामें गिरफ्तार किये गये स्वयंसेवकोंके मुकदमेमें हमें अनपेक्षित विजय मिली है। उन्हें गवाही भी न देनी पड़ेगी, ऐसी आशा किसीको नहीं थी। इसके अलावा उस मुकदमेमें सरकारी गवाहने ही स्वीकार किया कि लछमनपर किसीने हाथ नहीं उठाया था। इस मुकदमेसे सिद्ध होता है कि सरकारका बल बिलकुल क्षीण हो गया है। इसीलिए वह हाथ-पाँव मार रही है। अब उसीके अखबार उसपर हँस रहे हैं।

धरनेदारोंने जो हिम्मत दिखाई है, आशा है, वैसी ही हिम्मत दूसरे भी दिखायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–११–१९०७

२९६. कांग्रेसके लिए प्रतिनिधि

ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघने [भारतीय राष्ट्रीय] कांग्रेसमें प्रतिनिधि भेजनेका जो निर्णय किया है, वह उचित है। यहाँके पाँच प्रसिद्ध व्यापारी कांग्रेसमें जाकर पुकार करेंगे, उसका अच्छा प्रभाव पड़े बिना रह ही नहीं सकता। इसके अलावा वह पुकार होगी भी ठीक समयपर — यानी जब ट्रान्सवालमें बहुत-से भारतीय जेलका मजा लूट रहे होंगे तब।

प्रतिनिधियोंपर जबरदस्त जिम्मेदारी है। उन्हें सारे भारतमें आवाज उठानी चाहिए। श्री अमीरुद्दीनपर, जो यहाँसे सब कुछ देखकर जा रहे हैं, सबसे बड़ी जिम्मेदारी है। कांग्रेसका अधिवेशन समाप्त हो जानेके बाद भी उन्हें बहुत काम करना है।

अगले अंकमें हम श्री अमीरुद्दीनका फोटो देनेका विचार कर रहे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–११–१९०७

२९७. केपके भारतीय कब जागेंगे?

हम बार-बार कह चुके हैं कि केपके भारतीयोंका जागना बहुत जरूरी है। केपमें भारतीय परवानेको रोकनेके लिए कितनी तजवीज की जा रही है, उसका विवरण हमने पिछले अंकमें दिया था। उसके आधारपर हम केपके भारतीयोंसे एक बार फिर पूछते हैं कि आप कब तक सोते रहेंगे? अभी कुछ ही समय पहले हमें कहना पड़ा था कि केपमें प्रवासी कानूनका जुल्म भारतीयोंकी लापरवाहीके कारण हो रहा है। उसके बाद वहाँ कुछ हलचल दिखाई पड़ी थी, लेकिन जान पड़ता है, वह फिर बन्द हो गई है। आव्रजनकी बीमारीका इलाज अभी हुआ ही नहीं था कि परवानेकी बीमारी घूर-घूरकर देखने लगी है। हमें कहना पड़ता है कि सर्वोच्च न्यायालयमें जानेका हक छिन गया, उसकी जिम्मेदारी भी बहुत-कुछ भारतीयोंपर है। उसके बारेमें नेटालकी हालत देखकर केपवालोंको सख्त लड़ाई लड़नी चाहिए थी। किन्तु वह नहीं हुआ, यह अफसोसकी बात है। कानून जब संसदमें था तब उन्हें नींद घेरे रही। दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके मनमें यह बात बैठ जानी चाहिए कि इस देशमें आकर नींदमें पड़े रहनेसे काम नहीं चलेगा। हम हथियार-बन्द फौजके बीच पड़े हुए हैं। सभी लोग हमारे विरुद्ध हैं। हम आलस्यमें पड़े रहेंगे और अपने समाजको नहीं सँभालेंगे तो भविष्यमें हमारा और हमारे समाजका बुरा हाल हो सकता है। इसलिए हम केपके भारतीयोंसे एक बार फिर कहते हैं कि वे आजसे इस सम्बन्धमें सावधान हो जायें, नहीं तो जो दुश्मन हर रोज आपको सताया करते हैं तथा जो जड़मूलसे उखाड़नेपर तुले हैं वे आपको भी, जैसा ट्रान्सवालमें आज हो रहा है, उस हालतमें न पहुँचा दें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–११–१९०७

२९८. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

रामसुन्दर पण्डितका मुकदमा

एक प्रश्न उठाया गया है कि यह मुकदमा नये कानूनके अन्तर्गत चलाया गया था या पुरानेके अन्तर्गत। किन्तु इसका हल आसानीसे हो सकता है। उनके सम्मन्समें ही नये कानूनकी १७ वीं उपधाराका उल्लेख था; और यदि वह उपधारा लागू नहीं होती तो पण्डितजी का बचाव अन्य तरीकेसे किया जा सकता था। इसके अलावा, इस "चिट्ठी" के पाठक जानते हैं कि पण्डितजीने अपने पत्रमें बताया था कि नये कानूनके अन्तर्गत वे मीयादी अनुमतिपत्र भी नहीं ले सकते। अतः मेरी रायमें यह मुकदमा नये कानूनके अन्तर्गत ही नहीं है। यही नहीं, यह हमें बहुत दृढ़ करनेवाला भी है। क्योंकि इसमें कानूनकी बहुत-सी दलीलोंका समावेश हो गया है; इसमें धर्मपर हमला हुआ है। इसके अलावा, यह भी जाहिर हो गया है कि अनुमतिपत्रकी अवधि न बढ़ानेका कारण कितनी बेहूदगीसे भरा हुआ था। और चाहे जो कहें, पण्डितजी एक नेता माने जाते हैं; इसलिए नेतापर हाथ डाला गया है। फिर, वे धर्मगुरु हैं, इसलिए किसीके बीचमें आनेवाले आदमी नहीं हैं। इन सारी बातोंको देखते हुए साफ है कि यह मामला बहुत ही सबल है। गोरोंके मनपर भी ऐसी ही छाप पड़ी है।

'प्रिटोरिया न्यूज़' की टीका

इसपर टीका करते हुए 'प्रिटोरिया न्यूज़' लिखता है:[1]

> पण्डितजीके अनुमतिपत्रकी मियाद न बढ़ाने तथा उसके द्वारा हिन्दुओंको धर्मगुरुसे वंचित करनेमें सरकारने कोई बुद्धिमानी नहीं बरती। सारी हकीकतको देखते हुए यदि श्री स्मट्स अपनी धमकीको पूरा करना चाहते हों तो भारतीय कौमको अपने धर्म-गुरुओंकी जरूरत पड़ेगी। हमें लगता है कि सरकारने भूल की है। लोगोंको दुःखी करना ठीक नहीं है। आज श्री पण्डितको दुःख पाया हुआ कहा जा सकता है। उनका खयाल है कि उन्होंने जो किया है, वह उचित है। उनके सभी भाई उनका स्वागत करते हैं। ऐसा करनेमें सरकारको क्या लाभ हुआ, यह हमारी समझमें नहीं आता।

अब हमने देखा है कि पण्डितजीके मुकदमेसे गोरोंकी सहानुभूति भी भारतीयोंकी ओर खिंची है। वह मुकदमा इतना महत्वपूर्ण माना गया है कि यहाँके अखबारोंने उसे बहुत जगह दी है।

विशेष सहानुभूति

श्री फिलिप्स जोहानिसबर्गके प्रसिद्ध व्यक्ति हैं। वे स्वयं पादरी हैं और पादरी समाजके प्रमुख हैं। उन्होंने अखबारमें एक पत्र लिखा है। वह जानने योग्य है। उन्होंने भारतीयोंकी स्वेच्छया पंजीयन करवानेकी बातको स्वीकार किया है और सरकारसे स्वीकार करनेकी सिफारिश की है। वह पत्र हमने दूसरी जगह दिया है।[2]

१. मूल अंग्रेजी टीका २३-११-१९०७ के **इंडियन ओपिनियन**में उद्धृत की गई थी।
२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

इसके अलावा, श्री मैकिंटायरने 'लीडर' में लिखा है कि यहाँ दस अँगुलियोंकी छाप तो केवल अपराधियोंसे ही ली जाती है। और यदि सरकार दस अँगुलियोंकी छापकी बात छोड़ दे तो उसे हर वर्ष ५०० पौंडका लाभ होगा। इस प्रकार चारों ओरसे मदद मिलने लगी है। स्वेच्छया पंजीयन स्वीकार हो और दस अँगुलियोंकी बात रद हो जाये, तब तो माँगा हुआ मिल गया, यही माना जायेगा।

प्रिटोरियाके धरनेदारोंका मुकदमा

इस मुकदमेकी टीका करते हुए 'प्रिटोरिया न्यूज़' लिखता है कि :

> यदि पण्डितजीके मुकदमेसे सरकारको नुकसान हुआ है, तो फिर धरनेदारोंके मुकदमेसे और भी ज्यादा हुआ है। उस मुकदमेमें साफ कहा गया है कि धरनेदारोंने तनिक भी धमकी नहीं दी, सरकार ही स्वयं लोगोंको डराकर पंजीकृत करती है। इन लक्षणोंको देखते हुए भी यदि कोई भारतीय काला मुँह करता है तो उसे भारतीय माना ही नहीं जा सकता।

हड़ताल

पण्डितजीको जेलकी सजा हो जानेके बाद ट्रान्सवालमें सब जगह दूकानें बन्द रहीं। फेरीवालोंने फेरी नहीं लगाई। अखबार बेचनेवालोंने अखबार बेचना बन्द रखा और नुकसानकी परवाह नहीं की। मालिकोंने अखबार बेचनेवालोंको दूसरे दिन अखबार देनेसे इनकार किया। ग्राहक नाराज हुए। आखिर अखबारवालोंको ग्राहकोंके नाम विनतीपत्र लिखना पड़ा, और अब भी कठिनाई पूरी तरह हल नहीं हुई। इस तरह जब एक ओर लोगोंका सारा समुदाय कष्ट उठानेको तैयार हुआ तब ऑफर्टनमें श्री कमालखाँ नामक एक व्यापारीने अपनी दूकान खुली रखी। वैसे ही हाइडेलबर्गमें श्री खोटा, श्री अबुमियाँ कमरुद्दीन तथा श्री आदम मामूजी पटेलने अपनी-अपनी दूकानें खुली रखीं। इससे सारा भारतीय समाज बहुत ही क्षुब्ध हुआ है।

गद्दारोंको शाबाशी

श्री खमीसा और उनके भाईबन्दके बारेमें मुझे कड़वी बातें लिखनी पड़ी हैं। इस बार उनकी प्रशंसा करनेका अवसर मिला है, इसलिए मुझे खुशी है। श्री खमीसा और दूसरे सब लोगोंने, जिन्होंने अपने हाथ-मुँह काले किये हैं, समाजके लिए दूकानें बन्द की थीं। पीटर्सबर्गमें भी सबने वैसा ही किया। इस बातसे प्रकट होता है कि लकड़ी पीटनेसे पानी नहीं फटता। एक देशके आदमी एक-दूसरेके बिलकुल विरोधी बन जायें, यह कभी नहीं हो सकता। स्वार्थ रूपी जहर जब निकल जाता है तब कौमी हमदर्दी हुए बिना नहीं रहती।

चैमनेके चोचले

कुछ लोगोंसे अच्छा काम हो ही नहीं पाता। श्री चैमनेकी इस समय ऐसी ही हालत है। किसी भी बहाने हमें परेशान करके वे भाईसाहब हमसे पंजीयनपत्र लिवाना चाहते हैं। उनका नया चोचला यह है कि अब पोर्तुगीज राज्यके साथ उन्होंने व्यवस्था की है कि जिन्होंने पंजीयनपत्र न लिया हो उन्हें परेशान किया जाये। पोर्तुगीज वाणिज्यदूतके कार्यालयमें यह नोटिस चिपकाया गया है कि डेलागोआ-बे होकर भारत जानेवाले भारतीयोंको डेलागोआ-बे जानेका पास तभी मिलेगा जब वह नया पंजीयनपत्र बतायेगा। और यदि नया पंजीयनपत्र न दिखायें तो

भारतीय यह लिख दे कि वह भारतसे ट्रान्सवाल वापस नहीं आना चाहता। यह बात केवल परेशान करनेके लिए है। इससे प्रकट होता है कि चाहे जैसा प्रलोभन देकर भारतीयोंसे पंजीयन-पत्र लिवाना है। और कोई जोर चल नहीं सकता। डेलागोआ-बेका पास न मिले तो भारतीयोंको घबड़ाना नहीं चाहिए। जिसे भारत जाना होगा, वह दूसरे रास्ते जा सकता है। फिर भी इस सम्बन्धमें कार्रवाई जारी है।

'ट्रान्सवाल लीडर' की सलाह

'ट्रान्सवाल लीडर' ने सलाह दी है कि सरकार भारतीय समाजके नेताओंसे मिले और उनसे परामर्श करके कानूनकी समस्याका हल निकाले। यदि सरकार वह हल नहीं निकालेगी तो बादमें पछताना होगा। पाठकोंको याद रखना चाहिए कि 'लीडर' ट्रान्सवालका बहुत ही प्रभावशाली अखबार है।

शाहजी साहबकी बहादुरी

पण्डितजीके जेल जानेसे शाहजी साहबको बहुत ही दर्द हुआ है। इसलिए उन्होंने अखबारोंमें निम्नानुसार पत्र[1] लिखा है:

> महोदय, अपने भारतीय धर्मगुरुके मुकदमेके समय मैं अदालतमें था। उस समय मेरे मनमें यह विचार आया कि ट्रान्सवालके कानून कुछ औंधे हैं। आवेशके कारण मैंने इमाम कमालीको कुरानके फरमानका उल्लंघन करनेके कारण पीटा था। उसमें मुझे जेल अथवा ५ पौंडके जुर्माने की सजा हुई थी। एक निर्दय मित्रने "मैं आपका शिष्य हूँ" कहकर जबरदस्ती ५ पौंड भर दिये। इससे मुझे जेल भोगनेका मौका नहीं मिला। दूसरी बार मैंने श्री मुहम्मद शहाबुद्दीनको मारा था। उसने बयान देते हुए स्वीकार किया कि उसने कुरानकी शपथ तोड़ी थी और इसीलिए मेरा मारना वैसा ही था जैसे बाप लड़केको मारता है। इससे दयालु न्यायालयने मुझे छोड़ दिया, किन्तु चेतावनी दी कि आगे ऐसा हुआ तो सजा होगी।
>
> इस दृष्टिसे रामसुन्दर पण्डितको बेकार ही एक महीनेकी सजा दी गई है। मैं उन्हें पहचानता हूँ। उन्होंने कभी किसीको कष्ट नहीं दिया। वे ब्रिटिश प्रजा हैं और ब्रिटिश उपनिवेशमें अपने सहधर्मियोंके धर्म-सम्बन्धी कामकाज करते हैं। ऐसे व्यक्तिको ट्रान्सवालमें रहनेका एक कागजका टुकड़ा न होनेके कारण जेलमें डाला गया है।
>
> मुझे तो लगता है कि यदि किसीको जेल दी जानी चाहिए तो वह मैं हूँ। फिर भी एक आदमीने बीचमें आकर जबरदस्ती पैसे देकर मुझे जेल नहीं भोगने दी। उधर, श्री रामसुन्दर पण्डितको एक महीनेके लिए बन्द करके रखा जायेगा, उनके मित्र और सम्बन्धी उनसे नहीं मिल पायेंगे, और वे धर्म-सम्बन्धी कार्य नहीं करा सकेंगे। इससे मेरा हृदय फटता है। मुझे जेल हो और श्री रामसुन्दर पण्डित मुक्त हों तो कितना अच्छा। खुदा, तू उन्हें बिलकुल सुखी रखना और हिम्मत देना।

केप टाउनसे सहानुभूति

केप टाउनके आफ्रिकी भारतीय संघने [ब्रिटिश भारतीय] संघके नाम सहानुभूतिका तार भेजा है। उच्चायुक्तके नाम भी एक तार भेजा है कि उन्हें हस्तक्षेप करके भारतीयोंका कष्ट

१. मूल अंग्रेजी पत्रके लिए देखिए "पत्र: 'ट्रान्सवाल लीडर'को", पृष्ठ ३७६।

दूर करना चाहिए तथा श्री रामसुन्दर पण्डितको छुड़ाना चाहिए। ऐसे तार कई जगहोंसे आये हैं। तार भेजनेवाले सब लोगोंके नाम और तारोंका सारांश अगले सप्ताह देनेकी आशा करता हूँ।

अमीरुद्दीनको तार

श्री अमीरुद्दीनके साझी श्री अब्दुल गफूरने उन्हें निम्नानुसार तार भेजा है:

> आपकी जिम्मेदारी बड़ी है। अपना फर्ज हिम्मतके साथ निभाइये। आपसे बड़ी आशा रखते हैं। भारतकी प्रतिष्ठा यहाँकी लड़ाईपर निर्भर है। जबतक हम स्वतन्त्र नहीं हो जाते और हमारे बाल-बच्चोंकी स्वतन्त्रता सुरक्षित नहीं हो जाती तबतक आप आराम न लें।

पंजीयन कार्यालयके बेकार प्रयत्न

लछमन नामक व्यक्तिको, जिसने धरनेदारोंके बारेमें बयान दिया था, गलत बयान देनेके अपराधमें गिरफ्तार किया गया था। वास्तवमें मामला तो कुछ था नहीं। इसलिए छोड़ दिया गया। किन्तु लछमनका मामला बताता है कि जो भारतीय पंजीकृत होने जायेंगे वे अपने समाजको कलंकित करेंगे, अपने भाइयोंको गड्ढेमें उतारेंगे और हो सकता है कि स्वयं भी न उबरें। करीम जमालका मामला जिस तरहका था वैसा ही लछमनका भी हो गया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-११-१९०७

२९९. भाषण: हमीदिया अंजुमनकी सभामें

[जोहानिसबर्ग
नवम्बर २४, १९०७]

श्री गांधीने प्रतिनिधियोंकी[1] योग्यताकी चर्चा की। उन्होंने कहा कि कांग्रेसमें भाषण करने-वाले अन्य लोग हैं, इसलिए इस समय अधिक व्यय करनेकी आवश्यकता न होगी। पैसेकी तंगीके कारण अधिक प्रतिनिधियोंकी नामजदगी स्थगित रखनी पड़ेगी। समय भी कम है। पंजाबियों और पठानोंके सम्बन्धमें कुछ समयमें लॉर्ड सेल्बोर्नको पत्र लिखा जायेगा। श्री गांधीने तुर्कोंको दृढ़ रहनेकी सलाह दी। उन्होंने कहा कि गोरोंकी सभा हुई थी। उसके विवरणसे जान पड़ता है कि सरकार शिथिल हो गई है। यदि भारतीय समाज दृढ़ रहा तो सभी गोरे हमारे पक्षमें हो जायेंगे। गोरोंका शिष्टमण्डल दिसम्बरमें जायेगा। भारतीय अन्ततक डटे रहेंगे, इसमें सरकारको सन्देह है। किन्तु, श्री गांधीने तर्कपूर्वक समझाया, जो साहसपूर्वक और परमात्मामें विश्वास रखकर प्रयत्न करते हैं वे अवश्य सफल होते हैं। उन्होंने प्रिटोरियाके धरनेदारोंकी वीरताके बारेमें बोलते हुए कहा कि मेजर फ्यूज उनसे हर दिन ही मिलते रहते हैं। मेजर कोटी आदि उनको उल्टा समझाते हैं; किन्तु वे मानते नहीं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-११-१९०७

१. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अधिवेशनके लिए चुने गये प्रतिनिधि।

३००. प्रार्थनापत्र : गायकवाड़को[1]

[जोहानिसवर्ग]
नवम्बर २५, १९०७

सेवामें
महाविभव गायकवाड़ [बड़ौदा]

१. आपके प्रार्थी महाविभवकी प्रजा हैं और ईमानदारीसे कमाने-खानेके लिए ट्रान्सवालमें आकर बसे हैं।

२. ट्रान्सवालमें आपके प्रार्थियोंमें से अधिकतरके बड़े-बड़े हित दाँवपर चढ़े हैं।

३. आपके प्रार्थी आप महाविभवका ध्यान ट्रान्सवाल संसद द्वारा पास किये गये एशियाई कानून संशोधन अधिनियमकी ओर सादर आकर्षित करते हैं।

४. आपके प्रार्थी, जैसा कि कदाचित् महाविभवको विदित होगा, रक्षित ब्रिटिश प्रजाके रूपमें, ट्रान्सवालके अन्य ब्रिटिश भारतीयोंके साथ मिलकर, साम्राज्य सरकारको निवेदन भेज चुके हैं।

५. आपके प्रार्थी इसके साथ उस प्रार्थनापत्रकी एक प्रति संलग्न कर रहे हैं जो उन्होंने परममाननीय उपनिवेश-मन्त्रीको इस अधिनियमके सम्बन्धमें भेजा है और जिसमें सब आपत्तियोंका विवरण दिया गया है।

६. चूंकि साम्राज्य-सरकारने हस्तक्षेप करनेसे स्पष्ट इनकार कर दिया है और चूंकि उक्त कानून असामान्य रूपसे तिरस्कारपूर्ण और अपमानजनक है, तथा चूंकि प्रार्थी एक गम्भीर शपथसे इस अधिनियमको न माननेके लिए बँधे हुए हैं, इसलिए उन्होंने अनाक्रामक प्रतिरोधके नामसे ज्ञात धर्मयुद्ध छेड़ दिया है और अपने सर्वस्वको दाँवपर चढ़ा दिया है। स्थानीय सरकारने जेल भेजने, निर्वासित करने और अन्य सजाएँ देनेकी धमकी दी है, जिनमें से सभी, आपके प्रार्थियोंके विचारमें, उक्त अधिनियमके जुएकी तुलनामें सह्य और झेल लेने योग्य हैं।

७. आपके प्रार्थियोंकी विनीत सम्मतिमें आप महाविभवकी सहानुभूति और सक्रिय हस्तक्षेपसे साम्राज्य सरकारको, और भारत सरकारको भी, बल मिलेगा तथा प्रार्थियोंको बहुत हिम्मत बँधेगी।

८. इसलिए आपके प्रार्थी सादर विश्वास करते हैं कि श्रीमान उनको किसी भी वाञ्छनीय तरीकेसे अपना संरक्षण प्रदान करेंगे; और न्याय तथा दयाके इस कार्यके लिए प्रार्थी कर्तव्य मानकर सदा दुआ करेंगे, आदि।

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स : सी० ओ० २९१/१२२

१. यह "महाविभव गायकवाड़की . . . ट्रान्सवालवासी प्रजाने" भेजा था, और ३०-११-१९०७के इंडियन ओपिनियनमें प्रकाशित किया गया था। इस प्रार्थनापत्रकी एक प्रति श्री एल० डब्ल्यू० रिचने २३ दिसम्बर १९०७को उपनिवेश-उपमन्त्रीको भेजी थी।

३०१. प्रार्थनापत्र : उच्चायुक्तको[1]

[जोहानिसबर्ग
नवम्बर २६, १९०७ के पूर्व]

सेवामें

परमश्रेष्ठ उच्चायुक्त, दक्षिण आफ्रिका

निम्नांकित हस्ताक्षरकर्ताओंका प्रार्थनापत्र :

नम्र निवेदन है कि,

१. आपके प्रार्थी पुराने भारतीय सैनिक हैं। हममें ४३ पंजाबी मुसलमान, १३ सिख तथा ५४ पठान हैं।

२. आपके सभी प्रार्थी ब्रिटिश प्रजाजन हैं, और उनमें से अधिकांशको इस उपनिवेशमें गत युद्धके समय परिवहन-दलोंके रूपमें लाया गया था। प्रार्थियोंके दक्षिण आफ्रिकामें आनेपर उनके अफसरोंने उनसे कहा था कि युद्ध समाप्त होनेपर आप दक्षिण आफ्रिकाके किसी भी भागमें बस सकेंगे और आपको इज्जतके साथ रोजगार मिलेगा।

३. आपके प्रार्थियोंमें से कुछ चित्रालकी चढ़ाईमें[2], तीरा युद्धमें[3] और दूसरी लड़ाइयोंमें ब्रिटिश सरकार की ओरसे लड़े हैं।

४. आपके प्रार्थियोंमें से अधिकांशके पास शान्ति-रक्षा अध्यादेश और १८८५ के कानून ३के अनुसार जारी किये हुए अनुमतिपत्र तथा पंजीयन प्रमाणपत्र हैं। प्रार्थी ट्रान्सवालके युद्ध-पूर्व कालके बाशिन्दे नहीं हैं, बल्कि उनको ये अनुमतिपत्र उनके अपने-अपने अफसरोंसे मिले हुए विमुक्ति प्रमाणपत्रोंके बदलेमें दिये गये हैं।

५. कुछको छोड़कर इस समय हममें से सभी बेरोजगार हैं। इसकी वजह ज्यादातर एशियाई पंजीयन कानूनके खिलाफ चलनेवाला संघर्ष है। कुछको उनके मालिकोंने पंजीयन न करानेकी वजहसे नौकरीसे अलग कर दिया है, दूसरोंके नौकरीकी अर्जी देनेपर उनसे कहा गया है कि अगर वे नये कानूनके मुताबिक अपना पंजीयन करा लें तो उनको नौकरी दी जा सकती है।

६. आपके प्रार्थियोंकी नम्र रायमें उनके लिए एशियाई कानूनके सामने सिर झुकाना मुमकिन नहीं है; क्योंकि इससे उनको इतना अधिक अपमान सहना पड़ता है, जिसका अनुभव उनको भारतमें पहले कभी नहीं हुआ। और यह उनको ऐसी हालतमें पहुँचा देता है, जो उनके आत्मसम्मान और सैनिक मर्यादाके अनुरूप नहीं है।

७. आपके प्रार्थी किसी भी अधिकारीके सामने, जिसे मुकर्रर किया जाये, यह गवाही देनेको तैयार हैं कि उन्होंने राजभक्त ब्रिटिश प्रजाजनोंके रूपमें साम्राज्यकी सेवा की है।

१. यह प्रार्थनापत्र गांधीजीने ११५ सेवा-निवृत्त भारतीय सैनिकोंकी ओरसे ७ दिसम्बर १९०७ को उच्चायुक्तके नाम लिखे अपने पत्रके (पृष्ठ ४०५) साथ उन्हें भेज दिया था। श्री एल० डब्ल्यू० रिचने दिसम्बर २३, १९०७ को इसकी एक प्रति उपनिवेश-उपमन्त्रीके पास भेजी थी।

२. १८९५ में।

३. १८९७-९८ में।

८. आपके प्रार्थियोंका भारत लौटना और वहाँ जाकर अपने गुजारेका कोई जरिया खोजना सम्भव नहीं है।

९. हम ट्रान्सवाल उपनिवेशमें इसी सरकारके नियमोंके स्वामिभक्त तथा कानूनपालक हैं। अतः, इस हैसियतसे, हम विनम्रतापूर्वक आपसे न्याय पानेके अधिकारका दावा करते हैं।

१०. इसलिए आपके प्रार्थी विनम्रतापूर्वक निवेदन करते हैं कि सम्राट्‌की सरकार हम लोगोंको इस सरकारसे राहत दिलानेके लिए ऐसी कार्रवाई करे जो सम्भव हो। और न्याय तथा दयाके इस कार्यके लिए प्रार्थी, कर्तव्य समझकर, सदा दुआ करेंगे।

[आपका, आदि,
नवाबखाँ
फजले इलाही]

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स : सी० ओ० २९१/१२२

३०२. पत्र : अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके अध्यक्षको

[जोहानिसबर्ग
नवम्बर २६, १९०७ के पूर्व]

[अध्यक्ष
अखिल भारतीय मुस्लिम लीग
कलकत्ता
महोदय,]

मेरा अंजुमन एशियाई पंजीयन कानूनको लेकर ट्रान्सवालके अन्य भारतीय संगठनोंके साथ-साथ, जिस संघर्षमें लगा हुआ है उसके सिलसिलेमें उसने मुझे आपसे कुछ निवेदन करनेको कहा है।

मुझे यकीन है कि भारतीय मुसलमानोंके नाम हमीदिया इस्लामिया अंजुमनने जो 'खुली चिट्ठी'[1] भेजी है उसे आप देख चुके होंगे। उसने सभी भारतीय संगठनोंसे उनके स्थानीय राजनीतिक विचार-भेदका खयाल किये बिना, निवेदन किया है। एशियाई कानूनके अन्तर्गत ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिके प्रश्नपर उनमें किसी प्रकारका मतभेद नहीं है; और सवाल यह है कि हमारे साथ जो अपमानजनक व्यवहार किया जाता है उसका बिलकुल एक जोरदार विरोध किया जाये।

१. देखिए "भारतीय मुसलमानोंसे अपील", पृष्ठ ३७९-८०।

अतः, मेरा अंजुमन इस बातका भरोसा करनेकी हिम्मत करता है कि आप ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके एक हकमें लीगकी सहानुभूति हासिल करानेकी कृपा करेंगे।

[आपका, आदि,
इमाम अब्दुल कादिर सलीम बावज़ीर
कार्यवाहक अध्यक्ष
हमीदिया इस्लामिया अंजुमन]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-११-१९०७

२०३. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

[मंगलवार, नवम्बर २६, १९०७]

संघका हिसाब

संघका हिसाब[1] सार्वजनिक सूचनाओंके साथ दिया गया है। उसकी ओर ट्रान्सवालके भारतीयोंका ध्यान आकर्षित करता हूँ। उससे मालूम होगा कि अब संघके पास केवल १४० पौं० १८ शिलिंग १ पैंस बचा है। उसमें भी २५ पौंड तो श्री आलब्रेटके दिये हुए हैं। संघने जबरदस्त काम उठाया है, किन्तु उस हिसाबसे पैसा कुछ भी नहीं है। इस संघकी तरह कम खर्चीसे किसी दूसरे संगठनका काम चलता हो, सो हमें नहीं मालूम। उसका चालू खर्च १० पौंडके अन्दर है। किन्तु अब तार आदिका खर्च बढ़ेगा। किराया कुछ लगता नहीं है। कोई फालतू खर्च नहीं है। खर्चका बहुत-कुछ बोझ जोहानिसबर्गपर है। रस्टेनबर्गका अनुकरण दूसरे शहर करें तो भी संघको कुछ मदद मिल सकती है। रस्टेनबर्गसे हालमें ही १५ पौंडकी सहायता प्राप्त हुई है। इससे दूसरे शहरोंको सबक लेना चाहिए।

वह हमें कैसे घेरती है

मैं बता चुका हूँ कि चैमने साहब पूरी व्यवस्था कर चुके हैं कि डेलागोआ-बे जानेमें भारतीयोंको मुसीबतें हों। अब फोक्सरस्टपर मुसीबत आई जान पड़ती है। सुना है कि जो भारतीय नेटाल होकर जाना चाहें, उनके अनुमतिपत्रोंकी जाँच फोक्सरस्ट या चार्ल्सटाऊनमें की जायेगी, उनके अँगूठोंकी छाप ली जायेगी और तब उन्हें आगे बढ़ने दिया जायेगा। इसका उद्देश्य यह है कि संघर्षके समयमें भारत जानेवालोंका नाम दर्ज रहे और जब वे वापस आयें तब उन्हें परेशान किया जाये। इस सम्बन्धमें मुझे सूचित करना है, कि ट्रान्सवाल छोड़ते समय कोई भी अनुमतिपत्र बतलानेके लिए बँधा हुआ नहीं है। किसीको अँगूठेकी निशानी भी नहीं देनी है। इन दोमें से एक भी बात अपराध नहीं है। किन्तु यदि सरकार हैरान करना चाहे तो उसे उसका मौका नहीं देना है। ये सब लड़ाईके बीचके हंगामे हैं। इसलिए किसीको डरना नहीं चाहिए और न हमारे सामने यह सवाल ही उठाना चाहिए कि अब क्या होगा।

१. देखिए परिशिष्ट ७।

बहादुरीका उदाहरण

श्री मुहम्मद मूसा पारेख न्यूकैसिलसे लिखते हैं कि वे स्वयं खास तौरसे कानूनका विरोध करनेके लिए ही दिसम्बरके शुरू होनेके पहले वॉकरस्ट्रममें आकर बैठेंगे। उन्होंने यह भी लिखा है:

> ऐसे हजारों पंजीयन-दफ्तर खुलें तो भी क्या? जिसने एक बार सच्चे दिलसे खुदा और उसके रसूलको सत्य मानकर शपथ ली हो वह हर्गिज गुलामीका टोकरा नहीं उठा सकता।

मेरी कामना है कि यह जोश श्री पारेख और सभी भारतीयोंमें अन्ततक रहे।

एशियाई भोजनालय

पाठकोंको याद होगा, कि इन भोजनालयोंके नियमोंमें नगरपालिकाने यही तय किया था कि मैनेजर गोरा आदमी होना चाहिए। उसपर संघने अर्जी दी थी। अब सरकारने उसमें परिवर्तन करनेका आदेश दिया है और उसे नगरपालिकाने स्वीकार किया है।

बग्घीके नियम

बहुत समयसे बात चल रही है कि ऐसा नियम बनाना चाहिए जिससे पहले दर्जेकी बग्घीमें काले आदमी न बैठ सकें। अब नगरपालिकाने ऐसा नियम पास कर दिया है। उसमें कहा गया है कि काला बैरिस्टर या डॉक्टर उसमें बैठ सकेगा। अर्थात् शराबके नशेमें चूर या फटेहाल काला वकील या डॉक्टर तो पहले दर्जेकी गाड़ीमें बैठ सकता है, किन्तु अच्छे कपड़े पहननेवाला लखपति भारतीय व्यापारी नहीं बैठ सकता। और भी विशेषता यह है कि वकील तो बैठ सकता है, किन्तु उसकी पत्नी या लड़का नहीं बैठ सकता। इस नियमके बनानेवालेकी मूर्खताकी सीमा नहीं है। संघने इस कानूनके खिलाफ सरकारके पास अर्जी भेजी है।

स्टैंगरके भारतीयोंका प्रस्ताव

रामसुन्दर पण्डितके जेल जानेके सम्बन्धमें कई जगह सभाएँ हुईं और प्रस्ताव पास किये गये हैं। वैसा ही स्टैंगरमें हुआ है। श्री दाउद मुहम्मद सीदत, श्री अहमद मूसा मेतर, श्री मणिलाल चतुरभाई पटेल, तथा श्री अहमद मीठाके हस्ताक्षरसे सहानुभूतिके प्रस्ताव संघको प्राप्त हुए हैं।

सभी तार भेजनेवालों और प्रस्ताव पास करनेवालोंको संघ आभार सूचक पत्र नहीं भेज सका, क्योंकि वह लगभग असम्भव था। तथा, जहाँ सब लोग देशके कष्टोंसे उद्विग्न हों एवं अपना कर्तव्य समझ कर कोई काम करते हों वहाँ उपकार माननेकी जरूरत भी नहीं होती। यह अवसर एक दूसरेके गुण गानेका या उपकार माननेका नहीं है। किये हुए कर्तव्यका ज्ञान ही उपकार मानना है।

खोलवाड़ मदरसा

श्री गुलाम मुहम्मद आजम बम्बईसे लिखते हैं कि उन्हें ९२१ पौंड १० शिलिंग मिले हैं। वे उस रकमसे [मदरसेके लिए] मकान खरीदनेकी तजवीज कर रहे हैं। किन्तु उन्होंने लिखा है कि रकम इतनी कम है कि उसमें अच्छा मकान मिलना मुश्किल है। उन्हें न्यास-पत्र और मुख्त्यारनामा भी मिल गया है।

खानवाले क्षेत्रमें परवाने

जोहानिसबर्ग आदि जगहोंपर स्वर्ण-कानूनके अन्तर्गत सरकारने परवाने देनेसे इनकार किया था और यह स्थिति पैदा हो गई थी कि मुकदमा लड़ना होगा। किन्तु अब फिर सरकारी जवाब आ गया है कि नये कानूनकी लड़ाईके कारण सरकार इस सम्बन्धमें लड़ाई करना नहीं चाहती और जो परवाना माँगेगा उसे दिया जायेगा। यह जवाब समझने योग्य है। ऐसा मुकदमा लड़नेमें सरकारको बदनामीका डर लगता है। क्या ७,००० लोगोंको कैद करते हुए बदनामीका डर नहीं लगेगा?

कोंकणियोंकी सभा

खुद सब दृढ़ हैं, या नहीं यह देखनेके लिए पिछले रविवारको कोंकणियोंकी एक सभा हुई थी। हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके सभा भवनमें सब एकत्र हुए थे। श्री मालिम मुहम्मद सभाके अध्यक्ष थे। श्री अब्दुल गनीने अपने भाषणमें कहा था कि वे स्वयं बिलकुल दृढ़ रहेंगे। जिस शपथको दिलवानेमें वे स्वयं शामिल थे, उसे वे तोड़नेवाले नहीं हैं। श्री इस्माइल खाँ, श्री शहाबुद्दीन हसन, श्री हसन मियाँ (रूडीपूर्टके), श्री अब्दुल गफूर आदि सज्जनोंने भाषण दिये और सभामें सबने यही राय व्यक्त की कि चाहे जितनी रुकावटें आयें, फिर भी कानूनके सामने नहीं झुकना है। यह सवाल उठनेपर कि दूकानके हर व्यक्तिको पंजीकृत होना चाहिए या नहीं, यही निर्णय हुआ कि वैसा करनेकी कोई जरूरत नहीं है।

कांग्रेसका चन्दा

[भारतीय] राष्ट्रीय कांग्रेसके चन्देमें यहाँ ५० पौंडसे ज्यादा रकम इकट्ठी हुई है। और भी इकट्ठा होनेकी सम्भावना है। सूची अगले सप्ताह भेजूंगा। उपर्युक्त रकममें से अभी तो २५ पौंड श्री अमीरुद्दीनको भेजे गये हैं। यदि अधिक रकमकी आवश्यकता मालूम हुई तो ५० पौंड तक भेजनेका निर्णय हुआ है। प्रतिनिधियोंके सम्बन्धमें यहाँसे भारतको जो समुद्री तार भेजे गये हैं, उनका खर्च भी हुआ है। यह हिसाब प्रकाशित किया जायेगा।

डेलागोआ-बेमें भारतीयोंकी सुस्ती

यहाँके अखबारोंसे मालूम होता है कि डेलागोआ-बेके भारतीय यदि नहीं चेतेंगे तो उनका बुरा हाल होगा। वहाँके व्यापार मण्डल (चेम्बर) ने निश्चय किया है कि अब भारतीय सदस्य मत नहीं दे सकते। वहाँके भारतीय यदि यह सब चुपचाप सहते बैठे रहेंगे तो बहुत ही बदनामी होगी। इसके अलावा, वहाँ ट्रान्सवालसे जानेवालोंको तंग करनेकी तजवीज भी की जा रही है। इन सब बातोंको लेकर डेलागोआ-बेके भारतीयोंमें यदि कुछ पानी आ जाये तो अच्छा होगा। वहाँके सेठोंसे सम्बद्ध सभी भारतीयोंको हम जोरोंसे सलाह देते हैं कि उनसे जितना भी लिखा जा सके उतना लिखें।

गायकवाड़को याचिका

महाराजा श्री सयाजीरावको उनकी प्रजाने नये कानूनके बारेमें निम्नानुसार याचिका दी है। उसमें लगभग १५० हस्ताक्षर हुए हैं।[1]

१. देखिए "निवेदनपत्र: गायकवाड़को", पृष्ठ ३८३।

दिसम्बरमें क्या किया जाये?

इस प्रश्नका उत्तर पढ़नेके लिए बहुतेरे पाठक उत्सुक होंगे। मेरी चिट्ठीमें यह प्रश्न अन्तिम रखा गया है, किन्तु इसकी आवश्यकता पहली है। क्या किया जाये, इसका विचार करनेके पहले क्या हो सकेगा, इसपर विचार करें।

क्या हो सकता है

हमने देखा कि सरकारको शरीरसे पकड़ कर निर्वासित करनेकी सत्ता तो नहीं है। फिर जेल भेजना ही बाकी रहा। कानूनके आठवें खण्डके अनुसार हर भारतीयसे पुलिस नया पंजीयनपत्र माँग सकती है। उसके न होनेपर वह उसे मजिस्ट्रेटके सामने ले जायेगी। वहाँ उसे सूचना दी जायेगी कि निश्चित अवधिके अन्दर देश छोड़ दे। उस आदेशका पालन न करनेपर उसे फिर पकड़ा जायेगा और उसे छः महीने तक की जेलकी सजा दी जा सकेगी। इस उपधाराके अनुसार मुकदमा चलनेपर अदालतको जुर्माना करनेका अधिकार नहीं है। कानूनको पढ़नेसे मालूम होगा कि अदालत पंजीयनके लिए अर्जी देनेका हुक्म दे सकती है। इस प्रकार मुकदमा न चलाकर सरकार यह मुकदमा भी दायर कर सकती है कि अर्जी क्यों नहीं दी गई। अर्जी न देनेके अपराधकी सजा १०० पौंड जुर्माना या जेल है। ऐसा व्यवहार सरकार प्रत्येक भारतीयके साथ कर सकती है। यानी प्रत्येक भारतीयको जेल भेज सकती है। किन्तु कर सकने और करनेमें बहुत अन्तर है। सरकार प्रत्येक भारतीयको पकड़े और जेलमें बन्द करे इसे मैं लगभग असम्भव मानकर छोड़ देता हूँ। किन्तु कुछ भारतीयोंको तो जरूर पकड़ेगी।

कुछ गिरफ्तारियाँ जरूर

मेरा अनुमान है कि पहले झपाटेमें अधिकसे-अधिक सौके करीब भारतीय पकड़े जायेंगे।

कितना पानी है?

और हममें कितना पानी है यह देखनेके लिए, सम्भव है, गाँव-गाँवसे थोड़े भारतीय पकड़े जायें। यदि ऐसा हो तो हमारी लड़ाईका अन्त जल्दी होगा। यदि गाँव-गाँवसे गिरफ्तारी की जाये तो किसीको घबड़ाना नहीं चाहिए। वैसा होगा तो श्री गांधीके लिए प्रत्येक गाँव जाना सम्भव नहीं होगा; और न उसकी जरूरत ही है। जो व्यक्ति गिरफ्तार किया जाये उसके सम्बन्धमें संघ (ब्रिआस) को जोहानिसबर्ग तार भेजा जाये।

जमानतकी अर्जी नहीं

गिरफ्तार किये जानेवाले व्यक्तिको जमानतपर नहीं छूटना है। वकील भी नहीं करना है। जिस दिन अदालतमें पेश किया जाये, उसे कहना चाहिए:

मैं कानूनका विरोधी हूँ। मैं ट्रान्सवालका सच्चा निवासी हूँ। मेरे पास सच्चा अनुमतिपत्र है। कानूनसे हमारी मनुष्यता जाती है। उससे हमारा धर्म भी जाता है। इसलिए मैं उसके सामने नहीं झुकूँगा। हमारी सारी कौम उसके खिलाफ है। यदि सरकार मुझे चले जानेका नोटिस देगी तो वह भी माना नहीं जायेगा। इसलिए मुझे जो सजा देनी हो वह अभी ही दीजिए। और यदि नोटिस देना ही हो तो जितने थोड़े समयका दिया जा सके उतने थोड़े समयका दीजिए।

इतना अपने-आप या दुभाषियेकी मारफत कहा जाये।

नोटिस ही मिलेगा

इसपर बहुत करके तो नोटिस ही मिलेगा। उसकी अवधि समाप्त हो जानेपर भी वकीलकी जरूरत नहीं है। अवधि समाप्त होने तक तो वह व्यक्ति स्वतन्त्र रहेगा। इस बीच उसे अपनी कुछ व्यवस्था करनी हो तो करे।

नोटिस पूरा होनेपर

नोटिस पूरा हो जानेके बाद वह फिर पकड़ा जायेगा। इस समय कुछ अधिक बयान नहीं देना है। केवल इतना कहना है कि "मैंने पहले जो कहा है उससे अधिक मुझे कुछ नहीं कहना।" उसके बाद जो सजा मिले उसे भोगा जाये। जो लोग बाहर रहें, उन्हें सजाके सम्बन्धमें तुरन्त तार करना चाहिए। सजा प्राप्त व्यक्तिके बाल-बच्चे हैं या नहीं, वे कहाँ हैं, उसके भरण-पोषणका बोझ उस व्यक्तिने समाजपर डाला है या उसके पास पैसे हैं, वगैरा बातें तारमें लिखी जायें।

इतना याद रखना चाहिए कि जिसके बारेमें उचित मालूम होगा, उसके बाल-बच्चोंका भरण-पोषण जेलसे छूटने तक समाज करेगा। अच्छी बात तो यह है कि हर जगह लोग अपने-अपने आदमियोंका बोझ उठा लें, जैसे रामसुन्दर पण्डितके बाल-बच्चोंका बोझ जर्मिस्टनके भारतीयोंने उठाया है। किन्तु यदि वैसा न हो सके तो संघ तो व्यवस्था करेगा ही।

यदि जोहानिसबर्गमें गिरफ्तार नहीं किया गया और रोक-टोक न की गई तो श्री गांधी बिना शुल्कके वहाँ जायेंगे, जहाँ भारतीय (सच्चे अधिवासी) गिरफ्तार किये गये होंगे। उनका किराया यदि वह गाँव दे तो इसमें उसकी शोभा होगी; किन्तु यदि वहाँसे गाड़ी किराया न मिले, तो संघ देगा और श्री गांधी वहाँ पहुँचेंगे।

जेल जानेवालेके व्यापारके बारेमें कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं रहती। उस व्यक्तिने अपने व्यापारके बारेमें पहलेसे बन्दोबस्त कर रखा होगा। सरकार किसीकी दूकानको बन्द नहीं कर सकती। जुर्माना वसूल करनेके लिए वह माल नीलाम कर दे, सो भी नहीं होगा। एक ही दूकानके सभी व्यक्ति एक ही साथ पकड़ लिये जायें, यह भी बहुत सम्भव नहीं दीखता। जेलमें बैठे-बैठे भी वह आदमी अपने कामकी कुछ व्यवस्था कर सकता है, किसीको लिख सकता है या सन्देश भेजा जा सकता है।

बाहरवाले क्या करें?

एक या अधिक लोगोंको जेलमें भेजकर दूसरे बैठे रहें, यह सरल रास्ता है। किन्तु इससे घबराहट पैदा हो और हमें भी गिरफ्तार किया जायेगा इस दहशतसे कोई पंजीयन करानेको दौड़ पड़े, तो वह देशका दुश्मन माना जायेगा और उसके द्वारा भारतीयोंके नामको बट्टा लगेगा।

खरी कसौटी

खरी कसौटी इसीमें होगी कि नेताओंके जेलमें चले जानेपर भी लोग घबरायें नहीं, बल्कि जोर दिखायें और कानूनको न मानें। इतना जब साफ तौरसे साबित हो जायेगा तभी कानून रद होगा। यह हम खूब याद रखें।

दो दिसम्बरको

दिसम्बरकी २ तारीखको भारतीयोंको अपने घरोंमें घुसकर नहीं बैठना है। फेरीवालोंको डर कर फेरी बन्द करनेके बजाय निर्भयतापूर्वक बाहर निकल कर अपने धन्धेमें लगना चाहिए। उस दिन और उसके बादके दिनोंमें कुछ नहीं है यह समझकर हमेशाकी तरह काम करते रहना है। यह लड़ाई आजादीके लिए है। इसलिए कदम-कदमपर हिम्मतकी आवश्यकता है। इसके बिना सफल होना सम्भव नहीं है।

हेलूने फिर मुँह फेरा

श्री हेलूने अपना मुँह काला किया इसके लिए उन्होंने मस्जिदमें माफी माँगी है और पंजीयकको निम्नानुसार पत्र[1] लिखा है:

> मैं १२ अक्तूबरको प्राप्त अपना पंजीयनपत्र सादर वापस भेज रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि ऐसा करके मैं नये कानूनका जुआ उतार नहीं सकता; फिर भी जिन परिस्थितियोंमें मैं हूँ, उनमें जब मैं पंजीयन कराने गया तब मेरे मनमें परस्पर-विरोधी भावनाएँ जोर कर रही थीं। एक ओर तो मेरा लेनदार मुझे कानूनके सामने झुकनेके लिए विवश कर रहा था, और यदि मैं न झुकूँ तो मेरा माल कुर्क कर देनेकी धमकी दे रहा था, दूसरी ओर कानूनके सामने झुकनेकी मेरी बेशर्मीका खयाल मुझे आ रहा था। मैंने बेशर्मीका पूरा अनुमान नहीं लगाया और धमकीके वश हो गया। अब मैं देखता हूँ कि मेरा जीवन बेकार हो गया है।
>
> मेरे देशभाई और सहधर्मी मुझे छोड़ रहे हैं। मेरी बहन और अन्य सगे-सम्बन्धी मेरा तिरस्कार करते हैं और कहते हैं कि मैंने अपनी ली हुई शपथ तोड़ी है, इसलिए मैं अपने कुटुम्बमें रहने योग्य नहीं हूँ। मेरी जायदाद तो शायद मेरे पास रहेगी। किन्तु मैं देखता हूँ कि मेरे सगे-सम्बन्धी और देशवासी भाई यदि मुझे छोड़ देते हैं तो वह जायदाद मेरे लिए बोझ रूप ही होगी। ३१ जुलाईको प्रिटोरियामें आम सभा हुई थी तब जिन मेमन लोगोंने पैसेके मोहमें अपनी ली हुई शपथ भंग करके कानूनकी गुलामी स्वीकार की थी, उनके खिलाफ सख्त बोलनेवाला केवल मैं ही एक था। किन्तु जब उसी पैसेका लोभ मुझे हुआ तब मैं भी फिसल गया। जो हो गया उसे तो मिटाया नहीं जा सकता। किन्तु यह पंजीयनपत्र आपको भेजकर मैं अपने आपको कुछ हदतक निष्कलंक करनेका सन्तोष मान लेता हूँ।
>
> अन्तमें मैं इतनी ही आशा करता हूँ कि मेरा उदाहरण मेरे भाइयोंके लिए चेतावनी स्वरूप हो जायेगा। और जबतक आपके दफ्तरका काम नये कानूनपर अमल करवाना रहेगा तबतक वे आपके दफ्तरकी ओर देखेंगे भी नहीं।

इसके अलावा श्री हेलूने उपर्युक्त पत्र अखबारोंमें भेजते हुए यह भी लिखा है कि उनके कुत्तेको जहर देनेकी जो बात अखबारोंमें प्रकाशित हुई है, वह झूठ है।

१. मूल अंग्रेजी पत्र **इंडियन ओपिनियन** ता० ३०-११-१९०७ में प्रकाशित हुआ था।

हमीदिया इस्लामिया अंजुमनका पत्र

अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके अध्यक्षके नाम इस अंजुमनने निम्नलिखित पत्र[1] भेजा है :

मेरा अंजुमन एशियाई कानूनकी ओर आपका ध्यान खींचता है। अंजुमनने भारतीय मुसलमानोंको जो पत्र लिखा है, उसे आप जानते ही होंगे। हमने राजकीय विषयोंमें उतरे बिना सभी प्रकारके संगठनोंके सामने अपनी फरियाद पेश की है। इस विषयमें मतभेद नहीं है। इससे हम चाहते हैं, कि इस सम्बन्धमें सभी संगठनोंकी ओरसे एक स्वरसे पुकार की जाये। इसलिए मेरा अंजुमन आशा करता है कि अखिल भारत मुस्लिम लीग इस सम्बन्धमें आवाज उठायेगी।

गोरोंके शिष्टमण्डलका क्या हुआ?

कुछ गोरे सरकारके पास शिष्टमण्डल ले जाना चाहते थे, यह खबर मैं दे चुका हूँ। शिष्टमण्डल अभी तक गया नहीं, इससे कुछ भारतीय अधीर हो गये हैं। मुझे कहना चाहिए कि यह अधीरता भीरुताका लक्षण है। शिष्टमण्डल जाये तो क्या और न जाये तो क्या? हम तो अपनी हिम्मतपर निर्भर हैं। इतनेपर भी भीरुओंको हिम्मत देनेके लिए मैं खबर देता हूँ कि शिष्टमण्डलके लिए तैयारी हो रही है। वह केवल यह देखनेके लिए आतुर है कि हममें कितना पानी है। दिसम्बरके पहले यह मालूम हो जानेकी सम्भावना नहीं है; इसलिए शिष्टमण्डल नहीं गया। फिर भी जो लोग बाहरकी मददके बलपर ही टिके हुए हैं, वे यदि निराश हों तो आश्चर्य नहीं।

एक धरनेदारका मामला

श्री पी० के० नायडू एक धरना देनेवाले स्वयंसेवक थे। उनकी एक मद्रासीसे पंजीयनपत्रके सम्बन्धमें तकरार हो गई थी। मद्रासीने पंजीयनपत्र ले लिया था, इसलिए श्री नायडूने उसे पीटा था। श्री नायडूके मुकदमेकी सुनवाई (मंगलवारको) हुई। उनको १० पौंड जुर्माना हुआ। वह जुर्माना उनके मित्रोंने दे दिया। इस सम्बन्धमें मजिस्ट्रेटने टीका करते हुए कहा कि यह मामला पंजीयनके सम्बन्धमें है; इसलिए सच देखा जाये तो उसे जुर्मानेके बजाय जेलकी सजा दी जानी चाहिए। मुझे स्वयं तो श्री नायडूसे कोई हमदर्दी नहीं है। ऐसे मामलोंसे हमारा ही नुकसान होता है। मारपीटकी बात इस लड़ाईमें है ही नहीं। इसके अलावा जुर्माना देकर छूटनेको मैं और भी खराब मानता हूँ। जुर्माना सगे-सम्बन्धियोंने दिया, यह उन लोगोंके लिए भी बदनामीकी बात है। जो मारपीट करके या दबाव डालकर लोगोंको पंजीकृत होनेसे रोकनेकी बात सोचते हैं, वे इस भव्य-धार्मिक स्वदेश हितकी लड़ाईको समझते ही नहीं।

पंजाबियोंकी याचिका

पंजाबियोंने लॉर्ड सेल्बोर्नके पास जो याचिका भेजी[2] है उसका अनुवाद निम्नानुसार है;

हम पुराने भारतीय सैनिक हैं। हममें ४३ पंजाबी मुसलमान, १३ सिख, तथा ५४ पठान हैं। हम सब ब्रिटिश प्रजा हैं। हमें बोअर युद्धके समय यहाँ लाया गया था।

१. यहाँ पत्रका सारांश मात्र दिया गया है। मूल अंग्रेजी पत्रके अनुवादके लिए देखिए "पत्र: अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके अध्यक्षको", देखिए पृष्ठ ३८५-८६।

२. मूल अंग्रेजी पत्रके अनुवादके लिए देखिए "प्रार्थनापत्र: उपनिवेश-मन्त्रीको", पृष्ठ, ३८८-८९।

जब हम दक्षिण आफ्रिकामें आये, हमारे अधिकारियोंने कहा था कि लड़ाईके बाद आप लोग ट्रान्सवालमें जहाँ जिस हिस्सेमें रह सकेंगे ।

इनमें से कुछ लोग चित्रालकी लड़ाई, तीरा-मुहिम और दूसरी लड़ाइयोंमें ब्रिटिश सरकारकी ओरसे लड़े हैं ।

हममें से बहुत लोग एशियाई कानून सम्बन्धी लड़ाईके कारण अभी बेकार हैं । कुछ लोगोंको पंजीयन न होनेके कारण नौकरीसे बरखास्त होना पड़ा है । कुछ लोगोंसे यह कहा गया है कि नये कानूनके अन्तर्गत पंजीकृत हो जाओ तो नौकरी मिलेगी ।

किन्तु हमारी समझमें एशियाई कानूनके सामने झुकना हमारे लिए असम्भव है । क्योंकि इस प्रकारका अपमान हमने कभी नहीं भोगा । हम सैनिक होकर अपनी इज्जत और शर्म क्यों बेचें ?

भारत छोड़ना अब हमारे लिए सम्भव नहीं है ।

इसलिए आदरपूर्वक निवेदन करते हैं कि आप दक्षिण आफ्रिकामें बड़ी सरकारके स्वार्थोंके समान हैं अतः आपको हमें संरक्षण देना चाहिए ।

इसलिए हम आशा करते हैं कि आप हमें यथासम्भव संरक्षण प्रदान करेंगे ।

चीनीकी मृत्युपर शोक सभा [बुधवार]

एक चीनीने आत्मघात किया था । उसकी स्मृतिमें चीनी संघने आज (बुधवारको) एक सभा की थी । इस सभाको देखनेवालोंके मनमें चीनियोंके प्रति सद्विचार आये बिना रह ही नहीं सकते । इन लोगोंने अपना सुन्दर सभा-भवन काले कपड़ोंसे सजा दिया था । उसमें एक ओर मृत चीनीकी तसवीर रखी थी । दोनसे पत्ता देनेवाले स्वयंसेवक खड़े थे । आसपास कुर्सियाँ रखी गई थीं, जिनपर आमन्त्रित लोगोंको बैठाया गया था । लगभग एक हजार चीनी अपने हाथोंमें फूलकी मालाएँ लिये बहुत धीरे-धीरे तसवीरके पास गये और मृतात्माके लिए दुवा माँगते हुए दूसरे दरवाजेसे निकल गये । ये सब लोग बहुत ही साफ-सुथरे कपड़े पहनकर आये थे । बादमें उन्होंने चीनी भाषामें मर्सिया गाया । मर्सिया गा चुकनेके बाद दूसरे सभा-कक्षमें सभा हुई । सभा-कक्ष पूरा भर गया था । वहाँ उनके प्रमुख श्री क्विनने चीनी और अंग्रेजीमें भाषण दिया । फिर श्री गांधी और श्री पोलकने कानूनके बारेमें समझाया, और बैठक समाप्त हुई । उनकी एकता, उनका साफ-सुथरापन और उनकी हिम्मत, तीनों बातें हमारे लिए अनुकरणीय हैं ।

प्रिटोरियामें मारपीट

श्री हाजी इब्राहीम एक बहादुर हैं । उन्हें एक पठान श्री बनुतखानने मारा था । उस पठानपर मुकदमा चल रहा है । उसकी पूरी खबर अभी नहीं मिली है । दिखाई यह पड़ता है कि पंजीयन पत्र लेने और शपथ तोड़नेके कारण बनुतखानने हाजी इब्राहीमको लकड़ी मारी । इसपर हाजी इब्राहीमने उसे पछाड़ दिया और वह उसपर चढ़ बैठा । बनुतखानने छूटनेके लिए उसका गाल नोच लिया । बनुतखानकी जमानत पहले १०० पौंड रखी गई थी, क्योंकि श्री चैमनेने खबर दी थी कि उसने उन्हें भी धमकी दी थी । किन्तु आधा मुकदमा हो जानेपर जमानत ५० पौंड कर दी गई थी । मजिस्ट्रेटने बनुतखानको २० पौंड जुर्माना किया है और वह रकम उसने दे दी है ।

मणिलाल देसाईका पत्र

प्रिटोरियाके मुख्य धरनेदार श्री मणिलाल देसाईने अखबारोंको पत्र लिखा है कि धरना देनेवाले मारपीट बिलकुल नहीं करते, न बल-प्रयोग करते हैं। वे बहुत ही धीरे और प्रेमसे कानूनकी बारीकियाँ समझाते हैं तथा उससे होनेवाली अड़चनोंका बयान करते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०–११–१९०७

३०४. भाषण: चीनी संघमें[1]

[जोहानिसबर्ग
नवम्बर २७, १९०७]

उन्होंने कहा कि ऐसे अवसरपर इस अधिनियमपर विचार करना धर्मभ्रष्टताका कार्य जैसा लगता है; परन्तु चूँकि अध्यक्षने एक उदाहरण[2] उपस्थित कर दिया है, मुझे उसका अनुसरण करना ही है, और विशेषकर इसलिए कि जिस संस्कारमें हम लोगोंने अभी हालमें भाग लिया है वह इस अधिनियमसे इतना अधिक सम्बद्ध है। मैंने प्रायः यह आक्षेप सुना है कि चीनी लोग मानव-जीवनकी वैसी कद्र नहीं करते जैसी कि अन्य लोग करते हैं। परन्तु यदि मुझे इस सम्बन्धमें कभी कोई भ्रम था तो वह आज अपराह्नमें मैंने जो-कुछ देखा, उससे दूर हो गया है। अच्छा होता, यदि जनरल स्मट्सने उस महान संस्कारको देखा होता जिसमें हम लोगोंने भाग लिया था। मेरा विचार है, उस दशामें जनरल स्मट्सने यह कहनेसे पहले, कि उन्होंने अपना चरण जहाँ रोपा है उसे वे वहीं रोपे रहेंगे, दुबारा सोचा होता। एशियाई अधिनियमसे लड़नेकी सलाह मैंने दी और मैं अब भी महसूस करता हूँ कि मैंने वही किया है जो ठीक, उचित और न्यायानुकूल है। मैंने अपने देशवासियोंको वह सलाह दी है और मुझे आपको भी, साथी एशियाइयोंके रूपमें, वही सलाह देनेमें कोई हिचक नहीं है। मैंने ब्रिटिश प्रजाजनों और गैर-ब्रिटिश प्रजाजनोंके बीच एक रेखा खींचनेका कठिन और सुदीर्घ प्रयास किया। मैंने यहाँकी सरकारसे, और साम्राज्यीय सरकारसे भी, जोरोंसे प्रार्थनाएँ कीं कि कमसे-कम ब्रिटिश प्रजाजनों और अन्य एशियाइयोंमें कुछ भेद तो किया ही जाना चाहिए। साम्राज्यीय सरकार और स्थानीय सरकार, दोनोंने जोरके साथ उत्तर दिया, "नहीं"। और यद्यपि मैंने अपने देशवासियोंके लिए और स्वयं अपने लिए उन सब अधिकारोंकी माँग की जो ब्रिटिश प्रजाजनोंको समुचित रूपसे प्राप्त होने चाहिए, तथापि वह माँग शीघ्रतासे ठुकरा दी गई और ब्रिटिश भारतीय तथा अन्य एशियाई एक ही श्रेणीमें रख दिये गये।

१. चाउ क्वाई नामक एक चीनीने पंजीयनके सामने झुकनेसे होनेवाले अपमानका अनुभव करके आत्म-हत्या कर ली थी। उसकी स्मृतिमें एक सभा हुई। चीनी संघके अध्यक्ष श्री क्विनने गांधीजीको इस सभामें भाषण देनेके लिए आमंत्रित किया था।

२. उन्होंने श्रोताओंको एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके [illegible] विरोध करनेके लिए प्रोत्साहित किया था।

मुसीबतने हमें इस संघर्षमें अजीब हम-बिस्तर बना दिया है। यह सर्वथा सत्य है कि इस स्थितिके बावजूद ब्रिटिश भारतीय अब भी किसी-न-किसी प्रकार ब्रिटिश प्रजावाली भावना-से चिपके हैं और उनका विचार है कि किसी-न-किसी दिन वे इस दलीलको फलीभूत करनेमें समर्थ हो जायेंगे। जहाँतक इस बातका सम्बन्ध है, चीनी संघर्ष ब्रिटिश भारतीय संघर्षसे भिन्न है, परन्तु जहाँतक इस काले कानूनके परिणामोंका सम्बन्ध है, चीनी संघर्ष ब्रिटिश भारतीयोंके संघर्ष जैसा ही है, और चूंकि यह कानून दोनोंको समान रूपसे पीसता है, इसलिए दोनों उससे लड़ रहे हैं। यदि एशियाई अधिनियमके रद किये जानेके बारेमें कोई औचित्य ढूंढ़ा जाये तो मेरी रायमें इसके दो उदाहरण दिये जा सकते हैं। महत्त्वकी दृष्टिसे निश्चय ही पहला है, आप चीनी श्रोताओंके एक देशभाईकी मृत्यु। आपके देशभाईने, जिसे वह गलती समझता था, उसके लिए आत्म-बलिदान किया है। यह दिखानेका एक क्षुद्र प्रयत्न किया गया है कि उस आदमीने अन्य कारणोंसे अपनी जान दी। परन्तु यह स्पष्ट तथ्य है कि उस आदमीने इस काले, क्षुद्र एशियाई अधिनियमके कारण अपने प्राण दिये। दूसरा उदाहरण, जिसका उन्होंने उल्लेख किया, स्वयं (वक्ताके) अपने देशभाइयोंमें से एकका था। [उन्होंने कहा,] एक ऐसे आदमीको, जो कि पूर्णतया निर्दोष था और अपना जीवन अपनी समझके अनुसार सर्वोत्तम ढंगसे बितानेका प्रयत्न कर रहा था तथा अपने देशवासियोंकी आध्यात्मिक आवश्य-कताओंकी पूर्ति कर रहा था, जेल भेजा गया और वह आज भी मात्र इसी एशियाई अधि-नियमके कारण जोहानिसबर्गमें अवहेलित है।[1] सब तरहके अभियोग उसके विरुद्ध लगाये गये हैं और उन राजद्रोहात्मक अभियोगोंके लिए रंचमात्र भी सबूत नहीं है। मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि चीनी और ब्रिटिश भारतीय, यदि वे अपने प्रति ईमानदार हैं, अपने देश-वासियोंके प्रति ईमानदार हैं और अपने सम्मानको अन्य सारी चीजोंसे मूल्यवान समझते हैं तो, वे उस अधिनियमको, जो अभी ही उनपर इतनी ज्यादती कर चुका है, कभी सिर नहीं झुका सकते। यह संघर्ष एक नैतिक और धार्मिक संघर्ष है। उन्होंने श्रोताओंको स्मरण दिलाया कि सदाचार अपना पारितोषिक स्वयं है और कहा कि यदि यह युरोपीयों और एशियाइयोंके परस्पर-विरोधी अधिकारोंका प्रश्न होता तो सरकारने जो रुख अख्तियार किया है वह मैं समझ सकता था। परन्तु मुझे विश्वास है कि यह युरोपीयों और एशियाइयोंके बीचका संघर्ष नहीं है। जनरल स्मट्सके बहुत दृढ़ होनेकी ख्याति है और वे ऐसे हैं भी, परन्तु जहाँतक एशियाइयोंका सम्बन्ध है, उस ताकतका सबूत मिलना अभी बाकी है। उन्होंने कहा है कि वे [ट्रान्सवाल सरकारके सत्ताधारी लोग] तेरह हजार ब्रिटिश भारतीयों और तेरह सौ चीनियोंकी आत्माकी पुकार नहीं सुन रहे हैं और उन्होंने एक ऐसे कामको करनेके लिए अत्यन्त सड़ियल रास्ता चुना है जो बहुत पहले ही अच्छे तरीकेसे किया जा सकता था। दूसरी दिसम्बरके बाद उनकी स्वतन्त्रता उनकी न रहेगी, परन्तु वे गिरफ्तार हों या नहीं, वे अपने सामने उस मृत व्यक्तिकी भावनाको रखेंगे और इस संघर्षमें याद रखेंगे कि सदाचार अपना पारितोषिक स्वयं है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ७–१२–१९०७

१. यहाँ रामसुन्दर पण्डितसे तात्पर्य है; देखिए "रामसुन्दर पण्डितका मुकदमा", पृष्ठ ३५२-५६।

३०५. हम विरोध क्यों करते हैं

पिछले पन्द्रह महीनोंमें मुश्किलसे ऐसा कोई सप्ताह गुजरा होगा, जब इन पृष्ठोंमें एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके विरुद्ध कोई वक्तव्य प्रकाशित न हुआ हो। और तब भी इस तथ्यसे इनकार नहीं किया जा सकता कि अधिकांश यूरोपीय तथा अनेक भारतीय भी यह नहीं बता सकेंगे कि महज पंजीयन कानूनका इतना तीव्र तथा सतत विरोध क्यों किया जाना चाहिए। कुछ लोगोंका कहना है कि अधिनियम इसलिए आपत्तिजनक है कि उसके अनुसार एशियाइयों और उनके आठ सालसे ऊपरकी आयुवाले बच्चोंको अपनी अँगुलियोंके निशान देने पड़ते हैं, जब कि कुछ अन्य लोगोंकी आपत्ति इस बातपर आधारित है कि यह एशियाइयोंको परेशान करनेके असीम अधिकार दे देता है। हम इन आपत्तियोंका महत्त्व कम नहीं आँकते, लेकिन हमको यह स्वीकार करनेमें तनिक भी संकोच नहीं है कि अपने-आपमें ये आपत्तियाँ नगण्य हैं और कमसे-कम उस बलिदानके योग्य तो नहीं ही हैं, जिसकी भारतीयोंने शपथ ली है।

तब यह जी-तोड़ संघर्ष किसलिए? इसका उत्तर यह है कि यदि इस अधिनियमको उन घटनाओंके सन्दर्भमें पढ़ा जाये जो इसके पूर्व घटित हुई और जिन्होंने इसको जन्म दिया, तो ज्ञात होगा कि यह एक ऐसा कानून है जो भारतीयोंको आदमी मानता ही नहीं है, जब कि भारतीय भी जीवनकी सभी सारभूत बातोंमें उतने ही सभ्य होनेका दावा करते हैं जितने कि स्वयं कानून-निर्माता। यह अधिनियम एक ओर तो ट्रान्सवाल-सरकारको यह अधिकार देता है कि वह भारतीयोंके साथ, उनके विचारों और भावनाओंकी कोई परवाह किये बिना, जैसा चाहे वैसा बरताव कर सकती है। दूसरी ओर सरकार इस बातसे मुकर जाती है कि उसे ऐसा कोई सहज अधिकार प्राप्त है, विशेषकर उस दशामें जब कि उसके क्रिया-कलापोंका सम्बन्ध वैयक्तिक स्वतन्त्रताको कम करने अथवा उसपर आघात करनेसे हो।

यदि हमसे यह बतानेको कहा जाये कि सरकारका ऐसा कोई मन्तव्य या दावा अधिनियमकी किस धारासे प्रकट होता है तो अपनेको भावुकताके आरोपका भागी बनाये बिना किसी एक विशेष धारापर अँगुली रखना, शायद, मुश्किल होगा। जिस प्रकार यह बताना सम्भव नहीं है कि अफीमके किस खास कणमें विष है, उसी प्रकार, शायद, यह बताना भी असम्भव है कि अधिनियममें यह विष कहाँ व्याप्त है। किन्तु किसी भी आत्माभिमानी एशियाईके लिए पूराका-पूरा अधिनियम, निःसन्देह, विषसे भरा हुआ है और ऊपर बताई हुई छोटी-छोटी बातोंको एक साथ मिलाकर देखनेसे यह तथ्य बिलकुल साफ हो जाता है। इस अधिनियमके सामान्य प्रभावको केवल अनुभव किया जा सकता है, उसे शब्दोंमें व्यक्त नहीं किया जा सकता; और इसीलिए जनताने जिस भयंकर भावनाको अनजाने ही, किन्तु सचमुच, सदा अनुभव किया है उसको प्रकट करनेके लिए प्रतीकोंका उपयोग किया है। इस अधिनियमके प्रशासनके लिए किये गये प्रयत्नोंके सिलसिलेमें जो-कुछ घटित हुआ — उदाहरणार्थ, करीम जमालपर व्यर्थ ही मुकदमा चलाना, प्रार्थियोंकी गुप्त जाँच करना, भारतीय पुजारीके मुकदमेमें चौंका देनेवाले रहस्योद्घाटन —[1] वह भारतीय जनता द्वारा अपनाये गये दृष्टिकोणको भयंकर रूपसे पुष्ट करता है और उसे सर्वथा उचित ठहराता है।

१. देखिए पृष्ठ १३८, १८८, ३५२-५८ ।

ऊपर हमने जो कुछ कहा है उसके बाद यह दिखाना, शायद, अनावश्यक है कि इसमें धार्मिक आपत्ति कहाँ है; किन्तु इसकी अधिक बारीकीसे जाँच करना, सम्भवतः आवश्यक है, क्योंकि सद्भाव रखनेवाले मित्रोंने भी यह प्रश्न किया है। उच्चतम दृष्टिकोणसे परखते हुए हम उस कारगर दलीलसे काम नहीं लेंगे जो तुर्क मुसलमानों तथा अन्य तुर्क प्रजाजनोंके बीच किये जानेवाले मनमाने और द्वेषजनक भेदभावके रूपमें हमें प्राप्त है, किन्तु हम धर्मात्मा पुरुषोंके सामने अपनी दलील एक सीधे-सादे प्रश्नके रूपमें रखेंगे : यदि यह सच हो कि भारतीय लोग शुद्ध अन्तःकरणसे यह मानते हैं कि अधिनियम उनको पौरुषहीन बनाता है, उनको गिराता है, उनको प्रायः दास बना देता है तो क्या जो मनुष्यताके दर्जेसे कम हैं वे कभी परमात्माकी पूजा कर सकते हैं ? क्या वे मनुष्य, जो कानून-विशेषके घातक परिणामोंको अच्छी तरह जानते हुए भी उसे मात्र स्वार्थपरता तथा सांसारिक समृद्धिके क्षुद्र उद्देश्योंसे स्वीकार कर लेते हैं, कभी परमात्माकी सेवा कर सकते हैं ?

इस दृष्टिसे देखनेपर यह साफ हो जाता है कि यह संघर्ष अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। मुट्ठी-भर आदमी, जिनको आम तौरपर कोई खास बहादुर नहीं समझा जाता, अपनेसे अधिक शक्तिशाली और असीम सत्ता-सम्पन्न सरकारके विरुद्ध संघर्ष कर रहे हैं। क्या वे कामयाब हो सकते हैं ? हम जोर देकर कहते हैं, "हाँ"— बशर्ते कि वे, जैसा अबतक करते आये हैं, अभिप्रेत परिणामके अनुपातमें ही महान् बलिदान करनेको इच्छुक और प्रस्तुत हों।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०–११–१९०७

३०६. हम कानूनके विरुद्ध क्यों हैं ?

इस प्रश्नके उत्तरमें आज बारह महीनोंसे कुछ-न-कुछ लिखा जाता रहा है। इतना होनेपर भी हमें डर है कि लड़ाईकी जड़ इतनी गहरी है कि इने-गिने भारतीय ही उसे ठीक तरहसे समझते हैं। यह आशा की जा सकती है कि अब सच्चे खेलका प्रसंग आ पहुँचा है। हमें उम्मीद है कि सरकार डरी हुई है तो भी सौके लगभग भारतीयोंपर हाथ डालेगी ही। यदि न डाले तो हमें सचमुच खेद होगा। यों कहना सरसरी तौरसे देखनेपर कदाचित् उचित न माना जाये, फिर भी हम अपने कथनको न्यायोचित समझते हैं; क्योंकि हमारी कसौटीका समय आ गया है। लोग जोशमें हैं। इस अवसरको चुका कर सरकार हमारा डंका नहीं बजने देगी। इसलिए फिर ऐसा अवसर और नहीं आनेवाला है। युद्धमें पहुँचा हुआ योद्धा बिना लड़ाई किये लौटनेपर जिस प्रकार निराश हो जाता है, ट्रान्सवालके भारतीयोंकी इस समय वैसी ही दशा है। इसलिए, और कुछ नहीं, तो सौके लगभग भारतीय जेल जायें तभी लड़ाई जमी मानी जायेगी। यह समाचारपत्र ट्रान्सवालके पाठकोंके हाथमें पहली या दूसरी दिसम्बर तक ही पहुँच पायेगा। उस समय बहादुर लोग इस विचारसे आतुरतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहे होंगे कि हम पहले रणमें जायें, अर्थात् बिना अपराधके पकड़ लिये जायें। और कायर घरमें दुबक कर 'हाय, पकड़ लेंगे तो' इस डरके मारे बिन मौतके 'मरे! मरे!' कर रहे होंगे। और दोगलोंके भाग्यमें तो ऐसे देश-प्रेमका अवसर होगा ही कहाँसे ? कायर और बहादुर दोनोंके लिए दो

दिसम्बरका अवसर हम भव्य मानते हैं। डरपोकोंको भी धन्यवाद देते हैं। क्योंकि, डरते रहनेपर भी देशके हितका खयाल करके उन्होंने पंजीयन करवाकर अपने नामपर बट्टा नहीं लगने दिया।

ऐसा हम किस हेतुसे लिख रहे हैं? भारतीय समाजपर ऐसा कौन-सा भारी काम आ पड़ा है? कानूनका विरोध क्यों कर रहे हैं? अब इन प्रश्नोंके उत्तरोंका विचार करें। बहुतेरे लोगोंका खयाल है कि लड़ाई इसलिए चल रही है कि हमें दस अँगुलियोंकी निशानी देनेमें आपत्ति है। कुछ लोगोंकी आपत्तिका केवल इसीमें समावेश हो जाता है कि उन्हें माँ और स्त्रीका नाम देना पड़ता है। फिर, कुछ लोगोंका कहना है कि पुलिस घर-घरमें जाँच करेगी यह तकलीफकी बात है। यह भी सच है कि ये सारी बातें अपमानजनक हैं। दस अँगुलियोंकी निशानी केवल चोर ही देते हैं। अपमान करनेके हेतु पवित्र माँका नाम लेनेके लिए कहनेपर कमरसे तलवारें निकल पड़ी हैं। संदिग्ध समझकर पुलिसने किसीसे पास माँगा तो अपमानसे जले-भुने उस मनुष्यका घूँसा खाकर पुलिसको धूल चाटनी पड़ी है। इतनेपर भी यदि कोई कर्तव्य रूपसे नहीं बल्कि विवेकपूर्वक अँगुलियोंकी निशानी देनेके लिए कहे और हम दें तो उसमें विशेष दुःख नहीं है। जिस प्रकार माला फेरकर ईश्वर — खुदाका नाम हम लेते हैं उसी प्रकार खुशी-खुशी हम माँका नाम लेंगे। मतलब यह कि उपर्युक्त बातें अपमान करनेके इरादेसे दाखिलकी गई हैं, इसीलिए आपत्तिजनक हैं। मूलतः उनसे हमें आपत्ति नहीं है। सभी पीले मनुष्य पीलियाके रोगी नहीं होते। परन्तु साधारणतया अस्थिपंजर जैसे शरीरमें हम पीलापन देखेंगे तब हम मान लेंगे — उस शरीरमें पीलियाका रोग है। वैद्य पीलेपनका इलाज नहीं करेगा, बल्कि पीलिया रोगका इलाज करेगा।

तब कानूनमें पीलिया कहाँ है, यह देखना है। पीलापन देख लिया। पीलिया तो यह है कि इस कानूनको बनाकर गोरे लोग यह बताना चाहते हैं कि एशियाई लोग मनुष्य नहीं, पशु हैं, स्वतन्त्र नहीं, गुलाम हैं; गोरोंकी बराबरीके नहीं, उनसे हलके दर्जेके हैं; उनपर जो कुछ हो वह सहन करनेके लिए जन्मे हैं; उन्हें सिर उठानेका — विरोध करनेका अधिकार नहीं है; वे मर्द नहीं, नामर्द हैं। अँगुलियोंकी निशानी आदि लक्षणोंसे यह स्थिति — पीलिया — प्रकट हो रही है। कानून जो-कुछ करवाना चाहता है वह जबरदस्ती करवाना चाहता है। वह भारतीयोंको, जो कि साहूकार हैं, चोर ठहराता है। हमें चोर ठहराकर तथा हमारे बच्चोंको भी चोर मान कर उन्हें अशोभनीय तरीकेसे परेशान करता है और उनमें डर पैदा करता है। हमारे देशमें बालकोंको जैसे "हौवा आया" यह कहकर बचपनसे डरा देते हैं, उसी प्रकार उन्हें यहाँ भी डरानेके लिए यह कानून है। हमसे कोई पूछे कि यह सब कानूनकी किस धारामें है तो वह बताना कठिन हो जायेगा। धतूरेके फूल देखकर कोई नहीं बता सकता कि उसमें जहर किस जगह है। उसकी परीक्षा जैसे खानेपर होती है उसी प्रकार इस कानूनको समझा जाये। इस सारे कानूनको पढ़नेवाला और समझनेवाला मर्द हो तो उसके रोंगटे खड़े हुए बिना नहीं रहेंगे। यह भारतीयोंका पानी उतार देता है। और बिना पानीकी तलवार जैसे निकम्मी हो जाती है वैसे ही इस कानूनको स्वीकार करनेवाला भारतीय मर्दकी श्रेणीसे निकल जाता है।

अब कोई कहेगा कि धर्म-सम्बन्धी आपत्ति क्या है? यह तुर्कीके मुसलमानोंपर लागू होता है और ईसाइयों तथा यहूदियोंको छोड़ देता है। इस बातको हम भले छोड़ दें, परन्तु यह कानून यदि हमारा अपमान करनेवाला हो और हमें जानवरकी भाँति रखनेवाला हो तो हम यह सवाल करते हैं कि क्या जानवर कभी खुदाको पहचानता है? क्या वह धर्म समझता है?

वास्तवमें यह कानून एशियाई और गोरोंके बीचका युद्ध है। गोरे कहते हैं," हम एशियाइयोंको केवल यंत्रके समान अपनी गधा-मजूरी करवानेके लिए ही रखेंगे।" भारतीय लोग ट्रान्सवालमें कानूनका विरोध करके कहते ह, "हम रहेंगे, तो स्वतंत्र मर्दके रूपमें और सामान्य व्यवहारमें बराबरीवालोंके रूपमें रहेंगे?" वास्तवमें कानूनका मतलब यही है। ऐसी लड़ाईमें बलवानसे टक्कर लेकर जीतना कठिन और सरल दोनों है। कठिन इसलिए कि बड़ी मुसीबत उठानी पड़ती है। सरल इसलिए कि मनुष्य देशकी भलाईके लिए, समाजके कल्याणके लिए कष्ट उठानेमें सुख मानता है।

मैं बिना किसी हिचकिचाहटके कहूँगा कि जो मनुष्य यह प्रश्न करता है कि बलवान और सब प्रकारसे — धनसे, शरीरसे, शस्त्रसे समर्थ गोरोंके मुकाबलेमें मुट्ठीभर भारतीय कैसे जीतेंगे, उसको खुदापर पूरा भरोसा नहीं है। हम कैसे भूल जायेंगे कि —

जनम्या ते मरवा माट हिंमत नहीं हारो,
समरथ छे मालिक साथ, रहम करनारो।

फिर, समर्थ होनेपर भी जब कोई अत्याचार करता है तब क्या होता है यह हमें बताया गया है:

कहा मनसूर खुदा मैं हूँ यूँ ही कहता था आलम को।
गया सूली पै चढ़नेको, तेरा दुश्वार जीना है॥

इस लड़ाईमें हमारी जीतके लिए एक ही शर्त है, सो यह कि हमारी हिम्मत सच्ची होनी चाहिए। हमारी मुसीबत उठानेकी शक्तिरूपी तलवार लकड़ीकी नहीं, बल्कि पानी चढ़ी फौलाद की होनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-११-१९०७

३०७. हमारा परिशिष्ट

श्री अमीरुद्दीन फजंदारका स्वदेश लौटनेका प्रसंग आया इसलिए [भारतीय राष्ट्रीय] कांग्रेसके प्रतिनिधिकी बात चली थी। श्री अमीरुद्दीनने शुरूसे ही कानूनके खिलाफ चुस्तीसे जोश बताया था। इसलिए जब उनके स्वदेश जानेकी बात हुई तब उनसे कुछ मित्रोंने पूछा कि वे स्वयं प्रतिनिधि बनेंगे या नहीं। श्री अमीरुद्दीनने तुरन्त ही बीड़ा उठा लिया। वे यह कह कर गये हैं कि भारतमें पहला काम वे यही करेंगे। इस बार हम उनका चित्र प्रकाशित कर रहे हैं।

श्री अमीरुद्दीनकी आयु छत्तीस वर्ष है। उनके मातापिता जमींदार थे। इसीलिए उनका आस्पद फजंदार है। वे प्रसिद्ध झटाम परिवारके हैं। सन् १८८८ में पहले-पहल ट्रान्सवाल आये तब अहमद कासिम कमरुद्दीनकी प्रसिद्ध पेढ़ीमें मुंशीके रूपमें बहाल हुए। १८९३ तक उनके यहाँ नौकरी करनेके बाद उन्होंने अपना व्यापार शुरू किया। उनकी पेढ़ीका नाम है

मुहम्मद हुसैन कम्पनी। बहुतेरे गोरोंने उन्हें माल न देनेका डर दिखाकर पंजीयन करवानेके लिए प्रलोभन दिया। लेकिन उन्होंने अपनी एक ही टेक रखी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-११-१९०७

३०८. खूनी कानून तथा उसके अन्तर्गत बनाये गये विनियम

हम इस अंकमें नया कानून तथा उसके अन्तर्गत बनाये गये विनियमोंका अंग्रेजी और गुजराती रूपान्तर दे रहे हैं। हम गुजराती अनुवाद पहले भी दे चुके हैं[1]। इस बारका अनुवाद कुछ विस्तारसे किया है। अब उसके साथ-साथ शान्ति-रक्षा अध्यादेशके खण्ड भी दिये जा रहे हैं। इसके सिवा इस अंकमें दूसरी महत्त्वपूर्ण बातें भी हैं। इसलिए यह अंक प्रत्येक भारतीयको ध्यानसे पढ़ना और सँभालकर रखना चाहिए। हम यह जानते हैं कि नया कानून और उसके विनियम ही कानूनके विरोधमें सर्वश्रेष्ठ दलीलें हैं। इसलिए यह कानून तथा इसके विनियम हम पुस्तकके रूपमें गुजराती तथा अंग्रेजीमें भी प्रकाशित कर रहे हैं। उसकी कीमत ६ पेंस रखी गई है। हमें विश्वास है कि भारतमें भी यह अंक तथा इस कानूनकी पुस्तिका घर-घरमें पहुँचेगी।

१. १८८५ का कानून ३ निम्न परिवर्तनके साथ कायम रहेगा।

२. एशियाई, यानी कोई भी भारतीय कुली अथवा तुर्कीकी मुसलमान प्रजा। इसमें मलायियों और गिरमिटमें आये हुए चीनियोंका समावेश नहीं होता। (इसके अलावा, पंजीयन अधिकारी आदिकी व्याख्या दी गई है। उसे यहाँ नहीं दे रहे हैं।)

३. ट्रान्सवालमें वैध रूपसे रहनेवाले प्रत्येक एशियाईको पंजीकृत हो जाना चाहिए। इसका कोई शुल्क नहीं लगेगा।

निम्न व्यक्ति ट्रान्सवालमें वैध रूपसे रहनेवाले एशियाई माने जायँगे।

(क) जिस एशियाईको अनुमतिपत्र कानूनके अन्तर्गत अनुमति मिली हो, बशर्ते कि वह अनुमतिपत्र धोखेसे अथवा गलत ढंगसे प्राप्त किया गया न हो। (मुद्दती अनुमतिपत्रोंका समावेश इसमें नहीं होता।)

(ख) प्रत्येक एशियाई जो १९०२ के मई महीनेकी ३१ वीं तारीखको ट्रान्सवालमें रहा हो।

(ग) जो १९०२ के मई महीनेकी ३१ वीं तारीखके पश्चात् ट्रान्सवालमें जन्मा हो।

४. प्रत्येक एशियाई, जो इस कानूनके अमलमें आनेकी तारीखको ट्रान्सवालमें मौजूद हो, उपनिवेश सचिव द्वारा निश्चित की गई तारीखसे पहले निर्धारित स्थानपर निर्धारित अधिकारीके यहाँ पंजीयनके लिए आवेदनपत्र दे। कानूनके अमलमें लाये जानेकी तारीखके बाद ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेवाला प्रत्येक एशियाई, यदि उसने इस कानूनके

१. देखिए "नया खूनी कानून", पृष्ठ १९-२५ तथा "खूनी कानून", पृष्ठ ७५-८०।

अन्तर्गत नया पंजीयनपत्र न लिया हो, तो, पंजीयनके लिए अपना आवेदनपत्र प्रविष्ट होनेके आठ दिनके अन्दर भेज दे। परन्तु

(क) इस धाराके अनुसार आठ वर्षसे कम उम्रके बालकके लिए आवेदन करना आवश्यक नहीं है।

(ख) आठ वर्षसे सोलह वर्ष तक के बालकके लिए उसका अभिभावक पंजीयनका आवेदनपत्र दे। और अगर वैसा आवेदनपत्र न दिया गया हो तो सोलह वर्षकी आयु होनेके बाद बालक स्वयं दे।

५. पंजीयक वैध रूपसे रहनेवाले एशियाईके आवेदनपर ध्यान देगा। पंजीयक उपर्युक्त एशियाईको तथा जिसे वह मान्य करे ऐसे एशियाईको पंजीयनपत्र दे।

यदि पंजीयन अधिकारी किसी एशियाईके आवेदनको अस्वीकृत कर दे, तो उस एशियाईको न्यायाधीशके समक्ष उपस्थित होनेके लिए वह कमसे-कम १४ दिनका नोटिस दे; और यदि निश्चित तारीखपर वह उपस्थित न हो, अथवा उपस्थित रहते हुए भी न्यायाधीशको अपने ट्रान्सवालमें रहनेके अधिकारके सम्बन्धमें सन्तुष्ट न कर सके और वह १६ वर्षकी आयुका हो तो, उसे न्यायाधीश ट्रान्सवाल छोड़नेका आदेश दे। और इस हुक्मपर १९०३ के शान्ति-रक्षा अध्यादेशके खण्ड ६, ७ और ८ लागू होंगे। यदि न्यायाधीशको विश्वास हो जाये कि उपर्युक्त एशियाई वैध निवासी है तो उसे पंजीयन अधिकारीको पंजीयनपत्र देनेका आदेश देना चाहिए।

६. जो एशियाई आठ वर्षसे कम आयुके किसी बालकका अभिभावक हो, उसे अपना आवेदनपत्र देते समय कानूनके अनुसार पंजीयन अधिकारीको उस बालकका विवरण और हुलिया देना चाहिए। यदि उस व्यक्तिका आवेदन स्वीकृत किया गया तो उसके पंजीयनपत्रपर वह विवरण और हुलिया लिख दिया जायेगा। फिर, उस बालकको आठ वर्षकी उम्र हो जानेपर एक वर्षके अन्दर पंजीकृत करनेके लिए वह अपने जिला न्यायाधीशके मारफत दुवारा अर्जी दे।

ट्रान्सवालमें जन्मे हुए बालकका एशियाई अभिभावक बालककी आठ वर्षकी आयु होनेपर एक वर्षके अन्दर उसे पंजीकृत करनेके लिए अर्जी दे।

(क) यदि अभिभावक उक्त प्रकारसे आवेदन न दे तो पंजीयन अधिकारी या न्यायाधीश जो समय निश्चित करे उस समय अभिभावक अर्जी दे।

(ख) यदि अभिभावक आवेदन न दे, अथवा आवेदन दिया गया हो किन्तु अस्वीकृत हो गया हो, तो १६ वर्षकी आयु हो जानेपर वह बालक स्वयं एक सालके अन्दर आवेदन करे। जिस न्यायाधीशके पास ऐसा आवेदनपत्र पहुँचे वह उस आवेदनके साथ सभी कागज पंजीयकको भेज दे और यदि पंजीयक ठीक समझे तो, आवेदकको पंजीयनपत्र दे दे।

७. अभिभावकने उपर्युक्त प्रकारसे आठ वर्षके बालकका नाम और हुलिया दर्ज न कराया हो और आठ वर्षके बाद बालकका पंजीयनपत्र न लिया हो तो १६ वर्षकी उम्र हो जानेपर बालक स्वयं एक महीनेके अन्दर आवेदन करे। और पंजीयकको उचित मालूम हो तो वह उसका पंजीयन कर दे। 468

८. इस कानूनके अनुसार यदि कोई व्यक्ति अपने या वालकके पंजीयनके लिए उपर्युक्त ढंगसे आवेदन नहीं देगा तो उसपर १०० पौंड तक जुर्माना होगा, और जुर्माना न देनेपर उसे तीन महीने तक की कड़ी या सादी कैदकी सजा दी जायेगी।

जो भी व्यक्ति ऐसे किसी सोलह वर्षसे कम आयुवाले एशियाईको ट्रान्सवालमें लायेगा, जो यहाँका वैध निवासी न हो, और जो व्यक्ति उस लड़केको नौकर रखेगा, वे दोनों अपराधी समझे जायेंगे, और उन्हें उपर्युक्त प्रकारसे सजा दी जायेगी, यदि ऐसे व्यक्ति एशियाई हुए तो उनका पंजीयन खारिज कर दिया जायेगा और उन्हें ट्रान्सवाल छोड़ देनेका आदेश दिया जायेगा। यदि वे ट्रान्सवाल नहीं छोड़ेंगे तो उन्हें कानूनके मुताविक जुर्माने या जेलकी सजा दी जायेगी; और शान्ति-रक्षा अध्यादेशके खण्ड ६, ७ और ८ उसपर लागू होंगे।

सोलह वर्षसे ज्यादा उम्रवाला जो भी एशियाई उपनिवेश सचिव द्वारा निश्चित की गई अवधिके पश्चात् ट्रान्सवालमें विना पंजीयनके पाया जायेगा उसे ट्रान्सवाल छोड़नेका आदेश दिया जायेगा और यदि वह ट्रान्सवाल नहीं छोड़ेगा तो उसे जुर्माने अथवा कैदकी सजा होगी।

उपर्युक्त प्रकारसे पंजीयनरहित एशियाई पंजीयनका आवेदन न देनेका न्यायालयको सन्तोषप्रद कारण वतायेगा तो उसे न्यायाधीश आवेदन करनेके लिए मोहलत दे सकता है। और उस अवधिमें यदि वह पंजीयन न कराये तो उसे फिर ट्रान्सवाल छोड़ने या सजा भोगनेका आदेश दिया जायेगा।

९. सोलह वर्षकी आयुवाला जो-कोई एशियाई ट्रान्सवालमें प्रवेश करेगा अथवा रहता होगा उसे कोई भी पुलिस या उपनिवेश-सचिव द्वारा आदिष्ट व्यक्ति पंजीयनपत्र दिखानेके लिए कह सकेगा; और इस कानूनकी धाराओंके अनुसार निर्धारित विवरण तथा हुलिया माँग सकेगा।

सोलह वर्षसे कम उम्रवाले एशियाईका अभिभावक उस वालकका पंजीयनपत्र दिखाने और विवरण तथा हुलिया प्रस्तुत करनेके लिए उपर्युक्त प्रकारसे वाध्य है।

१०. जिस व्यक्तिके पास इस कानूनके अनुसार प्राप्त किया हुआ नया पंजीयन-पत्र होगा उसे ट्रान्सवालमें रहने और प्रवेश करनेका हक है। किन्तु जिसे शान्ति-रक्षा अध्यादेशके खण्ड १० के अन्तर्गत हुक्म मिला हो, उसे यह हक नहीं है।

११. जिस व्यक्तिको किसी दूसरे व्यक्तिका पंजीयनपत्र अथवा मियादी अनुमतिपत्र मिले उसे सारे दस्तावेज तत्काल पंजीयकके पास भेज देने चाहिए। यदि वह नहीं भेजेगा तो उसको ५० पौंड तक जुर्मानेकी अथवा एक महीनेकी कड़ी या सादी कैदकी सजा दी जायेगी।

१२. जिस व्यक्तिका पंजीयनपत्र खो जाये उसे तुरन्त नये पंजीयनपत्रके लिए अर्जी देनी चाहिए। उस अर्जीमें कानूनके मुताविक सारा विवरण दिया जाये और उसपर पाँच शिलिंगके टिकट लगाये जायें।

१३. 'गजट' में निर्धारित की गई तारीखके पश्चात् किसी भी एशियाईको राजस्व या नगरपालिका कानूनके अनुसार तवतक परवाना नहीं दिया जायेगा जवतक वह अपना पंजीयनपत्र न दिखाये तथा माँगी हुई हकीकत व हुलिया न दे दे।

१४. किसी भी एशियाईकी आयुका प्रश्न खड़ा होनेपर यदि वह प्रमाणोंके साथ और कोई आयु सिद्ध न कर सके तो पंजीयक द्वारा निश्चित की हुई आयु ही सही मानी जायेगी।

१५. इस कानूनके अन्तर्गत जो हलफनामा देना पड़ेगा उसपर टिकटकी आवश्यकता नहीं है।

१६. जो व्यक्ति पंजीयन प्रमाणपत्रके सम्बन्धमें कुछ धोखा देगा, अथवा झूठ बोलेगा, अथवा दूसरे व्यक्तिको झूठ बोलनेके लिए प्रोत्साहन देगा या सहायता करेगा, अथवा जाली पंजीयनपत्र काममें लायेगा, अथवा वैसा पंजीयनपत्र दूसरोंको काममें लानेके लिए देगा, उसपर ५०० पौंड तक जुर्माना होगा, अथवा दो वर्ष तक की कड़ी या सादी कैदकी सजा होगी।

१७. उपनिवेश-सचिव अपनी इच्छानुसार किसी भी एशियाईको मुद्दती अनुमतिपत्र दे सकते हैं। उस अनुमतिपत्रकी अवधि समाप्त हो जानेपर वह व्यक्ति बिना अनुमति-पत्रका माना जायेगा। फिर उसे गिरफ्तार किया जा सकता है; इसपर शान्ति-रक्षा अध्यादेशके खण्ड ७, ८ और ९ लागू होंगे; और उस कानूनकी रूसे उसे उपनिवेश छोड़नेका हुक्म हो गया है, ऐसा मानकर सजा दी जायेगी। आजतक ऐसे जितने भी अनुमतिपत्र दिये जा चुके हैं उन सबपर यह कानून लागू समझा जायेगा। मियादी अनुमतिपत्रवालेको शराबकी छूट मिल सकती है। अलावा इसके, जिन एशियाइयोंपर यह कानून लागू नहीं होता, उन्हें भी उपनिवेश-सचिव शराबकी छूट दे सकते हैं।

१८. गवर्नर निम्न लिखित कामोंके लिए नियम बना सकते हैं:

(१) पंजीयनपत्र किस प्रकारका रखा जाये।

(२) पंजीयनपत्रके लिए अर्जी किस प्रकार की जाये, किस रूपमें दी जाये, उसमें दी जानेवाली हकीकतें क्या हों, हुलियामें क्या-क्या लिखा जाये।

(३) पंजीयन-प्रमाणपत्र किस प्रकारका लिया जाये।

(४) आठ वर्षसे कम आयुवाले बालकका अभिभावक, वह एशियाई जिससे खण्ड ९ के अनुसार पंजीयनपत्र माँगा जाये, खोये हुए पंजीयनपत्रकी प्रतिलिपि माँगनेवाला एशियाई तथा व्यापारिक परवानेके लिए अर्जी देनेवाला कोई भी एशियाई क्या-क्या हकीकतें, और कौन-कौनसा हुलिया दे।

(५) खण्ड १७ के अनुसार किस प्रकार अनुमतिपत्र दिया जाये।

१९. प्रत्येक एशियाई अथवा एशियाईके अभिभावकपर, यदि वह अपने लिए ऊपर निर्दिष्ट की गई बातें नहीं करता, और यदि इसके लिए कोई अन्य सजा निर्धारित नहीं की गई है, १०० पौंड तक जुर्माना किया जायेगा अथवा उसे तीन महीने तक का सपरिश्रम या सादा कारावास दिया जायेगा।

२०. चीनियोंसे सम्बन्धित नौकरीका कानून [श्रम आयात अध्यादेश] एशियाइयोंपर लागू नहीं होगा।

२१. १८८५ के कानूनकी तारीखसे पहले यदि किसी एशियाईने अपने नामपर जमीन खरीदी होगी तो उसके उत्तराधिकारीको वह जमीन पानेका अधिकार होगा।

२२. जबतक सम्राट् स्वीकृति न दें और वह स्वीकृति 'गजट' में प्रकाशित न हो जाये तबतक यह कानून अमल नहीं आयेगामें।

नये कानूनमें उल्लिखित १९०३ के शान्ति-रक्षा अध्यादेशके कुछ खण्ड

६. जो व्यक्ति पंजीयन न होनेके कारण गिरफ्तार किया जायेगा उसे सीधे मजिस्ट्रेटके पास ले जाया जाये। और यदि वह व्यक्ति उपनिवेशमें रहनेका अपना हक साबित न कर सके, तो उसे मजिस्ट्रेट अपनी मर्जीके मुताबिक निश्चित अवधिके भीतर उपनिवेश छोड़नेका नोटिस दे। परन्तु यदि वह व्यक्ति यह बता सके कि उसके पास अनुमतिपत्र है, किन्तु उसे प्रस्तुत नहीं कर सकता, अथवा यह बता सके कि वह उस वर्गका व्यक्ति है जिसे अनुमतिपत्र रखनेकी आवश्यकता नहीं है, तो बादमें अधिक प्रमाण पेश करनेके लिए मजिस्ट्रेट उसकी जमानत लेकर उसे छोड़ सकता है। यदि वह जमानतकी शर्तें तोड़े, तो जमानतपत्रके मुताबिक उसका पैसा जब्त कर लिया जायेगा।

७. जिस व्यक्तिको उपनिवेश छोड़नेका हुक्म दिया गया हो, पर उसने उपनिवेश नहीं छोड़ा हो, तो उसे तथा जिस व्यक्तिने उसकी जमानत ली हो और जमानतकी शर्त उपर्युक्त धाराके अनुसार टूट गई हो तो उसे भी बिना वारंटके गिरफ्तार किया जा सकता है। गुनाह साबित होनेपर मजिस्ट्रेट उन्हें कमसे-कम एक महीने और अधिकसे अधिक ६ महीनेकी सख्त अथवा सादी कैदकी सजा दे सकता है। साथ ही वह उसे ५०० पौंड जुर्माना कर सकता है। तथा जुर्माना न देनेपर ६ महीने तक की अतिरिक्त कैदकी सजा दे सकता है।

८. उपर्युक्त धाराके मुताबिक जेलकी सजा भोगकर छूटनेपर यदि कोई व्यक्ति [उपनिवेश-सचिवसे लिखित[1] आज्ञा लिये बिना] उपनिवेशमें ७ दिनसे अधिक रहेगा, तो उसपर फिरसे मुकदमा चलाया जायेगा और उसे कमसे-कम ६ महीने और अधिकसे-अधिक १२ महीनेकी जेलकी सजा देने अथवा ५०० पौंड तक जुर्माना करने और यदि वह न दे, तो अतिरिक्त ६ महीने तक की जेलकी सजा देनेका मजिस्ट्रेटको अधिकार है।

९. जो व्यक्ति :
   (१) झूठे तरीकेसे अनुमतिपत्र लेगा अथवा दूसरेको लेनेमें मदद करेगा;
   (२) और झूठे ढंगसे लिये हुए अनुमतिपत्रका उपयोग करेगा अथवा दूसरेसे करवायेगा;
   (३) अथवा झूठे ढंगसे मिले हुए अनुमतिपत्रके सहारे, अथवा जो अनुमतिपत्र बाकायदा नहीं मिला हो उसके सहारे दाखिल होगा, अथवा दाखिल करानेका प्रयत्न करेगा, उस मनुष्यको ५०० पौंड तक का जुर्माना होगा, अथवा २ वर्ष तक की जेलकी सजा दी जायेगी, या दोनों सजाएँ मिलेंगी।

१०. जब वाजिब कारणोंसे लेफ्टिनेन्ट गवर्नरको सन्तोषजनक ढंगसे इस बातका विश्वास हो जायेगा कि अमुक व्यक्ति उपनिवेशमें शान्ति अथवा सुशासनको खतरा पहुँचानेवाला है, तब वह उस व्यक्तिको निश्चित अवधिके भीतर उपनिवेश छोड़नेको हुक्म दे सकता है; और यदि ऐसा व्यक्ति अवधि बीतनेपर उपनिवेशमें देखा जायेगा तो उसके विरुद्ध ऊपर बताये गये खण्ड ७ और ८ के मुताबिक मुकदमा चल सकता है और उनके मुताबिक उसे सजा मिल सकती है।

१. ये शब्द अंग्रेजी पाठके आधारपर जोड़े गये हैं।

खूनी विनियम[1]

यह कानून एक पुस्तिकाके आकारमें प्रकाशित हुआ है। कीमत है ६ पेनी; डाकखर्च आधा पेनी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-११-१९०७

३०९. पत्र : उच्चायुक्तके निजी सचिवको

२१-२४ कोर्ट चेम्बर्स
नुक्कड़, रिसिक व ऐंडर्सन स्ट्रीट
पो० ऑ० बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
दिसम्बर ३, १९०७

निजी सचिव
परमश्रेष्ठ उच्चायुक्त
जोहानिसबर्ग

महोदय,

श्री डेविड पोलकने मुझे अभी श्री हॉस्केनका एक सन्देश दिया है जिसमें मुझे सुझाया गया है कि एशियाई कानून संशोधन विधेयकके सम्बन्धमें जो गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो गई है, उसके विषयमें मैं परमश्रेष्ठसे निजी रूपमें मिलूँ और उनके सम्मुख वह बात रखूँ, जो मेरी समझसे एशियाई जातियोंको मान्य हो और साथ ही सरकारके मुख्य उद्देश्यको भी पूरा करे।

मैं अब जो-कुछ कहने जा रहा हूँ उसकी प्रस्तावनामें यह कहना शायद जरूरी नहीं है कि इस मामलेमें मुझे जो रुख अपनानेकी आवश्यकता प्रतीत हुई है उसमें मेरी इच्छा जितनी अपने देशवासियोंकी सेवा करनेकी है उतनी ही सरकारकी सेवा करनेकी भी है। मैंने जिन बातोंको इस साम्राज्यकी खूबी समझा है, उनके कारण मैं अपनेको उसका भक्त मानता हूँ। इसीलिए मैंने यह देखकर — चाहे मेरा देखना सही हो या गलत — कि एशियाई कानून संशोधन अधिनियममें साम्राज्यके लिए खतरेके बीज छिपे हुए हैं, अपने देशवासियोंको किसी भी कीमतपर, अत्यन्त शान्तिपूर्ण और, कहूँ तो, शिष्ट ढंगसे इस अधिनियमका विरोध करनेकी सलाह दी है।

सरकारका उद्देश्य ऐसे प्रत्येक भारतीयकी, जो इस उपनिवेशमें रहने और प्रवेश करनेका अधिकारी है, शिनाख्त करना है। मेरी विनम्र सम्मतिमें यह उद्देश्य प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियममें संशोधन करके पूरा किया जा सकता है। इस अधिनियमपर अभी सम्राट्की स्वीकृति नहीं मिली है और मेरा विश्वास है कि उसके वर्तमान स्वरूपमें उसे स्वीकृति

१. इसके बाद खूनी धाराओंका ब्योरा और फॉर्म दिये गये हैं, जिनके लिए देखिए "खूनी कानून", पृष्ठ ७५-८० और परिशिष्ट ४।

नहीं मिलेगी। मेरी विनम्र सम्मतिमें, स्वेच्छया पंजीयनका प्रस्ताव शान्ति-रक्षा अध्यादेशके रद हो जानेकी सम्भावनाको देखते हुए, अधिक उपयोगी न होगा; क्योंकि जो भी पंजीयन प्रमाणपत्र लिये जायेंगे वे शान्ति-रक्षा अध्यादेशके बिना बेकार होंगे। इसलिए मैं निम्न सुझाव देनेका साहस करता हूँ।

(क) सरकारी 'गजट' में इस अधिनियमके अन्तर्गत पंजीयनके सम्बन्धमें प्रकाशित सूचनाएँ वापस ले ली जायें;

(ख) संसदके अगले अधिवेशनमें प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियममें ऐसा संशोधन कर दिया जाये कि जो भारतीय उपनिवेशमें शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत रहने या प्रवेश करनेके अधिकारी हों, या जिनके पास १८८५ के कानून ३ के अन्तर्गत तीन पौंडी पंजीयन प्रमाणपत्र हों और जो उनके सम्बन्धमें अपना अधिकार सिद्ध कर सकें, उनको अधिवास-प्रमाणपत्र देनेकी व्यवस्था हो जाये। अधिवास-प्रमाणपत्र पंजीयन प्रमाणपत्रका स्थान लेंगे और उनमें पूरी शिनाख्त — हुलिया — दर्ज होगी। इसमें अधिवासी एशियाइयोंके अवयस्क बच्चोंके प्रमाणपत्रोंका समावेश नहीं होता; किन्तु किसी प्रकारकी जाली कार्रवाई न हो, इसके लिए उनके नाम और आयु अधिवास प्रमाणपत्रोंमें दे दिये जायेंगे। इससे ज्यादासे-ज्यादा जो भी हो लेकिन उपनिवेशमें एशियाई बच्चोंकी संख्यामें अवैध वृद्धि कदापि नहीं हो सकती बल्कि सम्भवतः छद्म-परिचय भी बहुत थोड़े-से मामलोंमें होगा और उसके विरुद्ध भी प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके अन्तर्गत कड़ी कार्रवाई की जा सकती है। संशोधनमें उन एशियाइयोंके लिए भी, जो शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षा पास कर सकेंगे, अधिवास-प्रमाणपत्र लेनेकी बात शामिल नहीं है। जैसी उपधारा इस समय है उसके अन्तर्गत यह परीक्षा काफी कड़ी है और इसलिए यह अपने-आपमें शिनाख्तका पूरा साधन प्रस्तुत कर देती है। संशोधनसे एशियाई अधिनियम भी रद हो जायेगा।

यह देखते हुए कि पंजीयनके बिना पन्द्रह महीने बीत गये हैं, कदाचित तीन या चार महीने और बीतनेसे कोई अन्तर नहीं पड़ेगा। किन्तु यदि सरकारका विचार दूसरा हो, तो सादर निवेदन है कि सूचनाएँ वापस लेनेपर वहाँ, भारतीय समाजकी सदाशयताकी परीक्षा करनेके लिए ही सही, वर्तमान कागजोंकी जगह पंजीयन प्रमाणपत्र जारी कर सकती है। ये प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियममें संशोधनके समय अधिवास-प्रमाणपत्र मान लिये जा सकते हैं।

मेरी सम्मतिमें, एशियाई अधिनियमको स्वीकृत करनेका मुख्य कारण "बड़े पैमानेपर[1]" चोरीसे प्रवेश करनेका आरोप था। चूँकि मैंने एकके बाद एक अनेक अधिकारियोंके अधीन एशियाई विभागके संचालनको सदा निकटसे देखा है, इसलिए मुझे यह बात सदा ही बहुत खटकी है। कप्तान फाउलने जिन प्रमाणोंके आधारपर यह माना था कि बहुत कम भारतीय चोरी-छिपे आते हैं, उन्हीं प्रमाणोंका प्रयोग करके श्री चैमनेने प्रतिकूल प्रतिवेदन दिया। मेरा अब भी विश्वास है कि श्री चैमने जिस पदपर हैं उसके लिये वे सर्वथा अयोग्य हैं, क्योंकि उनमें प्रमाणोंकी सूक्ष्म जाँच करनेकी कानूनी योग्यता बिलकुल नहीं है। मेरे मनमें व्यक्तिशः उनके विरुद्ध कुछ नहीं है। वे शिष्ट और सन्देहसे परे हैं, किन्तु इन दोनों गुणोंसे उस अतिरिक्त योग्यताकी कमी पूरी नहीं होती जो उस पदके लिए, जिसपर वे हैं, अनिवार्य है। इसलिए

१. मूलमें ये शब्द रेखांकित हैं।

मैं वर्तमान प्रमाणपत्रोंके परिवर्तनके विकल्पके रूपमें यह सुझानेका साहस करता हूँ कि चोरी-छिपे प्रवेशके आरोपकी जाँचके लिए सर्वोच्च न्यायालयके न्यायाधीशको, या विटवॉटर्सरैंड जिलेके मुख्य न्यायाधीशको या किसी दूसरे ऊँचे अधिकारीको, जिसे कानूनी ज्ञान हो, नियुक्त किया जाये। वह ऐसी प्रत्येक बातके सम्बन्धमें, जो एशियाई विभागके अधिकारी उसके सामने रखें, प्रतिवेदन दे सकेगा; और यदि जांच जनताके लिए खुली हो और गवाहोंसे खुली पूछताछ की जाये तो उससे ट्रान्सवालके लोगोंकी चिन्ता दूर होगी, जो प्रतिवेदन दिया जायेगा उस पर कोई सन्देह न कर सकेगा एवं उससे कदाचित् इस पत्रमें सुझाये गये संशोधनका मार्ग प्रशस्त हो जायेगा।

मैं शिनाख्तके तरीकोंकी जाँच करने और अँगुलियोंके निशानोंके प्रश्नपर जानबूझ कर नहीं विचार कर रहा हूँ, क्योंकि वह एक गौण प्रश्न है। यदि एशियाई अधिनियमको रद करने और भारतीय समाजका सहयोग लेनेका विचार मान लिया जाये तो मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि अन्य कठिनाइयाँ दूर की जा सकती हैं।

यदि आवश्यकता होगी तो मैं कानूनी भाषामें प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके संशोधनोंको प्रस्तुत करनेके लिए तैयार हूँ। मेरी विनम्र सम्मतिमें इनसे एशियाई अधिनियमका उद्देश्य जहाँतक शिनाख्तका सम्बन्ध है, बिलकुल पूरा हो जाता है, और ब्रिटिश भारतीयोंकी भावनाओंको भी किसी तरह ठेस नहीं पहुँचती।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

आर्काइव्ज़ ऑफ ट्रान्सवाल गवर्नर, प्रिटोरिया: फाइल ५३/११/१९०७।

३१०. मुहम्मद इशाकका मुकदमा[1]

[फोक्सरस्ट
दिसम्बर ६, १९०७]

श्री गांधीने जो अपराधीके वकील थे, सोचा कि कानूनके महकमेके अनिर्णयका उसके मुवक्किलके प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए, और विशेषकर उस दशामें, जब वह गिरफ्तार है और जमानतपर छूटनेसे इनकार करता है। यदि उसके विरुद्ध कोई निश्चित अभियोग नहीं लगाया जा सकता तो उसे तुरन्त रिहा कर दिया जाना चाहिए। सरकारके लिए

१. मुहम्मद इशाक, जो पेशेसे एक बावर्ची था, भारतसे लौटनेपर फोक्सरस्टमें गिरफ्तार किया गया। बोअर युद्धसे पहले वह ट्रान्सवालमें चार वर्ष रह चुका था। शान्ति-रक्षा अध्यादेश और १८८५के कानून ३ के अन्तर्गत उसे एक अनुमतिपत्र और एक पंजीयन प्रमाणपत्र दिया गया था। वह डी'विलियर्स, सहायक अधिवासी मजिस्ट्रेटके समक्ष पेश किया गया और उसने जमानतपर छूटनेसे इनकार किया। परन्तु सार्वजनिक अभियोक्ता श्री मेंज़ उस अपराधीके विरुद्ध अभियोग लगाये जानेके बारेमें हिदायतोंकी तब भी प्रतीक्षा कर रहे थे।

उसको पुनः गिरफ्तार करनेका मार्ग तब भी खुला रहेगा, क्योंकि उनके मुवक्किलकी यह देश छोड़नेकी इच्छा नहीं है, वरन् यहाँ[1] बने रहनेके अपने अधिकारका दावा करनेकी है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–१२–१९०७

३११. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

जोहानिसबर्ग
दिसम्बर ७, १९०७ के पूर्व

सेवामें
माननीय उपनिवेश सचिव
[प्रिटोरिया
महोदय,]

मेरे संघने मुझे निर्देश दिया है कि मैं आपका ध्यान परिवहन-उपनियमोंके उस संशोधनकी ओर आकर्षित करूँ, जो जोहानिसबर्ग नगरपालिकाने प्रथम श्रेणीकी घोड़ागाड़ियोंके सम्बन्धमें पास किया है।[2] यदि सरकार इस संशोधनको स्वीकार कर लेती है तो इससे ब्रिटिश भारतीयों द्वारा प्रथम श्रेणीकी घोड़ागाड़ियोंके उपयोगपर रोक लग जायेगी। मेरे संघका निवेदन है कि इस प्रकारका भेदभाव सर्वथा अनावश्यक और क्षोभकारी होगा।

कुछ विशेष धंधोंमें लगे एशियाइयोंको जो छूट दी गई है उससे तो समाजने अपमानका ही अनुभव किया है, और कुछ नहीं। प्रसंगवश, मेरा संघ आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करता है कि जहाँ किसी उदात्त धंधेमें लगे लोग प्रथम श्रेणीकी घोड़ागाड़ियोंका उपयोग कर सकते हैं, उनकी पत्नियाँ तथा उनके बच्चे स्पष्टतः इस सुविधासे वंचित हैं।

मेरा संघ यह विश्वास करनेका साहस करता है कि सरकार कृपाकर उस समाजके साथ, जिसका मेरा संघ प्रतिनिधित्व करता है, न्याय करनेके लिए उक्त संशोधनको अस्वीकार कर देगी।

[आपका, आदि,
ईसप मियाँ
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ]

इंडियन ओपिनियन, ७–१२–१९०७

१. और आगे बहसके बाद मजिस्ट्रेटने इस मामलेको जोहानिसबर्ग वापस भेज दिया, जिससे खर्च और देरी बचाई जा सके। उसने मुहम्मद इशाकको स्वयं अपने विबन्धपर छोड़ दिये जानेकी आज्ञा दी। जब ११ दिसम्बरको जोहानिसबर्गमें यह मामला श्री जॉर्डनके समक्ष सुनवाईके लिए लाया गया तब उसी धाराके अन्तर्गत मुकदमा चलाया गया जिसके अन्तर्गत ९ दिसम्बरको ३७ भारतीयोंका मुकदमा सुना गया था। (देखिए "भारतीयोंका मुकदमा", पृष्ठ ४१९-२०)। जो गवाहियाँ गुजरीं वे भी उसी प्रकारकी थीं। इंडियन ओपिनियनने १४–१२–१९०७ को इसका यह विवरण छापा: "श्री गांधीने अपराधीकी ओरसे बिना कोई गवाह पेश किये उसकी रिहाईकी माँग की। श्री जॉर्डनने एक विचारपूर्ण फैसला सुनाया। उसमें उन्होंने शान्ति-रक्षा-अध्यादेशकी उन धाराओंकी पूर्ण व्याख्या की जिनका इस मामलेसे सम्बन्ध था, और अपराधीको रिहा कर दिया। अदालत भारतीयोंसे ठसाठस भरी थी।"

२. देखिए "पत्र: जोहानिसबर्ग नगरपालिकाको", पृष्ठ २०९।

३१२. पत्र: उच्चायुक्तको

[जोहानिसवर्ग
दिसम्वर ७, १९०७ के पूर्व]

[उच्चायुक्त
प्रिटोरिया

महोदय,]

इस पत्रके साथ मैं परमश्रेष्ठके विचारार्थ सादर एक प्रार्थनापत्र[1] भेज रहा हूँ। इसपर जमादार नवावखाँ और फजले इलाहीने उन लोगोंकी ओरसे हस्ताक्षर किये हैं, जिनका ये प्रतिनिधित्व करते हैं। उन लोगोंके नाम भी प्रार्थनापत्रसे संलग्न सूचीमें दिये गये हैं। यह प्रार्थनापत्र मैं उन पंजावी, पठान, और सिखोंके अनुरोधपर भेज रहा हूँ, जो ट्रान्सवाल निवासी ब्रिटिश प्रजाजन हैं।

इस प्रार्थनापत्रको भेजते हुए मैं जानता हूँ कि यदि, कदाचित् परमश्रेष्ठने इसमें हस्तक्षेप किया भी तो वह वड़ी कठिनाईसे ही ऐसा करना स्वीकार करेंगे। परन्तु ये प्रार्थी पुराने सैनिक हैं, जो ब्रिटिश सरकारके लिए लड़े हैं और वेशक आज भी उसके लिए और ब्रिटिश झंडेके नीचे लड़नेको तैयार हैं। जहाँतक इनका सम्वन्ध है, मुझे यह स्पष्ट करनेकी जरूरत नहीं कि इनकी स्थिति कितनी गम्भीर है। मेरी तुच्छ रायसे यह आवश्यक है कि जिन कष्टोंसे वे गुजर रहे हैं उन्हें दूर करनेके कुछ कदम उठाये जायें। उन्हें स्थानीय सरकार द्वारा अथवा साम्राज्य सरकार द्वारा संरक्षण प्राप्त होना चाहिए।

मैंने इनकी अर्जी लिखनेका काम वड़े ही असमंजससे हाथमें लिया था। परन्तु मुझे ऐसा महसूस हुआ कि जिस साम्राज्यसे मेरा नाता है उसके प्रेमीकी हैसियतसे मेरा यह कर्तव्य है कि उनकी भावनाओंको उपयुक्त अभिव्यक्ति प्रदान करूँ। उनमें से कुछ लोग दक्षिण आफ्रिकामें अपने सम्राट्के सर्वोच्च प्रतिनिधिके समक्ष अपने दुःख व्यक्तिगत रूपसे रखनेको आतुर थे, और अव भी हैं। तथापि मैंने उन्हें समझा दिया है कि ऐसी प्रार्थना स्वीकार होनेकी कोई सम्भावना नहीं है। इसका कारण न केवल परमश्रेष्ठपर कामका वहुत अधिक भार है, वल्कि शायद प्रार्थियों द्वारा ऐसी कोई प्रार्थना करनेका अनौचित्य भी है।

[आपका इत्यादि,
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-१२-१९०७

१. देखिए "प्रार्थनापत्र: उच्चायुक्तको", पृष्ठ ३८४-५।

३१३. रिचकी सेवाएँ

श्री रिच विलायतमें रहकर भारतीयोंके लाभके लिए जो अथक परिश्रम कर रहे हैं उसका सारे भारतीयोंको कदाचित् ही पूरा अनुमान होगा। अभी-अभी ट्रान्सवालके भारतीयोंकी मुसीबतोंकी हूबहू तस्वीर एक छोटी-सी पुस्तिकाके[1] रूपमें प्रकाशित करके उन्होंने हमारे समाजका और भी अधिक उपकार किया है। प्रत्येक भारतीय जानता है कि श्री रिचकी सेवाका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। २३ पृष्ठकी अठपेजी पुस्तिकामें सारे विवरणका समावेश कर दिया है और सन् १८८५ से पड़नेवाली सारी विपत्तियोंका संक्षेपमें बड़ी खूबीसे सुन्दर वर्णन किया है। फिर हमें श्री रिचके परिश्रमका ही लाभ मिलता हो सो बात नहीं, उनकी प्रतिष्ठाका भी लाभ मिलता है। अर्थात् श्री रिच जैसे १८ वर्ष पुराने गोरे उपनिवेशवासी भारतीयोंके पक्षमें लड़ते हैं इस बातका गोरोंपर अधिक प्रभाव पड़ सकता है। और इसी कारण उन्होंने यह बात पुस्तिकाकी प्रस्तावनामें बताई है। इतनी छोटी पुस्तिकामें श्री रिचने जिस विस्तृत जानकारीका समावेश किया है उससे श्री रिचका परिश्रम प्रकट होता है।

सन् १९०३ में लॉर्ड मिलनरने भारतीय समाजको जो वचन दिये थे श्री रिचने उनकी याद दिलाई, यह ठीक किया। लॉर्ड मिलनरने कहा था:[2]

> एक बार पंजीयन करवा लो, जिससे फिर कोई आपका नाम न ले सके। और न आपको फिरसे कभी पंजीयन करवाना पड़े, न अनुमतिपत्र ही लेने पड़ें। इस समय पंजीयन करवानेसे आपका यहाँ रहनेका अधिकार पक्का हो जायेगा। इसके बाद आप लोग आने-जानेके हकदार हैं।

अनिवार्य पंजीयन और स्वेच्छया पंजीयन दोनोंकी तुलना करके श्री रिचने उनके बीचका अन्तर दिखा दिया है। "स्वेच्छया पंजीयनमें अनिवार्यताका डंक नहीं रहता। गोरोंकी भावनाओंके निर्वाहके लिए स्वेच्छया पंजीयन करवानेमें निश्चय ही भारतीय समाजकी भलमनसाहत मानी जायेगी। अनिवार्य पंजीयन करवाया गया तो भारतीयमें और आफ्रिकीमें भेद नहीं रहता। फिर उस उदाहरणके आधारपर पड़ोसी उपनिवेशी भी ट्रान्सवालके कदमोंपर चलना सीखेंगे। इसके अलावा अनिवार्य रूपसे पंजीकृत होना पृथक् बस्तियोंमें निकाल दिये जानेके लिए बीज बोनेके समान हो सकता है।

श्री रिचने अपने लेखमें लम्बी दलीलोंमें उतरनेके बदले महत्त्वपूर्ण घटनाओंको जगह-जगहपर इतनी अच्छी तरह रखा है कि पाठक भारतीय लड़ाईके औचित्यको स्वीकार किये बिना नहीं रह सकता। अपनी पुस्तिकाके अन्तमें श्री रिचने जो बताया है उसके अनुसार युद्ध-पूर्व वचन

१. देखिए परिशिष्ट ८।
२. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३२७-२८।

और युद्धोत्तर कालके कामके बीचका अन्तर देखकर पता चल जाता है कि सरकार किस प्रकार गोलमोल बात करनेवाली है। इसके अलावा श्री रिचके कथनानुसार :

> मताधिकार रहित लोगोंकी रक्षा करना ट्रान्सवालका कर्तव्य है। इस बातको छोड़ दें तो भी ट्रान्सवालको चाहिए वह सारे राज्यके हितकी बातोंको पहला स्थान दे। केवल ढाई लाखके लगभग गोरोंके लिए जान-बूझकर तीस करोड़ भारतीय प्रजाके लोगोंपर अपमान और मुसीबतें बरसानसे बड़ी सरकारके राज्य और कीर्तिको कितना बट्टा लगा है यदि इसी बातका गोरे लोग विचार कर लें तो काफी होगा।

श्री रिचकी पुस्तिकासे विलायतमें और अन्यत्र गोरे लोगोंके लिए ट्रान्सवालकी भारतीय समस्याका समझना आसान होगा, और भारतीय समाजके लिए वह बहुत ही लाभदायक है।

इस प्रकार जबरदस्त टक्कर ली जा रही है और जान पड़ता है कि समझौतेकी चर्चा भी शुरू हुई है। इसलिए यह कहनेकी अब शायद ही आवश्यकता है कि सभी भारतीय दृढ़ रहेंगे और सरकार द्वारा जो भी जाल बिछाया जाये उससे सतर्क रहकर बेधड़क जेल जानेके लिए तैयार रहेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–१२–१९०७

३१४. कानून स्वीकार करनेवालोंका क्या होगा ?

इस प्रश्नका उत्तर हम तो अनेक बार दे चुके हैं। किन्तु अब श्री हिलने दिया है। श्री हिल एशियाई विरोधी मण्डलके एक नेता हैं। उनके लिखे हुए पत्रका सारांश[1] हमने दिया है। वह सबके पढ़ने योग्य है। श्री हिल कहते हैं कि नया कानून तो एशियाइयोंको निकाल बाहर करनेका आरम्भ-मात्र है। कानून तो और भी बनाने ही हैं। इसलिए नये कानूनके विरुद्ध भारतीयोंने जो लड़ाई शुरू की है उसका सरकारको सीधा उत्तर देना है। अर्थात् इस कानूनको पूरी तरहसे अमलमें लाकर एशियाइयोंको पछाड़ा जाये। उन्हें पछाड़नेके बाद गोरे जो भी करना चाहेंगे कर सकेंगे। ऐसे पत्रके बाद भी क्या कोई मान सकता है कि नये कानूनके सामने झुकनेवाला ट्रान्सवालमें सुखसे रह सकेगा ?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–१२–१९०७

१. यहाँ प्रकाशित नहीं किया गया है।

३१५. रामसुन्दर पण्डित

हमारे पास ऐसे पत्र आये हैं जिनमें पण्डितजीके सम्बन्धमें कुछ प्रश्न पूछे गये हैं। उन पत्रोंको हम प्रकाशित करना नहीं चाहते। क्योंकि उनमें लेखकोंने बड़ी गलतफहमीसे काम लिया है। पत्रोंमें एक प्रश्न ऐसा उठा है, जिसका हम यहाँ खुलासा करेंगे। किसीने पूछा है कि पण्डितजी मीयादी अनुमतिपत्रकी मीयाद पूरी हो जानेपर भी यहीं रहे और जेल गये, इससे समाजका क्या फायदा? इस प्रश्नके पूछे जानेमें बड़ी भूल हुई है। सभी मीयादी अनुमति-पत्रवाले पण्डितजीके समान लड़ नहीं सकते थे। मीयाद बीत जानेपर वे ट्रान्सवाल छोड़नेके लिए बंधे हुए थे। किन्तु धर्मगुरुका काम करनेवाले मोहलत न मिलनेपर भी रह सकते थे। इसलिए, और समाजकी माँग थी इसलिए, वे यहाँ रहे। उनके लिए जर्मिस्टनकी जमातने पत्र भी लिखा था। और उनपर जो मुकदमा चलाया गया वह नये कानूनकी १७ वीं धाराके आधारपर। हमारा खास मत है कि उनके मुकदमेसे कौमको बहुत ही लाभ पहुँचा है। उनके जेल जानेसे सबको जोश आ गया है। यह समय ऐसा है कि कानूनकी लड़ाईमें जो भी भारतीय जेल जायेगा उससे फायदा ही होगा। क्योंकि यह पहला अनुभव है। किन्तु पण्डितजी जैसे व्यक्ति जेल जायें, उसका असर और ही होगा, और हुआ है। इस असरके कारण ही शाहजी साहब आदि उनके पीछे जेल जानेको छटपटा रहे हैं; इसीलिए जर्मिस्टनमें सैकड़ों भारतीयोंकी सभा भी हुई जिसमें पण्डितजीकी बहादुरीकी तारीफ की गई। कहना सबको आता है किन्तु करना तो अबतक पण्डितजीको ही आया है। इतना काफी है कि उन्होंने कौमके हितमें अपना स्वार्थ त्याग किया और बाहर निकलनेके बाद और भी ज्यादा करनेको तैयार हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-१२-१९०७

३१६. नेटालमें युद्ध-स्वयंसेवक

जूलूलैंडमें फिर काफिरोंकी बगावत शुरू हो गई है। इसलिए गोरी सेनाके हजारों आदमियोंको भेजा गया है। ऐसे समयमें भारतीय समाजको आगे आना चाहिए। आगे बढ़नेमें अधिकार प्राप्त करनेपर नजर नहीं रखनी चाहिए। उसमें हमें केवल इस बातका विचार रखना चाहिए कि समाजका कर्तव्य क्या है। हक तो बादमें अपने-आप आते हैं। यह सामान्य नियम जान पड़ता है। भारतीय समाज इस बार फिर पिछले वर्षके समान प्रस्ताव[1] करेगा तो ठीक ही होगा। इस समय जो लोग युद्ध-स्वयंसेवक नहीं बने हैं उनसे अमुक कर लेनेकी प्रवृत्ति चल रही है। इस करका बोझ केवल भारतीयोंपर ही पड़ेगा। और उतना कर देनेके बाद भी भारतीय समाजकी भलमनसाहत नहीं मानी जायेगी। इससे हमें निश्चय ही

१. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ३०२ और ३०३।

गया है कि भारतीय समाजको फिरसे सहायताका प्रस्ताव करना चाहिए। हम मान लेते हैं कि इस समय वैसा करनेके लिए बहुत-से भारतीयोंमें उत्साह होगा। जो लोग पिछले वर्ष लड़ाईमें गये थे वे फिरसे जा सकते हैं। वे बहुत कुछ प्रशिक्षित हो चुके हैं और उन्हें कामकी जानकारी है। हमें आशा है कि यह काम तुरन्त ही हाथमें ले लिया जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–१२–१९०७

३१७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

विराट सार्वजनिक सभा

भारतीयोंकी आम सभाओंका पार नहीं है। और वे सभाएँ एकके बाद एक ज्यादा बड़ी होती जा रही हैं। प्रिटोरियामें जो पिछली सभा हुई थी वह उसके पहलेकी सभासे ज्यादा बड़ी थी। रविवारको जो सभा[1] जोहानिसबर्गमें हुई उसने प्रिटोरियाकी सभाको भी मात कर दिया — लोगोंमें इतना जोश था, भीड़ इतनी अधिक थी। अब सभाएँ अपने-आप होती हैं और सभीको उनकी हौंस रहती है। किसी भी तरह देशकी सेवाकी जाये, यह उत्साह लोगोंमें दिखाई दे रहा है।

दो हजारसे ज्यादा

इस सभामें २,००० से ज्यादा लोग उपस्थित थे। बहुत-से गाँवोंसे प्रतिनिधि आये थे। प्रिटोरियासे करीब चालीस थे। पॉचेफस्ट्रूमसे लगभग सोलह थे। इसी तरह सब जगहोंसे प्रतिनिधि आये थे।

सूरती मसजिदके प्रांगणमें

सभा सूरती मसजिदके प्रांगणमें हुई थी। मसजिदके चबूतरेपर, चाँदनीपर, छप्परपर लोग बैठे हुए थे। पहला विचार श्री ईसप मियाँके नये मकानमें सभा करनेका था। किन्तु सभाके समयसे पहले ही इतने ज्यादा लोग आ गये कि उस घरमें समा नहीं सके। इसलिए तुरन्त खुलेमें सभा करनेका विचार किया गया।

ईसप मियाँ

अध्यक्षका आसन श्री ईसप मियाँने ग्रहण किया था, यद्यपि उस समयकी परिस्थितिमें वे और जोहानिसबर्गके बहुत-से लोग पूरे समय खड़े ही रहे थे। आये हुए प्रतिनिधियोंका श्री ईसप मियाँने स्वागत किया और धरनेदारोंका उनके कामके लिए आभार माना।

अन्य भाषणोंका सारांश

दिसम्बर महीनेमें क्या हो सकता है, इसका श्री गांधीने खुलासा किया और गोरोंकी बढ़ती हुई सहानुभूतिके सम्बन्धमें वस्तुस्थितिका वर्णन किया। भारतीयोंके लिए यह समय स्वतन्त्र होनेका है; इसलिए कोई भी व्यक्ति नेताकी ओर न देखे, बल्कि सभी अपने-आपको नेता समझें और जेल वगैरहका जो भी कष्ट आये उसे निर्भयतापूर्वक सहन करें।

१. सभा जोहानिसबर्गके समीप फोर्ड्सबर्गमें हुई थी।

इमाम कादिरने बताया कि ईमानदारोंके लिए डरनेका कोई कारण नहीं है। वे स्वयं धरना देनेवाले हैं और यदि सरकारने सबसे पहले उन्हें पकड़ा तो वे खुश होंगे।

श्री मणिभाई देसाई (प्रिटोरिया) बोले कि धरना देनेवालोंको यदि पहले गिरफ्तार किया गया तो वे उस बोझको बहुत खुशीसे झेल लेंगे।

एक धरनेदार कानमियाँने, जिनका नाम मुझे मालूम नहीं है, कहा कि वे स्वयं बिलकुल नहीं डरेंगे।

श्री अब्दुल गनीने कहा कि इस लड़ाईमें खुदाकी मदद है, क्योंकि लड़ाई सच्ची है। हमें जेल जानेसे जरा भी नहीं डरना चाहिए।

श्री नायडूने तामिल भाषामें समझाया।

हजरत इमाम हुसैनको जो कुछ सहना पड़ा था उसका जिक्र करते हुए श्री शाहजी साहबने कहा कि रामसुन्दर पण्डितपर जो बीता है वह मुल्ला मौलवियोंके साथ भी हो सकता है। ऐसा सोचकर उनसे रहा नहीं गया, और वे पण्डितजीके पीछे जेल जानेको तैयार हो गये।

श्री उमरजी सालेने कहा कि वे स्वयं जेलसे डरनेवाले नहीं हैं।

श्री कुवाड़ियाने कहा कि सरकार दूकानदारोंपर हाथ डाले और उन्हें दूकानें बन्द करनी पड़ें तो हर्ज नहीं। इससे और भी जल्दी छुटकारा मिलेगा।

श्री खुरशेदजी देसाई (क्रूगर्सडॉर्प) ने बताया कि काफिरोंको पास प्राप्त करनेमें कितनी कठिनाई होती है।

श्री अब्दुल रहमान (पॉचेफ्स्ट्रूम) ने कहा कि पॉचेफ्स्ट्रूम एकदम जोरमें है और सब लोग जेलमें जानेको तैयार हैं।

श्री उस्मान लतीफ (पॉचेफ्स्ट्रूम) बोले कि वे भी अपने स्त्री-बच्चोंको छोड़कर जेल जानेको तैयार हैं।

श्री क्विन (चीनी संघके अध्यक्ष) ने अंग्रेजीमें कहा कि यह लड़ाई एशियाइयोंको मुक्ति दिलानेवाली है। सारे चीनी मृत्युपर्यन्त लड़नेको तैयार हैं।

श्री इब्राहीम अस्वातने कहा कि यदि भारतीय समाज इस समय धीरज छोड़ दे और डरके मारे पंजीयन करवा ले तो उसे खुदाके दरबारमें आत्महत्या करनेवाले चीनीको जवाब देना होगा। क्योंकि उक्त चीनीने भारतीयोंसे पाये हुए उत्साहके कारण ही अपनी जान लड़ाई थी।

श्री नवाबखाँने कहा कि समाजके कल्याणके लिए और धर्मके लिए हर भारतीयका अन्ततक लड़ना कर्तव्य है।

श्री हाजी हबीबने अपने भाषणमें मेमन लोगोंने जो पंजीयन करवाया है उसके लिए खेद व्यक्त किया और सलाह दी कि जोश कायम रखा जाये।

श्री पोलकने कहा कि खरा समय अब आनेवाला है। श्री गांधीके जेल चले जानेके बाद उन्हें जितना भी करना चाहिए उसमें वे नहीं चूकेंगे।

कुछ प्रश्नोंके उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि यदि किसीको गिरफ्तार किया जाये और जेलमें दस अँगुलियोंकी निशानी माँगी जाये तो वह दे दी जाये। यह लड़ाई दस अँगुलियोंकी निशानीकी नहीं, गुलामीसे छूटनेकी है। दस अँगुलियोंकी छाप देनेका कानून जेलमें सबपर लागू होता है। हमें उसका विरोध नहीं करना है। किन्तु जेलमें यदि कोई पंजीयन करानेको कहे तो वह नहीं कराना चाहिए। यदि स्वयं मुझे गिरफ्तार किया गया तो श्री पोलक तार

वगैरह भेजनेका सब काम कर सकेंगे। किसी भी व्यक्तिको नया पंजीयनपत्र न लेनेके कारण गिरफ्तार किया जाये तो उसे वकील नहीं करना चाहिए।

श्री मनजी लाखानी (प्रिटोरिया) ने कहा कि कुछ लोगोंने तो "कोड़ी" [कौड़ी] खेली, कुछ लोगोंने "चैमने" [चिमनी] का धुआँ लिया; किन्तु वे स्वयं भिखारी भले बन जायें, पंजीयनपत्र नहीं लेंगे।

श्री काछलियाने कहा कि नेता लोग तत्पर रहें या न रहें किन्तु जो लोग गुलामी नहीं चाहते वे तो जूझते ही रहेंगे।

'ट्रान्सवाल लीडर' के सम्पादक श्री कार्टराइट सभाका पता चल जानेसे खास तौरसे देखनेके लिए आ गए थे। उन्हें भारतीयोंसे बहुत ही सहानुभूति है। वे बहुत प्रसिद्ध व्यक्ति हैं और खुद भी सख्त लेख लिखनेके कारण जेल भोग चुके हैं। वे खुद बहुत जागरूक व्यक्ति हैं, और सच्चेका बचाव करनेमें डरनेवाले नहीं हैं।

रामसुन्दर पण्डितका सन्देश

सोमवारको विशेष अनुमति लेकर श्री गांधी श्री रामसुन्दर पण्डितसे मिले। गवर्नरका हुक्म था कि बातचीत अंग्रेजीमें की जाये, इसलिए सारी बातचीत मुख्य सन्तरीके सामने अंग्रेजीमें हुई। पण्डितजीने बहुत-सी बातें कीं। उनमें से केवल आवश्यक बातें यहाँ देता हूँ:

> सबको खबर दीजिए कि मैं यहाँ सुखी हूँ। यदि सरकार कड़ी सजा देती तो अधिक अच्छा होता। छूटनेके बाद मैं समाजके लिए फिरसे जेलमें जानेको तैयार हूँ। जेलमें मैंने जेल-सम्बन्धी सभी कविताएँ पढ़ी हैं। उन काव्योंसे मुझे बहुत उत्साह मिला है। श्री मेहताबकी कविताओंका असर मेरे मनपर अधिक पड़ा है। मुझे आशा है, जेलसे छूटनेपर इन कविताओंकी पुस्तकें प्रत्येक हाथमें देखूँगा। दिसम्बर लग गया है फिर भी अभीतक दूसरे भारतीय क्यों नहीं पकड़े गये? पकड़े जायेंगे तभी हमें मुक्ति मिलेगी। सबसे कहिए कि जेलमें कुछ भी कष्ट नहीं है। मैं तो जेलमें स्त्रियोंको भी देखता हूँ। मेरी कोई चिन्ता न करें। मैं अपने-आपको महलमें बैठा हुआ मानता हूँ। चाहता इतना ही हूँ कि कोई भारतीय कानूनको स्वीकार न करे। गवर्नर और मुख्य सन्तरी मेरी बड़ी फिक्र रखते हैं।

इसमें जेल-सम्बन्धी कविताओंके बारेमें पण्डितजीका कथन देते समय मुझे संकोच हुआ है। किन्तु उन्होंने इस बातपर बहुत जोर डाला इसलिए फर्ज समझकर मैंने यह सन्देश दिया है। किन्तु इसका कोई यह अर्थ न निकाले कि उसमें 'इंडियन ओपिनियन' में काम करनेवाले लोगोंका पैसेका स्वार्थ है। वह अखबार बड़ी मुसीबतसे प्रकाशित होता है और उसमें काम करनेवाले लोग आज भी इतना लाभ नहीं कमा रहे हैं जो वह कुछ गिनतीमें आ सके।

पंजाबियोंका प्रार्थनापत्र

पिछले सप्ताह मैंने पंजाबियोंके प्रार्थनापत्रका अनुवाद दिया था। उसके साथ श्री गांधीने निम्नलिखित पत्र[1] लॉर्ड सेल्बोर्नके नाम लिखा है।

१. पत्रके पाठके लिए देखिए "पत्र: उपनिवेश-सचिवको", पृष्ठ, ४०९। गुजराती अनुवादमें पत्रका पहला अनुच्छेद छोड़ दिया गया था।

नवम्बर महीनेके गद्दार

नवम्बर महीनेमें धरना देनेवालोंने प्रिटोरियामें जोहानिसबर्गके समान ही काम किया। उनकी सावधानीसे बहुत ही कम भारतीय पंजीकृत हुए थे। और प्रिटोरियासे तो एक भी नहीं हुआ, ऐसा माना जा सकता है। किन्तु उपनिवेशसे कुछ-कुछ लोग आ गये। इसमें हाइडेलबर्गने पहल की है। यह काम श्री रतिलालने किया जो पढ़े-लिखोंकी गिनतीमें आते हैं। उनके बाद श्री अबू मियाँ कमरुद्दीनके कुछ लोग गये और आखिरमें श्री खोटाके लोग। श्री खोटाके लोगोंके जानेसे सबको अफसोस हुआ। और उनका जाना सूरती समाजने कलंक माना है। श्री रतिलालके जानेसे गुजराती हिन्दुओंमें खलबली मची है। गुजराती हिन्दू बिलकुल साफ बचे मालूम होते थे। लोग मानते थे कि श्री लक्ष्मीचन्दके सिवा कोई नहीं जायेगा। किन्तु रतिलालने उनके इस विश्वासको भंग कर दिया है। अपने नौकरोंके सम्बन्धमें श्री खोटाने लिखा है कि नौकरोंका दोष नहीं है। उन्होंने स्वयं दबाव डाला था इसलिए नौकरोंको जाना पड़ा। नौकरोंने साफ इनकार किया था किन्तु श्री खोटाके आग्रहसे वे गये। अब श्री खोटाको अफसोस है और वे लज्जित हैं। इसके अलावा, उन्होंने लिखा है कि उनकी चार दूकानें हैं इसलिए उनके मनमें बहुत भय पैदा हो गया था। किन्तु अब वे नहीं जायेंगे। इतना ही नहीं, जेल जाने तक लड़ते भी रहेंगे। श्री खोटाने अपने आचरणके बचावमें कुछ नहीं कहा इसलिए अब टीका करने जैसी स्थिति नहीं रहती। किन्तु उनके भयके लिए सबको खेद अवश्य होगा। उन्होंने पूरी हिम्मत रखी होती तो बहुत ही शोभनीय होता। मुझे आशा है कि श्री खोटाके उदाहरणका कोई अनुकरण नहीं करेगा।

अन्य गद्दारोंमें गरीब मद्रासी और कलकतिया लोगोंका समावेश हो जाता है। उनका कोई प्रभाव नहीं है। क्योंकि वे एकदम अजनबी हैं और गुलामों-जैसी स्थितिमें रह रहे हैं। इसलिए नवम्बर महीनेमें पंजीयन जारी रखनेके लिए कुछ नेताओंकी माँगकी जो बात निकली थी, वह भी गलत साबित हुई है।

'संडे टाइम्स'

'संडे टाइम्स'में यह टीका है कि यदि पहलेके अनुमतिपत्र अधिकारी रिश्वतखोर नहीं होते तो सरकारको नया कानून बनाना नहीं पड़ता। अर्थात्, इससे यह सिद्ध होता है कि सरकार अपने अधिकारियोंके अपराधके लिए भारतीय समाजको सजा दे रही है।

दूसरे अखबार

दूसरे अखबारोंमें जो लेख आते हैं उनसे हँसी आती है। सभी अखबार साफ लिख रहे हैं कि यह नहीं दिखाई देता कि सरकार किसीको जेलमें बन्द करेगी। 'स्टार' तो साफ कहता है कि जेलमें बन्द करनेकी जरूरत नहीं है। सिर्फ परवाने रोककर लोगोंको तंग करके धीरे-धीरे पंजीयनपत्र लेनेपर मजबूर कर देंगे। 'स्टार' साफ कहता है कि मजिस्ट्रेटके सामने किसी भारतीयको खड़ा किया जायेगा तो वहाँ भी जेलकी सजा देनेके बजाय मजिस्ट्रेट उसे पंजीयन करानेके लिए समय देगा। 'स्टार' का लेख सरकार-प्रेरित जान पड़ता है इसलिए सभी भारतीय ठीक तरह सावधान रहें।

सावधान रहो

मजिस्ट्रेटके सामने खड़े होनेवाले भारतीय यदि डर जायेंगे तो ठीक नहीं होगा। वैसे भारतीयको देश-निकालेका नोटिस देनेकी अपेक्षा मजिस्ट्रेट पंजीयनकी अर्जी देनेके लिए

सिफारिश करेगा। यदि सरकार इस प्रकार जालमें फंसाना चाहती हो तो भारतीयोंको सावधान रहना चाहिए। एक 'नहीं' छत्तीस रोगोंको दूर करता है। वैसा 'नहीं' ही मुँहसे निकलना चाहिए। अब सरकारकी निर्बलताकी सीमा नहीं रही। सरकारको उसका जालिमपना ही डरा रहा है। कहाँ गई जनरल स्मट्सकी धमकी? कहाँ गया उनका देश-निकाला? सरकार इतनी कमजोरी दिखाती है, फिर भी कुछ भारतीय तो डरते ही रहते हैं।

दूसरी चेतावनी

किसी भी भारतीयके पास बिना पोशाकके जासूस आकर नया अनुमतिपत्र माँगे या दूकान बन्द करनेको कहे तो भारतीयको उसकी बात नहीं माननी चाहिए। जासूस होनेके बहाने कोई दूसरा ही आदमी आ सकता है।

समझौतेके लिए हलचल

बहुत-से प्रसिद्ध गोरे समझौतेके लिए हलचल कर रहे हैं। सर पर्सी फिट्ज़पैट्रिक तथा दूसरे लोगोंकी मुलाकात होती रहती है। अभी तो लक्षण ऐसे दिखाई दे रहे हैं कि सरकार किसीको नहीं पकड़ेगी, और ऐसे ही समझौता हो जायेगा। यदि ऐसा हो तो उसका यश रामसुन्दर पण्डितको और आत्मघात करनेवाले चीनीको मिलेगा। उस घटनासे सबका भय छूट गया है और एशियाइयोंको जोश चढ़ा है। जो-जो बातें हो रही हैं उनकी हकीकत देनेका अभी समय नहीं आया है; इसलिए लाचार होकर यहीं बन्द करता हूँ। सभी अखबार अब लिखने लगे हैं कि सरकार इस कानूनको अमलमें नहीं लायेगी। जनवरीमें कुछ-न-कुछ करेगी। इस प्रकार वह सीढ़ी-दर-सीढ़ी उतरती जा रही है। अब काले हों या गोरे, ऐसी बात तो कोई नहीं करते कि सरकार सभी लोगोंको जेलमें बन्द कर सकती है।

ठीक हुआ!

कुछ कलकतिया तथा मद्रासी फोक्सरस्टकी ओरसे दबाव आनेके कारण अथवा नौकरी चली जायेगी इस भयसे पंजीकृत हुए, किन्तु अब वे नौकरी खो बैठे हैं। उनकी नौकरी छूटनेका कारण मालूम नहीं पड़ा। किन्तु लोग प्लेगकी छूतका विरोध करनेपर भी नहीं बच सके, यह जानने लायक बात है। वे अब बहुत पछताते हैं। नौकरी भी गई और लाज भी गँवाई। एक उदाहरण और भी मुझे मिला है। एक-दो भारतीय इसलिए पंजीकृत हुए कि उन्हें माल वगैरह मिल जायेगा। उन्होंने अब अपने बहीखाते (माल देनेवाले) व्यापारीको सौंप दिये हैं। खुदाकी कुदरत कोई जान नहीं सकता।

एक कोंकणी अनाक्रामक प्रतिरोधी

श्री मुहम्मद इशाक नामक कोंकणीके पास पुराने पंजीयनपत्र तथा अनुमतिपत्र हैं। फिर भी उसे नये कानूनके अन्तर्गत नेटालसे फोक्सरस्ट आते हुए पकड़ा गया है और उसने जमानतपर छूटनेसे इनकार किया है। श्री गांधीने सरकारी वकीलको तार भेजा है कि उस आदमीको पकड़ा नहीं जा सकता। किन्तु यदि बिना मुकदमा चलाये नहीं छूटेगा, तो वे स्वयं उसका बचाव करेंगे। इस आदमीपर मुकदमा नहीं चल सकता, क्योंकि वह अभी हालमें ही ट्रान्सवालसे नेटालमें दाखिल हुआ है। उसे आठ दिन तक गिरफ्तार करनेका अधिकार सरकारको नहीं

है। इस मुकदमेमें ऐसा ही बचाव किया जाना चाहिए। क्योंकि बाहरसे आनेवाले आदमीको इस प्रकार आठ दिन खुले रहनेका मौका मिलना चाहिए। इस स्थितिमें मुकदमा जोहानिसवर्गमें ही चल सकता है और इससे अनाक्रामक प्रतिरोधको वल मिलेगा। यह अनाक्रामक प्रतिरोधी कोंकणी है, इसलिए मैं सब कोंकणियोंको बधाई देता हूँ। मुकदमा जुम्मेके दिन चलेगा। मजिस्ट्रेटने १० पौंडकी जमानत तय की है। किन्तु किसीने जमानत नहीं दी। फोक्सरस्टसे तार आया है। उसमें कहा गया है कि श्री मुहम्मद इशाक वहुत ही हिम्मतवाला और वहादुर है।

समझौतेके बारेमें

समझौतेकी बातचीत चलती रहती है। लोगोंमें जोश इतना ज्यादा है कि वे अव स्वेच्छया पंजीयनसे भी मुक्त होना चाहते हैं और कह रहे हैं कि सरकारसे अव विलकुल कोई समझौता न करके लड़ाई ही लड़ ली जाये और जो कागज मिले हैं उन्हें जमा कर बैठे रहें। यह जोश वहुत ही प्रशंसनीय है। समाजके लिए अव वहुत समझदारीसे चलनेका समय आया है। समझौतेके लिए जो वातें आज बारह महीनेसे कही जा रही हैं उन्हें वापस नहीं लिया जा सकता। बुधवारको हमीदिया सभाभवनमें सभा हुई थी। किन्तु उस सभामें वहुतोंका उत्साहपूर्ण आग्रह यही रहा कि पुराने पंजीयनपर दृढ़ रहें और स्वेच्छया पंजीयन न करवायें। मुझे आशा है कि जव लोगोंका यह जोश उतर जायेगा तव ठंडे होनेपर वे फिर विवेकपूर्ण माँग करेंगे। कानूनके टूटनेको मैं महान विजय मानता हूँ। और यदि लोग एकमत रहेंगे तो कानून टूटेगा ही। किन्तु इसीके साथ हमें यह भी वताना होगा कि हम ठीक रास्तेपर चलनेवाले और वचनको निवाहनेवाले हैं। जैसे हम ली हुई शपथको तोड़ना अपराध मानते हैं, वैसे ही स्वेच्छया पंजीयनका वचन देकर उससे मुकरनेमें भी शर्म है।

रविवारकी सभा

फिरसे विचार करनेके लिए रविवारको सभा होनेवाली है। अन्तमें समाज समझदारीसे काम लेगा तो यह जोश, जो दीख रहा है, शुभ लक्षण माना जायेगा।

पण्डितजी

श्री रामसुन्दर पण्डित तारीख १३ को सवेरे ९ वजे जोहानिसवर्ग जेलसे छूटनेवाले हैं। आशा है उस समय जोहानिसवर्गके वहुत-से भारतीय उनका स्वागत करनेके लिए उपस्थित होंगे। उनका स्वागत करनेके वाद सभा करनेका विचार है।[1] दूसरे शहरके लोगोंके लिए उचित होगा कि वे वधाईके तथा ऐसे तार भेजें जिनमें कहा गया हो कि आवश्यकता पड़नेपर वे फिर जेल जानेकी वहादुरी दिखायेंगे।

पंजावी

एक गोरेने लॉर्ड सेल्वोर्नको लिखा है कि वे पंजावी आदि लोगोंको जूलू-लड़ाईमें नौकरी दें। लॉर्ड सेल्वोर्नने पंजावियोंके प्रार्थनापत्रका यह जवाव दिया है कि वह प्रार्थनापत्र स्थानीय सरकारको भेज दिया गया है।

१. देखिए "रामसुन्दर पण्डित", पृष्ठ ४३९।

भूल सुधार

मैंने पिछले सप्ताह जब पत्र लिखा तब कांग्रेसके प्रतिनिधियोंके लिए केवल २५ पौंड भेजनेकी बात थी। किन्तु बादमें ३५ पौंड भेजनेका फैसला हुआ था; इसलिए ३५ पौंडकी हुंडी श्री अमीरुद्दीनको भेज दी गई है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-१२-१९०७

३१८. भारतीयोंका मुकदमा[1]

[फोक्सरस्ट]
दिसम्बर ९, १९०७

जिरहमें गवाहने स्वीकार किया कि एशियाइयों द्वारा पेश किये गये अनुमतिपत्र अबतक के निर्देशके अनुसार उन्हें प्रवेश और पुनःप्रवेशका अधिकार देनेके लिए पर्याप्त माने गये हैं। उसे नहीं मालूम था कि पुनःप्रवेश अनुमतिपत्रके अनुसार था या शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अनुसार। उसने एशियाइयोंको पुनःप्रवेश करने दिया। क्योंकि उसे ऐसा ही निर्देश मिला था।

[गांधीजी:] आपको अब क्या निर्देश दिये गये हैं?

[गवाह :] मुझे ये निर्देश दिये गये हैं कि १६ वर्षसे अधिक आयुके सब एशियाई पुरुषोंको, जो एशियाई अधिनियमके अन्तर्गत पंजीयन प्रमाणपत्र या ऐसे अस्थायी अधिकारपत्र पेश न कर सकें जिनसे उनको पुनःप्रवेशकी अनुमति प्राप्त होती हो, रोक लिया जाये और गिरफ्तार कर लिया जाये।

क्या ये निर्देश ऐसे एशियाइयोंपर भी लागू होते हैं जिनके बारेमें आप जानते हों कि वे पुराने अधिवासी हैं, जिन्होंने अनुमतिपत्र दिखाये होंगे और हाल ही में उपनिवेश छोड़ा होगा?

हाँ, क्योंकि इन निर्देशोंके अनुसार मेरा कर्तव्य यही है। यदि एशियाई नये अधिनियमके अन्तर्गत अधिकारपत्र प्रस्तुत नहीं कर सकते तो मुझे उन सबको किसी भेदभावके बिना गिरफ्तार करना है।

१. फोक्सरस्टमें आनेपर ६ दिसम्बरको २० भारतीय और उससे अगले दो दिनोंमें अन्य १७ भारतीय गिरफ्तार किये गये थे। उनपर सहायक आवासी न्यायाधीश श्री डी' विलियर्सके न्यायालयमें मुकदमा चलाया गया। पहले २० भारतीयोंका मुकदमा लिया गया। सरकारी वकील श्री मेंजकी जिरहमें सार्जेंट मैन्सफील्डने बताया कि सब अभियुक्तोंके पास अनुमतिपत्र और शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत पंजीयन-प्रमाणपत्र थे, उनके अँगूठेके निशान विधिवत् हैं और उनको अनुमतिपत्रोंके अनुसार उपनिवेशमें प्रवेशका अधिकार है; किन्तु पुनः प्रवेशका अधिकार नहीं है। अभियुक्तोंने उसे कहा था कि वे एशियाई अधिनियमको मानना नहीं चाहते। गांधीजीने उससे जिरह की।

आगे प्रश्न करनेपर सार्जेन्ट मैन्सफील्डने अनुमतिपत्र और पंजीयन-प्रमाणपत्र प्रस्तुत किये और कहा कि ये १८८५ के कानून ३ के अन्तर्गत लिये गये हैं। इसके साथ सरकारी पक्षकी कार्रवाई समाप्त हो गई।

श्री गांधीने जोर देकर कहा कि सरकारी गवाहने उनके मुवक्किलोंका पक्ष सिद्ध कर दिया है। न्यायाधीशके सम्मुख जो प्रश्न है वह विशुद्ध रूपसे यह है कि उनके मुवक्किलोंके पास शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत जारी किये गये अनुमतिपत्र हैं या नहीं। ये अनुमतिपत्र सार्जेन्ट मैन्सफील्डने प्रस्तुत किये और यह स्वीकार किया कि वे विधिवत् हैं।

श्री डी' विलियर्स: तब आपका तर्क यह है कि प्रश्न विशुद्ध कानूनी बहसका है?

[श्री गांधी]: हाँ श्रीमान्, बिलकुल यही।

तब श्री मेंजने बहस की कि इन लोगोंके पास जो अनुमतिपत्र हैं उनमें केवल उपनिवेशमें आने और रहनेका अधिकार दिया गया है, किन्तु उपनिवेशसे जाने और फिर वापस आनेका नहीं। उन्होंने यह तर्क दिया कि जब एक बार ये लोग उपनिवेशसे चले गये तब उनके अनुमतिपत्र रद हो गये हैं।

श्री गांधीने उत्तरमें कहा कि प्रश्न फिर वापस आनेका भी नहीं है। न्यायाधीशको आरोपपत्रकी मर्यादाके भीतर रहना है। इसमें उनके मुवक्किलोंपर शान्ति-रक्षा अध्यादेशके खण्ड ५ के अन्तर्गत बिना अनुमतिपत्रके प्रवेश करनेका आरोप लगाया गया है। न्यायाधीशके सम्मुख जो साक्षी है उससे निर्विवाद रूपसे सिद्ध होता है कि प्रवेश करनेपर उनके पास वस्तुतः उनके अनुमतिपत्र थे। इसके अतिरिक्त वे सब १८८५ के कानून ३ के अन्तर्गत ३ पौंड दे चुके हैं। सरकारी वकीलका तर्क भी उचित नहीं माना जा सकता। सर्वोच्च न्यायालयने भाभा बनाम ताजके मुकदमेमें यह निर्णय दिया था कि उपनिवेशमें आनेके अनुमतिपत्रमें उससे जाने और वापस आनेकी अनुमति भी सम्मिलित होती है। उस मामलेमें न्यायमूर्ति ब्रिस्टोवने करीब-करीब इन्हीं शब्दोंका प्रयोग किया है। इसलिए चाहे जिस प्रकारसे इस मुकदमेपर विचार किया जाये, उनके मुवक्किल बरी होनेके अधिकारी हैं। न्यायाधीशको विधि-विभागके निर्देशोंसे या उसने शान्ति-रक्षा अध्यादेशके खण्ड ५ की जो व्याख्या की है उससे कोई सरोकार नहीं है। मेरी सम्मतिमें, निश्चय ही उचित मार्ग यह होता कि यदि उनके मुवक्किलोंने नये अधिनियमका उल्लंघन किया था तो एशियाई विभाग उनपर उसके अन्तर्गत मुकदमा चलाता।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–१२–१९०७

१. न्यायाधीशने गांधीजीके तर्कको मान लिया और अभियुक्तोंको बरी कर दिया। तब अन्य १७ व्यक्ति न्यायालयमें लाये गये; किन्तु उनपरसे आरोप उठा लिया गया।

३१९. पत्र : 'इंडियन ओपिनियन' को

जोहानिसबर्ग
दिसम्बर १२, १९०७

सेवामें
सम्पादक
'इंडियन ओपिनियन,'

महोदय,

शायद आप मुझे अपने पत्र द्वारा जनताका ध्यान भारतीयोंके उन ३८ मुकदमोंसे[1] मिलनेवाले पाठकी ओर आकर्षित करनेकी सुविधा देंगे जो देखनेमें शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत चलाये जानेपर भी वास्तवमें एशियाई पंजीयन अधिनियमके अनुसार चलाये गये हैं।

पाठ यह मिलता है कि एशियाई दफ्तरकी कार्यवाहियाँ एकदम गुप्त हुआ करती हैं। इस बातका पता पूनियाकी गिरफ्तारीसे चला कि भले ही भारतीय स्त्रियाँ अपने वैध रूपसे उपनिवेशमें प्रवेश करनेके हकदार पतियोंके साथ हों, स्वयं उन औरतोंके पास अनुमतिपत्र न होनेपर उनकी गिरफ्तारीकी गैरकानूनी आज्ञाएँ दी गई थीं।

एक बारह वर्षके लड़केकी गिरफ्तारीसे ही यह पता चला कि इस बातकी गुप्त तथा गैर-कानूनी हिदायतें जारी की गईं थीं कि अबोध बच्चोंके पास अलग अनुमतिपत्र होने चाहिए।

यह बात पण्डित रामसुन्दरके[2] जेल जानेसे मालूम हुई कि एशियाइयोंके खिलाफ तहकीकात करनेके लिए एशियाई दफ्तरपर साधारण तथा सर्वविदित नियम लागू नहीं होते।

अन्तमें यह रहस्योद्घाटन अड़तीस भारतीयोंकी गिरफ्तारी और उनकी दोसे चार दिन तक की हिरासतसे हुआ कि एशियाई दफ्तरको, पाँच सालसे चले आ रहे रिवाजके खिलाफ, अचानक यह पता लगा कि शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत जारी किये हुए अनुमतिपत्रोंकी सीमामें उपनिवेशसे अस्थायी रूपसे चला जाना तथा वहाँ लौट आना शामिल नहीं है। कानूनकी नई व्याख्याके बारेमें गुप्त रूपसे हिदायतें जारी की गई थीं और भारतीयोंको उनके बारेमें पहलेसे कोई खबर नहीं दी गई। लोग यह नहीं जानते कि डर्बनमें तैनात ट्रान्सवालके एशियाई अधिकारीने वास्तवमें उन्हीं आदमियोंकी जाँच की थी और उन्हें पास कर दिया था। इनमें से छत्तीस आदमी 'सुल्तान' जहाज द्वारा लौटे हुए यात्री थे। मुझे बतलाया गया है कि एशियाई कार्यालयने उन आदमियोंकी जाँच करनेमें तीन दिन लगाये थे।

और इतनेपर भी श्री लिड्से, जिन्हें वकील होनेके कारण अधिक जानकारी होनी चाहिए, कह सकता हूँ, इस बातको सोचनेका कष्ट किये बिना कि उस बातका कोई भारतीय पक्ष भी हो सकता है, बड़ी आसानीसे चोरी-छिपे घुस जानेकी बातें करते हैं।

अनाक्रामक प्रतिरोधी जनमतका निर्माण करनेपर निर्भर करते हैं, लेकिन अगर वे जनमतको अपने पक्षमें न कर सकें तो भी वे अपने शुद्ध संकल्पसे पीछे हटनेवाले नहीं हैं। इस

१. देखिए "मुहम्मद इशाकका मुकदमा", पृष्ठ ४०७-८ तथा पिछला शीर्षक।
२. देखिए "पत्र: 'इंडियन ओपिनियन' को", पृष्ठ ३५९-६०।

बातसे इनकार नहीं किया जा सकता कि उनके कष्टसहनसे उपनिवेशके कुछ नेताओंको अन्तमें सोचना पड़ा है। क्या मैं उनसे, और अभीतक भारतीय दृष्टिकोणकी उपेक्षा करनेवाले दूसरे लोगोंसे, पूछ सकता हूँ कि क्या भारतीयोंका यह पवित्र कर्तव्य नहीं है कि वे एक ऐसे अधिनियमके सामने सिर झुकानेसे इनकार कर दें जो एक अकेले आदमीके हाथमें ऐसे निरंकुश अधिकार देता है कि वह खुफिया तौरसे पूछताछ करता है, खुफिया तौरसे हिदायतें जारी करता है और लोगोंकी बातें सुने बिना ही उन्हें सजा दे देता है। यद्यपि कर्नल मैकेंजीको[1] जूलूलैंडमें जंगी कानूनकी घोषणाके अन्तर्गत निर्विवाद रूपसे पूरे अधिकार मिल गये हैं तथापि दीनूजूलूको[2] भी, जिसपर विद्रोही इरादोंका सन्देह है, केवल सन्देहपर, उसकी सुनवाई किये बिना, सजा नहीं दी गई। तब भारतीयोंसे यह आशा क्यों की जाये कि वे बिना शिकायत किये संगठित जाली प्रवेशके गलत इल्जामको सहते रहें और इस देशमें रहनेके अपने अधिकारके बारेमें एशियाई अधिनियमके अन्तर्गत गैर अदालती जांचको मान लें? अगर उनका इस आरोपका खण्डन करना खोखला होता तो क्या वे बार-बार सारे मामलेकी खुली अदालती जाँचकी माँग करनेके बजाय यह पसन्द न करते कि उसे दबा दिया जाये?

आपका, आदि,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–१२–१९०७

३२०. स्वर्गीय आराथून

पिछले हफ्तेकी डाकसे श्री आराथूनकी शोकजनक मृत्युका समाचार प्राप्त हुआ है। श्री आराथूनने पूर्व भारत संघके अवैतनिक मंत्रीके रूपमें उसकी कई वर्ष तक सचाईके साथ और भली भाँति सेवा की थी। 'एशियाटिक क्वार्टरली रिव्यू' के सम्पादकके रूपमें उनकी सेवाओंका उन सभीको पता है, जिनका भारतके साथ कुछ भी सम्बन्ध है। लेकिन दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके बीच उनका नाम सबसे अधिक इसलिए है कि उनके प्रति श्री आराथूनको बहुत ज्यादा हमदर्दी थी और साथ ही जिस संघसे उन्होंने अपनेको इतना एकरूप कर दिया था उसके कार्योंके सिलसिलेमें वे दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयोंके प्रश्नमें बराबर दिलचस्पी लेते थे। वे इस प्रश्नको संघके और संघके द्वारा अधिकारियोंके ध्यानमें लानेका मौका कभी नहीं चूकते थे। पिछले साल उन्होंने शिष्टमण्डलकी अपने हार्दिक सहयोग द्वारा बहुत मूल्यवान सहायता की थी। हम श्री आराथूनके परिवारके प्रति अपनी समवेदना प्रकट करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–१२–१९०७

१. एक धर्म प्रचारक (मिशनरी), जिसे १८८४ में बेचुआनालैंडका आयुक्त नियुक्त किया गया था।

२. जूलुओंका एक मुखिया, जिसपर व्यक्ति-कर सम्बन्धी विद्रोहमें शामिल होनेके आरोपपर मुकदमा चलाया गया था।

३२१. फोक्सरस्टके मुकदमे

फोक्सरस्टमें श्री मुहम्मद इशाक तथा दूसरे भारतीयोंके जो मुकदमे चले वे बहुत जानने योग्य हैं। उन मुकदमोंको सरकार पहले तो नये कानूनके अन्तर्गत चलाना चाहती थी, किन्तु आखिर वह डर गई और वे शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत चलाये गये। इसमें श्री मुहम्मद इशाक सबसे आगे रहे इसलिए दूसरे भारतीय भी अनुसरण कर सके। उन्होंने कोंकणियोंका नाम रख लिया है, और यदि कोंकणियोंपर कोई कलंक आता है तो वह अब टिक नहीं सकता। मजिस्ट्रेटने निर्णय दिया है कि श्री इशाकको उनके अनुमतिपत्रके आधारपर रहनेका हक है और इस तरह उन्हें निर्दोष मानकर छोड़ दिया है।

इन मुकदमोंसे लोगोंकी हिम्मत अधिक प्रकट हुई है। जमानतपर नहीं छूटे, यह ठीक हुआ। और गिरफ्तार किये जानेवालोंमें कई कौमोंके लोग हैं, यह भी ठीक हुआ।

यह मुकदमा सरकारकी बहुत बड़ी कमजोरी प्रकट करता है। सरकार हिम्मत हार गई है। क्या करना चाहिए, यह उसे नहीं सूझता। उसकी हालत क्रोधसे पागल व्यक्तिके समान है। यदि ऐसे मुकदमे और चलाये जायें तो हमारा फायदा ही है।

यदि सरकारमें सच्चा बल होता तो वह उन भारतीयोंको पकड़ती जो ट्रान्सवालमें बसे हुए हैं और विरोध कर रहे हैं। किन्तु सो तो सरकार कर नहीं सकती। इसलिए बाहरसे आनेवालोंको रोकनेका व्यर्थ प्रयास कर रही है। किन्तु उसमें सरकार बिना हारे नहीं रह सकती। क्योंकि नये कानूनमें जबरदस्त गुंजाइश रह गई है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–१२–१९०७

३२२. नेटाल परवाना अधिनियम

इस अधिनियमके अन्तर्गत सरकारने नये खण्ड बनाये हैं। उनमें तीन खण्ड जानने योग्य हैं। एक तो यह कि इसके बाद अब परवानेकी अर्जीकी विज्ञप्ति समाचारपत्रमें प्रकाशित करनी पड़ेगी। परवानेके कागजपर निशानी लेनेका अधिकारीको हक है। और अपीलके समय १२ पौंड १० शिलिंग पेशगी चाहिए। यह सब बुरा है। परन्तु अब देखना यह है कि इनमें किस बातमें बचा जा सकता है। ऐसा नहीं लगता कि समाचारपत्रमें विज्ञप्ति देनेकी बात रद हो जायेगी। इस प्रकारका कानून केपमें है। अँगूठा निशानी लेनेकी बात अधिकारीकी मर्जीपर है। इसलिए ऐसा अर्थ हो सकता है कि जिन्हें हस्ताक्षर करना आता हो उनसे अँगूठा निशानी न ली जाये। उपर्युक्त दोनों विषयोंके सम्बन्धमें सरकारको कुछ लिखा जाये, यह हम नहीं कह सकते। क्योंकि इसे हम व्यर्थ समझते हैं। १२ पौंड १० शिलिंग देनेकी बात नई नहीं है। इसका उपाय केवल यही है कि जब भी किसीके लिए अपील करनेका प्रसंग आये वह बिना रकम दिये अपील करे। हम मानते हैं कि यह शुल्क अवैध है, और सम्भव है कि

न्यायालय इसे अवैध करार देगा। सही मार्ग यह है कि इस कानूनकी परवाह न करके इसका विरोध किया जाये। जहाँ सामूहिक रूपसे परवाने न दिये जायें वहाँ मालके बिकनेकी परवाह न करके बिना परवानेके व्यापार किया जाये। ऐसे कष्टोंके लिए अनाक्रामक प्रतिरोध सर्वोत्तम उपाय है।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, १४–१२–१९०७

३२३. स्वर्गीय नवाब मोहसीन-उल-मुल्क

नवाब मोहसीन-उल-मुल्कके जन्नतनशीन होनेकी खबर हम पहले दे चुके हैं।[1] इस अंकमें उनका संक्षिप्त जीवन-वृत्तान्त दे रहे हैं।[1] उन्होंने शिक्षाके क्षेत्रमें जो सेवा की है वह प्रत्येक भारतीयके लिए, और विशेषतः प्रत्येक मुसलमानके लिए, अनुकरण करने योग्य है। उन्होंने शिक्षाको राजनीतिके मुकाबले पहला स्थान दिया। यह दृष्टिकोण बहुत हद तक, और विशेषकर उनके समयमें यथार्थ ही था। जहाँ शिक्षा सदाचरण तथा नैतिक जीवनकी सीखके साथ-साथ मिलती है वहाँका समाज बहुत लाभ उठा सकता है। लेकिन, उच्च आचरण तथा उच्च नैतिकताके अभावमें शिक्षा भयंकर है। वह वैसी ही है जैसी बिना बाड़की बेल — जो ऊपर नहीं चढ़ सकती। ऐसी नैतिकतापूर्ण शिक्षा लेना सभीका कर्तव्य है, और यह हम स्वर्गीय नवाबके जीवनसे सीख सकते हैं।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, १४–१२–१९०७

३२४. जर्मन पूर्व आफ्रिका लाइन

आजकल जब कि भारतीयोंमें मान-मर्यादाकी हवा बह रही है तब श्री पीरन मुहम्मदपर जो बात गुजरी है वह जानने जैसी है। उन्होंने उपर्युक्त कम्पनीके यूरोपकी ओर जानेवाले जहाजका पहले दर्जेका टिकट माँगा था, सो उन्हें नहीं मिला। इसे हम बहुत अपमानजनक मानते हैं। यह बात जर्मन कम्पनीको शोभा देनेवाली नहीं है। उसे भारतीय यात्रियोंसे बहुत बड़ी कमाई होती है। किन्तु इसका खयाल न करके, भारतीय यात्री पहले दर्जेका टिकट माँगते हैं तो उन्हें देनेसे इनकार किया जाता है। यह हमारे लिए लज्जाजनक है। वह कम्पनी हमारी जीवन-विधिसे परिचित है। हम ऐसे लोग नहीं जो कुछ कर सकें, इसलिए वह हमारा अपमान करती है। गोरे यात्रियोंके साथ ऐसा बरताव करनेकी उसकी हिम्मत नहीं होती। इसके तीन उपाय हैं। ये तीन उपाय एक साथ किये जाने चाहिए :

(१) कम्पनीको सख्त पत्र लिखा जाये।
(२) उसके एजेंट श्री उस्मान अहमद कम्पनीको सूचना दें कि ऐसा करनेसे कम्पनीको नुकसान पहुँचेगा।
(३) और यात्रियोंको उसमें यात्रा करनेसे रोका जाये।

१. यहाँ नहीं दिये गये हैं।

तीसरी बात सबसे उत्तम है और वह की जा सके तभी पहली दो बातें शोभा देंगी। हममें नई ताकत आई है। उसे हमें हर चीजमें आजमाना चाहिए। ट्रान्सवालके कानूनका विरोध कर लेना काफी नहीं है। उसे तो अपने कामका केवल प्रारम्भ समझना चाहिए।

जापानका उदाहरण लीजिए। स्वाभिमान आ जानेपर वह जाति अपनी शिक्षा, व्यापार, आबरू सबका खयाल रखने लगी है। हमारा भी चहुँमुखी विकास होना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–१२–१९०७

३२५. भारतीयोंपर हमला[1]

नये कानूनकी धूमधाम चल रही है। इसमें सन्देह नहीं कि लोग अब तो जेल जानेकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। पिछले शुक्रवारको सवेरे डर्बनसे नौ भारतीय आये। उसी दिन शामको ग्यारह और आये, और शनिवार तथा रविवारको सत्रह आये। इन सबके पास अपने-अपने अनुमतिपत्र और पंजीयनपत्र थे। इनमें से पैंतीस 'सुल्तान' जहाजसे उतरे। शेष दोमें से एक मद्रासी थे जो कार्यवश जोहानिसबर्ग जा रहे थे; और एक गुजराती थे जो अक्तूबरसे डर्बन गये हुए थे और अब लौटकर जोहानिसबर्ग जा रहे थे। पहली बात तो यह थी कि ये सब नये कानूनके अनुसार अनुपतिपत्र न होनेके कारण गिरफ्तार किये गये थे। शुक्रवारको श्री गांधी न्यायालयमें उपस्थित हुए थे, तब इन लोगोंको न्यायालयमें नहीं लाया गया था। परन्तु पुलिस प्रिटोरियासे आदेशकी प्रतीक्षा कर रही थी। इन्हें शनिवारको हाजिर किया गया था और सोमवार तक मुकदमा स्थगित रहा। सोमवारको श्री गांधी फिर जोहानिसबर्ग आये। पुलिस यह मुकदमा नये कानूनके अन्तर्गत चलाना चाहती थी। किन्तु प्रिटोरियासे यह आदेश आया कि अनुमतिपत्र अध्यादेशके अन्तर्गत मुकदमा चलाया जाये। इसलिए अनुमतिपत्र अध्यादेशकी पाँचवी धाराके अन्तर्गत यह कहकर मुकदमा दायर किया गया कि इन लोगोंके पास अनु-मतिपत्र नहीं हैं।

सार्जेंट मैन्सफील्डकी गवाही

मैंने इन भारतीयोंको गिरफ्तार किया। क्योंकि मुझे ऐसे भारतीयोंको गिरफ्तार करनेका प्रिटोरियासे आदेश है। इन लोगोंके पास अपना-अपना अनुमतिपत्र था, किन्तु इन्हें लौटकर आनेका हुक्म नहीं है। इनके पास नये कानूनके अनुसार अनुमतिपत्र नहीं हैं, इसलिए गिरफ्तार किया।

जिरह

प्र० — इन लोगोंके अनुमतिपत्रोंकी आपने जाँच की?

उ० — हाँ, जाँच करनेपर मुझे मालूम हुआ कि इनके अँगूठेकी निशानियाँ मिलती हैं।

[1] यह लेख इन उप-शीर्षकोंके साथ प्रकाशित हुआ था: "नेटालसे ट्रान्सवाल जाते हुए सैंतीस व्यक्ति गिरफ्तार — न्यायालय द्वारा रिहा"।

प्र० — इन लोगोंके पास १८८५ के कानूनके अनुसार लिये हुए पंजीयनपत्र भी हैं?

उ० — इन सबके पास वे पंजीयनपत्र हैं।

प्र० — प्रिटोरियासे आपको क्या आदेश है?

उ० — मुझे यह आदेश है कि बाहरसे आनेवाले प्रत्येक भारतीयको यदि उसके पास नये कानूनके अनुसार पंजीयनपत्र या दूसरा अधिकार न हो तो गिरफ्तार किया जाये।

प्र० — यह आदेश जिस भारतीयको आप पहचानते हैं उसे भी पकड़नेके लिए है?

उ० — हाँ, अपने कर्तव्यके अनुसार मुझे तो सभीको पकड़ना चाहिए।

प्र० — जिन अनुमतिपत्रोंको आपने इन मुवक्किलोंके पास देखा उस प्रकारके अनुमतिपत्रोंके आधारपर भारतीय अबतक बेरोक-टोक आ-जा सकते थे क्या?

उ० — हाँ, उस समय मुझे ऐसा आदेश था कि ये अनुमतिपत्र पर्याप्त हैं।

इसके पश्चात् सरकारी वकीलने मुकदमा रोक दिया। श्री गांधीने माँगकी कि सबूतके अभावमें इन लोगोंको छोड़ देना चाहिए।

सरकारी वकीलने स्वीकार किया कि उसका मुकदमा कमजोर है। परन्तु सरकारके आदेशसे उसने सम्मन्स बनाया है। जो अनुमतिपत्र प्रस्तुत किये गये हैं उनके आधारपर लोग प्रवेश करके रह सकते हैं, परन्तु जाकर लौट नहीं सकते।

श्री गांधीने कहा कि सरकारी गवाहने ही मेरे मुवक्किलोंके मुकदमोंको सिद्ध कर दिया है। उन्होंने जो अनुमतिपत्र प्रस्तुत किया है, वही मेरे मुवक्किलोंका प्रविष्ट होनेका अधिकार-पत्र है। सम्मन्समें उनके विरुद्ध अनुमतिपत्रके बिना प्रवेश करनेका आरोप है। वह साबित नहीं हुआ। भाभाके मुकदमेमें न्यायालयने फैसला दिया है कि जिसे दाखिल होनेका अधिकार है उसको बाहर जाकर वापस लौटनेका भी अधिकार है। इसलिए मुवक्किलोंको छोड़ देना चाहिए। इनमें से बहुत-से तो आज चार दिनसे कष्ट भोग रहे हैं।

न्यायाधीशने उपर्युक्त दलीलको स्वीकार करके सबको छोड़ दिया। जिनपर मुकदमा चलाया गया था उनके नाम निम्न प्रकार हैं:

उमर यूसुफ, नाथु गोविन्द, माधा गलाल, लाला माधव, गोविन्द दादी [दाजी ?], रतनजी महाराज, कुवंरजी मनोर, काला पेमा, नागर भवान, मोरार भीखा, समंदरखाँ, काना गोपाल, नाना वल्लभ, बावा सुखा, परभु नारण, जसमत फकीर, फकीर लाखा, हरि दाजी, प्रेमा भाणा, परभु छना, लल्लू खुशाल, रामसामी चोकलींग पिल्ले, मणि डाह्या, भीमा वसन, झीणा कीड़िया, डाह्या पाँचा, वल्लभ गोविन्द, धना हीरा, हरि भीखा, दयाल वल्लभ, मकन मोरार, माधव जीवण, गोविन्द डाह्या, बुधिया लाला, दाजी भाणा, रणछोड गोपाल, भीखा रतनजी।

मुझे यह देखकर प्रसन्नता होती है कि इनमें एक पठान, एक कोंकणी, एक मद्रासी और अन्य गुजराती हिन्दू, इस तरह सभी जाति लोग हैं।

मुहम्मद इशाकका मुकदमा

यह मुकदमा फोक्सरस्टमें शुक्रवारको चला। सरकारी वकीलने कहा कि किस आरोपके सम्बन्धमें मुकदमा चलाया जाये, इसका उसे पता नहीं है। खबर मिलनेपर बताया जा सकता है। बहसके बाद न्यायाधीशने वह मुकदमा जोहानिसबर्ग भेजना स्वीकार किया और यह आदेश दिया कि उसे बुधवारको जोहानिसबर्गमें चलाया जाये।

श्री मुहम्मद इशाक और दूसरे भारतीयोंने जमानतपर छूटनेसे इनकार कर दिया। इसलिए सबको ऐसे ही छोड़ दिया गया था। इन मुकदमोंके कारण न्यायालयमें सरकारकी हँसी हुई।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–१२–१९०७

३२६. नेटालमें परवाना सम्बन्धी अर्जीके विनियम

नेटाल 'गज़ट'में नये परवानेके लिए अथवा परवानेके नवीनीकरण (प्रतिवर्ष नये करवाने) के लिए अथवा परवानेके हस्तान्तरणके लिए अर्जी देने और अपील करनेसे सम्बन्धित विनियम प्रकाशित हुए हैं। उनमें से सब उपयोगी खण्डोंका सारांश नीचे दिया जा रहा है:

२. अर्जी निश्चित फार्मके अनुसार निर्धारित न्यायाधीश अथवा नगर-कार्यालयमें दी जाये, तथा आवेदक उसे अपने क्षेत्रके लिए समाचारपत्रमें प्रति सप्ताह कमसे-कम एक दिनके हिसाबसे दो सप्ताह प्रकाशित कराये।

४. अर्जी मिलनेके बाद उसमें बताये गये मकानके सम्बन्धमें परवाना अधिकारीको स्वास्थ्य अधिकारी अथवा सफाई निरीक्षकसे स्वास्थ्य विभागकी रिपोर्ट प्राप्त करनेका अधिकार होगा।

५. आवश्यक हो तो अर्जदार स्वयं परवाना अधिकारीके पास उपस्थित हो और उसे दिखाये कि वह अंग्रेजीमें बहीखाते रखने सम्बन्धी ७वीं धाराकी शर्तें पूरी करनेकी योग्यता रखता है। इस सम्बन्धमें सन्तोष करवानेके लिए वह परवाना अधिकारीको अपने बहीखाते अथवा अन्य आवश्यक कागज-पत्र भी दिखाये।

६. प्रत्येक अर्जीकी स्वीकृति या अस्वीकृति सम्बन्धी निर्णय परवाना अधिकारी प्रत्येक अर्जीपर लिख दे।

८. जबतक आवश्यक टिकट न लगाये जायें अथवा उनके बदलेमें पैसे न जमा किये जायें, तबतक परवाना नहीं दिया जायेगा।

९. परवाना अधिकारी जिस अर्जदारसे चाहेगा उससे परवाना देते समय, हस्ताक्षर, अथवा अँगूठेकी निशानी, अथवा अँगुलियोंकी निशानियाँ ले सकेगा।

अपीलके विनियम

१०. परवाना अधिकारी द्वारा निर्णय दिया जानेके पश्चात् दो सप्ताहके अन्दर अपील करने सम्बन्धी अपने इरादेकी निकाय या नगर-परिषदके क्लार्कको सूचना दी जाये। परवाने सम्बन्धी अपीलकी अर्जीके साथ निकायके सदस्योंके खर्चके लिए १२ पौंड १० शिलिंग क्लार्कके पास जमा करने होंगे। अर्जदारोंकी संख्या एकसे अधिक होगी तो अपील-निकायका खर्च हिस्सेके अनुसार आयेगा।

११. अपीलोंकी सुनवाईकी तारीखकी सूचना और अपीलोंकी सूची न्यायालय अथवा नगर-कार्यालयके दरवाजेपर निश्चित तिथिसे कमसे-कम पाँच दिन पहले चिपकाई जायेगी।

१३. लोगोंकी जानकारीके लिए निकाय खुले रूपमें मुकदमेकी सुनवाई करेगा।

१६. अर्जदारको और अर्जीसे सम्बन्ध रखनेवाले व्यक्तिको ऐसे प्रतिनिधिके द्वारा, जिसे व्यक्तिगत अथवा लिखित रूपसे अधिकार दिया गया हो, सबूत पेश करनेका अधिकार है। अपीलका विरोध करनेवालेको भी वैसे ही अधिकार हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–१२–१९०७

३२७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

पंजाबियोंकी याचिका

इस याचिकाके जवाबके बारेमें सरकार अभी विचार कर रही है। किन्तु दुनियाने इसका जवाब दे दिया है। इससे बहुत अंग्रेजोंका मन पंजाबी सैनिकोंके पक्षमें उत्तेजित हो उठा है। और सब चर्चा कर रहे हैं कि उनके साथ न्याय किया जाना चाहिए। अभी इस याचिकाकी बात चलती ही रहती है। विलायतके 'डेली ग्राफिक'में इस सम्बन्धमें सख्त टीका की गई थी। इसका हम उल्लेख कर चुके हैं।

वापस ले लेता हूँ

श्री पारेखके जोशके बारेमें मैं लिख चुका हूँ।[1] लेकिन मैं देखता हूँ कि वह जल्दीमें लिखा गया था, इसलिए उसे वापस ले लेता हूँ। जब वह लेख लिखा गया तब श्री पारेख न्यूकैसिलमें थे। छपते समय वहीं होंगे या नहीं, यह कहा नहीं जा सकता। किन्तु मैंने उन्हें खास रूपसे शूरोंमें शामिल करके उदाहरण दिया था कि दूसरे लोग उनका अनुसरण करें, किन्तु उसमें भूल हो गई। शूर वह है जो पहले रणमें चढ़े। श्री पारेख अभी ट्रान्सवालके बाहर हैं। इसलिए मेरे लेखसे जो यह भाव निकलता था कि वे हम सबसे विशेष बहादुर हैं वह अब नहीं रहा।

सरासर झूठ

श्री हसन अहमद कालाने सार्वजनिक रूपसे यह कहा था कि पंजीयनकी अर्जी देकर वे स्वयं पछताये हैं, और उसे वापस लेना चाहते हैं। किन्तु मुझे मालूम हुआ है कि जिस दिन अर्जी वापस लेनेके विचारके सम्बन्धमें उन्होंने पत्र लिखा उसी दिन उन्होंने अपने भाई-बंदोंको ऐसा भी खानगी पत्र लिखा कि उन्हें जल्दीसे गुलामीके पट्टे मिल जायें तो अच्छा हो। उन लोगोंको इतने दिन तक पट्टे नहीं मिले उसके लिए उन्होंने चिन्ता व्यक्त की। हमारे बीच ऐसी बातें न हों इस दृष्टिसे मैं इस झूठको कर्तव्य समझकर प्रकट कर रहा हूँ। मुझे खेद है कि श्री काला पीटर्सबर्गमें धरनेदार रहे हैं। इसलिए श्री चैमनेको यह कहनेका मौका मिला है कि धरनेदारोंने भी पंजीयनके लिए अर्जी दी है।

स्वेच्छया पंजीयन यानी क्या?

इस सम्बन्धमें इस अखबारमें कई बार चर्चा हो चुकी है, फिर भी मैं देखता हूँ कि आज भी सब भारतीय उसका अर्थ नहीं समझते। जैसे गोरे तबतक नहीं समझते थे कि नया

१. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ३८७।

कानून क्या है, जबतक कि समय नहीं आया, वैसा ही हाल हमारा है। स्वेच्छया पंजीयन और कानूनके अनुसार पंजीयनमें मुख्य अन्तर यह है कि कानून गुलाम बनाता है और स्वेच्छया पंजीयन मनुष्य बनाता है। सरकारके दबावके कारण पंजीकृत होना गधेकी सवारी है, जब कि स्वेच्छया पंजीयन हाथीकी सवारी है। स्वेच्छया पंजीयनमें भले ही अनिवार्य पंजीयनके जितनी ही बातें लिखनी पड़ें, फिर भी उसे स्वीकार किया जा सकता है। परन्तु अनिवार्य पंजीयनकी गुलामी सम्बन्धी कोई खास बात छोड़ देनेसे गुलामी समाप्त नहीं होती। कानून बहुत कड़ा है। इसीलिए स्थानीय सरकार उससे जोंकके समान चिपटी हुई है। और इसीलिए हम पन्द्रह महीने हो गये उसे चिपटने नहीं दे रहे हैं। इसका मतलब यह हुआ कि हम गोरोंके साथ एक धरातलपर रहना चाहते हैं और गोरे हमें नीचे उतारना चाहते हैं। कानूनको स्वीकार करनेसे शपथ टूटती है और हमेशाके लिए काला टीका लगता है। कोई पूछ सकता है कि स्वेच्छापूर्वक भी हम अपने पंजीयनपत्र क्यों बदलायें? इसका उत्तर बहुत ही सरल और सीधा है:

(१) जिस प्रकार कानूनका विरोध करनेकी हमने शपथ ली है, उसी प्रकार दस्तावेजको स्वेच्छापूर्वक बदलवानेकी बात भी हम कहते आये हैं। अतः यदि अब हम वैसा नहीं करते तो हमारी टेक जाती है, और हम झूठे ठहरते हैं।

(२) भारतीय समाजपर यह आरोप है कि उसके बहुत-से लोग झूठे अनुमतिपत्रोंके द्वारा अथवा बिना अनुमतिपत्रोंके प्रविष्ट हुए हैं। यह आरोप गलत है। इसे हम स्वेच्छया पंजीयनके द्वारा सिद्ध कर सकते हैं, और वैसा सिद्ध करना कर्तव्य है। और चूँकि हम सिद्ध करनेको तैयार हैं, इसीलिए दुनियाकी सहानुभूति अपनी ओर खींच सके हैं।

(३) स्वेच्छया पंजीयनसे इनकार करनेका मतलब यह स्वीकार करना है कि हम झूठे हैं।

(४) हमने जितनी प्रतिष्ठा प्राप्त की है स्वेच्छया पंजीयनसे हम उससे अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकते हैं। हमें यह नियम याद रखना चाहिए कि जब लोग अपने-आप कोई काम नहीं करते, अर्थात् कमजोरी बताते हैं, तभी कानून बीचमें आकर वह काम करनेके लिए मजबूर करता है। बहुतेरे काफिर अपने-आप शराब पीनेसे नहीं रुकते, इसलिए जहाँ रोकना जरूरी जान पड़ता है वहाँ कानून बीचमें आकर विवश करके रोकता है। जो आदमी कर्तव्य समझकर नहीं, बल्कि कानूनके बन्धनके कारण ही शराब नहीं पीता वह गुणी नहीं कहा जाता, जो अपने-आप नहीं पीता वह गुणी माना जाता है। इसी प्रकार अनिवार्य और स्वेच्छया पंजीयनके बारेमें समझा जाये।

(५) स्वेच्छया पंजीयनसे हम सदा खुले रह सकते हैं। क्योंकि उसमें हम जितना बँधना चाहें उससे ज्यादा हमें कोई बाँध नहीं सकता। स्वयंसेवक-सिपाहीको अच्छा लगता है तभी वह लड़ाईमें जाता है और भूखका मारा वेतनभोगी सिपाही हमेशा लड़ाई करनेके लिए बँधा हुआ है।

इसी प्रकार स्वेच्छया पंजीयनके और भी बहुत-से फायदे बताये जा सकते हैं। फिलहाल इतने काफी हैं। अँगुली आदिकी बातोंका समावेश इसमें नहीं होता। क्योंकि वह हमारी मर्जीकी बात है। किन्तु दस अँगुली और दो अँगूठोंके बीच वैज्ञानिक दृष्टिसे क्या अन्तर है इसपर अगले सप्ताह विचार करेंगे। अभी तो स्वेच्छया पंजीयन क्या है, यह ठीक तरहसे समझना है।

एक आपत्ति

अब किसी भी समय समझौता हो जाये, इसलिए संघने स्वेच्छया पंजीयनके बारेमें चर्चा शुरू की है। उसपर कुछ सज्जनोंने यह आपत्ति की है कि सबकी सलाह क्यों नहीं ली जाती। यह बात ठीक नहीं है। यदि स्वेच्छया पंजीयनकी बात नई होती तो अवश्य ही विभिन्न जगहोंसे प्रतिनिधियोंको बुलाना पड़ता। किन्तु एम्पायर नाटकघरमें जो सार्वजनिक सभा हुई थी उसमें सभी जगहोंसे बुलाये गये प्रतिनिधियोंने स्वेच्छया पंजीयन-सम्बन्धी प्रस्ताव पास किया था तथा उसके सम्बन्धकी सारी बातें जान ली थीं। इसलिए अब सब जगहोंके प्रतिनिधियोंको बुलानेकी बात नहीं रहती। न उसके लिए समय ही है। फिर भी हर भारतीय चाहे जब अपने विचार प्रकट कर सकता है। इस कानूनकी लड़ाईके अन्तमें हम चाहते हैं कि हमें राजकीय मामलोंकी बूझ हो जाये। सभाएँ किस प्रकार की जाती हैं, दूसरे संगठन किस प्रकार काम करते हैं और कौमी कामका किस प्रकार संचालन किया जाता है एवं उसे निभाया जा सकता है, यह भी आ जाना चाहिए। हम दरअसल सभ्य हैं यह कहकर हम नये कानूनको रद करानेका महा प्रयत्न कर रहे हैं; तब उपर्युक्त बातोंका ज्ञान भी सच्ची सभ्यताका चिह्न है।

परीक्षात्मक मुकदमा क्यों न चलाया जाये?

कुछ लोग आपसमें पूछताछ कर रहे हैं कि हम नये कानूनके सम्बन्धमें परीक्षात्मक मकदमा क्यों न दायर करें। उसके बारेमें मैंने अपना जो विरुद्ध मत जाहिर किया है, उसके दो कारण हैं:

एक तो यह कि हमारी लड़ाई मुकदमा लड़नेकी नहीं बल्कि जेल जाकर अपना बल दिखानेकी है। आत्मबलके समान दूसरी कोई चीज नहीं है। तब यदि परीक्षात्मक मुकदमा चलाया जाये तो उसमें हमारी लड़ाई बिगड़ जायेगी और हमारी हँसी होगी। गोरे तुरन्त कहने लगेंगे कि "जेल जानेवाले कहाँ गये?" इसलिए परीक्षात्मक मुकदमा लड़ना अपनी कमजोरी दिखानेके समान है।

दूसरा यह कि, नये कानून और उपनिवेशके दूसरे कानूनोंको सम्राट्की न्याय-परिषद शायद ही रद कर सकती है। श्री लेनर्ड, श्री एसेलेन, श्री ग्रेगरोवस्की, श्री डक्सबरी, श्री वार्ड और श्री डी' विलियर्स हमारे विरुद्ध मत व्यक्त कर चुके हैं। सर्वोच्च न्यायालयने तो ऐसे फैसले बहुत किये हैं। यदि नया कानून सम्राट्की न्याय परिषद रद कर दे तो उसका अर्थ यह होगा कि काफिरोंके खिलाफ जो कानून बनाये गये हैं वे भी रद हो जायेंगे। यह कभी होनेवाला नहीं है। और यदि हो भी तो उस स्थितिको सुधारनेके लिए तुरन्त ही दूसरे कानून बनाने होंगे। यानी यह आगे जाकर पीछे फिरनेके समान होगा। विलायतसे हमने राय मँगवाई थी, किन्तु श्री रिच अभीतक नहीं भेज पाये। क्योंकि सर रेमंड वेस्टके सिवा और कोई राय देता नहीं है। इसके अलावा, हमें याद रखना चाहिए कि सर रेमंड वेस्टने हमें कानूनका विरोध करनेके बजाय परीक्षात्मक मुकदमा लड़नेकी सलाह दी थी। अब वे भी अनाक्रामक प्रतिरोधियोंके पक्षमें आ गये हैं। इसलिए परीक्षात्मक मुकदमा कैसे हो? इसके अलावा, किसीको यह नहीं भूलना चाहिए कि परीक्षात्मक मुकदमेमें १,००० पौंडकी बात है। उतनी रकम इकट्ठा करनेकी ताकत किसमें है? इसीके साथ यह भी याद रखना चाहिए कि

परीक्षात्मक मुकदमेके दिनोंमें सरकार किसीको परेशान नहीं करेगी, सो बात नहीं है। उस अवधिमें कानून बन्द नहीं रह सकता।

हमीदिया अंजुमनकी सभा

रविवारको फिर एक जोरदार सभा हुई थी। लोग इतने आये थे कि वे सभा-भवनमें समा ही न सकते थे। इसलिए बाहर मैदानमें सभा हुई थी। प्रिटोरियासे श्री काछलिया, श्री सूज, श्री मणिभाई देसाई, श्री पिल्ले, श्री गोपाल, श्री बेग तथा श्री व्यास खास तौरसे इसीलिए आये थे। इमाम अब्दुल कादिर सभापति थे। उन्होंने तथा श्री सूज, श्री बेग, श्री काछलिया, श्री नायडू, श्री हजूरासिंह, श्री अहमद खाँ, श्री अलीभाई आकूजी, आदि सज्जनोंने भाषण दिये। श्री गांधीने हकीकत समझाई। श्री मौलवी अहमद मुख्त्यारने भी, जो किसी कामसे डेलागोआ-बे जाकर अभी लौटे थे, लोगोंको समझाया। अन्तमें सबने स्वीकार किया कि स्वेच्छया पंजीयन तो करवाया ही जाये। किन्तु अँगूठोंकी निशानी देनेमें पंजाबी भाइयोंको विरोध था। दूसरोंका कहना था कि दोनों अँगूठोंकी निशानी मर्जीसे देनेमें हर्ज नहीं है। लोगोंका यह जोश प्रशंसनीय है। इससे प्रकट होता है कि लोग अपने विचार जाहिर करनेमें डरते नहीं हैं और हिम्मतसे बोलते हैं। जो छः महीने पहले कानूनको जरा भी नहीं समझते थे वे अब कुछ-कुछ समझने लगे हैं। यह सब आत्मबल आजमानेका फल है। मैं जानता हूँ कि अन्तमें सब समझने लग जायेंगे; क्योंकि दो अँगूठोंकी निशानी देनेमें अप्रतिष्ठा नहीं है। किन्तु यदि वही काम अनिवार्य रूपसे करना पड़े तो उसमें अप्रतिष्ठा है। कानून समाप्त हुआ कि हम कह सकते हैं कि हम स्वतन्त्र हो गये हैं।

डेलागोआ-बेकी दीन स्थिति

मौलवी साहब डेलागोआ-बेसे खबर लाये हैं कि जब सारे दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय समाज जाग गया है और इज्जतके लिए लड़ रहा है तब डेलागोआ-बेके नेता सो रहे हैं। वहाँकी सरकार उन्हें जितना मारती है उतना सब वे चुपचाप सहन करते हैं। लोगोंको इज्जतकी परवाह नहीं है। वे तो यही समझते हैं कि पैसा मिला तो परमेश्वर मिल गया। और सरकारके सामने तो जी-हजूरी करते हैं। इस दीन स्थितिसे क्या डेलागोआ-बेके भारतीय उठेंगे नहीं?

भारतीयोंका जोर

नये कानूनके सम्बन्धमें सरकार ढीली ही होती जा रही है। यह बात अब गोरे भी देख रहे हैं। 'रैंड डेली मेल' तथा 'संडे टाइम्स'में दो व्यंग्य चित्र दिये गये हैं। एकमें दिखाया गया है कि स्मट्स साहब भारतीयोंपर नया कानून रूपी पिस्तौल छोड़ रहे हैं। भारतीय कहते हैं — "आपसे जितना बने उतना करें। हम तो कानूनके सामने नहीं झुकेंगे।" तब स्मट्स साहब बोल उठते हैं, "अरे यार, ऐसा मत कहो, मेरी पिस्तौल काम नहीं देती।" दूसरे व्यंग्य चित्रमें जनरल स्मट्स और अन्य सरकारी अधिकारी भारतीय समाजके नेताओंके सिर भालोंसे उड़ाना चाहते हैं। परन्तु उनकी मेहनतसे उनके घोड़े थककर चूर-चूर हो गये हैं; और सवारोंका दम निकला जा रहा है; फिर भी नेताओंके सिर तो अभी कायम ही हैं। ये दोनों चित्र गोरोंके मनकी स्थिति बताते हैं। 'इंडियन ओपिनियन' के सम्पादक महोदय वे दोनों चित्र अपने ग्राहकोंके लिए प्राप्त करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। इसलिए मैं ज्यादा नहीं लिखूँगा।

संघकी विजय

पहले वर्गकी बग्घीमें भारतीयोंको न बैठने देनेके सम्बन्धमें नगरपालिकाने नियम बनाया था। श्री ईसप मियाँने उसके खिलाफ पत्र[1] लिखा था। यह पाठकोंको याद होगा। अब स्मट्स साहब लिखते हैं कि सरकार वह नियम मंजूर नहीं करेगी। क्या स्मट्स साहब भी बदले हैं? इससे प्रकट होता है कि भारतीय समाजके जोरसे लाभ ही होता है।

पासपोर्ट नहीं मिलेंगे

श्री मूसा इस्माइल मियाँ तथा श्री दावजीको पासपोर्ट न मिलनेसे उन्होंने उस सम्बन्धमें लॉर्ड सेल्बोर्नको अर्जी दी थी। लॉर्ड सेल्बोर्नने उसके जवाबमें लिखा है कि यदि सरकार पासपोर्ट दे देती है तो इसका अर्थ इसके बराबर होगा कि दोनों भारतीय पंजीकृत नहीं हुए, फिर भी सरकारने उनका वापस आनेका अधिकार स्वीकार कर लिया है। यह बात यहीं खतम नहीं होगी। श्री गांधीने फिर लॉर्ड सेल्बोर्नको पत्र[2] लिखा है कि यदि उपर्युक्त फैसला कायम रहा तो यह साबित होगा कि भारतीय समाज ब्रिटिश प्रजा बिलकुल नहीं है। यदि ऐसा हो तो वह भी अच्छा है। इससे हमारी लड़ाईको अधिक बल मिलता है।

नये कानूनकी एक धारा

नये कानूनकी एक उपधारा स्वर्गीय श्री अबूबकरके उत्तराधिकारीके लिए लाभप्रद मानी जाती थी। उसपर लॉर्ड सेल्बोर्न और लॉर्ड एलगिन सबने जोर दिया था। अब वह भी उड़ गई है। उस उपधाराके अन्तर्गत जमीन उत्तराधिकारियोंके नामपर करनेका प्रयत्न किया गया तो स्मट्स साहबने आपत्ति की और कहा कि वह उपधारा इस केसमें लागू नहीं होती, क्योंकि जमीन तो गोरोंके नामपर ही चढ़ी हुई है। अदालतने इस आपत्तिको मान्य कर लिया है, यद्यपि उसने सहानुभूति व्यक्त की है। किन्तु वह सहानुभूति किस काम की? अतः कानूनकी एक धारा भी अभी तो बेकार हो गई है। यह बात भी इतनेपर ही समाप्त हो जायेगी, सो नहीं। उत्तराधिकारियोंका विचार आगे बढ़कर न्याय प्राप्त करनेका है। किन्तु इस बीच इस मामलेका विपक्षमें निर्णय हो जानेके कारण कानूनके खिलाफ एक दलील और बढ़ गई है और उस सम्बन्धमें लिखा-पढ़ी शुरू हो गई है।

कानूनका शिकार

नया कानून ऐसा काल-रूप है कि हमेशा भक्ष्य लेता रहता है। भारतीयोंका खून इस राक्षसको प्रिय है। कई हजूरिये बे-रोजगार होकर बैठे हैं। मजदूरोंके पास काम नहीं है। सिपाहियोंकी पुकार हमने सुन ही ली है। अब श्री मोहनलाल जोशीपर आ बीती है। श्री मोहनलाल जोशी प्रिटोरिया न्यायालयमें अच्छे वेतनपर दुभाषियेकी नौकरी करते थे। पंजीयन न करवानेके कारण सरकारने उन्हें कार्य-विरत कर दिया है। यह जुल्म कम नहीं है। उनके बाल-बच्चे हैं फिर भी श्री जोशीने देशके खातिर नौकरीकी परवाह नहीं की। परन्तु उन्होंने अपनी और समाजकी आबरू रखी इसके लिए मैं उन्हें बधाई देता हूँ। इस प्रकार बेरोजगार होनेवालोंको नौकरी देना भारतीयोंका काम है। जिन भारतीयोंको मुंशीकी जरूरत हो उनसे मेरी विशेष प्रार्थना है कि वे श्री जोशी तथा उसी तरह बेरोजगार होने-वाले लोगोंको काम दें।

१. देखिए "पत्र: उपनिवेश सचिवको", पृष्ठ ४०८।
२. यह उपलब्ध नहीं है।

शोक

यहाँके प्रसिद्ध व्यापारी श्री दादाभाईको स्वदेशसे खबर मिली है कि उनके बड़े लड़केका प्लेगसे देहान्त हो गया। इससे वे अत्यन्त शोक-ग्रस्त हो गये हैं। उन्हें बहुत-से लोगोंकी ओरसे समवेदना प्राप्त हुई है। उनमें मैं भी शामिल होता हूँ।

मुहम्मद इशाकका मुकदमा

यह मुकदमा[1] बुधवारको श्री जोर्डनकी अदालतमें पेश हुआ था। सैंतीस भारतीयोंपर जो आरोप लगा था वही श्री मुहम्मद इशाकपर भी लगाया गया। श्री चैमने भी उपस्थित थे। उनके विरुद्ध बयान देनेवाले अधिकारीने वैसा ही बयान दिया, जैसा सैंतीस आदमियोंके मुकदमेमें दिया था। श्री गांधीने श्री मुहम्मद इशाकको बिना बयान लिये छोड़ देनेकी माँग की। श्री जोर्डनने लम्बा फैसला देते हुए कहा कि श्री मुहम्मद इशाकको अपने अनुमतिपत्रके आधार-पर रहनेका पूरा हक है। शान्ति-रक्षा अध्यादेशके आधारपर उन्हें बिलकुल निर्वासित नहीं किया जा सकता। इसलिए उन्हें निर्दोष मानकर छोड़ दिया गया।

लिंड्जेका भाषण

श्री लिंड्जे प्रगतिशील दलके एक नेता हैं। उन्होंने भाषण देते हुए कहा कि सरकार भारतीयोंपर कोई सख्ती नहीं बरतेगी। प्रवासी कानून उनके खिलाफ इस्तेमाल किये जानेके लिए नहीं बनाया गया है। भारतीयोंको निकालनेका एक ही रास्ता है कि उनके परवाने बन्द किये जायें। यह काम जनवरी महीनेसे किया जा सकेगा। किन्तु इस सबको मैं बकवास समझता हूँ। पहली बात जेलकी थी। फिर देश-निकालेकी चली। अब परवानेपर आये हैं। इस तरह यदि भारतीय समाज अन्ततक हिम्मत और एकतासे रहा तो कानून अपने-आप सो जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–१२–१९०७

१. देखिए "मुहम्मद इशाकका मुकदमा", पृष्ठ ४०७-८।

३२८. पत्र: उपनिवेश-सचिवको

[जोहानिसवर्ग
दिसम्वर १४, १९०७]

[सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
प्रिटोरिया
महोदय,]

निवेदन है कि कल मैं जोहानिसवर्ग जेलसे छोड़ दिया गया। मुझे एशियाई कानून संशोधन अधिनियम तथा शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत एक मासका कारावास हुआ था, क्योंकि गत तीस सितम्वरके वाद भी, जो मेरे अनुमतिपत्रकी अवधिका अन्तिम दिन था, मैं उपनिवेशमें वना रहा। मैंने एशियाई पंजीयककी इस आज्ञाका कि मैं उपनिवेशसे चला जाऊँ, उल्लंघन किन कारणोंसे किया, इसका उल्लेख मैंने उनके नाम लिखे अपने पत्रमें किया है। जर्मिस्टनका हिन्दू मन्दिर आज जिस रूपमें है सो मेरी ही वदौलत है। मैं उस मन्दिरका एकमात्र पुरोहित था और अव भी हूँ। कल वहाँ जानेपर मैंने उसे उजड़ी हुई दशामें पाया। मन्दिर पूरे माह वन्द पड़ा रहा। कल उस मन्दिरकी हालत देखकर मेरी जो मनोदशा हुई उसे मैं यहाँ पर्याप्त रूपसे व्यक्त करनेमें असमर्थ हूँ।

मैं जानता हूँ कि यदि मैं कारावाससे वचना चाहता हूँ तो उपनिवेशके कानूनके अनुसार मुझे सात दिनोंके अन्दर उपनिवेश छोड़ देना चाहिए। परन्तु उपनिवेशके कानूनोंसे भी उच्चतर एक अन्य कानून मुझे दूसरा ही मार्ग ग्रहण करनेको प्रेरित करता है। वह मार्ग यह है कि एक ब्रिटिश प्रजा और जर्मिस्टनके हिन्दू मन्दिरका पुरोहित और धर्मोपदेशक होनेके नाते, परिणामोंका विचार किये विना, मैं अपने कर्तव्य-पथपर दृढ़ रहूँ। अतः अत्यन्त विनय और आदरके साथ साम्राज्य सरकारके तथा स्थानीय सरकारके प्रति अपने कर्तव्योंका पूरा खयाल रखते हुए मैं आपको सूचित करना चाहता हूँ कि उपनिवेशसे वाहर चले जानेका मेरा इरादा नहीं है। यदि सरकार अनुमतिपत्र प्रदान करके मुझे अपने मन्दिर तथा मन्दिरमें आनेवाले भक्त-समाजके प्रति अपने कर्तव्यका पालन करने दे — और मैं इसके निमित्त इसीके द्वारा आवेदन भी कर रहा हूँ — तो उक्त समाज और मैं स्वयं सरकारकी शक्तिकी सराहना करेंगे।

इस सम्वन्धमें मैं यह निवेदन किये विना नहीं रह सकता कि जिन आरोपोंका इशारा एशियाइयोंके पंजीयकने किया था और जिनकी विनापर मेरे अनुमतिपत्रकी अवधि वढ़ानेसे इनकार किया गया है, उनका अवतक मुझे कोई ज्ञान नहीं है। जहाँतक मैंने उनका अनुमान किया है, वे निराधार थे। यदि मेरे विरुद्ध कोई आरोप हो तो मेरी प्रार्थना है कि वे सूत्रवद्ध कर लिये जायें और मुझपर मुकदमा चलाया जाये; और यदि मैं अपने किसी भी काममें अपने धर्मसे, जैसा कि मैं उसे समझता हूँ, अथवा धर्मोपदेशकके कर्तव्यसे डिग गया होऊँ तो मुझे तुरन्त और स्वयमेव उपनिवेश छोड़ देना चाहिये। यदि मुझपर लगाये गये आरोप इस प्रकारके हैं जिनके वलपर कानूनन मुझपर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता तो भी मैं

ऐसे किसी निष्पक्ष कानूनी प्रशिक्षण-प्राप्त व्यक्तिके सामने, जिसे सरकारने खास इसी कामके लिए नियुक्त किया हो, उनका जवाब देनेको तैयार हूँ। यह कमसे-कम है, जो मैं एक सभ्य और शिष्ट सरकारसे माँगनेकी धृष्टता कर सकता हूँ।

[आपका, आदि,
रामसुन्दर पण्डित]

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २१-१२-१९०७

३२९. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

जोहानिसबर्ग
दिसम्बर १८, १९०७

माननीय उपनिवेश-सचिव
[प्रिटोरिया]
महोदय,

संदर्भ : स्वर्गीय अबूबकर आमद [की] जायदाद

जैसा कि सरकारको मालूम है, एशियाई कानून संशोधन अधिनियमकी धारा १७ इसलिए जोड़ दी गई थी कि इस जायदादके उत्तराधिकारियोंको राहत मिले और वे नं० ३७३, चर्च स्ट्रीट, प्रिटोरियाकी जायदाद, जिसे स्वर्गीय अबूबकर आमदने १८८५ के कानून ३ के पास होनेसे पहले खरीदा था, अपने नाम रख सकें। गत वर्ष इस धाराका मसविदा तैयार होनेसे पहले वे परिस्थितियाँ, जिनके अन्तर्गत यह जायदाद श्री पोलकको हस्तान्तरित की गई थी, तत्कालीन महान्यायवादीके सामने रखी गई और ऐसा समझा गया कि यह धारा इस मामलेको सुलझानेके लिए प्रस्तुत की गई है। इस जायदादका पट्टा उत्तराधिकारियोंके पक्षमें, जो भारतीय हैं, पंजीयनके लिए तैयार किया गया और पट्टोंके पंजीयकके समक्ष पेश किया गया। परन्तु उन्होंने हस्तान्तरणको अस्वीकार कर दिया, क्योंकि उनकी सम्मतिमें यह मामला इस धाराके अन्तर्गत नहीं आता था। तब यह मामला न्यायमूर्ति वैसेल्सकी अदालतमें पेश हुआ। उन्होंने पंजीयकके मतको बहाल रखा। इस तरह सम्बन्धित धारा उत्तराधिकारियोंको राहत देनेमें बेअसर साबित हुई है। क्या मैं भरोसा करूँ कि सरकार इन उत्तराधिकारियोंको राहत देगी? मेरी विनम्र रायमें इसे करनेकी सबसे सत्वर विधि होगी उक्त स्ट्रीटको भारतीयों द्वारा कब्जा करने योग्य करार देना।[1]

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, १-२-१९०८

१. किन्तु इसे अधिकारियोंने अस्वीकार कर दिया था।

३३०. पत्र : म० द० आ० रेलवेके महाप्रबन्धकको

[जोहानिसबर्ग]
दिसम्बर, २०, १९०७

महाप्रबन्धक
म० द० आ० रेलवे
जोहानिसबर्ग

महोदय,

मध्य दक्षिण आफ्रिका रेलवेमें नौकरी करनेवाले स्टैंडर्टनके भारतीयोंके जिस मामलेके बारेमें मैंने आपसे टेलीफोनपर बात की थी वह, जितना अधिक मैं सोचता हूँ, उतना ही अधिक महत्त्वपूर्ण दिखलाई देता है। फलतः मेरे संघका यह कर्तव्य होगा कि वह प्रयत्नपूर्वक सार्वजनिक सदाचार तथा, आवश्यकता पड़नेपर, कानूनके प्रश्नके रूपमें उसका समाधान ढूँढ़े। लेकिन मेरा संघ कानूनी संघर्षको टालनेके लिए अत्यधिक उत्सुक है। इसलिए आपसे मेरा अनुरोध है कि यदि सम्भव हो तो आप उनको नोटिसके बदलेमें एक मासका वेतन दे दें। मेरी नम्र सम्मतिमें इन लोगोंको कमसे-कम इतनी-सी सुनवाईका हक जरूर है। शायद मुझे यह भी बतला देना चाहिए कि मैंने स्टैंडर्टनकी समितिको तार भेजकर उन आदमियोंको यह सलाह दी है कि वे एक माहके नोटिसके बदलेमें मजदूरीका दावा करनेका अपना अधिकार सुरक्षित रखते हुए, जो-कुछ भी उन्हें दिया जाये, उसे स्वीकार कर लें।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी
अवैतनिक मंत्री
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २८-१२-१९०७

३३१. अधीरता

हम देखते हैं कि ट्रान्सवालके कुछ भारतीय अब लड़ाईका अन्त देखनेके लिए उतावले हो रहे हैं। किन्तु अभी लड़ाईका अन्त जरा दूर दिखाई देता है। बड़े-बड़े काम एकाएक नहीं बन जाते। दक्षिण आफ्रिकामें सब जगह सब लोग समझते हैं कि यह लड़ाई भारतीयोंकी प्रतिष्ठा रखनेके लिए है। हम सब एक प्रजा हैं, हमें हक मिलने चाहिए, हम स्वतन्त्र हैं, यह सब बातें दिखाना इस लड़ाईमें निहित है। इतनी बड़ी विजय प्राप्त करनेके लिए उतावली करनेसे क्या होगा? बहुत-से जेल जाकर अपने-आपको गढ़ेंगे और बाकी लोग प्रबल रहेंगे, तभी किनारा लगेगा।

हमारी इस बारकी जोहानिसबर्गकी चिट्ठीसे मालूम होगा कि स्मट्स साहब अभीतक डिगे नहीं हैं। इससे प्रकट होता है कि उनके पास अब भी छिपी खबर है कि भारतीय अन्तमें हार जायेंगे। परवानोंका इलाज अभी उनके पास है जो आजमाना बाकी है। सारी बातें आजमाये बिना वे भारतीयोंको परेशान करना क्यों छोड़ दें? लड़ाईमें सैनिक विवश हो जानेपर ही आत्मसमर्पण करते हैं। हमारी लड़ाईमें खून-खराबी नहीं होती और सच्चे गोला-बारूदका उपयोग नहीं किया जाता, इसलिए कोई यह न समझ ले कि यह लड़ाई नहीं है। है तो हमारी भी लड़ाई ही। अन्तर केवल इतना है कि इस लड़ाईमें हमारी ओर सत्य है। इसलिए परिणाम एक ही हो सकता है। किन्तु यदि हम अधीर बनेंगे, तो समझ लीजिए कि सत्य उतना ही कम हो जायेगा। और जब सत्यको जीतना है तो वह धीरे-धीरे ही जीता जा सकता है। वास्तवमें वह जीत बहुत ही कम समयमें मिली यही माना जायेगा। किन्तु ऊपर-ऊपर देखनेसे हमें आभास होता रहता है कि उसमें हमें ज्यादा समय लगता है। जो अपना सब-कुछ बलिदान करनेको तैयार हैं तथा अपनी शपथ और प्रतिष्ठाकी प्राणके समान रक्षा करते हैं, उन्हें समय जानेसे कुछ खोना है ही नहीं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-१२-१९०७

३३२. रामसुन्दर पण्डित

पण्डितजी छूट गये, और जबतक यह अंक हमारे पाठकोंके हाथमें पहुँचेगा तबतक फिर पकड़े भी जा सकते हैं। पण्डितजीका जीवन अब अपना नहीं रहा, वह सार्वजनिक है। उन्होंने अपना जीवन समाजको समर्पित कर दिया है। अब वापस नहीं ले सकते। पण्डितजीका उत्साह बहुत ही प्रशंसनीय है। उनपर बड़ी जिम्मेदारी है। वे खुद पुजारी हैं और धर्मकी शिक्षा देते हैं। इसलिए हम उनमें वैराग्य या फकीरीका दर्शन पानेकी आशा करते हैं। वैसे पुरुषको वीतराग, सहज सुशील, शान्त, सत्यवादी और अपरिग्रही होना चाहिए। जबतक ऐसे लोग बड़ी संख्यामें पैदा नहीं होते तबतक भारतकी मुक्ति भी नहीं होगी। पण्डितजीने जबरदस्त कदम उठाया है और जो सम्मान प्राप्त किया है उसे वे सदा ही बनाये रखेंगे, ऐसी आशा है और ईश्वरसे प्रार्थना है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-१२-१९०७

३३३. हाजी हबीब

श्री हाजी हबीबने ट्रान्सवाल छोड़ दिया है और अब वे डर्बनमें रहनेवाले हैं। इसलिए प्रिटोरियामें उन्हें भोज दिया गया था। उसका हाल हम इस अंकमें छाप रहे हैं। समाजका यह समय इतना खराब है कि ऐसे समयमें मान-सम्मान आदिका खयाल हो, यह सम्भव नहीं। नहीं तो क्या श्री हाजी हबीबकी विदाई भोजसे ही हो जाती? श्री हाजी हबीबकी [समाज] सेवा बहुत ही दीर्घकालीन है। श्री हाजी हबीबने सैकड़ों लोगोंका इतना काम किया है कि उसका बदला नहीं चुकाया जा सकता। और इतना सब करनेमें उन्होंने अपना लाभ नहीं देखा। समाजके कामके लिए वे सदा तैयार ही रहे। उनमें जितनी आतुरता है उतनी ही होशियारी भी है। उनके साथ बहस करनेमें गोरे अधिकारी मुसीबतमें आ पड़ते थे। हमें आशा है कि श्री हाजी हबीबने ट्रान्सवालमें जैसा काम किया है वैसा ही वे डर्बनमें भी करेंगे; और सार्वजनिक काममें पूरा हिस्सा लेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-१२-१९०७

३३४. रामसुन्दर पण्डित[1]

श्री रामसुन्दर पण्डित १३ तारीखको जेलसे छूट गये। उनका स्वागत करनेके लिए बहुत-से भारतीय जेलके दरवाजेपर हाजिर थे। उनमें श्री ईसप मियाँ, मौलवी साहब, श्री फैन्सी, श्री थम्बी नायडू, श्री उमरजी, श्री गांधी आदि थे। प्रिटोरियासे श्री काछलिया, श्री पिल्ले तथा श्री गोपाल आये थे। वे ठीक साढ़े आठ बजे जेलसे बाहर आये। चीनी संघकी ओरसे श्री विवन आदि उपस्थित थे। पण्डितजीका स्वागत फूल-मालाओं और गुलदस्तोंसे किया गया।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-१२-१९०७

३३५. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

गद्दारोंकी संख्यामें वृद्धि

एक बार तो एशियाई कार्यालय सच ठहरा है; उसके कथनानुसार कुल मिलाकर ५११ भारतीयोंने गुलाम बननेके लिए अर्जियाँ दी हैं। भारतीयोंके हिसाबसे केवल ३९९ लोगोंने ही अर्जियाँ दी हैं। किन्तु मेरे पास वास्तविक खबर पहुँची है। उससे मैं देखता हूँ कि ५११ ही सही संख्या है। किन्तु उसमें जो ज्यादा खेदजनक खबर है सो यह है कि सेठ एम० सी० कमरुद्दीनकी पेढ़ीके श्री हसन मियाँ कमरुद्दीन झटाम, भारतीय विरोधी कानून-निधिके कोषाध्यक्ष श्री गुलाम मुहम्मद हुरजुग तथा प्रिटोरियाके श्री हाजी कासिम, हाजी जूसब तथा श्री अली हबीब ये सब काला मुँह करवा चुके हैं। श्री हसन मियाँकी बात मैं छोड़ देता हूँ। मैं समझता हूँ कि इस कानूनके बारेमें उनके मनमें एक पागलपन समाया हुआ है। किन्तु श्री गुलाम मुहम्मदकी बात बहुत ही खेदजनक है। जान पड़ता है, इन दोनोंने बहुत ही गुप्त तरीकेसे काला काम किया है। इनके बारेमें कुछ समय पहले एक अफवाह उड़ी थी। किन्तु मैंने उसपर भरोसा नहीं किया। वह अफवाह सच निकली यह देखकर मैं लज्जित हूँ। श्री हाजी कासिम तथा श्री अलीने भी बहुत ही छिपे तरीकेसे अपनेको पंजीकृत किया जान पड़ता है। उनके शब्द मुझे यह लिखते समय भी याद आते हैं। उन्हें यहाँ लिखना यद्यपि बेकार मानता हूँ, फिर भी इतना कहना तो अपना कर्तव्य समझता हूँ कि श्री हाजी कासिम तथा श्री अली जैसे लोगोंको पंजीकृत होना ही था तो हिम्मतके साथ सामने आकर होना चाहिए था। सूचीमें उनका नाम मैं देखता हूँ। इससे प्रकट होता है कि उन्होंने अन्तमें हाथ घिसे हैं। मेरे लिखनेसे उन्हें चोट पहुँचेगी। मैं उन्हें विश्वास दिलाता हूँ कि उनकी नामर्दीकी खबर सुनकर मुझे जो चोट पहुँची है उससे अधिक चोट उन्हें नहीं लगी होगी। समाजके भीतरसे झूठी शर्म, झूठा डर और झूठा काम निकल जाये, यही

१. यह "विशेष रिपोर्ट" के रूपमें छपा था।

सोचकर मुझे ये नाम सार्वजनिक तौरसे प्रकट करने पड़े हैं। इनके अलावा खोजा वेलजी केशवजी तथा खोजा मनजी केशवजीके नाम भी देखता हूँ। दूसरे नाम भी मेरे पास पहुँचे हैं; लेकिन उन्हें बादमें दूँगा। विशेष तौरसे उल्लेखनीय नाम ही इस समय दे रहा हूँ।

गद्दारोंसे विनती और उन्हें सलाह

दुनियाका रिवाज दुःखोंको भूल जानेका है। इसलिए मैं मान लेता हूँ कि कलसे गद्दारोंके काले कारनामें हम भूल जायेंगे। उनका अपराध समाजके विरुद्ध है। फिर भी वे भारतीय हैं, इस बातको हम याद रखेंगे। यदि उन्हें सच्ची शर्म आई हो और वे समाजका भला चाहते हों, तो जनवरीमें शुरू होनेवाली लड़ाईमें वे भाग ले सकते हैं। परवाना लेते समय उन्हें गुलामीका पट्टा दिखाना होगा। यदि वे वह पट्टा न दिखायें तो उन्हें पट्टा न लेनेवाले भारतीयों-जैसा दुःख उठानेका लाभ मिल सकता है। जिन गद्दारोंको पश्चात्ताप हो वे इस प्रकार कर सकते हैं; और मैं आशा करता हूँ कि ऐसी हिम्मतवाले कुछ तो निकलेंगे ही।

जनवरीमें क्या होगा?

उपर्युक्त सलाह देते समय जनवरीका प्रश्न तुरन्त उठ खड़ा होता है। जिस प्रकार हमने दिसम्बरका विचार किया उसी प्रकार जनवरीका भी करना है। दिसम्बरमें सरकारने जोर नहीं दिखाया — वह दिखा नहीं सकी। मैं तो समझता हूँ वैसा ही जनवरीमें भी होगा। किन्तु यह तो माना नहीं जा सकता था कि दिसम्बरमें वह किसीको नहीं पकड़ेगी। उसी प्रकार जनवरीमें किसीको परेशानी नहीं होगी यह भी मैं नहीं मानता। इतना तो अच्छी तरह याद रखना चाहिए कि जो लोग गुलामीका पट्टा नहीं दिखा सकेंगे उन्हें परवाना नहीं मिल सकेगा। उसमें सरकारके लिए ढील देनेकी भी बात नहीं रहती। वैसी विज्ञप्ति निकाली गई है; इसलिए वह तो अमलमें आयेगी ही। तब क्या किया जाये? उत्तर कई बार दिया जा चुका है और वह है: बिना परवानेके व्यापार किया जाये और जब सरकार पकड़े तथा जुर्माना हो तब *जुर्माना न देकर जेल जायें*। जेल ही रामबाण दवा है। सभी परवानोंका काम सरकारके हाथमें नहीं है। काफिर भोजनगृहों तथा फेरीवालोंके परवाने नगरपालिकाके हाथमें हैं। अर्थात् काफिर भोजनगृहवालों और फेरीवालोंको पकड़नेका सरकारको अधिकार नहीं है। नगरपालिका जो हुक्म देगी उसके अनुसार होगा। अतः यह सम्भव है कि कोई न कोई नगरपालिका तो वार करेगी ही। जैसे, बॉक्सबर्गकी नगरपालिका। इससे डरना नहीं, बल्कि खुश होना चाहिए। सरकारने आजतक हमपर हाथ नहीं डाला, उसे मैं अच्छा नहीं मानता। यह लड़ाई ऐसी है कि इसमें हमारा छुटकारा हमारे हाथ है। फिर जबतक बहुत लोगोंने जेलका कष्ट नहीं भोगा तबतक हममें सच्ची हिम्मत नहीं आयेगी। इस प्रकार गिरफ्तार किये जानेवाले लोगोंका बचाव श्री गांधी मुफ्त करेंगे, यह लिखा जा चुका है। बचानेका अर्थ इतना ही है कि उस-जैसे बहादुरको जेलके लिए विदाई देने जायेंगे। मुझे खेद है कि परवानेके बारेमें यदि कोई जुर्माना न दे तो उसे जेलकी सजा होगी। लालच बुरी चीज है और यदि कोई उस लालचमें आकर जुर्माना दे देगा तो बहुत बुरा होगा। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि सब भारतीय अन्तःकरणसे यह शपथ ले लेंगे कि इस सम्बन्धमें वे अपना या दूसरोंका जुर्माना नहीं देंगे।
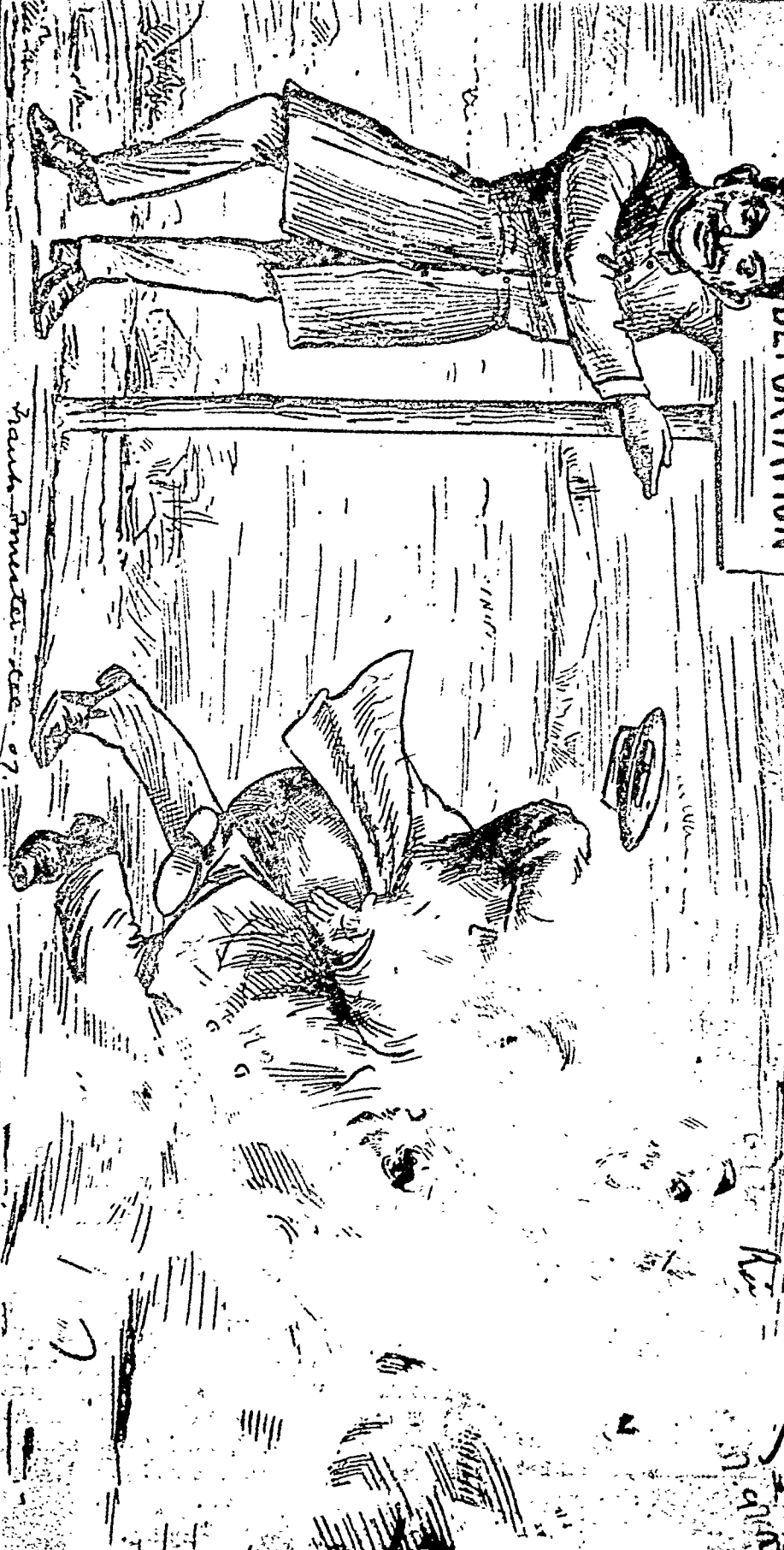
THE GOVERNMENT: "Whew! Never thought of meeting *This!* Hard I p!" (Left

श्री गांधी: देशनिकाला देनेका अधिकार ही नहीं है!
सरकार: "अरे! *इसका* सामना करना पड़ेगा, यह तो सोचा ही नहीं था! बुरे फँसे!" (भाग गये)

e . assive

Resister.

DESPERADO :—Prepare to meet your end!

PASSIVE RESISTER (Mr. Gandhi) :—Yea, brother Smuts, I am prepared. Pray do your worst.

DESPERADO :—Heavens, man! Don't say that. The blooming gun won't work!

[Reproduced by kind permission of the *Rand Daily*

डाकू और सत्याग्रही

डाकू: मरनेके लिए तैयार हो जा।

सत्याग्रही (श्री गांधी): हां, भैया स्मट्स, मैं तैयार हूं। कृपाकर कोई कसर बाकी न रखें।

डाकू: अरे मानुस, यह न कहो! यह कमबख्त पिस्तौल चलती ही नहीं।

समझौता कहाँ गया?

जनवरीका विचार बताया इसलिए साधारण सवाल यह उठता है कि समझौता कहाँ गया? उसके खुलासेके लिए कहता हूँ कि मैंने तो पानी आनेके पहले बाँध बाँधा है। समझौतेकी बात तो चल ही रही है। किन्तु मैं देखता हूँ कि सरकारके हाथमें जनवरीमें जो हथियार आनेवाला है उसकी आजमाइश हुए बिना समझौता नहीं होगा। इस बीच भारतीयोंका जोर बहुत बढ़ गया है, यह तो किसीको भी दिखाई दे सकता है। गोरोंके सारे अखबार सरकारको बहुत फटकारते हैं और भारतीयोंकी जय बोलते हैं। तीन महीने पहले यदि कोई ऐसी बात कहता तो उसका मजाक उड़ाया जाता था। किन्तु जैसे गोरोंके अखबार हमारे पक्षमें बोलने लगे हैं, उसी प्रकार यदि जनवरीमें बहुत-से भारतीय जेल चले जायेंगे तो गोरे स्वयं भी तौबा करेंगे, और सरकारसे भारतीयोंके छुटकारेकी माँग करेंगे। समझौता तो केवल नाम है। समझौतेकी डोर हमारे हाथमें है। हम लायक — मर्द साबित होंगे तब सभी समझौता करना चाहेंगे। सत्य और मर्दानगीकी यही महिमा है।

'क्रिटिक' में व्यंग्यचित्र

'क्रिटिक' में इस बार हँसने योग्य व्यंग्यचित्र आया है। एक तरफ एक भारतीय कोड़ा दिखाता हुआ कह रहा है कि आपको निर्वासित करनेकी सत्ता नहीं है, दूसरी ओर जनरल बोथा और उनके मन्त्री भाग रहे हैं। इसको मिलाकर 'अनाक्रामक प्रतिरोध' सम्बन्धी कुल तीन व्यंग्यचित्र निकल चुके हैं।

सरकारकी जिद्द

मालूम होता है कि समझौता करनेवालोंको स्मट्स साहबने टका-सा जवाब दिया है। वे कहते हैं कि कानून रद करने या नोटिस वापस लेनेका उनका कोई इरादा नहीं है। स्मट्स साहबके इस कथनसे किसीको डरना नहीं चाहिए। उन्हें तो बोलनेकी आदत पड़ी हुई है। जब कानूनको अमलमें लायेंगे तब पता चल जायेगा।

जूटनिक [यूटनहेग] से सहायता

जूटनिकके भारतीयोंसे लड़ाईमें जो मदद मिली है, उसके लिए संघने उनका आभार माना है। मुझे आशा है कि दूसरे लोग भी उनका अनुकरण करेंगे। पोर्ट एलिजाबेथके भारतीयोंने चन्दा इकट्ठा किया हो तो वह [संघको] भेज देना चाहिए।

द० आ० ब्रि० भा० समितिको मदद

पॉचेफस्ट्रूमसे श्री रतनजी लखमीदासकी मारफत वहाँके हिन्दुओंकी ओरसे १६ पौंड ८ शिलिंग और ६ पैंस तथा श्री नानजी घेलाकी ओरसे ५ पौंड दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके लिए मिले हैं। इसी प्रकार दूसरे भारतीयोंकी ओरसे भी मदद मिलती रहे तो समितिके काममें अड़चन नहीं आयेगी। हालमें श्रीमती रिचकी सख्त बीमारीके कारण श्री रिचको जो खर्च करना पड़ रहा है, वह समितिके कोषसे किया गया है, यह सबको याद रखना चाहिए।

भीखा नारण

इस व्यक्तिके बारेमें कुछ बातें लिखी जा चुकी हैं। यह श्री डेल लेसके यहाँ नौकर था। इसे अब बहुत ही पश्चात्ताप हुआ है। इसने अपनी अर्जीकी रसीद संघको भेज दी है।

स्वयं भारत चला गया है, परन्तु गुलामीका पट्टा लेने नहीं गया। इसकी गद्दारीसे इसके सगे-सम्बन्धी सब उत्तेजित हो गये थे और वे इसके साथ अपना व्यवहार बन्द करनेवाले थे। किन्तु अब यह स्वदेश चला गया है, इसलिए मालूम होता है कि वे शान्त हो गये हैं। इस उदाहरणसे प्रकट होता है कि "पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं।" प्राय: यह पाया गया है कि गोरोंकी निम्न नौकरी करनेसे स्वाभिमान खत्म हो जाता है। यह आदमी श्री लेसके यहाँ कपड़े धोनेकी नौकरी करता था।

प्रिटोरियाकी मसजिदमें सिपाही

प्रिटोरियाकी मसजिदमें बनुतखान और हाजी इब्राहीमवाली घटना हो जानेके बाद, झगड़ा न हो, इसलिए हर शुक्रवारको पुलिस आती है। इस प्रकार पुलिसके आनेसे कौमकी बदनामी होती है। और यह मसजिदके मुतवल्लियोंकी कमजोरी मानी जाती है। मुझे आशा है कि इस सम्बन्धमें यदि कुछ भी उपाय न किया गया हो तो वह तुरन्त करके मुतवल्ली पुलिसका आना बन्द करा देंगे।

नये भारतीय वकील

श्री जॉर्ज गॉडफ्रेने १३ तारीखको सर्वोच्च न्यायालयमें न्यायवादीके रूपमें प्रवेश किया है। बहुत करके वे जोहानिसबर्गमें वकालत करेंगे। मैं उन्हें मुबारकबादी देता हूँ। श्री जॉर्ज गॉडफ्रेको मिलाकर श्री सुभान गॉडफ्रेके तीन लड़कोंने विलायतमें शिक्षा प्राप्त की है। अब चौथेको डॉक्टरीके लिए भेजनेकी तजवीज की जा रही है।

एशियाई कार्यालय

श्री बर्जेसको ३१ जनवरी [१९०८]से छुट्टी दे दी गई है। इसी प्रकार प्रिटोरियामें तीन कारकुनोंको छुट्टी मिली है। (उनके नाम बादमें दूंगा)।

कांग्रेसके प्रतिनिधि

श्री अमीरुद्दीन फजंदारका तार आया है कि वे १७ तारीखको सकुशल बम्बई पहुँच गये।

जोहानिसबर्गका गोरा व्यापारी संघ

इस संघकी बैठक इस सप्ताह हुई थी। उसमें इस प्रकारका प्रस्ताव किया गया कि कानूनको अमलमें लानेमें संघको सरकारकी मदद करनी चाहिए और उसे प्रोत्साहन देना चाहिए। एक वक्ताने कहा कि बड़ी सरकारकी ओरसे इस सम्बन्धमें बड़ा दबाव डाला जा रहा है। इसलिए जोहानिसबर्गके लोगोंको मदद करनी चाहिए।

एशियाई कार्यालय

एशियाई कार्यालयमें श्री बर्जेसके अलावा जिन कारकुनोंको कार्य-मुक्त किया गया है वे हैं श्री डॉब्सन, श्री बारकर, श्री फाल्क, और श्री स्वीट।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-१२-१९०७

३३६. पत्र : म० द० आ० रेलवेके महाप्रबन्धकको

[जोहानिसवर्ग]
दिसम्वर २१, १९०७

महाप्रवन्धक
म० द० आ० रेलवे
जोहानिसवर्ग

महोदय,

आज प्रातःकाल मुझे स्टैंडर्टनकी स्थानीय भारतीय समितिका पत्र मिला, जिसका स्वतन्त्र अनुवाद नीचे दिया जा रहा है :

> रेलवे कर्मचारियोंको महीनेके शुरूमें जो खुराक दी गई थी उसका साराका-सारा अवशिष्ट भाग कल (इस मासकी १९ तारीखको) उनसे ले लिया गया और जिन कमरोंमें वे रहते थे उनकी छतें हटा दी गईं। इसलिए वे सभी यहाँ आ गये हैं। समितिने उनके रहनेका प्रवन्ध कर दिया है। उन्होंने कल दोपहर तक काम किया था, लेकिन उनको कलका कुछ भी पारिश्रमिक नहीं दिया गया। उन्होंने प्रार्थना की कि उनको निवासस्थान तलाश करने और वादमें अपने स्त्री-वच्चोंको ले जानेके लिए नगरमें जानेकी अनुमति दी जाये; मगर वच्चों तक को वाहर निकाल दिया गया है।

आपने कृपापूर्वक मुझे यह आश्वासन दिया था और समाचारपत्रोंके नाम आपकी विज्ञप्तिमें भी मैंने यही आश्वासन देखा है कि, आपका महकमा किसी प्रकार "सख्तीसे कार्य-वाही करना या किसी रूपमें अपने अधिकारोंका फायदा उठाना नहीं चाहता"। इसलिए अगर उपर्युक्त सूचनापत्रमें कोई सच्चाई हो तो जो अधिकारी हिदायतोंपर अमल कर रहे थे, वे स्पष्टतया गम्भीर रूपसे कर्तव्यच्युत हो गये हैं। क्या आप इसके वारेमें आवश्यक जाँच करके मुझे सूचित करनेकी कृपा करेंगे?

आपका, आदि,
मो० क० गांधी
अवैतनिक मन्त्री
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१२-१९०७

३३७. भाषण : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें

[जोहानिसबर्ग
दिसम्बर २२, १९०७]

हमें इस विजयके कारण फूल नहीं जाना चाहिए।[1] युद्धके दिनोंमें डच लोगोंने पहले मैदान छोड़ भागनेका ढोंग रचा; बादमें वे अंग्रेजोंपर टूट पड़े। उसी प्रकार सरकार शायद पहले यह दिखाये कि वह हार गई है और आगे चलकर वार कर बैठे। इसलिए हमें तो ऐसा समझना चाहिए कि हमारा संघर्ष आज ही शुरू हुआ है। अगर सरकार परवाने न दे तो हम लोग बिना परवानेके ही व्यापार करते रहें और गिरफ्तार हो जानेपर जुर्माना अदा न करें, जेल भले चले जायें। इसके अतिरिक्त हमें एक एकता-भवनका निर्माण अवश्य करना चाहिए। यह काम बहुत थोड़े धनसे हो जायेगा। उसके द्वारा हम ऐसे भारतीयोंको, जो बेरोजगार हो गये हैं, काम दे सकते हैं। परवानोंके बारेमें जो स्थिति है उसे लोगोंको समझानेके लिए फिर एक सार्वजनिक सभा करनी चाहिए।

चूँकि मौलवी मुख्त्यार साहबके परवानेकी मियाद समाप्त हो रही है, इसलिए श्री गांधीने उससे सम्बन्धित कुछ बातोंकी चर्चा की और फिर संघर्षके बारेमें बताया।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, २८-१२-१९०७

३३८. भाषण : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें[2]

[फ्रीडडॉर्प
दिसम्बर २७, १९०७]

श्री गांधीने कहा : जब मैंने आज प्रातःकाल प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम सम्बन्धी घोषणा पढ़ी, तब पहली बात, जो अपने-आप मेरी जुबानपर आई, यह थी कि लॉर्ड एलगिनने भारतीयोंकी राजभक्तिपर अनुचित भार डाल दिया है। भारतके भूतपूर्व वाइसराय लॉर्ड एलगिन भारतीय परम्पराओंको बिलकुल भूल गये हैं। वे महामहिम सम्राट्को इस कानूनपर मंजूरी देनेकी सलाह देते समय यह बात बिलकुल भूल गये कि वे भारतके लाखों लोगोंके न्यासी हैं। वे बिलकुल भूल गये कि भारत एक ऐसे मार्गपर पग रखनेवाला है जो भारतीय इतिहासमें अज्ञात है। भारत कभी क्रान्तिकारी नहीं रहा; किन्तु आज हम देखते हैं कि कुछ भारतीयोंके मस्तिष्कोंमें क्रान्तिकारी भावना प्रविष्ट हो गई है। जिस दिन भारतमें तीव्र

१. गांधीजीने रामसुन्दर पण्डितकी रिहाईका जिक्र करते हुए हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें भाषण दिया था; देखिए "रामसुन्दर पण्डित", पृष्ठ ४३८ और ३९ भी।

२. हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके भवनमें गांधीजीने शामको एक भरी सभामें भाषण दिया। उसी दिन सुबह उन्हें टेलिफोन द्वारा ट्रान्सवालके कार्यवाहक पुलिस आयुक्त श्री एच० एफ० डी० पेंपनफसका सन्देश मिला था कि गांधीजी उनसे जाकर मिलें। वहाँ पहुँचनेपर उन्हें बताया गया कि उनको तथा थम्बी नायडू (मुख्य धरनेदार, जोहानिसबर्ग), पी० के० नायडू (धरनेदार, जोहानिसबर्ग), सी० एम० पिल्ले, जमादार नवाबखाँ

क्रान्तिकारी भावना पर्याप्त जड़ पकड़ लेगी वह दिन भारतके लिए एक बुरा दिन होगा; किन्तु मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि लॉर्ड एलगिनने उसका बीज बो दिया है। यदि यह बीज छात्र-जगत तक ही सीमित होता तो कदाचित् भारतीय भूमिमें कदापि न पनपता। किन्तु मैं आज देखता हूँ कि व्यापारी, जो अंग्रेजीका एक शब्द नहीं जानता, एशियाई कानूनके सम्बन्धमें नई भावनामें सराबोर है। मुझे इस बातपर गर्व है कि मैंने इस मामलेमें इतना भाग लिया है। किन्तु इसके साथमें इतना और कहता हूँ कि मेरे विचार लोगोंके विचार हैं और उनको प्रकट करते समय मैंने अगर कुछ किया है तो नरमी बरती है। इस कारणसे ही मैंने यह भावना व्यक्त की है कि लॉर्ड एलगिनने इस प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमको मंजूर करके भारतीयोंकी राजभक्तिपर अनुचित भार डाला है। मेरे विचारसे यह विधान एक बर्बर विधान है। यह एक सभ्य सरकारका, जो अपने आपको ईसाई सरकार कहनेकी हिम्मत करती है, जंगली कानून है। यदि ईसा जोहानिसबर्ग और प्रिटोरियामें आयें और जनरल बोथा, जनरल स्मट्स और अन्य लोगोंके हृदयोंको टटोलें तो मेरा खयाल है कि उन्हें कोई अजीब, ईसाइयतकी भावनाके सर्वथा विपरीत, बात मिलेगी।" उन्होंने आगे कहा: "मैं मानता हूँ कि इस कानूनके अनुसार कार्रवाई करनेके लिए जनरल स्मट्सने जिनको चुना है वे जाने-माने लोग हैं और गरीब लोगोंपर हाथ नहीं डाला है। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि यदि उन लोगोंको, जिन्हें न्यायाधीशके सामने पेश होना है, कैदकी या देश-निकालेकी सजाएँ दी गई तो बाकी लोग, जो पीछे रहेंगे, पंजीयन अधिनियमका विरोध दृढ़तासे करेंगे। किन्तु इस पंजीयन अधिनियमसे ऐसे अधिकार मिलते हैं जिनसे बेचारे पतियोंपर बहुत संकट आयेंगे। उनको अपने परिवारोंसे पृथक् किया जा सकता है। हम श्री नायडूके, जो सारे आन्दोलनमें खूब चमके हैं, मामलेका उदाहरण ही लें। उनके पत्नी और पाँच बच्चे हैं, जो उपनिवेशमें पाँच सालसे रह रहे हैं। यदि श्री नायडूको देश-निकाला दे दिया गया तो क्या होगा? उनकी पत्नी और उनके बच्चोंकी देखभाल कौन करेगा? मुझे कानूनमें एक भी ऐसी धारा नहीं मिल सकी है जिससे निर्वासितोंके परिवारोंकी रक्षा होती हो। सरकार करना क्या चाहती है? उसमें भारतीयोंसे इतना कहनेकी ईमानदारी क्यों नहीं है कि देशमें उनकी आवश्यकता नहीं है? वह अपने अधिकारोंको लागू करनेके लिए यह अप्रत्यक्ष तरीका क्यों काममें लाती है? मैंने कानूनकी कुछ धाराओंको जंगली और केवल एक असभ्य सरकारके योग्य कहा है। यदि इन अधिकारोंका इस प्रकार प्रयोग किया जाये और हम सबको निर्वासित

(धरनेदार, जोहानिसबर्ग), करवा (भूतपूर्व सिपाही, जोहानिसबर्ग), ल्यूंग क्विन (अध्यक्ष चीनी संघ, जोहानिसबर्ग), जॉन फोर्तोइन (चीनी धरनेदार), मार्टिन ईस्टन (जोहानिसबर्ग), रामसुन्दर पण्डित (जर्मिस्टन), जी० पी० व्यास (प्रिटोरिया), ए० एफ० सी० बेग (प्रिटोरिया), एम० आई० देसाई (मुख्य धरनेदार, प्रिटोरिया), ए० एम० काछलिया (प्रिटोरिया), इस्माइल सुलेमान सूज (प्रिटोरिया), गुलाम मुहम्मद अब्दुल रशीद (प्रिटोरिया), वी० गंगाराम (प्रिटोरिया), वी० यू० सेठ (प्रिटोरिया), इस्माइल जूमा (प्रिटोरिया), रहमत खाँ (प्रिटोरिया), एम० एम० खंडेरिया (पीटर्सबर्ग), अमरशी गोकुल (पीटर्सबर्ग), और अम्बालाल (पीटर्सबर्ग), की गिरफ्तारीके हुक्म हो चुके हैं। गांधीजीने वचन दिया कि सभी दूसरे दिन शनिवार दिसम्बर २८को सुबह १० बजे अपने-अपने न्यायाधीशोंके सामने हाजिर होंगे। श्री पेपेनफ़ुसने यह जमानत स्वीकार कर ली। देखिए **इंडियन ओपिनियन**, ४-१-१९०८।

या कैद कर दिया जाये तो यह हमारे लिए सम्मानकी बात है। हमारे लिए सम्मानजनक यह नहीं होगा कि हम अपने पुनीत कर्तव्योंको त्याग दें और अपने मनुष्यत्व और आत्म-सम्मानको तिलांजलि दे दें -- केवल इसलिए कि हम कुछ तुच्छ पेंस या पौंड कमा रहे हैं। मैंने आपको जो सलाह दी है उसपर मुझे कभी खेद न होगा। आपने यह लड़ाई, जो १५ महीनेसे चालू है, अच्छी तरहसे लड़ी है।[1] यह एक ऐसा कानून है जिसको कोई भी आत्म-सम्मानी राष्ट्र या व्यक्ति स्वीकार नहीं कर सकता -- सो इसके नियमोंके कारण नहीं, बल्कि इस कारण कि यह निकृष्टतम ढंगका वर्गीय कानून है, जिसका आधार है समाजके प्रति सरासर अविश्वासका भाव और निराधार दोषारोपण। हमने लॉर्ड सेल्बोर्न और जनरल स्मट्ससे कहा है कि इन आरोपोंको एक निष्पक्ष न्यायालयके सम्मुख सिद्ध किया जाना चाहिए। ये ऐसे व्यक्ति द्वारा लगाये गये हैं जो पक्षपातमें डूबा हुआ है और तथ्यको परख सकनेमें असमर्थ है। सरकार यह बात क्यों नहीं मान रही है कि उन्हें जो कमसे-कम दिया जा सकता है, वह है निष्पक्ष जाँच। "श्री गांधीने इस तथ्यके सम्बन्धमें कुछ नहीं कहा कि भारतीयोंको कोई प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं है; किन्तु उन्होंने यह चर्चा अवश्य की कि सरकार उन लोगोंकी भावनाओंके सम्बन्धमें इतनी कठोर क्यों है जिनका कोई प्रतिनिधित्व नहीं है। (उन्होंने आगे कहा,) "मुझे यह मालूम होता है कि अब हमारे अलग-अलग होनेका वक्त आ गया है। यदि साम्राज्य सरकार भारतके लोगोंपर, संगीनकी नोकके बल नहीं, बल्कि उनके प्रेमके बल अपना आधिपत्य बनाये रखना चाहती है तो उसको झिझकना चाहिए। इंग्लैंडको भारत और उपनिवेश दोनोंमें से एकको चुनना पड़ सकता है। सम्भव है, ऐसा आज या कल न करना पड़े, किन्तु मेरा खयाल है कि लॉर्ड एलगिनके कार्यसे इसके बीज वपित हो गये हैं। मैंने जब एशियाई अधिनियममें प्रवासी अधिनियम ऊपरसे जोड़ा हुआ देखा तब नर्म शब्द चुनना या अपनी आलोचनाको संयमित करना मेरे लिए सम्भव नहीं रहा। एक कहानी है कि मुहम्मद और उनके दो[2] अनुयायी एक बड़ी शत्रु-सेना द्वारा पीछा किया जानेपर एक गुफामें आश्रय ले रहे थे। उनके साथी निराश होकर पूछने लगे कि इतने बड़े सैन्य-बलके मुकाबले हम तीन क्या कर सकेंगे। मुहम्मदने कहा: "तुम कहते हो, हम तीन हैं; मैं कहता हूँ हम चार हैं, क्योंकि ईश्वर हमारे साथ है, और उसके हमारी ओर होनेसे हम जीतेंगे।" ईश्वर हमारे साथ है, और जबतक हमारा उद्देश्य अच्छा है, तबतक हम यह खयाल तनिक भी नहीं करते कि सरकारको क्या अधिकार दिये जाते हैं, या वे अधिकार कितनी बर्बरतासे प्रयोगमें लाये जाते हैं। मैं तो तब भी यही सलाह दूँगा जो मैंने पिछले १५ महीनेसे देनेकी हिम्मत की है।[3]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-१-१९०८

१. यह संघर्ष सितम्बर १९०६ में आरम्भ किया गया था। देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४२८-३४।

२. मूलमें तीन है।

३. सभामें सर्वसम्मतिसे एक प्रस्ताव पास किया गया जिसमें प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमका विरोध किया गया था और जिसकी नकल उच्चायुक्तकी मारफत साम्राज्य-सरकारको भेजी जानेवाली थी।

३३९. डेलागोआ-बेके भारतीय

हम अन्यत्र उन उल्लेखनीय नियमोंका[1] पूर्ण पाठ प्रकाशित कर रहे हैं, जिन्हें डेलागोआ-बेकी स्थानीय सरकारने एशियाइयोंके आव्रजनपर प्रतिबन्ध लगानेके लिए बनाया है। ये नियम तीन प्रकारके प्रवासियों, अथवा यों कहिए कि एशियाई पर्यटकोंके बारेमें है: (१) डेलागोआ-बेको छोड़कर जानेवालोंके बारेमें; (२) डेलागोआ-बेमें बाहरी जिलोंसे आनेवालोंके बारेमें; (३) एशियाकी पुर्तगाल बस्तियोंसे आनेवाले एशियाई लोगोंके बारेमें। इन नियमोंमें अवश्य ही ट्रान्सवालकी गन्ध है। गवर्नर जनरलके पास डेलागोआ-बेके जो एशियाई गये उनसे कहा गया कि ये नियम इसलिए आवश्यक हैं "कि प्रान्तपर आसपासके उपनिवेशोंसे एशियाई प्रवासियोंकी भारी भीड़के आनेका खतरा है, और ये नियम केवल अस्थायी हैं।" हमको विश्वास है कि गवर्नर जनरलके इस स्पष्टीकरणसे डेलागोआ-बेके भारतीय सन्तुष्ट होकर नहीं बैठ जायेंगे। वास्तवमें पुर्तगाली इलाकेमें ट्रान्सवालसे कोई भीड़ नहीं आती और यदि आती भी हो तो उस प्रान्तमें पहलेसे बसे हुए ब्रिटिश भारतीयोंको तंग करनेमें कोई औचित्य नहीं है। उदाहरणार्थ, वे बाहर जानेके लिए अपने पास एक विशेष अनुमतिपत्र क्यों रखें? हमें मालूम हुआ है कि उनको स्थायी दस्तावेज पहले ही दिये जा चुके हैं। फिर, भारतीय लोग परवानोंके बिना अथवा इस बातका प्रमाण दिये बिना, कि वे न तो अपराधी हैं और न दिवालिए, डेलागोआ-बेसे क्यों नहीं जा सकते? यह हो सकता है कि एक खास परिस्थितिमें इस प्रकारकी दूरन्देशी सम्भवतः सार्वजनिक न्यायकी दृष्टिसे उचित हो, किन्तु एशियाइयोंने अपराध तथा दिवालियेपनका ठेका तो नहीं ले लिया है। यूरोपीय बिना यह साबित किये, कि उन्होंने न तो अपराधीके रूपमें कानूनोंको तोड़ा है और न दिवालिये बने हैं, डेलागोआ-बेसे चाहे जितनी बार आ-जा सकते हैं। इन कठोर नियमोंका एकमात्र अच्छा पहलू यह है कि पुर्तगाल सरकारने उन एशियाइयोंमें भेदकी विभाजक रेखा खींचना जरूरी समझा है जो उसकी अपनी प्रजा हैं तथा जो उसकी अपनी प्रजा नहीं हैं। अन्य उपनिवेशोंकी ब्रिटिश सरकारोंने ऐसा नहीं किया है। हमारा विश्वास है कि डेलागोआ-बेके एक विदेशी राज्य होनेके कारण लॉर्ड एलगिन इन परेशान करनेवाली पाबन्दियोंसे छुटकारा दिलानेका कोई-न-कोई तरीका खोज निकालेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–१२–१९०६

१. यहाँ प्रकाशित नहीं किये गये। "डेलागोआ-बेके भारतीय" पृष्ठ ४५० भी देखिए।

३४०. बेरोजगार लोगोंका क्या किया जाये?

हमारे इस बारके अंकमें पाठक देखेंगे कि स्टैंडर्टन तथा हाइडेलबर्गमें रेलवेमें काम करने-वाले भारतीय बेरोजगार हो गये हैं। और उसका कारण यह है कि उन्होंने खूनी कानूनके सामने झुकनेसे इनकार किया है। इस प्रकार यदि बहुतसे लोग बेरोजगार हो जायें तो क्या किया जाये यह विचार हर भारतीयको करना चाहिए। हम कई बार कह चुके हैं कि जेल जानेसे जो आर्थिक नुकसान हो वह जेल जानेवालेको स्वयं बर्दाश्त कर लेना चाहिए। उसमें समाज मदद नहीं कर सकता। किन्तु जब सैकड़ों लोग भूखों मरने लगें तब हम कुछ विचार न करें तो यह बड़ी क्रूरता होगी। इसके अलावा, हमने पढ़ा है कि "पेट कराये बेगार, पेट बाजा बजवाये।" पेटके लिए भारतमें अकालग्रस्त लोग अपने बच्चोंको बेच देते हैं। तब इस पापी पेटके लिए लोग पंजीयनपत्र लेनेको तैयार हो जायें तो उसमें अनोखी बात नहीं होगी। यानी, यदि बहुत-से लोग बेरोजगार हो जायें तो उनकी मदद करना बिलकुल जरूरी हो जायेगा। इस विचारको समझकर हर भारतीयको, जितनी हो सके उतनी सहायता, संघके नाम जोहानिसबर्ग भेजनी चाहिए। पैसा प्राप्त होनेके बाद क्या किया जाये यह दूसरा प्रश्न है जिसपर हमें सोचना है। यदि लोगोंको, बिना कुछ काम लिये, रोजाना पैसा या भत्ता दिया जाता रहे तो उससे पाप बढ़ेगा, और इतना निश्चित है कि उसका असर पैसा या भत्ता लेनेवालेपर बुरा होगा। इसलिए हम मानते हैं किसी-न-किसी सार्वजनिक काममें उनकी मदद अवश्य ली जाये। श्री गांधीने एक बड़ा सभा-भवन बनानेका सुझाव रखा है। यह काम बड़ा है, करने योग्य है और अधिकांश भारतीय मदद करें तो सहज ही हो सकता है। इससे तीन काम बनते हैं। ट्रान्सवालमें कौमको राजकीय कामोंके लिए एक बड़ा भवन मिल जायेगा, बेरोजगार भारतीयोंका पोषण होगा और वैसा भवन बनानेसे भारतीय लड़ाईको जबर-दस्त विज्ञापन मिलेगा। यदि ट्रान्सवालके भारतीय सभा-भवन बनवायें तो उसका लाभ उन्हें ही होगा यह समझकर ट्रान्सवालसे बाहरके भारतीय हाथपर-हाथ धरे न बैठे रहें। सभा-भवन बने या न बने, बेरोजगार लोगोंको काम तो देना ही होगा। इसलिए हर भारतीयको इस बातका ध्यान रखना चाहिए। यदि सभा-भवन बनाया जाता है तो बहुत-सा खर्च ट्रान्सवालके भारतीयोंको स्वयं ही उठाना होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१२-१९०७

३४१. बहादुर स्त्रियाँ[1]

इंग्लैंडकी स्त्रियोंने हद कर दी है। भारतीय समाजकी लड़ाई जब ट्रान्सवालके खूनी कानूनके खिलाफ शुरू हुई तब इंग्लैंडकी स्त्रियोंकी मताधिकारकी लड़ाईको चले कई महीने बीत चुके थे। उन स्त्रियोंकी लड़ाई अभी चालू है और वे जरा भी थकी नहीं हैं। उनकी बहादुरी और धीरजके सामने ट्रान्सवालके भारतीयोंकी लड़ाई कुछ भी नहीं है। इसके अलावा इंग्लैंडकी स्त्रियोंको तो बहुत-सी स्त्रियोंके भी खिलाफ जूझना पड़ता है। मताधिकार माँगने-वाली स्त्रियोंसे न माँगनेवाली स्त्रियोंकी संख्या बहुत ज्यादा है। इतना होनेपर भी वे मुट्ठी-भर स्त्रियाँ हार नहीं मान रही हैं। रोज-ब-रोज वे जितनी ठोकरें खाती हैं उनकी ताकत उतनी ही अधिक बढ़ती जाती है। उनमें से बहुत-सी जेल जा चुकी हैं। घृणित और नामर्द मर्दोंकी ठोकरों और पत्थरोंकी मार ये स्त्रियाँ खा चुकी हैं। पिछले सप्ताह तार था कि उन्होंने अपनी लड़ाईको और भी व्यापक बनानेका निर्णय किया है। स्त्रियों या उनके पतियोंको सरकारको मकान आदिके कई कर देने होते हैं। यदि कर न दें तो उनका माल नीलाम किया जा सकता है और जेलमें भी जाना पड़ता है। अब स्त्रियोंने निर्णय किया है कि "जबतक हमें अपने अधिकार नहीं मिलते तबतक हम कर वगैरा नहीं देंगी, बल्कि अपना माल नीलाम होने देंगी और जेल जायेंगी।"

यह बहादुरी और धैर्य ट्रान्सवालके भारतीय तथा सारे भारतीय समाजके लिए आदर्श है। बिना परवानेके व्यापार करनेके कारण यदि नेटालके भारतीयोंका माल नीलाम हो जाये तो वह उन्हें भारी मालूम होगा। किन्तु इस प्रकार सोचनेवाले यह नहीं समझते कि बहुत लोगोंका माल सरकार नीलाम नहीं कर सकती। और नीलाम करे भी तो क्या हुआ? स्त्रियाँ मताधिकार जैसे हकके लिए अपनी जायदाद कुर्बान कर देती हैं तब हम जीविकाके लिए लड़ते हुए मोहके कारण लड़ाईमें इतना कष्ट भी नहीं सहन कर सकते? स्त्रियोंकी लड़ाई कई वर्ष चलेगी; परन्तु वे बिना हारे या बिना थके लड़ती रहेंगी। आज लड़नेवाली स्त्रियाँ उस अधिकारका उपयोग नहीं कर पायेंगी, फिर भी ऐसा मानकर कि अगर वह बादकी पीढ़ीको मिले, तब भी हमें ही मिलने जैसा हुआ, वे सत्यके आधारपर जूझ रही हैं। भारतीयोंको भी इसी दृष्टिसे लड़ना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१२-१९०७

१. देखिए "इंग्लैंडकी बहादुर नारी", पृष्ठ ६५।

३४२. डेलागोआ-बेके भारतीय

डेलागोआ-बेमें भारतीयोंको रोकनेके लिए बनाये गये सारे कानून इस अंकमें छाप रहे हैं। इसकी धाराएँ बहुत ही बुरी हैं। जान पड़ता है इस सम्बन्धमें भारतीय लोग गवर्नरसे मिल चुके हैं। परन्तु इसका कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिला। यह कानून यदि कायम रहा तो प्रतिष्ठित भारतीयोंको भी डेलागोआ-बे जाते समय अपनी तस्वीरवाला अनुमतिपत्र रखना पड़ेगा। ट्रान्सवालसे जानेवाले व्यक्तिको तभी अनुमतिपत्र दिया जाता है जब यह साबित हो जाये कि उसे वापस ट्रान्सवाल लौटनेका अधिकार है। यह सारा पाखण्ड प्रिटोरियासे पैदा हुआ है। किसी भारतीयको यदि सदाके लिए डेलागोआ-बे छोड़ना हो, तो भी वह बिना अनुमतिपत्रके नहीं छोड़ सकता। छोड़ तभी सकता है जब वह साबित कर दे कि उसने स्वयं कभी अपराध नहीं किया और वह दिवालिया नहीं है। यह एक और तथा अलग प्रकारके जुल्मका श्रीगणेश माना जायेगा। इस कानूनसे भारतकी पुर्तगाली प्रजाको मुक्त रखा गया है।

क्या डेलागोआ-बेके भारतीय ऐसे कानूनके सामने झुकेंगे? मौलवी साहब अहमद मुख्त्यार जब डेलागोआ-बेसे लौटे, उन्होंने वहाँके भारतीयोंके आलस्य और लापरवाहीका बढ़िया चित्र खींचा था। यदि डेलागोआ-बेका भारतीय समाज अब भी आलस्य नहीं छोड़ेगा और आवश्यक कार्रवाई नहीं करेगा तो वह सारे भारतीयोंके तिरस्कारका पात्र बन जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१२-१९०७

३४३. दाउद मुहम्मदको बधाई

श्री दाउद मुहम्मदकी लड़की आशाबीबीका विवाह उनके भतीजे श्री गुलाम हुसैनके साथ हुआ। इसका संक्षिप्त विवरण हम पिछले सप्ताह दे चुके हैं। अब हम उन्हें, उनकी लड़कीको और दामादको बधाई देते हैं और कामना करते हैं कि दम्पती सुखी और दीर्घायु हों। किन्तु सच्ची बधाई तो, श्री दाउद मुहम्मदने विवाहके समय जिस सादगीसे काम लिया और जो भाईचारा बरता, उसके लिए दी जानी चाहिए। धर्मके साधारण नियमोंका लोग पालन करें तो उससे वे सुखी हो सकते हैं, सादगीका पालन किया जा सकता है और बेकार खर्चकी परेशानियोंसे बचा जा सकता है। श्री दाउद मुहम्मदने विवाह शरीअतके अनुसार किया। नतीजा यह हुआ कि इस विवाहमें बेकारका आडम्बर बिलकुल नहीं था। इस उदाहरणका मतलब यह है कि गलत रिवाजोंको छोड़कर धार्मिक रीतिसे विवाह करें। यह सबके लिए अनुकरणीय है। श्री दाउद मुहम्मदने निकाहके समय जो भाईचारा बरता उसे भी हम ऐसा

ही मानते हैं। यदि इसी प्रकार सब करने लगें तो विभिन्न धार्मिक या राजकीय संगठनोंको पैसेकी जो तंगी होती है वह नहीं भोगनी पड़ेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–१२–१९०७

३४४. कुछ अंग्रेजी शब्द

स्वदेशाभिमानकी एक शाखा यह भी है कि हम अपनी भाषाका मान रखें, उसे ठीक तरहसे बोलना सीखें और उसमें विदेशी भाषाके शब्दोंका उपयोग यथासम्भव कम करें। गुजरातीके कोई अच्छे शब्द हमें नहीं सूझे, इसलिए हम कुछ अंग्रेजीके शब्द जैसेके-तैसे काममें लाते रहे हैं। उनमें से निम्नांकित कुछ शब्द हम पाठकोंके सामने पेश करते हैं। जो-कोई उनके लिए अच्छे शब्द बतायेगा और जिसके शब्द स्वीकार किये जायेंगे उसका नाम हम प्रकाशित करेंगे, और कानूनकी जो पुस्तक हमने प्रकाशित की है उसकी दस प्रतियाँ उसे भेंटमें देंगे, जिससे वह उनका प्रचार कर सके। पुस्तक भेंट करनेका उद्देश्य प्रलोभन देना नहीं, बल्कि सम्मान देना और खूनी कानूनके बारेमें जानकारीका प्रचार करना है। हम चाहते हैं कि हमारे पाठक वह भेंट पानेके लिए नहीं, बल्कि स्वदेश हितके लिए कष्ट उठाकर हमें इन शब्दोंकी जानकारी दें। शब्द निम्नानुसार हैं:

पैसिव रेज़िस्टेन्स; पैसिव रेज़िस्टर; कार्टून; सिविल डिसओबिडिएन्स।

इनके अलावा और भी शब्द हैं। किन्तु उनपर फिर विचार करेंगे। उपर्युक्त अंग्रेजी शब्दोंका हम शब्दार्थ नहीं उनका भावार्थ चाहते हैं। यह बात पाठक ध्यानमें रखें। शब्द संस्कृतसे निकले हुए हों या उर्दूसे, वे काम आयेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–१२–१९०७

३४५. भारतकी दशा

जोहानिसबर्गवाले श्री दादाभाईके बड़े लड़केकी मृत्युके समाचारसे हमारे मनमें कई तरहके विचार आये हैं। भारतमें ऐसी मृत्युएँ हर वर्ष लाखोंकी संख्यामें होती हैं। प्लेगसे गाँवके-गाँव उजड़ गये हैं। कुटुम्बके-कुटुम्ब नष्ट हो गये हैं। माँ-बाप और बच्चे — सभीके महामारीसे खत्म हो जानेके समाचार बहुधा हमारे पढ़नेमें आया करते हैं।

और जगहोंमें भी महामारी होती है, किन्तु वहाँ भारत जितना नाश नहीं करती। इसका कारण क्या है? यह प्रश्न हर भारत-हितेच्छुके मनमें आये बिना नहीं रहता होगा। हमारी रायमें इस प्रश्नके उत्तरमें भारतके सभी हितोंका समावेश हो जाता है। प्रश्न करना सरल है, किन्तु उत्तर देना कठिन है। और उत्तर देकर सुननेवालोंका समाधान कर देना और भी मुश्किल है।

फिर भी कुछ हदतक उत्तर देनेका प्रयत्न करना ठीक समझकर उत्तर दे रहा हूँ। कई पहलुओंसे विचार करके देखनेपर मालूम होगा कि भारतमें महामारी, भुखमरी वगैरह बढ़ गई हैं। इसका कारण भारतीय प्रजाका पाप है। यदि कोई कहे कि राज्यकर्ताओंका पाप है तो यह बात हमें मान्य है। उनके पापके कारण प्रजा दुःखी होती है, यह सदाका अनुभव है। किन्तु याद रखने योग्य बात यह है कि पापी सरकार पापी प्रजाको ही मिलती है। इसके अलावा, सच्चा नियम यह है कि दूसरोंको दोष देनेके बदले अपने दोषोंकी छानबीन करना अधिक लाभप्रद होता है।

हिन्दू-मुसलमानके बीच फूट और कटुता पाप हैं। किन्तु ये असल पाप नहीं हैं। फूट मिट जाये और दोनों कौमें मिलकर रहने लगें तो विदेशी शासन हट जायेगा अथवा उसकी नीतिमें परिवर्तन होगा। किन्तु उससे प्लेग और अकाल भी मिट ही जायेंगे, ऐसा माननेका कोई कारण नहीं।

मुख्य पाप तो भारतीय प्रजाका असत्य है। महामारीके समय हम सरकारको तथा अपने आपको धोखा देते हैं। ऊपरसे सफाई रखनेका दिखावा करते हैं, किन्तु सच्ची स्वच्छता नहीं रखते। घरको धुआँ देकर शुद्ध करना हो तो उसका केवल दिखावा किया जाता है। यदि उसके बिना चल सकता हो, सिपाहियोंको रिश्वत दी जा सकती हो, तो वह देकर हम आवश्यक कामोंसे बच जाते हैं। यह रोग बचपनसे ही चलता रहता है। शालामें एक बात सिखाई जाती है। वहाँ बच्चा 'हाँ' कह देता है। घर आनेपर उससे उलटा ही बरतता है। वैसा करनेमें माता-पिता सम्मत रहते हैं। स्वच्छता रखनी चाहिए या नहीं, इस सम्बन्धमें नियम बनाये जाते हैं। किन्तु उनका पालन किया जाये या नहीं, इस बातको हम ताकपर रख देते हैं। उसके बारेमें मतभेद भले हो, किन्तु यहाँ जो बात सिद्ध करना चाहता हूँ सो यह है कि हम असत्यका सहारा लेते हैं। बहुतेरी बातोंमें हम केवल आडम्बर करते हैं। इससे हमारे तन्तु ढीले पड़ जाते हैं, हमारा खून पापकी गन्दगीसे बिगड़ जाता है और हर तरहके कीटाणुओंके वशमें हो जाता है। देखनेमें आता है कि अमुक वर्णोंको महामारी वगैरह नहीं होती। इसका कारण यह है कि वे स्वच्छताका या और किसी प्रकारका आडम्बर नहीं करते, बल्कि वे जैसे हैं वैसे ही दिखते हैं। उन्हें आडम्बर करनेवालोंकी अपेक्षा उस हद तक हम ऊँचा समझते हैं। उपर्युक्त कथनका मतलब यह नहीं कि सभी इसी तरह करते हैं। लेकिन अधिकतर वैसा होता है।

उपर्युक्त पापमें से एक दूसरी लत पैदा हुई है और वह सभी वर्गोंमें है, और भयानक है; वह है विषय-लोलुपता — व्यभिचार। इस विषयमें संक्षेपमें ही लिखा जा सकता है। सामान्यतः इसकी चर्चा करते हुए लोग हिचकते हैं, हम भी हिचकते हैं। फिर भी अपने पाठकोंके सामने यह विचार रखना हम अपना फर्ज समझते हैं। पर-स्त्री संग ही केवल व्यभिचार नहीं है। स्व-स्त्री संगमें भी व्यभिचार है। यह सब धर्मोंकी शिक्षा है। स्त्री-संग केवल प्रजा उत्पन्न करनेके लिए ही ठीक है। सामान्यतः देखनेमें आता है कि व्यभिचार भावनासे संग किया जाता है, और उसके परिणामस्वरूप सन्तान उत्पन्न होती है। हम मानते हैं कि भारतकी दशा इतनी खराब है कि इस समय बहुत ही कम सन्तान-उत्पत्ति होनी चाहिए। इसका मतलब यह हुआ कि यदि संग हो तो वह बहुत-कुछ व्यभिचारमें ही शामिल होगा।

यदि यह मान्यता ठीक हो तो समझदार भारतीयका कर्तव्य है कि या तो वह बिलकुल शादी न करे और यदि वह उसके वशकी बात न हो तो स्त्री-संग करनेसे मुक्त रहे। यह सब कठिन काम है, फिर भी बिना किये छुटकारा नहीं है।

नहीं तो पाश्चात्य प्रजाका अनुकरण करना होगा। पाश्चात्य प्रजा राक्षसी उपाय बरतकर सन्तान-निरोध करती है। वह युद्धमें बहुत लोगोंका नाश होने देती है, और ईश्वरपर से आस्था छोड़कर दुनियाई सुखोंमें ही रची-पची रहनेकी तजवीज करती है। इस तरह करके भारतीय भी उनकी ही तरह महामारी आदिसे मुक्त रह सकते हैं। किन्तु हम मानते हैं कि भारतमें पश्चिमका राक्षसी रंग प्रवेश नहीं कर सकता।

यानी भारत या तो खुदा — ईश्वर — की ओर एक नजर रखकर पापमुक्त होगा और सुखी रहेगा या सदा गुलामीमें रहकर, जनाना बनकर, मौतसे डरते हुए, महामारी वगैरह बिमारियोंमें सड़कर बिना मौत मरता रहेगा।

ये विचार किसीको आश्चर्यजनक, किसीको हास्यास्पद, किसीको अज्ञानपूर्ण मालूम होंगे। फिर भी हम बेधड़क लिख रहे हैं और समझदार भारतीयोंसे प्रार्थना करते हैं कि वे इनपर पूरी तरह विचार करें। पागलपनके हों या सयाने, ये विचार लेखकने अपने गहरे अनुभवके आधारपर लिखे हैं। इनके अनुसार आचरण करनेसे नुकसान तो होगा ही नहीं। सत्यके सेवन और ब्रह्मचर्यके पालनसे किसीको नुकसान नहीं होता। कोई यह भी न माने कि एक दो व्यक्तियोंके पालनेसे प्रजाको क्या लाभ होगा। ऐसा कहनेवाले व्यक्तिको नादान समझना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१२-१९०७

३४६. अरबी ज्ञान

प्राच्य देशोंके ज्ञानके विषयमें कतिपय पुस्तकोंपर हम इसके पहले विचार[1] कर चुके हैं। सूचित विषयपर उन्हीं लेखकोंकी लिखी हुई उपर्युक्त पुस्तक हमें देखनेको मिली है। यह बताना शायद ही आवश्यक है कि वह पुस्तक अंग्रेजीमें है। उसकी कीमत सिर्फ एक शिलिंग है। उसमें बहुत-से फिकरे 'कुरान शरीफ' से लिये गये हैं। विभिन्न विषयोंपर अरबी विद्वानोंके वचन दिये गये हैं। उदाहरणके लिए कुलीनताके विषयमें लिखा है कि "जो मनुष्य अपने मानकी रक्षा नहीं करता, उसकी कुलीनतापर कलंक लग जाता है। . . . नीच घरमें जन्म लेनेका दोष विद्या और उत्तम आचरणसे दूर हो जाता है"।[2] मानपर आधारित संघर्षपर लागू होने-वाले वचन-रत्न इस पुस्तकमें हैं। कवि कहता है, "जो व्यक्ति अपने सम्मानको अक्षुण्ण रखता है, लोग उसके दोष नहीं देखते।" फिर कहा है, "यदि मनुष्योंकी दृष्टिमें लज्जाके योग्य कोई बात तुम्हारे दिलमें हो तो उससे शरमाओ।" फिर कहा है, "जो मनुष्य अपने सम्मानकी रक्षा नहीं कर सकता, वह दूसरेको सम्मान नहीं दे सकता।" आगे चलकर दूसरी जगह लिखा

१. देखिए "पूर्वका ज्ञान", पृष्ठ ४२-४३ और "पूर्व ज्ञान-माला", पृष्ठ ९९।

२. यहाँ दिये गये उद्धरणोंको **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित अंग्रेजी समीक्षासे मिला लिया गया है।

है, "जो व्यक्ति अपने सम्मानको अक्षुण्ण नहीं रखता और बेशर्म होकर जीता है, उसका जीवन व्यर्थ है और उसे इस जीवनमें सुख नहीं मिलता।" आचरणके विषयमें कहा है कि "जो मनुष्य सचमुचमें नीतिवान नहीं है, वह धार्मिक नहीं कहा जा सकता।" ज्ञानके विषयमें लिखते हुए कहा है, "जिस प्रकार विना हथियारके वीर पुरुष लाचार हो जाता है, उसी प्रकार साधारण मनुष्य विना विद्याके निकम्मा होता है।" "राजा मनुष्योंपर राज्य करते हैं। बुद्धिमान मनुष्य राजाओंपर।" "बुद्धिमान मनुष्य वह है जो गलत रास्तेपर पाँव नहीं रखता। वह नहीं जो पहले दोपमें पड़कर बादमें उससे निकलनेका रास्ता ढूँढ़ता है।" सत्यके विषयमें कहा है कि "जिस मनुष्यका मन साफ नहीं है, उसका कोई धर्म नहीं है और जिसकी वाणी निर्दोष नहीं है उसका हृदय स्वच्छ नहीं है।" "जो नमाज पढ़ता है और रोजा रखता है, पर साथ-साथ झूठ भी बोलता है, वचनकी रक्षा नहीं करता, वह अपना कर्तव्य पूरा नहीं करता। उस मनुष्यको ढोंगी समझो।" इस छोटी-सी पुस्तिकामें ऐसे स्वर्ण-वचन समाये हुए हैं। जो अंग्रेजी समझ सकते हैं, ऐसे सभी व्यक्तियोंको हम यह पुस्तिका खरीदनेकी सलाह देते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–१२–१९०७

३४७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

सार्वजनिक सभा

बुधवार, जनवरी १ को चार बजेसे सूरती मसजिदके सामने भारतीयोंकी एक सार्वजनिक सभा होगी। उसमें जनवरी तथा उसके बादकी परवाने आदि सम्बन्धी लड़ाईकी बाबत विचार किया जायेगा। आशा है हर जगहके भारतीय आकर उसमें शामिल होंगे।

परवानेके बारेमें विचार

इस विषयमें कुछ विचार तो हम पिछले सप्ताह कर चुके हैं। किन्तु अभी और भी विचार करना चाहिए। सच्ची लड़ाई परवानेकी होगी, यह माना जा सकता है। इतना निश्चित है कि परवानेके विना व्यापार करना होगा। विचार करनेपर मालूम होता है कि सभी धन्धोंके लिए परवाना लेनेके पहले पंजीयनपत्र दिखाना आवश्यक नहीं है। कानूनमें ट्रेडिंग लाइसेन्स यानी व्यापारिक-परवाना शब्द काममें लाया गया है। इस परवानेमें सायकिलके या धोबीके परवानेका समावेश नहीं होता। इसलिए धोबी पंजीयनपत्रके विना परवाना ले सकता है। जरूरत अधिकतर व्यापारियों और फेरीवालोंको होगी। इन दोनों वर्गोंके भारतीय बहादुरी दिखायेंगे तो समाजकी मुक्ति जल्दी होगी। कानूनका अध्ययन करके यह भी देखता हूँ कि जनवरीके महीनेमें भारतीयोंपर बहुत करके मुकदमा नहीं चल सकेगा। जिस व्यक्तिने परवाना न लिया हो उसपर एक महीने तक मुकदमा नहीं चल सकता। इसलिए जान पड़ता है कि मुकदमे केवल फरवरीके महीनेमें चलेंगे। जिन व्यापारियोंको डर हो और वे शादीशुदा हों तो वे अपनी पत्नीके नाम परवाना ले सकते हैं। इस तरह परवाना लेनेपर वे जेलसे बच सकते हैं। किन्तु हमारी लड़ाई बहादुर बनने और बहादुरी दिखानेकी है। इस-लिए इस तरह बचनेकी सलाह मैं नहीं दे सकता। मेरी सलाह है कि परिपाटीके अनुसार

हर भारतीयको परवानेकी अर्जी देनी चाहिए। उसके लिए वकीलका खर्च उठानेकी जरूरत नहीं है। अर्जी देकर, पैसे भर देनेका वादा करके, बैठे रहना चाहिए।

मौलवी साहब

मौलवी साहब अहमद मुख्त्यारका मीयादी अनुमतिपत्र दिसम्बर ३१ को समाप्त हो रहा है। इसलिए उन्होंने मीयाद बढ़ानेके लिए अर्जी दी है। मैं आशा करता हूँ कि मीयाद नहीं बढ़ेगी और मौलवी साहब जनवरी महीनेमें जेलमें विराजमान होंगे। किन्तु मेरी यह आशा व्यर्थ दिखाई देती है। सरकारमें इतना दम नहीं है। समय ऐसा है कि वह मीयाद दे भी दे; और न दे तब भी स्वतन्त्र रहने देगी।

पण्डितजीको जवाब

स्मट्स साहब पण्डितजीके पत्रका जवाब दे चुके हैं। उन्होंने लिखा है कि पण्डितजीको अनुमतिपत्र नहीं दिया जा सकता। इसके सिवा और कुछ नहीं लिखा। इसका अर्थ मैं यह करता हूँ कि अनुमतिपत्र भी नहीं देंगे और पकड़ेंगे भी नहीं।

स्टैंडर्टनके भारतीय

स्टैंडर्टनमें रेलवेमें काम करनेवाले मजदूरोंने पंजीयन नहीं करवाया, इसलिए उन्हें कार्यमुक्त कर दिया गया है। वे लगभग ४० व्यक्ति होंगे। उन्हें नोटिस नहीं दिया गया है। श्री पटेल लिखते हैं कि जिस दिन उन्हें अलग किया गया उस दिनका वेतन नहीं दिया गया। उन्हें एक महीनेका खर्च दिया गया है। जितना बचा वह रेलवेवाले ले गये। और स्त्री बच्चोंके लिए बिचारे मजदूर मिन्नतें करते रहे, फिर भी उन्हें उसी दिन झोंपड़ियोंसे निकालनेके लिए छप्पर उतार लिये गये। इस सम्बन्धमें महाप्रबन्धकसे पत्र-व्यवहार चल रहा है। महाप्रबन्धकने चालू महीनेके अन्ततक का वेतन चुकानेका हुक्म दिया है। संघने एक महीनेके वेतनकी माँग की है। यह मामला हर भारतीयका खून खौलानेवाला है। स्वतन्त्र और बलवान भारतीयोंसे सरकार डरती है, इसलिए गरीबोंको डराती है। यह तो जुल्मकी हद हो गई। ये गरीब मजदूर व्यापारियों और ऐसे ही दूसरे प्रमुख भारतीयोंके भरोसे बेरोजगार हो गये हैं। अतः अब यदि आखिरी घड़ीमें वही व्यापारी और नेता पस्तहिम्मत हो जायेंगे और जेल या नुकसानके डरसे गुलामी स्वीकार कर लेंगे तो उन्हें गरीब भारतीयों और उनके बालबच्चोंकी हाय लगेगी।

हाइडेलबर्गमें भारतीय मजदूर

हाइडेलबर्गमें भारतीय मजदूरोंको डराकर मजिस्ट्रेटके सामने ले गये थे। तब अफवाह फैली कि वहाँ उन्होंने पंजीयन करवानेकी इच्छा व्यक्त की है। इसपर पण्डितजी और श्री नायडू वहाँ पहुँचे। लोगोंसे मिले। उन लोगोंका सरदार अब्दुल नामक एक पठान है। उसने बहुत हिम्मत दिखाई और कहा कि एक भी व्यक्ति पंजीकृत नहीं होगा। फिर पण्डितजी और नायडू फॉरच्यू गये। वहाँ रातमें श्री मोगलियाके घर रहे और सवेरे काम शुरू किया। दिन-भर पैदल घूम-कर भारतीयोंको कानूनकी जानकारी दी। कहीं-कहीं उन्हें नदी-नाले पार करने पड़े। वह कष्ट उठाया। इन मजदूरोंको भी कार्यमुक्त किया जायेगा या किया जा चुका होगा। विशेष

समाचार अगले सप्ताह मिलनेकी सम्भावना है। इस प्रकार जेलसे छूटनेके बाद पण्डितजी एक घड़ी बेकार नहीं बैठे।

'संडे टाइम्स' में व्यंग्य-चित्र

'संडे टाइम्स' हमारी लड़ाईका बहुत प्रचार कर रहा है। उसमें 'श्री गांधीका स्वप्न' शीर्षकसे कानून और श्री स्मट्सके बारेमें व्यंग्य किया गया है। चित्रोंमें एक स्मट्सका भी है। वे दोनों कुहनियाँ मेजपर रखे सिरसे हाथ लगाकर निम्नानुसार विचार कर रहे हैं:

"रजिस्ट्रेशन" भारी कजा,
"रेजिस्टेन्स" है उससे बड़ी;
सी० बी० बुड्ढा तंग किये है,
गांधीने पागल बना दिया।

इस प्रकार स्मट्स बड़बड़ा रहे हैं। सी० बी० यानी कैम्बेल बैनरमैन, इंग्लैंडके प्रधानमंत्री। दूसरे चित्रमें श्री गांधीको कवच पहनाया गया है। कवचमें सब जगह नुकीली कीलियाँ लगी हुई हैं। चित्रपर नोटिस चिपका हुआ है कि "मुझे छुइए मत" और नीचे सही है। "मैं हूँ आपका दीन (पैसिवली) गांधी।" कहनेका तात्पर्य यह है कि कहीं भी स्पर्श करनेपर जब काँटे चुभते हैं तब 'दीन' कहकर सही करनेसे क्या मतलब? मतलब यह कि अनाक्रामक प्रतिरोध रूपी काँटोंके चुभते ही कानूनका जोर एकदम खत्म हो जाता है।

जर्मिस्टनके भारतीयोंपर आक्रमण

जर्मिस्टनकी नगरपालिकाने सभा की थी। उसमें उसने भारतीयोंको मार्केट स्क्वेअरमें अधिकार न देनेके प्रस्तावपर विचार किया है। श्री प्रैडीने उसका विरोध किया है। शेष सदस्य, जिनमें श्री ह्वाइट मुख्य हैं, हलचलके पक्षमें बोले।

गद्दारोंकी सूची[1]

पिछले सप्ताह मैंने जो सूची देनेका वादा किया था, नीचे दे रहा हूँ। वहाँ दिये गये नाम यहाँ दुबारा दिये जा रहे हैं। ये नाम १९ अक्तूबरके बादके पंजीकृत लोगोंके हैं। उनके पते भी मेरे पास हैं। खेद है कि उनकी क्रमसंख्याएँ मालूम नहीं हैं। किन्तु, उनकी जरूरत भी नहीं है, क्योंकि सूची प्रामाणिक है। इसमें मद्रास और कलकत्ताके लोगोंके नाम नहीं हैं, लेकिन उनकी संख्या बहुत कम है।

प्रिटोरियाके गद्दार: [इसके आगे ८४ नामोंकी एक सूची है]; जोहानिसबर्गके: [१०]; पीटर्सबर्गके: [३५]; लुई ट्रिचार्टके: [८] हार्ट्सबाटरका: [१]; क्रिश्चियानाके: [२]; पोचेफस्ट्रूमके: [११]; स्टैंडर्टनके: [५]; मिडेलबर्गके: [८]; अरमीलोका: [१] लीडेनबर्गके: [२]; हाइडेलबर्गके: [८]।

अँगुलियों और अँगूठेमें भेद

इस सम्बन्धमें मैंने बादमें लिखनेको कहा था।[2] इसलिए अब लिखता हूँ। भारतमें अँगूठेका उपयोग दीवानी कामोंमें बहुत होता है। विलायतमें तो उसका फैशन चल पड़ा है। दोस्त

१. इस उपशीर्षककी सामग्री मूल गुजरातीके अंग्रेजी अनुवादसे ली गई है
२. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ४३०।

आफ्रिकासे अँगूठेकी निशानी भेजते हैं। पेंशन पानेवाले आदि लोगोंसे रसीदपर अँगूठेकी निशानी ली जाती है। नेटालमें पी० नोट[1] पर अँगूठा लगानेका रिवाज हो गया है। इस तरह अँगूठे लगानेका यह उद्देश्य है कि उससे मनुष्यकी पहचान तुरन्त की जा सकती है। एककी जगह दो अँगूठे लगवानेका हेतु यह है कि यदि एक अँगूठा बराबर न उठा हो या उसकी निशानी घिस गई हो अथवा और कोई दोष हो तो दूसरे अँगूठेकी निशानी काम दे सके। शिनाख्तमें इसके सिवा अँगुलियोंकी निशानीकी ज़रूरत नहीं होती। दस अँगुलियोंकी निशानी अपराधियोंसे ली जाती है। क्योंकि अपराधी स्वयं अपनी पहचान कराना नहीं चाहते। वे छिपकर रहना चाहते हैं। जिनकी दस अँगुलियाँ लगवाई गई हों उसका नाम न होनेपर भी उसे अँगुलियोंके आधारपर पहचाना जा सकता है। अन्वेषकोंने एक कोष्ठक तैयार किया है। उसके आधारपर अमुक प्रकारकी अँगुलीवालोंको अमुक विभागमें रखा जा सकता है। कोई व्यक्ति अपना नाम गलत दे और वह सरकारी दफ्तरमें न हो तो भी यदि उसकी अँगुलियोंकी निशानी हो तो अँगुलियोंके कोष्ठकके आधारपर उसका पता लगाया जा सकता है। इस तरहसे भारत तथा अन्य देशोंमें बहुतसे अपराधी पकड़े गये हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि अपराधी होनेके नाते दस अँगुलियोंकी निशानी ली जाती है।

भारतीयोंको तो अपनी पहचान करवाना है। यदि वे स्वयं अपनी शिनाख्त न देंगे तो वे इस मुल्कमें रह नहीं सकते। इसलिए उनका सच्चा स्वार्थ इसीमें है कि वे अपना सही नाम व पता दें। यदि उनका नाम पुलिसदफ्तरमें नहीं होगा तो वे इस देशमें रह नहीं सकते। इसलिए उनसे दस अँगुलियाँ लगवाना बेकार है। यह दलील इतनी मजबूत है कि इससे आखिर सरकारके समक्ष सिद्ध किया जा सकता है कि दस अँगुलियाँ लगवाना बेकार और निकम्मा खर्च है। यह विधान भी कड़ुवा है। इसलिए कानूनके समाप्त हो जानेके बाद भी सरकारसे दस अँगुलियोंके सम्बन्धमें तय किया जा सकता है और उसमें भारतीय समाजकी नादानी नहीं मानी जायेगी। दो अँगूठोंके बारेमें यह दलील नहीं की जा सकती। हर लड़ाई महत्त्वपूर्ण बातपर होनी चाहिए; नहीं तो लोकमत हमारे विरुद्ध हो जायेगा।

एक जापानी सज्जन

श्री नाकामूरा नामक एक जापानी आये हुए हैं। वे विज्ञानके विद्यार्थी हैं। उनके पास लॉर्ड एल्गिनका पत्र था। फिर भी अनुमतिपत्र अधिकारीने उन्हें तकलीफ दी थी। वे सारी दुनियाकी खानोंकी जाँच करते हैं। उनसे श्री पोलककी मुलाकात हुई। उसका विवरण अंग्रेजीमें दिया गया है।[2] उन्होंने कहा है कि वे अपनी सरकारको खूनी कानूनके बारेमें सारी बातें बतायेंगे।

संशोधन

एक लेखकने सूचना दी है कि पिछली सार्वजनिक सभामें प्रिटोरियासे श्री इसे अली और वगैरा अमीजी आये थे। उनके नाम नहीं दिये गये थे। वे अब देता हूँ।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१२-१९०७

१. प्रामिसरी नोट या कर्ज पटानेके वायदेका रुक्का।
२. यहाँ नहीं दिया गया।

३४८. जोहानिसबर्गमें मुकदमा[1]

[जोहानिसबर्ग
दिसम्बर २८, १९०७]

. . . गत शनिवारको ठीक १० बजे सबेरे जोहानिसबर्गके सभी व्यक्ति बी. फौजदारी अदालत, श्री एच० एच० जोर्डनके इजलासमें हाजिर हुए। अधीक्षक वरनॉनने उनसे पूछा कि क्या उनके पास १९०७ के कानून २ के अन्तर्गत बाकायदा जारी किये गये पंजीयन प्रमाणपत्र हैं। उनसे नकारात्मक उत्तर मिलनेपर, वे सब तुरन्त गिरफ्तार कर लिये गये और उनपर १९०७ के अधिनियम २, खण्ड ८, उपखण्ड २ के अन्तर्गत अभियोग लगाया गया कि वे अधिनियमके अन्तर्गत जारी किये गये पंजीयन प्रमाणपत्रके बिना ट्रान्सवालमें हैं। अदालत खचाखच भरी थी, और एक समय तो ऐसा जान पड़ता था कि जंगला टूट जायेगा।

उपस्थित व्यक्तियोंमें श्री जॉर्ज गॉडफ्रे, डॉ० एम० ए० पेरेरा, 'इंडियन ओपिनियन'के सम्पादक और अभियुक्तोंके दूसरे अनेक मित्र तथा हितचिन्तक थे।

ताजकी ओरसे श्री पी० जे० शूरमैनने मुकदमा पेश किया।

अभियुक्तोंमें सबसे पहले इनर टेम्पलके बैरिस्टर और ट्रान्सवाल भारतीय संघके अवैतनिक मन्त्री न्यायवादी श्री मो० क० गांधीका मामला पेश हुआ।

टी० टी० पी० विभागके, अधीक्षक श्री वरनॉनने गिरफ्तारीके बारेमें बयान दिया। उन्होंने कहा कि अभियुक्त १६ वर्षसे अधिक आयुका एशियाई है और ट्रान्सवालमें रहता है। वे उस दिन प्रातःकाल १० बजे श्री गांधीके यहाँ गये और उनसे अपना पंजीयन प्रमाणपत्र दिखानेको कहा। किन्तु वे दिखा नहीं सके और कहा कि उनके पास प्रमाणपत्र नहीं हैं।

श्री गांधीने कोई प्रश्न नहीं पूछा और वक्तव्य देनेकी तैयारीसे कठघरेमें गये। उन्होंने कहा कि मैं जो कुछ कहने जा रहा हूँ, वह बयान नहीं है; किन्तु इस अदालतका एक कर्मचारी होनेके नाते मैं आशा करता हूँ कि अदालत बरायमेहर मुझे सफाईके रूपमें कुछ शब्द कहनेकी अनुमति प्रदान करेगी। मैं यह बताना चाहता हूँ कि मैंने इस आदेशको क्यों नहीं माना।

श्री जोर्डन: मैं नहीं समझता कि मामलेसे इसका कोई सम्बन्ध है। कानून है और आपने उसे तोड़ा है। मैं यहाँ किसी तरहका राजनीतिक भाषण नहीं चाहता।

श्री गांधी: मैं कोई राजनीतिक भाषण नहीं देना चाहता।

श्री जोर्डन: सवाल यह है कि आपने पंजीयन कराया है या नहीं। यदि आपने पंजीयन नहीं कराया है तो मामला खत्म है। मैं जो फैसला सुनाने जा रहा हूँ, यदि आपको उसके

१. अदालतमें गांधीजीपर चलाया गया यह पहला मुकदमा था। यह विवरण "श्री गांधीको ट्रान्सवालसे निकल जानेका आदेश" शीर्षकसे इंडियन ओपिनियनमें प्रकाशित हुआ था।

बारेमें, दया-याचनाके रूपमें कुछ कहना हो तो बात अलग है। कानून मौजूद है जो ट्रान्सवाल विधान मण्डल द्वारा पास किया जा चुका है और साम्राज्य-सरकार द्वारा स्वीकृत हो चुका है। मुझे जो कुछ करना चाहिए और मैं जो कुछ कर सकता हूँ, वह केवल इतना है कि कानून जैसा भी हो उसे अमलमें लाऊँ।

श्री गांधीने कहा कि मैं सफाईके लिहाजसे कोई बयान नहीं देना चाहता। मैं जानता हूँ कि कानूनके मुताबिक मैं कोई बयान नहीं दे सकता।

श्री जोर्डन: मुझे सिर्फ कानूनी बयानसे सरोकार है। मेरे खयालसे आप यही कहना चाहते हैं कि आपको यह कानून नापसंद है और आप-अपनी आत्माके आधारपर इसका विरोध करते हैं।

श्री गांधी: यह बिलकुल ठीक है।

श्री जोर्डन: यदि आप यह कहें कि आपको आत्मिक आपत्ति है तो मैं बयान ले लूँगा।

श्री गांधीने बताया कि वे ट्रान्सवालमें कब आये थे और यह भी कहा वे ब्रिटिश भारतीय संघके मन्त्री हैं। इसपर श्री जोर्डनने कहा: मेरी समझमें नहीं आता कि इससे मुकदमेमें क्या फर्क पड़ता है।

श्री गांधी: यह तो मैं पहले कह चुका हूँ। मैंने अदालतसे केवल पाँच मिनटकी अनुकम्पा चाही थी।

श्री जोर्डन: मैं नहीं समझता कि यह कोई ऐसा मामला है जिसमें अदालत रियायत दे। आपने कानून तोड़ा है।

श्री गांधी: बहुत अच्छा, श्रीमान; तब मुझे और कुछ नहीं कहना है।

श्री शूरमैनने सूचित किया: अभियुक्तको और दूसरे सब एशियाइयोंको पंजीयन करानेके लिए पर्याप्त समय दिया गया था। जान पड़ता है, अभियुक्त पंजीयन नहीं कराना चाहता और इसलिए मैं नहीं समझता कि उसे देशसे चले जानेके लिए कोई लम्बा वक्त दिया जाये। यह निवेदन करना मेरा कर्तव्य है कि अभियुक्तको ४८ घंटेके भीतर देश छोड़नेका हुक्म दिया जाये।

. . . श्री जोर्डनने अपना निर्णय देते हुए कहा: सरकार अत्यन्त नरम रही है और फिर भी जान पड़ता है कि इन लोगोंमें से किसीने पंजीयन नहीं कराया। उपनिवेशके कानूनकी अवज्ञाके परिणामस्वरूप सरकारने यह कार्रवाई की है। मुझे एशियाई पंजीयन अध्यादेश, शान्ति-रक्षा अधिनियम और प्रवास-अधिनियमके अन्तर्गत अभियुक्तोंको एक निश्चित अवधिके अन्दर उपनिवेशसे चले जानेकी आज्ञा देनेका अधिकार है। फिर भी इस मामलेमें कठोरता बरतनेकी मेरी कोई इच्छा नहीं है, और मैं श्री शूरमैनके ४८ घंटे सम्बन्धी सुझावको स्वीकार करना नहीं चाहता। मुझे न्यायसंगत आदेश देने चाहिए। श्री गांधी और अन्य लोगोंको अपना सामान और चीजें बटोरनेका समय देना चाहिए। साथ ही मुझे श्री गांधीको यह बतानेकी आवश्यकता नहीं है कि कानूनमें कुछ सजाओंकी व्यवस्था है। यदि आज्ञाका

पालन न किया जाये तो कमसे-कम सजा एक महीनेकी सादा या सख्त कैदकी है; और यदि अपराधी उस सजाके खत्म होनेके सात दिन बाद फिर उपनिवेशमें मिलता है तो कमसे-कम सजा छः महीनेकी है। मुझे यह आशा जरूर है कि इस मामलोंमें थोड़ी समझदारी दिखाई जायेगी उपनिवेशके एशियाई यह समझ लें कि वे सरकारके साथ खिलवाड़ नहीं कर सकते। यदि वे ऐसा करें तो उन्हें पता चल जायेगा कि यदि कोई व्यक्ति राज्यकी इच्छाके विरोधमें खड़े होनेकी जुरअत करता है तो व्यक्तिसे अधिक शक्तिशाली होनेके कारण क्षति राज्यकी नहीं, व्यक्तिकी होती है।

. . . श्री गांधीने न्यायाधीशकी बातके बीचमें कहा कि वे ४८ घंटेकी आज्ञा दें और यदि यह अवधि इससे भी कम की जा सके तो उन्हें अधिक सन्तोष होगा।

श्री जोर्डन: यदि ऐसी बात है तो मैं आपको कदापि निराश नहीं करूँगा। आप उपनिवेशसे ४८ घंटेके अन्दर चले जायें, यही मेरा आदेश है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-१-१९०८

३४९. श्री पी० के० नायडू और अन्य लोगोंका मुकदमा[1]

[जोहानिसबर्ग
दिसम्बर २८, १९०७]

[गांधीजी]: क्या आप ब्रिटिश प्रजा हैं?

गवाह: जी हाँ।

क्या आप लड़ाईसे पहले ट्रान्सवालमें थे?

जी हाँ, १८८८ से हूँ।

क्या आपने डच सरकारको ३ पौंड कर दिया था?

मैंने कुछ नहीं दिया।

आपने कानूनके अन्तर्गत पंजीयन-प्रमाणपत्र नहीं लिया है?

नहीं, किसी भी कानूनके अन्तर्गत नहीं।

क्यों नहीं लिया?

मेरे खयालसे उस कानूनके अन्तर्गत अनुमतिपत्र लेना मेरे लिए उचित नहीं था। यह मेरे लिए अत्यन्त अपमानजनक होता . . . ।

१. गांधीजीने पहले अपने मुकदमेकी पैरवी की थी (देखिए पिछला शीर्षक), और फिर अन्य अभियुक्तोंके मुकदमोंकी। अन्य अभियुक्तोंमें सबसे पहले श्री पी० के० नायडूसे जिरह की गई थी।

श्री जोर्डन: क्यों?

यदि अधिनियम मेरे सम्मुख होता तो मैं उसमें कुछ प्रविधियाँ बताता जिनको स्वीकार करना, मेरे खयालसे, ब्रिटिश प्रजाके लिए उचित नहीं। कानूनमें स्पष्ट कहा गया है कि हम अपनी दसों अँगुलियोंके निशान दें, और फिर अपनी आठ अँगुलियोंके निशान अलग-अलग दें, तथा उनके अतिरिक्त अँगूठोंके निशान भी। फिर हमें अपने माँ-बाप और बच्चोंके नाम भी बताने पड़ते हैं . . .।

श्री शूरमैन द्वारा जिरह: आप यहाँ कबसे हैं?

१८८८ से। १८९९ के १८ अक्तूबरको मैं चला गया था और १९०२ में वापस आ गया। मैं नेटाल गया और जुलाई १९०७ में लौटा।

आपने इस अधिनियमके सम्बन्धमें सभाएँ कीं?

मेरे लौटनेके बाद सभाएँ की गई थीं।

क्या आपने भारतीयोंसे पंजीयन न करानेका आग्रह किया?

मैंने शपथ ली कि पंजीयन न कराऊँगा।

शपथ कहाँ ली?

यदि मैं भूलता नहीं तो शपथ बर्गसडॉर्पके इन्डिपेंडेंट स्कूलकी सभामें ली थी।

आप पंजीयन कराना नहीं चाहते?

नहीं।

श्री जोर्डन: देशमें आनेके लिए आपके पास अनुमतिपत्र था?

नहीं, मेरे पास एशियाई-पंजीयकका अधिकारपत्र था।

श्री शूरमैनने वह अधिकारपत्र देखनेको माँगा, जिसे श्री जोर्डनने मंजूर कर लिया।

श्री नवाबखाँ और समन्दरखाँके मुकदमे ३ जनवरीके लिए स्थगित कर दिये गये, क्योंकि कोई दुभाषिया नहीं था।

इसके बाद श्री सी० एम० पिल्लेका मुकदमा लिया गया। उन्होंने कहा, मैं ट्रान्सवालमें १८८३ में आया था, और लड़ाईसे पहले एशियाई पासों और परवानोंका निरीक्षक था। लड़ाईके दिनोंमें मैं रसद विभागमें एक अधिकारी और न्यायालयका संदेशवाहक भी था।

श्री गांधी: आप पंजीयन क्यों नहीं कराते?

मेरा खयाल है कि कोई भी स्वाभिमानी व्यक्ति अधिनियमकी धाराओंका पालन नहीं करेगा, क्योंकि उससे हमारी स्वतन्त्रता पूर्णतः एशियाई पंजीयकके, जो मेरी विनम्र सम्मतिमें इस पदके लिए उपयुक्त और उचित व्यक्ति नहीं है, हाथमें चली जाती है . . .

न्यायाधीशने यहाँ टोका और कहा, मैं ऐसी बेतुकी बातें नहीं सुनना चाहता। . . . मेरा खयाल है कि कोई व्यक्ति यहाँ आये और इस प्रकार एक सरकारी अधिकारीको गालियाँ दे, यह नितान्त धृष्टता है। मैं इस प्रकार अपना समय नष्ट करना और न्यायालयकी प्रतिष्ठा घटाना नहीं चाहता। यह अत्यन्त अनुचित है।

श्री गांधीने कहा, मैं अभियुक्तके कथनके अनौचित्यके सम्बन्धमें न्यायाधीशसे सहमत हूँ और मेरा इरादा पंजीयक-पदके लिए पंजीयककी अयोग्यताके सम्बन्धमें गवाही कराना नहीं है।

(अभियुक्तसे) : आपकी आपत्ति अधिकारीके विरुद्ध है या अधिनियमके विरुद्ध?

मुख्यतः अधिनियमके विरुद्ध।

सरकारी वकीलकी प्रार्थनापर वैसा ही आदेश दिया गया।

थम्बी नायडूने कहा, पंजीयनपर आपत्ति इसलिए है कि वह मुझे काफिरसे भी नीचे दर्जेमें रख देता है और वह मेरे धर्मके विरुद्ध है। मैं विवाहित हूँ और मेरे पाँच बच्चे हैं। इनमें सबसे बड़ा तेरह वर्षका है और सबसे छोटा डेढ़ वर्षका। मैं माल ढुलाईके ठेकोंका व्यवसाय करता हूँ।

श्री गांधीने प्रार्थना की कि अभियुक्तको केवल अड़तालीस घंटेका नोटिस दे दिया जाये। वह बस यही चाहता है . . .

श्री जोर्डनने कहा, प्रश्न यह नहीं है कि अभियुक्त क्या चाहता है, बल्कि यह है कि मैं क्या चाहता हूँ। अभियुक्त व्यवसायी है और मुहलतकी मियाद चौदह दिन निश्चित की जायेगी।

करवाने कहा, मैं ट्रान्सवालमें १८८८ से हूँ। मैं लड़ाईके दिनोंमें सैनिक विभागका ठेकेदार था और सर जॉर्ज व्हाइटके साथ लेडीस्मिथमें रहता था। मैं ट्रान्सवालमें एक सैनिक दस्तेके साथ हैरीस्मिथके रास्ते प्रविष्ट हुआ था। मैंने १८८५ के कानून ३ के अन्तर्गत एक पंजीयन प्रमाणपत्रपर मात्र अपने एक अँगूठेका निशान लगाया था। मैं अँगुलियोंके निशान देनेसे इसलिए इनकार करता हूँ कि यह मेरे धर्मके विरुद्ध है . . .

न्यायाधीश : किन्तु आपने एक निशान लगाया है?

अभियुक्त (विरोधस्वरूप अपना हाथ हिलाते हुए) : एक निशान देना ठीक है; किन्तु दस निशान देना मेरे धर्मके विरुद्ध है। (हँसी)

न्यायाधीश : वास्तवमें मेरे खयालसे आप दस निशान देते हैं या पाँच, इसकी आप कोई परवाह नहीं करते। आपसे उसके लिए कहना-भर चाहिए।

पहले चीनी अभियुक्त एम० ईस्टनने कहा, मैं हाँगकाँगवासी ब्रिटिश प्रजा हूँ। मैं यहाँ लड़ाईसे पहले था और मैंने प्रमाणपत्रके लिए डच सरकारको ३ पौंड कर दिया था। मैं एक दूकानमें सहायकका काम करता हूँ। मैं पंजीयनके विरुद्ध इसलिए आपत्ति करता हूँ कि वह अत्यन्त पतनकारी और मेरे धर्मके विरुद्ध है। मेरे धर्म, ताओवादमें कोई निशान देनेकी अनुमति नहीं है। उनको ४८ घंटेके भीतर देश छोड़ देनेकी आज्ञा दी गई।

चीनी संघके अध्यक्ष श्री लिअंग क्विनने कहा, मैं ब्रिटिश प्रजा नहीं हूँ; किन्तु मैं ट्रान्सवालमें १८९६ में आया था और मैंने डच सरकारसे अनुमतिपत्र लिया था। १९०१ में मैं चला गया था और फिर १९०३ में शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत अनुमतिपत्र लेकर लौट आया। मैं दूकानदार हूँ। मैंने अनुमतिपत्र नहीं लिया, क्योंकि वह एक ऐसा कानून है जो मेरे लिए और मेरी जातिके लिए अपमानास्पद है। मैंने अपने देशवासियोंके लिए इस कानूनका अनुवाद किया है और मैं ऐसे मुकदमेकी प्रतीक्षा बराबर करता रहा हूँ। मुझे ४८ घंटेके नोटिससे पूरा सन्तोष होगा; मैंने अपनी पूरी तैयारी कर ली है . . .।

न्यायाधीशने क्विनको भी १४ दिनका नोटिस, जैसा उन्होंने भारतीय दूकानदारको दिया था, देनेपर जोर दिया।

गवाहोंके कठघरमें जानेवाले अन्तिम व्यक्ति थे जॉन फोर्ताएन। उन्होंने कहा, मैं ट्रान्सवालमें लड़ाईसे १३ वर्ष पहलेसे रहता हूँ; मैं अपने चाचाके साथ छुटपनमें ही आया था। मैं नहीं जानता कि मेरे चाचा कहाँ हैं और न मुझे यही ज्ञात है कि मेरे माता-पिता जीवित हैं या नहीं। मैं छात्र हूँ और केप कॉलोनीके (ह्यूमैन्सडॉर्पके पास स्थित) हेंकी इन्स्टि-ट्यूशनसे अभी आया हूँ। वहाँ मैं १९०४ से हूँ। मैं दक्षिण आफ्रिकाको अपना घर मानता हूँ और चीनमें किसीको नहीं जानता। मैं पंजीयन प्रमाणपत्र लेना नहीं चाहता, क्योंकि वह मेरे देश और सम्मानके लिए अपमानजनक है। मेरी आयु २१ वर्ष है।

श्री गांधीने कहा, यह अदालतके सम्मुख कुछ कहनेका मेरा अन्तिम अवसर होगा। मैं कुछ सामान्य बातें कहना चाहता हूँ। मैंने अपने मुवक्किलोंको जान-बूझकर यह सलाह दी है कि वे अपने-आपको निर्दोष बतायें, ताकि अदालत स्वयं उन्हींकी जुबानी उनको जो-कुछ कहना है, सुन सके। उन सभीने अँगुलियोंके निशानोंकी प्रणालीके सम्बन्धमें थोड़ा-बहुत कहा है। न्यायाधीश इस विचारको मनसे निकाल दें कि ये लोग क्या कर रहे हैं, यह नहीं जानते। मैं जानता हूँ कि मैं जो-कुछ कहने जा रहा हूँ उससे न्यायाधीशके निर्णयपर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता। किन्तु मैंने यह स्पष्टीकरण देना अपने प्रति और अपने मुवक्किलोंके प्रति अपना कर्तव्य समझा है। इस संसारमें कुछ ऐसी बातें हैं जिनकी व्याख्या नहीं की जा सकती, और इस कानूनमें भी कुछ ऐसी बातें हैं जिनको लोग अनुभव करते हैं, किन्तु व्यक्त नहीं कर सकते। मैं अँगुलियोंके निशान देनेकी प्रणालीके सम्बन्धमें अभियुक्तोंकी भावनाओंको समझना न्यायाधीश महोदयपर छोड़ता हूँ . . .

श्री जोर्डनने अपने उत्तरमें कहा, अभी जो मामला हमारे सामने प्रस्तुत है उसीके सम्बन्धमें भारतीयोंका एक शिष्टमण्डल साम्राज्य सरकारसे निवेदन करने इंग्लैंड गया था, किन्तु वह शिष्टमण्डल व्यर्थ रहा। जिस अधिनियमपर इतनी आपत्ति की गई थी उसको ट्रान्सवालकी वर्तमान विधानसभाने पास कर दिया है और उसपर सम्राट्की स्वीकृति मिल गई है। अन्य सारी भावनाओंकी बात छोड़कर, मुझे अपनी शक्ति-भर कानूनपर अमल करनेके सिवा और कुछ नहीं करना है, और ऐसा करनेके लिए मैंने शपथ ली है। इन लोगों (अभियुक्तों)ने जानबूझकर सरकारको चुनौती दी है और एक बहुत ही गम्भीर रुख अपनाया है। मुझे इस देशमें किसीको भी ऐसा रुख अपनाते देखकर दुःख होता है। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह कार्रवाई करके भूल की गई है और यह इंग्लैंडमें शिक्षा-सम्बन्धी विधेयकके अनाक्रामक प्रतिरोधियोंका अनुकरण-मात्र है। मुझे यह रुख किसी भी रूपमें कभी पसन्द नहीं आया। प्रत्येक देशके कानूनका उसके निवासियों द्वारा पालन होना चाहिए और यदि वे ऐसा न कर सकें तो केवल एक मार्ग रह जाता है — ऐसे लोग कहीं अन्यत्र चले जायें। किन्तु मेरी समझमें एक बात किसी भी तरह नहीं आ सकती कि जब एक व्यक्ति एक पंजीयन प्रमाण-पत्रपर अँगूठेका निशान लगा चुका, जैसा पिछले सालोंमें किया गया था, तब प्रत्येक हाथकी चार अँगुलियोंके निशान लगानेपर उसके धर्मपर आघात कैसे होता है।

आगे उन्होंने शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत जारी प्रथाका उल्लेख किया और जोर देकर कहा, यदि उन्होंने उस समय अँगूठेकी निशानीके विरुद्ध आपत्ति की होती तो उनकी स्थिति आज ज्यादा मजबूत होती। उनकी शिनाख्तका एकमात्र तरीका पंजीयन प्रमाणपत्र है, जिसपर अँगूठेकी निशानी आवश्यक होती है। ऐसा पिछली सरकार द्वारा जारी किये गये पीले पासोंके दिनोंमें भी होता था; किन्तु जब एशियाइयोंको नये रूपमें पंजीयन कराना पड़ा तब वे अकस्मात् कानूनको सीधी चुनौती दे बैठे। श्री गांधीको जानना चाहिए कि ट्रान्सवालमें शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत मेरा अनुभव अन्य सब न्यायाधीशोंसे अधिक है। और श्री गांधीको यह भी मालूम होना चाहिए कि तब पीले प्रमाणपत्रोंकी अनुचित बिक्री बड़े जोरोंसे चल पड़ी थी, जिससे प्रमाणपत्रके असली मालिकका पता लगाना कठिन हो गया था और बहुत परेशानी और खर्च उठाना पड़ा था। उसके बाद न्यायाधीशने न्यायालयमें पेश युवकके मामलेपर वापस आते हुए यह आज्ञा दी कि वह उपनिवेशसे सात दिनके भीतर चला जाये।

श्री गांधीने संक्षेपमें उत्तर देते हुए कहा कि पुराने अनुमतिपत्रपर दी गई अँगूठेकी निशानी और नये कानूनके अन्तर्गत दी जानेवाली अँगुलियोंकी निशानियोंमें सदा अन्तर किया गया है। एक अनिवार्य है और दूसरा स्वेच्छाधीन था। न्यायाधीश भली भांति जानते हैं कि जिन मामलोंमें अँगूठेकी साफ निशानी ली जाती थी, उनमें आदमीको पहचाना जा सकता था और अनुमतिपत्रोंकी नाजायज बिक्री असम्भव हो गई थी।

उन्होंने न्यायाधीश, सरकारी वकील और पुलिसको मुकदमेमें दिखाई गई शिष्टताके लिए धन्यवाद दिया।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-१-१९०८

३५०. भाषण: सरकारी चौकमें[1]

[जोहानिसबर्ग
दिसम्बर २८, १९०७]

. . . मुझपर या दूसरोंपर चाहे जो भी बीते, हम लड़ाई बराबर जारी रखेंगे। मैं अपने विचार हरगिज नहीं बदलूंगा और एशियाई समुदायोंसे अनुरोध करता हूँ कि वे पंजीयन अधिनियमके विरोधमें अपना संघर्ष जारी रखें, चाहे इसके लिए उन्हें देशसे निर्वासित ही क्यों न होना पड़े। हो सकता है, मैं बराबर गलतीपर ही होऊँ। यह भी सम्भव है कि आगे चलकर आप सब मुझे कोसें। परन्तु अभी तो मैं अपने उन्हीं विचारोंपर दृढ़ हूँ जो मैंने बताये हैं। यदि ईश्वरकी तरफसे मुझे ऐसा संकेत मिला कि मैंने भूल की है तो मैं अपनी

१. मुकदमेकी सुनवाई समाप्त होनेपर गांधीजीने सरकारी चौकमें भारतीयों, चीनियों और यूरोपीयोंकी एक विराट् सभामें भाषण दिया था। पहले हिन्दुस्तानीमें बोलते हुए उन्होंने मुकदमेकी कार्यवाहीके बारेमें बताया। उनके भाषणके इस अंशकी हिन्दी रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है। यह रिपोर्ट भाषणके उस अंशकी है जो उन्होंने यूरोपीय श्रोताओंके लिए अंग्रेजीमें दिया था।

भूल स्वीकार करनेवाला सबसे पहला व्यक्ति हूँगा, और आपसे क्षमा-याचना करूँगा। परन्तु मैं समझता हूँ, ऐसा संकेत कभी नहीं मिलेगा। मेरा निश्चित मत है कि उपनिवेशमें गुलामोंकी तरह रहकर अपना सम्मान और स्वाभिमान खोनेके बजाय अच्छा है कि हम उपनिवेश छोड़कर चले जायें। यह एक धर्मयुद्ध है और मैं आपको वही सलाह देता हूँ, जो सदैव देता रहा हूँ, अर्थात् जान लगाकर आखिरतक लड़ते रहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-१-१९०८

३५१. पत्र : 'स्टार' को[1]

जोहानिसबर्ग

सेवामें
सम्पादक
'स्टार'
[जोहानिसबर्ग]

महोदय,

सरकारको इस बातके लिए बधाई मिलनी चाहिए कि उसने साहस और ईमानदारीके साथ मुख्य रूपसे उन लोगोंके खिलाफ ही मुकदमा चलाया है जिन्होंने एशियाई कानूनके अनाक्रामक प्रतिरोधके आन्दोलनका नेतृत्व किया है। वास्तवमें यही एक तरीका है जिससे एशियाई भावनाकी व्यापकता और असलियतकी परख हो सकती है। लेकिन जो लोग गिरफ्तार किये गये हैं उनमें कुछ ऐसे हैं जिन्होंने आन्दोलनमें कभी सक्रिय भाग नहीं लिया है, और साथ ही कुछ उल्लेखनीय लोग छोड़ भी दिये गये हैं। ये दोनों तथ्य अपनी कहानी आप कहते हैं। कुछ लोगोंने यह भी संकेत किया है कि एक या दो गिरफ्तारियाँ निजी द्वेषके कारण हुई हैं। परन्तु, आपके सौजन्यका लाभ लेनेमें, मेरा उद्देश्य यह नहीं है कि प्रश्नके इस पहलूपर बहस करूँ।

ये गिरफ्तारियाँ कानूनपर राजकीय स्वीकृतिकी घोषणाके साथ ही हुई हैं। इससे जान पड़ता है कि सरकारको जो नये अधिकार प्राप्त हुए हैं, उनका वह प्रयोग करना चाहती है। उसके धनुषमें अब तीन प्रत्यंचाएँ लग गई हैं, अर्थात् गिरफ्तारी, व्यापारिक परवानोंकी मनाही और निर्वासन। ये सभी अधिकार इसलिए नहीं लिये या दिये गये हैं कि सरकार एशियाइयोंकी बाढ़को रोके, क्योंकि ऐसा कोई नहीं चाहता और पंजीयन अधिनियम इसे रोक भी नहीं सकता। व्यापारिक प्रतिस्पर्धाको टालना भी इनका उद्देश्य नहीं है, क्योंकि जो भी भारतीय इस कानूनको स्वीकार करता है वह जितने चाहे उतने, जहाँ चाहे वहाँ, परवाने ले सकता है। ये अधि-

१. यह ४-१-१९०८ के **इंडियन ओपिनियन**में सम्पादकके नाम पत्रके रूपमें छपा था।

कार इसलिए दिये गये हैं कि सरकार भारतीयोंको अपनी मर्जीके मुताबिक झुका सके, उन्हें अपने अन्तःकरणके विरुद्ध काम करनेपर मजबूर कर सके; संक्षेपमें इनका उद्देश्य है एक घातक प्रहार करके भारतीयोंको पुंसत्वहीन बना देना जिससे वे उसके हाथोंमें मोम जैसे बनकर रह जायें।

क्या उपनिवेशी जानते हैं कि प्रवासी अधिनियमके अन्तर्गत होनेवाला निर्वासन साधारण निर्वासनकी अपेक्षा बहुत बुरा है? यदि मैं हत्या करूँ और मुझे आजन्म निर्वासनकी सजा मिले तो मैं एक ऐसे स्थानको भेजा जाऊँगा जहाँ मुझे रहनेको घर और खानेको दाने मिलेंगे, जैसी सुविधा नेटालसे सेंट हेलेनाको भेजे गये थोड़े-से वतनी विद्रोहियोंको भी दी जाती है। किन्तु यदि मैं एशियाई अधिनियमको सिर न झुकाऊँ और फलतः मुझे निर्वासित कर दिया जाये तो उसका अर्थ यह होगा कि मुझे बिना एक पाईके सीमा-पार कर दिया जायेगा और अगर मेरे पास व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं हो तो ऊपरसे, जैसे-बने-वैसे, निर्वासन-व्यय चुकानेका प्रबन्ध करनेकी जिम्मेदारी लाद दी जायेगी। और यदि ट्रान्सवालमें मेरा परिवार है तो जहाँतक सरकारकी बात है, उसे भूखों मर जाने दिया जायेगा। और सोचिए कि यह सब उन लोगोंपर बीतेगी जिन्होंने जीविकोपार्जनकी दृष्टिसे ट्रान्सवालको अपना घर और भारतको विदेश मान लिया है। गिरफ्तार किये गये भारतीयोंमें से कुछ पन्द्रह वर्ष पुराने व्यापारी हैं, उनकी पत्नियाँ दक्षिण आफ्रिकामें जन्मी हैं और ट्रान्सवालमें रह रही हैं। एक चीनी है जो बिलकुल छुटपनमें ही दक्षिण आफ्रिका आया और चीनका नाम-भर जानता है। वह पाश्चात्य रीति-रिवाजोंके बीच जन्मा और पला है। गिरफ्तार किये गये सभी एशियाई यहाँके कानूनी अधिवासी हैं और उनके पास ऐसे दस्तावेज हैं जिनके आधारपर उन्हें इस देशमें रहनेका हक है। ये लोग चूँकि अपनी आत्माकी उपेक्षा न करके एशियाई अधिनियम का उल्लंघन करते हैं इसलिए इन्हें न केवल जेलकी सजा दी जा सकती है बल्कि उपनिवेश-सचिवके हस्ताक्षरसे जारी किये गये वारंटके बलपर उपर्युक्त तरीकेसे देश-निकाला भी दिया जा सकता है। मैं नहीं कहता कि जो लोग कानूनको नहीं मानते, चाहे ऐसा वे अपनी आत्माकी पुकारपर ही करते हों, उन्हें बिलकुल सजा ही नहीं मिलनी चाहिए; लेकिन मैं यह जरूर कहूँगा कि जब सजा जुर्मके अनुपातमें नहीं हो तो उससे बर्बरताकी तेज बू आती है। और यदि प्रवासी कानूनके अन्तर्गत प्राप्त अधिकारोंका प्रयोग एशियाई अधिनियमके संदर्भमें किया जाता है तो इसका अर्थ होगा ट्रान्सवालके मतदाताओंके नामपर एक बर्बर कार्य करना। क्या इस देशके लोग एक सम्पूर्ण जातिके विनाशपर प्रसन्नतासे मुस्करायेंगे? राजभक्त महिलाओंका संघ (गिल्ड ऑफ लॉयल विमेन) पत्नियोंको अपने स्वाभाविक संरक्षकोंके बिना रखनेके बारेमें क्या कहेगा? मैं अपनेको ब्रिटिश साम्राज्यका प्रेमी तथा ट्रान्स-वालका एक नागरिक (चाहे मताधिकार हीन ही सही) मानता हूँ, और और देशके सामान्य हित-साधनमें पूरी जिम्मेदारी निभानेको तैयार हूँ। और मेरा दावा है कि अगर मैं अपने देश-भाइयोंको इस कारण एशियाई अधिनियमके आगे न झुकनेकी सलाह देता हूँ कि वह उसके पुंसत्वके लिए अकीर्तिकर और उनके धर्मके लिए अपमानजनक है तो यह बात सर्वथा सम्मानपूर्ण और मेरे उपर्युक्त कथनसे मेल खाती हुई होगी। मैं यह भी दावा करता हूँ कि इस बुराईका विरोध करनेके लिए अपनाया गया अनाक्रामक प्रतिरोधका मार्ग सबसे स्वच्छ और निरापद है, क्योंकि यदि प्रतिरोधियोंका पक्ष सच्चा नहीं होगा तो इसका फल उन्हें और केवल उन्हें ही भोगना पड़ेगा। मैं यह भली भांति जानता हूँ कि एक ऐसे देशमें, जहाँ असमान रूपसे विकसित

अनेक जातियाँ रहती हैं, किसी ईमानदार नागरिक द्वारा वहाँके कानूनका विरोध करनेकी सलाह दिये जानेमें सुशासनको क्या खतरे हैं। किन्तु, मैं यह नहीं मानता कि विधायकोंसे गलती हो ही नहीं सकती। मेरा विश्वास है कि प्रतिनिधि विहीन वर्गोंके साथ व्यवहार करनेमें वे सदा उदार या कमसे-कम न्यायपूर्ण भावनासे भी परिचालित नहीं होते। मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि यदि अनाक्रामक प्रतिरोधकी नीति आम तौरपर स्वीकार कर ली जाये तो हमारे विधायकोंकी मूर्खतापूर्ण भूलके कारण वतनी लोगोंके धैर्य खो देनेपर (जो असम्भव नहीं है) भयानक मृत्यु-संघर्ष और रक्तपातका जो खतरा रहता है वह सदाके लिए टल जा सकता है।

यह कहा गया है कि जिन लोगोंको कानून पसन्द न हो, वे देश छोड़कर बाहर जा सकते हैं। गद्दीदार कुर्सीपर बैठकर यह सब कह देना बहुत सहज है, लेकिन लोगोंके लिए न तो यह सम्भव है और न शोभनीय ही कि अपने विरुद्ध बने कुछ कानूनोंको न माननेके कारण वे अपने घर-बारको छोड़ दें। बोअर-कालमें जब डचेतर गोरोंने कानूनके सख्त होनेकी शिकायतकी थी तब उनसे भी यही कहा गया था कि यदि कानून पसन्द नहीं है तो वे देश छोड़कर जा सकते हैं, लेकिन उन्होंने न जाना ही बेहतर समझा। क्या भारतीय जो अपने आत्म-सम्मानके लिए लड़ रहे हैं, कैद या उससे भी कड़े दण्डसे डरकर देशसे भाग जायेंगे।

नहीं श्रीमन्, यदि मेरा वस चले तो पशु-बलके सिवा और कोई शक्ति भारतीयोंको इस देशसे हटा नहीं सकती। नागरिकका यह कोई कर्तव्य नहीं है कि अपने ऊपर लादे गये कानूनोंका वह आँख मूँदकर पालन करे। और यदि मेरे देशवासियोंका ईश्वरमें और आत्माके अस्तित्वमें विश्वास है तो उनके मस्तिष्क, इच्छाशक्ति तथा आत्माएँ आकाशके परिंदोंकी भाँति उन्मुक्त और तेजसे-तेज तीरकी पहुँचसे परे रहेंगी, भले ही वे अपने शरीरपर राज्यकी सत्ता स्वीकार कर जेल जायें, देश-निकाला भोगें। जनरल स्मट्स, जिनकी एक नेकदिल उपनिवेश मन्त्री द्वारा मंजूर किये गये दमनकारी कानूनोंमें बड़ी आस्था है, यह भूल जाते हैं कि जो एशियाई अन्तःकरणकी पुकार-पर आज लड़ रहे हैं, वे उनके किसी उपायसे झुकेंगे नहीं। यदि नेताओंके हटते ही मेरे देशवासी झुक गये, तब तो हम ऐसे ही कानूनके योग्य होंगे। लेकिन तब भी अनाक्रामक प्रतिरोधकी अर्थात् ईसा मसीहकी "बुराईका विरोध मत करो" वाली शिक्षाकी शुद्धता प्रमाणित हो ही जायेगी।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

स्टार, ३०–१२–१९०७

३५२. भाषण: चीनी संघमें[1]

[जोहानिसवर्ग
दिसम्बर ३०, १९०७]

जो लोग समझते ह कि यह लड़ाई धर्मकी लड़ाई नहीं है या इसमें धर्म नहीं है, वे नहीं जानते कि धर्मका क्या अर्थ है। मेरा विश्वास है कि मैंने बहुत-से धर्मोंके सम्बन्धमें कुछ-न-कुछ ज्ञान प्राप्त किया है। हर धर्मकी यह शिक्षा है कि यदि कोई मनुष्य ऐसा कुछ करता है जिससे उसके पुंसत्वपर बट्टा लगता है, तो उसमें कोई धर्म नहीं है। अगर धर्मका अर्थ ईश्वरकी उपासना है, उसमें विश्वास रखना है, तो मुझे यह कहनेमें जरा भी संकोच नहीं कि ट्रान्सवालमें कुछ पौंड या पेन्स पानेके लिए अपने-आपको गिराना सर्वथा अधार्मिक कृत्य है। ऐसा करते हुए भी हम यह तो स्वीकार करेंगे कि यह ठीक, उचित और न्याययुक्त नहीं है। अगर इस देशके एशियाई आँखें बन्द करके अपने नेताओंके पीछे चलें, और जैसे ही नेता मैदानसे हटें, वे अधिनियमको स्वीकार कर लें, तो मेरे विचारसे वे इस कानूनके पात्र हैं। इसलिए स्थितिकी कुंजी स्वयं हमारे अपने हाथोंमें है। अगर हमें अपने पक्षके औचित्यमें विश्वास है और हम मानते हैं कि हम आगे बढ़ रहे हैं तो परवाह नहीं कि आगे क्या होनेवाला है। जनरल स्मट्स इस उपनिवेशमें जो चाहें करते रहें, और साम्राज्य-सरकार भी महामहिमके नामपर जिस बातके लिए चाहे मंजूरियाँ देती रहे, जिस पथपर हमने कदम बढ़ाया है, उससे रंचमात्र पीछे नहीं हटेंगे।

ट्रान्सवालके अधिवासी एशियाइयोंको सरकार सीमासे बाहर निकाल सकेगी, इसमें मुझे तो बड़ा सन्देह है, परन्तु अब ट्रान्सवालके सबसे बड़े वकीलके[2] युक्तियुक्त मतसे मेरा अपना मत और भी पुष्ट हो गया है।

परन्तु एकबार फिर मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप श्री लियोनार्डकी रायका अथवा किसी अन्य कानूनी रायका भरोसा न करें। इस लड़ाईमें जिसपर आप अपनी श्रद्धा केन्द्रित कर सकते हैं, सम्भवतः वह केवल आपके अपने विवेककी राय और परमात्माका साथ है। अगर आपने अन्य किसीका भरोसा किया तो वह बालूकी भीतका सहारा लेना होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-१-१९०८

१. ट्रान्सवालमें एशियाइयोंपर आयी मुसीबतमें गांधीजीने उनकी जो सेवाएँ की थीं, उनके लिए उन्हें धन्यवाद देनेके हेतु यह सभा आयोजित हुई थी। उसमें अन्य लोगोंके अतिरिक्त लगभग ४०० स्थायी निवासी चीनी उपस्थित थे। चीनी संघके कार्यवाहक अध्यक्ष श्री जे० एल० वेंग्सी इसके सभापति थे।

२. जे० डब्ल्यू० लियोनार्ड

३५३. भेंट: रायटरको[1]

[जोहानिसबर्ग
दिसम्बर ३०, १९०७]

. . . शिनाख्तके मामलेमें भारतीयोंने सरकारको बराबर सहायता देनेका प्रस्ताव किया परन्तु सरकारने उनकी सहायताके प्रस्तावोंकी उपेक्षा की। भारतीय सदैव इस बातसे सहमत रहे हैं कि ट्रान्सवालको भावी प्रवासके नियमन और नियन्त्रणका अधिकार है। सबसे अधिक चिन्ता उन्हें उन भारतीयोंकी स्थितिके बारेमें है जो अब ट्रान्सवालके वैध निवासी हैं।

श्री गांधीने इस आरोपको अस्वीकार किया कि भारतीयोंने सरकारके अधिनियमोंका अत्यन्त सन्तापजनक अर्थ लगाकर सरकारका अपमान किया है। वे हृदयसे इस बातका स्वागत करेंगे कि उनका मामला साम्राज्यीय सम्मेलनमें उठाया जाये। उन्हें विश्वास है कि इसका परिणाम एक मानवीय सन्तोषजनक व्यवस्थाके रूपमें होगा, जिसका दोनों पक्ष पालन करेंगे। श्री गांधीने शिकायत की कि अनाक्रामक प्रतिरोधियोंके साथ पेश आनेके लिए सरकारको प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके द्वारा अत्यधिक अधिकार दे दिये गये हैं। उनके खयालसे अपराधको देखते हुए यह अधिकार सर्वथा असंगत है। उन्होंने आशंका प्रकट की कि जिन भारतीयोंने पंजीयन करानेसे इनकार किया है उनके व्यापारिक परवाने १ जनवरीको अस्वीकृत हो जायेंगे। इसका परिणाम यह होगा कि वे बिना परवानेके व्यापार जारी रखेंगे।

श्री गांधीने कहा कि यहाँके भारतीयोंको भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके सूरत अधिवेशन और अन्य क्षेत्रोंसे सहानुभूति और सहायताके तार मिले हैं। — रायटर।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया, ३–१–१९०८

१. गांधीजीने यह भेंट सर रेमंड वेस्टके उद्गारोंपर टीका करते हुए दी थी। सर रेमंड वेस्टने लन्दनमें कहा था कि दोनों पक्ष "बहुत दूर" चले गये हैं। ट्रान्सवाल सरकारने "रूक्षतासे" भारतीयोंकी भावनाओंकी उपेक्षा की है और भारतीयोंने सरकारके अधिनियमका कमसे-कमके बजाय अधिकसे-अधिक अपमानजनक अर्थ लगाया है। उन्होंने समझौतेका सुझाव दिया। भारतीयोंको चाहिए कि वे "निर्दोष ढंग" से शिनाख्त करनेके कार्यमें सहायता करें उपनिवेशके अधिवासियोंके "निर्दोष पंजीयन" की शर्तपर प्रवासके नियमनमें सहयोग करें। "एक संयुक्त समिति स्थापित की जाये और भारतीय नेताओंपर कुछ उत्तरदायित्व सौंपा जाये। यदि ऐसी व्यवस्था न हो तो भारतीयोंको चाहिए कि वे ब्रिटिश प्रजाकी हैसियतसे इस कुप्रथाके विरुद्ध सम्राट्से रक्षाकी माँग करें, जो कि महामहिम उन्हें विदेशमें देनेके लिए बाध्य हैं।"

३५४. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

[दिसम्बर ३१, १९०७]
मंगलवार,

एक साथ धर-पकड़

प्रिटोरिया, पीटर्सबर्ग, जोहानिसबर्ग और जर्मिस्टनमें सरकारने दिसम्बर खाली नहीं छोड़ा। प्रिटोरियामें १२, जोहानिसबर्गमें ९, पीटर्सबर्गमें ३, और जर्मिस्टनमें १ वारंट निकाले गये। प्रिटोरियामें श्री सुलेमान सूज, श्री ए० एम० काछलिया, श्री अर्देसर बेग, श्री गौरीशंकर व्यास, श्री गुलाम मुहम्मद रशीद, श्री इस्माइल जुमा, श्री रहमत खाँ, श्री चुनीलाल शेठ, श्री तुलसी, श्री गंगादीन तथा श्री मणिलाल देसाई; जोहानिसबर्गमें श्री गांधी, श्री थम्बी नायडू, श्री सी० एम० पिल्ले, श्री नवाब खाँ, श्री समंदर खाँ, श्री कड़वा, श्री क्विन, श्री ईस्टन और श्री फोर्तोएन; पीटर्सबर्गमें श्री मोहनलाल खंडेरिया, श्री अमरशी गोकल और श्री अम्बालाल[1] तथा जर्मिस्टनमें रामसुन्दर 'पण्डित' के नाम वारंट निकाले गये थे। इनमें श्री रहमतखाँ नगरसे बाहर होनेके कारण गिरफ्तार नहीं हुए। श्री काछलिया खबर मिलते ही अपने कामको अधूरा छोड़कर सम्मनके स्वागतके लिए फोक्सरस्टसे प्रिटोरिया दौड़े गये; जब कि रामसुन्दर भाग गया। श्री चुनीलाल और तुलसीने मुकदमा स्थगित करवाया।

रामसुन्दरकी कहानी बताना आवश्यक है। शुक्रवारको जब पुलिस कमिश्नरकी सूचना आई तब उक्त भाई साहब श्री गांधीके कार्यालयमें मौजूद थे और उन्होंने कहा था कि वे शनिवारको अदालतमें उपस्थित हो ही जायेंगे। लेकिन जर्मिस्टन जाकर उन्होंने अपने जो दो एक शिष्य थे उन्हें बुलाकर उनसे कह दिया कि वे और अधिक जेल स्वयं बर्दाश्त नहीं कर पायेंगे। इसलिए उनका विचार चले जानेका है। शिष्योंने बहुत समझाया किन्तु रामसुन्दरपर भय सवार हो गया था, इसलिए किसीकी न मानकर औरोंको खबर दिये बिना ही उन्होंने चुपकेसे नेटालकी ट्रेन पकड़ ली। इस प्रकार वे जैसे चढ़े थे वैसे ही गिर गये हैं। उनके सम्बन्धमें मैंने इस पत्रमें बहुत लेख लिखे। वे अब गलत हो गये। उनके सम्बन्धमें जो कविताएं थीं वे व्यर्थ हो गईं। खोटा रुपया खरा हो ही नहीं सकता। यह लड़ाई ऐसी है कि सबका सत्त्व अन्तमें जाकर प्रकट हो ही जायेगा। कौमके हिसाबमें रामसुन्दर अब जीवित नहीं हैं। अब हमें उनको भूल जाना है।

इसके अतिरिक्त और सब तो दृढ़ दीखते हैं। गिरफ्तार होनेवालोंमें प्रायः सभी जातियाँ आ जाती हैं। अर्थात् चार सूरती मुसलमान, एक मेमन, दो पठान, एक पारसी, एक ब्राह्मण, तीन बनिये, एक कलकत्तेका हिन्दू, एक सिक्ख, दो ईसाई, एक लुहाणा, तीन मद्रासी हिन्दू और तीन चीनी इस प्रकार मिलकर तेईस एशियाई गिरफ्तार हुए हैं। उनमें से श्री सूज, श्री देसाई, श्री व्यास, श्री खंडेरिया, श्री नायडू, इन सबके बाल-बच्चे ट्रान्सवालमें हैं। इनमे कई व्यापारी हैं; कई नौकर हैं। इस प्रकार प्रत्येक कौमके लिए प्रसन्न होनेकी बात है।

१. मूलमें अम्बाईलाल।

व्यापारी अधिक क्यों नहीं गिरफ्तार हुए?

यह प्रश्न उठा है। मेरा खयाल है कि सरकारको परवानेके सम्बन्धमें व्यापारियोंको सताना है, इसीलिए शायद श्री ईसप मियाँ आदिको फिलहाल छोड़ दिया है। फिर उन्हें छोड़ देनेका यह कारण भी हो सकता है कि कुछ व्यापारियोंने सरकारको लिखा है कि यदि धरनेदार आदि उपद्रवी लोग हट जायें तो वे कानूनके अधीन होनेको तैयार हैं। इस कारण उनको गिरफ्तार नहीं किया गया ऐसा जान पड़ता है। कुछ ऐसोंको पकड़ा है जिन्होंने लड़ाईमें कोई भाग नहीं लिया है। इसके कारण खोजनेकी इस समय मुझे आवश्यकता नहीं दीखती।

प्रवासी कानूनपर हस्ताक्षर क्यों हुए?

धर-पकड़ हो जानेके कारण प्रवासी कानून मंजूर होनेकी बात कुछ पीछे पड़ गई है। और उसके बारेमें लोगोंका डर काफूर हो गया है। उस कानूनपर हस्ताक्षर होनेका कारण हम स्वयं हैं, ऐसा मैं मानता हूँ। जैसा कि मैं ऊपर बता चुका हूँ, कई व्यापारियोंने पत्र लिखा है कि यदि कुछ व्यक्ति हट जायें तो वे कानूनके अधीन हो जायेंगे। फिर और कोई पंजीयकके पास किसीकी दो-चार बातें कह आता है। यह सब बढ़ा-बढ़ाकर लॉर्ड एलगिनके पास पहुँचाई जाती हैं कि यदि प्रवासी कानून पास हो जाये तो सभी लोग पंजीयन करा लेंगे। ऐसी बातें लॉर्ड एलगिनके पास पहुँचें और कानूनपर हस्ताक्षर हो जायें तो इसमें क्या आश्चर्य? सन्तोषकी बात यह है कि भारतीय कौम कानूनको डकार गई दीखती है।

कुछ डरपोक

फिर भी कुछ डरपोक निकल आये हैं। इनमें से कुछ थोड़ेसे मेमन पीटर्सबर्गमें बाकी रह गये थे, उनमेंसे कुछकी ओरसे अर्जी पहुँच गई है कि वे अब झुकनेके लिए तैयार हैं। मैं तो ऐसा ही मानूँगा कि ज्यों-ज्यों कष्ट बढ़ेगा त्यों-त्यों इस प्रकारका कूड़ा छँटता जायेगा और जो बच रहेगा वह खरा सोना रहेगा। वे ही कौमकी नावको बन्दरगाहपर पहुँचायेंगे। जो लिहाजके मारे शूर बनते हैं किन्तु असलमें डरपोक हैं वे टिक पायेंगे, ऐसा माननेका कोई कारण नहीं है।

भय व्यर्थ है?

परन्तु ऐसा भय अकारण है। हजारों आदमियोंको देश-निकाला होनेवाला नहीं है। और सभी गोरे मानते हैं कि इस कानूनको माननेवालोंकी ट्रान्सवालमें बुरी गत होगी।

प्रवासी कानूनके विनियम

इस अधिनियमके अन्तर्गत जो विनियम बनकर प्रकाशित हुए हैं उनका अनुवाद सम्पादक अन्यत्र देगा। इस समय तो उस अधिनियमकी एक ही अनोखी बातकी चर्चा कर रहा हूँ। उसके अन्तर्गत जो अनुमतिपत्र, पास इत्यादि निकलनेवाले हैं उन सबपर दसों अँगुलियाँ लगानी हैं। ये विनियम गोरे-काले सबपर लागू होते हैं। विलायतसे आनेवाले गोरे नौकरोंके पास इस प्रकारका पास होगा तभी वे ट्रान्सवालमें आ सकेंगे। अब सही-सही समझमें आ सकेगा कि खूनी कानूनकी लड़ाई अँगुलियोंकी लड़ाई नहीं है, बल्कि वह कानूनके गुप्त प्रहारके विरोधमें है। हम प्रवासकी धाराका विरोध करें सो तो है ही नहीं। फिलहाल तो वह कानून

हमारे लिए बेकार है। जो लोग खूनी कानूनके अधीन हुए हैं, वे ही उसका उपयोग कर सकते हैं। हम लोगोंका तो इसके निर्वासनवाले खण्डसे ही सम्बन्ध है। लेकिन ऊपरकी बात ध्यान देने योग्य है। अँगुलियोंकी बात हटा दी जाये तो भी खूनी कानून हम मंजूर कर ही नहीं सकते। वह कानून ही विष रूप है। उसकी तुलना और कानूनोंके साथ हो ही नहीं सकती।

गांधीकी अनुपस्थितिमें कौन?

श्री गांधीकी अनुपस्थितिमें काम करनेवालेके बारेमें सवाल उठा है। मेरी मान्यता है कि श्री पोलकने भारतीय कौमको अपना जीवन अर्पण कर दिया है। उन्हें इस प्रश्नकी अच्छी जानकारी हो गई है। वे कुलीन व्यक्ति हैं। उनकी लेखनीमें तेज है। उनकी अंग्रेजी बहुत अच्छी है। वे बहुत-से अंग्रेजोंके सम्पर्कमें आ चुके हैं। और हर भारतीय उन्हें जानता है। कई बातोंमें उनसे सहायता मिल सकती है, इसमें कोई शक नहीं। इसलिए ब्रिटिश भारतीय संघके नाम जो पत्रादि आयेंगे उनकी व्यवस्था भी वे कर सकेंगे। यह अधिक ठीक होगा कि जहाँतक बने उन्हें पत्र अंग्रेजीमें लिखे जायें।

अनाक्रामक प्रतिरोधका प्रचार

भारतीय मुकदमोंका विवरण समाचरपत्रोंमें बहुत आ रहा है और दीख पड़ता है कि हरएक अखबारका रुख पूरी तरहसे हमारे पक्षमें है। बहुत-से गोरे तो अब जनरल स्मट्सके कारण शर्मिन्दा हो रहे हैं। 'ट्रान्सवाल लीडर' ने इन नये मुकदमोंको चलानेपर भारतीयोंके पक्षमें सहानुभूतिपूर्ण आलोचना की है।

अब क्या सम्भव है?

जान पड़ता है, अब लड़ाईका अन्त जल्दी ही आनेवाला है। जो गिरफ्तार किये गये हैं उनके अतिरिक्त फिलहाल औरोंको गिरफ्तार किया जायेगा, ऐसा नहीं दीखता। परवाना सम्बन्धी अड़चनें, एवं श्री गांधी और दूसरोंकी अनुपस्थितिसे उत्पन्न प्रभावको सरकार परखेगी और इसपर भी अगर कौम अधिकतर दृढ़ रही तो जान पड़ता है मार्च महीनेमें निबटारा हो जायेगा। इसका सारा दारोमदार हमपर है।

'जाको राखे साँइयाँ'

जनरल स्मट्सने भारतीयोंके लिए जो जाल बिछाया था उसे हटाना पड़ा है। आज (मंगलवारके) प्रातःकाल श्री नायडू, श्री पिल्ले, श्री ईस्टन, श्री कड़वा तथा श्री गांधी जेल-महलमें पधारनेवाले थे। परन्तु दस बजेसे पहले टेलीफोन आया कि अदालत जानेकी बिलकुल जरूरत नहीं है। जब नोटिस मिले तब अदालतमें हाजिर हों। इसलिए इस समय तो ऊपर बताये हुए भारतीय जवान कारावासके सुखका स्वाद नहीं ले पायेंगे। इससे फूल नहीं जाना चाहिए। अब तो सभी भारतीय समझ गये होंगे कि संघर्ष कठिन होगा। जेल तो जाना ही पड़ेगा; इसमें कुछ सन्देह नहीं है। जिनको अभीतक गिरफ्तार नहीं किया है उनको आगे चलकर गिरफ्तार किया जायेगा, ऐसा ही मानना चाहिए।

अब तो सभीको अपने हथियार सँभालकर, तैयार होकर प्रतीक्षा करनी है। जनरल क्रौंजी और उनकी फौज एक बार चौबीसों घंटे बख्तर पहनकर तैयार रहा करती थी;

वैसा ही हमें करना है। गिरफ्तार नहीं किये जायेंगे, यह खबर आनेपर लोग जोशमें आ गये श्री गांधीका कार्यालय घिर गया। भाषण हुए। इसी बीच रास्तेपर यह सभा हुई। इसपर सिपाहीने आकर सूचना दी कि नगरपरिषदकी इजाजतके बिना रास्तेपर सभा नहीं करनी चाहिए। इससे सब बिखर गये। इस समय तो सभी भारतीयोंमें जोश दीख पड़ता है।

देश-निकालेकी आशंका ही नहीं

प्रवासी कानूनके अन्तर्गत दिये जानेवाले देश-निकालेपर श्री लेनर्डने जो राय दी है, पूरी तरह हमारे पक्षमें है; और उससे जाहिर होता है कि भारतीयोंको हरगिज देश-निकाला नहीं दिया जा सकेगा। देनेका विचार किया गया, तो लड़ेंगे। भारतीय अधीर न होकर घरमें जमकर बैठे रहेंगे और जो हानि होगी उसे सहन कर लेंगे तो सब-कुछ ठीक हो जायेगा।

हॉस्केनकी सहानुभूति

मंगलवारको श्री हॉस्केन विशेष रूपसे श्री गांधीके कार्यालयमें आये, और उन्होंने गद्-गद् होकर अपनी सहानुभूति प्रकट की। वे भली भांति समझ गये हैं कि हमारी लड़ाई धार्मिक है। अनेक नामांकित गोरे आपसमें ऐसी ही चर्चा कर रहे हैं। अब तो प्रायः सभी गोरे हितैषी डटकर लड़नेको ही कह रहे हैं।

धोखेबाज भारतीय

डेलागोआ-बेसे खबर आई है कि दो लुटेरे भारतीय ट्रान्सवालसे डेलागोआ-बे गये हैं। वे लोगोंसे कहते हैं कि प्रति व्यक्ति १२ पौंड १० शिलिंग मिलें तो वे श्री चैमनेको डेलागोआ-बे बुलाकर अनुमतिपत्र दिला देंगे। इसे मैं बिलकुल झूठ मानता हूँ। श्री चैमने इस प्रकार कभी पंजीयन नहीं कर सकते। मैं प्रत्येक भारतीयसे ऐसे व्यक्तियोंसे सतर्क रहनेकी सिफारिश करता हूँ। ऐसे लोग अनुमतिपत्र नहीं दिला सकते और इस प्रकारके मनुष्य कौमको सरकारकी अपेक्षा अधिक हानि पहुँचाते हैं।

डर्बनमें सरकारकी दगाबाजी

तार आया है कि अपने देशसे आनेवाले भारतीयको डर्बनमें ही गुलामीका चिट्ठा दे दिया जाता है और [तब] वह भारतीय यहाँ आता है। डर्बनके भारतीय बहुत तार करते हैं, बातें करते हैं। मैंने अनेक बार कहा है कि किसी व्यक्तिको देशसे आनेवाले सभी भारतीयोंसे मिलना चाहिए, और उनको कानून समझाना चाहिए। फिर भी कोई इतना आसान काम करता हो, ऐसा नहीं जान पड़ता। तब फिर उनका ट्रान्सवालको ढाढ़स बँधाना किस काम का? मुझे आशा है कि डर्बनमें ऐसा एक भारतीय तो होगा ही कि जो स्टीमरसे उतरनेवाले भारतीयोंसे मिलकर [उनकी योजनाके बारेमें] पूछताछ कर सके। आवश्यक जान पड़े तो ऐसे भारतीयोंसे डेलागोआ-बेमें भी मिलना चाहिए।

पोर्ट एलिजाबेथ

पोर्ट एलिजाबेथके संघने २५ पौंडकी सहायता ब्रिटिश भारतीय संघको भेजी है। यह सधन्यवाद स्वीकृत की जाती है।

भारतीयोंकी सभा

शुक्रवारकी शामको हमीदिया भवनमें एक विशाल सभा हुई। करीब १,००० आदमी उपस्थित थे। लोगोंमें बड़ा उत्साह था। प्रवासी कानूनकी निन्दाका प्रस्ताव पास किया गया और तार द्वारा विलायत भेजा गया।

चीनियोंकी सभा

उसी शाम चीनियोंकी सभा हुई। श्री क्विनने अपने देश-निकालेकी सम्भावनाके कारण अपनी मण्डलीके स्थानापन्न अध्यक्षके रूपमें श्री पोलकको नियुक्त करनेका प्रस्ताव किया,[1] जो स्वीकृत हो गया। श्री पोलकने भाषण दिया। सबके-सब साहससे भरे हुए थे और सभीके मनोंमें अन्ततक लड़नेका उत्साह था।

अधिक सभाएँ

जोहानिसवर्गमें जगह-जगह सभाएँ हुई हैं। सोमवारकी शामको चीनियोंकी सभा हुई; इसके बाद मद्रासी लोगोंकी सभा थी। दोनों सभाओंका वातावरण जोश और हौसलेसे भरा हुआ था। श्री गांधी उपस्थित थे। सोमवारकी रातको भारतीयोंकी एक विशाल सभा हुई। उसमें चीनी प्रतिनिधि उपस्थित थे। श्री ईसप मियाँने व्याख्यान दिया जिसमें उन्होंने लोगोंको दृढ़ रहने और नेताओंकी जगह भरनेकी सिफारिश की।

प्रिटोरियामें सभा

प्रिटोरियामें सोमवारको सभा की गई। ३०० आदमी उपस्थित थे। श्री हाजी हबीब प्रमुख थे। श्री गांधी और चार चीनी नेता खास तौरपर आये थे। श्री गांधीने भाषणमें कहा कि हमें चीनियोंके ऐक्यका उदाहरण ग्रहण करना है। यदि हम अपना कर्तव्य पूरा करते रहें और ट्रान्सवाल सरकार या सारा राज्य हमारे खिलाफ रहा तो भी कुछ बिगड़नेवाला नहीं है। मुझे तो जीतका विश्वास है। सही लड़ाई तो अब, इसी समय शुरू होने जा रही है। श्री सूजने कहा कि चाहे जो हो, मैं इस कानूनको नहीं मानूँगा। श्री देसाईने बतलाया कि वे देश-निकालेके लिए राजी हैं। श्री बेग बोले कि कुर्बानी देनेसे ही जीत मिलती है, इतिहासमें इसके उदाहरण मिलते हैं। उपस्थित सज्जनोंमें से श्री मनजी और दूसरे लोग भी बोले। श्री हाजी हबीबने कहा कि श्री गांधीके वचन सुननेका यह अन्तिम अवसर है। फिर भी देश-निकाला हो जानेपर हम दृढ़ रहकर उनको वापस बुला सकेंगे। हम देश-निकालेसे या परवाना रोके जानेसे डरनेवाले नहीं हैं।

इस सभामें ज्यादा आदमी नहीं थे यह बात गोरे अखबारवालोंकी निगाहसे छूटी नहीं दीखती।

प्रिटोरियामें बाड़ेका मुकदमा

श्री रतनजी मकनके लिए एशियाई बाजारमें बाड़ेके पट्टेके वास्ते अर्जी दी गई थी। उसके उत्तरमें टाउन क्लार्कने कहलाया है कि "प्रार्थी पंजीकृत न होनेके कारण ट्रान्सवालका

१. यह उस विवरणसे भिन्न पड़ता है जो इसी तारीखके **इंडियन ओपिनियन**के अंग्रेजी विभागमें दिया गया है। उक्त विवरणके अनुसार श्री क्विनने अपनी अनुपस्थितिमें एक कार्यवाहक अध्यक्षकी नियुक्तिकी घोषणा करते हुए बताया कि श्री एच० एस० एल० पोलक संघके अवैतनिक सलाहकार नियुक्त किये गये हैं।

अवैध निवासी माना जायेगा।" इस प्रकार सरकार एशियाई कानूनका विरोध करनेवालोंको अधिक तंग करना चाहती हैं। ये सब हमारी अवदशाके लक्षण हैं। और इसे समझकर ट्रान्सवालके भारतीय अपना बन्धन तोड़नेके लिए अधिक दृढ़ हुए बिना नहीं रहेंगे।

कैनडलका पत्र

श्री जॉर्डनने फैसला देते हुए जो आलोचना की थी उसके उत्तरमें श्री कैनडलने 'लीडर' में पत्र लिखा है कि "पहले भारतीयोंने एक अँगूठा लगाया था — और वह स्वेच्छासे। इस समय १८ निशान माँगे जाते हैं और सो भी अनिवार्य रूपसे। इसे भारतीय सचमुच धार्मिक आपत्ति मान सकते हैं। सच्चा मुसलमान कभी अपनी सभी अँगुलियाँ नहीं लगायेगा। ऐसा करना मूर्ति चित्रित करनेके समान होगा और इस बातकी मुसलमानी मजहबमें मनाही है।"

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-१-१९०८

३५५. पत्र : एशियाई-पंजीयकको

[जोहानिसबर्ग]
दिसम्बर ३१, १९०७

सेवामें
एशियाई पंजीयक
[प्रिटोरिया
महोदय,]

मुझे डेलागोआ-बेसे अभी-अभी एक पत्र मिला है। उससे ज्ञात हुआ है कि ट्रान्सवालके कोई दो भारतीय इस समय डेलागोआ-बेमें लोगोंको बरगला रहे हैं। उनका कहना है कि जो भारतीय ट्रान्सवालमें प्रवेशका अनुमतिपत्र पानेके इच्छुक हैं वे यदि उनको प्रति व्यक्ति १२ पौंड १० शिलिंग दें तो आप उन्हें डेलागोआ-बेमें ही अनुमतिपत्र देनेको राजी हो जायेंगे।

मुझे कहना न होगा कि मैं उपर्युक्त कथनको, जहाँतक आपका सम्बन्ध है, अपमानजनक मानता हूँ। परन्तु यह निश्चित है कि उक्त भारतीय इस प्रकारकी बात सीधे-सादे लोगोंको अपना शिकार बनानेके लिए ही कहते रहे हैं। अतएव क्या मैं आपसे यह प्रार्थना कर सकता हूँ कि आप जिस प्रकार भी मुनासिब समझें, डेलागोआ-बेके ब्रिटिश भारतीयोंको सूचित कर दें कि वे ऐसे किन्हीं भी लोगोंकी बात सच न मानें। यह भी बता दें कि अनुमतिपत्र या प्रमाणपत्र केवल प्रिटोरियामें आपके कार्यालयमें ही प्राप्त किये जा सकते हैं। अपनी तरफसे मैंने 'इंडियन ओपिनियन' के स्तम्भों तथा अन्य जरियोंसे लोगोंको सावधान करनेकी पूरी कोशिश की है।

[आपका, आदि,
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-१-१९०८

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

एशियाई कानून संशोधन अधिनियम

१८८५ के कानून ३ में संशोधनार्थ

(२२ मार्च, १९०७ [को] स्वीकृत)

ट्रान्सवाल सरकार द्वारा प्रकाशित पूरा अधिकृत पाठ नीचे दिया जाता है:

महामहिम सम्राट् द्वारा ट्रान्सवाल विधान परिषद और विधान सभाकी सलाह और अनुमतिसे निम्नलिखित कानून बनाया जाता है:

निरसन

१. संसदके प्रस्तावों द्वारा १२ अगस्त १८८६ की धारा १४१९ और १६ मई १८९० की धारा १२८ से संशोधित सन् १८८५ के कानून ३ की धारा २ का उपखण्ड (ग) इसके द्वारा रद किया जाता है।

परिभाषाएँ

२. इस अधिनियममें, जबतक वह मूल पाठसे असंगत न हो,

"एशियाई" का अर्थ होगा १८८५ के कानून ३ की धारा एकमें बताया गया पुरुष, जो मलायामें उत्पन्न और दक्षिण आफ्रिकाके किसी ब्रिटिश उपनिवेश या अधिकृत प्रदेशका अधिवासी न हो और न ही १९०४के श्रम आयात-अध्यादेशके अन्तर्गत लाया गया व्यक्ति अथवा चीनी वाणिज्य दूतावासकी सेवामें नियुक्त कोई अधिकारी हो;

"एशियाई पंजिका" (रजिस्टर ऑफ़ एशियाटिक्स) का अर्थ होगा वह पंजिका जो इस कानूनके अन्तर्गत विनियममें बताई गई विधिसे रखी जायेगी;

"पंजीयक" का अर्थ होगा वह अधिकारी जो गवर्नर द्वारा एशियाई पंजिका रखनेके लिए नियुक्त किया जाये और ऐसा कोई भी व्यक्ति जो कानूनके अनुसार उस पदका कार्य वहन करे;

"आवासी न्यायाधीश" में सहायक आवासी न्यायाधीश भी सम्मिलित होगा;

"विनियम" का अर्थ होगा इस अधिनियमके खण्ड अठारहके अन्तर्गत बनाया गया कोई भी विनियम;

"अभिभावक" का अर्थ होगा सोलह वर्षसे कम आयुके एशियाईके पिता-माता अथवा कोई दूसरा व्यक्ति जिसके संरक्षण या नियंत्रणमें ऐसा एशियाई उस समय रहता हो; या यदि ऐसा कोई व्यक्ति न हो तो ऐसे एशियाईका मालिक;

"पंजीयन प्रार्थनापत्र" का अर्थ होगा ऐसा प्रार्थनापत्र जो एशियाई पंजिकामें रखा जायेगा, वह विनियम द्वारा बताई गई विधिसे और विहित रूपमें दिया जायेगा और उसके साथ इस अधिनियम या विनियम द्वारा विहित विवरण और शिनाख्तके निशान होंगे;

"प्रार्थी" का अर्थ होगा वह व्यक्ति, जो अपनी ओरसे पंजीयनका प्रार्थनापत्र देता है या जिसकी ओरसे उसका संरक्षक प्रार्थनापत्र देता है;

"पंजीयन प्रमाणपत्र" का अर्थ होगा इस अधिनियमके अन्तर्गत विनियमों द्वारा विहित रूपमें पंजीयनका प्रमाणपत्र;

"वैध धारक", किसी पंजीयन प्रमाणपत्रके सम्बन्धमें प्रयुक्त अर्थमें वह व्यक्ति होगा जिसका पंजीयन उसके द्वारा प्रमाणित किया जाता है।

उपनिवेशके सब वैध अधिवासी एशियाइयोंका पंजीयन आवश्यक

३. (१) इसके बाद दिये गये अपवादोंको छोड़कर प्रत्येक एशियाई जो इस उपनिवेशका वैध अधिवासी है, एशियाई पंजिकामें पंजीकृत होगा और उसके आधारपर पंजीयन प्रमाणपत्र पानेका अधिकारी होगा एवं उससे इस अधिनियमके खण्ड बारहमें की गई व्यवस्थाके अतिरिक्त इस पंजीयनका या पंजीयन प्रमाणपत्रका कोई शुल्क नहीं लिया जायेगा।

(२) निम्न व्यक्ति इस अधिनियमकी उद्देश्यपूर्तिके लिए इस उपनिवेशके वैध एशियाई अधिवासी समझे जायेंगे;

(एक) कोई भी एशियाई जिसे १९०२ के क्षतिपूर्ति और शान्ति-रक्षा अध्यादेश या उसके किसी संशोधनके अन्तर्गत दिये गये परवानेके द्वारा इस उपनिवेशमें आने और रहनेका विधिवत् अधिकार दिया गया हो, या जिसने १ सितम्बर १९०० और कथित अध्यादेशके पास किये जानेकी तारीखके बीचमें परवाना लेकर, बशर्ते कि वह परवाना धोखाधड़ीसे न लिया गया हो, उक्त अधिकार प्राप्त किया हो; व्यवस्था की जाती है कि, जिस परवानेमें किसी एशियाईको सीमित अवधि तक रहनेका निर्देश किया गया हो वह परवाना इस उपखण्डके अर्थके अन्तर्गत परवाना नहीं समझा जायेगा।

(दो) कोई भी एशियाई जो इस उपनिवेशमें रहता हो और ३१ मई १९०२को प्रत्यक्ष यहाँ मौजूद हो।

(तीन) ३१ मईके बाद उत्पन्न कोई भी एशियाई, जो इस उपनिवेशमें १९०४के श्रम आयात अध्यादेशके अन्तर्गत लाये गये किसी श्रमिककी सन्तान न हो।

एशियाइयोंको निश्चित समयके भीतर पंजीयनका आवेदन देना आवश्यक

४. (१) प्रत्येक एशियाई, जो इस उपनिवेशमें इस अधिनियमके लागू होनेके दिन रहता हो, उस तारीख या उन तारीखोंसे पहले, उस स्थान या उन स्थानोंमें और उस व्यक्ति या उन व्यक्तियोंके सम्मुख जिसका या जिनका निर्देश उपनिवेश सचिव 'गज़ट' में सूचना निकाल कर करे, पंजीयनके लिए प्रार्थनापत्र देगा।

(२) प्रत्येक एशियाई, जो इस उपनिवेशमें इस अधिनियमके लागू होनेकी तारीखके बाद प्रविष्ट हो और जो इस अधिनियमके अन्तर्गत पहले पंजीकृत न हुआ हो, इस उपनिवेशमें प्रवेश करनेपर आठ दिनके भीतर निर्धारित व्यक्तिको और निर्धारित स्थानपर पंजीयनके लिए प्रार्थनापत्र दे; बशर्ते कि वह खण्ड सत्रहके अन्तर्गत दिये गये परवानेके अनुसार प्रविष्ट न हुआ हो।

व्यवस्था की जाती है कि:

(क) जिस तारीख तक पंजीयनका प्रार्थनापत्र दिया जाना है उसकी समाप्तिपर किसी एशियाई बच्चेकी आयु आठ वर्षसे कम हो तो इस खण्डके अन्तर्गत उसके लिए पंजीयन प्रार्थनापत्र देनेकी आवश्यकता नहीं होगी;

(ख) उस एशियाई बच्चेके मामलेमें, जो इस अवधिकी समाप्तिपर आठ वर्षका हो; किन्तु सोलह वर्षसे कम आयुका हो ऐसा प्रार्थनापत्र उस बच्चेकी ओरसे उसका संरक्षक देगा; और यदि इस प्रकार प्रार्थनापत्र न दिया जाये तो सोलह वर्षकी आयु पूरी होनेके बाद, एक महीनेके भीतर उस बच्चेको स्वयं देना होगा।

पंजीयक मंजूर करेगा तो प्रार्थियोंको पंजीकृत करेगा और नामंजूर करनेकी हालतमें नोटिस देगा

५. (१) पंजीयक इससे पिछले खण्डके अन्तर्गत पंजीयनके प्रत्येक प्रार्थनापत्रपर विचार करेगा और प्रत्येक प्रार्थीको, जो इस उपनिवेशका वैध अधिवासी हो या जिसका प्रार्थनापत्र उसने मंजूर किया हो, पंजीकृत करेगा और ऐसे प्रार्थीको या संरक्षकको जिसने उसकी ओरसे प्रार्थनापत्र दिया हो, पंजीयन-प्रमाणपत्र जारी करायेगा।

(२) यदि पंजीयकको यह प्रतीत हो कि कोई प्रार्थी इस उपनिवेशका वैध अधिवासी नहीं है, तो वह उसको पंजीकृत करनेसे इनकार कर सकता है; और इनकारीकी हालतमें, प्रार्थीकी आयु सोलह सालकी या ज्यादा होनेपर उसको प्रार्थनापत्रपर दिये गये पतेसे डाक द्वारा इनकारीकी सूचना भिजवायेगा; और इस सूचनाकी एक प्रतिलिपि जिस जिलेमें वह प्रार्थनापत्र दिया गया था उस जिलेके न्यायाधीशके कार्यालयके मुख्य द्वारपर चिपका दी जायेगी; और पंजीयक इस सूचना द्वारा प्रार्थीको जिलेके आवासी न्यायाधीशके सम्मुख उसमें निर्धारित किये गये समयपर, जो इस सूचनाकी तारीखसे कमसे-कम चौदह दिन बाद होगा, उपस्थित होने और यह बतानेका निर्देश देगा कि उसको उस उपनिवेशसे चले जानेकी आज्ञा क्यों न दी जाये; और यदि प्रार्थी उस सूचनामें दिये गये समयपर उपस्थित न हो, या उपस्थित होनेपर आवासी न्यायाधीशको यह सन्तोष न दिला सके कि प्रार्थी उपनिवेशका वैध अधिवासी है, तो आवासी न्यायाधीश यदि प्रार्थी सोलह साल या उससे अधिक आयुका हो, लिखित आज्ञा देकर उसे निर्दिष्ट अवधिके अन्दर उपनिवेशसे चले जानेका आदेश देगा। यह व्यवस्था सदा रहेगी कि यदि यह आदेश प्रार्थीकी अनुपस्थितिमें दिया जाये तो अवधिका आरम्भ उसको आदेश मिलनेकी तारीखसे होगा, और यह आज्ञा १९०३ के शान्ति-रक्षा अध्यादेशके खण्ड छः के अन्तर्गत दी गई समझी जायेगी और इस अध्यादेशके खण्ड सात और आठ भी इसी प्रकार लागू होंगे। यह व्यवस्था भी की जाती है कि यदि आवासी न्यायाधीशको प्रार्थीके उपनिवेशका वैध अधिवासी होनेका विश्वास हो जायेगा तो वह पंजीयकको प्रार्थीका पंजीयन करने और उसे पंजीयन प्रमाणपत्र देनेका आदेश दे देगा।

संरक्षकों द्वारा विवरण देने और प्रार्थनापत्र भेजनेकी व्यवस्था

६. (१) कोई भी एशियाई जो आठ वर्षसे कम आयुके किसी एशियाई बच्चेका संरक्षक हो, अपनी ओरसे पंजीयनका प्रार्थनापत्र देनेपर नियमके अनुसार बच्चेका विवरण और शिनाख्तके निशान देगा; और यदि संरक्षक स्वयं पंजीकृत है तो उसके द्वारा दिया गया पूर्वकथित विवरण अस्थायी रूपसे पंजिकामें दर्ज कर लिया जायेगा, और संरक्षक बच्चेकी आयु आठ वर्षकी होनेके बाद एक वर्षके भीतर अपने निवासके जिलेके आवासी न्यायाधीशके कार्यालयमें उस बच्चेकी ओरसे पंजीयनका प्रार्थनापत्र देगा;

(२) इस अधिनियमके लागू होनेकी तारीखके बाद उपनिवेशमें पैदा हुए प्रत्येक एशियाई बच्चेका संरक्षक, बच्चेकी आयु आठ वर्षकी होनेके बाद एक वर्षके भीतर, उसकी ओरसे अपने निवासके जिलेके आवासी न्यायाधीशके कार्यालयमें पंजीयनका प्रार्थनापत्र देगा;

व्यवस्था की जाती है कि:

(क) जहाँ कोई संरक्षक किसी एशियाई बच्चेकी ओरसे, जिसका वह संरक्षक है, इसके द्वारा निर्धारित समयके भीतर पंजीयनका प्रार्थनापत्र नहीं देता, वहाँ वह संरक्षक पंजीयक या किसी आवासी न्यायाधीश द्वारा माँगे जानेपर किसी बादकी तारीखमें यह प्रार्थनापत्र देगा;

(ख) जब कोई प्रार्थनापत्र, जो इस खण्डके अन्तर्गत एक एशियाई बच्चेके संरक्षक द्वारा दिया जाना चाहिए, नहीं दिया जाता है, या जब ऐसा प्रार्थनापत्र अस्वीकार कर दिया जाता है तब पंजीयनका प्रार्थनापत्र ऐसे एशियाई बच्चेको सोलह वर्षकी आयु होनेके बाद एक मासके भीतर अपने निवासके जिलेमें आवासी न्यायाधीशके कार्यालयमें देना चाहिए।

वह आवासी न्यायाधीश, जिसके कार्यालयमें इस खण्डके अन्तर्गत कोई प्रार्थनापत्र दिया जाता है, उस प्रार्थनापत्रके कागजात और उससे सम्बन्धित सब दस्तावेज पंजीयकको भिजवा देगा, जो उसके नियमानुकूल होनेके सम्बन्धमें सन्तोष कर लेनेपर प्रार्थीका पंजीयन कर देगा, और उसको या उसके संरक्षकको पंजीयन प्रमाणपत्र जारी करा देगा।

जिन एशियाइयोंके संरक्षक विवरण नहीं दे सके हैं उनके द्वारा सोलह वर्षकी आयु होनेपर प्रार्थनापत्र

७. जब संरक्षक द्वारा विवरण न देनेके कारण किसी एशियाई बच्चेके सम्बन्धमें, जो आठ वर्षसे कम आयुका है, ऐसा विवरण जिसका विधान पिछले खण्डमें किया गया है, पंजिकामें अस्थायी रूपसे दर्ज न किया गया हो तो भी पंजीयनका प्रार्थनापत्र बच्चेकी ओरसे संरक्षक द्वारा ही उस बच्चेकी आयु आठ वर्षकी होनेके बाद एक वर्षके भीतर दे दिया जाना चाहिए; और यदि यह न दिया जाये तो वह उस एशियाई बच्चेको सोलह वर्षकी आयु होनेके बाद एक मासके भीतर अपने निवासके जिलेके आवासी न्यायाधीशके कार्यालयमें स्वयं देना चाहिए; उस प्रार्थनापत्रके कागजात और उससे सम्बन्धित सब दस्तावेज पंजीयकको भिजवा दिये जायेंगे जो अपने विवेकाधिकारके अनुसार प्रार्थीके पंजीयनका निर्णय करेगा और उसको या उसके संरक्षकको पंजीयन प्रमाणपत्र देगा।

प्रार्थनापत्र न देनेपर दण्ड

८. (१) जो व्यक्ति किसी एशियाई बच्चेके बारेमें अपनी ओरसे या उस बच्चेके संरक्षकके रूपमें इस अधिनियमके अन्तर्गत प्रार्थनापत्र न देगा, वह अपराधी सिद्ध होनेपर अधिकसे-अधिक सौ पौंड जुर्मानेका और जुर्माना न देनेपर अधिकसे-अधिक तीन मासके सादे या सपरिश्रम कारावासके दण्डका पात्र होगा।

(२) जो व्यक्ति इस उपनिवेशमें सोलह वर्षसे कम आयुके ऐसे एशियाई बच्चेको लायेगा जो यहाँका वैध निवासी न हो, और जो ऐसे बच्चेको किसी व्यापार या व्यवसायमें नियुक्त करेगा, वह अपराधी होगा और अपराध सिद्ध होनेपर नीचे लिखे दण्डोंका पात्र ठहरेगा:

(क) इस खण्डके उपखण्ड (१) में बताये गये दण्डोंका, और

(ख) यदि ऐसे व्यक्तिको पंजीयन-प्रमाणपत्र प्राप्त हो तो पंजीयक उसके पंजीयनको रद कर सकेगा; इसपर उपनिवेश-सचिव उसको उपनिवेशसे चले जानेका आदेश दे सकता है। ऐसी आज्ञा सन् १९०३ के शान्ति-रक्षा अध्यादेशके खण्ड ८: के अन्तर्गत जारी की गई आज्ञा समझी जायेगी और तदनुसार उक्त अध्यादेशके खण्ड सात और आठ लागू होंगे।

(३) सोलह वर्षसे अधिक आयुका कोई भी एशियाई, जो उपनिवेश-सचिव द्वारा 'गजट' में घोषित की गई तारीखके बाद उपनिवेशमें पाया जाये, और आगे बताई गई माँग करनेपर अपना पंजीयन-प्रमाणपत्र, जिसका वह वैध अधिकारी हो, प्रस्तुत न कर सके, बिना वारंट गिरफ्तार किया जा सकता है और आवासी न्यायाधीशके सम्मुख पेश किया जा सकता है एवं यदि वह उस न्यायाधीशको यह सन्तोष करानेमें असमर्थ रहे कि वह पंजीयन प्रमाणपत्रका वैध धारक है, और जिस अवधिके भीतर उसको ऐसे प्रमाणपत्रके लिए प्रार्थनापत्र देना है, वह समाप्त नहीं हुई है, तो न्यायाधीश यदि अगले उपखण्डकी स्थिति लागू न होती हो तो, उसको लिखित आज्ञा देकर उसमें दिये गये समयके भीतर उपनिवेशसे चले जानेका निर्देश करेगा और वह आज्ञा शान्ति-रक्षा अध्यादेशके खण्ड छः के अन्तर्गत दी गई आज्ञा समझी जायगी और तदनुसार उक्त अध्यादेशके खण्ड सात और आठ लागू होंगे।

(४) यदि कोई एशियाई इस अधिनियममें दिये समयके भीतर पंजीयनका प्रार्थनापत्र देनेमें असमर्थ रहा हो, और यदि वह न्यायाधीशके सम्मुख प्रस्तुत किया जानेपर उसको यह सन्तोष दिला सके कि उसकी इस असमर्थताका कोई न कोई सन्तोषजनक और पर्याप्त कारण था, तो न्यायाधीश पहले बताई गई आज्ञा देनेके बजाय ऐसे एशियाईको तुरन्त पंजीयनका प्रार्थनापत्र देनेका निर्देश कर सकता है; और यदि ऐसा एशियाई उस निर्देशका पालन करेगा तो उसका प्रार्थनापत्र सब बातोंमें वैसा ही माना जायेगा मानो वह अधिनियममें दी गई अवधिके भीतर ही दिया गया हो; और इस अधिनियमकी सब धाराएँ वैसे ही लागू होंगी, जैसे प्रार्थनापत्र देनेपर लागू होतीं। किन्तु यदि वह ऐसे निर्देशका पालन करनेमें असमर्थ रहेगा तो न्यायाधीश उसके निष्कासनकी आज्ञा दे देगा, जिसका उल्लेख ऐसे एशियाईके सम्बन्धमें पहले किया जा चुका है।

पंजीयन प्रमाणपत्र माँगनेपर पेश किया जाये

९. सोलह वर्ष या उससे अधिक आयुका प्रत्येक एशियाई, जो इस उपनिवेशमें प्रवेश करता या रहता है, उपनिवेशके कानून द्वारा स्थापित पुलिस दलके किसी भी सदस्य या उपनिवेश-सचिव द्वारा अधिकार-प्रदत्त किसी दूसरे व्यक्तिकी माँगपर अपना पंजीयन प्रमाणपत्र, जिसका वह वैध धारक है, दिखायेगा और वैसे ही माँगनेपर विनियममें बताये गये विवरण और शिनाख्तके निशान देगा।

सोलह वर्षसे कम आयुके प्रत्येक एशियाई बच्चेका संरक्षक पहले कहे गये अनुसार माँग करनेपर पंजीयन प्रमाणपत्र, जिसका वह बच्चा वैध धारक है, प्रस्तुत करेगा और इस अधिनियमके अनुसार या ऐसे बच्चेके सम्बन्धमें बनाये गये नियमके अनुसार आवश्यक विवरण और शिनाख्तके निशान देगा।

पंजीयन प्रमाणपत्रोंके प्रमाण

१०. प्रत्येक पंजीयन प्रमाणपत्र सर्वत्र इस बातका निर्णयात्मक प्रमाण माना जायेगा कि उसका वैध धारक १९०३ के शान्ति-रक्षा अध्यादेशमें आई किसी बातके बावजूद इस उपनिवेशमें आने और रहनेका हकदार है; सदा व्यवस्था यह रहेगी कि यह खण्ड उन लोगोंपर लागू न होगा जिनको १९०३ के शान्ति-रक्षा अध्यादेशके खण्ड दसके अन्तर्गत उपनिवेशसे चले जानेकी आज्ञा दी जा चुकी हो।

खोये हुए पंजीयन प्रमाणपत्र पानेवालेका कर्तव्य

११. जिस व्यक्तिको कोई पंजीयन प्रमाणपत्र या अन्य कोई अनुमतिपत्र मिले, जो खण्ड 'सत्रह'के अन्तर्गत निकाला गया हो और जिसका वह वैध धारक न हो, वह उसको यथासम्भव शीघ्र एशियाई पंजीयक, प्रिटोरियाको दे देगा, या डाकसे पहुँचा देगा।

जो व्यक्ति इस खण्डके अनुसार कार्रवाई करनेमें असमर्थ रहेगा, वह अपराधी सिद्ध होनेपर अधिकतम पचास पौंड जुर्माने या जुर्माना न देनेपर अधिकतम एक मासके सादे या सपरिश्रम कारावासके दण्डका पात्र होगा।

पंजीयन प्रमाणपत्र खोने या नष्ट होनेपर व्यवस्था

१२. यदि कभी किसीका पंजीयन प्रमाणपत्र खो जाये या नष्ट हो जाये तो उसके वैध धारकको तुरन्त उसे नया करनेके लिए पंजीयकको प्रार्थनापत्र देना चाहिए और पंजीयक, ऐसे व्यक्ति द्वारा पंजीयन प्रमाणपत्रोंको नये करनेके प्रार्थनापत्रोंसे सम्बन्धित नियमोंकी पूर्ति की जानेपर, और पाँच शिलिंग शुल्क दिया जानेपर, उस प्रमाणपत्रको नया कर देगा। उक्त शुल्क प्रार्थनापत्रपर राजस्व टिकट लगाकर दिखाया जायेगा। और उस टिकटपर उस प्रार्थनापत्रको लेनेवाला अधिकारी मुहर लगा देगा।

एशियाइयोंको प्रमाणपत्र पेश करनेपर व्यापारिक परवाने दिये जायेंगे, अन्यथा नहीं

१३. उपनिवेश-सचिव द्वारा 'गज़ट' में घोषित की गई तारीखके बाद किसी एशियाईको १९०६ के माल परवाना अध्यादेश या उसके किसी संशोधन या नगरपालिकामें लागू किसी उपनियमके अन्तर्गत व्यापारिक परवाना तबतक न दिया जायेगा, जबतक वह उस परवानेको देनेके लिए नियुक्त व्यक्तिके सामने अपना वैध पंजीयन प्रमाणपत्र प्रस्तुत न करेगा और नियममें बताये गये विवरण और शिनाख्तके निशान न देगा।

एशियाईकी आयुका प्रमाण

१४. जब कभी इस अधिनियमके अन्तर्गत किसी मुकदमेमें या किसी कार्रवाईमें किसी एशियाईकी आयुका प्रश्न उठे, तब वह एशियाई, जबतक उसकी आयु अन्यथा सिद्ध न कर दी जाये तबतक, उसी आयुका माना जायेगा जिसे पंजीयकने अपने द्वारा दिये गये किसी प्रमाणपत्रमें अपने मतसे उसकी प्रत्यक्ष आयु प्रमाणित की हो।

शपथपत्र या शपथपूर्वक की गई घोषणा विनियम द्वारा स्टाम्प-करसे मुक्त

१५. विनियमके अन्तर्गत किसी व्यक्तिको, जो अपनी ओरसे या किसी अन्य व्यक्तिकी ओरसे पंजीयन प्रमाणपत्रका प्रार्थनापत्र देता है, कोई शपथपत्र देना हो या शपथपूर्वक घोषणा करनी हो तो वे स्टाम्प-करसे मुक्त होंगे।

पंजीयनके प्रार्थनापत्रों और पंजीयन प्रमाणपत्रोंसे सम्बन्धित अपराध

१६. कोई भी व्यक्ति जो:

(१) पंजीयनके प्रार्थनापत्रके उद्देश्यसे या उसके सम्बन्धमें या पंजीयन प्रमाणपत्र प्राप्त करनेके उद्देश्यसे कोई जालसाजीका काम करता है या कोई झूठा बयान देता है या कोई झूठा बहाना करता है या किसी व्यक्तिको ऐसे काम या बयान या बहानेके लिए उत्तेजित करता, सहायता देता या प्रेरित करता है;

(२) कोई जाली पंजीयन प्रमाणपत्र बनाता है;

(३) किसी पंजीयन प्रमाणपत्रको, जिसका वह वैध धारक नहीं है, या किसी जाली पंजीयन प्रमाणपत्रको अपने प्रमाणपत्रके रूपमें काममें लाता या काममें लानेका प्रयत्न करता है;

(४) किसी व्यक्तिको उस पंजीयन प्रमाणपत्रको, जिसका वह वैध धारक नहीं है या किसी जाली पंजीयन प्रमाणपत्रको अपने प्रमाणपत्रके रूपमें काममें लानेके लिए उत्तेजित करता, सहायता देता और प्रेरित करता है; अधिकसे-अधिक पाँच सौ पौंड जुर्मानेके या जुर्माना न देनेपर अधिकसे-अधिक दो वर्षके सादे या सपरिश्रम कारावासके दण्डका या जुर्माने और कारावास दोनों दण्डोंका पात्र होगा।

उपनिवेशमें एशियाइयोंको सीमित काल तक रहनेके परवाने देनेका अधिकार

१७. (१) सन् १९०३ के शान्ति-रक्षा अध्यादेशके किसी भी विधानके बावजूद उपनिवेशमें प्रवेशका परवाना देना-न देना पूरी तरह उपनिवेश-सचिवके निर्णयपर छोड़ दिया गया है; वह विनियमों द्वारा बताये गये रूपमें दिया जा सकता है, एवं उसके द्वारा किसी एशियाईको उपनिवेशमें प्रवेश करने और परवानेमें बताई गई अवधितक निवास करनेका अधिकार होगा। इस अवधिकी समाप्तिपर यह माना जायेगा कि जिस व्यक्तिको उस परवानेके द्वारा उपनिवेशमें प्रवेशका अधिकार दिया गया है अब उपनिवेशमें रहनेका उचित अधिकारी नहीं है और यदि वह उसमें रहता हुआ मिलेगा तो बिना वारंट गिरफ्तार कर लिया जायेगा और उक्त अध्यादेशके खण्ड सात और आठका विधान उस व्यक्तिपर ऐसे लागू होगा, मानो उसको निर्दिष्ट अवधि बीत जानेपर उक्त अध्यादेशके खण्ड छः के अन्तर्गत उपनिवेशसे चले जानेकी आज्ञा दी गई हो और वह उस आज्ञाका पालन करनेमें असमर्थ रहा हो।

(२) उक्त अध्यादेशके खण्ड नौका विधान इस खण्डके अन्तर्गत दिये गये सब परवानोंपर लागू होगा।

(३) इस अधिनियमके लागू होनेकी तारीखसे पहले किसी एशियाईको क्षतिपूर्ति और शान्ति-रक्षा अध्यादेश १९०२ या उसके किसी संशोधनके अन्तर्गत जो परवाना दिया गया हो और जिसमें उसे उपनिवेशमें केवल एक सीमित समयतक रहनेका अधिकार बताया गया हो, वह इस खण्डके अन्तर्गत दिया गया परवाना समझा जायेगा।

(४) उपनिवेश-सचिव अपने निर्णयसे आज्ञा दे सकता है कि वह व्यक्ति जिसे इस खण्डके अन्तर्गत दिये गये परवानेसे उपनिवेशमें प्रवेश और निवासका अधिकार मिला हो, उस परवानेकी अवधिमें मद्य-परवाना अध्यादेश १९०२ या उसके संशोधनके प्रयोजनके लिए रंगदार व्यक्ति नहीं समझा जायेगा; और ऐसी आज्ञा ऐसे परवानेपर दर्ज की जायेगी और वह ऐसे प्रयोजनोंके लिए पूरी तरह लागू होगी।

(५) उपनिवेश-सचिव ऐसी आज्ञा, जैसी पिछले उपखण्डमें बताई गई है, ऐसे किसी भी व्यक्तिके सम्बन्धमें निकाल सकता है जो एशियाई प्रजातिका हो और जो इस अधिनियमकी धाराओंके अन्तर्गत न आता हो।

विनियम बनानेका अधिकार

१८. सपरिषद गवर्नर नीचे दिये गये किसी भी प्रयोजनके लिए समय-समयपर विनियम बना सकता है, उनमें परिवर्तन कर सकता है और उनको रद कर सकता है:

(१) इस अधिनियमके अन्तर्गत रखी जानेवाली पंजिकाका रूप निर्देश करनेके लिए;

(२) पंजीयनके लिए जो प्रार्थनापत्र दिया जायेगा, उसकी विधि और उसका रूप और किसी प्रार्थी या प्रार्थीके संरक्षक द्वारा ऐसे प्रार्थनापत्रके उद्देश्यसे या उसके सम्बन्धमें जो विवरण या शिनाख्तके निशान दिये जायेंगे उनका निश्चय करनेके लिए;

(३) पंजीयन प्रमाणपत्रका रूप निर्देश करनेके लिए;

(४) यह निर्धारित करनेके लिए कि निम्न व्यक्तियों द्वारा अपने विवरण और शिनाख्तके चिह्न कैसे दिये जायेंगे;

(क) इस अधिनियमके खण्ड छः के अन्तर्गत आठ वर्षसे कम आयुके एशियाई बच्चेके संरक्षक द्वारा;

(ख) इस अधिनियमके खण्ड नौमें उल्लिखित माँगपर किसी एशियाई द्वारा;

(ग) किसी एशियाई द्वारा जिसने अपने खोये हुए या नष्ट हुए पंजीयन प्रमाणपत्रको नया करनेके लिए प्रार्थनापत्र दिया हो;

(घ) किसी एशियाई द्वारा जिसने व्यापारिक परवानेके लिए प्रार्थनापत्र दिया हो;

(५) इस अधिनियमके खण्ड सत्रहके अन्तर्गत दिये जानेवाले परवानेका रूप निश्चित करनेके लिए।

सामान्य दण्ड

१९. कोई भी एशियाई या किसी एशियाईका संरक्षक, जो इस अधिनियमकी किसी शर्तको पूरा करनेमें असमर्थ रहा हो, जहाँ अन्य विधान है उसके परे, अपराधी सिद्ध होनेपर अधिकतम सौ पौंड जुर्मानेके या जुर्माना न देनेपर अधिकतम तीन मासके सादे या सपरिश्रम कारावासके दण्डका पात्र होगा।

कुछ सेवा सम्बन्धी शर्तनामोंके अन्तर्गत आये हुए एशियाइयोंके सम्बन्धमें व्यवस्था

२०. सन् १९०४ के श्रम-आयात अध्यादेशमें जो बातें दी गई हैं, उनके बावजूद ऐसे किसी भी एशियाईको, जिसके पास वैध पंजीयन प्रमाणपत्र है और जो इस उपनिवेशका वैध अधिवासी है एवं जिसे उक्त अध्यादेशकी तारीखसे पहले उचित परवानेके अनुसार प्रवेशकी अनुमति दी गई है, इसलिए उपनिवेशमें प्रवेश करने या रहने या उसमें लाये जानेसे न रोका जायेगा कि, वह सेवा सम्बन्धी शर्तनामेके अन्तर्गत वहाँ है और उसने उक्त अध्यादेशके खण्ड आठमें उल्लिखित शर्तनामा नहीं किया है।

अचल सम्पत्तिके स्वामित्वके सम्बन्धमें व्यवस्था

२१. संसद्के १२ अगस्त १८८६ के प्रस्तावकी धारा १४१९ द्वारा संशोधित रूपमें १८८५के कानून ३ की धारा दोके (ख) उपखण्डमें दी गई किसी भी बातके बावजूद, इस उपनिवेशमें किसी एशियाईने उस कानूनके लागू होनेसे पहले जो भी अचल सम्पत्ति ले ली है और जिसका पंजीयन उस कानूनके लागू होनेके पहले या पीछे उस एशियाईके नाम हो चुका है, वह सम्पत्ति उस एशियाई द्वारा दूसरे एशियाईको वसीयतनामेसे या अन्य उत्तराधिकारके रूपमें हस्तान्तरित की जा सकती है।

नाम और लागू होनेकी तारीख

२२. यह अधिनियम सब प्रयोजनोंके लिए एशियाई कानून संशोधन अधिनियम १९०७ कहा जा सकता है और यह तबतक लागू न होगा जबतक गवर्नर 'गज़ट' में यह घोषणा न करें कि महामहिम सम्राट् इसको अस्वीकृत करना नहीं चाहते; और उसके बाद यह उस तारीखको जिसको गवर्नर घोषणा द्वारा सूचित करेंगे, लागू हो जायेगा।

शान्ति-रक्षा अध्यादेश

उक्त अधिनियममें १९०३ के शान्ति-रक्षा अध्यादेश संख्या ५ के जिन खण्डोंका उल्लेख है वे निम्न हैं:

गिरफ्तार लोगोंपर न्यायाधीशके सम्मुख मुकदमा

६. प्रत्येक व्यक्ति, जो इस प्रकार गिरफ्तार किया जायेगा, जितनी जल्दी हो सके, एक न्यायाधीशके सम्मुख पेश किया जायेगा और यदि वह न्यायाधीशको सन्तोष न दिला सकेगा कि इस अध्यादेशकी धाराओंके अन्तर्गत उसको इस उपनिवेशमें प्रवेश करने और रहनेका उचित अधिकार है, तो न्यायाधीश उसको लिखित आज्ञा देकर उतने समयमें, जिसका उल्लेख उस आज्ञामें होगा, उपनिवेशसे चले जानेका आदेश दे सकता है। यह व्यवस्था की जाती है कि यदि ऐसा व्यक्ति परवाना ले चुकनेकी शपथपूर्वक घोषणा करता है और उसको पेश करनेमें असमर्थताका सन्तोषजनक कारण देता है; या वह शपथपूर्वक यह कहता है कि वह सन्तोषजनक प्रमाण दे सकता है कि वह उन वर्गोंका है जो इस कानूनके खण्ड दोकी व्यवस्थाके द्वारा परवाना लेनेकी शर्तसे मुक्त हैं, तो वह जमानती या गैरजमानती मुचलका देनेके बाद छोड़ा जा सकता है वह किसी भी न्यायाधीशके सामने, जिसका उल्लेख मुचलकेमें किया गया हो, और उसमें बताये गये समयमें, ऐसा परवाना या सबूत, जो भी हो, पेश करेगा। यदि वह व्यक्ति अपने मुचलकेकी शर्तोंको पूरा करनेमें असमर्थ रहेगा तो उसका मुचलका जप्त कर लिया जायेगा।

उपनिवेशसे जानेकी आज्ञाका पालन न करनेपर दण्ड

७. उस व्यक्तिको, जिसे उपनिवेशसे जानेकी आज्ञा दी जाये, और जो आज्ञापत्रमें दिये गये समयके भीतर न जाये और उस व्यक्तिको, जिसका मुचलका पिछले खण्डकी व्यवस्थाके अनुसार जप्त कर लिया गया हो, बिना वारंट गिरफ्तार किया जा सकता है और न्यायाधीशके सामने पेश किया जा सकता है; एवं उसका अपराध सिद्ध होनेपर कमसे-कम एक मासकी और अधिकसे-अधिक छः मासकी सादी या सख्त कैदकी सजा जुर्मानेके बिना या जुर्मानेके साथ, जो ५०० पौंडसे अधिक न होगा, दी जा सकती है; एवं जुर्माना न देनेपर अधिकसे-अधिक छः महीनेकी अतिरिक्त कैदकी सजा दी जा सकती है।

उपनिवेशमें रहनेपर अतिरिक्त दण्ड

८. यदि कोई व्यक्ति, जो पिछले खण्डके अन्तर्गत कैदकी सजा पाता है, अपनी कैदकी या उसके बाद इस खण्डके अन्तर्गत दी गई कैदकी मियाद पूरी होनेके बाद उपनिवेश-सचिवसे उपनिवेशमें रहनेकी लिखित अनुमति प्राप्त किये बिना सात दिनसे अधिक समय तक रहता है — और लिखित इजाजत प्राप्त कर ली है, यह सिद्ध करनेका भार उसपर ही होगा — उसको बिना वारंट गिरफ्तार किया जा सकता है और न्यायाधीशके सामने पेश किया जा सकता है; एवं अपराध सिद्ध होनेपर उसको कमसे-कम छः मासकी और अधिकसे-अधिक बारह मासकी कैद, जुर्मानेके बिना या जुर्मानेके साथ, जो पाँच सौ पौंडसे अधिक न होगा, दी जा सकती है; एवं जुर्माना न देनेपर अधिकसे-अधिक छः महीनेकी अतिरिक्त कैदकी सजा दी जा सकती है।

जाली परवाने

९. कोई व्यक्ति जो

(१) किसी धोखाधड़ी, गलतबयानी, झूठे बहाने, झूठ, या किसी दूसरे अनुचित साधनसे, परवाना प्राप्त करता है, प्राप्त करनेका प्रयत्न करता है या किसी व्यक्तिको उसे प्राप्त करनेके लिए उत्तेजित करता है, या प्राप्त करनेमें सहायता या सहमति देता है;

(२) ऐसे प्राप्त किये गये किसी परवानेका प्रयोग करता या प्रयोग करनेका प्रयत्न करता है, या किसी व्यक्तिको प्रयोग करनेके लिए उत्तेजित करता है या प्रयोग करनेमें सहायता या सहमति देता है।

(३) ऐसे प्राप्त किये गये परवानेसे या उचित अधिकारी द्वारा न दिये गये परवानेसे इस उपनिवेशमें प्रवेश करता या प्रवेश करनेका प्रयत्न करता है उसको जुर्मानेकी, जो पाँच सौ पौंडसे अधिक न होगा

या सादी या सख्त कैदकी, जो दो सालसे ज्यादा न होगी, या जुर्माने और कैद दोनोंकी सजा दी जा सकेगी।

शान्ति और सुशासनके लिए खतरनाक व्यक्ति

१०. अगर लेफ्टिनेंट गवर्नरको यह विश्वास हो जाये कि किसी व्यक्तिको उपनिवेशकी शान्ति और सुशासनके लिए खतरनाक माननेके लिए पर्याप्त कारण मौजूद हैं, तो उसके लिए उस व्यक्तिको उपनिवेश-सचिवके हस्ताक्षरोंसे यह आज्ञा देना वैध होगा कि वह उपनिवेश छोड़कर चला जाये। उस व्यक्तिको उस आज्ञाके मिलनेके बाद उस समयके भीतर, जिसका उल्लेख आज्ञामें किया जायेगा, चला जाना होगा। यदि दिये गये समयकी समाप्तिपर वह व्यक्ति उपनिवेशमें रहता हुआ मिलेगा तो उसके विरुद्ध इस अध्यादेशके खण्ड सात और आठमें बताई गई विधिसे कारंवाई की जायेगी और उसको वे सजाएँ दी जा सकेंगी जिनका विधान उन खण्डोंमें है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-११-१९०७

परिशिष्ट २

प्रार्थनापत्र: चीनी राजदूतको

जोहानिसबर्ग,
अक्तूबर १४, १९०७

सेवामें
परमश्रेष्ठ राजप्रतिनिधि असाधारण
और पूर्ण अधिकार-सम्पन्न मन्त्री-राजदूत
महामहिम चीन-सम्राट्
लन्दन

ट्रान्सवालके चीनी संघके अध्यक्षकी हैसियतसे श्री लिअंग क्विन द्वारा प्रस्तुत किया गया प्रार्थनापत्र सविनय निवेदन है कि:

१. आपका प्रार्थी उस चीनी संघका अध्यक्ष है जो ट्रान्सवालकी स्वतन्त्र चीनी आबादीका प्रतिनिधित्व करनेके लिए चार वर्ष पूर्व जोहानिसबर्गमें स्थापित किया गया था।

२. इस समय स्वतन्त्र चीनी आबादी अनुमानतः १,१०० से ऊपर है। उनमेंसे अधिकांश जोहानिसबर्गमें बसे हैं।

३. ट्रान्सवालमें रहनेवाले अधिकांश चीनी अच्छी स्थितिके दूकानदार हैं और सभी इस उपनिवेशके पुराने अधिवासी हैं।

४. प्रार्थी परमश्रेष्ठका ध्यान एशियाई कानून संशोधन अधिनियमकी ओर आकर्षित करता है। इसे ट्रान्सवाल विधान सभाने पास किया है। इसकी प्रति संलग्न है।

५. यह विधान पहले गत वर्षके अन्तिम भागमें पास हुआ था और ट्रान्सवालका चीनी समाज इसपर इतना क्षुब्ध हुआ था कि परमश्रेष्ठके पूर्वाधिकारीके समक्ष चीनी पक्ष रखनेके लिए उसके एक विशेष प्रतिनिधिको लन्दन भेजना ठीक समझा गया था, जिससे कि ब्रिटिश सरकारके सामने उचित रूपसे सब मामला पेश किया जाये। और आपके प्रार्थीको यह कहते हुए प्रसन्नता होती है कि परमश्रेष्ठके पूर्वाधिकारीके प्रयत्नोंके परिणामस्वरूप महामहिम सम्राट्ने इस विधानको स्थगित कर दिया था।

६. अब ट्रान्सवालकी नव-निर्वाचित संसदने इसे बड़ी जल्दीमें सर्वसम्मतिसे पुनः पास कर दिया था।

७. चीनी संघकी विनम्र सम्मतिमें यह विधान हमारी प्राचीन सभ्यताको और इस तथ्यको स्वीकार करनेमें सर्वथा असफल है कि हमारा राष्ट्र एक स्वतन्त्र और प्रभुसत्तात्मक राष्ट्र है।

८. यह चीनी प्रजाजनोंको उसी स्तरपर रख देता है जिसपर भारतसे आनेवाले ब्रिटिश प्रजाजन हैं। जहाँ ब्रिटिश सरकारके लिए यह उचित हो सकता है कि वह अपने भारतीय प्रजाजनोंके साथ जैसा चाहे वैसा बर्ताव करे, वहाँ प्रार्थी सादर निवेदन करता है कि चीनी साम्राज्यके प्रजाजनोंके साथ ऐसे ढंगका व्यवहार नहीं होना चाहिए, जो उस साम्राज्यकी शानके खिलाफ हो, जिससे सम्बन्धित होनेका परमश्रेष्ठके प्रार्थीको सम्मान प्राप्त है और विशेषकर इस तथ्यको सामने रखते हुए कि चीन एक ऐसा राज्य है जिसकी ग्रेट ब्रिटेनसे मैत्री है और ग्रेट ब्रिटेनके प्रजाजनोंको चीनमें अतिप्रिय राष्ट्रका व्यवहार प्राप्त है।

९. एशियाई अधिनियमका मंशा है कि अन्योंके बीच ट्रान्सवालका प्रत्येक चीनी अधिवासी अपमान और भारी जुर्मानोंका शिकार बने और उसके पास पहलेसे जो दस्तावेज हैं, उनके स्थानपर नया पंजीयन प्रमाणपत्र ले। यह चीनियोंको निरीक्षणकी एक ऐसी पद्धतिके अधीन करता है जो सर्वथा पतनकारी है। इसका मंशा है कि माता-पिता अपने १६ वर्षसे कम आयुके बच्चोंका भी पंजीयन अत्यन्त अपमानजनक ढंगसे करायें। इसका मंशा है कि बालिग चीनी पुरुष और उनके बच्चे अपनी अँगुलियोंकी अठारह छापें दें। यह एक ऐसी माँग है जिसके लिए स्वाभाविक अपराधियोंके बारेमें ही जोर दिया जाता है। यह विधान इस धारणापर आगे बढ़ता है कि चीनियोंमेंसे बहुतेरे छलपूर्ण आवेदनपत्र देनेमें सिद्धहस्त हैं। चीनी संघ इससे सर्वथा इनकार करता है। यह चीनियोंको एक ऐसे स्तरपर गिरा देता है जो कि दक्षिण आफ्रिकाके वतनियों और दूसरे रंगदार लोगोंसे भी नीचा है। संक्षेपमें यह एक ऐसा विधान है जिसे स्वतन्त्र मनुष्य नहीं, केवल गुलाम ही स्वीकार कर सकते हैं।

१०. चीनी समाजका भाव ऊपर लिखे अनुसार होनेके कारण, इसने निश्चित किया है कि यह इस अधिनियमके सामने नहीं झुकेगा और कानूनको इस प्रकार भंग करनेके जो भी परिणाम हो सकते हैं उनको यह सहन करेगा। समाजकी समझमें इस कानूनके प्रति सत्याग्रह करनेसे उनका पूर्ण सामाजिक विनाश हो सकता है और प्रत्येक चीनी निर्वासित भी किया जा सकता है। समाजके ९०० से ऊपर सदस्योंने एक दृढ़ प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर किये हैं कि वे इस अपमानजनक कानूनको स्वीकार नहीं करेंगे।

११. चीनी संघ स्वीकार करता है कि ट्रान्सवालमें प्रवास नियमित होना चाहिए और ट्रान्सवाल उपनिवेशमें नियम विरुद्ध प्रवेशकी प्रभावशाली ढंगसे रोक होनी चाहिए। और स्थानीय सरकारकी इस कार्यमें सहायता करनेके लिए चीनी समाजने स्वेच्छया पंजीयन करानेका प्रस्ताव किया है केवल इसलिए कि चीनी समाजकी सत्यताकी परीक्षा हो जाये। इसके पीछे यह स्वीकार करनेकी भावना नहीं है कि ऐसा कोई पुनःपंजीयन आवश्यक है।

१२. यदि स्वेच्छया पंजीयनका प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया जा सकता और ठोस सहायता नहीं दी जा सकती तो चीनी समाजकी रायमें ब्रिटिश सरकारको जोरदार निवेदनपत्र भेजा जाना चाहिए कि प्रत्येक चीनी इस शर्तपर चीन देशको वापस भेज दिया जाये कि उसके निहित अधिकारों जैसे व्यापार, निवास इत्यादिकी हानिके बदले उसे पूर्ण मुआवजा दिया जाये।

१३. अन्तमें प्रार्थी सादर भरोसा करता है कि परमश्रेष्ठ द्वारा ट्रान्सवालमें रहनेवाले चीनी प्रजाजनोंके अधिकारोंकी पूर्ण रूपसे रक्षा होगी और न्याय तथा दयाके इस कार्यके लिए प्रार्थी कर्तव्याधीन होकर सदा दुआ करेगा।

[आपका, आदि,]
लिअंग क्विन
अध्यक्ष
ट्रान्सवाल चीनी संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २६-१०-१९०७

परिशिष्ट ३

ट्रान्सवाल प्रवासी-प्रतिबन्धक विधेयक

नीचे एक विधेयकका मसविदा दिया जाता है जो ट्रान्सवालके 'गवर्नमेंट गज़ट' में प्रकाशित किया गया है। यह "इस उपनिवेशमें प्रवासपर प्रतिबन्ध लगाने; इससे निषिद्ध प्रवासियोंको और अन्य लोगोंको निकालनेकी व्यवस्था करने और एक एशियाई विभाग स्थापित करने और चलानेके लिए" है।

महामहिम सम्राट् द्वारा और ट्रान्सवालकी विधान परिषद् और विधान सभाकी सलाह और अनुमतिसे निम्न विधान बनाया जाता है:

१. १९०३ का शान्ति-रक्षा अध्यादेश इसके द्वारा रद किया जायेगा और रद किया जाता है; शर्त यह है कि इस कार्रवाईसे १९०७ के एशियाई कानूनकी कोई सत्ता या कानूनी अधिकार-क्षेत्र, जो उस कानूनको अमलमें लानेके उद्देश्यसे दिया गया हो, प्रभावित या कम न होगा।

२. इस अधिनियममें या इसके अन्तर्गत बनाये गये किसी विनियममें, जबतक संदर्भसे असंगत न हो,

"विभाग" का अर्थ होगा इस अधिनियमकी धाराओंके अन्तर्गत स्थापित और कायम प्रवासी विभाग;

"गवर्नर" का अर्थ होगा वह व्यक्ति जो उस समय इस उपनिवेशका शासन चला रहा हो और कार्यकारिणी परिषदकी सलाहसे कार्य कर रहा हो;

"कैद" का अर्थ होगा कड़ी या सादी कैद जो अपराधीको कैदकी सजा देनेवाले न्यायालय द्वारा दी जाये;

"न्यायाधीश" शब्दमें उपनिवेशके किसी भी जिलेका आवासी न्यायाधीश और सहायक आवासी न्यायाधीश भी सम्मिलित होगा;

"मन्त्री" का अर्थ होगा उपनिवेश-सचिव या ऐसा कोई अन्य मन्त्री जिसे गवर्नर समय-समयपर इस अधिनियमपर अमल करानेका काम सौंपे;

"अवयस्क" का अर्थ होगा सोलह वर्षसे कम आयुका कोई व्यक्ति;

"पुलिस अधिकारी" का अर्थ होगा उपनिवेशमें वैध रूपसे स्थापित पुलिस दलका कोई भी सदस्य;

"निषिद्ध प्रवासी" का अर्थ होगा और उसके अन्तर्गत सम्मिलित होगा, निम्न वर्गोंका ऐसा कोई भी व्यक्ति जो इस अधिनियमके लागू होनेकी तारीखके बाद उपनिवेशमें प्रवेश करना चाहता हो, या प्रवेश कर रहा हो:

१. कोई भी व्यक्ति जो उचित रूपसे अधिकृत अधिकारी द्वारा इस उपनिवेशमें भी इसके बाहर निर्देश देनेपर अपर्याप्त शिक्षाके कारण इस उपनिवेशमें प्रवेशकी अनुमतिके लिए किसी यूरोपीय भाषामें आवेदनपत्र या कोई अन्य कागज, जिसे उक्त अधिकारी लिखाना चाहे, न लिख सके या उसपर हस्ताक्षर न कर सके; विधान किया जाता है कि इस उपखण्डके प्रयोजनोंसे यीडिश यूरोपीय भाषा मानी जायेगी, यह भी विधान किया जाता है कि,

(क) यदि मन्त्री 'गज़ट' में यह नोटिस प्रकाशित करे कि किसी देशकी सरकारसे उसके प्रजाजनों या नागरिकोंके इस उपनिवेशमें प्रवेशको नियमित करनेके सम्बन्धमें व्यवस्था की जा चुकी है, तो उन प्रजाजनों या नागरिकोंको जबतक वह नोटिस जारी रहे तबतक इस उपखण्डकी धाराओंका पालन करनेकी आवश्यकता न होगी;

(ख) मन्त्री ऐसा नोटिस तबतक न निकालेगा जबतक ऐसी व्यवस्था संसदके दोनों सदनों द्वारा स्वीकृत न कर ली जाये;

(ग) ऐसा नोटिस तभी अमलके बाहर हो जायेगा जब मन्त्री 'गज़ट' में दूसरा नोटिस निकाल कर उसे रद कर दे;

(२) ऐसा कोई भी व्यक्ति जिसके पास या जिसके अधीन इस उपनिवेशमें उचित समय तक अपना निर्वाह करनेके साधन न हों; या जिसे उपनिवेशमें आने दिया जाये तो जिसका खर्च सरकारपर पड़नेकी सम्भावना हो;

(३) कोई भी वेश्या या ऐसा व्यक्ति जो वेश्यावृत्तिकी कमाईसे या अनैतिक कार्योंके लिए स्त्रियाँ उपलब्ध करके अपना गुजारा करता हो, या कराता हो।

(४) कोई भी व्यक्ति जो इस उपनिवेशमें अपने प्रवेशकी या प्रवेशके प्रयत्नकी तारीखको लागू किसी कानूनके अन्तर्गत, यदि उपनिवेशमें मिले तो, उपनिवेशसे निष्कासित किया जा सके या जिसे उपनिवेशसे जानेकी आज्ञा दी जा सके, फिर चाहे उसे उस कानूनके विरुद्ध अपराध करनेपर सजा दी जाये या उसकी धाराओंका पालन न करनेपर या अन्यथा; बशर्ते कि उसको वह सजा उसके द्वारा इस उपनिवेशके अतिरिक्त कहीं अन्यत्र किये गये अपराधपर, जिसके लिए वह क्षमा पा चुका है, न दी गई हो;

(५) कोई व्यक्ति जो १९०२ के उन्माद-घोषणा [अधिनियम] या उसके किसी संशोधनके अर्थके अन्तर्गत पागल हो;

(६) कोई व्यक्ति जो कोढ़ी हो, या किसी घृणित या खतरनाक छूतकी या उग्र बीमारीसे, जिसको विनियम द्वारा समय-समयपर बताया जाये, पीड़ित हो;

(७) कोई व्यक्ति, जिसे मन्त्री किसी भी राज्य सचिवसे या किसी (ब्रिटिश या विदेशी) उपनिवेशी सरकारके सदस्यसे या किसी दूसरे देशके अधिकारीसे कूटनीतिक सूत्र द्वारा प्राप्त सूचनाके कारण अवांछनीय समझता हो;

(८) कोई व्यक्ति जिसके सम्बन्धमें मन्त्रीका उचित आधारपर विश्वास हो कि वह यदि उपनिवेशमें प्रविष्ट होगा तो वह उसकी शान्ति, व्यवस्था और उसके सुशासनके लिए खतरनाक होगा;

किन्तु उसमें ये लोग सम्मिलित न होंगे:

(क) महामहिमकी नियमित सेनाओंके सदस्य;

(ख) दूसरे देशके किसी सरकारी जहाजके अधिकारी और नाविक;

(ग) कोई व्यक्ति जो इस उपनिवेशमें महामहिमकी सत्ता द्वारा या किसी दूसरे देशकी सरकार द्वारा अपनी पत्नी, अपने परिवार और नौकरों सहित प्रमाणित हो;

(घ) कोई व्यक्ति जो दक्षिण आफ्रिकामें महामहिमकी स्वयंसेवक सेनामें सेवा कर चुका हो और सेनासे नेकनामीके साथ मुक्त हुआ हो एवं जो निषिद्ध प्रवासीकी परिभाषाके उपखण्ड (३), (४), (५), (६), (७) या (८) के अन्तर्गत न आता हो;

(ङ) किसी व्यक्तिके, जो निषिद्ध प्रवासी न हो, पत्नी और अवयस्क बच्चे;

(च) भूमध्य रेखाके दक्षिणकी आफ्रिकी मूल जातियोंके वंशज, जो निषिद्ध प्रवासीकी परिभाषाके उपखण्ड (३), (४), (७) या (८) के अन्तर्गत नहीं आते।

(छ) यूरोपीय लोग, जो किसान या घरेलू नौकर, कुशल कारीगर, मिस्तरी, मजदूर या खनक हैं, जो इंग्लैंडमें या अन्यत्र गवर्नर द्वारा इसके लिए नियुक्त इस उपनिवेशके ऐजेंट जनरलके हस्ताक्षरयुक्त इस आशयका प्रमाणपत्र प्रस्तुत कर सकें कि उसमें उल्लिखित व्यक्ति इस उपनिवेशमें आते ही उसके किसी प्रख्यात नियोजककी सेवा पर्याप्त मजदूरीपर और उचित अवधिके लिए करनेके उद्देश्यसे नियुक्त किया गया है;

"विनियम" का अर्थ होगा इस अधिनियमके खण्ड पन्द्रहके अन्तर्गत बनाया गया विनियम।

३. (१) गवर्नर संसद द्वारा स्वीकृत धनसे एक विभाग स्थापित कर सकता है और कायम रख सकता है जो "प्रवासी विभाग" कहा जायेगा और मन्त्रीके नियन्त्रणमें और एक अधिकारीके अधीन रहेगा जिसकी नियुक्ति समय-समयपर की जायेगी।

(२) इस विभागका कार्य उपनिवेशमें या उसके बाहर ऐसे सब काम करना होगा जो इस उपनिवेशमें निषिद्ध प्रवासियोंका प्रवेश रोकनेके लिए या उनको निष्कासित करनेके लिए आवश्यक हों या उससे सम्बन्धित हों। वह उन अधिकारोंका प्रयोग या कर्तव्योंका पालन भी करेगा जो उसको इस अधिनियम द्वारा या विनियम द्वारा दिये जायें।

(३) गवर्नर समय-समयपर ऐसे अधिकारियोंको नियुक्त कर सकता या हटा सकता है जिनका नियुक्त करना या हटाना वह इस विभागकी व्यवस्थामें सहायता देनेके लिए आवश्यक या उपयुक्त समझे और उनको ऐसे अधिकार प्राप्त होंगे एवं वे उपनिवेशमें या उसके बाहर ऐसे कर्तव्योंका पालन करेंगे जो उनको इस अधिनियम द्वारा या विनियम द्वारा सौंपे जायें।

४. गवर्नर ऐसा काम या ऐसी बातें करनेके लिए, जो इस अधिनियमके उद्देश्यों और अभिप्रायोंको कार्य रूप देनेके लिए आवश्यक या उपयुक्त हों, दक्षिण आफ्रिकाके किसी उपनिवेश या प्रदेशकी सरकारसे समय-समयपर समझौता कर सकता है।

५. ऐसा प्रत्येक निषिद्ध प्रवासी, जो उपनिवेशमें प्रवेश कर रहा हो या उसके भीतर मिले, अपराधी होगा और उसको ये सजाएँ दी जा सकेंगी:

(१) जुर्मानेकी, जो सौ पौंडसे अधिक न होगा, या जुर्माना न देनेपर कैदकी, जो ६ महीनेसे अधिककी न होगी, या जुर्माने और कैद दोनोंकी; और

(२) किसी भी समय मन्त्रीके हस्ताक्षरयुक्त वारंट द्वारा उपनिवेशसे निष्कासित किये जाने और जबतक निष्कासित न किया जाये तबतक विनियममें बताये गये अनुसार नजरबन्द रखे जानेकी; परन्तु

(क) यदि ऐसा निषिद्ध प्रवासी इस उपनिवेशमें मान्य (सौ-सौ पौंडकी) दो जमानतें इस उपनिवेशसे एक मासके भीतर चले जानेके सम्बन्धमें दे दे तो वह नजरबन्दीसे मुक्त हो सकता है;

(ख) यदि ऐसे निषिद्ध प्रवासीको कैदकी सजा दी जाये तो उसकी वह कैद उसको उपनिवेशसे निष्कासित करते ही समाप्त हो जायेगी।

६. कोई व्यक्ति, जिसे इस अधिनियमके अमलमें आनेके बाद १९०३ के अनैतिकता अध्यादेशके खण्ड तीन, तेरह या इक्कीसके या उनके किसी संशोधनके उल्लंघन करनेके अपराधमें सजा दी गई हो और कोई व्यक्ति जिसे मन्त्री यदि वह उपनिवेशमें रहता है तो, उपनिवेशकी शान्ति, व्यवस्था और सुशासनके लिए उचित आधार-पर खतरनाक मानता है, मन्त्रीके हस्ताक्षरयुक्त वारंटसे गिरफ्तार किया जा सकता है और जबतक निष्कासित न किया जाये तबतक विनियम द्वारा बताई गई विधिसे नजरबन्द रखा जा सकता है।

७. कोई व्यक्ति जो

(१) जानबूझकर किसी निषिद्ध प्रवासीको इस उपनिवेशमें प्रवेश करने या रहनेके लिए सहायता देता या उकसाता है; या

(२) जानबूझकर किसी व्यक्तिको जिसे खण्ड छः के अन्तर्गत निष्कासित किये जानेकी आज्ञा दी गई है, इस उपनिवेशमें रहनेमें सहायता देता है या उसके लिए उकसाता है; या

(३) इस उपनिवेशसे बाहरके किसी व्यक्तिसे नियोजकके रूपमें इस इरादेसे कोई समझौता करता है, या करना चाहता है कि इस अधिनियमकी धाराओंसे बचा जाये या जो ऐसा समझौता करते समय या उसका इरादा करते हुए उन धाराओंका अपना हिस्सा पूरा न कर सकेगा या जिसे ऐसी कर सकनेकी कोई उचित आशा नहीं है;

वह अपराधी होगा और दोषी पाये जानेपर जुर्मानेका, जो सौ पौंडसे अधिक न होगा, या जुर्माना न देनेपर कैदका, जो छः महीनेसे अधिककी न होगी या जुर्माने और कैद दोनोंका पात्र होगा।

८. कोई निषिद्ध प्रवासी इस उपनिवेशमें कोई व्यापार या धंधा करनेका परवाना लेने या उसमें कोई भूमि-सम्बन्धी स्वार्थ, लीजपर या जड़ खरीद या अन्य स्वार्थ प्राप्त करनेका अधिकारी न होगा; और ऐसा कोई परवाना

(यदि प्राप्त किया गया है तो) या कोई करार या अन्य दस्तावेज जिससे ऐसा स्वार्थ इस खण्डके विरुद्ध प्राप्त किया जाता है; इस अधिनियमके पाँचवें खण्डके अन्तर्गत ऐसे प्रवासीके दण्डित होनेपर अवैध हो जायेगा।

९. प्रत्येक व्यक्ति जो इस उपनिवेशमें मिलता है और जिसपर उचित रूपसे निषिद्ध प्रवासी होनेका सन्देह है, किसी भी न्यायाधीश, नगर-न्यायाधीश, पुलिस-अधिकारी या विभागके अधिकारी द्वारा वारंट बिना गिरफ्तार किया जा सकता है और वह यथासम्भव शीघ्र कानूनके अनुसार कार्रवाई करनेके लिए प्रवासी न्यायाधीशके न्यायालयमें लाया जायेगा।

१०. कोई भी निषिद्ध प्रवासी इस अधिनियमकी धाराओंसे इस कारण मुक्त न होगा और उपनिवेशमें रहने दिया जायेगा कि वह उपनिवेशमें प्रविष्ट नहीं हो सकता यह सूचना उसको नहीं दी गई हो या उसको सम्भवतः असावधानीसे आ जाने दिया गया हो या यह कारण हो कि उसके निषिद्ध प्रवासी होनेकी बात मालूम न हुई हो।

११. उस व्यक्तिको जिसे इस अधिनियमके अन्तर्गत इस उपनिवेशसे निकालनेकी आज्ञा दी गई हो और उस अन्य व्यक्तिको जिसे खण्ड सातके अन्तर्गत उस व्यक्तिको इस अधिनियमके विरुद्ध इस उपनिवेशमें प्रवेश करने या रहनेमें सहायता देने या उकसानेके जुर्ममें सजा दी जा चुकी हो, वह सब खर्च देना होगा जिसे सरकार उस व्यक्तिको उपनिवेशसे या दक्षिण आफ्रिकासे निष्कासित करनेमें या निष्कासनसे पूर्व उपनिवेशमें या अन्यत्र नजरबन्द रखनेमें करे; और उस खर्चकी रकम, विभागके अधिकारीका ऐसा प्रमाणपत्र, जिसमें उसकी विगत और पूरी रकम बताई गई हो, शेरिफके सामने प्रस्तुत करनेपर, उस व्यक्तिकी उपनिवेशमें जो सम्पत्ति होगी उसकी कुर्कीसे वसूल की जायेगी। इस कुर्कीकी विधि वैसी होगी जैसी सर्वोच्च न्यायालयके निर्णयमें दी गई हो, और उस कुर्कीसे जो रुपया मिलेगा शेरिफ द्वारा उपनिवेशके कोषाध्यक्षको सौंप दिया जायेगा जो उक्त खर्चकी रकम और कुर्कीका खर्च काटनेके बाद शेष रुपया उस व्यक्तिको भेज देगा जिसके विरुद्ध कार्रवाई की गई हो या जो उस व्यक्ति द्वारा उस रुपयेको लेनेके लिए नियुक्त किया गया हो।

१२. (१) होटलों, भोजन-गृहों, निवास-गृहों या अन्य स्थानोंके, जहाँ लोगोंको रुपया देकर या अन्य मूल्यवान कारणोंसे सोनेका स्थान दिया जाता है, मालिकों या व्यवस्थापकोंका कर्तव्य होगा कि वे एक पुस्तिका रखवायें जिसमें ऐसा स्थान प्राप्त करनेवाला व्यक्ति पहले आते ही अपना नाम, स्थायी निवास, जन्म-स्थान और वह जहाँसे अभी आया है उस स्थानको दर्ज करेगा।

(२) इस प्रकारकी प्रत्येक पुस्तिकाको पुलिसका या विभागका कोई भी अधिकारी सब उचित समयोंपर देख सकेगा।

(३) कोई भी व्यक्ति जो इस खण्डकी शर्तोंको पूरा न करेगा या ऐसे अधिकारीको उसके अन्तर्गत अपने अधिकारोंका प्रयोग करनेसे रोकेगा या उसमें बाधा डालेगा या उस पुस्तिकामें कोई बात गलत लिखेगा वह अपराधी होगा और दण्डित होनेपर जुर्मानेका, जो बीस पौंडसे अधिक न होगा, या जुर्माना न देनेपर कैदका, जो एक माससे अधिककी न होगी, या जुर्माने और कैद दोनोंका पात्र होगा।

१३. कोई व्यक्ति इस अधिनियमके या किसी नियमके विरुद्ध इस उपनिवेशमें नहीं आया है या नहीं रहा है, इसे सिद्ध करनेका भार प्रत्येक ऐसे मुकदमेमें, जो इस सम्बन्धमें चलाया जाये, अभियुक्तपर होगा।

१४. प्रत्येक आवासी न्यायाधीशके न्यायालयको इस अधिनियम या विनियमका उल्लंघन करनेपर अधिकतम सजा देनेका अधिकार होगा।

१५. गवर्नर निम्न सब उद्देश्योंसे या किसी एक उद्देश्यसे समय-समयपर इस अधिनियमसे संगत नियम बना सकता है, उनको बदल सकता है या रद कर सकता है —

(क) विभागके अधिकारियोंके अधिकार और कर्तव्य निश्चित करनेके लिए,

(ख) इस उपनिवेशमें निषिद्ध प्रवासियोंका प्रवेश रोकनेके लिए,

(ग) जिन लोगोंको इस अधिनियमके अन्तर्गत उपनिवेशसे निकालनेकी आज्ञा दी जाये उनको निकालनेके लिए,

(घ) जिन लोगोंको उपनिवेशसे निकालनेकी आज्ञा दी गई है वे जबतक निकाले न जायें तबतक उनकी नजरबन्दीके लिए,

(ङ) निषिद्ध प्रवासीकी परिभाषाके उपखण्ड (६) के प्रयोजनसे जो बीमारियाँ छूत की हैं या उड़ा हैं उनको बतानेके लिए,

(च) (१) जो लोग निषिद्ध प्रवासीकी परिभाषासे निकाल दिये गये हैं उनके वर्गोंके सम्बन्धमें उपखण्ड 'छ' में उल्लिखित प्रमाणपत्रों; (२) खण्ड **पाँच** और **छः** के अन्तर्गत मन्त्री द्वारा निकाले जानेवाले वारन्टों और (३) खण्ड **बारह**के अन्तर्गत रखी जानेवाली पुस्तिकाके फार्म निर्धारित करते हुए,

(छ) जिन स्थितियोंमें निषिद्ध प्रवासी उपनिवेशसे बाहर जाते हुए उपनिवेशमेंसे गुजरने दिये जा सकते हैं उनको निश्चित करते हुए,

(ज) सामान्यतः इस अधिनियमके उद्देश्यों और प्रयोजनोंको अधिक अच्छी तरह पूरा करनेके लिए, और वे ऐसे किन्हीं विनियमोंसे उनके भंग करनेकी सजायें बता सकते हैं जो जुर्मानेके रूपमें सौ पौंडसे या जुर्माना न देनेपर कैदके रूपमें छः महीनेकी कैदसे ज्यादा न होंगी या जुर्मानेकी और कैदकी दोनों होंगी।

१६. यह अधिनियम सब उद्देश्योंसे १९०७ का प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम कहा जा सकता है और यह उस तारीखको लागू होगा जिसका ऐलान गवर्नर 'गज़ट' में घोषणा द्वारा करे।

परिशिष्ट ४

विनियम

एशियाई कानून संशोधन अधिनियम, १९०७ के खण्ड १८ के अन्तर्गत रचित

१. जबतक प्रसंगसे असंगत न हो तबतक इन विनियमोंमें:—

"अधिनियम" का अर्थ होगा एशियाई कानून संशोधन अधिनियम, १९०७;

"वयस्क" का अर्थ होगा १६ वर्ष या उससे अधिक आयुका एशियाई पुरुष;

"प्रार्थी" का अर्थ होगा कोई व्यक्ति जो अपनी ओरसे पंजीयनका प्रार्थनापत्र देता है या वह व्यक्ति जिसकी ओरसे उसका संरक्षक पंजीयनका प्रार्थनापत्र देता है;

"पंजीयन प्रार्थनापत्र" का अर्थ होगा वह प्रार्थनापत्र जो एशियाइयोंकी पंजिका (रजिस्टर) में दर्ज करा दिया हो और जो उस विधिसे और उस रूपमें एवं उन विवरणों और शिनाख्तके निशानोंके साथ दिया गया हो, जो नियम संख्या ३ के अनुसार आवश्यक हैं;

"क्षेत्र" का अर्थ होगा न्यायाधीशका जिला या उसका वह भाग जिसे उपनिवेश-सचिव "गज़ट" में इस अधिनियमके खण्ड **चार**के उपखण्ड (१) के अन्तर्गत सूचना निकाल कर निर्धारित करे;

"एशियाई" का अर्थ होगा ऐसा कोई भी पुरुष जैसा कि १८८५ के कानून ३ की धारा एकमें बताया गया है, जो मलायामें जन्मा और दक्षिण आफ्रिकाके किसी ब्रिटिश उपनिवेश या अधिकृत प्रदेशका अधिवासी न हो; और न कोई ऐसा व्यक्ति हो जो उपनिवेशमें श्रम आयात अध्यादेश, १९०४ के अन्तर्गत लाया गया हो या चीनी वाणिज्य दूतके कर्मचारी मण्डलमें अधिकारी पदपर नियुक्त हो;

"पंजीयन प्रमाणपत्र" का अर्थ होगा इस अधिनियमके खण्ड **तीन**के उपखण्ड (१) के अन्तर्गत दिया गया पंजीयन प्रमाणपत्र;

"संरक्षक" का अर्थ होगा सोलह वर्षसे कम आयुके किसी एशियाईका पिता या उसकी माँ या कोई अन्य व्यक्ति जिसकी देखरेख या जिसके नियन्त्रणमें उक्त एशियाई फिलहाल रहता हो या यदि ऐसा कोई व्यक्ति न हो तो उस एशियाईका मालिक;

"वैध पत्र-धारक" शब्द यदि किसी पंजीयन प्रमाणपत्रके सम्बन्धमें प्रयुक्त हो तो इसका अर्थ होगा वह व्यक्ति जिसका पंजीयन उस प्रमाणपत्रके द्वारा प्रमाणित किया गया है;

"अवयस्क" का अर्थ होगा ८ सालसे अधिक और १६ सालसे कम आयुका एशियाई पुरुष;

"पुलिस दल" का अर्थ होगा इस उपनिवेशमें कानून द्वारा स्थापित पुलिस दल;

"पुलिस अधिकारी" का अर्थ होगा पुलिस दलका कोई सदस्य,

"पंजीयक" का अर्थ होगा वह अधिकारी जो गवर्नर द्वारा एशियाइयोंकी पंजिका रखनेके लिए नियुक्त किया गया हो; और उस हैसियतसे वैधरूपमें कार्य करनेवाला कोई भी व्यक्ति;

"आवासी न्यायाधीश" शब्दके अन्तर्गत सहायक आवासी न्यायाधीशका समावेश होगा।

२. एशियाई पंजीयनका फार्म वह होगा जो इसकी अनुसूची 'क' में दिया गया है।

३. पंजीयन प्रार्थनापत्रका फार्म निम्न प्रकार होगा;

(अ) वयस्क प्रार्थीके लिए इसकी अनुसूची 'ख' में दिया गया फार्म;

(आ) अवयस्क प्रार्थीके लिए इसकी अनुसूची 'ग' में दिया गया फार्म;

४.(क) प्रत्येक वयस्क, जो अपनी ओरसे पंजीयनका प्रार्थनापत्र देगा, उस व्यक्तिके सम्मुख प्रस्तुत होगा, जिसे उपनिवेश-सचिव 'गजट' में सूचना निकालकर उस क्षेत्रके लिए नियुक्त करे, जिसमें वह प्रार्थी रहता है; और वह उक्त व्यक्तिको वे सारे विवरण देगा जो इसकी अनुसूची 'ख' में दिये गये फार्मके द्वारा आवश्यक बताये गये हैं; और उक्त व्यक्तिके सामने ये चीजें पेश करेगा और उसके सुपुर्द करेगा:

१. कोई भी परवाना जो उसको क्षतिपूर्ति और शान्ति-रक्षा अध्यादेश (१९०२), या उसके संशोधनके विधानके अन्तर्गत ट्रान्सवालमें प्रवेश करने और रहनेके लिए दिया गया हो;

२. कोई पंजीयन प्रमाणपत्र या १८८५ के कानून ३ की, जिसका संशोधन बादमें हुआ, धाराओंके अन्तर्गत पंजीयनके लिए निर्धारित शुल्कके भुगतानकी रसीदें;

३. उसके पास मौजूद कोई अन्य कागजात जिन्हें वह अपने पंजीयन प्रार्थनापत्रके समर्थनमें प्रस्तुत करना चाहे।

(ख) प्रत्येक संरक्षक, जो एक अवयस्ककी ओरसे पंजीयनका प्रार्थनापत्र दे रहा हो, उस अवयस्कको लेकर पूर्वोक्त व्यक्तिके सम्मुख पेश होगा और उस व्यक्तिको अपने सम्बन्धमें और उस अवयस्कके सम्बन्धमें इसकी अनुसूची (ग) में बताये गये फार्ममें निर्दिष्ट आवश्यक विवरण देगा और उस व्यक्तिको उस अवयस्कके सम्बन्धमें इससे पहले उपखण्डमें बताये गये कागजात देगा।

(ग) पंजीयनका प्रत्येक प्रार्थनापत्र उस स्थानमें और उस तारीखसे पहले दिया जायगा जिसको उपनिवेश-सचिव 'गजट' में सूचना निकाल कर निर्धारित करेगा;

(घ) प्रत्येक व्यक्ति, जो प्रार्थनापत्र लेनेके लिए पहले कहे अनुसार नियुक्त किया जायेगा, किसी प्रार्थीके सम्बन्धमें प्रार्थनापत्रका फार्म पूरा होते ही, प्रार्थीको या उसके संरक्षकको अपने हस्ताक्षरोंसे पंजीयन प्रार्थनापत्र और उसके समर्थनमें पेश किये गये कागजातकी प्राप्तिकी लिखित स्वीकृति देगा। प्राप्तिकी स्वीकृति इसकी अनुसूची 'घ' में दिये गये फार्ममें दो प्रतियोंमें होगी और उसकी दूसरी प्रति तुरन्त उस व्यक्ति द्वारा प्रार्थनापत्र और उसके समर्थनमें प्रस्तुत किये गये कागजातके साथ पंजीयकको भेज दी जायेगी।

५. यदि पंजीयक अधिनियमके खण्ड ५ के उपखण्ड (२) के अनुसार कार्रवाई करते हुए किसी वयस्कका पंजीयन करना अस्वीकार करता है तो अस्वीकृतिकी सूचना उसी उपखण्डके अनुसार भेजी जायेगी और उसकी प्रतिलिपि आवासी न्यायाधीशको उसके कार्यालयके मुख्य द्वारपर चिपकानेके लिए भेजी जायेगी, यह सूचना अनुसूची 'ङ' में दिये गये रूपमें होगी।

६. पंजीयन प्रमाणपत्र इसकी अनुसूची "च" में दिये गये रूपमें होगी।

७. प्रत्येक वयस्क किसी पुलिस अधिकारी या उपनिवेश-सचिव द्वारा इसके लिए उचित रूपसे अधिकार दिये गये किसी भी व्यक्तिके माँगनेपर अपना वैध पंजीयन प्रमाणपत्र पेश करेगा और इसके अतिरिक्त उस पुलिस अधिकारी या पूर्वोक्त व्यक्तिके माँगनेपर निम्न विवरण देगा :

(१) अपना पूरा नाम;
(२) अपना वर्तमान निवास-स्थान;
(३) पंजीयनका प्रार्थनापत्र देनेके दिन अपना निवास-स्थान;
(४) अपनी आयु;

और उस पुलिस अधिकारी या पूर्वोक्त अन्य व्यक्तिको, या उनकी उपस्थितिमें, ये चीजें देगा:

(१) यदि लिख सकता हो तो अपने हस्ताक्षरोंका नमूना;
(२) अपने अँगूठोंके या अँगूठों और अँगुलियोंके निशान ।

८. प्रत्येक अवयस्कका संरक्षक, जिसे ऐसा पुलिस अधिकारी या पूर्वोक्त दूसरा व्यक्ति उस अवयस्कका वैध पंजीयन प्रमाणपत्र पेश करनेके लिए कहे, ऐसे प्रमाणपत्रको पेश करनेके अतिरिक्त पूर्वोक्त माँग करनेपर निम्न विवरण देगा:

(१) अपना पूरा नाम;
(२) अपना वर्तमान निवास-स्थान;
(३) उस व्यक्तिका पूरा नाम, जो अवयस्ककी ओरसे पंजीयन प्रमाणपत्रका प्रार्थनापत्र देनेकी तारीखको उसका संरक्षक था, और उस तारीखको उस व्यक्तिका निवास-स्थान;
(४) उस अवयस्ककी आयु;

और उस पुलिस अधिकारी या पूर्वोक्त अन्य व्यक्तिको, या उनकी उपस्थितिमें, उस अवयस्कके अँगूठोंके या अँगूठों और अँगुलियोंके निशान देगा ।

९. आठ वर्षसे कम आयुके एशियाई बच्चोंका प्रत्येक संरक्षक पंजीयन प्रमाणपत्रका प्रार्थनापत्र देनेपर ऐसे सब बच्चोंके सम्बन्धमें निम्न विवरण देगा:

(१) उनके पूरे नाम;
(२) प्रत्येककी आयु;
(३) प्रत्येकका संरक्षकसे सम्बन्ध;
(४) प्रत्येकका जन्म-स्थान;
(५) यदि अन्यत्र जन्मा हो तो प्रत्येककी ट्रान्सवालमें आनेकी तारीख ।

१०. प्रत्येक एशियाई अपने वैध पंजीयन प्रमाणपत्रके, या संरक्षकके रूपमें अवयस्कके वैध प्रमाणपत्रके खोने या नष्ट हो जानेपर उसे नया करनेका प्रार्थनापत्र देते समय पंजीयकको निम्न विवरण देगा:

(१) उस पंजीयन प्रमाणपत्रकी संख्या;
(२) अपना पूरा नाम;
(३) अपना वर्तमान निवास-स्थान;
(४) अवयस्कका पूरा नाम और उसकी आयु; (यदि प्रार्थनापत्र अवयस्ककी ओरसे संरक्षकने दिया हो तो) ।

और वह पंजीयकको या उस व्यक्तिको जिसे पंजीयक इस कार्यके लिए नियुक्त करे, निम्न चीजें देगा;

(१) अपने अँगूठों और अँगुलियोंके निशान; या
(२) यदि प्रार्थनापत्र अवयस्ककी ओरसे उसके संरक्षकने दिया हो तो अपने पंजीयन प्रमाणपत्रकी संख्या, अपने दायें हाथके अँगूठेका निशान और उस अवयस्कके अँगूठों और अँगुलियोंके निशान ।

११. प्रत्येक एशियाई, जो १९०५ के राजस्व परवाना अध्यादेश या उसके किसी संशोधन या नगरपालिकाके किसी चालू उपनियमके अन्तर्गत अपनी ओरसे व्यापारिक परवानेके लिए प्रार्थनापत्र देता है, उसे परवाना देनेके

लिए नियुक्त व्यक्तिके सम्मुख अपना वैध पंजीयन प्रमाणपत्र प्रस्तुत करनेके अतिरिक्त अपने सब अँगूठों और अँगुलियोंके या जिनके निशान वह व्यक्ति चाहे, उनके निशान देगा।

१२. प्रत्येक एशियाई, जो ट्रान्सवालसे अस्थायी रूपसे अनुपस्थित दूसरे एशियाईकी ओरसे व्यापारिक परवानेके लिए प्रार्थनापत्र देता है, ऐसा परवाना देनेके लिए नियुक्त व्यक्तिको नीचे लिखी चीजें देगा;

(१) अपना निजी पंजीयन प्रमाणपत्र;

(२) जिस एशियाईकी ओरसे प्रार्थनापत्र दिया जा रहा है उसका पूरा नाम;

(३) उस एशियाईका पूरा वर्तमान पता,

(४) मुख्त्यारनामा या अन्य अधिकारपत्र जिसके अन्तर्गत उसको इस परवानेको लेने या अनुपस्थित व्यक्तिके व्यापारको चलानेका अधिकार दिया गया हो, और उस मुख्त्यारनामे या अन्य अधिकारपत्र-पर अनुपस्थित व्यक्तिके दायें हाथके अँगूठेका साफ निशान हो;

और वह उस व्यक्तिको और उसके सम्मुख, आवश्यकता हो तो, अपने दायें हाथका निशान भी देगा।

१३. अधिनियमके खण्ड सत्रहमें उल्लिखित उपनिवेशमें सीमित अवधिके लिए आने और रहनेका परवाना इसकी अनुसूची, 'छ' में दिये गये रूपमें होगा।

अनुसूची 'क'

एशियाई पंजिका

पंजीयन प्रमाणपत्रकी संख्या	जारी करनेकी तारीख	पूरा नाम	प्रजाति	जाति या सम्प्रदाय	ट्रान्सवालमें रहनेवाले परिवारका विवरण			वर्गीकरण	प्रमाणपत्रकी दूसरी प्रति देनेकी तारीख	विवरण
					पत्नियोंके नाम	पुत्र या आश्रित बालक जो ८ वर्षसे कम हो (नाम आयु)	संरक्षकसे सम्बन्ध			

[अग्र भाग]

अनुसूची 'ख'

वयस्क एशियाईके पंजीयनका प्रार्थनापत्र

पूरा नाम.. प्रजाति ....

जाति या सम्प्रदाय.. आयु.............ऊँचाई ....

निवास-स्थान .... धंधा....................

शारीरिक विवरण ....

....

....

जन्म-स्थान...

ट्रान्सवालमें पहली बार आनेकी तारीख ....

३१ मई १९०२ को कहाँ रहते थे ....

पिताका नाम..मताका नाम ....

पत्नीका नाम..रहनेका स्थान..

आठ वर्षसे कम आयुके पुत्र और आश्रित बालक

नाम	आयु	निवास स्थान	संरक्षकसे सम्बन्ध

प्रार्थीके हस्ताक्षर ....

प्रार्थनापत्र लेनेवाले व्यक्तिके हस्ताक्षर ....

तारीख ....कार्यालय ....

[पृष्ठ भाग]

नाम...

दायें हाथके निशान

अँगूठा	तर्जनी	मध्यमा	अनामिका	कनिष्ठिका

बायें हाथके निशान

अँगूठा	तर्जनी	मध्यमा	अनामिका	कनिष्ठिका

एक साथ निशान

बायाँ हाथ	चार अँगुलियाँ	दायाँ हाथ	चार अँगुलियाँ

वयस्कके निशान लेनेवाला ....तारीख...........................

[अग्रभाग]

अनुसूची 'ग'

अवयस्क एशियाईकी ओरसे दिया गया पंजीयनका प्रार्थनापत्र

संरक्षकका विवरण

पूरा नाम .... प्रजाति ....

निवास स्थान ....

संरक्षकका अवयस्कसे सम्बन्ध ....

प्रमाणपत्रकी संख्या ....

अवयस्कका विवरण

पूरा नाम .... प्रजाति ....

जाति या सम्प्रदाय .... आयु ....

निवास स्थान .... धन्धा ....

३१ मई १९०२ को कहाँ रहता था ....

पिताका नाम .... माताका नाम ....

शारीरिक विवरण ....

....

....

जन्म स्थान ....

ट्रान्सवालमें आनेकी तारीख ....

संरक्षकके दायें हाथके अँगूठेका निशान
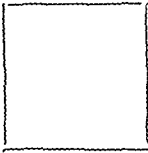
संरक्षकके हस्ताक्षर ....

अवयस्कके हस्ताक्षर ....

प्रार्थनापत्र लेनेवाले

व्यक्तिके हस्ताक्षर ....

कार्यालय ....

तारीख ....

[पृष्ठ भाग]

नाम ....

दायें हाथके निशान

अँगूठा	तर्जनी	मध्यमा	अनामिका	कनिष्ठिका

बायें हाथके निशान

अँगूठा	तर्जनी	मध्यमा	अनामिका	कनिष्ठिका

एक साथ निशान

बायाँ हाथ	चार अँगुलियाँ	दायाँ हाथ	चार अँगुलियाँ

अवयस्कके निशान लेनेवाला .... तारीख ....

अनुसूची 'घ'

प्रार्थनापत्र प्राप्तिकी स्वीकृति

....१९०......

सेवामें

....

....

....

मुझे आपके द्वारा ....की ओरसे १९०७ के एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके अन्तर्गत दिये गये पंजीयनके प्रार्थनापत्रकी और उस प्रार्थनापत्रके समर्थनमें पेश किये गये कागजातकी, जिनका ब्यौरा नीचे दिया है, पहुँच स्वीकार करनेका सम्मान प्राप्त है।

हस्ताक्षर ....

कार्यालय ....

कागजातका ब्यौरा :—

अनुसूची 'ङ'

प्रार्थनापत्र अस्वीकृतिकी सूचना

....१९०......

सेवामें

....

....

....

चूँकि आपने (महीना).................... की तारीख .... को (स्थान)...................... में वैध रूपसे ट्रान्सवालवासी एशियाइयोंकी पंजिकामें दर्ज किये जानेका प्रार्थनापत्र दिया था।

और चूँकि प्रार्थनापत्रपर विचार करनेके बाद मुझे यह प्रतीत होता है कि आप ट्रान्सवालके वैध निवासी नहीं हैं;

इसलिए आपको इसके द्वारा सूचना दी जाती है कि मैं आपको ट्रान्सवालके वैध निवासीके रूपमें पंजीयित करना अस्वीकार करता हूँ और १९०७ के एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके खण्ड पाँचके उपखण्ड (२) के अनुसार...............................आवासी न्यायाधीशके सम्मुख ....में ....की..........वीं तारीख, सन् १९०७................को १० बजे दोपहरको उपस्थित होने और यह बतानेका निर्देश देता हूँ कि आपको उपनिवेशसे चले जानेकी आज्ञा क्यों न दी जाये।

हस्ताक्षर ....

एशियाई पंजीयक

अनुसूची 'च'

पंजीयन प्रमाणपत्र

पूरा नाम ....

प्रजाति .... आयु .... ऊँचाई ....

विवरण ....

....

....

....

दायें हाथके अँगूठेका निशान

एशियाई पंजीयक

जारी करनेकी तिथि ....

धारकके हस्ताक्षर ....

इस प्रमाणपत्रके अग्रभागपर एशियाई पंजीयकके अतिरिक्त अन्य किसीको न कोई परिवर्तन करना चाहिए और न कुछ लिखना चाहिए।

अनुसूची 'छ'

अस्थायी अनुमतिपत्र

इसके द्वारा .... को, जिसका विवरण नीचे दिया जाता है, ट्रान्सवालमें आने और .... की अवधितक रहनेकी अनुमति दी जाती है जिसका आरम्भ .... से होता है।

विवरण

प्रजाति .... जाति या सम्प्रदाय ....

जन्म स्थान .... आयु .... ऊँचाई ....

निवास स्थान ....

ट्रान्सवालका नगर या स्थान जहाँ जा रहे हैं ....

शारीरिक विवरण ....

....

....

हस्ताक्षर ....

हस्ताक्षर ....

दायें हाथके अँगूठेका निशान

एशियाई पंजीयक

निशान लेनेवाला ....

स्थान ....

तारीख ....

परिशिष्ट ५

दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति

२८, क्वीन ऐन्स चेम्बर्स, ब्रॉडवे
वेस्टमिन्स्टर, एस० डब्ल्यू०
अगस्त १४, १९०७

सेवामें
परममाननीय सर हेनरी कैम्बेल बैनरमैन, जी० सी० बी०, पी० सी०, ऍड सी०
प्रधान मन्त्री

महोदय,

मेरी समितिका एक शिष्टमण्डल आपकी सेवामें उपस्थित होनेका इच्छुक है। उसके नामोंकी सूची मैं साथ बन्द कर रहा हूँ। उसका उद्देश्य यह है कि ट्रान्सवाल उपनिवेशमें अपने साथी भारतीय प्रजाजनोंकी स्थिति और उनके प्रति होनेवाले व्यवहारके बारेमें अपने विचार सादर आपके समक्ष रखे।

वे चाहते हैं कि मैं, प्रस्तावनाके रूपमें, निम्नलिखित तथ्य आपके सामने रखूँ:

इस उपनिवेशकी ब्रिटिश भारतीय जनसंख्या, हालकी जनगणनाके अनुसार १०,००० है। और जैसा कि आगे चलकर दिखाया जायेगा, यह लगभग स्थिर है। इसमें अधिक संख्या व्यापारी वर्गकी है और वे दूकानदार और फेरीवाले हैं। शेष माली, देशी सुनार, दर्जी इत्यादि दिखाये गये हैं। भारतीय कुली, खनिक या कारीगर नहीं-से हैं।

आपको मालूम होगा कि "एशियाई" (ब्रिटिश भारतीयों सहित) भूतपूर्व ट्रान्सवाल सरकार द्वारा कतिपय निर्योग्यताओंके शिकार बनाये गये थे। ये उनके अतिरिक्त थीं जिनके गैर-एशियाई विदेशी भी भागीदार थे; और १८८५ का कानून ३ यद्यपि राज्यमें एशियाई प्रवासपर रोक नहीं लगाता था तथापि ३ पौंडका पंजीयन-शुल्क लादता था, नागरिकता प्राप्त करनेके अधिकारसे वंचित रखता था, उनके अपने नामोंपर अचल सम्पत्तिका पंजीयन वर्जित करता था और कतिपय बाजारों, कक्षों और बस्तियोंमें निर्वासित होकर रहनेके लिए जवाबदेह बनाता था। ये निर्योग्यताएँ, विशेषकर नागरिकता प्राप्त करनेके अधिकारसे वंचित रखा जाना, निस्सन्देह बहुत-कुछ रंग-विद्वेषके कारण थीं। प्राचीन कानूनके अधीन श्वेत और रंगदार लोगोंके बीच स्पष्ट रूपसे एक रेखा खींच दी गई थी। उसमें यह लिखा है कि "रंगदार और श्वेतके बीच कोई बराबरी नहीं बरती जायेगी"।

इस भेद करनेवाले विधानके विरुद्ध महामहिमके मन्त्रियोंने, जिनमें लॉर्ड डर्बी और श्री चैम्बरलेन उल्लेखनीय हैं, ट्रान्सवालकी सरकारके पास समय-समयपर विभिन्न प्रस्ताव और प्रतिवाद भेजे हैं। २० जुलाई, १९०४ के एक खरीतेमें, जिसे परममाननीय अल्फ्रेड लिटिल्टनने उच्चायुक्तके नाम भेजा था, ये बहुत अच्छी तरह संक्षिप्त रूपमें वर्णित हैं:

"इसलिए युद्धके आरम्भ तक ब्रिटिश सरकारने लगातार पहले अधिकारके रूपमें और फिर १८९५ के पंच-फैसलेके अनुसार कूटनीतिक प्रयत्नोंसे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय अधिवासियोंके हितोंको कायम रखा; और सहप्रजाजनोंके प्रति व्यवहार विगत दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यके विरुद्ध ब्रिटिश मामलेका एक अंग था।"

बेशक आपको यह स्मरण दिलाना भी अनावश्यक है कि युद्धके दिनोंमें दक्षिण आफ्रिकाके अधिवासी ब्रिटिश भारतीयोंने स्वेच्छापूर्वक कैसी महत्त्वपूर्ण चिकित्सा-सेवा और अन्य सेवाएँ की थीं। जो ट्रान्सवालमें रहते थे

स्वभावतः यह निश्चित आशा रखते थे कि ट्रान्सवाल प्रदेशके साम्राज्यमें संयोजित हो जानेसे अपनी निर्योग्यताओंको तुरन्त दूर होते और अपने साथी प्रजाजनोंके साथ अपने आपको समानताका दर्जा प्राप्त करते देखेंगे। यद्यपि ट्रान्सवालपर अधिकार होनेके साथ ही गणतन्त्रके बहुत-से पुराने कानून रद कर दिये गये, तथापि १८८५ का कानून ३ इस नये उपनिवेशकी कानूनकी पुस्तकमें बना रहने दिया गया। इससे उन्हें अवर्णनीय निराशा हुई। और फिर प्रवेश युद्धसे पूर्वके निवासियों तक ही सीमित कर दिया गया; शान्ति-रक्षा अध्यादेश, जिसे नई सरकारने नये राज्यके शत्रुओंको बाहर रखनेके उद्देश्यसे पास किया था, भावी नवागन्तुक एशियाइयोंको बाहर रखनेके लिए प्रयुक्त होने लगा। अधिवासी एशियाइयोंकी वापसीको नियमित और व्यवस्थित करनेके लिए प्रथम बार एक खास महकमेकी स्थापना की गई और उन्हें अपने घरों और व्यवसायोंमें वापस जानेके लिए अनुमतिपत्र प्राप्त करनेमें विभिन्न और शोचनीय अड़चनोंका अनुभव हुआ। १९०३में उच्चायुक्तने १८८५के कानून ३ की दफाओंको कड़ाईके साथ लागू करनेका निश्चय किया, जो कि महामहिमकी सरकारकी लिखा-पढ़ीके कारण बोअर शासनमें बड़ी सीमा तक मृत प्रलेख बना हुआ था। उन समस्त एशियाइयोंको, जो अधिकारियोंको यह सन्तोष नहीं दिला सके कि वे ३ पौंडका पंजीयन शुल्क पहले दे चुके हैं, रकम देनेके लिए मजबूर होना पड़ा। पाँच हजार छियासठ भारतीयों और पाँच सौ पन्द्रह चीनियोंने कुल ९,०५९ पौंड दिये। पंजीयनका सम्पूर्ण स्वरूप ही बदल गया। गणतन्त्रमें यह, यदि आवश्यक था भी तो, केवल इतनेके लिए कि प्रदाताको ३ पौंडकी रसीद दे दी जाये। एशियाइयोंके पंजीयकने १९०४में घोषित किया कि भूतपूर्व बोअर सरकार द्वारा संकलित कोई एशियाई पंजीयन प्रलेख (यदि ऐसे प्रलेख कभी रखे जाते रहे हों) किसी जिलेमें नहीं पाये गये। इसके तीन अपवाद मिलते हैं। पुनः पंजीयनने अब प्रथम बार शिनाख्तका रूप धारण कर लिया है। अब जो प्रमाणपत्र जारी किये जा रहे हैं वे केवल ३ पौंडकी रसीदें नहीं हैं। उनमें उनके मालिकोंके नाम, उनकी पत्नियों, बच्चोंकी संख्या, मालिकोंकी आयु, उनका स्पष्ट हुलिया और अँगूठेके निशान दिये रहते हैं। इस प्रस्तावित कदमका ब्रिटिश भारतीयोंने इस आधारपर दृढ़ विरोध किया कि कानूनकी आवश्यकताओंकी पहले ही पूर्ति कर चुकनेके बाद वे पुनः पंजीयनके लिए बाध्य नहीं हैं। उच्चायुक्तको सिफारिश द्वारा इसका खण्डन हो गया और उसमें उन्होंने इसके लिए नई जरूरतके बारेमें अपनी सहमति प्रकट की। महानुभावने उन्हें विश्वास दिलाते हुए कहा :

"मेरा खयाल है कि पंजीयनसे उनकी रक्षा होती है। उस पंजीयनके साथ ३ पौंडका शुल्क जुड़ा हुआ है। यह केवल एक बार माँगा जाता है। जिन्होंने उसे पुरानी सरकारको अदा किया है उन्हें केवल यह सिद्ध करना है कि उन्होंने ऐसा किया है और उन्हें यह शुल्क दुबारा नहीं अदा करना होगा। फिर पंजीपर एक बार नाम आ जानेपर उनका दर्जा कायम हो जायेगा और आगे पंजीयन करानेकी आवश्यकता नहीं होगी और न नये अनुमतिपत्रकी आवश्यकता होगी। वह पंजीयन आपको यहाँ रहनेका, यहाँ आने जानेका अधिकार देता है।"

इसपर ब्रिटिश भारतीय समाजने नये पुनःपंजीयनको स्वेच्छया स्वीकार कर लिया और बिना किसी कानूनी या अन्य बाध्यताके एक ओरसे सबने आवश्यक परवाने ले लिये। इन परवानोंपर पूर्व वर्णित शिनाख्तके ब्यौरे अंकित हैं और आज बिना किसी अपवादके लगभग प्रत्येक ब्रिटिश भारतीय अधिवासीके पास ये परवाने हैं।

अचल सम्पत्ति रखनेके विरुद्ध पुराने नियंत्रणोंमें वस्तुतः कोई ढिलाई नहीं हुई।

एशियाइयोंको (ब्रिटिश भारतीयों सहित) बाजारों या बस्तियोंमें, जो उनके लिए खास तौरसे अलग बना दी गई हैं, पृथक् करके रखने और उपनिवेशमें, जहाँ चाहें वहाँ व्यापार करनेके लिए, परवानोंकी माँग करनेके उनके अधिकारको घटानेके विचारसे भी १९०२ और १९०३ में महामहिमकी सरकार और ट्रान्सवाल उपनिवेशकी सरकारके बीच यथेष्ट पत्र-व्यवहार हुआ था।

प्रिटोरिया और पीटर्सबर्गके हबीब मोटनके दूकानके परवानेको १९०४ में बदलनेसे इनकार करनेके फलस्वरूप सर्वोच्च न्यायालयको एक निर्णय देना पड़ा, जिसमें बस्तियोंके बाहर व्यापार करनेके उनके अधिकारको उचित माना गया।

१९०३ में, ट्रान्सवालकी खानोंमें काम करनेके लिए कुलियोंके विषयमें ट्रान्सवाल सरकार और भारत-सरकारके बीच पत्र-व्यवहार हुआ। वह असफल रहा। भारत-सरकारका आग्रह था कि उसकी स्वीकृतिके लिए एक आवश्यक शर्त यह है कि पहले वे कतिपय निर्योग्यताएँ दूर की जायें जो उपनिवेशमें रहनेवाले भारतीय व्यापारी समाजको सहनी पड़ रही हैं। ट्रान्सवाल सरकार इससे सहमत होनेमें अपनेको असमर्थ पा रही थी।

उसी वर्ष ट्रान्सवालकी सरकारने महामहिमकी सरकारके समक्ष एक खास प्रकारके विधानका प्रस्ताव प्रस्तुत किया। उसके अन्तर्गत ऐसे अधिकारोंके और भी कम कर दिये जानेका खतरा पैदा हो गया था, जो उस समय एशियाई समाजके पास बच रहे थे। इसका महामहिमकी सरकारने नीचे लिखे अनुसार उत्तर दिया था:

"परन्तु इस देशमें अब जो ब्रिटिश भारतीय हैं, जिनकी संख्या इस समय अपेक्षाकृत कम है और प्रवासके बारेमें प्रस्तावित नियंत्रणोंके कारण उसी अनुपातसे घटती जायेगी, उनके साथ व्यापारिक प्रतिस्पर्धाका भय इस प्रस्तावित विधानके लिए यथेष्ट कारण नहीं माना जा सकता। भूतकालमें महामहिमकी सरकारने इस भय द्वारा अपने विचारोंको दृढ़ताके साथ प्रभावित नहीं होने दिया। इसके विरुद्ध वर्षों तक उसने इस विषयके सम्बन्धमें भूतपूर्व दक्षिण आफ्रिकी गणतन्त्रकी नीति और कानूनोंके विरुद्ध साम्राज्य और सभ्य संसारके समक्ष बराबर प्रतिवाद किया है।

"ये कानून केवल आंशिक रूपसे लागू थे, जब कि महामहिमकी सरकारसे अब इनको कड़ाईके साथ केवल लागू करनेकी मंजूरी ही नहीं माँगी जाती, बल्कि एक विधान द्वारा सर्वोच्च न्यायालयके उस फैसलेको भी रद करनेके लिए कहा जा रहा है जिसने ब्रिटिश भारतीयोंको वे अधिकार दिये थे जिनका महामहिमकी सरकार बड़ी लगनके साथ समर्थन करती रही थी।

"महामहिमकी सरकार इस बातका विश्वास नहीं कर सकती कि ट्रान्सवालका ब्रिटिश समाज उस प्रस्तावके सच्चे स्वरूपकी कद्र करता है जिसके लिए, कुछ सदस्य आपपर दबाव डाल रहे हैं। ब्रिटिश होनेके नाते वे ब्रिटिश नामके सम्मानके उतने ही बड़े हिमायती हैं जितने कि स्वयं हम हैं; और उस सम्मानकी रक्षामें कुछ भौतिक बलिदानकी आवश्यकता पड़े तो, मुझे निश्चयपूर्वक लगता है कि, वे सानन्द उसे करेंगे। **महामहिमकी सरकारका मत है कि अधिवासी ब्रिटिश प्रजाजनोंपर उन निर्योग्यताओंको लादना, जिनके विरुद्ध हम प्रतिवाद कर चुके हैं, और जिनका शिकार, सही व्याख्याकी जानेपर, भूतपूर्व दक्षिण आफ्रिकी गणतन्त्रके कानून भी उन्हें नहीं बनाते थे, राष्ट्रीय सम्मानको आघात पहुँचाने वाला है।** और महामहिमकी सरकारको इसमें सन्देह नहीं है कि जब यह बात समझमें आ जायेगी तब उपनिवेशका लोकमत उस माँगका समर्थन नहीं करेगा, जो पेश की गई है।"

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंने अपने मनमें अत्यधिक विश्वास जमा रखा था कि वर्तमान शासनके अधिकारमें जानेके साथ यदि उनकी निर्योग्यताएँ दूर न हुई तो भी समाजकी, कमसे-कम उसके शेष अधिकारोंपर और आक्रमण होनेसे, दृढ़ताके साथ रक्षा की जायेगी।

आपको उन परिस्थितियोंका स्मरण होगा जिनके कारण १९०६ का एशियाई कानून संशोधन अध्यादेश वर्जित कर दिया गया था; और इसी तरह आपको यह भी पता होगा कि, विभिन्न प्रार्थनाओं और प्रतिवादोंके बावजूद, ट्रान्सवालकी वर्तमान उत्तरदायी सरकारने, महामहिमकी सरकारकी स्वीकृतिसे, बिल्कुल वैसा ही विधान पास कर लिया है।

महामहिमकी सरकार और जनरल बोथाको मेरी समितिके जो प्रतिवेदन व्यक्तिगत रूपसे दिये गये, उनका इस आश्वासनके साथ स्वागत किया गया कि ट्रान्सवालकी सरकार द्वारा सम्बन्धित कानूनका अधिक-से-अधिक नरमीके साथ और कमसे-कम कष्टदायी रूपमें प्रयोग होगा। यह दुःखकी बात है कि सरकारने प्रत्यक्षतः न तो उस कड़ाईको कम करना उचित समझा, जो मूल अध्यादेशमें विद्यमान थी और जिसको स्वीकृति नहीं दी गयी थी, और न अभी उन नियमोंको नरम बनाया जिनके अधीन इसका प्रयोग होना है।

नये अधिनियमसे सम्पूर्ण ब्रिटिश भारतीय समाजमें अत्यधिक रोष पैदा हो गया है और इसने इस साधारणतया विनम्र और कानून माननेवाली जातिको बिलकुल अभूतपूर्व ढंगसे उभाड़ दिया है। वह समाज मुख्यतया निम्नलिखित आधारोंपर इसका विरोध करता है:

(१) यह उस आश्वासनको तोड़ता है जो उच्चायुक्तने, उन्हें १९०३ में दिया था, जब कि वे स्वेच्छया पुनः पंजीयनके लिए तैयार हो गये थे।

(२) यह उनके इस देशमें रहनेके वर्तमान अधिकारको रद कर देता है और कलमके एक आघातसे वर्तमान अनुमतिपत्रों और प्रमाणपत्रोंको बेकार बना देता है; और जिनके पास वे हैं उनके ऊपर उनके अधिकारी होनेका सबूत देनेकी जिम्मेदारी डालता है।

(३) श्वेत उपनिवेशियोंके पूर्वग्रहोंका ध्यान रखते हुए उन्होंने जो स्वेच्छया पंजीयन स्वीकार किया था, उसके स्थानपर यह उनके ऊपर अत्यन्त अपमानजनक स्थितिमें अनिवार्य पंजीयन लादता है। ब्रिटिश भारतीय जो कि भावुक हैं, उनको यह विद्रोही बनाता है और समाजके रूपमें उन्हें दक्षिण आफ्रिकी जंगलियोंके स्तरपर ला देता है। वे कानून द्वारा एक निम्न कोटिकी अपराधी जातिके बना दिये जाते हैं।

(४) उन्हें भय है कि यह उनके ऊपर और उनकी स्वाधीनताके ऊपर और भी अधिक नियन्त्रण लागू करनेका पूर्वाभास है और दक्षिण आफ्रिकाके दूसरे उपनिवेशोंमें इसी प्रकारके विधान लागू करनेका बहाना है।

(५) यह पहलेसे ही उन्हें इस अपराधमें शामिल होनेका मुलजिम मान लेता है कि उन्होंने इस उपनिवेशको एशियाइयोंसे भर दिया है। इस इल्जामसे उन्होंने बराबर इनकार किया है और इसके बारेमें उन्होंने जाँच आयोगकी माँग की है।

(६) यह एक प्रतिक्रियावादी विधान है और सर्वोच्च ब्रिटिश परम्पराओंके विरुद्ध है।

इस प्रकार इस समाजकी आपत्ति पुनः पंजीयन करानेपर नहीं है। उसके लिए तो उन्होंने स्वेच्छया पंजीयन करानेका वचन दिया है। दरअसल उन्हें आपत्ति है, ऐसे भेदभावपूर्ण वर्ग-विधानके परिणामस्वरूप उन्हें जो जातीय अपमान और पतनका अनुभव होता है, उसके विरुद्ध।

हाल ही में ब्रिटिश भारतीयोंकी सार्वजनिक सभाएँ हुई हैं, जिनमें उपस्थिति दो हजार तक गई है। उनमें अच्छी स्थिति और महत्त्वके दूकानदारोंने और अच्छे व्यापारियों और फेरीवालोंने गम्भीरतापूर्वक प्रतिज्ञाएँ की हैं कि वे इस कानूनके अन्तिम दण्डको स्वीकार करेंगे और अपनी व्यक्तिगत स्वाधीनता ही नहीं, बल्कि उनके पास जो कुछ भी सांसारिक सम्पत्ति है उसका, नये विधानकी शर्तोंके अनुसार पुनःपंजीयन करानेके बजाय, बलिदान कर देंगे। प्रिटोरियाके एशियाइयोंको सूचना दी गई थी कि उन्हें वर्तमान मासके प्रारम्भ होनेसे पहले नये प्रमाणपत्रोंके लिए अवश्य ही प्रार्थनापत्र दे देना चाहिए। उन्होंने भारी जुर्मानों और निर्वासनकी सजा भोगना पसन्द किया है, परन्तु इससे कड़ाईके साथ दूर रहे हैं।

मेरी समितिके प्रतिवेदनोंके अतिरिक्त स्वयं ब्रिटिश भारतीयोंने ट्रान्सवालकी सरकारके समक्ष विभिन्न प्रार्थनापत्र भेजे हैं जिनमें उन्होंने प्रार्थनाएँ की हैं कि इस मामलेपर उनके दृष्टिकोणसे विचार किया जाये, परन्तु इसका कुछ परिणाम नहीं हुआ।

मेरी समितिका मत है कि वह समय आ गया है जब साम्राज्य सरकारको हस्तक्षेप करना चाहिए और उसका सादर निवेदन है कि, उसकी विनम्र सम्मतिमें, ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको वे अधिकार अभीतक नहीं दिये गये हैं जिनके वे साम्राज्यकी सभ्य प्रजा होनेके नाते अधिकारी हैं और न अभी उन्हें महामहिमकी सरकारसे वह संरक्षण मिला है जो ट्रान्सवालपर ब्रिटेनका अधिकार हो जानेके बाद और अधिक निर्योग्यताओंके लादे जानेसे मिलना चाहिए।

ब्रिटिश भारतीयोंकी माँगें अत्यन्त साधारण हैं:

(१) उस नये कानूनका रद किया जाना जिसके अनुसार नये सिरेसे पंजीयन अनिवार्य है; और उसके स्थानपर उनके स्वेच्छया पंजीयनके वचनको स्वीकार किया जाना। वर्तमान प्रमाणपत्रोंका नये प्रपत्रके रूपमें जो कि आपसी समझौतेके अनुसार हो, दे दिया जाना। स्वेच्छया पंजीयन न करानेकी

दशामें (यदि ऐसा कोई हो, जिसकी सम्भावना बिलकुल नहीं है) एक छोटा-सा अधिनियम होना चाहिए जिससे जिन एशियाइयोंके पास नये प्रमाणपत्र न हों, वे निर्वासित किये जा सकें।

(२) १८८५ का कानून ३ जहाँतक इसका ब्रिटिश भारतीयोंसे सम्बन्ध हैं, रद कर दिया जाये;

परन्तु:

(क) यूरोपीय उपनिवेशका एशियाइयोंकी बाढ़को रोकनेका अधिकार स्वीकार किया जाता है। ऐसा नियन्त्रण अब शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत हो रहा है और राजपत्रमें एक प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयककी सूचना छप चुकी है। इससे ऐसा प्रवास और भी सीमित किया जा सकेगा।

(ख) परवाना निकाय द्वारा (उसके निर्णयके विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालयमें अपीलके अधिकारके साथ) व्यापारी परवानोंके जारी करनेपर नियन्त्रणका सिद्धान्त इसी प्रकार स्वीकार किया जाता है।

(ग) श्वेत उपनिवेशियोंके वर्तमान पूर्वग्रहोंको ध्यानमें रखते हुए न तो राजनीतिक और न नगर-पालिका-सम्बन्धी किसी अधिकारकी माँग की जाती है।

कदाचित् यहाँ यह कहना अनावश्यक होगा कि यह मामला केवल ऐसा घरेलू नहीं है कि इससे उपनिवेशका ही सम्बन्ध हो, बल्कि यह सर्वोच्च साम्राज्यीय महत्त्वका है और इसके परिणाम बहुत दूर तक जा सकते हैं।

हमें आशा और भरोसा है कि इस मामलेमें ब्रिटिश भारतीयोंकी ओरसे महामहिमकी सरकार द्वारा ट्रान्सवालकी सरकारके साथ मैत्रीपूर्ण लिखा-पढ़ी वाञ्छनीय प्रभाव पैदा करेगी। मुझे यह भी निवेदन करनेके लिए कहा गया है कि यदि आप शिष्टमण्डलसे मिलना स्वीकार करें, तो कृपापूर्वक वैकल्पिक तारीखें दें; क्योंकि समितिके कुछ सदस्योंके पास विभिन्न व्यवसाय हैं, जिनको स्थगित करना उनके लिए असम्भव हो सकता है।

आपका आदि,
एल० डब्ल्यू० रिच
मन्त्री

[अंग्रेजीसे]

इंडिया ऑफिस रेकर्ड्स, जे० ऐंड पी० ३९२७/०७

परिशिष्ट ६

दस गिन्नियोंका पारितोषिक

'अनाक्रामक प्रतिरोधका नीतिशास्त्र' पर एक निबन्धके लिए

भारतीय इस समय ट्रान्सवालमें एक ऐसे अधिनियमके विरुद्ध अनाक्रामक प्रतिरोध-संग्राम लड़ रहे हैं, जो उनकी सम्मतिमें उनकी आत्माको चोट पहुँचाता है, और इस पत्रने उस अनाक्रामक प्रतिरोध-संग्रामको एक विनम्र तरीकेसे रास्ता दिखलाया है; दूसरे इस पत्रकी नीतिके नियंत्रक अनाक्रामक प्रतिरोध सिद्धान्तकी सामान्य उपयोगिता प्रदर्शित करनेको इच्छुक हैं। इन दोनों कारणोंसे इसके प्रबन्धकोंने 'अनाक्रामक प्रतिरोधके नीतिशास्त्र' पर सर्वोत्तम निबन्धके लिए १० गिन्नियोंका पुरस्कार देनेका निश्चय किया है। इस पुरस्कारकी घोषणा इस लेख द्वारा की जाती है। धार्मिक रूपसे विचार करें, तो इस सिद्धान्तका अर्थ है, ईसाके इस प्रसिद्ध उपदेशका पालन करना कि 'पापका प्रतिरोध मत करो।' इस तरह यह सनातन और विश्वव्यापी प्रयोगकी बात है और यदि इसका अभ्यास बड़े पैमानेपर किया जाये तो यह पूर्णतया नहीं तो बड़ी हद तक कष्टोंसे मुक्ति प्राप्त करने या सुधारोंकी संस्थापना करनेमें पशुबल और वैसे ही तरीकोंका स्थान ले लेगा। इसलिए प्रबन्धकोंको आशा है कि दक्षिण आफ्रिकाके अच्छेसे अच्छे लोग, जिनके पास अवकाश हो, इस पुरस्कार-प्रतियोगितामें भाग लेंगे। वे इस पुरस्कारके आर्थिक महत्त्वको

दृष्टिसे नहीं, बल्कि इस दृष्टिसे इसमें भाग लेंगे कि जीवनके एक ऐसे सिद्धान्तको स्पष्ट करना है जिसे, संसारके सर्वश्रेष्ठ विचारोंका बल प्राप्त होनेपर भी, बहुत कम समझा जाता है, और उससे भी कम व्यवहारमें लाया जाता है।

इस प्रतियोगिताकी शर्तें नीचे लिखे अनुसार हैं:

(१) निबन्ध साफ कागजके एक ही तरफ लिखा होना चाहिए। टाइप किया हो तो और अच्छा। हस्तलिपिपर प्रतियोगीका नाम नहीं होना चाहिए।

(२) वह चार परिच्छेदोंमें विभक्त किया जा सकता है और "**इंडियन ओपिनियन**" के दस स्तम्भोंसे अधिकका नहीं होना चाहिए।

(३) उसमें थोरोके उच्च साहित्य "सविनय अवज्ञाका धर्म", टॉल्स्टॉयकी कृतियाँ, विशेषकर, "स्वर्गका राज्य आपके अन्दर है", की व्याख्या होनी चाहिए; उनमें 'बाइबिल' तथा अन्य धर्म-ग्रंथोंके प्रमाण और उदाहरण और इस प्रश्नपर "सुकरातकी सफाई" का भी प्रयोग होना चाहिए। इस सिद्धान्तके समर्थनमें आधुनिक इतिहासके उदाहरण भी देने चाहिए।

(४) वह सम्पादक, **इंडियन ओपिनियन**, फीनिक्स, नेटालके नाम भेजा जाना चाहिए और इस मासकी ३० तारीख तक पहुँच जाना चाहिए।

(५) प्रबन्धकोंको अधिकार होगा कि प्राप्त लेखोंमेंसे जिसे भी चाहें प्रकाशित करें, और उसका अनुवाद करें; और यदि कोई भी उपर्युक्त न प्रतीत हो तो सबको अस्वीकार कर दें।[1]

इंडियन ओपिनियन, ९-११-१९०७

१. उक्त घोषणा निम्नलिखित परिवर्धनके साथ ३०-११-१९०७ के **इंडियन ओपिनियन**में दोहराई गई थी; "पूज्यपाद डॉ० जे० लैंडो, पीएच० डी० (वीएना) एम० ए० (केप) ने कृपापूर्वक इसका निर्णायक होना स्वीकार कर लिया है। इसके लिए जो समय दिया गया था वह बजाय ३० नवम्बरके, जैसा कि पहले घोषित किया गया था, ३१ दिसम्बर तक बढ़ा दिया गया है। डॉ० लैंडो चाहते हैं कि यह बात अच्छी तरह समझ ली जाये कि इसका निर्णय करनेमें वे "सत्याग्रह" के सिद्धान्तके राजनैतिक प्रयोगके गुण-दोषके विवेचनमें नहीं पड़ेंगे। उनका कर्तव्य पूर्णतया प्राप्त निबन्धोंके साहित्यिक और यथार्थ मूल्यांकन तक ही सीमित रहेगा।"

किन्तु उनके इनकार करनेपर उन निबन्धोंको केन्द्रीय बपतिस्मा गिर्जाके पादरी पूज्यपाद जे० जे० डोकने देखा और जनवरी १७, १९०८ को उनपर अपना निर्णय दिया; देखिए **इंडियन ओपिनियन**, २५-१-१९०८।

परिशिष्ट ७

ब्रिटिश भारतीय संघ, जोहानिसबर्ग

मार्च १९०६ से अगस्त १९०७ तकके आय-व्ययके हिसाबका सारांश

क

	पौं०	शि०	पे०
नकद लन्दन समिति	२८०	६	६
” तार	२७	१०	११
” समुद्री तार	१९२	१	९
” लिख्तनस्टाइन और ब्लैकका ट्राम सम्बन्धी मुकदमा, आदि	८८	१६	१०
” कागज पेंसिल पत्र, आदि	१	३	६
” अखबार, जिनमें रोजाना 'केप गज़ट' और प्रति सप्ताह 'इंडियन ओपिनियन' की ३० प्रतियाँ लन्दन समितिको भेजना शामिल है	१६	१४	११
” टाइपिस्ट	४७	१०	०
” प्रार्थनापत्रों आदिकी छपाई	४१	११	४
” बैठकोंके लिए सभा-भवनोंका भाड़ा	२४	१६	६
” टिकट	४	७	४
” किराया (रेलवे, अनेक शिष्ट-मण्डलोंके लिए)	२९	२	२
” अखबारी तार	२	२	३
” अलेक्जेंडर	०	१०	६
” फुटकर, जिसमें विज्ञापन आदि शामिल हैं	२४	८	३
पौंड	७८१	२	९

ख

	पौं०	शि०	पे०
नकद नायडूसे	१८	०	०
” तमिल समाजसे	२०	०	०
” हिन्दू समाजसे	२५	०	०
” रैंडर समितिसे	२०	०	०
” हमीदिया इस्लामिया अंजुमनसे	१४	०	०
” सी० एस० ए० आर०[1] से वापिसी	१	८	२
” रायटरसे वापसी	१	२	६
” वेस्ट एण्ड हालके बाबत वापसी	१	१०	०
” गुजरात हिन्दू समाजसे	२२४	१०	९
” अलीभाई आकूजी द्वारा एकत्रित	१७	०	०
” नायडू व कं० द्वारा एकत्रित	१	४	०
” एम० ई० गाटूसे	०	८	०
” शिष्टमण्डलके हिसाबसे बचा	१६७	९	६
” सी० एम० वाल्वसे	३९	१०	०
” बैठकमें इकट्ठे किये	३०	१०	०
” ए० ए० पिल्लेसे	१	०	०
” आई० वी० टॉमसले	०	१०	०
” सुलेमान आई० मियाँ व कं० से	१	१०	०
” नानजी वेलासे	७	०	०
” स्पेलोनकेनमें चन्दा	१०	०	०
” व्याससे प्राप्त	०	२	४
” पहले प्राप्ति-स्वीकृत	१०८	१०	७
” शेष उपलब्ध	९४	१७	५
पौंड	७८१	२	९

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-१०-१९०७

१. सेन्ट्रल साउथ आफ्रिका रेल्वे।

आय-व्ययका संक्षिप्त हिसाब

सितम्बर [१, १९०७] से नवम्बर २३, १९०७ तक

क	पौं०	शि०	पे०
विलायत-शिष्टमण्डल तथा संघ सम्बन्धी हिसाबमें	४	१५	०
समुद्री तार—श्री रिच, दादाभाईके जन्म-दिवसपर, मॉरिसन, गोखले व एस० बैनर्जीको तथा सम्राट्के जन्म-दिवसपर	१५	७	६
जर्मिस्टन तथा प्रिटोरिया तकका किराया	३	७	८
[illegible] रंगदारोंके मामलेमें [illegible] सॉलिसिटरोंको, [illegible]	२	२	०
समाचारपत्र-प्रेस मार्फत 'स्टार', 'लीडर', 'मेल', तथा लन्दन समितिको प्रति सप्ताह 'इंडियन ओपिनियन' की ३० प्रतियाँ	१०	१	०
छपाई—के० [illegible] व कं०, प्रार्थना-पत्रकी छपाई तथा जिल्द बँधाई	१४	१	६
टिकट	३	४	८
फुटकर	०	१५	५
तार-[illegible] आदिके सम्बन्धमें	८	१२	४
[illegible], सितम्बर व नवम्बरमें	१०	०	०
पहलेका शेष	१४०	१८	१
	२१३	५	२

ख	पौं०	शि०	पे०
जमा पिछले हिसाबसे	९४	१७	५
[illegible] द्वारा नकद संग्रह-दूसरा भागके रूपमें	११	०	०
[illegible] चेक नहीं भुनाई	०	१०	०
नकद विविध भारतीयोंसे	३३	१५	९
नकद [दान], अल्बर्ट व कं० से	२५	०	०
नकद, जी० पी० व्याससे-बाबत प्रिटोरियाका किराया	१	०	०
संघके खातेसे नकद वापस	१८	१५	०
हिन्दू सभाकी कुरसियोंकी बिक्री	१३	५	९
रंगदारोंकी संयुक्त सभा (युनाइटेड असेम्बली) से	१५	१	३
	२१३	५	२

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-११-१९०७

परिशिष्ट ८

ब्रिटिश भारतीय और ट्रान्सवाल

एल० डब्ल्यू० रिच

भूमिका

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतोंके एक संक्षिप्त विवरणकी माँग बार-बार की गई है; इसीसे इस विषयका एक संक्षिप्त इतिहास लिखनेका खयाल आया। इस मामलेमें लोगोंकी दिलचस्पी बढ़ती जाती है। उनके सम्मुख संक्षेपमें तथ्योंको रखनेका यह एक प्रयत्न है।

लेखक ट्रान्सवालमें अपने आगमनसे पूर्वके इतिहासके लिए सरकारी रिपोर्टोंका ऋणी है। पीछेके अठारह वर्षोंके तथ्य उसके अनुभूत तथ्य हैं।

इस लघु कृतिमें साहित्यिक योग्यताका कोई दावा नहीं है। इसकी शैली और रचना निस्सन्देह असंख्य दोषोंसे युक्त है। उनके सम्बन्धमें लेखक पहलेसे अपना दोष स्वीकार करता है। केवल तथ्योंकी ओर सादर ध्यान आकर्षित किया जाता है।

२८, क्वीन ऐन्स चेम्बर्स, एस० डब्ल्यू०

७-११-१९०७

ब्रिटिश भारतीय और ट्रान्सवाल[1]

बोअर गणराज्यमें

ट्रान्सवालके भारतीय जिन निर्योग्यताओंसे पीड़ित हैं उनका इतिहास १८८५ से आरम्भ होता है जब महामहिम सम्राट्की सरकार और ट्रान्सवालकी गणतन्त्रीय सरकारमें झगड़ा शुरू हुआ था। उस समय यूरोपीय व्यापारियोंने, जिनमेंसे बहुतसे न तो ट्रान्सवालके नागरिक थे और न तबतक ब्रिटिश प्रजाजन ही थे, अपने प्रतिस्पर्धी उन कथित अरब व्यापारियोंके विरुद्ध कानून बनानेके लिए ट्रान्सवाल सरकारपर दबाव डाला जिनमें से बहुतसे वस्तुतः ब्रिटिश भारतीय थे।

लन्दन-समझौतेकी धारा १४ में कहा गया था कि वतनियोंके अलावा बाकी सब लोगोंको, जो दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यके कानूनका पालन करते हों:

(क) अपने परिवारों सहित दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यके किसी भी भागमें प्रवेश करने, यात्रा करने या रहनेकी पूरी स्वतन्त्रता होगी;

(ख) मकानों, कारखानों, गोदामों, दूकानों और अन्य स्थानोंकी मिल्कियत रखने या उनको किरायेपर लेनेका अधिकार होगा; और

(ग) स्वयं या कारकूनोंके द्वारा जिनको वे नियुक्त करना ठीक समझें, व्यापार-व्यवसाय चलानेकी अनुमति होगी।

१८८५ में ट्रान्सवालके राज्य-सचिवने (तत्कालीन उपनिवेश-मन्त्री) लॉर्ड डर्बीको पत्र लिखा कि उनकी सरकार प्राच्य देशीय लोगोंके, जो प्रायः दूकानदार हैं और जो गणराज्यमें बस गये हैं, नियन्त्रणके लिए कानून बनाना चाहती है। उन्होंने महामहिम सम्राट्की सरकारसे इस सम्बन्धमें अपनी सम्मति व्यक्त करनेकी प्रार्थना की कि क्या उक्त धारा १४के अन्तर्गत ऐसा कानून बनाना विधान-सम्मत होगा।

तत्कालीन उच्चायुक्त सर हर्क्युलीज रॉबिन्सनने राज्य-सचिवके पत्रकी पुष्टि इस सिफारिशके साथ की कि पूर्वोक्त धारा १४ में 'वतनियों' शब्दकी जगह '**आफ्रिकी वतनी या चीनी कुली प्रवासी**' कर दिया जाये। इसमें खयाल यह था कि 'अरब' व्यापारियोंके जो स्वार्थ स्थापित हो चुके हैं उनको सुरक्षित रखा जाये और गणराज्यके हीन वर्गके एशियाइयों, जैसे कुली प्रवासियोंके विरुद्ध, कानून बनानेकी स्वतन्त्रता दे दी जाये। फलस्वरूप दक्षिण आफ्रिकी गणतन्त्री सरकारने १८८५ का कानून ३, जो बादमें १८८६ में संशोधित किया गया, स्वीकृत किया। यह 'एक एशियाई' आदिम जातिके लोगोंपर लागू होता था। और उसके अन्तर्गत उन्हें:

(क) गणतन्त्रमें रहने या व्यापार करनेके अधिकार प्राप्त करनेके लिए ३ पौंड शुल्क देना आवश्यक था;

(ख) नागरिक अधिकारके उपयोगसे वंचित कर दिया गया था;

(ग) अपने नाम स्थावर सम्पत्ति खरीदनेकी मनाही थी; और

(घ) केवल उन गलियों, मुहल्लों और बस्तियोंमें रहनेकी अनुमति थी जिनका निर्देश किया जाये।

इसके विरुद्ध तुरन्त ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतें सुनाई दीं, क्योंकि दक्षिण आफ्रिकी गणराज्य इस कानूनको **बिना किसी भेदभावके** गणराज्यमें रहनेवाले सब एशियाइयोंपर लागू करना अपना अधिकार मानता था। यह लगभग निश्चित है कि खास ट्रान्सवालमें भारतीय कुली कभी नहीं आये हैं। इसलिए १८८५ का कानून ३ 'अरब' व्यापारियोंपर लागू करनेकी दृष्टिसे ही बनाया गया होगा और यह प्रत्यक्ष हो जाता है कि ऊपर बताये गये ६ जनवरीके प्रस्तावपर मंजूरी देनेमें साम्राज्य सरकार और गणतन्त्री सरकारका आशय एक न था।

साम्राज्य सरकारने बार-बार कहा कि कानून ३ की व्याख्या उस समझौतेके विरुद्ध है जिसके अन्तर्गत साम्राज्य सरकारने कानूनको पास करनेकी मंजूरी दी और उससे लन्दनका समझौता भी भंग होता है। इसके फलस्वरूप एक समझौता हुआ और गलियों, मुहल्लों और बस्तियोंमें निवास-सम्बन्धी धारामें शर्तके रूपमें "सफाईके उद्देश्यसे"

१. पाठ मूल पाद टिप्पणियोंके साथ उद्धृत किया जा रहा है।

बाहर छोड़ दिये गये और इन "सफाईके उद्देश्यों" निश्चित गलियों आदिमें स्थावर सम्पत्ति खरीदनेका अधिकार भी मान लिया गया। किन्तु यहाँ फिर, "महामहिम सम्राट्की सरकारने यह समझा कि संशोधित कानून सफाई-सम्बन्धी कानून है और इसलिए व्यापारियों और उन अन्य व्यक्तियोंपर लागू न किया जायेगा जिनका रहन-सहन ऊँचा है, बल्कि कुलियोंपर लागू किया जायेगा।" इसके अनुसार उसने संशोधित कानूनको मान लिया और लन्दन-समझौतेकी धारा १४ के उल्लंघनकी बात छोड़ दी।

किन्तु गणराज्य सरकार इस बातपर अड़ी रही कि कानून "सब एशियाइयोंपर" समान रूपसे लागू हो, इसलिए उसने व्याख्या की कि "निवास-स्थान" शब्दोंमें व्यापारकी और रहनेकी दोनों जगहें शामिल हैं। दोनों सरकारोंके बीच फिर बातचीत चली और उसके फलस्वरूप मामला पंचको सौंप दिया गया। इसके परिणाम-स्वरूप यह फैसला दिया गया: "गणराज्यकी सरकारको इस कानूनको पूरी तरह अमलमें लानेका पूरा अधिकार है।" किन्तु उसे सामान्यतः देशके न्यायालयोंकी एकमात्र और विशिष्ट व्याख्या माननी होगी। चूँकि यह मान लिया गया था कि इससे दो सरकारोंके बीचके विवादग्रस्त कानूनों और अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नका समाधान हो जाता है; इसलिए यह फैसला मंजूर कर लिया गया। किन्तु श्री चेम्बरलेनने भारतीय व्यापारियोंकी ओरसे, जिनके साथ उन्होंने सहानुभूति प्रकट की, गणराज्यकी सरकारसे लिखा-पढ़ी करने और सम्भव हो तो उसको यह विचार करनेके लिए निमन्त्रित करनेका अधिकार निश्चित रूपसे अपने पास रखा कि,

"क्या स्थितिपर नये दृष्टिकोणसे पुनः विचार करना बुद्धिमत्तापूर्ण न होगा। और क्या यह तय करना भी कि उसके अपने नागरिकोंके हितकी दृष्टिसे भारतीयोंसे अधिक उदारताका बर्ताव करना और प्रकटतः व्यापारिक ईर्ष्याको बढ़ावा देनेसे मुक्त होना अधिक अच्छा न होगा। उनके पास यह विश्वास करनेके कारण हैं कि यह व्यापारिक ईर्ष्या गणराज्यके शासक दलसे उत्पन्न नहीं हुई।*

१८९८ में ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयने यह व्याख्याकी कि 'निवास' में व्यापार सम्मिलित है। फलस्वरूप तैयब हाजी मुहम्मद खाँ नामके एक ब्रिटिश भारतीयको अपने निवास और व्यवसायके स्थानके रूपमें प्रिटोरिया त्यागनेका नोटिस दिया गया और यह अप्रत्यक्ष रूपसे सब ब्रिटिश भारतीयोंपर लागू होता था।

दोनों सरकारोंके बीच आगे फिर पत्र-व्यवहार हुआ। ट्रान्सवाल सरकार स्पष्टतः रंग-सम्बन्धी विचारोंके आधारपर कानून बनानेका प्रयत्न कर रही थी, जैसा कानून ३ के अमलमें 'रूपके रंगदार लोगों और एशियाइयों' को सम्मिलित करनेके प्रस्तावसे प्रकट होता है। दूसरी ओर साम्राज्य-सरकारके प्रयत्नोंमें यह इच्छा प्रतिलक्षित होती है कि उन सबको, जो केवल कुली नहीं हैं, कानूनके अपमानजनक प्रभावोंसे बचाया जाये, श्री लिटिल्टनके शब्दोंमें:

"इसलिए युद्धके आरम्भतक ब्रिटिश सरकारने पहले अधिकारके रूपमें और १८९५ के पंच-फैसलेके अनुसार कूटनीतिक प्रयत्नोंसे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय अधिवासियोंके हितोंको कायम रखा; और इन सम्प्रभाजनोंके प्रति व्यवहार भूतपूर्व दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यके विरुद्ध ब्रिटिश मामलेका एक अंग था।"*

लॉर्ड लैंसडाउन और लॉर्ड सेल्बोर्नके भाषणोंसे, जिनका अब ऐतिहासिक महत्त्व हो गया है, यह समझा जा सकता है कि अन्य प्रमुख राजनयिक ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय अधिवासियोंके विरुद्ध भेदभावकारी कानूनको कैसा समझते थे। नये ट्रान्सवाल उपनिवेशके अपेक्षाकृत अधिक नये कानूनको ध्यानमें रखते हुए इन शब्दोंको दुहराना सम्भवतः ठीक होगा। मार्विवस ऑफ लैंसडाउनने १८९९ में शेफील्डमें भाषण देते हुए कहा था:

"महारानीके भारतीय प्रजाजनोंकी खासी संख्या ट्रान्सवालमें है। उनके विरुद्ध दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यके व्यवहारसे मेरे मनमें जितना रोष उत्पन्न होता है उतना, मैं नहीं जानता कि, उसके किसी अन्य कुकृत्यसे उत्पन्न होता है। और इससे जो हानि होती है वह स्थानीय पीड़ितों तक ही सीमित नहीं है। जब ये गरीब लोग अपने देशको लौटेंगे और अपने मित्रोंको यह बतायेंगे कि महामहिम सम्राज्ञीकी सरकार, जो ३० करोड़ आबादीके देश भारतमें ऐसी शक्तिशाली और दुर्धर्ष है, दक्षिण आफ्रिकाके एक छोटे-से राज्यसे उनकी शिकायत दूर करानेमें असमर्थ है, तब आपके खयालसे भारतमें क्या प्रभाव होगा?"

* श्री लिटिल्टनका वाइकाउंट मिलनरको पत्र, जुलाई २०, १९०४, सी० डी० २,२३९।

लॉर्ड सेल्बोर्नके विचार भी कम प्रभावकारी नहीं है :

"लॉर्ड महोदयने प्रश्न किया है : यह देखना हमारा कर्तव्य है या नहीं कि हमारे काले सहप्रजाजनोंसे ट्रान्सवालमें, जहाँ उन्हें जानेका पूरा अधिकार है, वैसा वर्ताव किया जाये जैसा व्यवहार करनेका महारानीने हमारी ओरसे वचन दिया है ? यदि आप मुझसे सहमत हैं और यह मानते हैं कि हमें इन प्रश्नोंका उत्तर अपने देशवासियों और इतिहासके सम्मुख न्यासियोंके रूपमें देना है तो आप मुझसे इस वातमें भी सहमत होंगे कि कर्तव्यका पथ भावनासे नहीं, बल्कि विशुद्ध तथ्योंसे नियन्त्रित होना चाहिए. . . हम समस्त संसारमें अपने बन्धुओंके न्यासी हैं. . .हम अपने विभिन्न जातियों और रंगोंके सह प्रजाजनोंके भी न्यासी हैं...इन सबके और इनके बच्चोंके जिन्होंने अभी जन्म नहीं लिया है । इसलिए हमें ऐसे संकटकालमें जैसा यह है, जो कसौटी लगानी है वह कर्तव्यकी सीधी-सादी कसौटी है । यह देखना हमारा कर्तव्य है या नहीं कि इन लोगोंके, जिनका हमने उल्लेख किया है, अधिकारों और भावी हितोंकी रक्षा की जाये . . . क्या ब्रिटिश सरकार अपने नामका मान रखेगी और जो वचन उसने दिये हैं उनको सचाईसे पूरा करेगी ? क्या वह यह देखेगी कि ब्रिटिश प्रजाजन चाहे संसारमें कहीं भी जायें और चाहे वे गोरे हों या काले, उनको उनके वे अधिकार दिये जायेंगे जो उनकी महारानीने उनके लिए सुनिश्चित किये हैं ?"

किन्तु यह ध्यानमें रखना चाहिए कि गणतन्त्रकी सरकारके शासनमें कानून ३ का अमल इतनी नरमीसे किया जाता था कि वह लगभग अमल न होनेके बराबर ही था । जब ३ पौंड शुल्क दे दिया जाता था तो उसकी रसीद अवश्य दी जाती थी और उस शुल्कके अंकित होनेसे ही पंजीयन हो जाता था; किन्तु उसको अमलमें लानेका गम्भीर प्रयत्न कभी नहीं किया गया । कुछ भी हो, वह केवल व्यापारियोंसे लिया जाता था और उनमें भी सबसे नहीं । किन्तु सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात, मुख्यतः वर्तमान 'पंजीयन' विवादको देखते हुए, यह है कि यद्यपि 'पंजीयन' शब्दका प्रयोग इस ३ पौंडी शुल्ककी अदायगी और वसूलीके सम्बन्धमें किया जाता था, किन्तु उसमें व्यक्तिगत शिनाख्त जैसी कोई बात, जो ट्रान्सवाल-विलयके बाद उत्पन्न होनेवाली एक बिलकुल नई बात है, कभी नहीं होती थी । इसके अतिरिक्त ढिलाईके साथ लगाये गये ३ पौंडके करके सिवा एशियाई प्रवासियोंपर कोई प्रतिबन्ध न था । इस सम्बन्धमें कप्तान हैमिल्टन फाउलकी, जो १९०३ में एशियाई पंजीयक थे, रिपोर्ट ज्ञानवर्धक है । रिपोर्टमें कहा गया है कि :

"तीनको छोड़कर, एशियाइयोंकी कोई पंजिका या उनके कोई अन्य कागजात, जो पिछली बोअर सरकारने रखे थे (यदि ऐसे कागजात कभी रखे गये हों तो) किसी जिलेमें नहीं मिले ।"

ट्रान्सवालके वे ब्रिटिश भारतीय, जिनमें से अधिकतर निस्सन्देह युद्धकालमें देशसे चले जानेके लिए बाध्य कर दिये गये थे, प्रिटोरियापर ब्रिटिश ध्वज लहराते ही इत्मीनानके साथ कानून ३ की वापसीकी आशा करते थे । यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है । सचमुच, अपनी ब्रिटिश नागरिकताके कारण वे बोअरोंके कानूनके कई तर्क-सम्मत परिणामोंसे बच गये थे; किन्तु कानून ३ फिर भी परेशान करता था, क्योंकि उसने उनपर हीनताकी छाप लगा दी थी और सिद्धान्ततः ही सही, उनको केप और नेटालमें, जहाँ से उनमेंसे बहुतसे लोग आये थे, जो दर्जा प्राप्त था उससे उनका दर्जा नीचा कर दिया था।

यद्यपि १८८५ के कानून ३ की जिस धारासे भारतीयोंको नागरिकताके अधिकार प्राप्त करनेसे वंचित किया जाता था, उसको निस्सन्देह कठोरतासे अमलमें लाया जाता था, तथापि उनको उन गलियों, मुहल्लों और बस्तियोंमें, जिनका निर्देश किया जाये, हटानेकी बात गणतन्त्रीय सरकारके शासनमें कभी लागू नहीं की गई ।

विलयके बाद

ट्रान्सवाल-विलयका सबसे पहला प्रभाव जो ब्रिटिश भारतीयोंपर हुआ, उन एशियाइयोंका निष्कासन था जो यह न सिद्ध कर सकें कि वे युद्ध पूर्वके वैध अधिवासी हैं । १९०२ में नई सरकारने "सुव्यवस्था और सुशासन एवं सार्वजनिक सुरक्षाको कायम रखने" के लिए शान्ति-रक्षा अध्यादेश (१९०३ के कानून ५ द्वारा संशोधित रूपमें १९०२ का ३८ वाँ कानून) के नामसे एक कानून बनाया । फौजी शासन वापस ले लिया गया था और

राजद्रोह एवं देशद्रोहके विरुद्ध नया अध्यादेश लागू कर दिया गया था। १९०३ के संशोधनके अनुसार उपनिवेशमें जो लोग आये उन सबके लिए परवाने लेनेका नियम था। उसकी आवश्यक शर्त थी कि ये परवाने उन नागरिकोंको नहीं दिये जायेंगे जो राजभक्तिकी शपथ न ले सकें। इससे पर्याप्त रूपसे प्रकट हो जाता है कि अध्यादेशका उद्देश्य क्या था। किन्तु इस नये कानूनका प्रयोग भारतीय प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके रूपमें किया गया। देशके इतिहासमें पहली बार एक एशियाई विभागकी स्थापना की गई। परवाने देनेमें अनुचित कार्रवाई और भ्रष्टाचारके परिणामस्वरूप दो प्रधान अधिकारियोंपर मुकदमे चलाये गये और उसके बाद एशियाई विभाग भंग कर दिया गया। उसका काम मुख्य परवाना अधिकारीको सौंप दिया गया एवं अन्ततः एशियाई संरक्षक नामका एक अधिकारी नियुक्त कर दिया गया। १९०२ में उच्चायुक्तने उपनिवेश मन्त्रीको ट्रान्सवाल सरकारके कुछ विधिवत् प्रस्ताव तारसे भेजे। इनमें ये प्रस्ताव थे कि सब एशियाई, चाहे वे तब ट्रान्सवालमें रहते हों या बादमें प्रविष्ट हुए हों, पंजीयन प्रमाणपत्र लें और ये प्रमाणपत्र ३ पौंड देकर प्रति वर्ष नये कराये जायें; ऐसे पंजीकृत एशियाई, (यदि यूरोपीय मालिकके साथ न रहते हों तो) अपने लिए विशेष रूपसे व्यापार और निवासके निमित्त निश्चित की गई बस्तियोंमें चले जायें; शिक्षित और सभ्य एशियाई पंजीयनसे मुक्त हों, एशियाइयोंको शहरी क्षेत्रोंमें वास्तविक जमीन-जायदाद खरीदने और रखनेका अधिकार हो। इन प्रस्तावोंका उत्तर उपनिवेश-मन्त्रीने यह दिया:

> "इसका समर्थन करना असम्भव है, यह तो लगभग दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यकी प्रणालीको जारी रखना होगा जिसके विरुद्ध महामहिम सम्राट्की सरकारने बार-बार इतनी जोरदार आपत्ति की थी।"*

१९०३ में ट्रान्सवाल-सरकारने भारतसे १०,००० कुली मँगानेके लिए कुछ प्रस्ताव किये जिसे भारत सरकारने इस शर्तपर मान लेनेका वचन दिया कि ट्रान्सवालमें इस समय जो भारतीय रहते हैं उनको प्रभावित करनेवाली वर्तमान निर्योग्यताएँ हटा दी जायें।

इसी वर्ष उच्चायुक्तने उपनिवेश मन्त्रीको एक अन्य खरीता भेजा और उसके साथ सरकारी नोटिसकी एक प्रति भी भेजी। नोटिसमें कहा गया था कि सरकारने १८८५के बोअरोंके बनाये गये कानून ३ की उस धाराको लागू करनेका निश्चय किया है जो एशियाइयोंको विशेष गलियों, मुहल्लों और बस्तियोंमें हटानेके सम्बन्धमें है, इनमें केवल एशियाई ही रह सकेंगे और व्यापार कर सकेंगे, एशियाइयोंको इन बस्तियोंके अतिरिक्त अन्य स्थानोंमें व्यापार करनेके परवाने न दिये जायेंगे; जिन एशियाइयोंके पास युद्धसे पूर्व इन (एशियाई) बाजारोंके बाहर व्यापार करनेके परवाने थे, उनके परवाने उन्हीं शर्तोंपर उपनिवेशमें वे जबतक रहें तबतक नये किये जा सकते हैं; किन्तु वे हस्तान्तरित नहीं किये जा सकेंगे; शिक्षित और सम्मानित एशियाई इन सब प्रतिबन्धोंसे मुक्त होंगे। वर्तमान निर्योग्यताओंमें ये परिवर्तन, प्रत्यक्ष हैं, भारत-सरकारको सन्तुष्ट करने और उसे ट्रान्सवालके सार्वजनिक कामोंके लिए कुली मजदूर मँगानेकी मंजूरी देनेके लिए राजी करनेके उद्देश्यसे किये गये थे। ट्रान्सवाल सरकारने इसके अतिरिक्त यह प्रस्ताव किया था कि प्रवासका नियंत्रण केप और नेटालमें लागू कानूनोंसे मिलते-जुलते कानून द्वारा किया जाये और अधिनियमके अन्तर्गत लागू की गई शिक्षा-परीक्षामें भारतीय और यूरोपीय भाषाएँ स्वीकार की जायें। यह सुझाव भारत-सरकारने भेजा था। किन्तु ट्रान्सवाल सरकारने आगे विचार करनेपर अपना यह अंतिम प्रस्ताव वापस ले लिया और समय आनेपर उसका विरोध किया। उसने विकल्पके रूपमें यह सुझाव दिया:

(क) केप और नेटालके अधिनियमोंके आधारपर प्रवासी प्रतिबन्धक कानून बनाया जाये जिसमें अन्य बातोंके साथ-साथ भावी प्रवासियोंके लिए शिक्षा-परीक्षाकी व्यवस्था हो; किन्तु इसके लिए भारतीय भाषाएँ स्वीकार न की जायें;

(ख) भारतीयोंके सम्बन्धमें सरकारके नोटिस (१९०३ का ३५६) के आधारपर, जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है, एक कानून बनाया जाये। इसमें यह व्यवस्था हो:

* श्री लिटिल्टनका पूर्व-उल्लिखित वाइकाउंट मिल्नरको पत्र।

(१) वे एशियाई, जो उपनिवेशके औपनिवेशिक सचिवको यह सन्तोष दिला सकें कि उनके रहन-सहनका तरीका यूरोपीय विचारोंके अनुसार है, अपने नौकरों सहित वस्तियोंके बाहर रहने दिये जायें; किन्तु उनको वस्तियोंके वाहर व्यापार न करने दिया जाये बशर्ते कि वे (२) के अन्तर्गत न आते हों;

(२) जो एशियाई युद्धसे पूर्व वस्तियोंके बाहर अपना व्यवसाय जमा चुके थे, उनको न छेड़ा जाये;

(३) उक्त दो अपवादोंके अतिरिक्त सब एशियाइयोंके लिए वस्तियोंमें व्यापार करने और रहनेका नियम हो; एवं उनके लिए बाहर जमीन खरीदना निषिद्ध हो, यह व्यवस्था उस जमीनपर लागू न हो जो अलग कर दी गई है और धार्मिक कार्योंके लिए प्रयुक्त होती है;

(४) ट्रान्सवालमें आनेवाले सब एशियाई, जबतक उनको विशेष रूपसे मुक्त न किया जाये, ३ पौंड देकर पंजीयन प्रमाणपत्र लें;

(५) यदि ऊपर बताया गया प्रवासी कानून पास न हो तो फेरीवालोंको परवाने देनेपर कोई रोक न लगाई जाये।

इसके उत्तरमें उपनिवेश मन्त्रीने उन ब्रिटिश भारतीयोंमें, जो इस समय ट्रान्सवालके अधिवासी हैं, और जो भविष्यमें आयेंगे, अन्तर किया। उन्होंने सार्वजनिक स्वास्थ्यकी रक्षाके लिए आवश्यक बुद्धि-संगत सावधानियोंके अतिरिक्त अन्य सब कार्रवाइयोंकी निन्दा की और यह निर्देश किया:

"इस समय देशमें ब्रिटिश भारतीयोंकी संख्या अपेक्षाकृत कम है और प्रवासपर प्रस्तावित प्रतिबन्धोंके अन्तर्गत कम होती जायेगी; इसलिए उनसे आशंकित व्यापारिक स्पर्धा प्रस्तावित कानूनको बनानेका पर्याप्त कारण नहीं मानी जा सकती। महामहिम सम्राट्की सरकारने भूतकालमें लगातार यह प्रयत्न किया है कि उसके विचार इस भयसे प्रभावित न हों। इसके विपरीत उसने इस सम्बन्धमें पिछले दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यकी नीति और उसके कानूनोंके विरुद्ध साम्राज्य और सभ्य संसारके सम्मुख वारवार विरोध किया है। दरअसल वे अंशतः ही लागू किये गये थे। किन्तु अब महामहिम सम्राट्की सरकारसे उनको केवल कड़ाईसे लागू करनेकी माँग ही नहीं की जा रही है, वल्कि कानून द्वारा सर्वोच्च न्यायालयके उस निर्णयको भी रद करनेके लिए कहा जा रहा है जिससे ब्रिटिश भारतीयोंको वे अधिकार दिये गये हैं जिनके लिए महामहिम सम्राट्की सरकारने अत्यन्त संघर्ष किया है... महामहिमकी सरकार यह मानती है कि अधिवासी ब्रिटिश भारतीयोंपर ऐसी निर्योग्यताएँ लागू करना, जिनके विरुद्ध हमने आपत्ति की थी और जिन्हें, यदि ठीक व्याख्या करें तो, पिछले दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यने भी उनपर लागू नहीं किया था, हमारी राष्ट्रीय प्रतिष्ठाके विरुद्ध है। इस सरकारको इसमें कोई सन्देह नहीं है कि जब यह बात ध्यानमें आयेगी तो उपनिवेशका लोकमत इस माँगका समर्थन करेगा जो प्रस्तुत की गई है।

इसलिए दूसरे प्रस्तावित अध्यादेशसे, जो १८८५ के कानून ३ का स्थान लेगा, उनके वस्तियोंके बाहर व्यापार करनेके अधिकारोंमें हस्तक्षेप न होना चाहिए जो इस समय देशमें हैं...। जमीन खरीदनेके प्रश्नके सम्बन्धमें, जिन ब्रिटिश भारतीयोंको वस्तियोंसे बाहर रहनेका अधिकार है, उनको कमसे-कम उन स्थानोंमें जायदाद लेनेका अधिकार होना चाहिए जिनपर व्यवसायके निमित्त उनका कब्जा है।"

उन्होंने दूसरे प्रश्न अर्थात् भावी प्रवासियोंके प्रश्नपर कहा:

"महामहिम सम्राट्की सरकारको अत्यन्त खेद है कि साम्राज्यके भीतर ब्रिटिश भारतीयोंके स्वतन्त्र आवागमनको रोकनेकी आवश्यकता है, इसलिए वह अनुभव करती है कि वह ट्रान्सवालकी विधान परिषदमें उन कानूनोंके आधारपर प्रवासपर प्रतिबन्ध लगानेका कानून अभी पेश करनेके बारेमें लगाई गई अपनी रोक वापस नहीं ले सकती...।" यह निश्चित प्रतीत होता है कि जो लोग अब भी प्रस्तावित प्रवासी प्रतिबन्धक अध्यादेशकी हदमें आते हैं, और वे बहुत कम होने चाहिए, वे निम्न वर्गके एशियाई न होंगे, और इसलिए ऐसे लोग न होंगे जिन्हें सफाईके ख्यालसे विशेष वस्तियोंमें रखा जाना जरूरी हो। मेरी रायमें जबतक यह सिद्ध न हो कि प्रवासी प्रतिबन्धक अध्यादेशसे प्रवासियोंकी बाढ़ न्यूनतम

नहीं हो सकी है, जसी उससे होनेकी आशा की जाती है, तबतक, और यह देखते हुए कि केप कालोनी या नेटालमें तो वैसा कानून बन नहीं रहा है, वर्तमान अधिवेशनमें जो अध्यादेश पास किया जाता है, उससे नवागन्तुकोंका व्यापार-सम्बन्धी अधिकार कम नहीं किया जाना चाहिए।"*

यह बताना शायद आवश्यक हो कि करीब-करीब १९०३ के अखीरमें प्रिटोरियाके एक व्यापारी हबीब मोटनने 'निवास-स्थान' शब्दोंके सम्बन्धमें १८८५ के कानून ३ की पहले जो व्याख्या की गई थी, उसपर न्यायालयसे अपने पक्षमें निर्णय प्राप्त किया था। नये निर्णयका प्रभाव यह हुआ कि एशियाइयोंको बस्तियोंसे बाहर व्यापार करनेका (किन्तु रहनेका नहीं) अधिकार मिल गया।

इसी वर्ष ट्रान्सवाल सरकारने निर्णय किया कि १८८५ के कानून ३ की ३ पौंड प्रवेश-शुल्ककी अदायगीसे सम्बन्धित धारा कड़ाईसे लागू की जाये। इसका नतीजा यह हुआ कि ५,०६६ भारतीयों और ५१५ चीनियोंसे १६,७४३ पौंड वसूल किये गये, क्योंकि ये लोग अधिकारियोंको यह विश्वास न दिला सके कि उन्होंने पहले गणराज्यकी सरकारको वह शुल्क अदा कर दिया था। इसी प्रकार समस्त एशियाई वर्गके पुनः पंजीयनका निश्चय किया गया; किन्तु भारतीयोंने इसपर आपत्ति की। उनका कहना था कि वे पहले ही कानूनके अनुसार कार्रवाई कर चुके हैं। किन्तु उच्चायुक्तने उन्हें सलाह दी कि वे अपनी आपत्तियोंपर आग्रह न करें। उन्होंने उनको विश्वास दिलाया कि पंजीयनसे उनकी रक्षा होगी। उन्होंने यह भी कहा कि,

> "एक बार पंजिकामें नाम दर्ज होनेपर उनकी स्थिति मजबूत हो जायेगी और उसके बाद पंजीयनकी आवश्यकता न होगी, और न उन्हें नया परवाना लेना होगा। इस पंजीयनसे उनको यहाँ रहनेका अधिकार मिल जायेगा और साथ ही आने और जानेका अधिकार भी।"

चूँकि भारतीय समझौतेके लिए सदा उत्सुक रहते हैं और उन्हें ब्रिटिश उच्चायुक्त जैसे ऊँचे अधिकारीके वचनपर विश्वास भी था, इसलिए उन्होंने वैसा ही किया। जो नये प्रमाणपत्र दिये गये उनमें ये बातें थीं: प्रमाणपत्रोंके मालिकोंके नाम, जन्म-स्थान और धन्धा, इससे पहलेका पता और हस्ताक्षर, उनकी पत्नियोंके नाम, बच्चोंकी संख्या, प्रमाणपत्रोंके मालिकोंकी उम्र, उनकी विशेष हुलिया और अंगूठा-निशानियाँ।

इस प्रकार "पंजीयन" पहले तो एशियाइयोंकी, जिनमें ब्रिटिश भारतीय भी थे, शिनाख्तका एक तरीका हो गया; किन्तु वह अभीतक ऐच्छिक पंजीयन था। वह भेदभावकारी कानूनसे लागू नहीं किया गया था जैसा वह उसके बाद १९०७ के एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके रूपमें लागू किया गया है।

एशियाई कानून संशोधन अध्यादेश (१९०६ का कानून २९), जो बादमें ट्रान्सवालकी उत्तरदायी सरकारने फिर बनाया, ब्रिटिश भारतीयोंके दर्जेको कम करनेकी दिशामें अगला कदम था। इसके अंतर्गत एशियाइयोंके पंजीयनसे सम्बन्धित १८८५ के बोअर कानून ३ की धारा २ का खण्ड–ग रद कर दिया गया है। इस धाराके अनुसार उन "एशियाइयोंको ही पंजीयन कराना लाजिमी था जो एशियाके किसी वतनी जातिके लोग थे और "गणराज्यमें व्यापार करनेके लिए या अन्य उद्देश्यसे बसना चाहते थे।" इनमें कथित कुली, अरब, मलायी और तुर्की राज्यके मुसलमान सम्मिलित थे। उन्हें "पंजीयन" गणराज्यमें प्रवेशके बाद आठ दिनके भीतर कराना था और जो लोग गणराज्यमें इस कानूनके लागू होनेसे पहले आबाद हो चुके हैं उनको इसका कोई पैसा नहीं देना था। इस प्रकार "एशियाइयोंके" प्रवासपर कोई प्रतिबन्ध न था; बल्कि केवल तभी ३ पौंड शुल्क देना और "पंजीयन कराना" आवश्यक था जब प्रवासी बसना चाहे। इस उपखण्डको रद करनेसे एशियाइयोंका इस रकमके बदले ट्रान्सवालमें प्रवेशका निहित अधिकार समाप्त हो गया। यह स्मरणीय है कि अंग्रेजोंका अधिकार होनेके बादसे शान्ति-रक्षा आध्यादेशका प्रयोग एशियाइयोंको अवांछनीय प्रवासी मान कर प्रवेशसे रोकनेके लिए प्रभावपूर्ण ढंगसे किया गया है।

* श्री लिटिल्टनका वाइकाउंट मिल्नरको पूर्व उल्लिखित पत्र।

अब उपनिवेशके सभी वैध निवासी एशियाई १९०७ के कानूनसे नये सिरेसे पंजीयन करानेके लिए पेश होने, एशियाई पंजीयकको उपनिवेशमें अपने रहनेके अधिकारके सम्बन्धमें सन्तुष्ट करने, और यदि उसमें सफल हो जायें तो जो कानून छोटी-छोटी बातोंमें इतने अपमानकारी ढँगका है कि उसके कारण अबतक नम्रतासे रहनेवाले लोगोंको खुला विद्रोह करना पड़ा है, उससे संलग्न नियमोंके अन्तर्गत दी हुई विधिसे निजी जाँच करानेके लिए बाध्य हैं। प्रार्थीको अपना पूरा नाम, प्रजाति, जाति या सम्प्रदाय, आयु, हुलिया, निवास-स्थान, धन्धा, जन्म-स्थान, ट्रान्सवालमें पहली बार आनेकी तारीख, ३१ मई १९०२ को जहाँ थे उस स्थानका नाम, पिताका और माँका नाम, पत्नीका नाम, बेटे और आठ वर्षसे कम आयुके आश्रित बालक, उनके नाम, उनकी आयु, और संरक्षकके साथ उनका सम्बन्ध, यह सब ब्योरा देना लाजिमी होता है। इसके अतिरिक्त उसको अपने दोनों हाथोंके अँगूठे; अपनी तर्जनी, मध्यमा, अनामिका और कनिष्ठिका अँगुलियोंकी निशानियाँ और प्रत्येक हाथकी चारों अँगुलियोंकी एक साथ निशानी देनेका नियम है। इसका अर्थ यह है कि एशियाई अधिवासियोंके वर्तमान अधिकार, जो उन्हें ट्रान्सवाल सरकारके अधीन मिले थे और जिनके सम्बन्धमें लॉर्ड मिल्नरने १९०३ में फिर आश्वासन दिया था, बिना विचारे अवैध कर दिये गये हैं और उनकी सत्यता पुनः सिद्ध करनेका भार उनके मालिकोंपर डाल दिया गया है। उच्चायुक्तकी सलाहपर स्वेच्छासे लिये गये पंजीयन प्रमाणपत्र लौटा दिये जाने चाहिए और उनके स्थानपर दूसरे प्रमाणपत्र ले लेने चाहिए। ये दूसरे प्रमाणपत्र सोलह वर्ष या अधिक आयुके प्रत्येक एशियाईको सदा साथ रखने चाहिए और उपनिवेशमें कानून द्वारा संस्थापित पुलिस दलके किसी भी सदस्य या उपनिवेश-सचिव द्वारा अधिकृत किसी अन्य व्यक्तिके माँगनेपर दिखाने चाहिए। आठ वर्षसे अधिक आयुके सब कानूनी अधिवासी एशियाइयोंके लिए पंजीयन अनिवार्य है और सोलह वर्षसे कम आयुके ऐसे प्रत्येक बच्चेके संरक्षकको ऐसा न करनेकी अवस्थामें १०० पौंड जुर्मानेकी या तीन मासकी कड़ी कैदकी सजा दी जा सकती है। उपनिवेशके ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायत है कि ट्रान्सवाल गणराज्यके भेदभावकारी कानूनके कारण उनके दर्जेमें जो कमी हुई थी वह ब्रिटिश उपनिवेशमें बनाये गये इस कानूनके अन्तर्गत होनेवाली वर्तमान अप्रतिष्ठाकी तुलनामें कुछ नहीं है। उनका कहना है कि उससे उनपर सदाके लिए हीन और अवांछनीय होनेकी छाप लग जाती है। तब वे ऐसे अविश्वसनीय मान लिये जाते हैं कि उन्हें संदिग्ध और अपराधी व्यक्तियोंके समान अपनी शिनाख्त कराने और निगरानीमें रहनेकी आवश्यकता होती है। यह स्मरण रहे कि यह अधिनियम **उपनिवेशके वैध निवासी** "एशियाइयों" पर लागू होता है और केवल वे एशियाई जो ट्रान्सवालमें उसके विलयसे पहले बस चुके थे "वैध निवासी" हैं। इस कानूनको उसके निर्माताओंने इस आधारपर आवश्यक बताया था कि उनके कथनानुसार देशमें भारतीय बड़ी संख्यामें अवैध रूपसे आ रहे हैं। अभीतक ऐसी बड़ी संख्यामें प्रवेशका कोई प्रमाण नहीं दिया गया है। जब सन् १९०३ के अन्तमें तत्कालीन एशियाई पंजीयक कप्तान हैमिल्टन फाउलसे इस कथित अवैध प्रवेशके सम्बन्धमें स्पष्टीकरण माँगा गया था तो उन्होंने उत्तर दिया था: "यह विश्वास करनेका कोई कारण नहीं है कि एशियाई लोग उपनिवेशमें अनधिकृत रूपसे आ रहे हैं।" उन्होंने यह भी बताया था कि १९०३ के प्रारम्भमें एशियाई बड़ी संख्यामें आवश्यक अधिकारपत्रके बिना प्रवेश करनेमें सफल हो गये थे, किन्तु वे तुरन्त गिरफ्तार कर लिये गये थे और निर्वासित कर दिये गये थे। उन्होंने आगे कहा था: "किसी अनधिकृत एशियाईका उपनिवेशमें बिना गिरफ्तार हुए अधिक समय तक रहना लगभग असम्भव है।" इससे ताजा श्री चैमनेकी रिपोर्टमें चोरीसे प्रवेशका अनिश्चित और अविश्वसनीय आरोप है और स्पष्ट है कि उसके पीछे उस समय अध्यादेश लागू करनेके औचित्यको सिद्ध करनेका खयाल था। संक्षेपमें यह बताती है कि "३१ दिसम्बर १९०६ को समाप्त होनेवाले वर्षमें ३७५ ऐसे एशियाई पुरुष उपनिवेशमें आये या रहते हुए पाये गये जिनके पास नियमित प्रवेशपत्र नहीं थे।" इससे इनकार नहीं किया गया है कि ये "अवैध प्रवासी" सम्भवतः १९०२ के बादके चार वर्षोंमें किसी भी समय आ गये होंगे। और यह महत्वपूर्ण बात है कि उनमेंसे केवल २१५ मामलोंमें न्यायाधीशोंके सम्मुख अभियोग चलाये गये और उनको सजाएँ दी गई।

"खासी संख्यामें अवैध भारतीय प्रवास" की जो चिल्लाहट की गई और उसके साथ जो ये आरोप लगाये गये कि अधिवासी एशियाई और चोरीसे देशमें आनेके इच्छुक लोगोंकी मिलीभगत है, उनके उत्तरमें

भारतीय नेताओंने बार-बार अपीलें कीं कि एक जाँच आयोगकी नियुक्ति की जाये और यदि कोई सन्देह वस्तुतः हो तो उनका उस जाँचसे सदाके लिए निराकरण करा दिया जाये। किसी अज्ञात कारणसे इस बहुत ही विवेकपूर्ण सुझावकी लगातार उपेक्षा की गई है।

नये पंजीयन अधिनियमकी आवश्यकता और पर्याप्तताका अन्दाज करते समय यह स्मरण रखा जाये कि शान्ति-रक्षा अध्यादेश, जिसके द्वारा कप्तान हैमिल्टन फाउल नये एशियाइयोंके प्रवेशको प्रभावपूर्ण ढंगसे रोक सके, अब भी अमलमें आ रहा है और उसके अन्तर्गत अवैध प्रवेशकर्ताओंको भारी सजाएँ दी जाती हैं; पुनः प्रवेशके प्रार्थी एशियाई तबतक उपनिवेशके बाहर रोक रखे जाते हैं जबतक उनके पुनः प्रवेशके अधिकारकी कड़ी खोजबीन नहीं कर ली जाती। तर्कके लिए मान लीजिए, यदि इस तरह चोरीसे अधिक संख्यामें प्रवेश होता है, जैसा बताया जाता है, तो उसको रोकनेके लिए नये कानूनमें कोई अतिरिक्त साधन नहीं दिया गया है। कानूनसे केवल वैध अधिवासी एशियाइयोंपर छाप लगाई जाती है। इससे अनधिकृत प्रवेशकर्तापर ज्यादासे-ज्यादा यह प्रभाव पड़नेकी सम्भावना है कि देशमें चोरीसे आनेके बाद उसका पता लग जायेगा; किन्तु इससे यह मान लिया जाता है कि अपराधी शिनाख्तके लिए बुलाये जानेपर पेश हो जायेगा। यदि वह ऐसा न कर सके तो पंजीयन अधिनियमके अन्तर्गत उसका पता लगानेके लिए उससे ज्यादा कुछ नहीं किया जा सकता। जितना शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत किया जा सकता था, और तब केवल शस्त्र यह रह जाता है कि जिनके पास नया पंजीयन प्रमाण-पत्र न हो उन्हें व्यापारिक परवाने न दिये जायें। इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि थोड़ेसे चोरीसे आनेवाले लोगोंको खोज निकालनेके लिए वैध अधिवासी भारतीयोंके समुदायपर — जिसमें व्यवसायी, छोटे व्यापारी, फेरी, आदि अच्छी ख्यातिवाले और देशमें बहुत समयसे रहनेवाले लोग हैं, हीनताकी छाप लगा दी जायेगी और उनका दर्जा प्रतिबन्धोंके साथ रिहा अपराधियोंका बना दिया जायेगा। संदिग्ध अपराधका पता लगानेमें सुविधा देनेके लिए निरपराध लोग कष्ट भोगेंगे।

अधिनियमका सच्चा स्वरूप दिखानेके लिए उसके साथ अपमानजनक नियम जोड़ दिये गये हैं और उनको जो प्रमुखता दी गई है उसका प्रयोग भारतीयोंकी मुख्य दलीलकी ओरसे ध्यान हटानेके लिए किया गया है। उनकी भावुकताके सम्बन्धमें अत्युक्ति की जाती है और उसका यह कहकर मजाक उड़ाया जाता है कि उनसे एक कागजपर अँगुलियोंके निशान माँगनेपर ही उनको अपनी भावनाका तिरस्कार अनुभव होता है। यद्यपि वकील, डॉक्टर, प्रसिद्ध और पुराने व्यापारी और वैसे ही सच्चरित्र फेरिए भी सम्भवतः इस प्रकार अपमानजनक ढंगसे की जानेवाली बारीक और व्यक्तिगत शिनाख्तको, जो उनकी ईमानदारी और सुख्यातिपर गम्भीरतम लांछन लगाती है, अकारण ही आक्षेपजनक मानते हैं ऐसा नहीं है, तथापि यह बिल्कुल स्पष्ट है कि विनियम — स्वयं भले ही अप्रिय हों — किन्तु वे केवल आकस्मिक माने जाते हैं और ब्रिटिश भारतीयोंने जो आपत्ति की है, उसका मूल कारण उसके अमलकी तफसीलें नहीं, बल्कि स्वयं अधिनियम ही है। जैसा पहले कहा जा चुका है, भारतीय कानूनको मान लेनेसे यह समझते हैं मानो ब्रिटिश भारतीयोंके इस विशेष भागपर अनिवार्य कानूनी छाप लगा देनेसे उनका जातीय दर्जा गिर गया हो। ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष श्री ईसप इस्माइल मियाँने सार रूपमें मामलेको इस प्रकार पेश किया है:

> "यदि अँगुलियोंकी निशानियोंकी जगह हस्ताक्षर कर दिये जाते तो भी मेरे संघका रुख किसी प्रकार बदला न होता। अधिनियममें बाध्यताका जो डंक समाया है उसीसे समाजमें इतना रोष उत्पन्न होता है और उसे वह इतना दुस्सह लगता है. . .। उसमें जो सजा और कठोरता है उसपर रोष प्रकट नहीं किया जाता, बल्कि **उसके पीछे छिपी हुई उस मान्यतापर किया जाता है कि समस्त भारतीय समाज ही अपना व्यक्तित्व छिपानेमें और इस देशमें चोरीसे अनधिकृत प्रवासियोंको लानेमें सक्षम है. . .**। सबसे अधिक आपत्ति इस बातपर की जाती है; और मेरा खयाल है कि यह उचित ही है. . .। यह भली भाँति जानते हुए कि ब्रिटिश भारतीय एक वर्गके रूपमें ऊपर बताये गये कार्योंके अपराधी नहीं हैं, वे मर्दानगीके साथ उस मान्यतासे बचनेके लिए संघर्ष करते हैं जो कानूनमें निहित है और जिसकी घोषणा कानूनके निर्माता अपने विश्वासके रूपमें खुल्लम-खुल्ला करते हैं।"

इस सिद्धान्तकी रक्षाके लिए अपनी व्यक्तिगत और जातीय प्रतिष्ठाको कायम रखनेके उद्देश्यसे महामहिम सम्राट्के लगभग १३,००० राजभक्त प्रजाजन गम्भीरतापूर्वक जेल जाने और अपनी सांसारिक सम्पत्तिकी एवं स्वयं स्वतन्त्रताकी भी हानि सहनेकी शपथ ले चुके हैं। प्रायः यह व्यंग्य किया जाता है कि भारतीयोंमें अपनी दूकानों और अपने लाभके अतिरिक्त कोई आत्मा नहीं होती। क्या इस व्यंग्यका इससे अधिक जोरदार कोई दूसरा उत्तर दिया जा सकता है?

प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक एशियाई-विरोधी कानूनोंके रूपमें ट्रान्सवालकी नवीनतम उपज है। जो शान्ति-रक्षा अध्यादेश "सुव्यवस्था और सुशासन एवं जन-सुरक्षाको कायम रखनेके लिए सैनिक कानूनकी वापसीको ध्यानमें रखकर" बनाया गया था, उसको एक ऐसे ब्रिटिश उपनिवेशकी, जहाँ अब वे मन्त्री राज्य करते हैं जो अभी कुछ पहले हमसे लड़ रहे थे, विधान संहितामें कायम रखना असंगत है और इसी असंगतिके कारण उसका जल्दी रद किया जाना आवश्यक हो गया। यह कार्य प्रवासी-प्रतिबन्धक विधेयकके खण्ड (१) से सम्पन्न होता है, किन्तु इस खण्डके अन्तमें यह ध्यान देने योग्य शर्त है:

> १९०७ के एशियाई कानून संशोधन विधेयकसे ऐसे कोई अधिकार या अधिकार-क्षेत्र रद या कम न होंगे जो उस अधिनियमको "कार्यरूप देनेके उद्देश्यसे दिये गये हैं; बल्कि उक्त अध्यादेश उस अधिनियमके सब उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए पूर्णतः लागू माना जायेगा।"

दूसरे शब्दोंमें शान्ति-रक्षा अध्यादेशकी शर्तें केवल एशियाइयोंपर लागू करनेके लिए कायम रखी गई हैं।

इस विधेयकसे पंजीयन कानूनको स्थायित्व मिलता है। उसमें उन ब्रिटिश भारतीयोंके निवासके अधिकारकी उपेक्षा की गई है, जो युद्धसे पूर्व ट्रान्सवालमें बस गये थे और जिनमेंसे बहुतोंने १८८५ के कानून ३ के अन्तर्गत उस निवासके मूल्यके रूपमें ३ पौंड भी दे दिये थे; किन्तु जो किसी-न-किसी कारणसे अभी देशमें नहीं लौटे हैं।

इसमें देशमें प्रवेशकी योग्यताएँ बताते हुए शिक्षा-परीक्षाके रूपमें यूरोपीय भाषाओं और यहूदी-भाषा यीडिशके अतिरिक्त अन्य सब भाषाओंको छोड़ दिया है।

इसके अनुसार उन भारतीय प्रवेशार्थियोंको भी, जो विधेयकमें दी हुई परीक्षामें उत्तीर्ण हो जायें, एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके अन्तर्गत पंजीयन कराना होगा — उस एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके अन्तर्गत जिसके पंजीयन-सम्बन्धी नियम प्रकटतः अधिकांश देशवासी एशियाइयोंकी कल्पित निरक्षरताके कारण बनाये गये थे।

विधेयकके विरोधी बहुत-सी युक्तियोंके साथ यह तर्क देते हैं कि जो भारतीय यूरोपीय भाषा शिक्षा-परीक्षा पास करने योग्य पर्याप्त रूपसे जानते हैं वे भी अपने साथ शिनाख्तके काफी निशान रखें और चूँकि सांस्कारिक शिक्षण प्राप्त किसी भी भारतीयका उसकी शर्तोंको मानना कल्पनागम्य नहीं है, यह नियम भारतीयोंको विधेयककी शिक्षा-सम्बन्धी धाराके लाभसे वंचित करने और इस प्रकार उनको देशमें आनेसे रोकनेका एक अप्रत्यक्ष तरीका है।

विधेयकमें उन भारतीय व्यापारियोंको, जो ट्रान्सवालमें बस गये हैं, अपने मुनीम, सहायक, और अपने व्यवसाय और घरेलू काम-काजको चलानेके लिए आवश्यक नौकर लानेकी सुविधाएँ देनेकी कोई व्यवस्था नहीं है। खण्ड (६) के उपखण्ड (ग) में एशियाई कानून संशोधन अधिनियममें अप्रत्यक्ष सुधार करनेका एक चालाकी-भरा प्रयत्न किया गया है। यह ध्यान देने योग्य है। अधिनियममें कानूनको न माननेवाले एशियाइयोंको उपनिवेशसे जानेका नोटिस देनेके बाद जुर्माने और कैदकी सजाएँ देनेकी व्यवस्था है वैसे ही शान्ति-रक्षा अध्यादेशमें ऐसा ही देशसे जानेका नोटिस देनेका अधिकार दिया गया है। इस विधेयकके उपखण्ड (ग) में इन दोनोंसे आगे बढ़कर महत्वपूर्ण कदम उठाया गया है। इसमें स्थानीय सरकारको किसी भी व्यक्तिको, जो एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके अन्तर्गत दिये गये नोटिसको भंग करे, उसके खर्चपर जबर्दस्ती निर्वासित करनेका अधिकार दिया गया है। इस कानूनके वास्तविक स्वरूपको तबतक उचित रूपसे नहीं समझा जा सकता जबतक विधेयकमें "निषिद्ध प्रवासी" की परिभाषापर एक संक्षिप्त दृष्टि न डाली जाये। जो एशियाई पुरुष या स्त्री बोलकर लिखाने-पर या अन्यथा किसी यूरोपीय भाषामें लिखनेमें असमर्थ हो उसका वर्गीकरण निरक्षरों, कंगालों, वेश्याओं और ऐसे ही व्यक्तियोंके साथ किया गया है और उस व्यक्तिके साथ भी जो, यदि उपनिवेशमें आये तो, "उस

नारीखको लागू किसी भी कानूनके अन्तर्गत दण्डनीय होगा। उसके अन्तर्गत वह, यदि उपनिवेशमें मिले तो, निष्कासित किया जा सकता है या उसको उपनिवेशसे जानेकी आज्ञा दी जा सकती है, चाहे उसे उस कानूनको तोड़नेपर सजा दी गई हो या उसकी धाराओंका पालन न करनेपर सजा दी गई हो या अन्यथा सजा दी गई हो।" अन्तमें विधेयकके खण्ड (६) के अन्तर्गत वह "निषिद्ध प्रवासी" हो जाता है और उस रूपमें "किसी भी व्यक्तिको, जिसे मन्त्री उचित कारणसे शान्ति, व्यवस्था और उपनिवेशके सुशासनके लिए खतरनाक समझता है, यदि वह वहाँ रहता है तो," बलात् निर्वासित किया जा सकता है।

यह आपत्ति की जाती है, और बिना कुछ कारण बताये नहीं, कि अन्तमें बताई गई धाराएँ एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके विरुद्ध सत्याग्रह करनेवाले लोगों और उनके नेताओंके विरुद्ध लागू की जाती हैं।

बुद्धिमत्तापूर्वक यह व्यवस्था भी की गई है कि इस कानूनके पीड़ितोंको वह सब खर्च भी देना होगा जिसे सरकार उनको उपनिवेशसे या दक्षिण आफ्रिकासे निकालनेमें या निकालनेसे पूर्व उपनिवेशमें या अन्यत्र किसी नजरबन्दी शिविरमें रखनेमें करेगी। इस खर्चकी रकम विभागके किसी अधिकारी द्वारा ऐसा प्रमाणपत्र, जिसमें उस खर्चकी विगत और पूरी रकम हो, शेरिफके सामने पेश करनेपर उस दण्डित व्यक्तिकी उपनिवेशमें जो सम्पत्ति होगी उसकी कुर्कीसे वसूल की जायेगी और उसकी कुर्की करनेका तरीका सर्वोच्च न्यायालयके निर्णयके अनुसार होगा।

कारण

यदि यह पूछा जाये कि सम्मानित ब्रिटिश एशियाइयोंके प्रति इस अनुचित शत्रुताकी जनक-शक्ति क्या है, तो उसका उत्तर केवल एक ही हो सकता है। १८८५ से अबतकके कानूनोंके और इस विषयमें जो कुछ कहा या लिखा गया है उसके निरीक्षणसे यह पर्याप्त रूपसे स्पष्ट हो जाता है कि यह चिल्लाहट मुख्यतः व्यापारिक ईर्ष्याका प्रकट रूप है। यह ध्यानमें आ जायेगा कि अबतक आक्रमणका लक्ष्य व्यापारिक परवाने रहे हैं। गणराज्यके विधायकोंको उन यूरोपीय दूकानदारोंने १८८५ का कानून ३ बनानेके लिए उकसाया जो अपने इन अरक्षित प्रतिस्पर्धियोंसे मुक्त होनेके लिए चिन्तित थे। बॉक्सबर्ग, क्रूगर्सडॉर्प, पॉचेफस्ट्रूम और ऐसे ही अन्य नगरोंके "श्वेत-संघियों" की चिल्लाहटसे ऊपर "कुलियोंको परवाने नहीं" की पुकार गूँजती है। १९०३ में एशियाइयोंको बाजारोंमें भेजनेका प्रयत्न ट्रान्सवाल सरकारके विरुद्ध हबीब मोटनके उस परीक्षात्मक मुकदमेके बाद लगभग त्याग दिया गया जिसमें बाजारों और बस्तियोंके बाहर एशियाइयोंका व्यापार करनेका अधिकार स्थापित हो गया था। नये पंजीयन अधिनियमसे उन एशियाइयोंके, जो उसकी धाराओंका पालन न करें, व्यापारिक परवाने नये न किये जानेका खतरा है।

किन्तु केवल व्यापारिक स्पर्धा कदाचित् विधानमण्डलको कार्रवाईकी प्रेरणा देनेके लिए पर्याप्त न होती। इसलिए रंग-विद्वेषसे अपील की गई है जो प्रत्यक्षतः दक्षिण आफ्रिकाकी ही उपज है और वर्तमान रंगदार आबादीके कारण जो स्थिति इस समय भी खतरनाक है, वह रंगदार आबादीके अतिरिक्त एक स्थायी एशियाई तत्त्वकी उपस्थितिसे और भी उलझ जायेगी, यह संकेत देकर उपनिवेशियोंकी कल्पनाको भड़काया गया है। यह तर्क प्रत्यक्षतः युद्ध पूर्वके वचनों और दायित्वोंकी समाप्तिको और उसके फलस्वरूप सस्ती बुद्धिमत्ताकी वेदीपर ब्रिटिश भारतीयोंकी छोटी-सी आबादीके उत्पीड़नको उचित सिद्ध करनेके लिए पर्याप्त हुआ है। एक मताधिकार-विहीन अल्पसंख्यक समाजकी, जो ट्रान्सवालकी गोरी आबादीके पाँच प्रतिशतसे भी कम है और जिसे नगर-पालिकाओंमें या राजनीतिक संस्थाओंमें कोई प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं है, साम्राज्यके सभ्य नागरिकोंके रूपमें उचित बर्तावकी सामान्य माँग भी निर्दयतापूर्वक अमान्य कर दी गई है। सर आर्थर लालीके कथनानुसार उन्हें युद्धसे पहले उनके मामलेके माने हुए हिमायतियोंने जो आशाएँ बँधाई थीं और जो वचन दिये थे, उनको पूरा करनेके बजाय तोड़ा गया है, यह कहना अधिक ठीक होगा।

भारतीय-विरोधी कानूनकी गुरुता कम बतानेके उद्देश्यसे यह जोर देकर कहा गया है कि इसको समस्त गोरी आबादीकी सर्वसम्मत स्वीकृति प्राप्त है। किन्तु इस कथनपर गम्भीर सन्देह किया जा सकता है। दूसरी ओर यह कहा जा सकता है कि जो लोग स्वार्थपूर्ण कारणोंसे भारतीय प्रतिस्पर्धियोंको हटानेमें दिलचस्पी

रखते हैं वे ही कोई ऐसी निश्चित सम्मति देकर उससे बँध सकते हैं। कुछने विशुद्ध तटस्थ भावनासे विजेता पक्षका, बहुत बड़ी बहुसंख्याका, खानों और कारखानोंके वर्गोंका साथ देना नहीं चाहा है। किन्तु ऐसी सर्वसम्मत स्वीकृतिकी बात मान भी लें, तो भी क्या यह गम्भीरतासे कहा जा सकता है कि युद्धसे पूर्व दिये गये वचन और वादे, प्रकट और निहित, जिनसे यह देश बँधा है, उच्छृंखलतापूर्वक त्याग दिये जाने चाहिए और ट्रान्सवालके जनवर्गका एक भाग जो दुर्बल है, हमारे ही झण्डेके नीचे दूसरे भागके कहनेसे, जो मजबूत है, निर्दयतापूर्वक कुचल दिया जाना चाहिए और उसका कतई कोई दर्जा न रहने दिया जाना चाहिए?

जो लोग एशियाइयोंके निष्कासनके लिए शोर मचाते हैं, उनके आरोपोंकी विस्तृत जाँच यदि इस लघु-पुस्तिकाकी मर्यादामें करनी सम्भव होती तो वह दिलचस्प होती। उनके आरोपोंमें ऐसे तर्क हैं जैसे "रहन-सहनके दर्जेमें गिरावट" और "अनुचित स्पर्धा" एवं यह कि "एशियाई यूरोपीय उपनिवेशियोंमें कभी घुल-मिल नहीं सकते और फलतः इस राष्ट्र-शरीरमें गूँथे नहीं जा सकते।" पहले आरोपके सम्बन्धमें यह संक्षेपमें कह दें कि ब्रिटिश भारतीय ट्रान्सवालके खनक-वर्गसे स्पर्धा नहीं करते, और न इस उपनिवेशमें भारतीय कुली ही हैं। एशियाई आबादीमें बहु-संख्या दूकानदारों और व्यापारियोंकी है जिनमेंसे ८८-१/२ प्रतिशत ब्रिटिश भारतीय हैं। यह सच है कि ये दूकानदार और व्यापारी चतुर व्यवसायी, धैर्यवान, लगनवाले और उद्योगी हैं; किन्तु अपने गोरे प्रतिस्पर्धियोंके समान उन्हें कर और किराया देना होता है, वे अपनी आयके बड़े भागसे यहीं थोक (यूरोपी) आयातकोंमें लेनदेन करते हैं, और प्रायः चिकित्सकों, वकीलों और मिस्त्रियों आदिकी सेवाएँ प्राप्त करते हैं। यह सच है कि वे खानपानमें संयमी होते हैं, मुख्यतः मद्यके सम्बन्धमें, वे अपेक्षाकृत अलग-अलग रहते हैं और अपनी सम्पत्तिका अपव्यय नहीं करते। उनका व्यापार मुख्यतः समाजके अपेक्षाकृत निर्धन वर्गोंसे होता है और यह मानी हुई बात है कि उनकी स्पर्धाके कारण जीवन-निर्वाहकी आवश्यक वस्तुओंका मूल्य नीचा रहा है।

भारतीयोंका रहन-सहन निकृष्ट होता है, यह एक मूर्खतापूर्ण भ्रम है। यह भ्रम इस कारण उत्पन्न हुआ है कि सामान्य यूरोपीय लोग पूर्वीय देशोंके भोजनके उत्तम व्यंजनोंको सराह नहीं पाते। ऐसे मामलोंमें तुलना विशेष रूपसे घृणास्पद होती है और जो तुलना करते हैं प्रायः उनके लिए खतरनाक भी होती है। तथ्योंकी निकटतर जानकारीसे प्रकट हो जायेगा कि भारतीय आहार महँगा नहीं है। कदाचित् यह उचित रूपसे पूछा जा सकता है कि क्या निर्धनतम भारतीय फेरीवालोंका भी सुख-सुविधाका स्तर निर्धन गोरोंके दुःखजनक रूपसे बढ़े हुए समुदायकी अपेक्षा नीचा है। उन निर्धन गोरोंमें बिजवानर, सीरियाई और अकुशल रूसी उल्लेखनीय हैं और इनमें जो रूसी अधिक पुराने गोरे व्यापारियोंसे स्पर्धा करते हैं उनकी संख्या कम नहीं होती। और न इस बातसे ही इनकार किया जा सकता है कि भारतीय दूकानें हर तरह यूरोपीय पड़ोसियोंकी दुकानोंकी अपेक्षा अधिक अच्छी होती हैं। भारतीय जिन व्यापारियोंसे व्यापार करते हैं उनके साथ बर्तावमें उनकी ईमानदारीपर और उनकी ऊँची प्रतिष्ठापर निश्चय ही आक्षेप नहीं किया जा सकता। उनकी आदतोंको गन्दा बताया गया है और उनपर आक्षेप किया गया है। लेखकको इस आक्षेपकी असत्यताके सम्बन्धमें अपनेको आश्वस्त करनेके असाधारण अवसर मिले हैं। १९०३-४ के प्लेगके दिनोंमें यह आरोप खास जोर-शोरसे लगाया गया था और विशुद्ध आत्मरक्षाकी दृष्टिसे स्वतन्त्र चिकित्सा-विशेषज्ञोंसे निष्पक्ष जाँच करवाना आवश्यक हो गया था। उनके प्रमाण-पत्रोंसे निश्चित रूपसे सिद्ध हो गया था कि भारतीयोंकी दूकानों और मकानोंकी बनावट और उनकी सामान्य व्यवस्था कमसे-कम सामान्य व्यापारीसे अच्छी थी। यह सत्य है कि जोहानिसबर्गकी सीमापर स्थित पुरानी बस्ती, जो बादमें नष्ट कर दी गई, उत्तरदायी अधिकारियों द्वारा सफाईके मामलेमें इतने लज्जाजनक रूपसे उपेक्षित रही थी कि वह सचमुच प्लेगका घर ही बन गई थी किन्तु वहाँ प्लेगका उन्मूलन कर दिया गया। जो बहुत-कुछ उसके निवासी भारतीयोंके अथक प्रयत्न, त्याग और सहयोगका परिणाम था।

भारतीय शेष समाजमें न मिलेंगे, यह तर्क तो उस लड़केकी कहानीकी पुनरावृत्तिमात्र है जिसने मेंढकको इसी अपराधमें दण्ड देकर मार दिया था कि वह मेंढक है। ट्रान्सवालके भारतीयोंपर कानून द्वारा अस्पृश्यताकी छाप लगा दी गई है। उनके साथ अमलमें अछूतोंका-सा व्यवहार किया जाता है। स्पष्ट शाब्दिक अयथार्थताका

खयाल किये विना वे सभी 'कुली' कहे जाते हैं। सरकारी क्षेत्रों तकमें ऐसे शब्दप्रयोग मिलते हैं जैसे, 'कुली वकील', 'कुली डॉक्टर', और 'कुली व्यापारी'। उनकी स्त्रियाँ 'कुली स्त्रियाँ' हैं। जैसा बताया जा चुका है, उनका जीवनमें कोई स्थान नहीं है, यदि है तो मेहरबानीके तौरपर वे भले ही अपने नाम किसी अचल सम्पत्तिकी रहन करा लें; किन्तु फिर भी वे उसके स्वामी नहीं हो सकते। उनको नगरपालिकाकी जिन ट्रामोंमें और सरकारकी जिन रेलोंमें गोरे बैठते हैं उनमें कभी-कभी बैठनेका साधारण अधिकार भी नहीं दिया जाता। उनके बच्चे काफिरोंके लिए निर्धारित स्कूलोंमें पढ़ने जाते हैं, इसके अतिरिक्त उनको शिक्षाकी कोई सुविधाएँ नहीं दी जातीं। क्या भारतीयोंको समाजके वृहत्तर जीवनमें अधिक निकटतासे घुलने-मिलने और सम्मिलित होनेमें इससे अधिक भी हतोत्साहित किया जा सकता है?

इस निष्कर्षसे बच निकलना कठिन है कि भारतीयोंके प्रति रोषका निचोड़ इस तथ्यमें आ जाता है कि उनमें उन लक्षणोंकी बहुलता है जो यदि उनके निन्दकोंमें हुए होते तो अनुकरणीय और सराहनीय गुण माने जाते। दुर्भाग्यसे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय अपनी शान्ति और सुरक्षाको कायम रखनेके लिए केवल लकड़हारे और पनिहारे बनकर रहनेमें सन्तुष्ट नहीं हैं। परिस्थितियाँ विपरीत होनेपर भी वे छोटेसे आरम्भसे अपेक्षाकृत समृद्धि प्राप्त करनेमें सफल हो जाते हैं। प्राय: वे अपने बेटोंको हमारे विश्वविद्यालयोंमें भेज सकते हैं। उनकी सच्ची रोष-उत्पादक बातें ये ही हैं। वे अपनी स्थितिसे आगे बढ़नेका साहस करते हैं। यदि वे केवल अकुशल मजदूरोंकी कमी पूरी करके या अपने गोरे सह-उपनिवेशियोंके लिए लाभ कमाकर सन्तुष्ट हो जाते एवं अपनी कमाईको खर्च करते रहते जिससे गोरोंको लगातार उतने ही मजदूर मिलते जाते तो उनकी उपस्थितिका स्वागत ही न किया जाता वरन् उनकी प्रशंसाके पुल बाँध दिये जाते। यदि इसमें कुछ सन्देह हो तो समीपस्थ नेटाल उपनिवेशमें देखें; एक ओर तो अच्छी स्थितिके भारतीयोंके विरुद्ध चीख-पुकार बढ़ती जाती है, दूसरी ओर उपनिवेशकी सरकार भारतीय कुली मजदूरोंका आयात बन्द करनेसे लगातार इनकार कर रही है।

ट्रान्सवालकी गणतन्त्रीय सरकारके विरुद्ध उत्तरदायी अंग्रेज मन्त्री हमारी ओरसे जो माँगें कर रहे हैं, उनकी तुलनामें हमारे इन मुट्ठी-भर भारतीय सह-प्रजाजनोंकी माँगें बहुत ही कम हैं। अपने गोरे साथी उप-निवेशियोंके पूर्वग्रहोंका खयाल करके भारतीय लोग नगरपालिका मताधिकार या राजनीतिक मताधिकारकी माँग नहीं करते। विशाल दृष्टिसे, जो अधिक सहानुभूतिपूर्ण सराहनाके योग्य है, भारतीय लोग, विस्तृत वतनी आबादीपर राज करनेवाली थोड़े-से गोरे-अल्पसंख्यकोंकी सरकारके सम्मुख प्रस्तुत, कठिनाइयोंको स्वीकार करते हैं। फलस्वरूप वे उपनिवेशको गोरोंके दिमागोंपर और हाथोंमें छोड़नेके लिए रजामन्द हैं। वे केवल इतना ही चाहते हैं कि उनके साथ साम्राज्यके सभ्य, भले ही वे रंगदार हों, नागरिकोंके योग्य सम्मान और लिहाजके साथ बर्ताव किया जाये एवं उनको अपमान, अप्रतिष्ठा और विनाशसे बचाया जाये। उनकी माँग यह नहीं है कि एक नये उपनिवेशके द्वार एशियाई प्रवासियोंकी अन्धाधुन्ध भरमारके लिए खोल दिये जायें। किन्तु उनका कहना यह अवश्य है कि भावी प्रवासियोंके लिए जो शिक्षाकी कसौटी लागू की जाये वह उचित हो और वह विशेष रूपसे भारतीयोंके ही विरुद्ध प्रयुक्त न की जाये। उदाहरणार्थ उनकी माँग यह है कि हिन्दुस्तानी और गुजरातीको कमसे-कम यीडिशके समान आधारपर तो रखा जाये। किन्तु वे एक मूल अधिकारके रूपमें यह चाहते हैं कि जो भारतीय वैध निवासी हैं उनको पहलेसे ही जन्मत: हीन और अपराधी मानकर बनाये गये भेदभावकारी कानूनसे बचाया जाये। वे व्यापारिक परवाने जारी करनेका नियमन और नियंत्रण एवं सफाईके अत्यन्त कड़े नियम लागू करनेका अधिकार नगरपालिकाओंको देनेकी बात मानते हैं; किन्तु वे यह पूछते हैं कि अचल सम्पत्तिका स्वामित्व प्राप्त करनेकी उनकी असमर्थता किस आधारपर स्थायी बनायी जा रही है? उदाहरणार्थ वे उस स्थानको क्यों नहीं खरीद सकते जिसमें वे अपना व्यवसाय चलाते हैं? नि:सन्देह ट्राम और रेलके कानून-कायदे, जिनके अनुसार वे उन डिब्बोंका और गाड़ियोंका उपयोग नहीं कर सकते जिनका उपयोग गोरे करते हैं एवं वे उपनियम जिनके अन्तर्गत उनके लिए पैदल-पटरियोंका प्रयोग निषिद्ध है, निश्चय ही एक ब्रिटिश उपनिवेशके अयोग्य हैं। पंजीयनके मामलेमें भी भारतीयोंने समझौतेकी स्वाभाविक इच्छाके साथ समझौतेका प्रस्ताव किया। चूँकि ट्रान्सवाल सरकारने अपनी एशियाई आबादीके पुन: पंजीयनको इतना महत्व

दिया है, इसलिए, और अपनी नेकनीयती सिद्ध करनेके लिए भी, भारतीय समाजने आगे आने और स्वेच्छासे पुनः पंजीयन करानेका प्रस्ताव किया है। उन्हें जो अधिकारपत्र प्राप्त हैं उनको दूसरे प्रमाणपत्रोंसे बदलनेके लिए और अति महत्वपूर्ण अँगूठा निशानी देनेके लिए भी वे तैयार हैं। इसके अतिरिक्त उनका यह कहना है कि सरकार बादमें एक छोटा अधिनियम भी बना सकती है जिसमें केवल नये प्रमाणपत्र ही वैध माने जायें जो इस प्रकार दिये गये हों।

इस प्रस्तावित समझौते और अधिनियमके अनुसार किये गये पुनः पंजीयनका अन्तर पर्याप्त स्पष्ट ही है। स्वेच्छया पंजीयनमें बाध्यताका डंक नहीं होगा और वह एक सम्मानास्पद कार्य होगा, जिसे एशियाई समाज गोरोंकी भावनाके सम्मानार्थ सम्पन्न करेगा और उनकी यह भावना कालान्तरमें बदल सकती है। यह माना जाता है कि अनिवार्य पंजीयन भारतीयोंका दर्जा काफिरोंके बराबर होनेका सूचक है, उससे कमका सूचक नहीं और यह बहुत सम्भव है कि उसको पड़ोसी उपनिवेश भारतीय-विरोधी कानून बनानेके लिए उदाहरणके रूपमें काममें लायें, एवं रंगदार बस्तियोंमें वह अनिवार्य पृथक्करणकी सम्मानित भूमिका बन जाये।

बोअर गणराज्यमें और उसके विलयके बाद ब्रिटिश भारतीयोंकी जो स्थिति थी, तुलनात्मक स्तम्भोंके रूपमें यहाँ उसका सारांश अप्रासंगिक न होगा बल्कि उससे ज्ञान-वृद्धि ही होगी:

बोअर शासनमें	ब्रिटिश अधिकारके बाद
एशियाई उपनिवेशमें स्वतन्त्रतासे आ सकते थे और १८८५ के बाद ३ पौंड कर देनेपर रह सकते और व्यापार कर सकते थे।	केवल वे एशियाई पुनः प्रविष्ट किये गये हैं जो यह सिद्ध कर दें कि वे युद्धसे पूर्व यहाँ रहते थे।
१८८५ के कानून ३ (१८८६ में संशोधित) के अन्तर्गत "पंजीयन" में हुलिया देना सम्मिलित न था, उसमें केवल ३ पौंड शुल्ककी अदायगी और उसकी रसीद रखनेकी बात थी।	एशियाइयोंने १९०३ में जो स्वेच्छया "पंजीयन" लॉर्ड मिलनरकी सलाहसे स्वीकार किया था, उसमें बहुत विस्तृत हुलियाकी बात सम्मिलित थी। १९०७ के अधिनियमके अन्तर्गत पुनः पंजीयन **अनिवार्य** है और उसकी तफसील और भी अपमानजनक है। यह आठ वर्षसे अधिक आयुके सब बच्चोंपर लागू होता है। पुनः पंजीयन न करानेपर जुर्माना, कैद और निष्कासनकी सजाएँ दी जाती हैं।
एशियाइयोंको नागरिक अधिकार नहीं दिये गये थे।	एशियाइयोंको, जिनमें ब्रिटिश भारतीय भी हैं, राजनीतिक और नगरपालिकाके अधिकारोंसे वंचित कर दिया गया है। एशियाई अचल सम्पत्ति नहीं रख सकते। अब भी यही स्थिति है।
एशियाई उन गलियों और बस्तियोंसे हटाये जा सकते थे जो इसके लिए विशेष रूपसे निश्चित की गई हों।	एशियाई, जिनमें भारतीय भी हैं, अब भी हटाये जा सकते हैं और उनको इस प्रकार पृथक किये जानेकी धमकी दी भी जा चुकी है।
जब कि उक्त निर्योग्यताएँ जिस कानून ३ के अन्तर्गत लागू होती थीं वह तत्त्वतः अमलमें नहीं लाया जाता था; महामहिम सम्राट्की सरकार उनकी रक्षा करती थी।	विलयके बाद और विशेष रूपसे उत्तरदायी शासनकी प्राप्तिके बाद, ब्रिटिश भारतीयोंको सम्राट्का यह संरक्षण नहीं मिल सका है।

उत्तरदायी ब्रिटिश मंत्री ब्रिटिश भारतीयोंके लिए साम्राज्यके सभ्य प्रजाजनोंके बराबर अधिकारोंका दावा करते थे। ब्रिटिश सरकारने तत्त्वतः वचन दिया था कि वह ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको उनके उचित अधिकार दिलायेगी।	ब्रिटिश सरकारने प्रत्यक्षतः उन्हीं भारतीयोंको, जो उपनिवेशको मिलानेसे पूर्व उसमें रहते थे उनके व्यापारिक प्रतिस्पर्धियों और उस सरकारके अत्याचारोंपर छोड़ दिया है जो बहुत-कुछ उन्हीं विधायकोंकी बनी है, जिन्होंने १८८५ का बोअर कानून ३ बनाया था।
साम्राज्य सरकार बोअर कानूनके विरुद्ध भारतीयोंकी शिकायतोंका समर्थन करती थी और जिन कारणोंसे लड़ाई हुई उन कारणोंमें एक मुख्य कारण गणतन्त्रीय सरकारका अपनी सीमाओंके भीतर रहनेवाले एशियाइयोंके विरुद्ध भेदभावकारी कानून बनानेके अधिकारपर आग्रह करना था।	उपनिवेशकी सरकारकी धमकियोंके अनुसार पंजीयन अधिनियमके विरुद्ध भारतीयोंके सत्याग्रहका परिणाम उपनिवेशसे उनका निष्कासन होगा। सरकारको इसके लिए आवश्यक अधिकार प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमसे प्राप्त होंगे
सामान्यतः ब्रिटिश भारतीयोंपर जब कि सिद्धान्ततः ये निर्योग्यताएँ लगी हुई थीं, व्यवहारमें इस कानूनको कड़ाईसे लागू नहीं किया जाता था।	ब्रिटिश भारतीयोंकी स्वतन्त्रतापर अत्यन्त कठोर प्रतिबन्ध लगे हुए हैं और ब्रिटिश भारतीय इसके निकृष्टतम दुष्परिणामोंसे केवल इसलिए बचे हुए हैं क्योंकि १८८५ के कानून ३ में दण्डात्मक धारा नहीं है।

अन्तमें इससे यह बात भली भाँति समझमें आ जायेगी कि इन सब बातोंकी ओर संकेत करनेकी और युद्धसे पहले दिये गये वचनों एवं युद्धके पश्चात् किये गये कार्योंकी असंगतिपर विचार करनेका लोभ क्यों हुआ। जिस सरकारको एक शक्तिशाली बहुसंख्याका समर्थन प्राप्त है उसका कर्तव्य है कि वह एक नितान्त प्रतिनिधित्वहीन रंगदार अल्पसंख्यकोंके हितोंकी रक्षा करे। इसके अतिरिक्त भी यह लुभावना प्रश्न उठता है; साम्राज्य परिवारके प्रत्येक सदस्यका कर्तव्य है कि वह विशुद्ध स्थानीय स्वार्थोंको — पक्षपात और पूर्वग्रहकी तो बात ही क्या — समस्त साम्राज्यके कल्याण-क्षेमसे गौण माने। किन्तु यहाँ यह बताना काफी होना चाहिए कि ट्रान्सवालकी नीतिमें ऐसे विचारोंको प्रत्यक्षतः कोई स्थान उपलब्ध नहीं हुवा। ट्रान्सवालमें मुश्किलसे ढाई लाख गोरे होंगे; किन्तु फिर भी वह भारतके तीस करोड़ लोगोंके प्रतिनिधियोंका अपमानपर-अपमान करके साम्राज्यकी सत्ता और प्रतिष्ठाको खतरेमें डालनेसे नहीं हिचकिचाया है।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया आफिस रेकर्ड्स, जे० ऐंड० पी० ३९२७/०७।

सामग्रीके साधन-सूत्र

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: उपनिवेश कार्यालय, लन्दनके पुस्तकालयमें सुरक्षित कागजात। देखिए, खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली: गांधी साहित्य और सम्बन्धित कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय और पुस्तकालय। देखिए, खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

इंडिया ऑफिस ज्यूडिशियल ऐंड पब्लिक रेकर्ड्स: भूतपूर्व इंडिया ऑफिसके पुस्तकालयमें सुरक्षित भारतीय मामलोंसे सम्बन्धित कागजात और प्रलेख, जिनका सम्बन्ध भारत-मंत्रीसे था।

'इंडियन ओपिनियन' (१९०३–६१): साप्ताहिक पत्र, जिसका प्रकाशन डर्बनमें आरम्भ किया गया; किन्तु जो बादमें फीनिक्समें ले जाया गया। यह पत्र सन् १९१५ में गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकासे रवाना होनेतक लगभग उन्हींके सम्पादकत्वमें रहा। इसमें अंग्रेजी और गुजराती दो विभाग थे; आरम्भमें हिन्दी और तमिल विभाग भी थे।

नेटाल आर्काइव्ज़: पीटरमैरित्सबर्गमें दक्षिण आफ्रिकी सरकारके कागजात।

प्रिटोरिया आर्काइव्ज़: प्रिटोरियामें दक्षिण आफ्रिकी सरकारके कागजात। इसमें, अन्योंके साथ-साथ, प्रधानमंत्री और ट्रान्सवाल-गवर्नरके अभिलेख-संग्रहालय भी हैं।

'रैंड डेली मेल': जोहानिसबर्गका दैनिक पत्र।

साबरमती संग्रहालय, अहमदाबाद: पुस्तकालय और संग्रहालय, जिसमें गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकी काल और १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात सुरक्षित हैं। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३६०।

'स्टार': जोहानिसबर्गसे प्रकाशित सान्ध्य दैनिक पत्र।

'ट्रान्सवाल लीडर': जोहानिसबर्गसे प्रकाशित दैनिक पत्र।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(जून-दिसम्बर १९०७)

जून १ : गांधीजीने ब्रिटिश भारतीय संघकी बैठकमें भाग लिया जिसमें यह निश्चय किया गया कि प्रधानमंत्री जनरल बोथाके पास एक शिष्टमण्डल भेजकर उनसे समझौतेका प्रस्ताव स्वीकृत करनेका अनुरोध किया जाये।

जून ४ : जनरल बोथाने शिष्टमण्डलसे मिलनेसे इनकार कर दिया।

जून ६ : भारत-मंत्री जॉन मॉर्लेने लोक सभामें भारतके प्रस्तावित वैधानिक सुधारोंका स्वरूप बतलाया।

जून ८ : ट्रान्सवाल 'गवर्नमेंट गज़ट' में एशियाई पंजीयन अधिनियमपर सम्राट्की स्वीकृति मिलनेकी घोषणा की गई।

जून १४ : ट्रान्सवाल संसदका दूसरा अधिवेशन आरम्भ हुआ।

जून २८ : गांधीजीने 'रैंड डेली मेल' से एक भेंटमें कहा कि भारतीयोंने अधिनियमको न माननेका संकल्प किया है।

जून २९ : अधिनियमके विरोधमें आयोजित फोक्सरस्टकी सभामें भाषण दिया।

जून ३० : अधिनियमके फलितार्थ बताते हुए प्रिटोरियामें भारतीयोंकी सभामें भाषण दिया।

जुलाई १ : अधिनियम प्रिटोरियामें लागू किया गया। पहला परवाना-दफ्तर खुला। भारतीयोंको एक मासमें पंजीयन करानेकी सूचना दी गई। पंजीयनके विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ किया गया।

गांधीजीने सार्वजनिक सभामें भाषण दिया, 'रैंड डेली मेल' को पत्र लिखा कि चाहे जो परिणाम हो, प्रिटोरियाके भारतीय अनिवार्य पुन:पंजीयन कराना स्वीकार न करेंगे।

जुलाई २ : फोक्सरस्टकी सभामें भाषण दिया, जिसमें जेल-प्रस्तावपर कायम रहनेका निश्चय किया गया।

जुलाई ३ : प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक प्रकाशित किया गया।

जुलाई ४ : गांधीजीने 'स्टार' को पत्र लिखा जिसमें प्रवासी विधेयककी निन्दा की गई।

जुलाई ६ : 'रैंड डेली मेल' को लिखा कि भारतीय अधिनियमके सम्मुख झुकनेकी अपेक्षा अपने सर्वस्वकी आहुति देना पसन्द करेंगे।

जुलाई ७ : प्रिटोरियाकी सभामें भाषण दिया।

जुलाई ८ : ट्रान्सवाल पंजीयन विधेयक ब्रिटिश लोकसभामें स्वीकृत हुआ।

जुलाई ९ : ब्रिटिश भारतीय संघने ट्रान्सवाल विधानसभाको प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकके सम्बन्धमें प्रार्थनापत्र दिया।

जुलाई १४ : गांधीजीने जोहानिसबर्गमें हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें भाषण दिया और भारतीयोंसे अनिवार्य पुन:पंजीयनको स्वीकार न करनेका अनुरोध किया।

जुलाई १५ : ट्रान्सवाल फुटबॉल-संघकी बैठकमें भाषण दिया।

जुलाई १६ : प्रिटोरियामें भारतीय व्यापारियोंकी सभामें भाषण दिया।

जुलाई २० : डर्बनमें नेटाल भारतीय कांग्रेसकी सभामें ट्रान्सवालके संघर्षके लिए धन देनेकी अपील की।

जुलाई २२ : ब्रिटिश भारतीय संघने प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकके सम्बन्धमें ट्रान्सवाल विधान-सभाको प्रार्थनापत्र दिया।

जुलाई २४ : गांधीजी प्रिटोरिया पहुँचे, और खमीसाकी दूकानपर गये जहाँ रातको गुप्त रूपसे पंजीयनके लिए प्रार्थनापत्र लिए जाते थे।

जुलाई २५ : जनरल बोथा द्वारा एशियाई अधिनियमको लागू करनेके सम्बन्धमें उपनिवेश मंत्रीको दिये गये आश्वासनके बारेमें प्रश्न किया जानेपर ब्रिटिश लोकसभामें कहा गया कि अधिनियमको लागू करने और अमलमें लानेकी कार्रवाई यथासम्भव कम कष्ट-प्रद बनानेका पूरा प्रयत्न किया जायेगा और अँगुलियोंकी छाप लेनेकी प्रथा कायम रखी जायेगी।

जुलाई २७ : ब्रिटिश भारतीय संघने उपनिवेश-सचिवको पत्र लिखकर भारतीयोंपर लगाये गये डराने-धमकानेके आरोपका खण्डन किया।

जुलाई २८ : जोहानिसबर्गमें हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके भवनमें भारतीयोंकी सभा हुई। ट्रान्सवालमें हड़ताल की गई।

जुलाई ३० : 'इंडिया' और 'हिन्दुस्तान' समाचारपत्रोंके सम्पादकोंको पाँच-पाँच वर्षकी कड़ी कैदकी सजाएँ दी गईं।

जुलाई ३१ : गांधीजी सुबह विलियम हॉस्केनसे मिले; प्रिटोरियाकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया; भारतीयोंको कानूनका विरोध करनेकी सलाह देनेकी पूरी जिम्मेदारी अपने ऊपर ली और अनाक्रामक प्रतिरोधका महत्त्व बताया। लोगोंको अधिनियमके सामने सिर झुकानेके खतरोंके विरुद्ध चेतावनी दी।

'रैंड डेली मेल' के संवाददाताको मुलाकात दी।

अगस्त ५ से पूर्व : परवाना दफ्तर पीटर्सबर्ग गया;

अगस्त ७ : भारतमें स्वदेशी आन्दोलनका वार्षिक दिवस मनाया गया; २०,००० भारतीयोंने एक सभामें निश्चय किया कि बंग-भंगके विरुद्ध बहिष्कार तबतक जारी रखा जाये जबतक वह वापस न लिया जाये या बदला न जाये।

अगस्त ८ : गांधीजीने जनरल स्मट्सको पत्र द्वारा एशियाई अधिनियममें संशोधन सुझाये।

अगस्त ११ : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें भाषण दिया।

अगस्त १४ : सुलेमान बाडीकी ओरसे, जिनपर वतनियोंको शराब बेचनेका आरोप था, पैरवी की।

अगस्त १५ : जनरल स्मट्सको लिखा कि भारतीयोंके लिए अधिनियमका पालन न करनेका परिणाम उतना बुरा नहीं होगा जितना बुरा उसे पालन करनेका परिणाम होगा।

अगस्त १७ : जनरल स्मट्सके साथ किया गया पत्र-व्यवहार प्रकाशित किया।

अगस्त १९ : जनरल स्मट्सके सम्मुख रखे गये प्रस्तावके सम्बन्धमें 'स्टार' को पत्र लिखा।

अगस्त २१ : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें भाषण दिया।

अगस्त २३ : ब्रिटिश भारतीय संघने उपनिवेश मंत्रीको प्रार्थनापत्र भेजा।

अगस्त २८ से पूर्व : परवाना दफ्तर पॉचिफस्ट्रूम और क्लार्क्सडॉर्पमें कार्य-रत।

अगस्त ३१ से पूर्व : परवाना दफ्तर नार्दर्नस्ट्रूम और रस्टेनबर्ग गया।

अगस्त ३१ : गांधीजी और अन्य लोगोंने श्री हाजी वजीर अली और उनके परिवारको विदाई दी। वे ट्रान्सवालसे इसलिए चले गये कि वे अधिनियमको मानना नहीं चाहते थे।

सितम्बर ४ : नेटाल भारतीय कांग्रेसने दादाभाई नौरोजीको उनके जन्म-दिवसपर समुद्री तारसे बधाई भेजी।

गांधीजीने डर्बनमें नेटाल भारतीय कांग्रेसकी सभामें भारतीय संघर्षके सम्बन्धमें भाषण दिया।

सितम्बर ७ से पूर्व : सनातन वैदिक धर्म सभा, जमिस्टन द्वारा आयोजित भगवान कृष्णके जन्मोत्सवमें भाग लिया।

सितम्बर ११ : एशियाई पंजीयकको कोमाटीपूर्टमें रोके गये भारतीयोंके सम्बन्धमें पत्र लिखा।

सितम्बर १७ : परवाना दफ्तर वॉकरवर्ग गया।

सितम्बर २१ से पूर्व : उपनिवेश-सचिवको भेजा जानेवाला भीमकाय प्रार्थनापत्र हस्ताक्षरोंके लिए घुमाया गया।

सितम्बर २२ : गांधीजीने हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें भाषण दिया।

सितम्बर २४ : परवाना दफ्तर जमिस्टन चला गया।

सितम्बर २९ : गांधीजीने हमीदिया इस्लामिया अंजुमन और चीनी संघकी सभाओंमें भाषण दिया।

अक्तूबर ६ : ब्रिटिश भारतीय संघकी सभामें भाषण देते हुए कहा कि वे गिरफ्तार धरने-दारोंकी पैरवी करेंगे।

अक्तूबर ९ : 'रैंड डेली मेल' को पत्र लिखा।

अक्तूबर १३ : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें भाग लिया।

अक्तूबर १४ : हेलूने भेंट की और पंजीयनका प्रार्थनापत्र देनेपर खेद प्रकट किया।

अक्तूबर १५ : न्यायालयमें धरनेदारोंपर लगाये गये डराने-धमकानेके आरोपका खण्डन किया और पुलिस कमिश्नरको पत्र लिखा।

अक्तूबर १७ : भारतमें बंग-भंग दिवस शोक-दिवसके रूपमें मनाया गया।

अक्तूबर १८ : गांधीजीने 'स्टार' को पत्र भेजकर डराने-धमकानेके आरोपका खण्डन किया।

अक्तूबर २० : हमीदिया इस्लामिया अंजुमन और दक्षिण भारतीयोंकी सभाओंमें भाग लिया।

अक्तूबर २३ : ब्रिटिश भारतीय संघ और भारतीय विरोधी कानून-निधिकी बैठकोंमें भाग लिया।

अक्तूबर २४ : एशियाई पंजीयन अधिनियमके सम्बन्धमें 'स्टार' को पत्र लिखा।

अक्तूबर २७ : जोहानिसबर्गके पुलिस कमिश्नरसे धरनेके सम्बन्धमें भेंट की।

हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें पुलिस कमिश्नरसे हुई भेंटका हाल बताया।

मुहम्मद शहाबुद्दीनसे, जिसपर मुल्लाने हमला किया था, भेंट की।

अक्तूबर : भारतमें विपिनचन्द्रपालको अरविन्द घोषके विरुद्ध राजद्रोहके मुकदमेमें गवाही देनेसे इनकार करनेपर छः मासकी कैदकी सजा दी गई।

नवम्बर १ : ब्रिटिश भारतीय संघने ४,५२२ भारतीयोंके हस्ताक्षरोंसे युक्त भीमकाय-प्रार्थनापत्र उपनिवेश-सचिवको भेजा।

गांधीजीने 'ट्रान्सवाल लीडर' को भारतीयोंके पंजीयनके सम्बन्धमें पत्र लिखा।

नवम्बर ९ : कैक्स्टन हॉल, लन्दनमें मुसलमानोंकी सभा हुई जिसमें ट्रान्सवालमें भारतीयोंके साथ किये जानेवाले दुर्व्यवहारका विरोध किया गया।

नवम्बर ११: गांधीजीने जर्मिस्टनमें गिरफ्तार किये गये पहले भारतीय रामसुन्दर पण्डितकी पैरवी की।

पण्डितजीकी रिहाईके बाद की गई सभामें भाषण दिया।

'ट्रान्सवाल लीडर' के संवाददाताको भेंट दी।

नवम्बर १३: हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें भाषण दिया।

नवम्बर १४: जर्मिस्टनमें रामसुन्दर पण्डितके, जिन्हें एक महीनेकी कैदकी सजा दी गई थी, मुकदमेमें पैरवी की।

ट्रान्सवालमें हड़ताल की गई।

नवम्बर १५: प्रिटोरियामें धरनेदारोंके मुकदमेमें पैरवी की; 'इंडियन ओपिनियन' को रामसुन्दर पण्डितके सम्बन्धमें पत्र लिखा।

नवम्बर १७: जोहानिसबर्ग जेलमें रामसुन्दर पण्डितसे मिले; हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें भाषण दिया।

नवम्बर १८: भारतमें लाला लाजपतराय रिहा किये गये।

नवम्बर १९: गांधीजीने जर्मिस्टनमें शाहजी साहब और अन्योंके मुकदमेमें पैरवी की।

नवम्बर २१: मणिलाल गांधीको 'रामायण' और 'गीता' भेजी।

नवम्बर २२: गोपालकृष्ण गोखलेको पत्र लिखा कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अगले अधिवेशनमें हिन्दू-मुस्लिम एकतापर विशेष जोर दिया जाये।

नवम्बर २४: हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें बोले।

सोसायटी हालमें कोंकणियोंकी सभा हुई।

नवम्बर २७: चीनी संघकी सभामें भाषण दिया।

नवम्बर ३०: पंजीयनकी अन्तिम तारीख; १३,००० भारतीयोंमें से केवल ५११ ने पंजीयन कराया।

इस महीनेमें पहली बार संघर्षको 'सत्याग्रह' का नाम दिया गया।

दिसम्बर १: गांधीजी जेलमें रामसुन्दर पण्डितसे मिले।

दिसम्बर ३: विलियम हॉस्केनका यह सन्देश मिला कि एशियाई कानून संशोधन विधेयकके सम्बन्धमें उच्चायुक्तसे मिलें। उच्चायुक्तको पत्र द्वारा सुझाव दिया कि चोरीसे भारतीयोंके प्रवेशके आरोपकी जाँच करनेके लिए न्यायाधीशकी नियुक्ति की जाये।

दिसम्बर ६: मुहम्मद इशाकके मुकदमेमें पेश हुए।

भारतमें आतंकवादियोंने मिदनापुर (बंगाल) में लेफ्टिनेन्ट गवर्नरकी गाड़ीको उड़ानेका प्रयत्न किया।

दिसम्बर ७ से पूर्व: गांधीजीने उच्चायुक्तको पंजाबियों, पठानों और सिखोंका प्रार्थनापत्र भेजा।

दिसम्बर ८: हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें भाषण दिया।

दिसम्बर ९: फोक्सरस्टमें ३८ भारतीयोंके मुकदमेकी पैरवी की।

दिसम्बर ११: मुहम्मद इशाककी पैरवी की। फलस्वरूप वे बरी कर दिये गये।

दिसम्बर १२: भारतीयोंपर मुकदमे चलानेके बारेमें 'इंडियन ओपिनियन' में लिखा।

दिसम्बर १३: रामसुन्दर पण्डितके जेलसे रिहा होनेपर उनके स्वागत समारोहमें भाग लिया; बादमें सभामें भाषण।

दिसम्बर १५ : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें भाषण दिया।

दिसम्बर २० : स्टैंडर्टनके भारतीय कर्मचारियोंके सम्बन्धमें मध्य दक्षिण आफ्रिका रेलवेके मुख्य प्रबन्धकको टेलीफोन किया।

दिसम्बर २२ : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें भाषण दिया।

दिसम्बर २३ : भारतमें ढाकाके भूतपूर्व जिला-मजिस्ट्रेट श्री एलेनपर ढाका और कलकत्ताके बीच एक रेलवे स्टेशनपर गोली चलाई गई।

दिसम्बर २६ : जनरल स्मट्सने गांधीजी और अन्य धरनेदारोंपर मुकदमे चलानेका निर्णय किया।

सूरतमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका अधिवेशन प्रारम्भ हुआ। नर्मदल और गर्मदल अलग-अलग हो गये।

दिसम्बर २७ : ट्रान्सवाल प्रवासी अधिनियमपर सम्राट्की स्वीकृति 'गजट' में घोषित की गई। गांधीजी ट्रान्सवालके कार्यवाहक पुलिस कमिश्नरसे मिले और उसने उन्हें सूचित किया कि उनको और दूसरे धरनेदारोंको गिरफ्तार करनेकी आज्ञा दी गई है। बादमें जोहानिसबर्गमें सार्वजनिक सभामें भाषण दिया और 'स्टार' के संवाददाताको मुलाकात दी।

दिसम्बर २८ : अपनी पैरवी खुद की और धरनेदारोंकी ओरसे पेश हुए; ४८ घंटेमें ट्रान्सवालसे चले जानेकी आज्ञा दी गई। बादमें गवर्नमेंट स्क्वेयरकी सभामें भाषण दिया।

दिसम्बर ३० : जोहानिसबर्गमें चीनी संघकी सभामें भाषण दिया। रायटरके प्रतिनिधिको मुलाकात दी।

प्रिटोरियाकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

दिसम्बर ३१ : गांधीजीको सूचना दी गई कि जबतक आगे निर्देश न दिया जाये, उनको न्यायालयमें आनेकी आवश्यकता नहीं है।

यूरोपीय मित्रोंने उनसे भेंट की और उनके साथ सहानुभूति प्रकट की।

गांधीजीने भारतीयोंकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

शीर्षक-सांकेतिका

सांकेतिका

अ

आ

इ

ई

उ

ऋ

ए

ऐ

क

घ

च

ठ

ड

त

थ

द

फ

भ

स

ह